अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 06/07

03. निर्णायक मण्डल 08

04. प्रवक्ता साथी 10

(Science / विज्ञान)

05. Screening For Bio-Cementing Bacilli From Soils Of Gujarat 12
(Dr. Dilip N Zaveri, Anurag Zaveri, Avani Zaveri,Shivangi Prajapati)

06. Ethno-Medico Plants To Cure Calculi Disease Of Amarkantak, Anuppur District Central India (Dr. Radheshyam Napit, Dr. Uma Singh) 16

07. Effect Of Light On The Infectivity Of Groundnut (Arachis hypogaea L.) Mosaic Virus 20
(Dr. Madhu Mishra)

08. 2-Amino-5 (3-methoxy-4-acetoxy-5-allyl phenyl)-1:3:4-thiadiazole and its N-substituted derivatives - A Synthesis (Dr. Seema Negi) 22

09. Fundamental Of Nanoparticles (Dr. Neeraj Dubey) 25

10. Keratinolysis Of Keratinic Wasts (Dr.Shashi Tiwari, Pratima Bisen) 28

11. Natural Plant Catharanthus Roseous Anticancer Droug (Sushama Singh Majhi) 31

12. General Common Fixed Point Theorems for Two mapping in fuzzy metric spaces 34
(Dr. Sangeeta Biley, Dr. Rajesh Shrivastav)

13. Some Medicinal Plants Of Bhopal (M.P.) (Dr. Sadhna Goyal) 36

14. सामवेद में पारिस्थितिक तंत्र के अजैविक कारक एवं उनका शोधन (डॉ. अरूणा पाण्डे) 37

15. अध्यापक शिक्षा के गुणात्मक उन्नयन की आवश्यकता (विनिता मेहता) 40

(Home Science / गृह विज्ञान)

16. Knowledge of Adolescent Girls Regarding STDs, HIV and AIDS & Teenage Pregnancy 41
(Neeraj Singh, Dr. Renubala Sharma)

17. Energy Consumption Pattern of Adult Females Residing in Urban Areas of Bikaner (Rajasthan) (Madhu Kagat) 44

18. Dietary Habits And Effect Of Educational Tool On Nutrition Knowledge Of Affluent Class Women In Chhindwara City (Akanksha Sharma, Dr. Meera Vaidya, Dr. Smita Pathak) 47

19. Indigenous Dietary Practices Of Bhariya Tribes Of Patalkot Valley, Tamia Block, Chhindwara District, Madhya Pradesh (Kavita Juneja, Dr. Meera Vaidya, Dr. Nandita Sarkar) 50

20. मध्यान्ह भोजन योजना के अंतर्गत विद्यालयों में विद्यार्थियों की उपस्थिति पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन (रीवा जिले के विशेष संदर्भ में)(डॉ. शुचिता तिवारी, रैना सिंह) 53

21. इंटरनेट की लत का किशोर बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार पर प्रभाव (डॉ. आभा तिवारी, निरंजना धोटे) 57

22. विकासशील देशों में पोषण कार्यक्रमों का प्रबंधन (जयंती जोशी) 61

23. हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के सहशिक्षा एवं एकल शिक्षा में अध्ययनरत् विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक बुद्धि का अध्ययन 64
(डॉ. आभा तिवारी, आहूति साहू)

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

24. Study To Assess Socio-Economic Status Satisfaction In Railway Employees Of Ratlam Division (Dr. J.C. Porwal, Priyanka Chauhan) 67

25. Analyses the dimensions & perspectives to manage the stress at work places (Dr. N. S. Rao, Lalit Pipliwal) 70

26. Chhattisgarh as a Tourism Brand: Possibilities and Potentials (Dr. Kaustubh Jain, Prem Shankar Dwivedi) 73

27. Socio-Environmental Issues Of Bus Rapid Transit System At Bhopal (Dr. Rita Sachdev) 77

28. Impact Of armed Conflict On Economy And Tourism - A Study Of State Of Jammu And Kashmir (Mohd. Sajad Dar) 81

29. Marketing Potential In India Rural Market(Dr. Pradeep Kumar Sharma) 84

30. भारतीय बैंकिंग प्रणाली में गैर निष्पादनीय परिसम्पत्तियॉ और पूँजी पर्याप्तता मानक 86
(डॉ. विवेक कुमार पटेल, डॉ. पल्लवी मिश्रा)

31. भारत की प्रगति का सशक्त घटक- कौशल विकास(डॉ. सीता चतुर्वेदी) 89

32. व्यवसायिक वातावरण एवं उसके घटक (डॉ. ज्योति जायसवाल) 92

33. पसंद ब्रेड कम्पनी के उत्पादन एवं वितरण व्यवस्था का अध्ययन (रीवा के रतहरा स्थित प्लांट के संदर्भ मे) 94
(क्रितिका सिंह, रूपेश द्विवेदी)

34. टाइल्स एवं नल फिटिंग का अध्ययन (रीवा जिले के अनन्तपुर स्थित उद्योग का अध्ययन) 96
(राजेश कुमार विश्वकर्मा, रूपेश द्विवेदी)

35. मूल्य परिवर्तित कर - अवधारणा एवं प्रभाव (डॉ. राजू रैदास) 98

(Economics / अर्थशास्त्र)

36. Globalization And Indian Agriculture- General Consequences (Dr. R. P. Saharia) 100

37. Economic Reforms Policies - Environment And Sustainable Development(Usha Iyer) 104

38. Socio-Economic Potential Of Handicraft Industry In Jammu And Kashmir - Opportunities And Challenges (Mir Shahid Ul Islam) 107

39. जन-धन पर भूकम्प का विध्वंसक कहर (डॉ. एस. के. वर्मा) 110

40. वित्तीय समावेशन में किसान क्रेडिट कार्ड की भूमिका-एक अध्ययन (डॉ. रिखबचन्द्र जैन) 113

41. भारतीय अर्थव्यवस्था-एक संक्षिप्त विश्लेषण (सामाजिक संरचना के परिप्रेक्ष्य में) (रावेन्द्र सिंह) 116

42. वैदिककाल एवं कृषि अर्थव्यवस्था (डॉ. आशा शुक्ला) 119

43. वैश्वीकरण और शिक्षा एवं मानवीय मूल्य (डॉ. शक्ति जैन) 121

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

44. भारतीय संविधान में अंतर्निहित सामाजिक न्याय के क्रियान्वयन में सबसे बड़ी बाधा राज्य व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार : एक समीक्षा (प्रभाव, कारण व निदान के संदर्भ में)(लल्ला रैदास) 124

45. भारत चीन संबंधों के बदलते आयाम- मोदी की चीन यात्रा का संदर्भ(डॉ. श्रीकांत दुबे) 134

46. लोकतंत्र में जनविरोध के अधिकार की समीक्षा (डॉ. कल्पना वैश्य) 137

47. भारत में निर्वाचन अपराध एवं भ्रष्ट आचरण (भावना ठाकुर) 140

48. प्राचीन भारतीय न्याय व्यवस्था की उपयोगिता वर्तमान सन्दर्भ में (डॉ. जे. के. संत) 142

49. सामाजिक न्याय के पक्षधर - स्वामी विवेकानंद (डॉ. अनिल कुमार जैन) 145

50. विन्ध्य प्रदेश के विलय में सरदार बल्लभ भाई पटेल की भूमिका (डॉ. पूर्णिमा शर्मा, अशोक कुररिया) 148

51. वर्ग संघर्ष के सम्बन्ध में लोकनायक जयप्रकाश नारायण के विचारों का अध्ययन (डॉ. पुष्पलता मिश्रा, डॉ. पी.के. चतुर्वेदी) 150

52. महिला विकास हेतु भारत सरकार की नीतियाँ एवं कार्यक्रम (सुमन मरावी) 151

(History / इतिहास)

53. Role Of Early Buddhism In Cultural Continuum Of Asia (With Special Reference To Central Asia And China) (Dr. Preeti Prabhat) 152

54. Development Of Buddhism In Maharashtra- A Historical Context (Dr. Manik Gajbhiye) 154

55. राष्ट्रीय चैतन्य के प्रकाश में आधुनिक इतिहास लेखन - एक विश्लेषण (डॉ. नितिन सहारिया) 157

56. भोपाल रियासत में गैर मुस्लिम धार्मिक स्थलों का निर्माण (डॉ. ममता खोईया) 162

57. देवास राज्य का ऐतिहासिक अध्ययन (डॉ. मलिका खान) 164

(Sociology / समाजशास्त्र)

58. महिला उत्थान - मध्यप्रदेश शासन की पहल (डॉ. उमा लवानिया) 165

59. खतरे बदलते पर्यावरण के (प्रो. गीता मेहरा) 168

60. महिलाओं के अपराध रोकने में समाज की भूमिका (डॉ. शैलजा दुबे, समता तिवारी) 170

61. जनजातियों में सांस्कृतिक एवं सामाजिक चेतना साहित्य के संदर्भ में (डॉ. एस.एस. राठौर) 172

62. समाज और मीडिया (डॉ. मंजू गायकवाड़) 174

63. सामाजिक जीवन में प्रतीकों का महत्व (प्रो. प्रिशिला अन्द्रेय्स) 176

(Geography / भूगोल)

64. Changing Scenario Of Agriculture Marketing In Madhya Pradesh (Dr. Mini Kochar) 177

65. साक्षरता प्रतिरूप - उज्जैन संभाग के सन्दर्भ में स्थानिक तथा कालिक विश्लेषण (डॉ. अख्तर बानो) 179

66. जल प्रदुषण की समस्या के निवारण में जनसाधारण की भूमिका - भारतीय नदियों के विशेष संदर्भ में 181
(डॉ. विक्रम वर्मा, प्रो. शांतिलाल ईरवार)

67. मन्दसौर जिले में स्वास्थ्य सेवाऐं एवं दशाएँ (डॉ. बी.एल. पाटीदार, डॉ. आर.के. श्रीवास्तव) 184

(Philosophy / दर्शनशास्त्र)

68. भगवद्गीता में योगशास्त्र - लोकमान्य तिलक के अनुसार (डॉ. पुष्पा कपूर) 187

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

69. Inspiring By Literature (Dr. Manisha Dwivedi, Gopal Prasad Rathore) 189

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

70. प्रेम का उत्कृष्ट रूप - आसाढ़ का एक दिन (प्रीति कुमारी) 191

71. राजेन्द्र यादव - एक चिंतन कहानी साहित्य के संदर्भ में (डॉ. प्रेमलता तिवारी) 194

72. हिन्दी उपन्यास दलोदानिश में नारी जीवन का यथार्थ बोध (डॉ. अमित शुक्ल) 196

73. सम्पादक एवं पत्र लेखक - पं0 बनारसीदास चतुर्वेदी (डॉ. अर्चना देवी अहलावत) 198

74. ग्राम्य जीवन के समर्थ रचनाकार मुंशी प्रेमचंद (डॉ. सरोज जैन) 200

75. हिन्दी भाषा का उद्भव और विकास (डॉ. सविता वर्मा) 202

76. कामायनी में सौन्दर्य बोध (डॉ. गायत्री वाजपेयी) 204

77. रंग बदलते रिश्ते - त्रिपदी - आशापूर्णा देवी (डॉ. संध्या खरे) 206

(Psychology / मनोविज्ञान)

78. Domestic Violence-Causes And Remedial Measures (Dr. Smita Jain) 208

79. किशोर अपराध - कारण और निवारण (ज्योत्सना झारिया) 211

(Law/ विधि)

80. Compositon Of Arbitral Tribunal (Poorva Jadhav) 214

(Education / शिक्षा)

81. Higher Education In India And Its Challenges (Neeti Trivedi) 216

82. मन्दसौर जिले के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के 10+2 स्तर के बालक-बालिका के अर्थशास्त्र विषय में उपलब्धि 219
स्तर का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. निशा महाराणा, संजय डागर)

83. गतिविधि आधारित शिक्षण से बच्चों में गणित की मूलभूत दक्षताऐं विकसित करना 223
(प्रमोद कुमार सेठिया, डॉ. महेश कुमार तिवारी)

84. प्राथमिक शाला के विद्यार्थियों में अपव्यय एंव अवरोधन के कारणों का अध्ययन (नवनीत सिंह, इम्तियाज मंसूरी) 227

85. जॉन डीवी के शैक्षिक विचारों का अध्ययन (डॉ. शुभ्रा श्रीवास्तव) 231

86. शासकीय एवं अशासकीय स्कूलों में कार्यरत अध्यापको की कार्य सन्तुष्टि का तुलनात्मक अध्ययन 234
(मृदुला दुबे, डॉ. सुधा रिछारिया)

(Physical Education / शारीरिक शिक्षा)

87. Effect Of Air Pollution On Selected Physical Fitness Variables Of School Children 235
(Ravi Bhadoria)

(Others / अन्य)

88. उच्च शिक्षा - दशा एवं दिशा (प्रो. विजया वधवा) 237

89. आधुनिक शिक्षा पर वैदिक शिक्षा का प्रभाव (डॉ. अंतिम बाला जैन) 239

90. गांधीजी का आध्यात्मिक दर्शन व मार्क्सवाद (डॉ अंजू श्रीवास्तव) 241

91. Regional Agriculture Development & Disparities in Punjab (A Geographical Analysis) 246
(Dr. B.L Jat, Dr. Jagseer Singh)

92. नागरिक अधिकार पत्र : प्रशासनिक पारदर्शिता की ओर बढ़ते कदम (डॉ. गोपाल सिंह) 250

93. संगीत में रसात्मकता (डॉ. इच्छा नायर) 252

94. सामाजिक संस्थाओं का समाज में बदलता स्वरूप (डॉ. हरिचरण मीना) 255

95. From Fragmentation to Consolidation: The History of Bank Mergers in India (Sapna Kasliwal) ... 258

96. Judicial Activism in India (D.C. Chauhan) 262

97. Decreased Particle Flux In A 2011 Celestial Event (Dr. Nira Talesra) 266

98. Analytical Study of Select Mineral Deposits of Southern Rajasthan (Dr. Nira Talesra) 268

99. An Ethnographic Comparative Study Of Herbalist And Non-Herbalist Healers 270
(Dr. Chakrapani Upadhyay)

100. राजनैतिक दल, घोषणा-पत्र और मतदाता (डॉ. अभिमन्यु सिंह चौहान) 272

101. Impact of Social Media Influencers on Brand Perception (Dr. O.P Roonwal) 275

102. An Analysis Of The Success Of Magadhan Imperialism (Upto The Reign Of Ashoka) 278
(Dr. Firoz Mohammed Sheikh)

103. नि: संतानता एवं सामाजिक व्यवहार (डॉ. विनीता लवानिया) 281

104. भारतीय कला और संस्कृति के जीवंत ताने-बाने की खोज (डॉ. चेतना टिक्कीवाल) 284

105. आधुनिक सन्दर्भ में चाणक्य नीति की प्रासंगिकता (डॉ. विद्या आचार्य) 286

106. राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना का क्रियान्वयन एवं चुनौतियॉ (डॉ. लाड सिंह कॉवर) 289

107. Ethno-pharmacological validation of *Terminalia belerica* Roxb. for Hepatoprotection 291
against acetaminophen and carbon tetrachloride mediated hepatic damage (Dr. Anjana Jadon)

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) डॉ. मनीषा ठाकुर .... फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका

(02) श्री अशोककुमार .... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम

(03) प्रो. डॉ. सिलव्यू बिस्यू .... वाईस डीन (वाणिज्य एवं प्रबन्ध) कृषि एवं ग्रामीण विकास महाविद्यालय, बूचारेस्ट, रोमानिया

(04) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी .... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल

(05) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा .... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत

(06) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव .... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत

(07) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. .... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

(08) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. .... (पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

(09) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे .... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

(10) प्रो. डॉ. संजय भयानी. .... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत

(11) प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम .... अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत

(12) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत

(13) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा .... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत

(14) प्रो. डॉ. संजय खरे .... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत

(15) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय .... परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत

(16) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा .... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत

(17) प्रो. अखिलेश जाधव .... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत

(18) प्रो. डॉ. कमल जैन .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

(19) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से .... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत

(20) प्रो.डॉ. वन्दना जैन .... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

(21) प्रो. डॉ. हरदयाल अहिरवार .... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

(22) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी .... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत

(23) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव .... अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत

(24) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत

(25) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया .... प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत

(26) प्रो. डॉ. विवेक पटेल .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत

(27) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी .... प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

(28) प्रो. डॉ. आर.के. गौतम............ प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय मानकुंवर बाई कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

(29) प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा .... प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत

(30) प्रो. डॉ. आर.पी. सहारिया .... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय जे.एम.पी. महाविद्यालय तख्तपुर जिला,बिलासपुर (छ.ग.) भारत

(31) प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी .... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

(32) प्रो. डॉ. अविनाश शेन्द्रे .... विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत

(33) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता .... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

(34) प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़ .... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

(35) प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा .... विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत

(36) प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार.... प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

(37) प्रो.डॉ. के.एल. साहू................. प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

(38) प्रो.डॉ. मालिनी जॉनसन .... प्राध्यापक, वनस्पति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत

(39) प्रो.डॉ. विशाल पुरोहित .... एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.) भारत

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव ....प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत

(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत ....निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, भोपाल (म.प्र.) भारत

(03) प्रो. डॉ. संजय जैन ....सहायक नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल, भोपाल (म.प्र.) भारत

(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी ....प्राचार्य, शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय........प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

(06) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल ....प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

(07) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर ......प्राचार्य, शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

(08) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र ....प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

(09) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट ....प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

(10) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा ....संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

(11) प्रो. डॉ. टी.एम. खान ....प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला-धार (म.प्र.) भारत

(12) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड ....संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

(13) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी...........अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

(14) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल ....अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर (म.प्र.) भारत

(15) प्रो. डॉ. मंजु दुबे....................संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

(16) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी ....प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

(17) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव ....प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, राजनीति विभाग शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला-रतलाम (म.प्र.) भारत

(18) प्रो. डॉ. पी.के. मिश्रा ....प्राध्यापक ,प्राणी शास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत

(19) प्रो. डॉ. के. के. श्रीवास्तव ....प्राध्यापक ,अर्थशास्त्र, विजया राजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

****

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

**** विज्ञान संकाय ****

गणित:- .... (1) **प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:- .... (1) **प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित**, शासकीय होल्कर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(2) **प्रो.डॉ. रवि कटारे,** शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:- .... (1) **प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:- .... (1) **प्रो. डॉ. मनमीत कौर मक्कड़,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्ज्ैन (म.प्र.)

वनस्पति:- .... (1) **प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)
(2) **प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची,** शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:- .... (1) **प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा,** एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)
(2) **प्रो. डॉ. अमृता खत्री,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्त्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:- .... (1) **प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:- .... (1) **प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:- .... (1) **डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. सुयश कुमार,** शासकीय आदर्श महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:- .... (1) **डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

**** वाणिज्य संकाय ****

वाणिज्य :- .... (1) **प्रो. डॉ. पी.के. जैन,** शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल ,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(3) **प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल,** शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

**** प्रबंध एवं व्यवसाय प्रशासन संकाय ****

प्रबंध :- .... (1) **प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी** , अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी ,** शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:- .... (1) **प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी**, पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

व्यवसाय प्रशासन:- .... (1) **प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा ,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

**** विधि संकाय ****

विधि:- .... (1) **प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन,** प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

**** कला संकाय ****

अर्थशास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा,** शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्त्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)
(3) **प्रो. डॉ. अंजना जैन,** एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.)

राजनीति:- .... (1) **प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. अनिल जैन,** शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(3) **प्रो. डॉ. सुलेखा मिश्रा,** मानकुंवर बाई शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन ,** शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(3) **प्रो. डॉ. उमा लवानिया ,** शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला-सागर (म.प्र.)

हिन्दी:- .... (1) **प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(2) **प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला,** वनस्थली विद्यापीठ (राज.)
(3) **प्रो. डॉ. कला जोशी,** श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

अंग्रेजी:- .... (1) **प्रो. डॉ. अजय भार्गव,** शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री,** शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृत:- .... (1) **प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहास:- .... (1) **प्रो. डॉ. नवीन गिडियन,** शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोल:- .... (1) **प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. अर्चना भार्गव,** शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

मनोविज्ञान:- .... (1) **प्रो. डॉ. कामना वर्मा,** प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. सरोज कोठारी,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकला:- .... (1) **प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव,** महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीत:- .... (1) **प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** सुभारती विश्व विद्यालय मेरठ (उ.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. श्रीपाद अरोणकर,** राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

****** गृह विज्ञान संकाय ******

आहार एवं पोषण विज्ञान:- .... (1) **प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. मधु गोयल,** स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) **प्रो. डॉ. संध्या वर्मा,** शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकास:- .... (1) **प्रो. डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) **प्रो. डॉ. आभा तिवारी,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंध:- ... (1) **प्रो. डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. नम्रता अरोरा,** वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

****** शिक्षा संकाय ******

शिक्षा .... (1) **प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** प्राचार्य, अरावली शिक्षा महाविद्यालय, फरीदाबाद (हरियाणा)
(2) **प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर,** प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) **प्रो. डॉ. अर्चना श्रीवास्तव,** बी.सी.जी. शिक्षा महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(4) **प्रो. डॉ. नीना अनेजा,** प्राचार्य, ए.एस. कॉलेज ऑफ एजुकेशन,खन्ना (पंजाब)

****** आर्किटेक्चर संकाय ******

शारीरिक शिक्षा .... (1) **प्रो. किरण पी. शिंदे ,** प्राचार्य, स्कूल ऑफ आर्किटेक्चर, आई.पी.एस. एकडेमी, इंदौर (म.प्र.)

****** शारीरिक शिक्षा संकाय ******

शारीरिक शिक्षा .... (1) **प्रो. डॉ. अक्षयकुमार शुक्ला,** अध्यक्ष शारीरिक शिक्षा पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

****** ग्रन्थालय विज्ञान संकाय ******

ग्रन्थालय विज्ञान .... (1) **डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. आर.के. गुजेटिया .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत .... ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर .... शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी .... शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डॉ. मनोज महाजन .... शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा .... कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला- नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ. एस.पी. पंवार .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षितिज पुरोहित .... जैन कला-वाणिज्य-विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ.एन.के. पाटीदार .... शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा .... शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. अभय पाठक .... शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान .... शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ. गेंदालाल चौहान .... शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र .... शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन .... शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. कमला चौहान .... शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. डॉ.आभा दीक्षित .... शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी .... शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी .... स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(23) प्रो. डॉ. अनिता गगराड़े .... शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(24) प्रो. डॉ. संजय पंडित .... शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. रामबाबू गुप्ता .... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. अंजना सक्सैना .... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. सोनाली नरगुन्दे .... पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) प्रो. डॉ. भारती जोशी .... आजीवन शिक्षण विभाग देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. एम.डी. सोमानी .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(30) प्रो. डॉ. प्रीति भट्ट .... शासकीस एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. संजय प्रसाद .... शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(32) प्रो. डॉ. मीना मटकर .... सुगनीदेवी कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. मोहन वास्केल .... शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला - झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. नितिन सहारिया .... शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. मंजु राजोरिया .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) प्रो. डॉ. शहजाद कुरैशी .... शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(37) प्रो. डॉ. शैल वाला गाँधी .... महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(38) प्रो. डॉ. प्रवीण ओझा .... श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(39) प्रो. डॉ.ओमप्रकाश शर्मा .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्योपुर (म.प्र.)
(40) प्रो. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव .... शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) प्रो. डॉ. अनूप मोघे .... शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. डॉ. हेमलता चौहान .... शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(43) प्रो. डॉ. महेशचन्द्र गुप्ता .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(44) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर .... शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. आर.के. यादव .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ. आशा साखी गुप्ता .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(48) प्रो. डॉ. हेमसिंह मण्डलोई .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला- सतना (म.प्र.)
(50) डॉ. राजेश कुमार .... शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला-सतना (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश .... शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला-विदिशा (म.प्र.)
(54) प्रो. युवराज श्रीवास्तव .... सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, कोटा-बिलासपुर (छ.ग.)
(55) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी .... शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. ए.के. पाण्डे .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे .... शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. शशि प्रभा जैन .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर-मालवा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी .... शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अर्जुनसिंह बघेल .... शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(61) डॉ. सुरेश कुमार विमल .... शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. अमरचन्द्र जैन .... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. रश्मि दुबे .... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. ए.के. जैन .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. संध्या टिकेकर .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा .... शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव .... शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला .... शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. बलराम सिंगोतिया .... शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला-छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(70) प्रो.डॉ. विम्मी बहल .... शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला - शाजापुर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. अमित शुक्ल .... शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. मीनू गजाला खान .... शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला-शाजापुर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. पल्लवी मिश्रा .... शासकीय महाविद्यालय, नई गढ़ी, जिला- रीवा (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. एम.पी. शर्मा .... शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(75) प्रो. डॉ. जया शर्मा .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(76) प्रो. डॉ. सुशील सोमवंशी .... शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(77) प्रो. डॉ. इशरत खान .... शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(78) प्रो. डॉ. कमलेशसिंह नेगी .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) प्रो. डॉ. भावना ठाकुर .... शासकीय महाविद्यालय रेहटी, जिला सीहोर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. केशवमणि शर्मा .... पंडित बालकृष्ण शर्मा नवीन शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. रेणु राजेश .... शासकीय नेहरु अग्रणी महाविद्यालय, अशोक नगर (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. अविनाश दुबे .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)
(83) प्रो. डॉ. वी.के. दीक्षित .... छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. राम अवेधश शर्मा .... एम.जे.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.)
(85) प्रो. डॉ. मनोज कुमार अग्निहोत्री .... सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. समीर कुमार शुक्ला .... शासकीय चन्द्र विजय महाविद्यालय, डिण्डोरी (म.प्र.)
(87) प्रो. डॉ. आर.सी. पान्टेल .... शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला-धार (म.प्र.)
(88) प्रो. डॉ. अनूप परसाई .... शासकीय जे. योगानन्दन छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(89) प्रो. डॉ. अनिलकुमार जैन .... वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(90) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ .... राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(91) प्रो. डॉ. कल्पना पारीख .... एस.एस.जी. पारीख पी.जी. कॉलेज, जयपुर (राज.)
(92) प्रो. डॉ. गजेन्द्र सिरोहा .... पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(93) प्रो. डॉ. कृष्णा पैन्सिया .... हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला- प्रतापगढ़ (राज.)
(94) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह .... केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(95) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल .... शोध सलाहकार, नई दिल्ली

Screening For Bio-Cementing Bacilli From Soils Of Gujarat

Dr. Dilip N Zaveri * Anurag Zaveri ** Avani Zaveri * Shivangi Prajapati ****

Abstract -Crack formation is a commonly observed phenomenon in concrete structures.Thus, there is always a need to develop an inherent biomaterial, a self- repairing material which can remediate cracks and fissures in concrete.Bacterial concrete is a material, which can be successfully remediating cracks in concrete.The aim of this research was to investigate effects of bacterial calcite precipitation and characterize different groups of bacteria with regards to their ability to form calcite precipitation under different environmental conditions and indifferent culture media aimed to investigate application of bacterial concrete technique to surface cracks and structural crack filling.
Keywords - Bio-cementing, Calcite, Concrete cracks, Gujarat, Biocare.

Introduction - Cracks in concrete are inevitable and are one of the inherent weaknesses of concrete. Water and other salts seep through these cracks corrosion initiates, and thus reduces the life of concrete.Crack formation is a commonly observed phenomenon in concrete structures. Although micro crack formation hardly affects structural properties of constructions, increased permeability due to micro crack networking may substantially reduce the durability of concrete structures due to risk of ingress of aggressive substances particularly in moist environments[1,2,3].So, there is always a need to develop an inherent biomaterial, a self repairing material which can remediate cracks and fissures in concrete[4].

Bacterial concrete is a material, which can be successfully remediating cracks in concrete. This technique is highly desirable because mineral precipitation induced as a microbial activity is pollution free and natural.Bacterial concrete is the most widely used construction material. Despite its versatility in construction, it is known to have several limitations. It is weak in tension, has limited ductility and little resistance to cracking. The ongoing research in the field of concrete technology has lead to the development of special concrete considering the speed of construction, the strength of concrete, the durability of concrete and the environmental friendliness with industrial material like fly ash, blast furnace slag, silica fume, metakeolin etc… Subsequent bacterially mediated calcium carbonate formation results in physical closure. Experimental results showed crack healing of up to 0.46mm wide cracks in bacterial concrete but only up to 0.18mm wide cracks in control specimens after 100 days submersion in water.

Often bacterial activities simply trigger a change insolutionchemistry that leads to over saturation and mineral precipitation. Use of these Bio-mineralogy concepts in concrete leads to potential invention of new material called-Bacterial concrete[4].Many common types of bacteria can use urea, main component of urine, as their source of nitrogen. They break down urea, creating carbon dioxide and ammonia. The ammonia reacts with water to form ammonium hydroxide, which makes any nearly by calcium precipitate out as calcium crystals or lime stones. It is a very slow process in nature, says Stock-Fischer (2001)[5].Unlike conventional sealants bacteria fill up fissures in cement from the inside out, completely meshing with the existing material. Bang and Stocks-Fischer (2001)[5] hope their bacterial builders can be used to seal up cracks and fissures in concrete buildings and other structure.Certain bacteria like *Bacillus pasteurii*, a common soil bacterium can continuously precipitate calcite. Calcite precipitated works as a sealant for the cracks and fissure. The microbial induced calcite precipitation is highly desirable as it is pollution free and natural. This technique can be used as improve compressive strength and a stiffness of cracked specimen.The aim of this research was to investigate effects of bacterial calcite precipitation and characterize different groups of bacteria with regards to their ability to form calcite precipitation under different environmental conditions and indifferent culture media aimed to investigate application of bacterial concrete technique to surface cracks and structural crack filling.

Media -

- Nutrient agar plates
- Urea broth
- NH_4Cl broth

Methods - Sample collection:

* Director, Biocare Research (I) Pvt. Ltd., Ahmedabad (Gujarat) INDIA
** Research Assistant, Biocare Research (I) Pvt. Ltd., Ahmedabad (Gujarat) INDIA
*** Research Assistant, Biocare Research (I) Pvt. Ltd., Ahmedabad (Gujarat) INDIA
**** Research Assistant, Biocare Research (I) Pvt. Ltd., Ahmedabad (Gujarat) INDIA

- Soil samples were collected from different sites of the mines in Gujarat state. There are some countable mines in Gujarat. They are under control of Government and not permitted for common public. Soil samples were collected in plastic bag by using sterile specula. Labeled well and stored.

Preparation -

- Glass slides were drenched in chromic acid for 30 minutes and after that soaked in distilled water for 15 minutes to remove alkalinity.
- Prepare sterile 0.85% NaCl solution. (Normal Saline)
- Prepare sterile Nutrient agar plates, urea broth and NH_4Cl broth.

Sample preparation:

- Weigh 1 gm of lignite soil sample by using sterile specula.
- Add it into 99 ml sterile distilled water.
- Allowed it to stand for 10 min to settle down the soil after that serial dilution is done if needed.

Standard Plate Count Method -

- The sample was diluted before it was plated.
- 1 ml supernatant was spread on Nutrient agar plate.
- Plates were incubated for 24 hrs. at 37^{o}C.
- After the incubation, colony were counted and note down its characteristics and perform other tests.

Other Tests which were carried out on the isolated organisms were -

- Gram's Staining
- Catalase Test
- Carbohydrate fermentation Test
- Methyl Red Test
- Vogus-Proskaur's Test
- Citrate utilization Test
- Indole Production Test
- Gelatin hydrolysis Test
- Triple sugar iron Test
- Urease utilization Test
- Starch hydrolysis Test

Results -

Table: 1 (See in the last page) - Table 1 indicates that pH of all soil samples collected from various sites is acidic. Sample S1 was having little higher pH 5.28 then other samples. Soil collected from Bhavnagar region was having low pH 4.09. All soil samples were found dry in appearance. The color ranging from brown to black.

Table: 2 (See in the last page) - Table 2 indicates number of colonies isolated on nutrient agar plate after 24 hours incubation at 370C in incubator. There were more than 300 colonies isolated. So, dilution was needed for countable colonies. In S3 there was less than one colony was isolated and highest 32 colony was isolated in S6.

Table 3: Distribution of organism isolate (See in the last page) - Table 3 indicates result of Gram's staining, number of colonies isolated, and colony characteristics studies. Sample no.S1, S3, S4, S5 and S7 yielded Gram Positive bacilli. However, S4 and S5 showed presence of Gram Positive cocci and Gram negative coccobacilli.

Table 4: (See in the last page) - Table 4 indicates result of biochemical tests of different bacterial species. *Bacillus megaterium, Bacillus subtilis, Bacillus coagulans, Bacillus pasteurii, Bacillus megaterium* were identified from their characteristics of biochemical result.

Table 5: Identified different bacteria inoculated in different media for producing calcite precipitation

Bacteria isolated from different soil	Different media		
	TSB	NH_4Cl	Urea
Bacillus megaterium(S1)	++	++++	+++
Bacillus subtilis(S3)	++	+++	+++
Bacillus coagulans(S4)	++	++++	+++
Bacillus pasteurii(S5)	++	++++	++++
Bacillus pasteurii (NCIM)	++	++++	++++

Table 5 indicates different bacterial species (identified in Table 4) inoculated in different media- TSB (Tryptic soya broth), NH_4Cl, and Urea. Over all calcite precipitation was high in NH_4Cl by all the strains of Bacillus spp. isolated from soil. It was also observed its known *Bacillus pasteurii* behaved similar in NH_4Cl media. TSB was found to be less helpful in calcite precipitation. Urea and NH_4Cl were found similar result in calcite precipitation.

Conclusion and Discussion - Lignite rich soil is a very good source for isolating *Bacillus spp*. Isolate No.5 *Bacillus pasteurii* and strain procured from NCIM (2477) Pune showed similar activity in all three media tested. Isolate no.S1 *Bacillus megaterium*isolate no.S4 also shows similar activity in all three media tested. This study further needs exploration of all 5 strains of *Bacillus spp.* in terms of actual experiment using in cement blocks mixture of sends.

Many workers have exploited various spp. of Bacillus for production of enzyme. Bacillus pasteurii and *Bacillus subtilis* are well known agent for producing biological sealants (Ramakrishnan V., Ramesh Panchalan., and Bang,S.S., 2000). In present study, we have screened various Bacillus spp. to find out potential agent of Bacillus group producing urease which can be further used to produce calcite / calcium carbonate in medium which can be used in biocementical. S. Sunil Pratap Reddy et al (2010) attempted *Bacillus subtilis* for bacterial concrete preparation. This study showed a significant increase in compressive strength was observed due to the addition of bacteria for a cell concentration of 10 cells per mi of mixing water.

In present study, we identified three Bacillus spp. namely *Bacillus megaterium, Bacillus subtilis, Bacillus coagulans*. These are the three bacterial spp. which consist of five different strains, S1 named *Bacillus megaterium*, S3 *Bacillus subtilis*, S4 *Bacillus coagulans*, S5 *Bacillus pasteurii*, S7 *Bacillus megaterium*. They had shown similar result in NH_4Cl containing media for calcite production. Isolated S5 *Bacillus pasteurii* had shown similar activity in media containing NH_4Cl and urea containing media.

References :-

1. Jonkers, H. M. (2007) Self-healing concrete: a

biological approach. In self-healing materials – An alternative approach to 20 centuries of materials science (ed. S. van der Zwaag), pp. 195-204. Springer, the Netherlands
2. Jonkers, H. M. and Schlangen, . (2008) Development of a bacteria-based self-healing concrete. In Tailor made concrete structure – new solutions for our society. Proc. Int. FIB symposium (ed. J. C. Walravem & D. Stoelhorst), pp. 425-430. Amsterdam, the Netherlands.
3. Jonkers, H. M., Thijssen, A., Muyzer G., Copurogly, O., and Schlangen, E. (2010) Application of bacteria as self-healing agent for the development of sustainable concrete, Ecological Engineering 36(2):230-235.
4. Ramakrishnan, V., Ramachandran S.K., and Bang S.S. Jan-Feb 2001, "Remediation of Concrete using Microorganisms", ACI Materials Jounals, V.98, No. 1, pp. 3-9.
5. Ramakrishnan, V., Ramesh Panchalan., and Bank S.S., May 2001, "Bacterial Concrete – A self-Remediating Biomaterial" Proceedings of 10th International Congress on the Polymers in Concrete, Hawaii.
6. V. Ivanov and J Chu, 2008, "Applications of microorganisms to geotechnical engineering for cioclogging and biocementation of soil in situ," Rev. Environmental Science Biotechnology., Vol. 7, pp. 139-153.
7. Bang SS, Galimat JK, Ramakrishan V (2001). Calcite precipitation induced by polyurethane-immobilized Bacillus Pasteurii. Enzyme Microb. Technol., 28 (4-5): 404-409.

Results:

Table: 1 Properties of soil samples collected from various sites

Sr.No.	Code No.	Sites of Samples collected in Gujarat	Physical Characteristics		
			Color	**pH**	**Appearance**
1	S1	Mata no madh (Bhuj)	Reddish brown	5.28	Dry
2	S2	Rajpardi (Bharuch)	Black	4.33	Dry
3	S3	Tadkeshwar (Surat)	Brownish black	4.78	Dry
4	S4	Thangadh	Brown	4.13	Dry
5	S5	Bhavnagar	Brown	4.09	Dry
6	S6	Mata no madh (Bhuj)	Reddish brown	4.86	Dry
7	S7	Tadkeshwar (Surat)	Brown	4.52	Dry

Table: 2 Distribution of bacterial growth from various soil samples.

Sr.No.	Soil Sample	No.of colony on nutrient agar plate		
		10^{-1}	10^{-2}	10^{-3}
1	S1	>300	99	12
2	S2	No bacterial and Fungal growth	No bacterial and Fungal growth	No bacterial and Fungal growth
3	S3	78	25	<1
4	S4	>300	78	08
5	S5	>300	112	25
6	S6	258	125	32
7	S7	>300	65	03

Table 3: Distribution of organism isolate

Soil Sample	Gram Stain Result	Colony Characteristics	Colony Count
S1	a)Gram Positive bacilli b)Gram negative bacilli	Pin point, Round, Smooth, Sticky Big, Round, Rough, uneven margin, moist	07 08
S2	No bacterial growth	No bacterial growth	—
S3	a)Gram Positive bacilli	Small, Smooth, Moist, Opaque	01
S4	a)Gram Positive bacilli b)Gram Positive cocci	Big, Smooth, Moist, dewdrop like colony Small, dry, Rough, translucent	05 03
S5	a)Gram Positive bacilli b)Gram negative	Small, Rough, moist, Opaque coccobacilli Small, Rough, moist, Opaque	12
S6	TNTC bacterial growth	—	—
S7	a)Gram Positive bacilli	Pinpoint, uneven margin, Rough, Dry, Opaque	03

Table 4: Biochemical profile of bacterial strains isolated from soil

Sample code	**S1**	**S3**	**S4**	**S5**	**S7**
Catalase	Positive	Positive	Positive	Positive	Positive
Spore formation	Positive	Positive	Negative	Positive	Positive
Starch hydrolysis	Positive	Positive	Positive	Positive	Positive
Indole production	Negative	Negative	Negative	Positive	Negative
Methyl Red	Negative	Negative	Negative	Positive	Negative
Voges-Proskauer	Negative	Positive	Negative	Positive	Negative
Simmon citrate	Positive	Positive	Negative	Negative	Positive
Urease	Negative	Negative	Negative	Positive	Negative
Gelatin liquefaction	Positive	Positive	Negative	Negative Negative	Positive /
Fermentation					
Glucose	A	A	A	A	A
Mannitol	-	A	A	A	-
Xylose	A	A	A	A	-
Dextrose	-	A	A	A	-
Identification of bacteria from isolated soil	***Bacillus megaterium***	***Bacillus subtilis***	***Bacillus coagulans***	***Bacillus pasteurii***	***Bacillus megaterium***

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Ethno-Medico Plants To Cure Calculi Disease Of Amarkantak, Anuppur District Central India

Dr. Radheshyam Napit * Dr. Uma Singh **

Abstract - For a long period of time plants have been a vulnerable sources of neutral products for maintaining Human health especially in the last decade with more intensive studies for natural treatments. Frequent ethnobotanical surveys were conducted during July 2012 - Dec 2013 in Shahdol district. Results of these surveys indicated that three species "Patherchata / Punarnava" Boerhaavia diffusa Linn. Euphorbia hirta Linn. (Euphorbiaceae), and Phyllanthus niruri Linn., is interestingly used by the tribal and local peoples.

This paper reports on ethnomedicinal used of 3 potential medicinal plants belong to 2 families of medicinal plants used for ailment of diseases like **Calculi**. Medicinal plants part and parcel of human society to combat disease from dawn of civilization some most useful traditional medicinal plant and still regarded as "village dispensary" in India. It has been extensively used in Ayurveda, Unani Homoeopathic and folk medicine and has become a cynosure of modern medicine. Led by these considerations, 90% ethanolic extract from the plant parts has been tested against human cell organ in **Calculi** and remarkable ethnomedicinal pathic was ancient formula applied for various diseases. The belief on folk medicine for healthcare is associated with the traditional reliance of effectiveness as well as lack of modern medicines and medication and poorness status. The scientists by discovered had been various cell in growth of **Calculi.** (Kidney, Urinary tract, Penis and Liver).

The growth inhibition was observed in the range of 70-80% and this part of the plant can be further exploited to get better compounds that may have the potential to treat **Calculi**.

Indiscriminate collection and over-exploitation of some commercially important medicinal plants was also noted. It is suggested that local forest management needs to be made conversant with sustainable harvesting methods, cultivation of commercially important plant species, and detailed assessment of the economic value of medicinal plants.

Key word - Ethnomedicinal plants to cure stone diseases.

Introduction - The use of traditional medicine is widely accepted by rural people in Amarkantak. Amarkantak was rich in medicinal plant's having a biodiversity of about 500 - 1000 species occurred. About 75 percent of these are collected from wild. Maheshwari (1992), Jain (1967a.) reported that the country has many areas where the traditional medicine culture is rich and diverse, making it an ideal site for ethnobotanical study.

Amarkantak, a beautiful hill station in Anuppur district of Madhya Pradesh, is situated in 22^0 41' N and 81---^{0} 46' E on the eastern most extremity of Maikal range. It is a holy place of pilgrimage and origin of river Narmada, Son, Johila and Mahanadi. It lies on a plateau at an altitude of approximately 1100 meters.

The forest vegetation of the Plateau is of sub tropical type dominated by Sal trees. The soil in usually latrite the climate is monsoonic tide with well defined summer, rainy and winter. May and June are the hottest month December and January are the coldest Month (T.0.4^0C). The average annual rain fall is 1000-1500 mm.

Anuppur, Amarkantak is the home of many ethnic groups. Within this small district, more than 12 ethnic groups and different castes live (Pranaya Verma 1994) viz., Gond, Baiga, Kol, Panika, Pav, Pavia, Agaria, Bheel, Bhaina, Oraon, Bhumia, and Kanvar etc. The density of Baiga & Gond Population is higher than others. They live in remote areas of the forest. They mainly depend on natural products of the forest for their livelihood and have retained their traditional cultures and folklores. Due to close and constant association with the forests areas. They have fairly good knowledge of the medicinal and other value of their surrounding plants and mostly depend on them for the remedies of their ailments and diseases.

Study Sites - Four study sites were selected in different parts of Amarkantak as Bhundakona, Jaleshwar, Sonemuda and Narmada Kund (Mai ki bagiya), Podki, Pondi, Lalpur, Damedi, Bilaspur village; Pushprajgrah- for the collection of Plant's being used ethnobotanically. These areas were selected on the basis of varied altitude and richness of species, which also comprise rich cultural diversity.

Map of Anuppur - (See in the last page)

Methodology (Ethnomedicinal Information) - The local healers and knowledgeable villagers were consulted during the field trips covering different season during July 2012 -

*Guest Faculty (Botany) Govt Degree College, Pali, Distt - Umaria (M.P.) INDIA
**Deptt. of Botany, Pt. SNS Govt P.G. College, Shahdol (M.P.) INDIA

Dec 2013 Ethnomedicinal information were collected following the methods discribed by Jain (1967a.). Knowledgeable people and medicine men use, part used method of drug preparation, dosage and local name. Under enumeration plant names have been alphabetically. The correct botanical name is followed by family within parentheses' local names and medicinal uses. All the specimens have been deposited in the department of Botany, Pt. S.N.S. Govt. P.G. College Shahdol (M.P.).

Description of plant species - *Boerhaavia diffusa Linn.* (Nyctaginaceae) syn. *B. repens* (Linn.) "LN.,-Patherchata, H., - Sat, San., - Punarnava ,Eng.,- Horse Puruni spreading, Hog Weed"

Habit - Common throught M.P. Decumbent or diffuse, extensive perennial herb. A deep tap root – 10 -15cm. long prostrate stem branching. Leaves, ovate, smooth, fleshy, whitish underside, unequal, in pairs. Flowers, Calyx persistent umbels, small pink on an axillary stalk in panicle heads. Involucre leaves reduced to scales, the parienth is folded into bud. Stamens 3. Fruit club shaped with glands on the five ribs, covered with stalked, glandular hairs, one seeded. Calyx persistent with the fruit. Flowering throught the year. Perpetuation by seed and cuttings.

Distribution: Throughout the hotter parts of Anuppur.

FF – Å, ⚥ P $_{(5)}$, A_5, $\underline{G}_1$.

Medicinal Parts - Whole plant (Fresh)

Active constituents - Plant yield as Alkaloids – Punarnavan, Sterol, â- Sitosterol, Elentine, Stearic acid, Palmitic acid, Minerals, Potassium nitrate, Sodium, Sulphate and Chloride and also root contains hypoxanthin- 9- L- arabinofuranosid (plant) , hentriacontane, b- sitosterol ursolic acid, triacontaonol boeravinone C, and punarnavoisde(roots).

.**Biological Actions -** Anti – bacterial, anti-inflammatory, anti-viral, astringent, bitter, cooling, diaphoretic, laxative, stimulant, stomachic**.**

Reference - Asolkar et al, (1992); Kshirsagar and Singh, (2000); Paranjpee, (2000).

Euphorbia hirta Linn. **(Euphorbiaceae) "L.N. -Dudhia"**
H. - Badi Dudhi; S. - Laghududhika; Dugidica; Eng., - Australian asthma herb.

Habit – Herbaceous, annual or perennial, common milky weed. Occur in waste and moist places. Root- tap, Stem- herbaceous. Leaf- opposite, ovate-lanceolate, simple, stipulate. Inflorescence- cyathium. Flower- pink, bracteate, unisexual, incomplete, actinomorphic, hypogynous, perianth absent. Androecium- Capsules gynoecium tricarpellary syncarpus superior trilocular. Flowering - Throughout the year.

Distribution - Throughout the hotter parts of Anuppur.

F.F. ♂, Po, A1, Go
F.F. ♀, Po, Ao, G $_{(3)}$.

Medicinal Parts - Whole plant (Fresh)

Active constituents – Plant yield like- Albuminoids, Cathin, Ellagic acid, Euphosterol, Oleic, Linoleic acid Gallic acid, Mellistic, Mucilage, Oxalate, Palmitic Phenolics,Phytosterol, Phytosterolin, Resin Tannins, Triacentane, Zanthorhamnin wax .Root contains Various important constituents are : choline, shikimic acid, L-inositol, sugars, thexacosanol, 24-me-enacycloartenol, tenol, cycloartendl, β - sitosterol, euphorbal, hexacosonate, b-amyrin- OAc, tinyatodn, 2 derivatives of deoxyphorbol-Oac, ingenol-tri OAc, hexacosanoate, β -amyrin acetaie, l-hexa cosnd, tinyatoxin,12-deoxy-4- β -hydroxy-phorbol- 13-dodecanoate-20-acetate, thexacosanol, tiny-atoxin, 12-deoxy- 4 β -hydroxryphorbol-13-phenylacetate-20 acetate, ingend iriacetate, (stem), hentriacontane, myricyl alc., taraxerol (flowers), 2 derivatives of deoxyphorbol- OAc, ingenol-tri-OAc, taraxerone, leucocyanidol, quercitol, camphol, quercitrin and quercitol derivatives containing rhamnose and chtorlphenolic acid .

Biologicat Activitiy - Alc. ext. of the whole plant shows + ve calculi activity in men.

Phyllanthus niruri Linn. **(Euphorbiaceae) "LN. - Bhui Alma"**
H. - Bhumi Avnla; Jar Amla; S. – Bhumyamalaki; Eng.,- Carry-me-seed.

Habit- An erect 15-45 cm tall, smooth, spreading annual, with leaf bearing branches. Leaves sub sessile, elliptical, oblong, obtuse, overlapping, branch, like a compound leaf. Stipules lanceolate, subulate, acute. Flowers small, axillary, clustered, minute, unisexual, greenish. Male flowers 3 to 4 in the axile of the lower leaves of the branch, sessile. Perianth 5-6, free in two whorls, stamens 3, female flowers borne singly in the leaf axile of upper leaves of the branch. Ovary tricarpalary, styles 3, trifid. Fruit- schizocarpic regma. Flowering Sept. - Oct. A very common weed. Reproduce cycle - (Flowering) Aug-Oct.

Distribution: Throughout the hotter parts of Anuppur.

F.F. – ♂, P_{3+3}, A_3, $\breve{G}_0$.
F.F. – ♀, P_{3+3}, A_0, G $_{(3)}$.

Medicinal Parts - Whole plant (Fresh)

Active Constituents - Leaves mainly contain phyllanthin, hypophyllanthin, linetetralin, phyltetralin and hydroxyniranth.

References - Johnson, (1998); Kurian, (1995); Lalramnghinglova, (1996); Paranjpe, (2001); Ross, (1999); Sivarajan and Balachandran, (1994).

History - The fresh whole plants or dry, of the plants have been used residing in and around the wild for checking stone disease and rapidly use. This is widely and local known healer among the tribal; and local inhabitants. The tribes have been using it since time immemorial. It is said that they used the together pasted that the stone disease had good result meat since than they have been using it for healing breaking Stone (Calculi) diseases.

Folk use - How to Use - "Patherchata / Punarnava" ***Boerhaavia diffusa Linn.*** Pasted of leaves and root both1 spoon, mixed with "Badi Dudhi" ***Euphorbia hirta Linn,*** *whole plant* 1/2 tea spoon and "Bhumi Avnla" ***Phyllanthus niruri Linn.*** Whole plant 1/2 tea spoon together given orally once a day for 7-21 days to cure calculi.

Conclusion - ***Boerhaavia diffusa Linn. Euphorbia hirta Linn.*** **(Euphorbiaceae)*****, and Phyllanthus niruri Linn.,*** has been found to be a wonderful stone healer. Application of fresh whole plant, stem and leaf stops Stone (calculi) diseases. It is likely that some anti Stone diseases properties associated with the plant species prevent this disease. The conducted ethnobotanical studies on the plant's species of Anuppur (Amarkantak) remote forest and local areas.

Acknowledgement - The research scholar R.S.Napit, thankful to the Dr. Smt. Darshan Thakur, Principal Govt. P.G. College Narsinghpur, Jabalpur and also thankful to the tribes (Medicine men) and local inhabitants who are provided the information.

References :-

1. Jain, S. K. (ed.) 1996. Ethnobotany in Human welfare deep publications, New Delhi.
2. Jain, S. K. 1967. Plants in Indian medicine and folklore associated with healing of bones - Indian Med. J. 57:307-369.
3. Chopra, R. N. 1933. Indigenous Drugs of India. The Art press Kolkata.
4. Anonymous, 1968. Medicinal plants of India, Vol. 1.ICMR, and New Delhi.
5. Bhattacharjee, S. K. 1998 Handbook of medicinal plants. Pointer Publishers, New Delhi.
6. Chopra, R.N. Chopra, I.C. and Verma, B.S. 1968. Supplement to Glossary Indian Medicinal Plants CSIR, New Delhi.
7. Paranjpe, P. 2001. Indian Medicinal Plants Forgotten Healers. A guide to Ayurvedic, Healer Medicine. Chakhamba Sanskrit Publishers.
8. Jain S.K. 1991.Dictionary of Indian Folk Medicine and Ethno botany Deep, Publications , New Delhi, India P.135
9. Maheshwari, J.K. 1970. New vistas in ethnobotany. J. econ. Taxon Bot. (Addl.ser) : 1-11.
10. Napit, R. S. and Kumar K. 2012. Ethnomedicinal use Euphorbia Plants by Tribal, Communities of Shahdol District of M. P. Agrobios News Letter Page. N0. 47-48.
11. Napit, R. S., Shrivastava D. K. & Mishra S. K. 2011. Ethno-medico Botanical Study of Paliha Tribe of Gohparu Block Distt. Shahdol M. P. (India) Journal of Tropical Forestry Vol. 27. Pag N0. 62-64.
12. Napit, Dr. Radheshyam, 2015.Ethnomedicinal Studies on Baiga Tribes in Jaisinghnagar Block District Shahdol M.P. Central India. Research Hunt An International Multi Disciplinary e-journal, Vol.÷ Issue. I, Jan-Feb - 2015 Pag. 9- 12.
13 Napit, Dr. Radheshyam, 2015. *Medicinal Plant King of Bitters "Swertia chirata Buch.Ham." (Gentianaceae) Chirayata Used by Tribals of Amarkantak regions District Anuppur Central India.* Research Hunt An International Multi Disciplinary e-journal,. Vol.÷ Issue. I Jan-Feb -2015 Pag.1-4.
14. Napit, Dr. Radheshyam, 2015. Ethnomedicinal Plants (Ptreridophytes) Study and Indegenous Knowledge of Pushprajgrah block with Special Reference to Amarkantak Anuppur District M.P. India. Research Hunt An International Multi Disciplinary e-journal, Vol.÷ Issue. I Jan-Feb -2015 Pag.5-8.
15. Napit, Dr. Radheshyam, 2015. Calotrapis (Asclepia-daceae) Plants Used By The Tribal And Local Peoples. In The Administered Of Skin Disease "Leucoderma" District Shahdol Central India.Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) Jan. to March Vol. 1 Pag.34-35
16. Sinha, A. 1959 a, Chemical examination of the seeds of Jatropha curcas Linn. J. Inst. Chem. (India) 31, 213.
17. Ramachandran, V.S. and Nair, N.C. 1981 Ethnobotanical observation on rurals of Tamil Naidu (India). J.Econ. Taxon. Bot. 2:183-190.
18. Sinha, B.K. and Dixit, R.P. 2001 Ethnobotanical studies on Sarcostemma acidum (Asclepiadacea) from Khargaon Distt., Madhya Pradesh Ethnobotany 13:116-117.
19. Shah, N. C. 1987. Ethnobotany in the mountainous Region of Kumaon Himalaya. Thesis submitted to the Kumaon University, Nainital for the Degree of Doctor of Philosophy in Botany. 1-255.

(See Photos in Next Page)

Fig.9. A of Couple, Vaidya & Village Pradhan (Sarpanch) .
Photo plate

1. Boerhaavia diffusa Linn.

2. Euphorbia hirta Linn.

3. *Phyllanthus niruri Linn.*

✼✼✼✼✼✼✼✼✼✼✼✼✼

Effect Of Light On The Infectivity Of Groundnut (Arachis hypogaea L.) Mosaic Virus

Dr. Madhu Mishra *

Abstract - Light was found to be one of the important factors in determining the incubation period and disease development. The optimum light period for disease development was 12 hours in a day and incubation period was 8-10 days. Incubation period was increased by increasing or decreasing the optimum light period. In the continuous light period, the incubation period was 18-20 days while in continuous darkness; plants did not survive up to symptom expression. Total infection was found in case of normal sunlight with an incubation period of 9 days. Blue light showed 95% infection with incubation period of 11 days. Green light was found to be less effective. Hundred percent infections was noted at L_2 (11000 Lux) & L_3 (21000 Lux) intensities and incubation period was 11 days at both the times while at L_1 (3500 Lux) intensity, percentage of infection was 90 with incubation period of 13days.
Key Words - Groundnut Mosaic Virus, Infectivity, Incubation Period.

Introduction - Light intensity and duration affects the virus production and disease expression in different ways, but generally, high light intensity for long period favors multiplication (Takahashi, 1947[7]; Pound and Bancroft, 1956[5]; Pound and Graces - Orejuela, 1959[6]; Bancroft, 1958[2]). However contrary to this Asomaning and Lockhard (1964)[1] found that high light intensities inhibit the development of stem and root swellings caused by cocoa swollen shoot virus in cocoa. Coast and Chant (1970)[3] observed that plants exposed for 24-72 hrs. to light of different wavelengths differed in their subsequent susceptibility to virus infection. Dorozhin and Grebenshchikova (1976)[4] studied the effect of light intensity on the concentration of mosaic viruses in potato plants.

Material And Methods - Effect of light on the infectivity of virus and the disease development was studied under three experiments viz; duration of light, quality of light and light intensity.

(a) Duration of light- The effect of duration of light on the incubation period was studied by subjecting the test plants to different durations of exposure to light after inoculation, every day till they developed symptoms.

(b) Quality of Light- To study this aspect, four qualities of light viz; blue, green, yellow and red were used to see their effect on the incubation period and the disease development. The chambers of 2" x 2" x 3" size were prepared and they were covered with double layer of transparent celluloid paper. Alternate holes were made in the side walls of the chambers to provide full aeration to the plants. For the control plants, white transparent paper was used. Seven days old healthy seedlings of test plant after inoculation with the standard virus inoculums, were kept in the chambers. Five plants were kept in each chamber.

(c) Intensity of Light- To provide different light intensities wooden frames of 4" x 4" x 3" size were made and three levels of light intensity were maintained by covering these chambers with varying thickness of muslin cloth. The intensity in each chamber was measured by Luxmeter. Young healthy seedlings of test plants after inoculation with the standard virus inoculum were kept in these chambers. Five plants were kept in ech chamber. The test plants which were kept in the sunlight (natural light) were treated as control. Plants were kept under observations for development of infection.

Result And Discussion - Results are presented in table 1, 2 & 3. It is concluded from the results presented in table-1 that the optimum light period for disease development was 12 hours in a day. The incubation period was increased by increasing or decreasing the optimum light period. In the contiunous light period (24 hrs.), the incubation period was 18-20 days while in continuous darkness plants did not survive up to symptom expression. Infection was observed in 90% of the plants at the optimum light period with incubation period of 8-10 days.

It is obvious from the results presented in table that the incubation period for blue, green, yellow red and normal sunlight (control) were 11, 17, 15, 13 and 9 days respectively. Hundred percent infection was noted for control plants. While percentage infection was less in case of green light (75%).

Results mentioned in table 3 clearly indicate that at low light intensities, symptoms appeared earlier than the control i.e., incubation period was less in low light intensities as compared to control (normal sunlight). Percentage infection was hundred percent at 11000 Lux and 21000 Lux Light intensities. At 3500 Lux Light intensity, infection was seen in 90 percent test plants and incubation period was 13

* Principal, Anand Vihar College for Women, Bhopal (M.P.) INDIA

days. 85% infection was observed in control plants with an incubation period of 15 days.

References :-

1. Asomaning, E.J.A. and Lockhard, R.G. 1964: Studies on the physiology of cocoa (Theobroma cocoa L.). Suppression of swollen shoot symptoms by light. Ann. appl. Biol.; 54 : 193-198.
2. Bancroft, J.B. 1958: Temperature and temperture-light effects on the concentration of squash mosaic virus in leaves of growing cucurbits. Phytopathology; 48 : 98-102.
3. Coast, E.M. and Chant, S.R. 1970: The effect of light wavelength on the susceptibility of plants to virus infection. Ann. appl. Biol; 65: 403-409.
4. Dorozhkin, N.A. and Grebenshchikova, S.I. 1976: Effect of light intensity on the concentration of mosaic viruses in potato plants from Referativnyi Zurnal; No. 18, 192-195.
5. Pound, G.S. and Bancroft, J.B. 1956: Cumulative Concentration of tobacco mosaic virus in tobacco at different photoperiods and light intensities. Virology; 2: 47-56.
6. Pound, G.S. and Graces - Orejuela, C. 1959: Effects of photoperiod on the multiplication of turnip mosaic virus in grape. Phytopathology; 49:16-17.
7. Takahashi, W.N. 1947: Respiration of virus - infected plant - tissue and effect of light on virus multiplication. An. J. Botany; 34 : 496-500.

Table-1 : The effect of duration of exposure to light on incubation period(Each reading is mean of 5 replicates)

S. No.	Light Duration in hrs.	Number of Plants		% Transmission	Incubation period (days)
		Inoculated	Infected		
1.	4	20	5	25	19-21
2.	6	20	7	35	16-18
3.	8	20	9	45	15-17
4.	10	20	13	65	13-15
5.	12	20	18	90	8-10
6.	14	20	17	85	10-12
7.	16	20	16	80	11-13
8.	18	20	14	70	12-14
9.	20	20	12	60	15-17
10.	22	20	9	45	16-18
11.	24	20	6	30	18-20
12.	Darkness	20	0	0	—

= Plants did not survive up to symptom expression.

Table-2 : Effect of quality of light on the incubation period

S. No.	Quality of light	Number of Plants		% Transmission	Incubation period (days)
		Inoculated	Infected		
1.	Blue	20	19	95	11
2.	Green	20	15	75	17
3.	Yellow	20	17	85	15
4.	Red	20	18	90	13
5.	Control	20	20	100	9

Table-3 : Effect of different light intensities on the incubation period

S. No.	Light Intensity	Number of Plants		% Transmission	Incubation period (days)
		Inoculated	Infected		
1.	L_1	20	18	90	13
2.	L_2	20	20	100	11
3.	L_3	20	20	100	11
4.	Control	20	17	85	15

L_1 = 3500 Lux, L_2 = 11000 Lux, L_3 = 21000 Lux, Control = Normal sun light

****

2-Amino-5 (3-methoxy-4-acetoxy-5-allyl phenyl)-1:3:4-thiadiazole and its N-substituted derivatives - A Synthesis

Dr. Seema Negi *

Introduction - It was thought that antimaterial activity of compounds is due to presence of quinoline structure in the molecule present in cinchona alkaloid.[1] Various experiments and chemicals tried for antimalerial activity, Ree[2] reported mepacrine active against schizots of three types of malaria. Introduction of Thiadiazole as antibacterial agent and variation made in structure gave it faimiliarity with the structure of pyrimidine.[3-4]

Crowther [5] Britwell have mentioned N artyl and alkyl trio urias as active antimalrials.

Voughan Jr and Co-workers[6] prepared 2-Sulphonamido derivative of thiadiazole and found it active in vitro.

Chemotherapy of thiadiazoles reported by Tappi[7]. He reported 2-sulphoramido 5- methyl- 1:3:4 - thiadiazole exhibited heighly specific activity against Microbium Tuberculosis. Interesting pharmacological activity at 2-amino and 5-substituted thiadiazoles.[8,9]

Cyclization of aldehyds thiosemicarbazone by ferric cholride[11] or by bromine gives thiadiazoles. oxidative cyclization with Br_2 found more yielding than ferric chloride cyclizing agent. Br_2 was introduced by Skaigues[12]. Use of sulphuric acid is also reported as cyclizing agent.

Looking to the importance of thiadiazoles as chemotherapeutic agent such as bacteriostat, antimalerial and carbonic anhydrase inhibitator present.

Thiadiazole have been synthesized by the cyclization of thiosemicarbazone of 3-methoxy-4-acetoxy-5-allyl benzaldehyde with the procedcure suggested by Gibson 2-amino-5(-3methoxy-4-acetaxy-5-allylphenyl) 1:3:4 thiadizole with molecular formula.

$C_{14}H_{15}O_3N_3S$ with mp (69°c) and N-substituted derivatives of 2-amino-5 (3-methoxy-4aceoxy 5-allyl phenyl) 1:3:4 thiadiazole synthesised.

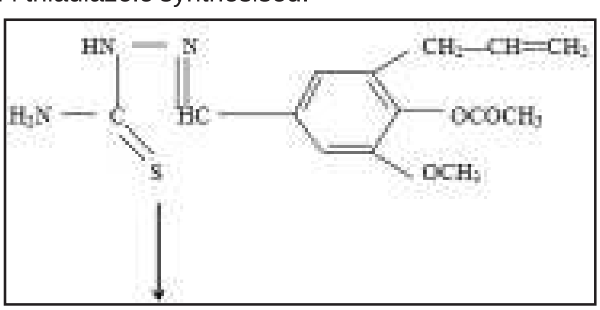

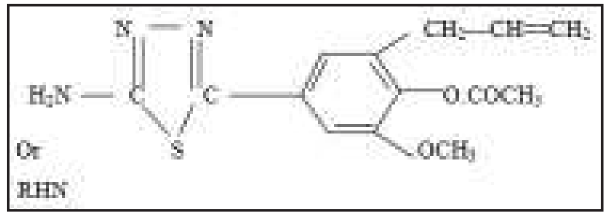

Various Derivatives - R=HCOC$_6$H$_4$Cl(p), COC$_6$H$_5$, COCH$_3$, COC$_6$H$_4$(p), SO$_2$CH$_3$, SO$_2$C$_6$H$_4$CH$_3$(p).

Various derivatives were prepared and listed in table-I.

Table - I (Table see in the last page)

Further sythesis is confirmed by estimation and I R spectra showing NH_2 (Stret. vib) 3350 cm^{-1}, OCH_3 1190 cm^{-1} (Sharp and strong), CH_2-CH=CH_2 1290 cm^{-1}. NMR Datas have shown absorbtion-OCH_3 proton at 2.8 d, -CH_2-CH=CH_2 1.6 d, aryl protone 7.2 d, -NH 2.8 d.

The biological activity of these compounds is under investigation.

Experimental -

1. **Preparation of 3-methoxy 4-acetoxy benzaldehyde-** Mixture of vaniline 12.6g, pot. carbonate (20g), allylbromide (6.8 ml), dimethyl formamide (25 ml) was shaken vigourously till homegenicus solution was obtained. Contents left for overnight and poured in water (ca. 150 ml), acidified with 2 N hydrochloric acid and extracted with ether washed with aq. sodium hydroxide until free from veniline further washed with water dried over anhy. magnecium sulphate.

Yield 10.79 g BP 200^{0}c

2. **Claisen rearrangement of 3-methoxy-4-allyloxy-benzaldehyde to 3 methoxy-4-hydroxy-5-allyl-benzaldehyde.**

3-methoxy-4-allyloxy-benzaldehyde 5 g was heated in oil bath at 200 to 220^{0}c for two hours. The viscous liquid on cooling gave pale yellow solid which was purified by recrystallization by ethanol.

Y; 4.92 g (98%) mp 86^{0}c

3. **Acetylation of 3-methoxy-4-hydroxy 5-allyl benzoldehyde; formation of 3-methoxy-4-acetoxy-5 allyl benzaldehyde.**

A mixture 3-methoxy-4-hydroxy-5allyl-benzaldhyde (3g), dry pyridine (10ml) with acetic anhydride (5ml) was shaken

*Asst. Professor, Govt. J.M.P. College, Takhatpur (C.G.) INDIA

mechanically for two hours. Cool the contents, left overnight and then poured in ice when the solid separated.

Yield 2.289 g 63% mp 71-72^{0}c

4. **Preparation of 3-methoxy-4-acetoxy-5 allyl-benzaldehyde with thiosemicarbazide formation of thisemicarbazone-3-methoxy-4-acetoxy-5-allyl benzaldehyde.**

The aldehyde dissolved (2.34 g) in aqueans ethanol (30ml, 95%) and thio semicarbazide (0.91 g) in water (4 ml) together, with acetic acid (10 drops) were reflexed for thirty minuites. On cooling the contents, solid precipitated out which was filtered under suction washed with water and ethanal further recrystallised from acetic acid.

Yield; 2.3 g mp 160^{0}c

5. **Cyclization of 3-methoxy-4-acetoxy-5-allyl - benzalatehyde thiosemicarbazone; formation of 2-amino-5 (3-methoxy-4-acetoxy-5-allyl-phenyl) 1:3:4 thiadiazole.**

Thiosemicarbazone of-3-methoxy – 4-acetoxy-5-allyl benzaldehyde (2.83 g), powdered anhydrous sodium acetate (4.0 g), glacial acetic acid (15 ml) solution of bromine was stirred for half an hour. The mixture was poured in ice (ca. 180 ml). Solid separated out collected, dried, recrystallised from ethanol.

Yield; 2.4g (65.6%) mp 69^{0}c

Found : N 10.48, S 1.47, $C_{14}H_{15}O_3N_3S$ requires N, 10.49 S 1.49%.

6. In another method mixture of thisemicarbazone of aldehyde (1.535 g), ferric chloride hexa hydrate (11.00 g, 0.2 mol) in ethanol (90 ml) was stirred and heated on water both for half an hour. Alcohal removed under reduced pressure distillation, recedue cooled and treated with hydrochloric acid (8 ml). The contents were left at 0^{0}c for two hours. Precipitated solid on collection washing with HCL. Base was liberated with Liquor ammonia and mixture heated on water bath for fifteen minutes the resulted thiadiazote was extracted with boiling ethanol, concentration of this gave thiadiazole.

Yield; 0.5 g (32.4%) mp 69^{0}c

Found : N 10.48, S 1.47, $C_{14}H_{15}O_3N_3S$ requires N, 10.49, S 1.49%

7. **Reaction of p-chloro-benzoyl chloride (and other chlorides) with 2-amino-5(-3-methoxy-4-acetoxy-5-allyl phenyl)-1:3:4-thiadiazole; formation of N- (p-chloro benzamido) -5-methoxy-4-acetoxy-5-allyl phenyl) 1:3:4 thiacliazole**

The thiadiazole (0.305g) was dissolved in acetone (10ml) and aquerous sodium hydroxids (10ml. 10%) was added. The contents were cooled in ice/water mixture and p-chloro-benzoyl-chloride was added in portions with vigourous shaking. The solid separated was collected washed with water and petroleum ether and recrystallised from alcohol.

Yield; 0.37 g (83.4%) mp 138^{0}C

Found N; 9.42, S 7.20, $C_{21}H_{18}N_3O_4SCl$

Requires N, 9.42, S, 7.21%

Other N-substituted-5-(3-methoxy-4-atetosy-5-allyl-phenyl)-1:3:4 thiadiazoles, are also prepared by the same method. Datas collected are tabuled in table – II.

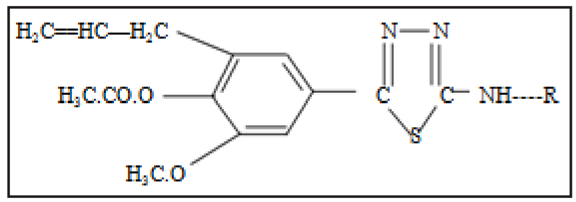

Table - II (Table see in the last page)

References :-

1. P.J. Pelletier and J.B. Caventou; Am. Chim at phys. 15, 289 (1870).
2. Ree Mortin, Bevan J. Pharmacol, 77, 127 (1943).
3. Rose and Swain J. 689 (1945).
4. Rose and Tuer J. 81 (1946).
5. Crowther, Curd, Hendry and Rose. J. 1636 (1948).
6. Jomes are Vaughan Jr. Joyle A. Richler and George W Anderson J. Amer. Chem, Soc. 21, 700, 1956.
7. Tappi and Nigliardi, Arch. Sci. Biol, 27, 170 (1941)
8. Nothey E. H. The sulphonamides and allied compounds (Reinhold publishing carp. New yark) 55, 36, 92, 93, 408. (1948).
9. Maffi, C Testa E. Etlorre, R. Elframco (Pavia) Ed. Sci, 13, 187 (1958).
10. C.A. 47, 9324(1953)
11. M.S. Gibson Tetrahedron, vol18, 1377 (1962)
12. Saaglues K. Acta Chem. S. Can. 14, 1054 (1950)
13. Dr, S. K. Latta (Ph.D. thesis) A.P.S. University Rewa (MP) 1977.

Table - I, II (see in next page)

Table - I

N-Substituted derivatives of (3-methoxy-4-acetoxy-5-allyl phenyl) -1:3:4-thiadiazole

S. No.	Group R.	Yield		Colour	M.P. °C.	Moleculer formula	Analytical %	
		g.	%				Found	Requires
1	$COC_6H_4Cl(p)$	0.37	83.4	Brown	138	$C_{21}H_{18}N_3O_4SCl$	N, 9.42 S, 7.20	9.42 7.21
2	COC_6H_5	0.21	51.3	Light Brown	96	$C_{21}H_{19}N_3O_4S$	N, 10.26 S, 7.82	10.262 7.82
3	$COCH_3$	0.120	34.6	Yellow	122	$C_{16}H_{17}N_3O_4S$	N, 12.13 S, 7.15	12.13 7.16
4	$CO(C_6H_4)F(p)$	0.301	69.03	Yellow	Unspecified	$C_{21}H_{18}N_3O_4SF$	N, 9.83 S, 7.44	9.83 7.496
5	SO_2CH_3	0.159	49.6	Brown	98	$C_{15}H_{17}N_3O_5S_2$	N, 10.93 S, 10.70	10.96 16.71
6	$SO_2C_6H_4C_3H(p)$	0.09	13.3	Brown	80	$C_{21}H_{21}N_3O_5S_2$	N, 9.23 S, 13.9	9.23 13.9

Table - II

N-Substituted derivatives of (3-methoxy-4-acetoxy-5-allyl phenyl) -1:3:4-thiadiazole

S. No.	Group R.	Yield		Colour	M.P. °C.	Moleculer formula	Analytical %	
		g.	%				Found	Requires
1	$COC_6H_4Cl(p)$	0.37	83.4	Brown	138	$C_{21}H_{18}N_3O_4SCl$	N, 9.42 S, 7.20	9.42 7.21
2	COC_6H_5	0.21	51.3	Light Brown	96	$C_{21}H_{19}N_3O_4S$	N, 10.26 S, 7.82	10.26 7.82
3	$COCH_3$	0.120	34.6	Yellow	122	$C_{16}H_{17}N_3O_4S$	N, 12.13 S, 7.15	12.13 7.16
4	$CO(C_6H_4)F(p)$	0.301	69.03	Yellow	Unspecified	$C_{21}H_{18}N_3O_4SF$	N, 9.83 S, 7.44	9.83 7.496
5	SO_2CH_3	0.159	49.6	Brown	98	$C_{15}H_{17}N_3O_5S_2$	N, 10.93 S, 10.70	10.96 16.71
6	$SO_2C_6H_4C_3H(p)$	0.09	13.3	Brown	80	$C_{21}H_{21}N_3O_5S_2$	N, 9.23 S, 13.9	9.23 13.9

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) Oct. to December 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

Fundamental Of Nanoparticles

Dr. Neeraj Dubey *

Introduction - Nanoparticles are particles between 1 and 100 nanometers in size. In nanotechnology, a particle is defined as a small object that behaves as a whole unit with respect to its transport and properties. Particles are further classified according to diameter. Ultrafine particles are the same as nanoparticles and between 1 and 100 nanometers in size, fine particles are sized between 100 and 2,500 nanometers, and coarse particles cover a range between 2,500 and 10,000 nanometers. Nanoparticle research is currently an area of intense scientific interest due to a wide variety of potential applications in biomedical, optical and electronic fields.

Particles in size range 10^{-9} m are known as nanoparticles or sub-micron particles. They are also Known as quantum dots due to quantum property possess by them. In nanotechnology , a sub- classification of ultrafine particle with lengths in two or three dimensions greater than 0.001 micrometer (1 nanometer) and smaller then about 0.1 micrometer (100 nanometers) and which may or may not exhibit a size-related intensive property.

Nanoparticles are considered a discovery of modern science, they actually have a long history. Nanoparticles were used by artisans as far back as the ninth century in Mesopotamia for generating a glittering effect on the surface of pots.

The luster originated within the film itself, which contained silver and copper nanoparticles dispersed homogeneously in the glassy matrix of the ceramic glaze. These nanoparticles were created by the artisans by adding copper and silver salts and oxides together with vinegar, ochre, and clay on the surface of previously-glazed pottery. The object was then placed into a kiln and heated to about 600 °C in a reducing atmosphere.

The chemical processing and synthesis of high-performance technological components for the private, industrial, and military sectors requires the use of high-purity ceramics, polymers, glass-ceramics, and composite materials. In condensed bodies formed from fine powders, the irregular particle sizes and shapes in a typical powder often lead to non-uniform packing morphologies that result in packing density variations in the powder compact.

Uncontrolled agglomeration of powders due to attractive van der Waals forces can also give rise to in microstructural inhomogeneities. Differential stresses that develop as a result of non-uniform drying shrinkage are directly related to the rate at which the solvent can be removed, and thus highly dependent upon the distribution of porosity. Such stresses have been associated with a plastic-to-brittle transition in consolidated bodies, and can yield to crack propagation in the unfired body if not relieved.

Properties - Nanoparticles are of great scientific interest as they are, in effect, a bridge between bulk materials and atomic or molecular structures. A bulk material should have constant physical properties regardless of its size, but at the nano-scale size-dependent properties are often observed. Thus, the properties of materials change as their size approaches the nanoscale and as the percentage of atoms at the surface of a material becomes significant. For bulk materials larger than one micrometer (or micron), the percentage of atoms at the surface is insignificant in relation to the number of atoms in the bulk of the material.

Particle Size- A reduction in the size of nano-sized particles increases the particle surface area. Additional chemical molecules may attach to this surface, enhancing the reactivity and increasing toxic effects. Nanoparticles smaller than 100 nm have been observed being absorbed by the intestine’s cells. Due to the smaller size, nanoparticles can cross cell membranes, reaching the bloodstream and other organs and consequently are generally more toxic than larger particles of the same composition.

Surface Area- Small nanoparticles have more pathological and destructive power on the lungs due to the larger surface area, greater tendency to conjugate and energy sustainability.

Chemical Components- Chemical components of the particle surface have important effects on nanoparticles and may react with metals (e.g. iron can be affected by nanoparticles, which increases toxicity in the free cell system.)

Surface Charges- High surface charge densities may cause higher cytotoxic effects than those with low charge densities. High surface charges react more intensely with cell membranes, creating additional damage to the cell.

Free Radical Production- Most of the nanoparticles produce free radicals which cause oxidative stress. Biological oxidative stress may cause inflammation, cell destruction,

* **Professor & Head (Physics) Govt. Arts & Commerce College, Sagar (M.P.) INDIA**

and genotoxicity. The particle surface of the free radicals can activate the redox cycle and cause particle toxicity.

Suspensions of nanoparticles are possible since the interaction of the particle surface with the solvent is strong enough to overcome density differences, which otherwise usually result in a material either sinking or floating in a liquid.

Clay nanoparticles when incorporated into polymer matrices increase reinforcement, leading to stronger plastics, verifiable by a higher glass transition temperature and other mechanical property tests. These nanoparticles are hard, and impart their properties to the polymer (plastic). Nanoparticles have also been attached to textile fibers in order to create smart and functional clothing.[42]

Metal, dielectric, and semiconductor nanoparticles have been formed, as well as hybrid structures (e.g., core–shell nanoparticles).[2] Nanoparticles made of semiconducting material may also be labeled quantum dots if they are small enough (typically sub 10 nm) that quantization of electronic energy levels occurs. Such nanoscale particles are used in biomedical applications as drug carriers or imaging agents.

Semi-solid and soft nanoparticles have been manufactured. A prototype nanoparticle of semi-solid nature is the liposome. Various types of liposome nanoparticles are currently used clinically as delivery systems for anticancer drugs and vaccines.

Nanoparticles with one half hydrophilic and the other half hydrophobic are termed Janus particles and are particularly effective for stabilizing emulsions. They can self-assemble at water/oil interfaces and act as solid surfactants.

Synthesis - There are several methods for creating nanoparticles, including attrition, pyrolysis and hydrothermal synthesis. In attrition, macro- or micro-scale particles are ground in a ball mill, a planetary ball mill, or other size-reducing mechanism. The resulting particles are air classified to recover nanoparticles. In pyrolysis, a vaporous precursor (liquid or gas) is forced through an orifice at high pressure and burned. The resulting solid (a version of soot) is air classified to recover oxide particles from by-product gases. Traditional pyrolysis often results in aggregates and agglomerates rather than single primary particles. Ultrasonic nozzle spray pyrolysis (USP) on the other hand aids in preventing agglomerates from forming.

A thermal plasma can also deliver the energy necessary to cause vaporization of small micrometer-size particles. The thermal plasma temperatures are in the order of 10,000 K, so that solid powder easily evaporates. Nanoparticles are formed upon cooling while exiting the plasma region. The main types of the thermal plasma torches used to produce nanoparticles are dc plasma jet, dc arc plasma, and radio frequency (RF) induction plasmas. In the arc plasma reactors, the energy necessary for evaporation and reaction is provided by an electric arc formed between the anode and the cathode. For example, silica sand can be vaporized with an arc plasma at atmospheric pressure, or thin aluminum wires can be vaporized by exploding wire method. The resulting mixture of plasma gas and silica vapour can be rapidly cooled by quenching with oxygen, thus ensuring the quality of the fumed silica produced.

In RF induction plasma torches, energy coupling to the plasma is accomplished through the electromagnetic field generated by the induction coil. The plasma gas does not come in contact with electrodes, thus eliminating possible sources of contamination and allowing the operation of such plasma torches with a wide range of gases including inert, reducing, oxidizing, and other corrosive atmospheres. The working frequency is typically between 200 kHz and 40 MHz. Laboratory units run at power levels in the order of 30–50 kW, whereas the large-scale industrial units have been tested at power levels up to 1 MW. As the residence time of the injected feed droplets in the plasma is very short, it is important that the droplet sizes are small enough in order to obtain complete evaporation. The RF plasma method has been used to synthesize different nanoparticle materials, for example synthesis of various ceramic nanoparticles such as oxides, carbours/carbides, and nitrides of Ti and Si (see Induction plasma technology).

Inert-gas condensation is frequently used to make nanoparticles from metals with low melting points.

Nanoparticles can also be formed using radiation chemistry. Radiolysis from gamma rays can create strongly active free radicals in solution. This relatively simple technique uses a minimum number of chemicals. These including water, a soluble metallic salt, a radical scavenger (often a secondary alcohol), and a surfactant (organic capping agent). High gamma doses on the order of 10^4 Gray are required. In this process, reducing radicals will drop metallic ions down to the zero-valence state. A scavenger chemical will preferentially interact with oxidizing radicals to prevent the re-oxidation of the metal. Once in the zero-valence state, metal atoms begin to coalesce into particles. A chemical surfactant surrounds the particle during formation and regulates its growth. In sufficient concentrations, the surfactant molecules stay attached to the particle. This prevents it from dissociating or forming clusters with other particles. Formation of nanoparticles using the radiolysis method allows for tailoring of particle size and shape by adjusting precursor concentrations and gamma dose.

Characterization- Nanoparticle characterization is necessary to establish understanding and control of nanoparticle synthesis and applications. Characterization is done by using a variety of different techniques, mainly drawn from materials science. Common techniques are electron microscopy (TEM, SEM), atomic force microscopy (AFM), dynamic light scattering (DLS), x-ray photoelectron spectroscopy (XPS), powder X-ray diffraction (XRD), Fourier transform infrared spectroscopy (FTIR), matrix-assisted laser desorption/ionization time-of-flight mass spectrometry (MALDI-TOF), ultraviolet-visible spectroscopy, Rutherford backscattering spectrometry (RBS), dual polarisation interferometry and nuclear magnetic resonance (NMR).

Laser applications - The use of nanoparticles in laser dye-doped poly(methyl methacrylate) (PMMA) laser gain media

was demonstrated in 2003 and it has been shown to improve conversion efficiencies and to decrease laser beam divergence. Researchers attribute the reduction in beam divergence to improved dn/dT characteristics of the organic-inorganic dye-doped nanocomposite. The optimum composition reported by these researchers is 30% w/w of SiO_2 (~ 12 nm) in dye-doped PMMA.

References :-

1. Taylor, Robert A; Otanicar, Todd; Rosengarten, Gary (2012). "Nanofluid-based optical filter optimization for PV/T systems". Light: Science & Applications **1** (10).
2. Hewakuruppu, Y. L.; Dombrovsky, L. A.; Chen, C.; Timchenko, V.; Jiang, X.; Baek, S.; Taylor, R. A. (2013). "Plasmonic "pump–probe" method to study semi-transparent nanofluids". Applied Optics **52** (24): 6041–6050.
3. Granqvist, C.; Buhrman, R.; Wyns, J.; Sievers, A. (1976). "Far-Infrared Absorption in Ultrafine Al Particles". Physical Review Letters **37** (10): 625.
4. Kiss, L. B.; Söderlund, J.; Niklasson, G. A.; Granqvist, C. G. (1999). "New approach to the origin of lognormal size distributions of nanoparticles". Nanotechnology **10**: 25.
5. Reiss, Gunter; Hutten, Andreas (2010). "Magnetic Nanoparticles". In Sattler, Klaus D. Handbook of Nanophysics: Nanoparticles and Quantum Dots

****

Keratinolysis Of Keratinic Wasts

Dr.Shashi Tiwari * Pratima Bisen **

Abstract - The Keratinophilic fungi can utilize very hard keratin protein as the sole source of carbon and nitrogen. These dermatophytes are well equipped with enzymes able to provide them organic nutrients from highly resistant keratinous substrates. Decomposition of keratinic substrates by keratinophilic fungi is accompanied by alkalization of medium and by the high activity of extracellular proteolytic enzymes called keratinases which responsible for keratinolysis. Keratinous wastes constitute a very serious troublesome environmental pollutant generated by poultry forms, leather industry, hair salons, and slaughter houses. The biological function of keratinolytic fungi in the soil is the degradation of keratinized materials such as skin debris, hairs, wool, hides, furs, feathers, claws, nails and horns of animals. The degradation of keratin wastes in an eco-friendly way, which should further be helpful to make the waste dumping soils fertile, is assessed by highly potent Keratinophilic fungi.
Key words - Keratinolysis, Decomposition

Introduction - Fungi are widely sprayed microorganism, which live mostly saprophyticaly on different dead matters. In these fungi, some are used keratinic substances as a source of nutrition and degraded it, known Keratinophilic fungi. Keratin is a very hard animal protein; these are insoluble fibrous proteins derived from the ectoderm and are poorly biodegradable (Filipello Marchisio V, 2000). It is main component of skin, hair, wool, nail, fur feather, hides, scales, claws, and horns. The Keratinophilic fungi can utilize keratin as the sole source of carbon and nitrogen (Kunert J., 2000).

Keratinophilic fungi secrete several extracellular proteolytic enzymes known as karetinase. They can hydrolyze a great many soluble proteins (e.g. casein, gelatin, serum albumin, egg albumin, hemoglobin, myoglobin, cytochrome c) and insoluble proteins (keratin, elastin, collagen, fibrin, laminin, fibronectin etc.).These enzymes are main factor for degradation of keratin. (Kunert J, 2000). There are several million tons keratinic wastes produced by poultry forms, leather industry, hair salons and beautiqes, woolen industry, animal form houses and slaughter houses per year. These wastes creates serious problem for environment. Soil, air and water pollution are caused due to accumulation of un-degraded keratin waste and effect public health. Keratinophilic fungi help to overcome this situation by decomposing it through eco-friendly process known as keratinolysis.

Structure of keratin - Keratins are the largest and most complex family of cytoskeletal intermediate filament proteins of animal cells, particularly epithelia. The durability of keratins is a direct consequence of their complex architecture. Keratin molecules form parallel intertwined heterodimers consisting of one each of acidic Type I keratins and basic or neutral Type II keratins. Antiparallel couplets of heterodimers comprise protofilaments or folded polypeptide chains, which pair to form protofibrils. Polypeptide chains are made primary and secondary structure of keratin with help of hydrogen bond and salt cross-bridges. Each filament of keratin, in turn, consists of four bundled protofibrils. This complex tertiary and quaternary structure is richly stabilized by disulphide bonds, a construction endowing keratin with a durability and resilience (Mathison G.E. 1964, Scott J. A. & Untereiner W. A. 2004).

These are insoluble fibrous proteins and are poorly biodegradable. There are two kinds of keratins:

-α -**Keratin** - these contain most of the common amino acids, but they are primarily rich in cystine residues and, therefore, disulphide bridges: rigid, brittle forms in horns and nails contain up to 22% cystine; soft, flexible forms in the skin and in hair and wool contain between 10 %and 14%;

- β - **keratin** - these lack both cystine and cysteine, but are rich in amino acids with short side chains, especially glycine, alanine and serine. They are found in the fibres of spiders and silkworms, in scales and in the claws and beaks of reptiles and birds.

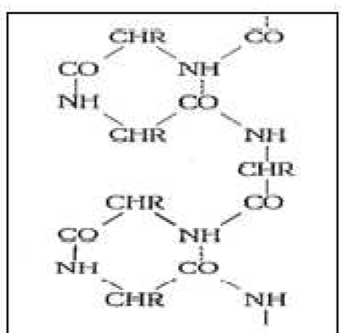

α-fold polypeptide maintained by hydrogen bonding (α-keratin)

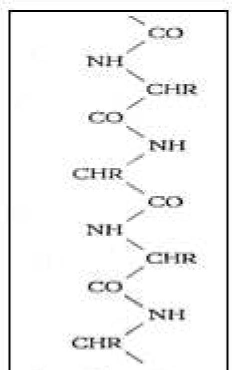

β-configuration (β-keratin)

(By Mathison G.E. 1964)

*Principal, Govt. Arts College, Panagar (M.P.) INDIA
**Research Scholer, Asst. Professor Govt. P.G. College, Balaghat (M.P.) INDIA

Only the α - keratins constitute an ecological problem. Their resistance to degradation by microbes is the result of the tight packing of their polypeptide chains in α - helix structures and their linkage by disulphide bridges (Marchisio V. F. 2000).

α - Keratins is highly resistant to hydrolysis by weak acids, alkalis, ethanol or salt solution. The durability of α - keratin is due to cross-binding of closely packed polypeptide chains in which cystine molecules are held together by disulphide bond (S.S. Ingle *et al* 2012).

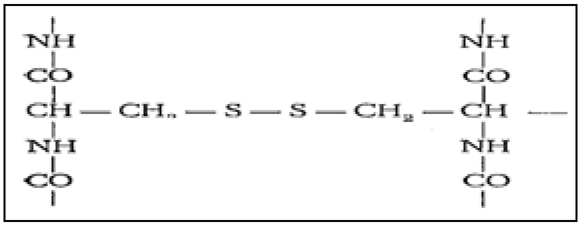

Disulphide bond between cystine molecules

Worldwide keratinic waste production-An enormous quantity of keratins in the form of hairs, skin debris, feather, horns, and hoofs are wasted each year. All over the world production of animal (bovine and ovine) skins approximately 1,192 million pieces per year. Only in India produce annually: goat skins, 82; sheep skins, 30; cattle hides, 23; and buffalo hides, 28 million tons from various industries (Karthikeyan *et al*. 2007)

Millions of tons hair waste also generated from the tanneries, woolen industries and hair salons & beautiqes every year. Due to daily shaving habits the sewage and bottom sediments of rivers and canals contains an enormous amount of hidden keratinous waste. Today, it is also becoming a part of solid waste management and it is difficult to degrade (Singh and Kushwaha, 2015).

Every year several tons of feathers are produced as waste by poultry farming (S.S. Ingle *et al* 2012). The daily accumulation of feather waste reaches five million tons.

The disposal of this waste is a global environmental issue leading to pollution of both air and underground water resources (Godheja and Shekhar, 2014). Recycling of such wastes is increasing attention.

Keratin degrading microbes - Keratinolytic activity has been reported in many actinomycetes, bacteria, helminthes, dermatophytes and saprophytic fungi which secrete keratinolytic enzymes (Awasthi P. And. Kushwaha R. K. S, 2011 ;Scott J. A. & Untereiner W. A. 2004). Fungi are most capable of the enzymatic degradation of these polymers are restricted largely to a single lineage of filamentous fungi, the ascomycete Order Onygenale (Scott J. A. & Untereiner W. A. 2004). Such are *Arthroderma curreyi, A. gypseum, A. incurvatus, A. otae, A. quadrifidum, A. silverae, Chrysosporium vallenarense, Ctenomyces serratus, Epidermophyton floccosum, Milochevitch, Microsporum canis, M. cookei, M. persicolor, Trichophyton krajdenii, T. mentagrophytes, T. mentagrophytes, T. mentagrophytes, T. mentagrophytes, T. raubitschekii, T. rubrum, T. simii, Arachniotus ruber, Arachnomyces minimus, Gymnascella aurantiaca, Gymnoascoideus petalosporus, Gymnoascus reessii, Amauroascus aureus, A. mutatus, A. niger, A.purpureus, Aphanoascus fulvescens, A. mephitalis, A. terreum, Apinisia graminicola, Ascocalvatia alveolata, Auxarthron californiense, A. zuffianum, Chrysosporium keratinophilum, C. tropicum, Nannizziopsis vriesii, Neogymnomyces demonbreunii, Onygena equina, Polytolypa hystricis, Renispora flavissima, Shanorella spirotricha, Spiromastix grisea, S. tentaculatum, S. warcupii, S. warcupii, Uncinocarpus reesii, Aspergillus alliaceus, A. niger, Byssochlamys nivea*. The most keratinolytic group among fungi belongs to fungi imperfectii including the following genera: *Chrysosporium, Aspergillus, Alternaria, Trichurus, Curvularia, Cladosporium, Fusarium, Geomyces, Gleomastis, Monodictys, Myrothecium, Paecilomyces, Stachybotrys, Urocladium, Scopulariopsis, Sepedonium, Penicillium, Doratomyces*. Some others are *Acremonium, Alternaria radicina, Aspergillus flavus, Cladosporium cladosporoides, Curvularia inequalis,Fusarium culmorum, Geotrichum sp. Gliomastrix murorum, Monodactys castannea, Myrothecium verrucaria, Pacecilomyces variotii, Penicillim raistrckii, Stachybotrys atra, Trichurus spiralis* and *Ulocladium botrytis* (Singh and Kushwaha, 2015).

Keratin degradation-Keratin Decomposition by Keratinophilic fungi is accompanied by alkalization of medium the high activity of proteolytic exoenzymation of the medium and the high activity of protelytic exoenzymes known as keratinase (Scott J. A. & Untereiner W. A. 2004)

Fungi are forming numerous perforating organs to fast substrate degradation of keratin. Poor decomposers species form only long and thin "boring hyphae", whereas wide (swollen) boring hyphae suggest a stronger keratinolytic ability of fungi. However, some strains are invaded on the substrate surface without perforating organs may also cause high losses of substrate dry weight.

Keratin degradation is most probably the result of the action of three factors: deamination (creating an alkaline environment needed for substrate swelling for sulphitolysis and proteolytic attack), sulphitolysis (denaturing the substrate by removing its disulphide bridges) and proteolysis (cleaving the denatured substrate to soluble products) (Kunert, 2000).

Deamination in the mycelium is performed by L-amino acid oxidases. These enzymes convert amino acids into keto (oxo) acids and ammonia. Oxygen consumption in the deamination process obviously makes the keratin degradation by fungi depend very much on aeration. By intensive deamination keratinophilic fungi get rid of excess nitrogen and ammonia production. This causes the alkalinize conditions.

The rise in pH promotes sulphitolysis, which is metabolism of sulphur another, key property of keratinolysis, since keratin is sulphur – rich substrate. Keratinases degrade the â-keratin disrupting the disulphide bonds (S.S. Ingle *et al* 2012). In sulphitolysis keratinolytic fungi oxidize cystine sulphur not only to sulphate, but also to sulphite that reacts

with cystine giving rise to cysteine and S-sulphocysteine.

cys-SS-cys + HSO_3 ————— cys-SH + cys-SSO_3

Cystine sulphite cysteine S-sulphocysteine

In this way the substrate is gradually denatured and rendered susceptible to the attack by fungal proteases. (Kunert J., 2000, Grumbt et al 2013).

Conclusion- Insoluble structure and hard-to-degrade keratin proteins are ubiquitously present in an animal body. A lot of these proteins are generated as industrial waste from meat, poultry, wool, hair salon and leather industries. Currently, disposal of these wastes is preferred by incineration or by land filling. Additionally physical and chemical treatments are used currently to increase the digestibility of keratin. But these processes require consumption of large amounts of energy and money. Keratinolytic activity of keratinophillic fungi represents an attractive alternative to improve the overall value of the wastes and decompose it. The keratinase obtain from keratinophillic fungi could be applied for the detergent industry, leather industry, cosmetic and medical industry. Thus, these fungi and their keratinases offer an attractive solution for biotechnological potential applications in keratinic waste management.

References :-

1. Fillipello M.V., 2000; Keratinophilic fungi: Their role in nature and degradation of keratinic substrates; In: Biology of dermatophytes and other keratinophilic fungi,

2. Grumbt et al, 2013, Keratin Degradation by Dermatophytes Relies on Cysteine Dioxygenase and a Sulfite Efflux Pump, Journal of Investigative Dermatology, vol.:**133,** page 1550–1555.

3. Ingle S.S. et al, 2012, Biodegradation of Poultry feather by non dermatophytic filamentous Keratinolytic Fungi. Asian Journal of Biology and Biotechnology, Volume: 1 Issue: (1) e102, page 1-8.

4. Karthikeyan *et al*. 2007, Industrial application of keratins-a review, Journal of scientific & Industrial research, vol.:66, page710-715.

5. Kunert J., 2000, Physiology of keratinophilic fungi, In: Biology of dermatophytes and other keratinophilic fungi, Kushawaha RKS, Guarro J, editors. Revista Iberoamericana de Micologia. Spain, pp. 77-85.

6. Mathison G.E. 1964, The microbiological decomposition of keratin, Ann. Soc.belge Med. Trop., vol.:44, issue: 4/5, page 767-792.

7. Scott J. A. & Untereiner W. A. 2004, Determination of keratin degradation by fungi using keratin azure, Medical Mycology, June 2004, vol.42,page 239-246

8. Singh I. and Kushwaha R. K. S., 2015, Keratinases and microbial degradation of Keratin, Adv. Appl. Sci. Res., vol. :6 issue: 2 page 74-82.

****

Natural Plant Catharanthus Roseous Anticancer Droug

Sushama Singh Majhi *

Abstract - India possesses a rich biodiversity of the medicinal plants that were still not explored completely. The need for the novel pharmaceutical products out from the plant has attained a great interest in the present research world due to the cost and the higher side effects that are associated with the chemically manufactured drugs. Catharanthus roseus, which is a potent medicinal plant many of the pharmacological actions such as antimicrobial, antioxidant, antihelmintic, antifeedant, antisterility, antidiarrheal, antidiabetic, anticancer effect etc. That is used to treat many of the fatal diseases. The major phytochemical constituent of the above medicinal plant and have different types possessing various medicinal uses. Plant found in gardens and homes across the warmer parts of the world. Catharanthus roseus (L.) G. Don, which also known as "an anticancerous drug yielding plant" is a tropical and subtropical plant belonging to the family Apocynaceae.

Introduction -Expected to be the basis of many main technological innovations in the 21st century. Research and development in this field is growing rapidly throughout the world. A major output of this activity is the development of new materials in the nanometer scale. A natural product is a chemical compound or substance produced by a living organism - found in nature that usually has a pharmacological or biological activity for use in pharmaceutical drug discovery and drug design. A natural product can be considered as such even if it can be prepared by total synthesis. These small molecules provide the source or inspiration for the majority of FDA-approved agents and continue to be one of the major sources of inspiration for drug discovery. In particular, these compounds are important in the treatment of life-threatening conditions. Natural products may be extracted from tissues of terrestrial plants, marine organisms or microorganism fermentation broths. A crude (untreated) extract from any one of these sources typically contains novel, structurally diverse chemical compounds, which the natural environment is a rich source of Chemical diversity in nature is based on biological and geographical diversity, so researchers travel around the world obtaining samples to analyze and evaluate in screens or bioassays. This effort to search for natural products is known as bioprospecting.

Materials and methods - Flowers of Catharanthus Roseus (L) G. Don were collected from a field grown in the Bhopal in the month of May-June, 2008, Leaves and of her plant tissues were carefully removed from the flowers of C. roseus.

The plant collection, 95% ethanol extraction procedure and fractionation of the dried extract using different organic solvents in different proportions by column chromatography was described. Ethanol, chloroform and methanol were of GR Merck grade. Hexane LR, benzene was of HPLC grade (Rankem) while ethyl acetate was obtained from Qualigens, silica-gel. RPMI-1640, Fetal calf serum, Trypsin, PBS, Tryphan blue, Penicillin, Streptomycin, Gentamycin, DMSO, Sulpho rhodamine, Mitomycin C, Palcitaxel (taxol), 5 Fluorouracil, were obtained from sigma chemical Co. USA and rest of the chemicals were of high purity and obtained locally. Tissue culture flasks and 96-Well cell culture plates were obtained from NUNC, Germany.

Pre - Extraction Operation - The Plants were selected on the basis of their wide local use in traditional medicine. The leaves are collected from the healthy plant.

Identification – the plant material is identified in a local herbarium.

Drying - The leaves were dried at room temperature under a well-ventilated shade by distributing them homogeneously; the material had kept away from the direct sunlight because the ultraviolet radiation may produce chemical reaction giving rise to compound artifacts.

Communication and classification were done to obtain certain fractions in high yield and as free of dust as possible.

The leaves were cut on shredders, the communication of the plant material were done by grinding in a mixture, followed by blast sifting for the removal of the dust.

Extraction - The dried leaves were powdered and weighted 150 gm and filled in Soxhlet apparatus for extraction. First the drug was defeated with 95% methanol for 8 hour, defatted drug then dried and again filled in apparatus for extraction with alcohol. Alcoholic extract were concentrated by recovering solvent. And by collecting various fractions of extract under different solvents for characterization and pharmacological activity and processed the extract for anticancer activity. The present study titled "Chemical investigation of Catharanthus roseus for anticancer plant

* **Deptt. of Chemistry, C.S.A.Govt P.G. Nodle College, Sehore (M.P.) INDIA**

drugs found in Bhopal Division" deals with the extraction, isolation, purification and identification of the compounds from the leaves and flowers of the plant Catharanthus roseus, with an additional objective to assess and understand the medicinal value of Catharanthus roseus anticancer activities have also been studied. The main activity of the present study involves:

Experimental - Ultra violet spectra were recorded or ShiMadzu UV-240 and Pye Unicom SP 800 A spectrophotometers. Infrared spectra were recorded on a Jasco-IR A-1 spectrophotometer. Mass spectra were measured on Finnegan MAT 312 rind Finnegan MAT 312 double focusing mass spectrometers connected to PDP 11/34 computer system. High resolution mass measurements were carried by peak matching using PFK as internal standard and by accurate mass measurements on DEC PDP 11/34 Computer system linked to Finnegan MAT 312 mass spectrometer. Nuclear magnetic resonance spectra were recorded on Bruker VIP-100 SY FT-NMR and a Bruker AN 300 FT-NMR (^{1}H: 300 MHz, 13C: 75 MHz, dual probe 5 mm sample tubes), C-13 NMR spectra were recorded at 75 MHz and assignments made by using gated spin echo (APT) and polarization transfer (ADEPT) pulse sequences optical rotations were recorded on a Schmidt and Haensh Polatronic D electronic polarimeter. Thin layer chromatography was carried out on silica gel GF-25.1 precoated plates from E.Merck which were viewed in UV light or developed with iodine vapors. Column chromatography was generally carried out, using columns packed with silica gel type-60 (70-230 mesh). Melting points were determined with a Gallenkamp melting point apparatus and are uncorrected.

^{13}C-NMR spectra analysis

The ^{13}C-NMR spectrum in $CDCl_3$ (broad band and DEPT) showed interesting similarities to that reported for vindoline. The assignments of the 13C-resonance signals are shown in Table II. The signals of most carbon atoms were very close to those reported for vindoline or to the corresponding carbons in those molecules in which vindoline is found bound to another alkaloidal moiety. The C-10 carbon interestingly appeared at ä121.20 and was shown by DEPT measurements to be non-proton bearing, thus confirming that C-10 was the site of substitution.

anticancer Activity - Cancer, which is characterized by abnormal and autonomous cell proliferation, is a well known disease of this century. Chemotherapy is the most commonly used method for treatment of cancer. But as the chemotherapeutic drugs are highly toxic and possess devastating side effects thus several new strategies are being developed to control and treat cancer.

Catharanthus roseus extract exhibited anti-proliferative effects in several cancer cell lines including Shiongi 115, breast cancer MCF-7, prostate cancer

PC-3 and DU-145 cells (Kaur et. al., 2005 and Pinmai, 2008). Catharanthus roseus leaves have been found to have in-vitro anti-HIV-1, antimalarial, antimutagenic, antifungal, antibacterial and in-vivo hepatoprotective. Considering the reports on use of Catharanthus roseus in the form of "Triphala" as a potent anticancer drug in ayurveda the present study was taken up for evaluating anti-cancer potential in extract and various fractions of leaves of Catharanthus roseus against human cancer cell lines

In vitro cytotoxicity of extracts against human cancer cell lines - The human cancer cell lines were procured from National Cancer Institute, Frederick, U.S.A. Cells were grown in tissue culture flasks in complete growth medium (Roswell Prak Memorial Institute (RPMI) -1640 medium with 2mM glutamine, pH 7.4, supplemented with 10% fetal calf serum, 100 µg/ml streptomycin and 100 units/ml penicillin) in a carbon dioxide incubator (37°C, 5% CO_2, 90% RH). The cells at sub confluent stage were harvested from the flask by treatment with trypsin [0.05% in PBS (pH 7.4) containing 0.02% EDTA]. Cells with viability of more than 98% as determined by trypan blue exclusion were used for determination of cytotoxicity. The cell suspension of 1×10^5 cells/ml was prepared in complete growth medium. Stock solutions (20mg/ml) of extracts/fraction were prepared in dimethyl sulfoxide (DMSO). The stock solutions were serially diluted with complete growth medium containing 50µg/ml of gentamycin to obtain working test solutions of required concentrations.

In vitro cytotoxicity against six human cancer cell lines was determined (Monks et al., 1991) using 96-well tissue culture plates. The 100 µl of cell suspension was added to each well of the 96-well tissue culture plate. The cells were allowed to grow in carbon dioxide incubator (37°C, 5% CO2, 90% RH) for 24 hours. Test materials in complete growth medium (100µl) were added after 24 hours of incubation to the wells containing cell suspension. Suitable controls, blanks and positive controls were also included. The plates were further incubated for 48 hours in a carbon dioxide incubator. The cell growth was stopped by gently layering trichloroacetic acid (50%, 50µl) on top of the medium in all the wells. The plates were incubated at 4°C for one hour to fix the cells attached to the bottom of the wells. The liquid of all the wells was gently pipette out and discarded. The plates were washed five times with distilled water to remove trichloroacetic acid, growth medium low molecular weight metabolites, serum proteins etc and air-dried. The plates were stained with Sulforhodamine B dye (0.4 % in 1% acetic acid, 100µ1) for 30 minutes.

The plates were washed five times with 1% acetic acid and then air-dried. (Skehan et al., 1990). The adsorbed dye was dissolved in Tries HCl Buffer (100 µl, 0.01 M, pH 10.4) and plates were gently stirred for 10 minutes on a mechanical stirrer. The optical density (OD) was recorded on ELISA reader at 540 nm. The cell growth was determined by, subtracting mean OD value of respective blank from the mean OD value of experimental set. Percent growth in presence of test material was calculated considering the growth in absence of any test material as 100%.

8. Result and discussions - Samples were evaluated against four cell lines of three different tissues i.e. PC-3,

DU-145 (Prostrate), A-549 (Lung) and Colo-205 (Colon) at 100 g/ml. All samples showed cytotoxicity up to depending on the cell lines.

Conclusion - Describe the isolation and structure elucidation of three new alkaloids, 'Bannucine, Gomaline and Rosamine'. Three other compounds isolated have been identified as rhazimol, cathovaline and catharine. Rhazimol and cathovalilne have not previously been reported from this plant. A detailed study on the ^{1}H- and ^{13}CNMR spectra of catharine has provided insights into the conformations of the molecule in isolation.

References :-

1. Adelakun, E.A., Fin bar, E.A., Agina, S.E. and Makinde, A.A., 2001. Fitoterapia., 72, p. 822.
2. Anand, K.K. and Singh, B., 1994. Pharmacological Research, 36(4), p.315
3. Aquil, F., Ahmad, 1. And Mehmood, Z., 2006. Turk J. Bio., 30, p.177
4. Baily, R.W. and Scott, G.E., 1966. Diagnostic Microbiology (2 nd ed.), The CV 1 Mosby Co. Saint Louis, Japan.5. Belal, F., Elashry, S.M., Elkerdawy, M.M. and Elwasseef D.R., 2001.Jof Phar and Bio. Ana. 26, p. 435.
6. Boer, H.J., Kool, A., Broberg, A., Mziray, W.R., Hedberg, 1. And Levenfors J.J.(2005). J. Ethnopharmacol., 96, p. 461.
7. Bonjar, S. (2004). J. Ethanopharmacol., 94, p. 301.
8. Camporese, A., Balik, M.J., Arvigo, R., Esposito, R.G., Morselling, N., Simone, F. and Tubaro, A., 2003. J. Ethnopharmacol., 87, p. 103.
9. Chung, T.H., Kim, J.C. and Kim, M.K., 1995. Phytotherapy Res., 9, p. 429
10. Cowan, M.M. 1999.Plant products as antimicrobial agents. Clinical Microbiology. Reviews. 12, p. 564.

****

General Common Fixed Point Theorems for Two mapping in fuzzy metric spaces

Dr. Sangeeta Biley * Dr. Rajesh Shrivastav **

Abstract - Our aim of this paper is to obtain a common fixed point theorem for two self mappings of generalized S-fuzzy metric space, which generalize the result of singh and chauhan [4].
Key Words -S-Fuzzy metric space, common fixed point, t-norm.

Introduction - Many attempts have been made for proposing non additive models of uncertainty. Most radical attempt was initiated by L. Zadeh [5] in 1965.

Many authors have introduced the concept of fuzzy metric spaces in different ways [1] [2], kramosil and michalek [3] is one of them. Recently singh and chouhan [4] developed a new concept of generalized fuzzy metric space (or s-fuzzy metric space) and proved Banach contraction principle in this newly developed space.

In this paper we establish a general common fixed point theorem, which generalize the result of singh and chauhan [4].

Preliminaries -

Definition 1: [4] The 3-tuple $(X,S,*)$ is said to be a S-fuzzy metric space if X is an arbitrary set, "$*$" a continuous t-norm and S is a fuzzy set on $X^3 \times (0,\infty)$ satisfying the following conditions :

i) $S(x, y, z, t) > 0$

ii) $S(x, y, z, t) = 1$ if and only if $x = y = z$ (coincidence)

iii) $S(x, y, z, t) = S(y, z, x, t) = S(z, y, x, t)$ (symmetry)

iv) $(x, y, z, r+s+t) \geq S(x, y, w, r) * S(x,w,z,s) * S(w,y,z,t)$ (tetrahedral inequality)

v) $S(x, y, z, \cdot): (o, \infty) \to [0, 1]$ is continuous for all x, y, z, $w \in X$ and $r, s, t > o$

Geometrically, $S(x, y, z, t)$ represents the fuzzy perimeter of the triangle whose vertices are the points x, y and z with respect to $t > o$.

Definition - 2:[4] A sequence $\{x_n\}$ in a S-fuzzy metric spaces $(X,S,*)$ is called a Cauchy sequence if and only if for each $\in > 0$, $t > o$ there exists $n_0 \in N$ such that $S(x_n, x_m, x_p, t) > 1-\in$ for all $n, m, p \geq n_0$.

Definition – 3:[4] A S – fuzzy metric space in which every Cauchy sequence is a convergent sequence, called a complete S-fuzzy metric space.

Before proving our main result we first prove the following lemma.

Lemma 1 - $S(x, y, z, \cdot)$ is non-decreasing for all x, y, z in X.

Proof - Suppose $S(x, y, z, p) > S(x, y, z, t) > S(x, y, z, r)$ for all x, y, z in X and for some $o < p < t < r$. Then

$S(x,y, y, r) > S(x, y, y, 2r)$

$> S(x, y, y, p) * S(x, y, y, t) * S(y, y, y, 2r-t-p)$

$=S(x, y, y, p) * S(x, y, y, t)$

$= S(x, y, y, t)$

or

$S(x, y, y, r) > S(x, y, y, t)$

Which is a contradiction.

This completes the proof.

Our result is.

Theorem – 1 Let $(X, S,*)$ be a complete fuzzy metric space with the t-norm "$*$" defined by $a * b = \min\{a, b\}$: $a, b \in [o, 1]$. If $\{M_n\}$ and $\{T_n\}$ are sequence of self mapping of X, satisfying the condition.

(1.1) $S(M_i x, T_j y, kt) \geq \min\{S(x, y, t), S(x,M_i x, t), S(y, T_j y, t), S(y, M_i x, 2t), S(x, T_j y, 2t), S(x, y, t) + S(y, M_i x, 2t),\}$
For all x, y in X; $o < k < 1$, $i, j \in N$

(1.2) $\lim_{t\to\infty} S(x, y, t) \to 1$

Then $\{M_n\}$ and $\{T_n\}$ have a unique common fixed point in X.

Proof - Let x_0 be an arbitrary point in X, Define sequence $\{x_n\}$ such that.

$$x_{2n+1}=M_{2n+1}x_{2n} \text{ and } x_{2n+2} = T_{2n+2}x_{2n+1} \;\forall\; n=0, 1, 2.......$$

Now

$S(x_1, x_2, kt) = S(M_1X_0, T_2X_1, Kt)$

$\geq \min\{S(x_0,x_1, t), S(x_0,M_1x_0, t), S(x_1,T_2x_1,t), S(x_1,M_1x_0,2t), S(x_0,T_2x_1,2t), S(x_0,x_1, t), + S(x_1,M_1x_0,2t)\}$

$\geq \min\{S(x_0,x_1,t), S(x_0,x_1, t), S(x_1,x_2, t), S(x_1,x_1, 2t), S(x_0,x_2,2t), S(x_0,x_1, t) + S(x_1,x_1,2t)\}$

$\geq \min\{S(x_0,x_1, t), S(x_1,x_2, t)\}$

$S(x_1,x_2, kt) \geq S(x_0,x_1, t)$

Now

$S(x_2,x_3,kt)= S(T_2x_1,M_3x_2, kt)$

* Deptt. of Mathematics, Govt. P.G. College, Harda (M.P.) INDIA
** Deptt. of Mathematics, Govt. Benazeer College, Bhopal (M.P.) INDIA

$= S(M_3x_2, T_2x_1, kt)$

$\geq \min\{S(x_2,x_1,t), S(x_2,M_3x_2,t), S(x_1,T_2x_1,t), (x_1,M_3x_2, 2t), S(x_2,T_2x_1,2t),$

$S(x_2,x_1,t) + S(x_1,M_3x_2,2t)\}$

$\geq \min\{S(x_1,x_2,t), S(x_2,x_3,t), S(x_1,x_2,t), S(x_1,x_3,2t), S(x_2,x_2,2t), S(x_1,x_2,t) + S(x_1,x_3,2t)\}$

$\geq \min\{S(x_1,x_2,t), S(x_2,x_3,t)\}$

which implies that

$S(x_2,x_3,kt) \geq S(x_1,x_2,t),$

proceeding in the same way, we have in general

$S(x_n,x_{n+1},kt) \geq S(x_{n-1},x_n,t)$ .... (1.3)

Using (1.3) we have

$S(x_n,x_{n-1},(1-k)t/k) \geq S(x_{n-1},x_{n-2},(1-k)t/k^2)$

$\geq S(x_{n-2},x_{n-3},(1-k)t/k^3$

....

....

....

$\geq S(x_0,x_1,(1-k)t/k^n) \to 1$ as

$n \to \infty$ .... (1.4)

Hence for t > o, K, $\lambda \in (0, 1)$ we can choose $n_o = n_o(t\lambda) \in N$ such that

$S(x_n,x_n\text{-}1,(1-k)t/k) \geq 1-\lambda \qquad n \geq n_o$......... (1.5)

Now we claim that

$S(x_n,x_n\text{-}1,t) \geq 1-\lambda$ ....(1.6)For all n $\geq$ no and every m $\in$ NFor all n $\geq$ no we have from (1.5)

$S(x_n,x_{n+1},t) \geq S(x_n,x_{n-1},t/k)$

$\geq S(x_n,x_{n-1},(1-k)t/k)$

$\geq 1-\lambda$

and so $S(x_n,x_{n+1},t) \geq 1-\lambda$

Thus result (1.6) is true for 1 $\in$ N

Further suppose (1.6) is true for m-1 $\in$ N, then we shall show that it is also true for m $\in$ N

using (1.3), (1.4) and definition of t-norm we have

$S(x_n,x_{n+m},t) \geq S(x_{n-1},x_{n+m-1},t/k)$

$\geq \min\{S(x_{n-1},x_n,(1-k)t/k), S(x_n,x_{n+m-1},t)\}$

$\geq \min\{(1-\lambda), (1-\lambda)\}$

$= 1-\lambda$

Thus (1.6) is true for every m $\in$ N and this implies that $\{x_n\}$ is a Cauchy sequence :

Since (X, S, $*$) is complete. So $\{x_n\}$ converges to some point u in X.

Now

$S(M_iu,x_{2n+2},kt) = S(M_iu, T_{2n+2}x_{2n+1},kt)$

$\geq \min\{S(u,x_{2n+1},t), S(u,Miu,t), S(x_{2n+1},T_{2n+2}x_{2n+1},t) S(x_{2n+1},Miu,2t), S(u,T_{2n+2}x_{2n+1},2t),$

$S(u,x_{2n+1},t) + S(x_{2n+1},Miu,2t)\}$

$\geq \min\{S(u,x_{2n+1},t), S(u,Miu,t), S(x_{2n+1},x_{2n+2},t), S(x_{2n+1},Miu,2t),$

$S(u,x_{2n+2},2t), S(u,x_{2n+1},t) + S(x_{2n+1},Miu,2t)\}$

Which implies on letting $\lim_{n\to\infty}$

$S(M_iu,u,kt) \geq \min\{S(M_iu,u,t), S(M_iu,u,2t)\}$

Or

$S(M_iu,u,kt) \geq S(M_iu,u,t)$

Acontradiction.HenceM$_i$u = u

similarly we can show that $T_ju = u$

Thus uis common fixed point of M_i and T_j.

To prove uniqueness, Let v be another common fixed point of M_i and T_j. Then

$S(u,v,t) = S(M_iu, T_jv, t)$

$\geq S(u,v,t/k)$

....

....

....

$\geq S(u,v,t/k^n) \to 1$ as $n \to \infty$

There fore u = v. Thus u is a unique common fixed point of M_i and T_j.

Now to prove that M_i and T_j are continuous.

Let $\{y_n\}$ be a sequence in X such that $\lim_{n\to\infty} y_n = u$

$S(M_iy_n,u,kt) = S(M_iy_n, T_ju, kt)$

$\geq \min\{S(y_n,u,t), S(y_n,M_iy_n,t), S(u,T_ju,t), S(u,M_iy_n,2t), S(y_n,T_ju,2t), S(y_n,u,t) + S(u,M_iy_n,2t)\}$

$\geq \min\{S(y_n,u,t), S(y_n,M_iy_n,t), S(u,u,t), S(u,M_iy_n,2t), S(y_n,u,2t),$

$S(y_n,u,t) + S(u,M_iy_n,2t)\}$

On letting $\lim_{n\to\infty}$ we obtain

$S(\lim M_iy_n,u,kt), \geq \min\{S(u,u,t), S(u,\lim M_iy_n,t), S(u,u,t), S(u,u,t) + S(u,\lim M_iy_n,2t)\}$

$\geq \min\{1, 2, S(u,\lim M_iy_n,t), S(u,\lim M_iy_n,2t)\}$

$\geq \min\{1, S(u,\lim M_iy_n,t)\}$

This implies that

$S(\lim M_iy_n,u,kt), \geq S(u,\lim M_iy_n,t)$

Further this implies that $\lim M_iy_n = u = M_iu = M_i\lim y_n$

Thus M_i is continuous at u. Similarly we can prove that T_j is continuous at u. Therefore M_i and T_j are continuous at u.

References :-

1. Erceg, M.A., Metric spaces in fuzzy set theory, Jour. Math. Anal. Appl. 69 (1979), 205-230.
2. Keleva, O and seikkala, S. , On fuzzy metric spaces : fuzzy sets ans system, 12 (1984), 215-229.
3. Kramosil, O. and Michalek, J. , Fuzzy metric and statistical metric spaces, kybernetika 11 (1975), 336-344.
4. Singh, B. and Chauhan, M.S. , Generalized fuzzy metric spaces and fixed points theorem, Bul. Cal. math. Soc. 89 (1997), 457-460.
5. Zadeh, L.A. : Fuzzy sets Information and control, 8 (1965), 338-353.

****

Some Medicinal Plants Of Bhopal (M.P.)

Dr. Sadhna Goyal *

Abstract - Herbal and natural products of folk medicines have been used for centuries in every culture through out the world. The medicines have been obtained from all parts of plants such as roots, shoots, leaves , flowers ,barks and fruits .The medicinal value of the drug plants is due to presence of some bio chemical constitutes in them ,which produce a definite physiological action on the human body . We select Bhopal(M.P.) for our study.
Key word - Medicinal, physiological.

Introduction - Bhopal is the capital of Madhya Pradesh. Present study is carried out of different sites of Bhopal during winter ,summer and rainy season .The medicinal plants are very useful for us and having no side effects .Plants play a very vital role in human life as every basic need like food ,fiber ,fuel ,cloths medicine etc are provided to them .Wild and cultivated plants have known to be used by man over generations by practice and experience . All plants produce chemical compounds as part of their normal metabolic activities. The World Health Organisation (WHO) estimates that 80 percent of the population of some Asian and African countries presently use herbal medicine for some aspect of primary health care.

Observation -

Table 1 - The medicinal plants with their local name, botanical name and habit are given below –

S.No	Local name	Botanical name	Habit
1	Neem	Azadiracta indica	Tree
2	Tulsi	Ocimumsanctum	Herb
3	Pimpali	Piper longum	Tree
4	Nilgiri	Euclayptus globules	Tree
5	Pudina	Mentha spicata	Herb
6	Bel	Aegle marmelas	Tree
7	Chameli	Jasmin e officinale	Shrub
8	Mehandi	Lawsonia intermis	Shrub
9	Awla	Mangifera indical	Tree
10	Gulab	Rosa damascene mill	Shrub
11	Bahera	Terminalia belerica	Tree
12	Ghee Kumar	Aloebarbdence	Tree
13	Jambun	Syzygium cumin	Tree
14	Kamar kastur	Octimum basillusium	Shrub

Table 2- The medicinal plants with their uses are as follows-

S.No	Name of the plant	Plants parts used	Application
1.	Neem	Leaves , bark	Aczema
2.	Tulsi	Leaves	Common cold
3.	Pimpali	Root , thickest parts of leaves	Bronchitis
4.	Nilgiri	Leaves	Cold
5.	Pudina	Green leaves	Colic pain
6.	Bel	Ripe fruit	Cooling drink
7.	Chameli	Flowers	Perfumes
8.	Mahendi	Dried leaves powder	Skin disease
9.	Awla	Fruit	Contain vitamin A and C
10.	Gulab	Flowers	Perfume
11.	Bahera	Fruit	Asthama
12.	Ghee kumar	Fleshy leaves	Burning and plains
13.	Jambun	Seed powder	Diabeties
14.	Kamar kastur	Leaves juice	Body pain

Refrences :-

1. Almeida S.M the flora of savantiwadi Scientific publishers, jodhpur, 1990
2. Jain , S.K The dictionary of Indian Folk medicine and Ethnoboteny, Deep publication, New Delhi 1991
3. Shisode, S.B and Patil D.A. Bio-journal ,1993
4. Choubey V.B. and Khare P.K. All India Botanical conference , October 2005
5. Agrawal V.S. and Ghosh B. Drug plants of India, Kalyani publishers , Ludhiana 1985
6. NARKHEDE, P.N. International multi Disciplinary journal Research Hunt 2007

****

* Professor (Chemistry) Govt. M.V.M. Bhopal (M.P.) INDIA

सामवेद में पारिस्थितिक तंत्र के अजैविक कारक एवं उनका शोधन

डॉ. अरूणा पाण्डे *

प्रस्तावना – प्राचीन काल के ज्ञान को प्रदर्शित करने वाले ग्रन्थ वेद हैं। चार वेदों में एक वेद सामवेद है। सामवेद में सूर्य, अग्नि, वायु और जल के द्वारा धन-धान्य की शुद्धता और पुष्टता की बात कही गई थी। आज भी हम जानते हैं कि पारिस्थितिक तंत्र के अति महत्वपूर्ण अजैविक घटक सूर्य (ताप, उर्जा), जल, वायु और मृदा हैं। यही घटक पूरे पारिस्थितिक तंत्र को प्रभावित करते हैं। पारिस्थितिक तंत्र का प्रभाव मनुष्यों पर पड़ता है। सामवेद में इन्हीं अजैविक घटकों को परमात्मा कहा गया है और इन घटकों के लक्षण, गुण, उपयोगों आदि का वर्णन है। यह सामवेद के ज्ञान का अंग है। एक महत्वपूर्ण बात जो सामवेद में है वह यह कि इन घटकों की पौष्टिकता, शुद्धता और निरंतरता के लिये मनुष्य को क्या करना चाहिये इसका भी वर्णन किया गया है।

सामवेद में अग्नि –सामवेद का प्रारंभ ही अग्नि के आवाहन से हुआ है। हवन के द्वारा पदार्थों को वायु तक पहुँचाने का कार्य अग्नि करती है।

1. अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये।
नि होता सत्सि बर्हिषि।।

भाषार्थ– हे प्रकाश के पुन्ज! कान्ति प्रक्षेप वा हव्य खाने के लिये प्राप्त हूजिये। कैसे हो तुम? स्तुति किये हुए और हव्यपदार्थों के लेने वाले हो। यज्ञ में विराजिये वायु आदि देवों को हव्य देने - पहुँचाने के लिये।[1]

अग्नि के प्रकार – सामवेदकी ऋचा 65 के अनुसार अग्नि तीन प्रकार की है–

1. विद्युत
2. आदित्य
3. सामान्य अग्नि जो प्रज्जवलित की जाती है

बहुत सारे स्थानों में सूर्य के महात्म्य का वर्णन है। जहाँ जहाँ यज्ञ और हवन की बात आई है वहाँ वहाँ अग्नि का तात्पर्य हवन कुंड में प्रज्वलित अग्नि से है। वर्षा के जल के साथ विद्युत अग्नि का वर्णन है।

सूर्य–आज यह सर्व मान्य सत्य है कि सभी वनस्पतियों एवं प्राणियों में सूर्य की ऊर्जा का ही प्रवाह है। सामवेद में सूर्य को राजा एवं सबका पालक कहा गया है।

270 तवेदिन्द्रावमं वसु त्वं पुष्यसि मध्यमम्।
सत्रा विश्वस्य परमस्य राजसि न किष्ट्वा गोषु वृण्वते।।

भाषार्थ– हे परमेश्वर! नीचे का पृथ्वी लोक आपका ही धन है। और मध्यस्थ अंतरिक्ष लोक को आप ही पालते हैं तथा परले द्युलोक के भी आप ही राजा हैं। इस प्रकार सारे जगत् के एक साथ ही राजा हैं। आपको पृथ्वी आदि लोकों में कोई नहीं। रोक सकते।[1]

इसी प्रकार सामवेद की ऋचा 1546 में सूर्य के महत्व को प्रतिपादित किया गया है। ऋचा 9, 18 एवं 20 सूर्य और अग्नि के संबंधों का वर्णन करती है।

सामवेद में अग्नि के विभिन्न कार्य–वायु संचरण, रोग नाशक, देखने और बोलने में सहायक–

3. अग्नि दूतं वृणीमहे होतारं विश्व–
वेदसम्। अस्य यज्ञस्य सुक्रतुम्।।

भाषार्थ– सबको जताने वाले देवों के बुलाने वाले इस यज्ञ के सुधारने वाले दूत अग्नि को हम वरण करते हैं अर्थात् स्वीकार करते हैं।[1]

अग्नि के द्वारा ताप उत्पन्न होता है एवं ताप वायु को संचालित करता है अत: उपरोक्त ऋचा में अग्नि को वायु आदि देवताओं को बुलाने वाला दूत कहा गया है।

सामवेद की ऋचा 4 एवं 11 में अग्नि को रोग नाशक कहा गया है। ऋचा 5 अग्नि को मनुष्य का मित्र बतलाती है। इसी प्रकार ऋचा 7, 8 एवं 10 में बोलने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता और देखने के लिए प्रकाश की आवश्यकता का वर्णन है।

पालक के रूप में अग्नि –अग्नि (सूर्य का प्रकाश) सबका पालन करता है।

27. अग्निर्मूर्द्धा दिव: ककुत् पति: पृथिव्या अयम्।
अपां रेतांसि जिन्वति।।

भाषार्थ– यह प्रकाशमान परमात्मा सर्वोच्च है और प्रकाश की, टाट है। जिस प्रकार बैल की टाट सब अंगों से ऊँची होती है इसी प्रकार परमात्मा का प्रकाश अन्य सब प्रकाशों से उत्तम है। पृथिव्यादि लोकों का पालक है और कर्मो के बीजों को जानता है।[1],ऋचा 30 का अर्थ भी यही है कि सूर्य ही सबका अन्नदाता है।

सामवेद केवल सूर्य और अग्नि के उपयोगों की बात नहीं करता वरन् वह प्रकृति को ही ईश्वर मानने की बात करता है। साथ ही सामवेद मनुष्यों के लिये वे कर्म तय करता है जिनके करने से जल और वायु पवित्र (प्रदूषण रहित) बनी रहे। वैदिक काल में ही यह ज्ञान हो चुका था कि जल और वायु की पवित्रता पुष्ट धान्य के लिये आवश्यक है।

प्रकृति परमात्मा –सामवेद के अनुसार परमात्मा वह है जिसमें गुण मौजूद हैं।

31.उदु त्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतव:।
दृषे विश्वाय सूर्यम्।।

भाषार्थ– प्रश्न। हम परमात्मा को कैसे जानें। उत्तर– उस वेदों का प्रकाश करने वाले दिव्यगुणी चराअचरात्मा परमात्मा को प्रज्ञान अर्थात् उस के ज्ञानादि गुण सब के, देखने के लिये जताते हैं।[1] सामवेद की ऋचा 37 सूर्य को देवता कहती है।

प्रकृति की उपासना – सामवेद ने मनुष्य की दैनिकचर्या और आचार–विचार का निर्धारण इस तरह किया था जिससे प्रकृति अपवित्र (प्रदूषित) न हो एवं मानव कल्याण होता रहे। सामवेद ने कभी भी लोगों को प्रकृति पर

* (प्राणीशास्त्र) शासकीय श्याम सुंदर अग्रवाल महाविद्यालय, सिहोरा, जबलपुर (म.प्र.) भारत

शासन करने की सलाह नहीं दी। सामवेद ने प्रकृति उपासना को एवं प्रकृति के गुणों को नित्य गाने की बात कही। गाने से गुणों का प्रसार सारे समाज में होता है। गुणों को जानकर अपने लिये हितकारी प्रकृति का सहयोग किया जा सकता है। सामवेद की ऋचा 40 लोगों को प्रात:काल उठने की सलाह देती है। ऋचा 19 एवं 32 भी सूर्योपासना का संदेश देती है।

सामवेद मनुष्यों की अहिंसक बनने और सत्कर्म की प्रेरणा देता हैं। वेदोक्त कर्म की सलाह वास्तव में प्रकृति के साथ चलने की सलाह है।

176. नकि देवा इनीमसि नक्यायोपयामसि।
मन्त्रश्रुत्यअंचरामसि।

भाषार्थ – हम उपासक लोग हिंसा न करें सब ओर से किसी को अज्ञानयुक्त न करें और वेदोक्त कर्मों का अनुष्ठान करें।[1]

सामवेद कीर्तन करने और गाने की बात कहना है। यह इसलिये जिससे सूर्य, जल, वायु, अग्नि आदि के बारे में जानकारियों का प्रसार निरंतर होता रहे। जिससे पीढी दर पीढी यह ज्ञान पहुँचता रहे।

255. प्र मित्राय प्रार्यम्णे सचथ्यमृतावसो।
वरूथ्ये3वरुणे छन्द्यं वच: स्तोत्रं राजसु गायत।।

भाषार्थ –हे यज्ञधन ! यजमान ! मित्रनाम वायुभेद के लिये सेवन योग्य गुण कीर्तन रूप वैदिक वचन को गावो और यम नामक वायु के लिये गावो तथा गृहहितकारी वरूण के लिये गावो। इस प्रकार मित्र अर्यमा और वरूण इन3राजो अर्थात् प्रकाशमानों के लिये कीर्तन करो।[1]

समवेद में शुद्धता का तात्पर्य प्रदूषण रहित होने से।

समवेद में जल –जीवों की कार्यिकी में जल का क्या महत्व है यह वैदिक काल में ज्ञात था। ऋचा 75 में इसका महत्व है। साथ ही ऋचा 119 में जल की आवश्यकता का वर्णन है।

वैदिक काल में अच्छी वर्षा के लिये प्रयास किये जाते थे।

119. तमिन्द्रं वाजयामसिमहे वृत्राय हन्तवे।
स वृषा वृषभो भुवत्।

भाषार्थ – बडे मेघ को, गिराने के लिये, हम उस इन्द्र को बलिष्ट करें, जिससे वह, वर्षाने वाला वर्षाने लगे।[1]

ये प्रयास ऐसे थे जिससे शुद्ध जल प्राप्त हो। उत्तम वस्तु प्राप्त कराने का अर्थ यह है कि खराब वस्तुयें प्रकृति में न पहुँचे। आज प्रदूषण का मुख्य कारण प्रदूषकों का जल वायु और पृथ्वी में पहुँचना है।

वायु का महत्व –सामवेद ने बहुत से स्थानों में वायु को देवता कहा है। अग्नि के द्वारा वाष्पीकृत पदार्थ वायु तक पहुँचते हैं एवं बादल और सूर्य को यह वायु के द्वारा भेजे जाते हैं। जिससे वर्षा जल के साथ धन धान्य हष्ट पुष्ट होता है यह वर्णन कई जगह है।

184. वात आ वातु भेषजं शंभु मयोभु नो हृदे।
प्र न आयूंषि तारिषत्।।

भाषार्थ – हे इन्द्र !राजन् ! वा परमात्मन् ! हमारे हृदय के लिये रोगशमनकारक सुखदायक औषध को वायु बहावे और हमारी आयुओं को बढ़ावे।[1]

प्रकृति के सभी घटकों का आपसी संबंध – सामवेद ने सूर्य, अग्नि, वायु, जल और पुष्ट अन्न के आपसी संबंध को अनेक ऋचाओं में दर्शाया है। ऋचा 83 में अग्नि और वर्षा जल का संबंध है, 93 में हवन का संबंध शुद्ध जल की वर्षा से है। ऋचा 148, 245, 1317, 1327 एवं 1328 में इन्हीं संबंधों का बखान है।

सामवेद के 285वीं ऋचा बहुत ही महत्वपूर्ण है। यह शुद्ध वायु, जल और औषधि को मानव सुख और रक्षा के लिये अति आवश्यक बतलाती है।

285. सुनोता सोमपाव्ने सोममिन्द्राय वज्रिणे।
पचता पक्तीरवसे कृणुध्वमित्पृण न्नित्पृणते मय:।

भाषार्थ – रक्षा और सुख के लिये प्रार्थना किया हुआ परमेश्वर, यह जान कर कि मनुष्यों का समस्त सुख और रक्षा, शुद्ध वायु जल वृष्टि और औषधि आदि पर निर्भर हैं। उपदेश करता है कि हे मनुष्यों ! तुम सोम पीने वाले कडक रूप वज्र के धर्ता अन्तरिक्षस्थान देवविशेष के लिये सोमादि औषधियों का अभिषव करो–संपादन करो। रक्षा के निमित्त पकाने योग्य पुरोडाषादि पकाओ। ऐसे सब काम करो ही देने वाला सुख देता है।[1]

वैदिक ज्ञान एवं दैनिक चर्या –वैदिक समय में सारा ज्ञान सूत्र के रूप में वेदों में लिखा गया। विस्तृत ज्ञान गायन के द्वारा प्रसारित होता रहा। वैदिक साहित्य की विशेषता यह है कि ज्ञान के द्वारा प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर जीवन जीने के लिये जन–मानस को प्रेरित किया गया। जन–मानस के लिये दो बातें जरूरी थी पहली वे क्रियायें जिनसे पर्यावरण पवित्र रहे और दूसरा प्रकृति के तत्वों का कीर्तन व गायन जो उनके महत्व को प्रसारित कर सके जिससे लोग प्राकृतिक तत्वों की पवित्रता बनाये रखने के लिये प्रयासरत रहें। अग्नि में हवन के माध्यम से वायु, वायु से वर्षा जल एवं वर्षा जल से धान्य की पौष्किता एवं पवित्रता निश्चित करना यह प्राणी मात्र का कर्त्तव्य निर्धारित किया गया। वैदिक काल में पर्यावरण शुद्धि के उपाय दैनिक चर्या का हिस्सा थे। प्रतिदिन हवन करते हुये यह प्रार्थना की जाती थी कि

06. त्व नो अग्ने महोभि: पाहि विश्वस्या।
अराते:। उत द्विषो मर्त्यस्या।।

भाषार्थ – अग्ने!तुम हवनादि से सब दु:खदायक और मनुष्य के शत्रु से हम को बचाओ।[1]

67. मूर्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानरमृत आ जातमग्निम्।
कविं सम्राजमतिथिं जनानामासन्न: पात्रं जनयन्त देवा:।।

भाषार्थ – विद्वान ऋत्विज् लोग हमारे, यज्ञ में पृथ्वी से, द्युलोक के, उर्ध्व भाग को जाने वाले सब मनुष्यों के हितकारी उत्पन्न दिखाने वाले दहकते हुए सदा चलने वाले प्राणियों के, रक्षक मुख अग्निको सब ओर से प्रकट करें।1,

293. इम इन्द्राय सुन्विरे सोमासो दध्याशिर:।
ता आ मदाय वज्रहस्त पीतये हरिभ्यां याहोक आ।।

भाषार्थ – हे वैद्युततेजोधर ! ये दधिमिश्रित सोमादि औषधियां तुझ इन्द्र के लिये सुसंपन्न की है। हर्ष के लिये उन सोमें के ग्रहण करने को तिरछी सीधी दोनों गतियों से यज्ञस्थल को आ।[1]

338. इन्द्रापर्वता बृहता रथेन वामोरिष आ वहतं सुवीरा:।
वीतं हव्यान्यध्वरेषु देवा वर्धेथां गीर्भिरिडया मदन्ता।।

भाषार्थ – दिव्य स्वभाव बिजुली और मेघो!तुम बडे रमणीय मार्ग से सुन्दर वीरों वाली उत्तम अन्नसामग्रियों को प्राप्त कराओ यज्ञों में हवन के द्रव्यों को प्राप्त होओ व खाओ वेदमन्त्रों के साथ हवन किये अन्न से हष्टा हुए तुम बढ़ो।[1]

1557. अभि प्रयांसि वाहसा दाश्वाँ अश्नोति मर्त्य:।
क्षयं पावकशोचिष:।।

दानी यजमान मनुष्य शोधक किरणों वाले अग्नि से निवासगृह को और अन्नों को सब ओर से पाता है।[1]

यज्ञ करने की प्रेरणा परमात्मा भी देते हैं

362. अर्चत प्रार्चत नर: प्रियमेधासो अर्चत।
अर्चन्तु पुत्रका उत पुरमिद् धृष्ण्वर्चत।।

भाषार्थ – परमात्मा उपदेश करता है कि हे नेता मनुष्यों ! हे यज्ञ से प्यार करने वालों ! यजन करने वालों का इष्ट पूर्ण करने वाले और सब को दबा सकने

और स्वयं न दबने वाले इन्द्र का यजन करो, यजन करो, बहुत यजन करो, हे पुत्रो!यजन करो अवश्य यजन करो।[1]

वर्तमान युग में बहुत सारा ज्ञान है। पर्यावरण प्रदूषण पर ढेरों पुस्तकें हैं। अनेकों प्रयोगशालाओं में प्रयोग हुये हैं। परन्तु आज भी प्रदूषण रोकने की बातें लेखों और भाषणों में सिमटकर रह गई हैं। जहाँ वैदिक काल में अलग से यज्ञ और हवन के द्धारा जल, वायु और अन्न को शुद्ध किया जाता था वहीं वर्तमान समय में जल और वायु में अनेकों हानिकारक तत्व मिलाकर उसे विषैला किया जा रहा है। सामवेद की उपरोक्त एवं अन्य ऋचाएँ यदि शुद्ध जल, वायु, अन्न की बात कहती हैं एवं सूर्य और अग्नि का महत्व बतलाती हैं तो निश्चित उस समय जल चक्र, वायु के घटक, अन्न के पौष्टिक तत्व एवं सूर्य की उर्जा से भोजन निर्माण की जानकारी थी। सामवेद में कहीं भी यह नहीं कहा गया है कि वायु, जल और भूमि में विषैले पदार्थ न मिलाओ अर्थात् वैदिक काल में जल, वायु, अग्नि और पृथ्वी में किसी भी प्रकार के दूषित तत्व नहीं मिलाए जाते थे। वर्तमान समय में यह प्रवाह रोकना एवं शुद्धिकरण प्रक्रियाओं को बढ़ाना अति आवश्यक हो गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. स्व. श्री पं. तुलसीराम स्वामीकृत सामवेद (हिन्दी भाष्य), सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा।

****

अध्यापक शिक्षा के गुणात्मक उन्नयन की आवश्यकता

विनिता मेहता *

प्रस्तावना – आज भारत ही नहीं वरन् विश्व के सभी विकसित विकासमान समाजों में शिक्षा की गुणवत्ता एक प्रमुख विषय बन गई हैं शिक्षण का कार्य समस्त कार्यों में पवित्रतम और परमावश्यक माना जाता है क्योंकि शिक्षा दान के समान दूसरा कोई कार्य नहीं है।

21वीं सदी को तकनीकी क्रांति का युग कहा जा सकता हैं।इस क्रांति के साथ वही समाज तालमेल बैठा सकते है जहाँ के अध्यापक उच्च शिक्षा प्राप्त किए हों।अध्यापकों के सफल प्रयासों द्वारा ही देश विकास समृद्धि की ओर अग्रसर होता है,उच्च कोटि के प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापक ही समाज, परिवार व देश के लिए उच्च आदर्शों वाले छात्रों को तैयार कर सकते हैंअत: देश के लिए अध्यापक शिक्षा का विशेष महत्व है।

अध्यापक शिक्षा ही वह माध्यम है जिसके द्वारा भावी अध्यापकगण निहित कौशल तथा तकनीकों से परिचित हो सकते है और उनमें दक्षतार्जन करते हुए अपेक्षित शिक्षण व्यवहारों को आत्मसात करने में सक्षम हो पाते है अध्यापक आज मात्र छात्रों के विकास के लिए ही जिम्मेदार नहीं माने जाते बल्कि उन पर उनके सर्वांगीण विकास का दायित्व होता है। अध्यापक शिक्षा के महत्व को डॉ. राधाकृष्णन् ने इस प्रकार प्रकट किया है – 'समाज में अध्यापकों का स्थान महत्वपूर्ण है। यह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को बौध्दिक परम्पराओं और तकनीकी कौशल पहुँचाने का केंद्र हैं और सभ्यता के प्रकाश को प्रज्वलित रखने में सहायक होता है। 'वस्तुत: किसी भी देश का स्तर वहाँ के शिक्षकों पर निर्भर करता है और शिक्षकों की योग्यता व क्षमता उनके प्रशिक्षण या शिक्षा पर निर्भर करती है।

अध्यापक मानव जाति के लिए मार्गदर्शन और नेतृत्वशील व्यक्तित्व का विकास करते है, जो चारित्रिक, वैचारिक और नैतिक सभी दृष्टि से आदर्श का अनुकरण करने वाला हो। अध्यापक शिक्षा मानवीय सम्बंध को उत्तम बनाकर सभ्यता और संस्कृति की रक्षा करती हैं इस प्रकार राष्ट्रीय विकास में व सामाजिक परिवर्तन में शिक्षक की भूमिका महत्वपूर्ण है।

भारत में मुगलों के जाने के उपरांत पाश्चात्य शिक्षा शास्त्रियों का उद्‌भव हुआ शिक्षा के आधुनिक काल में अंग्रेजों के अस्तित्व की छाप थी। शिक्षा के क्षेत्र में जब से मनोविज्ञान का जन्म हुआ है तब से अध्यापक शिक्षा का आधार परिवर्तित हो रहा है। शिक्षा व्यवसाय बन गई है। सच कहा जाये तो व्यवसाय से भी कुछ ज्यादा बन गई है।

शैक्षिक व्यवसाय में अध्यापक केवल ज्ञान दाता ही नहीं ,एक जीवन आदर्श है उसका व्यक्तित्व शैक्षिक प्रक्रिया का प्रत्यक्ष प्रतीक होता है। डॉ.ब्रूनर का मत है कि 'यह जानने के लिए किसी विस्तृत अनुसंधान की आवश्यकता नहीं है कि ज्ञान का संप्रेषण मुख्यत: अध्यापक की विषयगत प्रवीणता पर ही निर्भर होता है।'

'No system of Education can rise above the level of its Teachers'

यदि शिक्षा समाज की आधारभूत संस्था है तो अध्यापक शिक्षा संस्था के केंद्र बिन्दु।कोई भी शिक्षा कर्यक्रम शिक्षक की क्रियाशीलता, सहयोग, नवाचार व अनुसंधान के बिना सफलता प्राप्त नहीं कर सकता हैं।शिक्षक की प्रभावशीलता ही आने वाली पीढी की दिशा निर्देशक होती है ऐसे में जब चहुँ ओर शिक्षा की गुणवत्ता का स्वर अनुगुंजित हो रहा है तो शिक्षक शिक्षा ही वह माध्यम है जो शिक्षा की गुणवत्ता रूप सरगम को प्रवाहित कर समाज को परम लक्ष्य की प्राप्ति करवा सकता है। अत: अध्यापक शिक्षा व्यवस्था को शक्तिशाली स्वरूप प्रदान करेंगी।

भारतीय अध्यापक शिक्षा की स्थिति इतनी चिंतनीय हो गई है कि शिक्षा की गुणवत्ता जिसे शत–प्रतिशत पूरा करने की जिम्मेदारी शिक्षकों पर ही है उन्हीं शिक्षकों को तैयार करने वाले अध्यापक शिक्षक आज अपनी स्थिति से असंतुष्ट प्रतीत हो रहे हैं क्योंकि एक ओर तो अध्यापक शिक्षा पर विद्यालयी संगठन अपना प्रभाव दिखाते है तो दूसरी ओर विश्वविद्यालयी नीतियां उन पर लगाम लगाने को तत्पर रहती हैं। किंतु जब प्रश्न अध्यापक शिक्षा को सुदृढ़ करने का आता है तो दोनों ही पक्ष अपनी जिम्मेदारी से पल्ला झाडते हुए नजर आते हैं। यही द्रुविधा पूर्व स्थिति न तो अध्यापक शिक्षा का, न ही शिक्षा व्यवस्था का गुणात्मक उन्नयन कर पाने में सक्षम है।

प्रशासनिक व्यवस्थाओं का सौतेला व्यवहार भी अध्यापक शिक्षा पर कुठाराघात करता रहता है। प्रशासकों द्वारा अध्यापक शिक्षा महाविद्यालयों की उपेक्षा करना एक बहुत बडा चिंतनीय पक्ष है। इस तथ्य को कोठारी आयोग ने भी स्वीकार किया है कि प्रशासक वर्ग अध्यापक शिक्षा के महाविद्यालयों एवं सामान्य महाविद्यालयों में भेद करते हुए व्यवहार करते है। महाविद्यालयों के शिक्षक भी अध्यापक शिक्षा के प्रवक्ताओं को अपने समकक्ष नहीं मानते हैं, इस कारण अध्यापक शिक्षा के प्रवक्ताओं में हीन भावना का उदय हो जाता है व अनेक सुविधाओं से भी उन्हें वंचित रखा जाता है।

अत: शिक्षा के क्षेत्र में सरकार द्वारा, प्रशासकों द्वारा एवं शिक्षाविदों द्वारा सार्थक प्रयास कर इनकी समस्याओं का समाधान करना निश्चय ही शिक्षा की गुणवत्ता की ओर एक सफल प्रयास सिद्ध होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

* प्राध्यापक (रसायन विज्ञान) एस. एस. कॉलेज ऑफ एजुकेशन, उमरडा, जिला–उदयपुर (राज.) भारत

Knowledge of Adolescent Girls Regarding STDs, HIV and AIDS & Teenage Pregnancy

Neeraj Singh * Dr. Renubala Sharma **

Introduction - Adolescence is the critical phase of human life that links the period of childhood and early youth with adulthood. It is marked by profound and dynamic changes, yet it is virtually neglected by health care provides, by society and even by most parents, teachers and health professionals. Adolescents are neither covered by pediatric nor by adult medicine, although adolescence is a period of turmoil, with drastic physical, biological, sexual and psychological changes. Their reproductive life may start early while their mental potentialities, perceptions and emotional facilities are sties being formed. For reaching mental health problems (for example, depression, antisocial behaviour and lack of education) may arise. In addition they are vulnerable to exposure to the risks of smoking, drug addiction, alcohol and violence. This is also a time of high risk of contracting sexually transmitted disease, including AIDS. All these changes are too drastic to be comprehended and faced by the adolescent alone without adequate protective preparation.

Objectives -

1. To study the awareness on knowledge of adolescent girls regarding HIV/AIDS and STDs and teen pregnancy.

Locale of the Study - Madhya Pradesh (Gwalior) and Haryana (Karnal) were chosen as locale of the study. This was done with the intention that M.P. and Haryana are major states of the country and adolescent girls (as future mother) have an important role to play in the development of the family, state as well as the country.

Selection of Adolescents - A list of adolescent girls were prepared separately for each school and college, three groups were selected in this study. One group of 100 adolescent girls from karnal urban area, second group of 100 adolescent girls from karnal rural area and third group of 100 adolescent girls from Gwalior district. Thus total sample size of 300 respondents was selected in this study.

Distribution of Adolescent Girls According to Age Group (Table see in the last page)

Table shows distribution of adolescent girls according to age group. 47 percent girls belonged to 12 to 16 years age group, 52 percent 14 to 16 years age group where as 32.33 percent from 16 to 19 years of age group. Age of adolescents plays very important role to safe motherhood and for better survival.

Level of Awareness in Adolescent Girls Regarding AIDS(Table see in the last page)

Table indicates various levels of awareness in adolescent girls with reference to AIDS and its prevention. Table shows that awareness level of only 11 percent girls were high followed by 29.66 percent girls having average and 59.33 percent adolescent girls having low level of awareness.

As the present study was focused at finding out levels of awareness in adolescent girls regarding awaress to AIDS. It was necessary to extract existing knowledge possessed by adolescent girls regarding the AIDS & HIV. To attain this requirement adolescent girls were interrogated with the help of a pretested interview schedule which contained questions regarding HIV, AIDS and its prevention, reproductive, health, STDs etc. The questions were of multiple choice types. In this way the existing knowledge and information of the adolescent girls obtained and then scored.

There were 25 questions in the interview schedule and awareness level was measured on the basis of scores obtained from these 25 responses. Taking maximum scores (i.e. 75) into consideration, three ranges of the scores were formulated (1/3 of 75 is 25 and 2/3rd of scores is 50), thus the three ranges of formulated scores i.e. - 0-25, 26-50 and 51-75 reflected there levels of awareness viz, low, average and high awareness level respectively.

Knowledge of Adolescent Girls Regarding STDs, HIV and AIDS (Table see in the last page)

Table shows the knowledge of adolescent girls regarding STDs, HIV and AIDS. Table indicates that at karnal urban study group 60 percent adolescent girls are ignorant about STDs, HIV and AIDS. This response is seen nearly same among the karnal rural and Gwalior city. This ignorance is an alarming sign. 20.33 percent girls gave the wrong responses, whereas 15, 11 and 12 percent respectively from karnal urban, karnal rural Gwalior group gave partially correct responses. Only 9.33 percent girls gave correct responses.

Adolescents are tomorrow's adults. Now-a-days adolescents are exposed to media and internet, traditional family system is also breaking down. Looking to the increasing cases of HIV/AIDS in India, there is an urgent need to pay attention to ARH.

The incidence of STDs continues to grow throughout

* Research Scholar, Govt. Auto. Girls P. G. College, Sagar (M.P.) INDIA
** Professor & Head, Govt. Auto. Girls P. G. College, Sagar (M.P.) INDIA

the world. The World Health Organization estimates the annual incidence of curable STDs, such as syphilis and gonorrhea to be approximately 33.5 million cases worldwide.

Today the estimated, worldwide number of HIV cases is estimated to be approximately 36,000,000 with the highest percentage of cases residing in under developed countries and those with lower socio-economic conditions. Poverty clearly has direct correlation with the incident rates of sexually transmitted throughout the world,

In summary, education and knowledge about STDs is important as primary means of changing sexual behaviour and practices. Rehabilitation programmes should be including such information on a routine basis as part of their sexuality education classes, since this is seldom accomplished, it is important for each of us to work toward controlling the spread of these diseases through prevention of their occurrence.

Knowledge of Adolescent Girls Regarding Teenage Pregnancy (Table see in the last page)

Table reveals the knowledge of adolescent girls regarding teenage pregnancy. 24.33 percent adolescent girls gave correct responses. 38.33 percent responses were partially correct where as 37.33 percent adolescent girls gave wrong responses pregnancy before the age of 18, is considered globally to be "high risk pregnancy". Pregnancy related diseases such as preeclampsia, urinary tract infection, fetal-pelvic disproportion, premature rupture of membranes, prolapsed of the umbilical cord, fetal distress, high prenatal mortality of the offspring and low birth weight of the surviving child are high risks of morbidity before the age of 20 years.

There are many effects of teen pregnancy :

For married adolescents -

- Pregnancy related hypertension;
- Anemia and malnutrition;
- Cephalo-pelvic disproportion;
- Vesicovaginal and rectovaginal fistulae;
- Retardation of fetal growth or intrauterine growth
- Premature birth;
- Low birth weight;
- Perinatal mortality.

For Unmarried adolescents -s

The same problems may occur plus :

- High risk of abortion with attempts to hide it;
- Quitting school (termination of education);
- Honour-related measures against the girl;
- Psychological problems.

There is a crying need for adolescent education across the country in order to prevent adolescents from being exploited.

Aging is the process that continues through out the duration of once lifetime, but adolescents are the future and backbone of any nation, so their issues need special attention.

There is a need to universalize AIDS training programme and AEP (Adolescent Education Programme) not only for adolescent girls but for adolescent boys also.

Education and prevention programmes on HIV/AIDS, STDs and RH should be motivated in rural community, because the people of rural areas most of the time live under conditions of scarcity.

References :-

1. Amudha Poobalan (2010), Factors Associated with Teenage Pregnancy in South Asia. A Systematic Review: Vol 4: (1),
2. Acharya Dev Raj (2010), Factors Associated with Teenage Pregnancy in South Asia.
3. Chauhan, A., Pankh, V., Singh, S., Trivedi, S.J., and Zaveri, H. (1998), Towards better Reproductive Health: An Intervention Experience with the under Privileged Adolescents of Vadodara, Gujrat : Baroda Citizen's Council.
4. Charkrovarty, A., Sarswati, N., Roy, R., Sengupta, B., Choudhuri, R.N. (2007), A Study of Awareness on HIV/AIDS among Higher Secondary School Students in Central, Kolkata
5. Kaur Jaspinder (2013), A Case Report: Unsafe Abortion. International Journal of Medical Science and Public Health, 2(1), 156-158.
6. Lal, P., Nath, Anita, Badhan S., Ingle, Gopal (2008), A Study of Awareness about HIV/AIDS among Senior Secondary School Children of Delhi.
7. Sharma, A.K. (2003), Pregnancy in Adolescents a Community based Study, Indian Journal of Pediatrics. Vol. 34, No.1,2.
8. Sodhi, S., Mehta, S. (2008), Level of Awareness about AIDS :- A Comparative Study of Girls of two Senior Secondary School of Chandigarh.

Distribution of Adolescent Girls According to Age Group

Age group (Years)	Karnal Urban (n=100)	Karnal Rural (n=100)	Gwalior (n=100)	Total (n=300)
12 to 14	14	18	15	47 (15.66)
14 to 16	52	50	54	156 (52.0)
16 to 19	34	32	31	97 (32.33)
Total	100	100	100	300 (100.0)

Level of Awareness in Adolescent Girls Regarding AIDS

Level of Awareness	Karnal Urban (n=100)	Karnal Rural (n=100)	Gwalior (n=100)	Total (n=300)
High	14	08	11	33 (11.00)
Average	32	27	30	89 (29.66)
Low	100	65	59	178 (59.33)
Total	100	100	100	300 (100.00)

Knowledge of Adolescent Girls Regarding STDs, HIV and AIDS

Response	Karnal Urban (n=100)	Karnal Rural (n=100)	Gwalior (n=100)	Total (n=300)
Ignorant	60	55	58	173 (57.67)
Partially Correct	15	11	12	38 (12.67)
Correct	10	08	10	28 (9.33)
Wrong	15	26	20	61 (20.33)
Total	100	100	100	300 (100.00)

Knowledge of Adolescent Girls Regarding Teenage Pregnancy

Response	Karnal Urban (n=100)	Karnal Rural (n=100)	Gwalior (n=100)	Total (n=300)
Correct	27	21	25	73 (24.33)
Partially Correct	35	40	40	115 (38.33)
Wrong	38	39	35	112 (37.33)
Total	100	100	100	300 (100.00)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) Oct. to December 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

Energy Consumption Pattern of Adult Females Residing in Urban Areas of Bikaner (Rajasthan)

Madhu Kagat *

Abstract - During present investigation hundread middle aged women (50-55years) residing in ten poshed colonies of Bikaner belonging to MIG and HIG were selected in equal numbers i.e. 50 from each group on the basis of convenient sampling. Results of dietary survey revealed that the intake of roots and tubers, fruits, milk and milk products, fats/oils and sugar/jiggery was in excess of the suggested intakes given by ICMR (1998). The mean daily intake of energy and carbohydrate was noted to be inadequately by all the subjects, while rest of the nutrients like fat were noted to be higher against the RDA. Energy consumption pattern of the adult females under study was not found to be satisfactory and indicates the need for nutritional education of the subjects.

Introduction - Energy is defined as the ability to do work. The human body requires a supply of chemical energy for survival. The ultimate source of energy is the sun. sunlight is used by plants to produce chemical energy and the source of this chemical energy are the dietary macronutrients – carbohydrates, fats and protein that are consumed in large quantities and constituent the bulk of dietary dry matter. We convert the energy from the food we eat into ATP energy. For leading an active healthy life energy is vital to it. The energy allowances recommended are designed to provide enough energy to promote satisfactory growth, provide energy for physical work, maintain body weight and good health. Energy requirement is influenced by age, body size, activity and to some extent by climate and physiological status. There are number of studies emphasizing the importance of total intake of calories as well as the proportions of energy derived from protein, fat and carbohydrate.

Indian Council of Medical Research (1990) recommended that carbohydrate intake should be in the range of 55-70 percent, protein intake in the range of 10-15 percent and total fat intake in the range of 20-30 percent.Fats and oils play an important role in our diet of supplying energy, enabling absorption of fat soluble nutrients, providing essential fatty acids (EFA) and producing sense of satiety. Rising incomes in the developing word have associated with increase in the availability and consumption of energy dense high fat and sugar diet. Sugar plays an important role in our diet for supplying energy. In India sugar occupy a privileged place in social customs, being always associated with happy and gay occasions. Most of the confections are dense in sugar and jaggery.

Methodology -

1. **Selection of subject -** Subjects was taken from Bikaner city. Bikaner is one of the prominent cities of Rajasthan, situated in the northwest of the state. Hundred middle aged women of 50-55 years (Diane et.al,1978) residing in the ten poshed colonies of Bikaner belonging to MIG and HIG were selected in equal number i.e 50 from each group on the basis of convenient sampling technique. Willingness of the subject to co-operate during the study was considered as an important criteria for their selection. The subjects selected for the study were then interviewed to collect all the relevant information with the help of pretested structural interview schedule.
2. **Collection of data -** An interview schedule was developed to collect detailed information from selected subjects regarding background information (age, educational level, occupation, religion, food habits, type of family, income, physical activity pattern), food intake, frequency and type of fats &oils consumed, incidence of various diseases and activity pattern.
3. **Dietary survey -** Dietary survey was carried out to assess energy consumption pattern of the subjects. Detailed information regarding the dietary pattern of the subjects was noted by using interview schedule. A 24-hr dietary recall method for 3 consecutive days was adopted to find out the intake of various foods consumed by the subjects. The data collected included recording the daily consumption of cereals, pulses, milk & milk products, eggs, meat, sugar and jaggery, fats and oils, vegetables and fruits. The nutritive value was calculated using the food consumption tables(Gopalan et.al.,1989). Nutrient composition of food consumed by the subjects was calculated in terms of energy, protein, fat, carbohydrate, fiber, ash, iron, vitamin A, thiamine, riboflavin, niacin, vitamin C, vitamin B12, folic acid, zinc, magnesium, calcium and phosphorus by using the food composition tables(Gopalan et.al.,1989). The nutrient intake of the subjects was compared with the recommended dietary intake for Indians(ICMR, 1990).
4. **Statistical Analysis of Data -** Observation collected on the various aspects of the study have been statistically analyzed as suggested by Gupta(1997). Mean and standard

* Research Scholar (Home Science) Jai Narain Vyas University, Jodhpur (Raj.) INDIA

deviation was calculated for each set of observation.

Results and Discussion - All the individuals need a wide range of nutrients to lead healthy and active life. The component of the diet should be chosen judiciously so as to provide all the nutrients in proper proportion. The dietary adequacy was assessed by calculating the amount of various foods compared with balanced diet suggested by ICMR (1998). The pertinent results are presented in Table 1.

Table 1. (See in the last page) - Cereals are major source of energy in Indian diet contributing 70 to 80 percent of daily energy intake. The cereal intake by the MIG and HIG subjects was 63 and 62.3 percent of the suggested intake respectively indicating lower consumption. The adequacy of pulses by MIG was 80 percent and for HIG it was 83.3 percent, indicating inadequate intake by both the income groups. The percent adequacy of intake of GLV by MIG and HIG subjects was 16 percent and 28 percent of the suggested intake indicating very low consumption. There was non significant difference in intake of the other vegetables by MIG and HIG subjects when compared with suggested intake (100 g) adequacy by MIG and HIG was found to be 74 and 58 respectively. Thus it can be stated that the consumption of GLV and other vegetables by the study group was evaluated to be grossly deficient. The percent adequacy of fruits by MIG and HIG was 145 and 155 of the suggested intakes indicating higher fruit consumption status by the study subjects, indicating their affordability and awareness about the beneficial effects of fruit intake. The adequacy of intake by MIG 154 and by HIG 158.3 percent of the suggested intake, indicating higher consumption of milk and milk products by all the subjects irrespective of their income status. When compared with suggested intake (30 g), the percent adequacy for MIG was 20 and for HIG it was 10, indicating very low consumption of meat and meat products. Fats is a concentrated source of energy. The adequacy of fats and oils by MIG was 130 percent and by HIG it was 155 percent of the suggested intake (20 g), indicating overall higher intake by all the subjects. The difference in intake was significant ($P \leq 0.05$) between the MIG and HIG. The difference in intake of sugar and jaggery was significant ($P \leq 0.05$) between the income groups. This food group was included in the diet chiefly as sweetening agent for beverages (tea and milk) and other food items like halwa, ladoo, other sweets, biscuits etc. to increases palatability. The percent adequacy of intake by MIG was 140 and by HIG it was 170 of the suggested intake (20 g) indicating higher consumption of sugar and jaggery by all the subjects.

Table II. (See in the last page) - It was observed that among MIG the percent contribution of carbohydrates, protein and total fat to energy was 58.8 $\pm$ 4.17, 13.18$\pm$ 0.84 and 28.02 $\pm$ 03.53 respectively. The corresponding values for HIG subjects were 58.96$\pm$ 4.10, 11.88$\pm$0.49 and 29.16$\pm$3.95 percent (Table II) and Fig.I. Immaterial of the income group, contribution of energy from carbohydrate, protein and fat was within the range as suggested by ICMR (1990). The percent adequacy of carbohydrate and total fat was noted to be non-significant in both income groups, whereas a significant ($P \leq 0.01$) difference was noted in protein intake. Similar results were also obtained by the Raghuram et al. (2000) in a study of 150 subjects, they reported that 52 to 58 percent of total energy derived from carbohydrate, protein provided 11 to 14 percent of the calorie intake and 25 to 30 percent was derived from fat.

Conclusion - The result of present study revealed that the intake of cereals, pulses, GLVs, other vegetables and meat and meat products was inadequately consumed by all the subjects of present study, whereas the consumption of roots and tubers, fruits, milk and milk products, fats and oils and sugar jaggery was found to be in excess when compared with suggested intakes given by ICMR (1998). There was non significant effect of income on the overall energy consumption of the subjects, whereas significant difference was noted for the consumption of fats and oils as well as sugar and jaggary being higher in HIG. Thus results of study clearly indicates need for nutrition education specially for adequate and low fat diets to the study group.

References :-

1. Diane Papalia, E., Sally Wendkos olds, Ruth Deskin Feldman (1978). Chronological terms as the year between 40 to 65. Human development, 9th edition, P.52.
2. Gopalan, C., Ramasastri, B.V. and Balasubramaniaym, S.C. (1989). Nutritional value of Indian Foods. Revised and updated by Rao, B.S.N. Deoshthale, Y.G. Pant, K.C., NIN, ICMR, Hyderabad, pp.47-67.
3. Gupta, S.P. (1997). Statistical methods, Sultan Chand and Sons Publishes, New Delhi.
4. ICMR (1990). Nutrient requirements and recommended dietary allowances for Indians. NIN, Hyderabad.
5. ICMR (1998). Dietary Guidelines for Indians – A manual, National Institute of Nutrition, NIN, Hyderabad.
6. Raghuram, T.C., Pasricha, S. and Sharma, R.D. (2000). Diet and diabetes. National Institution, ICMR, Hyderabad, pp. 11-16.

(See Table & graph in next page)

Table 1. Percent adequacy of food intake by the subjects

Food groups	Percent adequacy		Suggested intake (ICMR, 1998)
	MIG (n=50)	HIG (n=50)	
Cereals millets (g)	63	62.3	300
Pulses (g)	80	83.3	60
GLV (g)	16	28	100
Roots & tubers (g)	168	186	100
Other vegetables (g)	74	58	100
Fruits (g)	145	155	100
Milk and milk products (ml)	154	158.3	300
Meat & meat products ()g	20	10	30
Fats and oils (visible) (g)	130	155	20
Sugar and jaggery (g)	140	170	20

Table II. Percent contribution of energy contributing nutrients to the total energy

Nutrients (g)	Percent energy derived		'Z' value	Percent*
	MIG (n=50)	HIG (n=50)		
Carbohydrate	58.8 ± 4.17	58.96 ± 4.10	0.23[NS]	55-70
Protein	13.18 ± 0.84	11.88 ± 0.49	9.48**	10-15
Total fat	28.02 ± 3.53	29.16 ± 3.95	1.54[NS]	20-30

*= Recommended by ICMR (1990)
[NS]= Non significant
**= Significant at 1% level

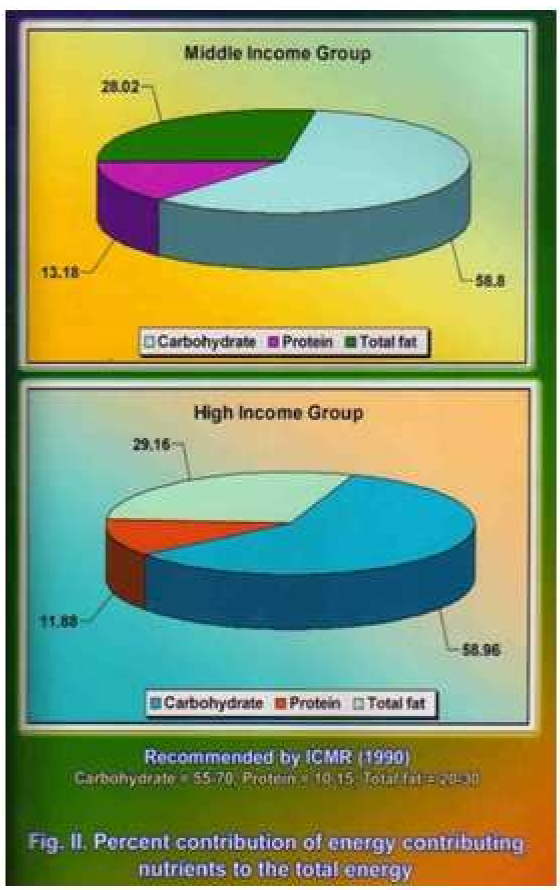

Fig. II. Percent contribution of energy contributing nutrients to the total energy

****

Dietary Habits And Effect Of Educational Tool On Nutrition Knowledge Of Affluent Class Women In Chhindwara City

Akanksha Sharma * Dr. Meera Vaidya ** Dr. Smita Pathak ***

Abstract - All the Women if given proper guidance and education regarding Food Practices would be able to make significant improvement in their lifestyle which is helpful for maintaining sound health of not only their but of whole family, Thus a study was conducted to assess the general knowledge of affluent class ladies of Chhindwara city. 47% were overweight or obese and 21% had wrong assessment about their bodyweight. 45% had sedentary lifestyle.58% had poor knowledge, 33.5% had negative attitude or were disagreed about healthy food practices .55% didn't practiced healthy cooking methods. Thus to enhance their knowledge an educational tool a booklet named "change for life" was distributed among them and sessions were organized .A significant improvement in the nutrition related knowledge was observed among the experimental group after intervention. However, no significant difference was noticed among the control group.
Key words: Affluent class ladies, Dietary habits, Food frequency Questionnaire, Nutrition education.

Introduction - Proper nutrition is the foundation of good health and wellbeing. Surveys to assess dietary intake and nutritional status of the population are essential to monitor ongoing nutrition transition and initiate appropriate interventions. According to the latest WHO report, there is now a global epidemic of obesity that is associated with increased mortality and multiple morbidities. The underlying etiology and risk factors for obesity, inadequate physical activity and unhealthy dietary pattern are found to be important causes of many heart related disorders. Dietary knowledge and access to resources are critical to improve health and nutrition in a sustainable way. Chhindwara city is district headquarters and ranks first in area of Madhya Pradesh state. Business community is predominant in Chhindwara city.

All the Women if given proper guidance and education regarding Food Practices would be able to make significant improvement in their lifestyle which is helpful for maintaining sound health of not only their but of whole family, Thus a study was conducted to assess the dietary habit, knowledge ,attitude and practices of affluent class ladies of Chhindwara city and nutrition education was given by the means of a health booklet and counseling sessions.

Materials and methods:

Study design and subjects- Purposive sampling method was adopted to select ladies. Total 150 ladies from affluent families were selected and 50 women were selected as a control group. Pregnant and lactating women were excluded.

Baseline data- A Structured interview schedule was administered to find out the general details of the study subjects. A pre tested knowledge assessment questionnaire (KAQ) containing multiple choice questions on various aspects of health and nutrition was administered to women. Data on food preferences and consumption was noted by using food frequency questionnaire.

Chart Number 1.**Pre Knowledge of Women about Healthy Food Practices (number of subjects=200) (See in the last page)**

Intervention- After obtaining the baseline data, 50 women were considered as control group while rest of the 150 women was experimental group. The experimental group was given nutrition education through booklet and counseling sessions while no intervention was given to the control group. The post intervention data were obtained at two different times- one immediately after giving counseling and booklet and the second with a gap of 3 months. The impact of the booklet and counseling was assessed by again applying KAQ.

Figure number 1: Experimental Plan **(See in the last page)**

Results- The average age group was found to be 36 years and education was found to be satisfactory. More than 85% women were graduate and above rest of them were diploma holders or higher secondary pass. 68% of the women were

* Research Scholar, Govt. MH College of Home science And Science for Women, Jabalpur (M.P.) INDIA
** Professor & Head, Food & Nutrition Deptt., Govt. MH College of Home science and Science for Women, Jabalpur (M.P.) INDIA
*** Professor, Food & Nutrition Deptt., Govt. MH College of Home science and Science for Women, Jabalpur (M.P.) INDIA

not taking daily breakfast, 8% never had breakfast. The daily consumption of protein in the form of pulses was observed in 39% of the women daily followed by 3-4 times a week by 20% women. As regards the consumption of green leafy vegetables 36% of women indicated daily intake while, 62% reported consumption either once or twice a week. Consumption of other vegetables was reported by 92% of the women. Daily fruit consumption was observed in 59%.Most of them consumed guava, bananas and apples as these are available in plenty throughout the year in city. Consumption of wheat was 100% while 52% of them included rice as well in their diet. 67% consumed millets seasonally, mostly in winter.

Chart number 2: Breakfast eating habit (n=200) **(See in the next page)**

Chart number 3: Green leafy vegetables consumption **(See in the next page)**

Impact of nutrition education - At the baseline, the average nutritional levels were not significantly different between the control and experimental group indicating the homogeneity of the group. Over all knowledge regarding Healthy food practices before intervention was not very good. Around 58% had poor knowledge, 31% had fair knowledge. While only 11% had good knowledge. Post intervention data analysis by KAQ test indicated that there was a significant improvement in the knowledge levels of the experiment group. After a gap of three months, the same KAQ was re-administered to the experiment group and no significant difference was observed that indicates retention of the knowledge through booklet and counseling.

Discussion - Administration of FFQ offer the advantages of assessing the food habits of the community (Anderson et al.,1995).In the present investigation, data from FFQ's indicated less consumption of millets. Similar findings with regard to consumption of green leafy vegetables were reported by Ahmed et al.,(1997), consumption of dark leafy vegetables at least four times per week showed significantly higher serum vitamin A levels in the women than the one who consumed less. Concepts of healthy Food consumption were not clear also it was supported by (Badruddin et al, 2002) that due to lack of proper knowledge as regards diet requirements of each person should be given individual dietary advice with clear view of its purpose. So, that they understand and follow it in practice.Nutrition education on healthy food practices would help women to understand the importance of it. Similar study was done and findings were that Nutrition education is an effective tool in promoting healthy eating habits among the adolescents (Leupker et al., 1996). To bring change in attitude of any person educating them is the most important thing. The reasons of the poor knowledge need to be further studied in detail of population. Thus there is need for arranging large scale awareness programmes for the general public and also to identify and use educational medium to spread the message which could change the attitude of people in future. However, understanding the perceived needs and barriers to healthy dietary behavior contribute to develop appropriate educational programmes for the community (Nicklas et al., 1997) Creating awareness and empowering women with the information on nutrition and Healthy Food Practices not only provides an opportunity to understand the importance of it but also help them to share their gained knowledge with their family members and kids too.

Conclusion - Educational and awareness programmes should be organized to bring awareness about healthy lifestyle. It should be informative as well as easy to implement in day to day life.

Suggestion - Studies like this can be taken up on a larger scale to develop and popularize effective nutrition education tools.

References:-

1. Aravjo R.B.,I dos Santos, 1999 “Assessment of diabetic patient management at primary health care level”. Rev. Saude. Pulica, 33:24-32.
2. Badruddin, Basit A, M.ZafarIqbalHydrie, 2002 “Knowledge, Attitude and Practices of Patients visiting a Diabetes Care Unit” Pakistan Journal of Nutrition1 (2):99-102
3. GuptaNeetu, KocharKaur Gurusharan.2009. Dietary and Socio-EconomicFactors Associated With Obesity In North Indian Population. The Internet Journal of Health. Volume 9 Number 1
4. Joanna Sadowska, Magdalena Radziszewska, Agnieszka Krzymuska.2010. Evaluation Of Nutrition MannerAnd Nutritional StatusOf Pre-School Children. *Acta Sci. Pol., Technol. Aliment.* 9(1) 105-115.
5. Leupker RV, Petry CL, Mc kinlay SM, Nader PR, Parcel GS, Stone EJ(1996).Outcomes of a field trial to improve children's dietary patterns and physical activity. JAMA 275,768-776.
6. KaurNavjot and Sangha.J.K.2006.Assessment of Dietary Intake by Food Frequency Questionnaire in at Risk Coronary Heart Patients*. J. Hum. Ecol.* 19(2): 125-130.
7. Silman Alan, Elena Loysen, Graaf.D. Waiter,Sramek Michael.1985. High dietary fat intake and cigarette smoking as risk factors for ischaemic heart disease in Bangladeshi male immigrants in East London.*Journal of Epidemiology and Community Health*. 39, 301-303.
8. Theron.Oldwage, Egal.A.A.2010. Nutrition knowledge and nutritionalstatus ofprimary school children in QwaQwa.*S Afr J ClinNutr* .23(3):149-154.
9. Trans A.S,L.S.Yong, S.Wan,M.L.Wong 2007 “Patient education in the management of Diabetes Mellitus”. Singapore Med.J,38:156-60.

Chart Number 1 - Pre Knowledge of Women about Healthy Food Practices (number of subjects=200)

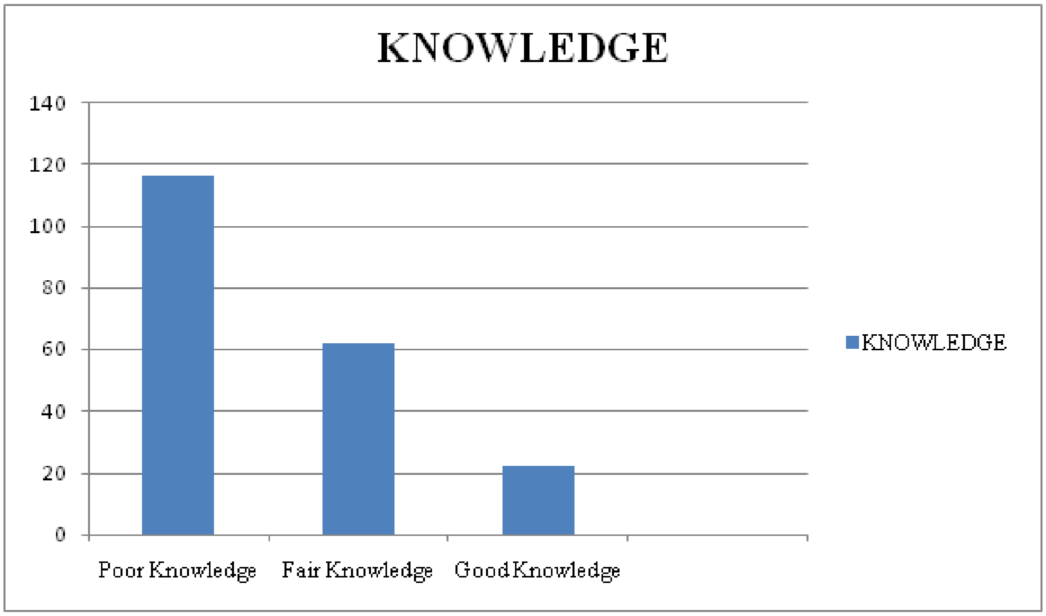

Figure number 1- Experimental Plan

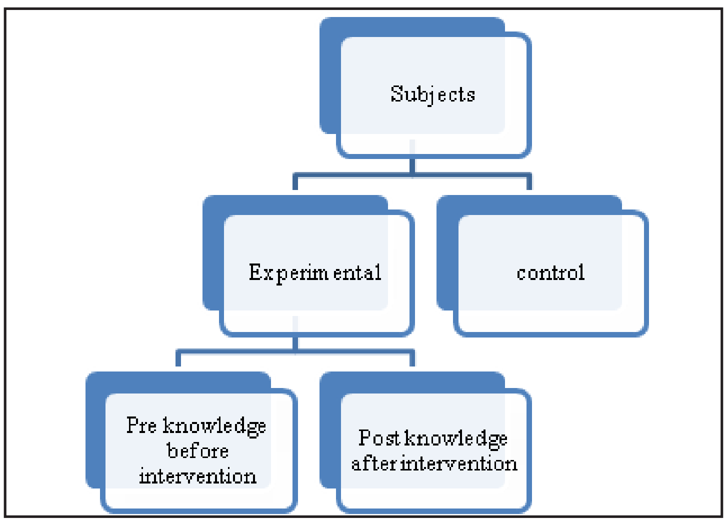

Chart number 2 - Breakfast eating habit (n=200)

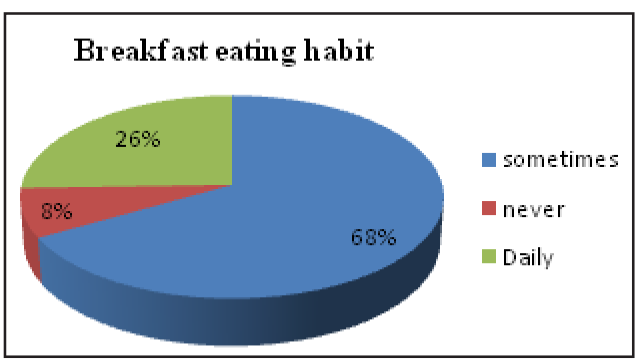

Chart number 3 - Green leafy vegetables consumption

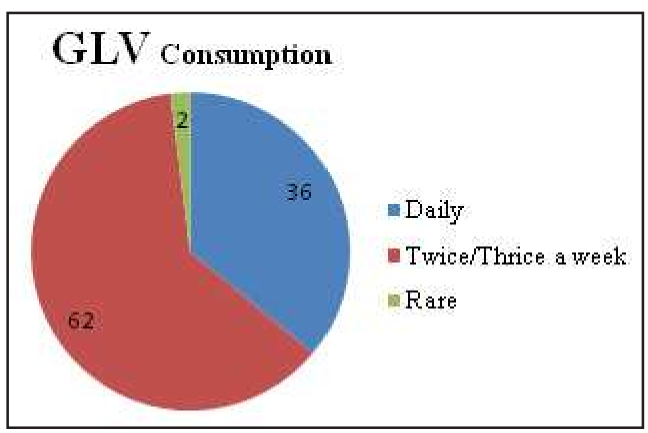

Indigenous Dietary Practices Of Bhariya Tribes Of Patalkot Valley, Tamia Block, Chhindwara District, Madhya Pradesh

Kavita Juneja * Dr. Meera Vaidya ** Dr. Nandita Sarkar ***

Abstract - Bharias tribes meal primarily consisted of cereals, with maize being the major cereals consumed. Intake of pulses was negligible. Pulses like tuar dal and legume like kidney bean, black gram were consumed if grown in favorable conditions. Consumption of Tuar dal was in the form of pods. Green leafy vegetables such as 'Palak', 'Methi', 'Choulai', were eaten seasonally.. Consumption of milk and milk product was almost negligible in the valley Consumption of non-vegetarian food was confined to only ceremonial and festival days. Mahua flowers formed an important item of their diet. These flowers were eaten after boiling or sometimes they were boiled with kutki also. Drinking of indigenous liquor, 'gapai', was found to be a popular practice among Bhariyas. Avoidance of certain food during pregnancy and lactation was also found to be prevalent in the valley.

Introduction - India is a home to almost more than half of the world's tribal population. Over 84 million people belonging to 698 communities are identified as members of scheduled tribes (India Ministry of Tribal Affairs 2004), constituting 8.2% of the total Indian population (census 2001) and is larger than that of any other country in the world. The concentration of scheduled tribes varies substantially between the Indian states. (census 2001) There are 635 tribes in India located in five major tribal belts across the country (Integrated Disease Survillance Project 2003) The main concentration of tribal people is the central tribal belt in the middle part of the India and in the north-eastern States.

Bharia is one of the main tribe residing in this zone. A small section of this community lives in an area known as Patalkot valley. Patalkot is a bow shaped formation on the Satpura plateau and area consists of ridges and valleys. The approach into the area is very difficult being a deep depression in hilly region.

Tribes are not only particular regarding their beliefs, practices, social organization but are more particular regarding their food system. Indigenous diet is an important component of indigenous knowledge system, which is widely practiced by tribal communities across India. Thus the present study was planned to know the indigenous dietary practices of Bhariyas.

Methods and materials - The cross sectional was carried out for a period of 1 year in 6 villages of Patalkot valley of Tamia block of Chhindwara district of Madhya Pradesh. Lottery method was used for the selection of villages. Information in depth on their indigenous dietary practices such as type of foods included in routine diet, special occasions such as marriage, festivals, pregnancy, lactation, weaning was taken and in addition the informations regarding food, fads and fallacies and management of food at the time of crises were also taken. Clarifications regarding questions were made whenever required. The cooking methods were also observed. In addition to the families the key people of the villages such as ICDS workers, school teachers, sarpanch, were also contacted and interviewed to gather supportive informations. The observations made are discussed under the following heads -

DietaryPractices - It was observed that food was eaten twice daily, on around 11-12 a.m. and another in the evening before it gets dark and the diets of Bharias of all the villages primarily consisted of cereals and millets. Among cereals, their diet was confined to Maize. Maize and other cereals were eaten either as Chapatti, Gruel or cereal porridge, locally called 'pej. Pej was usually taken in the morning after meals before leaving home for economic activities. It was found that chapattis were eaten during day time where as in the evening; they only consumed gruel, rice or porridge of kutki. It was further observed that the size of chapatti was very big. A cooked chapatti weighs almost 120 grams and each adult member was consuming three chapatti a day with curry or dal.

Among the various food items consumed by the Bhariyas only few items like 'Pej' remained constant in the diet throughout the year where as the consumption of other items were seasonal and occasional. Singh and Palta (2004) also reported in a study that Abujhmaria tribes morning meal

*Research Scholar, Rani Durgawati University, Jabalpur (M.P.) INDIA
**Professor & Head, Department of Food and Nutrition Deptt., Govt M.H. College of Science and Home Science, Jabalpur (M.P.) (M.P.) INDIA
***Professor, Govt M.H. College of Science and Home Science, Jabalpur (M.P.) INDIA

consisted of 'Pej' and left over rice of previous night.

Intake of pulses was negligible. It was found that pulses like tuar dal and legume like kidney bean, black gram were consumed if grown in favorable conditions. Consumption ofTuar dal was in the form of pods. Pods were grinded on the stone grinder and the paste was than cooked and eaten. Pods of tuar dal were also eaten after boiling.

Green leafy vegetables such as 'Palak', 'Methi', 'Choulai', were eaten seasonally. Vegetables were locally grown and were not purchased from the market. Drum sticks leaves were eaten as chutney. Pakodas of Munga leaves were also prepared and eaten occasionally. Vegetables were eaten in the form of curries. Kundru curry was eaten with Maize and Wheat chapattis. Small tomatoes chutney was also prepared and eaten. Mushrooms known as 'Bhamori'is eaten after frying wih spices and oil. Edible tubers occupy a very important place in their diet. It was found that roots and tubers were a good source of carbohydrate in the diet.

Fruits trees like jamun, mango, papaya, custard apple, ram phal, tamrind, Indian plum, amla, papaya, jamun and guava grown in their vicinity. Gathering of wild fruits and vegetables was also found.

In the social life and economy of Bhariya tribes Mahua plays an important role. One of the important item of this tribe diet was found to be Mahua. Mahua flowers were also fried in ghee and were eaten if ghee was available. Mahua laddus were also made by Bhariyas at times with jaggery after processing the flowers.Food prepration was mainly limited to boiling and roasting. Consumption of milk and milk product was almost negligible in the valley. Hardly any respondent of these villages were consuming milk. To the extent, milk was not given to infants and small children.

This shows that the consumption of milk was almost absent from their routine diet. Agrahar and pal (2005) stated that the consumption of dairy products among the khasi tribes of Meghalaya was also nonexistent. Similar eating practices were observed on Oraon tribe of West Bengal by Mittal and Srivastava (2006) on different tribes of M.P. under ITDP by NNMB (National Institute of Nutrition, 2000). Sugar was consumed only in the form of tea if available no other purchased sweets or home made sweets were consumed by them.

Bhariyas were purching salt, spices such as turmeric, chilli powder, coriander powder from the weekly market at chhindi. Consumption of iodised salt was seen in the valley which was known as 'society ka namak' to them.

Food on different occasion - Consumption of nonvegtarian food was preferred with liquor on every occassion. The main festivals of Bhariyas were Diwali, Madai, Badga and Pola. It was also found that prepration of food such as 'puri', 'bada', 'kadi'(made with only gram flour paste without curd), was done on Diwali and non veg on 'Badga' which was celebrated in the month of july. Urad dal was considered to be a high value food and its oil fried cakes (bada) are prepared on festivals and for offering to guests. In the occasion of marriage preparation of kutki bhaat or kanki bhaat with gram flour paste and brinjal curry was done.

Food During pregnancy & lactation - Consumption of any special food was not observed in the valley during pregnancy. Women were consuming normal routine diets. Soon after delivery, women were preferably given kutki gruel and it was continued for 2-3 months women were not given any kind of chapatti for 2-3 months because of the belief that consumption of chapatti may affect stomach of the infant. It was further observed that lactating women were taking 'jaggery laddu' prepared at home after purchasing it's ingredients from the weekly market known as 'sauda'. The concept of hot and cold foods was deep-rooted among them. Strict avoidance of cold foods such as guava, custard apple, banana after delivery was seen where as gur, kutki, mahua, tuar dal were given after delivery as were considered to be hot. Similar findings were reported by Qamar *et al* 2006 in their study on Bhils that most of the foods were banned to eat either being hot or cold. They preferred to eat 'gur', 'coconut' and 'desi ghee' after delivery and consumed lot of buttermilk if available to enhance flow of breast milk. Bhil women did not consume any special diet during pregnancy.

Weaning practices - It was found that Bhariyas tribes were not giving any special weaning food to their children whatever was in their routine diet was being provided to wean the child. The average weaning age among selected Bharia tribes was between 9 to 16 months. The common weaning foods were 'Maize pej', 'Kutki Gruel' 'Boiled Agitha'. The take home ration given at ICDS centers were observed not to be given to the child and were consumed by the entire family. The mothers further reported that if milk was available they prefer to give chapatti soaked in milk as they were aware of the fact that it was nutritious for the child.

Food during crisis - At the time of crisis tribes were depending upon wild leaves, fruits and seeds of various plants which can be eaten either raw or cooked. They also prepare chapatti from mango seed flour. Collection of seeds was done from the forest and were preserved for the crisis period. The process of making chapatti from mango seed flour was a bit difficult. Dried mango seeds were taken near stream there these seeds were kept with continous supply of water for three four days. The wet seeds were than grinded and the paste was converted in the form of chapatti with the help of hands and this chapatti was cooked and eaten.

Food preservation practices - Drying is the most effective way of preservation practiced by the Bhariya. Preservation of grains was done in home made bamboo baskets coated with cow dung called 'Bhakra'. Size of these baskets may vary depending on the food available. The coated containers were left in the sun for drying. Seeds were kept in the baskets for preserving them from insects and pests. Bhariyas were also preserving 'tomatoes' and 'kaccharia' by drying. Similar findings were also reaveled by Nandi and bhattecharjee (2001) in their study on Bhils. Bhils preserve Karsani niger seeds in bamboo baskets which are coated

with cow dung manure.

Alcoholic Practices - Mahua plays an important role in the social life and economy of tribals in Madhya Pradesh. Drinking of indigenous liquor, 'gapai', was a popular practice among Bhariyas. Men were found to be habitual drinker and consumed almost daily while its consumption by women was limited to occasions, during festivals and ceremonial days. The prepration of liquor was locally by mahua flowers on an improvised distillery. It has high ritual sanctity and was important for all festivals specially Holi, Diwali, Badga, Madai and Pola. Singh and Palta (2004) also reported in their study on Abujmaria tribes that they consume mahua spirit *salphi chindrus* which was a fermented juice of sago palm and wild date palm.They also consume landa (rice beer) made by boiling equal proportion of rice or kutki and madia (ragi). Singh *et al* (2007) stated that Monopa tribes prepare a range of alcoholic beverages from finger millet, maize, barley and rice.

References :-

1. Census of India, 2001
2. Census of India-2001, Population Profiles (India, States and Union Territories): Total Population and Scheduled Castes and Scheduled Tribes Population, Government of India.
3. Integrated Disease Surveillance Project 2003: Tribal Development Plan
4. Rekha Singh and Aruna Palta. 2004. Foods and beverages consume by Abujhmarias – A primitive tribe of Bastar in Chhatisgarh. Tribal Health Bulletin; 10(1 &2) Jan. & July 2004.
5. Singh, R. K., Anamika Singh, Surej, A. K. 2007. Traditional foods of Monopa tribe of West Kameng, Arunachal Pradesh. Ind. J. of Trad. Know. 6(1):25-27
6. Dakshyani, B. and Gangadhar, M. R. 2008. Breast feeding practices among the Hakkipikkis: A tribal population of Mysore district, Karnataka. Ethno-med. 2(2):127-129.
7. Mittal, P. C. and S. Srivastava. 2006. Diet, nutritional status and food related traditions of Oraon tribes of New Mal (West Bengal), India. The International Electronic J. Rural and Remote Health Research, Education, Practice and Policy, 6: 385.
8. National Nutrition Monitoring Bureau: Diet and Nutritonal Status of Tribal Population. NNMB Tech Report No. 19, National Institute of Nutrition, Hyderabad (2000).
9. Dipika Agrahar and Pal. 2005. Dietary pattern and food consumption pattern of the tribals of Meghalaya and its relation with socio economic factors. Indian Journal of Nutrition and Dietetics. 42:71-80
10. Food consumption pattern and Associated habits of the Bhil tribe of Dhar district of Madhya Pradesh. www. rmrct,org/file-rmrc-web/centers/NSTH06-27.SR.Qamara .Pdf.
11. www.researchgate.net/publication/264851346_ Infant_ Feeding...
12. Infant Feeding Practices of Paroja: A Tribal Community of Orissa on Research Gate. (2012) Page 2
13. Indigenous foods and nutrition security in india: A case study nutritionfoundationofindia.res.in/FetchSchriptpdf/ .../Nandi%20B.pd

****

मध्यान्ह भोजन योजना के अंतर्गत विद्यालयों में विद्यार्थियों की उपस्थिति पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन (रीवा जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. शुचिता तिवारी * रैना सिंह **

शोध सारांश – मनुष्य के सर्वांगीण विकास के लिये शिक्षा अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि शिक्षा ही राष्ट्र के सुनहरे एवं सुरक्षित भविष्य को सुनिश्चित करती है। एक सम्पन्न एवं संगठित राष्ट्र की नींव मजबूत होनी चाहिए, जिसमें बच्चे मुख्य इकाई के रूप में आधार निर्मित करते हैं, अत: उनका सुशिक्षित होना अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाता है। इस हेतु प्राथमिक शिक्षा को बढ़ावा देने के उद्देश्य से शासकीय विद्यालयों में 'मध्यान्ह भोजन योजना' को शासन द्धारा माध्यम बनाया गया है जिससे विद्यार्थियों के नामांकन व उपस्थिति की दर में बढ़ोत्तरी आयी है। प्रस्तुत शोध में रीवा जिले में 'मध्यान्ह भोजन योजना' के कारण, विद्यालय में विद्यार्थियों की उपस्थिति में पड़ने वाले प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन सर्वेक्षित विद्यालयों में उपलब्ध अभिलेखों के आधार पर वर्ष 2012-13 एवं 2013-14 के संदर्भ में किया गया है। प्राप्त परिणामों से स्पष्ट है कि, प्राथमिक व माध्यमिक स्तर के सर्वेक्षित विद्यालयों में वर्ष 2012-13 एवं 2013-14 में दर्ज छात्रों की औसत उपस्थिति में वृद्धि तो अवश्य पायी गई है, परन्तु दोनों ही वर्षो की औसत उपस्थिति का प्रतिशत अत्यन्त न्यून श्रेणी का पाया गया, जिसे उल्लेखनीय वृद्धि नहीं माना जा सकता है। इसका मुख्य कारण योजना के क्रियान्वयन में पाये गये कई कमजोर पक्ष है, जो योजना के वास्तविक उद्देश्यों को प्रभावित कर रहे है जिनमें सुधार की महती आवश्यकता है।

प्रस्तावना – 'मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम' बच्चों का अधिक से अधिक विद्यालयों में नामांकन एवं सीखने की प्रक्रिया को प्रोत्साहित करने वाला देश का सबसे बड़ा School Feeding Programme है। यह बच्चों की विद्यालयों में उपस्थिति एवं ठहराव को सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। मध्यप्रदेश में The National Programmer For Nutritional Support to Primary Education (NPNSPE) के अंतर्गत 15 अगस्त 1995 से प्राथमिक शालाओ में 'मध्यान्ह भोजन योजना' प्रारम्भ की गई थी, तथा 01 अक्टूवर 2007 से प्रदेश की शासकीय माध्यमिक शालाओं में भी कार्यक्रम का क्रियान्वयन प्रारम्भ किया गया। योजना के माध्यम से विद्यालयों में विद्यार्थियों के नामांकन व उपस्थिति में बढ़ोत्तरी एवं अन्य सकरात्मक परिणाम प्राप्त हुए हैं। मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम के अंतर्गत देश के 12,66,000 शासकीय विद्यालयों में लगभग 12 करोड़ विद्यार्थियों को गर्म पका हुआ भोजन उपलब्ध कराया जाता है।

विगत कुछ दशकों में 'मध्यान्य भोजन योजना' के संदर्भ में कई शोध अध्ययन किये गये है जो शासकीय विद्यालयों में योजना के कारण दर्ज विद्यार्थियों की उपस्थिति के प्रतिशत में आने वाले परिवर्तनों को स्पष्ट करते हैं, जिनका उल्लेख शोध अध्ययन के अंतर्गत किया जाना आवश्यक है –

Ahmad (2004) द्धारा बांग्लादेश में भुखमरी से ग्रसित क्षेत्र के विद्यालयों में चलाये जा रहे School Feeding Programme का अध्ययन किया और पाया कि इस कार्यक्रम की वजह से विद्यालयों में विद्यार्थियों के नामांकन में 14.2 % की बढ़ोत्तरी देखी गई, इसके अतिरिक्त छात्रों की उपस्थिति में भी 1.3 दिवस प्रतिमाह का सुधार देखा गया।

Prof. Beena mathur, et al (2005) University of Rajasthan & UNICEF) के द्धारा राजस्थान में 'मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम' की स्थिति का विश्लेषण किया गया, जिसमें 75-85 % शिक्षकों का मत था कि 'मध्यान्ह भोजन योजना' के कारण दर्ज छात्र संख्या एवं उपस्थिति में बढ़ोत्तरी हुई है, इसके कारण जातिगत भेदभाव में कमी एवं सामाजिक समरूपता को बढ़ावा मिला है।

Farzan Afrid; (EPW) (2005) के द्धारा दो राज्यों क्रमश: कर्नाटक एवं मध्यप्रदेश के तुलनात्मक अध्ययन के अनुसार मध्यप्रदेश के संदर्भ में योजना के क्रियान्वयन में सुधार आया है। 80 % अभिभावकों ने बताया ' रूचिकर भोजन' ज्यादा प्रभावशाली एवं पौष्टिक है क्योंकि यह मध्यान्ह भोजन के प्राथमिक स्वरूप (मात्र दलिया वितरण) की तुलना में ज्यादा ऊर्जा प्रदान करता है। कर्नाटक के परिपेक्ष्य में **'अक्षर दसोहा'** के नाम से चलाया जा रहा भोजन कार्यक्रम ज्यादा बेहतर नियोजित एवं प्रबंधित पाया गया। ग्रामीण क्षेत्रों में दर्ज छात्र संख्या एवं उपस्थिति में **'अक्षर दसोहा'** के कारण बढ़ोत्तरी पायी गयी। अध्ययनकर्ता दल के सदस्यों ने समाज के आर्थिक, सामाजिक पक्ष से कमजोर वर्ग की बालिकाओं के नामांकन व उपस्थिति में विशेष बढ़ोत्तरी देखी। अत: उनके द्धारा यह माना गया कि 'मध्यान्ह भोजन योजना' विद्यालयों में दर्ज छात्र संख्या व उपस्थिति बढ़ाने तथा भारतीय समाज में व्याप्त लिंग भेद की समस्या को कम करने में प्रभावी भूमिका निभा रही है।

Khera (2006) - द्धारा सुप्रीम कोर्ट के निर्देशानुसार 'मध्यान्ह भोजन योजना' का विभिन्न राज्यों में मूल्यांकन के निर्देशों के अनुपालन में राजस्थान राज्य के 'बाड़मेर' जिले के 63 विद्यालयों में किये गये, अध्ययन में पाया गया कि, प्राथमिक स्तर पर बालिकाओं के नामांकन व उपस्थिति में सितम्बर 2002 में 2001 की अपेक्षा 36 % की वृद्धि देखी गई, इसी प्रकार 'सीकर' जिले मे 26 ग्रामों में किये गये अध्ययन में विद्यालयों में छात्र-छात्राओं के

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (गृह विज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय,सतना (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

नामांकन व उपस्थिति में भी बढ़ोत्तरी पायी गई। कुछ ऐसे विद्यालय जो कि आर्थिक रूप से कमजोर क्षेत्र में थे, वहाँ 'मध्यान्ह भोजन योजना' के प्रारम्भ होने से विद्यालयों में नामांकन व उपस्थिति की दर दोगुनी देखी गई।

AC Nielson (2007) – द्वारा राजस्थान के तीन क्षेत्रों का अध्ययनकिया गया, जहाँ **अक्षय पात्र** स्वयं सेवी संस्था के माध्यम से विद्यालयों में 'मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम' चलाया जा रहा है। कार्यक्रम का विद्यार्थियों के नामांकन व उपस्थिति दर पर पड़ने वाले प्रभाव की जानकारी के लिए किये गये अध्ययन में पाया गया कि कार्यक्रम का सभी छात्र-छात्राओं की उपस्थिति पर सकरात्मक प्रभाव है। शिक्षकों एवं अभिभावकों ने माना कि इस कार्यक्रम के कारण ज्यादा से ज्यादा छात्रों ने विद्यालय जाना प्रारंभ किया है। **'बरा'** क्षेत्र में 'मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम' के कारण अत्यधिक सुधार देखा गया। यहाँ **'अक्षय पात्र'** द्वारा चलाये जाने वाले भोजन वितरण कार्यक्रम के पूर्व विद्यार्थियों की औसत उपस्थिति 81% थी, जो बढ़कर तीन माहों में 90.90% हो गई। बालक-बालिकाओं दोनों की उपस्थिति में बढ़ोत्तरी देखी गई, परन्तु बालिकाओं की उपस्थिति का प्रतिशत बालकों की उपस्थिति के प्रतिशत से थोड़ा अधिक पाया गया।

शोध उद्देश्य (Objective of Research Work) – 'मध्यान्ह भोजन योजना' के कारण शासकीय विद्यालयों में विद्यार्थियों की उपस्थिति पर पड़ने वाले प्रभाव की जानकारी प्राप्त करना।

शोध परिकल्पना (Hypothisis of Research Work) – 'मध्यान्ह भोजन योजना' के कारण शासकीय विद्यालयों में विद्यार्थियों की उपस्थिति बढ़ी है।

शोध प्रविधि (Methodology) – प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोध विषय 'मध्यान्ह भोजन योजना' के अंतर्गत विद्यालयों में विद्यार्थियों की उपस्थिति में पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन' (रीवा जिले के विशेष संदर्भ में) का चयन किया गया है। अध्ययनक्षेत्र के अत्यधिक फैलाव व आवागमन के साधनों की सहज सुलभता के अभाव में विषय वस्तु से संबधित जानकारी की प्राप्ति में उत्पन्न कठिनाईयों तथा अत्यधिक समय व धन के व्यय की असुविधा से बचने के लिये सीमाओं का निर्धारण किया जाकर ही शोध अध्ययन किया गया है। रीवा जिले की कुल 09 जनपद पंचायतों में से अध्ययनहेतु 03 **जनपद पंचायतों –** क्रमश: रीवा, गंगेव, एवं मउगंज का चयन दैव निदर्शन (Random Sampling) पद्धति से किया गया है। साथ ही नगरीय क्षेत्र को प्रतिनिधित्व देने के लिये उद्देश्य पूर्ण निदर्शन (Object Sampling) का प्रयोग करते हुए 'रीवा नगर निगम' क्षेत्र का चयन किया गया है। चयन किये गये सभी 03 जनपदों व नगर निगम रीवा के कुल प्राथमिक व माध्यमिक विद्यालयों के 3% विद्यालय ही लिये गये है, जिसमें से प्रत्येक प्राथमिक स्तर के विद्यालयों से 08 विद्यार्थियों व प्रत्येक माध्यमिक स्तर के विद्यालयों से 10 विद्यार्थियों को लिया गया है। इस प्रकार प्राथमिक स्तर के कुल 304 व माध्यमिक स्तर के 140 विद्यार्थियों को मिलाकर समग्र 444 विद्यार्थियों का चयन किया जाकर शोधकार्य किया गया है। चयनित विद्यार्थियों की उम्र 6-14 वर्ष के मध्य है, क्योंकि 6-14 वर्ष के विद्यार्थी ही 'मध्यान्ह भोजन योजना' के मुख्य लाभार्थी हैं। प्रस्तुत शोध के निष्कर्ष प्राप्ति के लिये प्रत्येक सर्वेक्षित विद्यालय से निम्नतम 01 एवं अधिकतम 02 शिक्षकों (कुल 57) तथा मौके पर सरलता से उपलब्ध अभिभावकों (कुल 379) एवं आम नागरिकों /जनप्रतिनिधियों (कुल 123) से प्राप्त जानकारी व अभिमत को अध्ययन का आधार बनाया गया है।

प्रस्तुत समस्या से संबधित प्राथमिक ऑकड़ों के संकलन के लिये विद्यार्थियों, शिक्षकों, अभिभावकों एवं आमनागरिकों /जनप्रतिनिधियों के लिये पृथक-पृथक तैयार अनुसूची के माध्यम से 'मध्यान्ह भोजन योजना' के कारण शासकीय विद्यालयों में विद्यार्थियों की उपस्थिति में पड़ने वाले प्रभाव की जानकारी प्राप्त की गई है। इस संबंध में द्वितीयक ऑंकड़ों (Secondary Data) का संकलन सर्वेक्षित शासकीय प्राथमिक/माध्यमिक विद्यालयों के विद्यालयीन अभिलेखों व शासकीय कार्यालय, समाचार पत्रों, इंटरनेट एवं **विभिन्न शोध –** निष्कर्षो के माध्यम से किया गया है। सर्वेक्षण के माध्यम से प्राप्त जानकारी का आंकड़ों के रूप में संकलन व सारणीयन तथा सांख्यिकीय विश्लेषण एवं विवेचन किया गया है।

परिणाम एवं विवेचना (Result and Discussion) - प्रस्तुत शोध में चयनित जनपदों एवं नगरीय निकाय में सर्वेक्षित विद्यालयों की दर्ज छात्रों की औसत उपस्थिति में आये परिवर्तन का तुलनात्मक अध्ययनवर्ष 2012-13 एवं 2013-14 के संदर्भ में किया गया एवं प्राप्त आंकड़ों को **डायग्राम क्र0-1** एवं **सारणी क्र0- 1** में निम्नानुसार दर्शाया गया है- **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

प्रस्तुत शोध अध्ययनके माध्यम से सर्वेक्षित विद्यालयों के अभिलेखों के आधार पर वर्ष 2012-13 एवं 2013-14 के उपस्थिति के आंकड़ों के तुलनात्मक विश्लेषण से ज्ञात होता है कि, प्राथमिक स्तर के सर्वेक्षित विद्यालयों में वर्ष 2012-13 में औसत उपस्थिति का प्रतिशत 69.43 % था, जबकि वर्ष 2013-14 में औसत उपस्थिति 71.96 % पायी गयी। इससे यह स्पष्ट है कि, उपरोक्त दोनों वर्षो की औसत उपस्थिति में 2.53% की वृद्धि का अन्तर पाया गया।

माध्यमिक स्तर के सर्वेक्षित विद्यालयों में वर्ष 2012-13 व 2013-14 के औसत उपस्थिति के प्राप्त आंकड़ों के तुलनात्मक विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि वर्ष 2012-13 में औसत उपस्थिति 69.34 % थी एवं वर्ष 2013-14 में औसत उपस्थिति 70.67% पायी गयी। दोनों वर्षो की औसत उपस्थिति में मात्र 1.33 % की वृद्धि पायी गई।

उपरोक्तानुसार **सारणी क्र.-01** में सर्वेक्षित प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर के विद्यालयों में वर्ष 2012-2013 एवं 2013-14 में औसत उपस्थिति में वृद्धि देखी गई। इस प्रकार प्रस्तुत शोध अध्ययन की परिकल्पना मध्यान्ह भोजन योजना के कारण विद्यालयों में विद्यार्थियों की औसत उपस्थिति में वृद्धि पायी गई का सत्यापन तो अवश्य पाया गया, परन्तु दोनों ही स्तरों के विद्यालयों में उक्त दो वर्षो में आने वाली वृद्धि का प्रतिशत क्रमश: प्राथमिक स्तर में 2.53% व माध्यमिक स्तर में 1.33% पाया गया, जिसे उल्लेखनीय वृद्धि की श्रेणी में नहीं माना जा सकता है। शोध अध्ययनअंतर्गत एक अन्य तथ्य ज्ञात हुआ है कि वर्ष 2012-13 एवं 2013-14 के परिप्रेक्ष्य में प्राथमिक स्तर के विद्यालयों में औसत उपस्थिति का प्रतिशत; 2.53 % माध्यमिक स्तर के विद्यालयों की औसत उपस्थिति; 1.33% के प्रतिशत की तुलना में अधिक पाया गया।

वर्ष 2012-13 व 2013-14 के प्राथमिक स्तर की अपेक्षा, माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की औसत उपस्थिति व विद्यालयों में ठहराव की कमी का मुख्य कारण है। BPL परिवार की श्रेणी में अति गरीबी का जीवन यापन करने वाले परिवारों के विद्यार्थियों को शासकीय विद्यालय में नामांकन कराये जाने पर भोजन की व्यवस्था के साथ-साथ शिक्षा व गणवेश के रूप में वस्त्रों व पाठ्यपुस्तकों तथा साइकलों की नि:शुल्क व्यवस्था हो जाती है, यह सुविधा विद्यालय में नामांकन लेने वाले विद्यार्थियों को प्राप्त होती है। परिवार के अन्य सदस्यों को अपने जीवकोपार्जन के लिए कुछ अन्य कार्य

करने पड़ते हैं, इसलिए 11 से 14 वर्ष के माध्यमिक स्तर के बच्चे परिवार के अन्य सदस्यों के साथ जीवकोपार्जन के कार्यो में संलग्न हो जाते हैं, जिसके कारण विद्यालयों में उनकी उपस्थिति घटती है, जबकि प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों की आयु कम होने के कारण अपने अभिभावकों की जीविकोपार्जन में सहायता करने में सक्षम नहीं होते। अत: इस कारण ज्यादातर विद्यालयों में प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियो की उपस्थिति निरन्तर रहती हैं, जो प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों की औसत उपस्थिति की वृद्धि के प्रतिशत की अपेक्षा माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की औसत उपस्थिति में अधिक वृद्धि के प्रतिशत का व्यावहारिक कारण है।

सारणी क्र0-1 में दर्शायी गई जानकारी से यह स्पष्ट है कि OBC व GEN वर्ग की तुलना में SC व ST वर्ग के BPL श्रेणी से संबंधित विद्यार्थियों के नामांकन व उपस्थिति के प्रतिशत में वृद्धि प्रत्येक संदर्भित वर्ष में अधिक देखी गई है जिसका प्रमुख कारण 'मध्यान्ह भोजन योजना' के माध्यम से प्रदाय किए जाने वाले भोजन के साथ-साथ शासन द्वारा नि:शुल्क उपलब्ध कराई जाने वाली अन्य आधारभूत आवश्यकताओं (नि:शुल्क गणवेश, पुस्तकें, साइकिले एवं छात्रवृत्ति के रूप में दी जाने वाली नगद राशि) की पूर्ति का होना है।

शासकीय विद्यालयों में प्रदाय किये जाने वाले भोजन के वितरण में साफ-सफाई की अत्यन्त कमी एवं नियमित गुणवत्ता व निर्धारित मीनू का पालन न किया जाना भी विद्यार्थियों की उपस्थिति में आने वाली कमीं का महत्वपूर्ण कारण है। ज्यादातर नामांकित विद्यार्थियों के वर्गवार विश्लेषण से ज्ञात होता है कि बी.पी.एल. परिवारों के अंतर्गत आने वाले अत्यन्त गरीब परिवारों के विद्यार्थी ही 'मध्यान्ह भोजन योजना' के मुख्य उपभोक्ता के रूप में पाये गये है, व ऐसे परिवार जो अपनी वार्षिक आय में बचत कर पाने की स्थिति में है तथा उनके द्वारा अपने बच्चों का नामांकन शासकीय विद्यालय की अपेक्षा अशासकीय विद्यालय में कराया जाना उचित समझा जाता है, जो शासकीय विद्यालयों में विद्यार्थियों की उपस्थिति के प्रतिशत को कम करता है।

निष्कर्ष एवं सुझाव (Conclusion & Recommendation) - शोध अध्ययन द्वारा प्राप्त परिणामों के गहन विश्लेषण द्वारा निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि 'मध्यान्ह भोजन योजना' के अंतर्गत विद्यालयों में विद्यार्थियों की उपस्थिति में वर्ष 2012-13 की अपेक्षा वर्ष 2013-14 में प्राथमिक व माध्यमिक स्तर में अत्यन्त न्यून वृद्धि पाई गई। शासन द्वारा शिक्षा के लोक व्यापीकरण व विद्यार्थियों के स्वास्थ्य एवं पोषण स्तर में सुधार के लिये किये जा रहे सतत प्रयासों के बाद भी शोध अध्ययन के माध्यम से प्राप्त परिणाम चिंतनीय है, जिसके लिये नवीन दृष्टिकोण के साथ निष्ठापूर्ण पुनर्मूल्यांकन किये जाने की आवश्यकता है।

सुसंगठित एवं शिक्षित राष्ट्र निर्माण की दिशा में '**मध्यान्ह भोजन योजना**' शासन की अत्यन्त महत्वाकांक्षी एवं कल्याणकारी योजना है, जिसके प्रति विद्यार्थियों एवं आम जनता की रूचि एवं विश्वसनीयता विकसित करने के साथ विद्यार्थियों की उपस्थिति में बढ़ोत्तरी के लिये कुछ महत्वपूर्ण सुझाव इस प्रकार है -

- मध्यान्ह भोजन के निर्धारित मीनू का प्रतिदिन नियमानुसार पालन किया जाना सुनिश्चित किया जाना चाहिए साथ ही मीनू को और आकर्षक एवं विविधता पूर्ण बनाया जाये जिसमें ज्यादातर उच्चपोषण मूल्य के क्षेत्रीय व्यजंन विद्यार्थियों की पंसद के आधार पर समावेशित किये जाने चाहिए।
- भोजन पकाने व परोसने के स्थान पर पर्याप्त साफ-सफाई का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिये।
- भोजन तैयार करने की सही विधियों का उपयोग करना एवं उसकी स्वादिष्टता तथा नियमित वितरण पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए जिससे भोजन की गुणवत्ता नियमित बनी रहेगी। इससे निश्चय ही विद्यार्थियों व उनके अभिभावकों तथा आम जनता में योजना की ओर रूझान एवं विश्वसनीयता जागृत होगी, जो शासकीय विद्यालयों में विद्यार्थियों की उपस्थिति में बढ़ोत्तरी का मुख्य कारण होगा।
- शासन द्वारा माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के लिये कौशल विकास से संबधित पाठ्यक्रम संचालित किया जाना चाहिए, जिससे उनमें कुशलता के विकास के साथ-साथ भविष्य में स्थानीय आवश्यकताओं के आधार पर रोजगार के अवसर स्व सहायता समूहों, स्वयंसेवी संस्थाओं एवं अन्य एजेन्सियों के माध्यम से उपलब्ध हो सकेगें, इससे विद्यार्थियों को आय उपार्जित करने वाली गतिविधियों (Income Genrating Activity) (जैसे-अगरबत्ती, मोमबत्ती, लकड़ी व मिट्टी के खिलौने बनाने, कुर्सिया बुनने, कागज के लिफाफे बनाने, बागवानी, सब्जी उगाने का कार्य, सिलाई-कढ़ाई के कार्य इत्यादि) से प्राप्त आय में एक निश्चित लाभांश के साथ आर्थिक रूप से जोड़ा जा सकता है। प्रशिक्षित विद्यार्थियों के माध्यम से उनके अभिभावकों को भी आय मूलक गतिविधियों से सम्बद्ध कर जीवकोंपार्जन के अवसर उपलब्ध कराये जा सकते है। इस कारण से विद्यार्थियों का विद्यालय की ओर रूझान बढ़ने के साथ-साथ उपस्थिति में बढ़ोत्तरी भी सुनिश्चित हो सकेगी।
- विद्यालयीन समय में विद्यार्थियों के लिये पृथक से एक काल-खण्ड बनाया जाकर योग, व्यायाम, चित्रकला, नैतिक शिक्षा, उद्यानिकी (बागवानी), सांस्कृतिक कार्यक्रमों के माध्यम से उनमें नवीन कलाओं एवं क्षमताओं का विकास किया जा सकता है। जिससे विद्यार्थियों में विद्यालय आने की रूचि विकसित होगी एवं उपस्थिति दर में बढ़ोत्तरी की पूर्ण संभावनाए बनेंगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography) :-

1. 2011-12 एवं 2013-14 के संबंध में सर्वेक्षित विद्यालयों द्वारा उपलब्ध कराये गये संबंधित आँकड़े।
2. Ahmad F (2004), Vitamin-A deficiency in Bangladesh: A Review & recommendations for Improvement. Public Helth Nutrition 2(1):1-14.
3. Afridi, Farzana; EPW April (2005)" Mid day meals" A comparison of the financial an Institutional organization of the programmer in two sates" cited by net.
4. Mathur, Beena et.al:(2005)" Situation analysis of mid day meal in Rajasthan" University of Rajasthan & UNICEF Cited by net. (www.unicef.org)
5. Khera R. (2006). "Mid Day Meals in Primary Schools: Achievements and challenges" Economic and Political. Weekly, Nov.18 , 2006
6. NielsonA.C.(2007) `'School feeding in Karnataka; impact on enrollment and attendance' (CARE.india/ www. akshayapatra.org./.

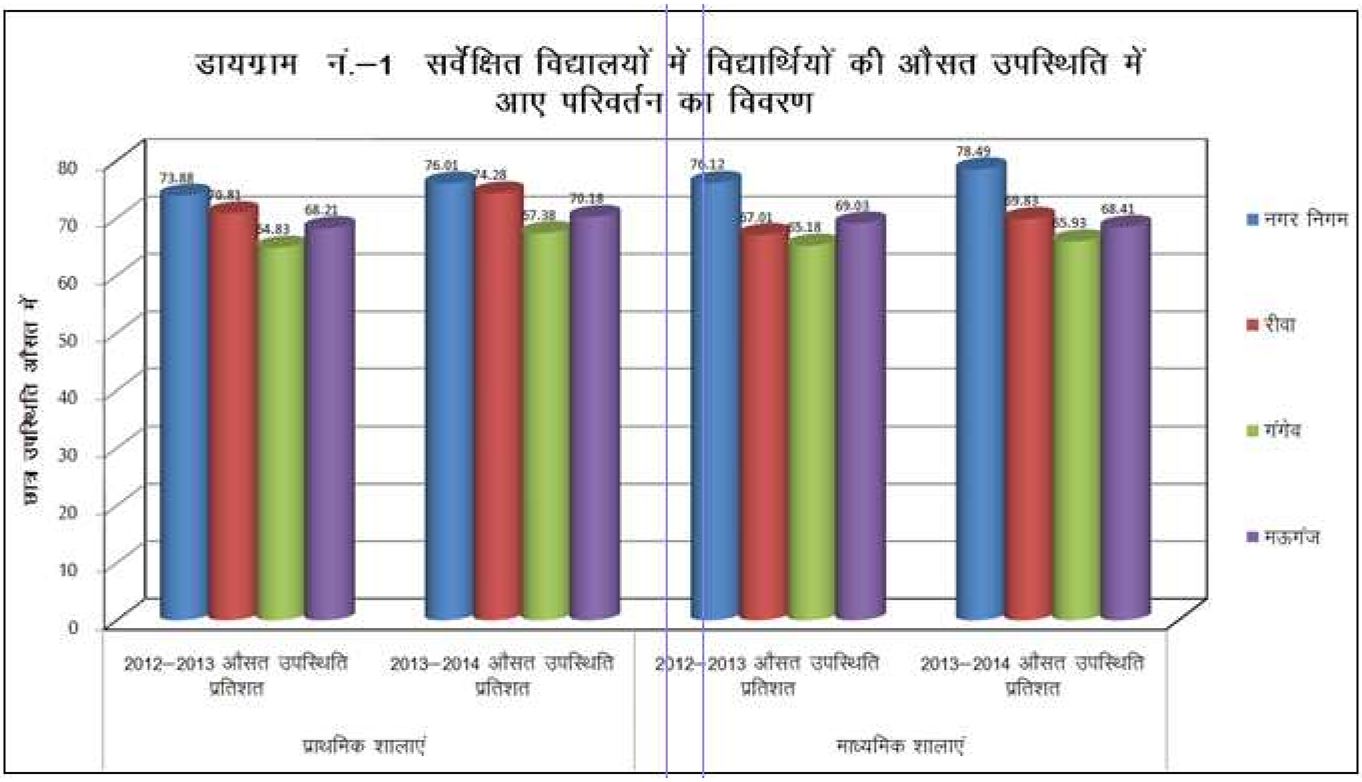

सारणी क्र.–01

सर्वेक्षित विद्यालयों में विद्यार्थियों की औसत उपस्थिति में आए परिवर्तन का विवरण

क्र	जनपद/ नगरीय निकाय	प्राथमिक शालाओं में औसत उपस्थिति (N - 38)			माध्यमिक शालाओं में औसत उपस्थिति (N- 14)		
		सर्वेक्षित शालासंख्या	2012–13 औसत उपस्थिति प्रतिशत	2013–14 औसत उपस्थिति प्रतिशत	सर्वेक्षित शालासंख्या	2012–13 औसत उपस्थिति प्रतिशत	2013–14 औसत उपस्थिति प्रतिशत
1	नगर निगम रीवा	3	73.88	76.01	2	76.12	78.49
2	रीवा	11	70.81	74.28	4	67.01	69.83
3	गंगेव	12	64.83	67.38	4	65.18	65.93
4	मऊगंज	12	68.21	70.18	4	69.03	68.41
	योग –	**38**	**69.43**	**71.96**	**14**	**69.34**	**70.67**
		p Value is 0.2429, are not significan			**p Value is 0.3429, are not significan**		

Source – विद्यालयीन अभिलेखों पर आधारित

****

इंटरनेट की लत का किशोर बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार पर प्रभाव

डॉ. आभा तिवारी * निरंजना धोटे **

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में इंटरनेट की लत का किशोर बालक-बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार पर प्रभाव का अध्ययन किया गया है। अध्ययन हेतु न्यादर्श में शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के 150-150 किशोर बालक-बालिकाओं को लिया गया। शोधकर्ता द्वारा निर्मित इंटरनेट की लत मापनी से छाटे गये अधिक एवं कम लत वाले बालक एवं बालिकाओं पर डॉ. अशोक शर्मा द्वारा निर्मित सामाजिक व्यवहार मापनी का प्रशासन कर निष्कर्ष प्राप्त किये गये, निष्कर्षों से ज्ञात होता है कि बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार पर इंटरनेट की लत का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता हैं, क्योंकि अधिक एवं कम लत वाले बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार में कोई सार्थक अंतर नहीं आया।

शब्द कुंजी – किशोरावस्था, इंटरनेट की लत, सामाजिक व्यवहार।

प्रस्तावना – किशोरावस्था, विकास की सभी अवस्थाओं में महत्वपूर्ण होती है। जीवन की सारी स्थितियाँ इसी अवस्था में बनाए गए संतुलन पर निर्भर होती है। किशोरावस्था को एक प्रकार शैशवकाल की ही पुनरावृत्ति माना जा सकता है, क्योंकि इस अवस्था में भी शैशवकाल की तरह बच्चे के व्यक्तित्व के सभी पहलुओं का अत्यधिक गति से वृद्धि और विकास होता है और किशोर भी शिशु की तरह अत्यधिक चंचल, अशांत, उत्तेजित, संवेदनशील और भावुक होता है। इस अवस्था में वृद्धि और विकास की सभी दिशाओं में किशोर तेजी से आगे बढ़ता है, जिसके परिणाम स्वरूप उसमें कई नवीन परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हें। स्टेनले हॉल के अनुसार 'किशोरावस्था को तनाव, तूफान एवं विरोध की अवस्था माना है।'

सामाजिक व्यवहार समाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा अर्जित किये जाते हैं जिसका अर्थ है, सामाजिक परम्पराओं और नैतिक मूल्यों और दूसरों के लिए धनात्मक सामाजिक अभिवृत्ति विकसित करना। जिस वातावरण में बालक का पालन-पोषण होता है, उसके फलस्वरूप वे सामाजिक अभिवृत्तियों, रीति-रिवाज, सामाजिक व्यवहार के मानक और अपने समुदाय की परम्परायें सीखते हैं। जैसे ही बालक किशोरावस्था में प्रवेश करता है, उसका सामाजिक वातावरण विस्तृत होता जाता है और बाहरी दुनिया से सामाजिक सम्पर्क तेजी से बढ़ते हैं, जिनके द्वारा उसे नये अनुभव मिलते हैं और दूसरे किशोर से मिलने के अवसर मिलते हैं जो उसके सामाजिक व्यवहार को प्रभावित करते हैं। हरलॉक के अनुसार 'सामाजिक व्यवहार का अर्थ सामाजिक संबंधों में परिपक्वता प्राप्त करना है।'

वर्तमान समय में विज्ञान की प्रगति के साथ-साथ जहाँ एक ओर सभी लोगों को सभी प्रकार की सुख-सुविधाओं में वृद्धि हुई है, वहीं दूसरी ओर विज्ञान की प्रगति के विपरीत परिणाम भी सामने आये हैं। इन परिणामों में संचार माध्यमों की प्रगति के फलस्वरूप किशोरावस्था में इंटरनेट की लत का प्रभाव स्पष्ट रूप से समझ आ रहा है। इंटरनेट की लत एक नशीली दवा के समान है। इंटरनेट के द्वारा किशोर चेट, सामाजिक नेटवर्किंग वेबसाइटों के उपयोग के माध्यम से एक दूसरे से मेल-जोल बढ़ाते हैं तथा विचारों के आदान-प्रदान का आनंद उठाते हैं।

ऐलेना (2011) ने किशोरों के बीच इंटरनेट को उपयोग का मानसिक एवं सामाजिक क्षमता पर प्रभाव को देखने के लिए अध्ययन किया। अध्ययन से जो निष्कर्ष प्राप्त हुए इनसे यह ज्ञात हुआ है कि इंटरनेट के अधिक उपयोग का प्रतिकूल प्रभाव किशोरों के मानसिक, सामाजिक व्यवहार के साथ जुड़ा हुआ पाया गया। इंटरनेट की लत से पीड़ित किशोर वास्तविक लोगों के साथ सम्पर्क व बातचीत करने में असमर्थ रहता है तथा काल्पनिक दुनिया में ही रहना पसंद करता है। चांग (2003) ने कोरिया के किशोरों पर इंटरनेट के अधिक उपयोग का मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक व्यवहार पर प्रभाव का अध्ययन किया। अध्ययन से जो निष्कर्ष प्राप्त हुए उनसे यह ज्ञात हुआ कि इंटरनेट की लत का सामाजिक व्यवहार के साथ एक मजबूत रिश्ता पाया गया एवं किशोरों में इंटरनेट के उपयोग की उच्च प्रवृत्ति पायी गई। इंटरनेट की लत का सामाजिक व्यवहार पर सार्थक प्रभाव पाया गया।

उपरोक्त पूर्व अनुसंधान के आधार पर कहा जा सकता है कि इंटरनेट की लत का किशोर बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार पर कुछ न कुछ प्रभाव पड़ रहा है। अत: किशोरों के सामाजिक व्यवहार पर इंटरनेट का विशेष प्रभाव स्पष्ट रूप से देखने हेतु यह अध्ययन किया गया। क्या इंटरनेट का प्रभाव उनके सामाजिक व्यवहार पर पड़ता है या नहीं ? यदि प्रभावित करता है तो हमें प्रयास करना होगा कि हम किशोर बालक-बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार को विकसित कर सकें, साथ ही अध्ययन के आधार पर न केवल बालक को वरन् उनके अभिभावकों को भी परामर्श दिया जा सकेगा कि इंटरनेट का सकारात्मक उपयोग किस प्रकार किया जा सकता है।

उद्देश्य –

1. इंटरनेट की लत का किशोर बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार पर प्रभाव का अध्ययन।
2. शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के किशोर बालक एवं बालिकाओं की इंटरनेट की लत का उनके सामाजिक व्यवहार पर प्रभाव का अध्ययन।

परिकल्पना –(1) इंटरनेट की लत का किशोर बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (मानव विकास) शासकीय मो.ह.गृहविज्ञान एवं विज्ञान महिला महाविद्यालय (स्वशासी), जबलपुर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, रानी दुर्गावती वि.वि. जबलपुर एवं शासकीय मो.ह.गृहविज्ञान एवं विज्ञान महिला महाविद्यालय (स्वशासी), जबलपुर (म.प्र.) भारत

(2) शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के किशोर बालक एवं बालिकाओं की इंटरनेट की लत का उनके सामाजिक व्यवहार पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

न्यादर्श – शोध कार्य हेतु निम्नानुसार न्यादर्श लिये गये हैं –

न्यादर्शतालिका

क्र.	माध्यम	बालक	बालिका	योग
1	शासकीय विद्यालय	150	150	300
2	अशासकीय विद्यालय	150	150	300
	योग	300	300	600

उपरोक्त प्रारंभिक न्यादर्श में किशोरों पर इंटरनेट उपयोग मापनी का प्रशासन किया गया। फलांकन के उपरान्त इंटरनेट का अधिक एवं कम उपयोग करने वाले किशोरों को निम्नानुसार लिया गया, बालक एवं बालिकाओं की संख्या निम्नांकित तालिका में अंतिम न्यादर्श के रूप में प्रदर्शित की गयी है –

अंतिम न्यादर्श

इंटरनेट	विद्यालय	बालक	बालिका	योग
अधिक लत	शासकीय विद्यालय	39	50	89
	अशासकीय विद्यालय	39	32	71
कम लत	शासकीय विद्यालय	44	38	82
	अशासकीय विद्यालय	36	42	78
	योग	158	162	320

उपकरण – 1. विद्यार्थी सामाजिक व्यवहार मापनी – डॉ. अशोक शर्मा
2. इंटरनेट का उपयोग संबंधी स्वनिर्मित परीक्षण।

विधि – शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के न्यादर्श में चयनित छात्र एवं छात्राओं पर इंटरनेट की लत मापनी का प्रशासन कर फलांकन किया गया एवं इंटरनेट की अधिक एवं कम लत वाले छात्र-छात्राओं को अलग-अलग कर उन पर सामाजिक व्यवहार मापनी का प्रशासन किया गया, फलांकन के उपरान्त सांख्यिकीय विश्लेषण कर निष्कर्ष प्राप्त किये गये।

परिणामों का विश्लेषण एवं व्याख्या – इंटरनेट की लत का किशोर बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार पर प्रभाव हेतु न्यादर्श से प्राप्त परिणामों का विश्लेषण निम्नानुसार है –

तालिका क्रमांक – 01 (देखे अगले पृष्ठ पर) – तालिका क्रमांक 01 में इंटरनेट की अधिक एवं कम लत वाले बालक-बालिकाओं के सम्मिलित समूह के सामाजिक व्यवहार पर इंटरनेट की लत संबंधी परिणामों से स्पष्ट होता है कि इंटरनेट की लत का सामाजिक व्यवहार पर सार्थक प्रभाव नहीं है, क्योंकि प्राप्त क्रांतिक अनुपात का मान 0.05 स्तर के न्यूनतम सारणी मान की अपेक्षा कम है। अत: पूर्व में ली गई परिकल्पना सत्यापित होती है।

तालिका क्रमांक – 02 (देखे अगले पृष्ठ पर) – तालिका क्रमांक 02 में शासकीय विद्यालयों के इंटरनेट की अधिक व कम लत वाले बालक एवं बालिकाओं के सम्मिलित समूह के सामाजिक व्यवहार पर इंटरनेट की लत संबंधी परिणामों से स्पष्ट होता है कि इंटरनेट की लत का सामाजिक व्यवहार पर सार्थक प्रभाव नहीं है, क्योंकि प्राप्त क्रांतिक अनुपात का मान 0.05 स्तर के न्यूनतम सारणी मान की अपेक्षा कम है। अत: पूर्व में ली गई परिकल्पना सत्यापित होती है।

तालिका क्रमांक – 03 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर) उपरोक्त तालिका क्र.3 में अशासकीय विद्यालयों के इंटरनेट की अधिक व कम लत वाले बालक एवं बालिकाओं के सम्मिलित समूह के सामाजिक व्यवहार पर इंटरनेट की लत संबंधी परिणामों से स्पष्ट होता है कि इंटरनेट की लत का सामाजिक व्यवहार पर सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है, क्योंकि प्राप्त क्रांतिक अनुपात का मान 0.05 स्तर के न्यूनतम सारणी मान की अपेक्षा कम है। अत: पूर्व में ली गई परिकल्पना सत्यापित होती है।

वर्तमान समय में विज्ञान की प्रगति के साथ-साथ जहाँ एक ओर सभी लोगों की सभी प्रकार की सुख-सुविधाओं में वृद्धि हुई है वहीं दूसरी ओर विज्ञान की प्रगति के विपरीत परिणाम भी सामने आये हैं। इंटरनेट विद्यार्थियों के अध्ययन कार्य में एक आवश्यकता के रूप में प्रतिस्थापित हो गया है। विद्यालयों में भी प्राथमिक स्तर से कम्प्यूटर का उपयोग करना सिखाया जाता है, जिससे कि आगे चलकर विद्यार्थी इसका उपयोग बिना किसी कठिनाई के कर सकें। संभवत: यही कारण है कि प्रस्तुत शोध कार्य में इंटरनेट की लत का किशोर बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार पर सार्थक प्रभाव नहीं आया है, चाहे वे विद्यार्थी शासकीय या अशासकीय विद्यालयों में अध्ययन कर रहे हों। हमारी संस्कृति में परिवार का अत्यन्त महत्व है। परिवार के बड़े व्यक्तियों का सभी कोई आदर एवं सम्मान करते हैं। वे बड़ों के अनुभव का लाभ उठाकर इंटरनेट का केवल उतना ही उपयोग करते हैं जो उनके शैक्षिक जीवन के लिए आवश्यक है। वे सामाजिक जीवन में उसका उपयोग नहीं करते। संभवत: इंटरनेट की लत का सामाजिक व्यवहार पर प्रभाव न आने का यह भी एक कारण है। इस संबंध में एस.आर. सीसिलिंग (2012) का शोध महत्वपूर्ण है, जिसमें इंटरनेट की लत एवं लिंग के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया। विद्यालयों में वर्तमान में कम्प्यूटर के उपयोग के साथ-साथ विद्यार्थी सोशल नेटवर्किंग साइट्स में भी कुछ समय व्यतीत करने लगे हैं, जो उनकी विद्यालयीन उपलब्धि के दृष्टिकोण से हानिकारक हो सकता है। अत: किशोर बालक एवं बालिकाओं के अभिभावकों को इस ओर ध्यान देना चाहिए कि उनके पाल्य उनके सानिध्य में ही इंटरनेट का प्रयोग करें, जिससे कि किशोर इंटरनेट के दुष्प्रभाव से बच सकें।

अत: इंटरनेट के उपयोग में परिवार की अहम् भूमिका हो जाती है। परिवार के सभी बड़े सदस्यों को परिवार के विद्यार्थियों को यह विश्वास दिलवाना चाहिए कि उनका वर्तमान विद्यार्थी जीवन उनके भविष्य के व्यावसायिक जीवन की आधारशिला है। यह आधारशिला जितनी सुदृढ़ होगी उनका भविष्य का जीवन उतना ही सुखमय व संतोषप्रद होगा, क्योंकि वे ना केवल अपने कार्य से संतुष्ट होंगे वरन् अपने जीवन से भी संतुष्ट होगें और परिवार, समाज और देश के विकास में यथोचित योगदान दे सकेंगे। इंटरनेट एक वरदान है, जब तक कि इसके दुरूपयोग से हम स्वयं को इससे बचा सकें।

निष्कर्ष –

1. इंटरनेट की लत का किशोर बालक एवं बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार पर सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।
2. शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के किशोर बालक एवं बालिकाओं के इंटरनेट की लत का उनके सामाजिक व्यवहार पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची : –

1. सुरेश भटनागर, बाल विकास एवं बाल मनोविज्ञान, पृ.सं. 355-361.
2. एस.के. मंगल (2013) शिक्षा मनोविज्ञान तथा पी.एच.आई. लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, पृ.सं. 172-182.
3. www.fubmed.com
4. www.google.com
5. www.wikipedia
6. www.hchi.nim-nih.20V

तालिका क्रमांक – 01

इंटरनेट की अधिक व कम लत वाले बालक एवं बालिकाओं के सम्मिलित समूह के सामाजिक व्यवहार में अंतर संबंधी परिणाम

लिंग	इंटरनेट की लत	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	'पी' मान
बालक	अधिक	78	145.35	22.58	0.42	> 0.05
	कम	80	143.73	27.31		
बालिका	अधिक	82	149.62	17.81	0.39	> 0.05
	कम	80	148.53	18.03		
बालक एवं बालिका	अधिक	160	147.13	20.37	0.41	> 0.05
	कम	160	146.13	23.19		

स्वतंत्रता के अंश – 158,162 — 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 1.98; 0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 2.61

स्वतंत्रता के अंश – 320 — 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 1.97; 0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 2.59

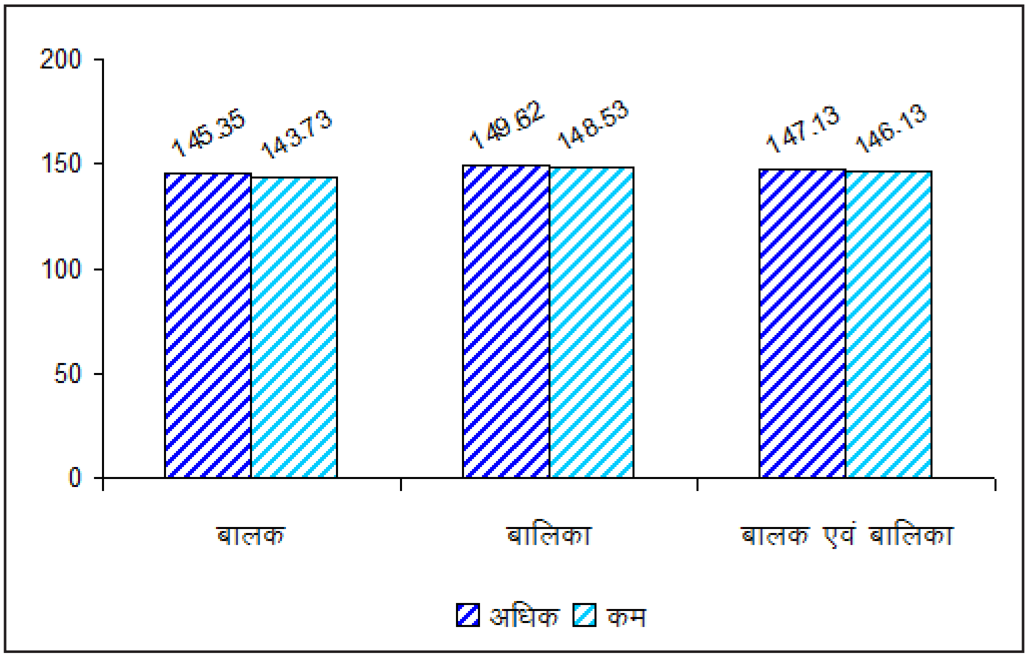

तालिका क्रमांक – 02

शासकीय विद्यालय के इंटरनेट की अधिक व कम लत वाले बालक एवं बालिकाओं के सम्मिलित समूह के सामाजिक व्यवहार में अंतर संबंधी परिणाम

लिंग	इंटरनेट की लत	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	'पी' मान
बालक	अधिक	39	148.67	17.79	0.76	> 0.05
	कम	44	145.36	23.10		
बालिका	अधिक	50	152.34	14.79	1.67	> 0.05
	कम	38	145.53	21.59		
बालक एवं बालिका	अधिक	89	150.73	16.18	1.76	> 0.05
	कम	82	145.44	22.23		

स्वतंत्रता के अंश – 81,86 — 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 1.99; 0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 2.63,2.64

स्वतंत्रता के अंश – 169 — 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 1.98; 0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 2.61

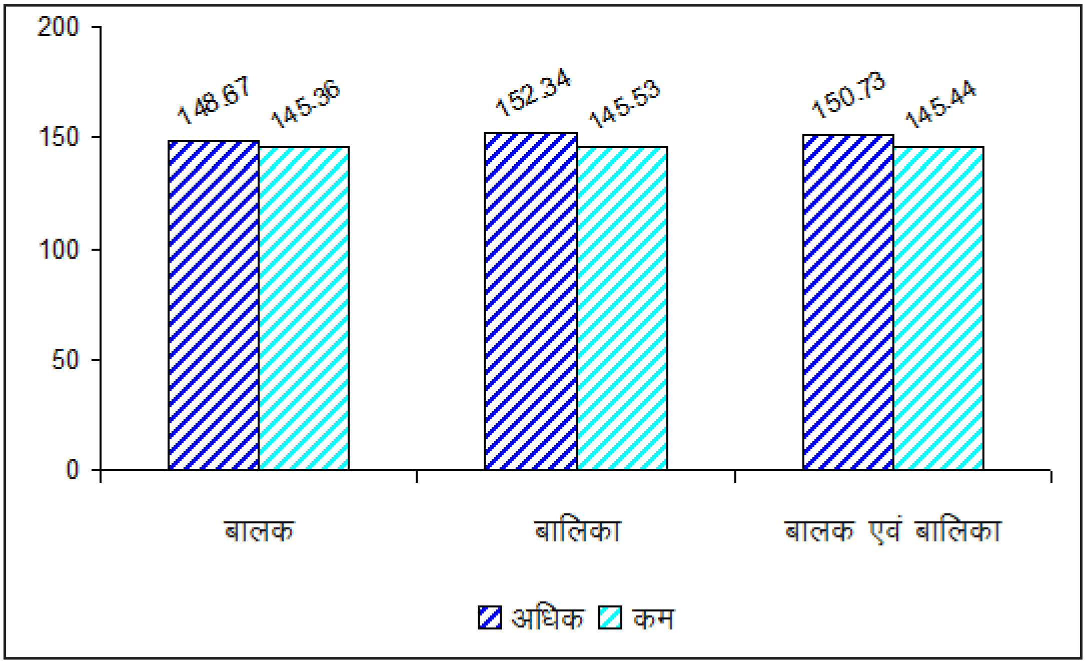

तालिका क्रमांक – 03 – अशासकीय विद्यालय के इंटरनेट की अधिक एवं कम लत वाले बालक एवं बालिका के सम्मिलित समूह के सामाजिक व्यवहार में अंतर संबंधी परिणाम

लिंग	इंटरनेट की लत	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	'पी' मान
बालक	अधिक	39	140.36	26.10	0.20	> 0.05
	कम	36	141.72	31.94		
बालिका	अधिक	32	145.50	21.26	1.36	> 0.05
	कम	42	151.24	13.76		
बालक एवं बालिका	अधिक	71	142.62	24.00	1.07	> 0.05
	कम	78	146.35	24.23		

स्वतंत्रता के अंश – 75,74 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 1.99
0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 2.63

स्वतंत्रता के अंश – 149 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 1.98
0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 2.61

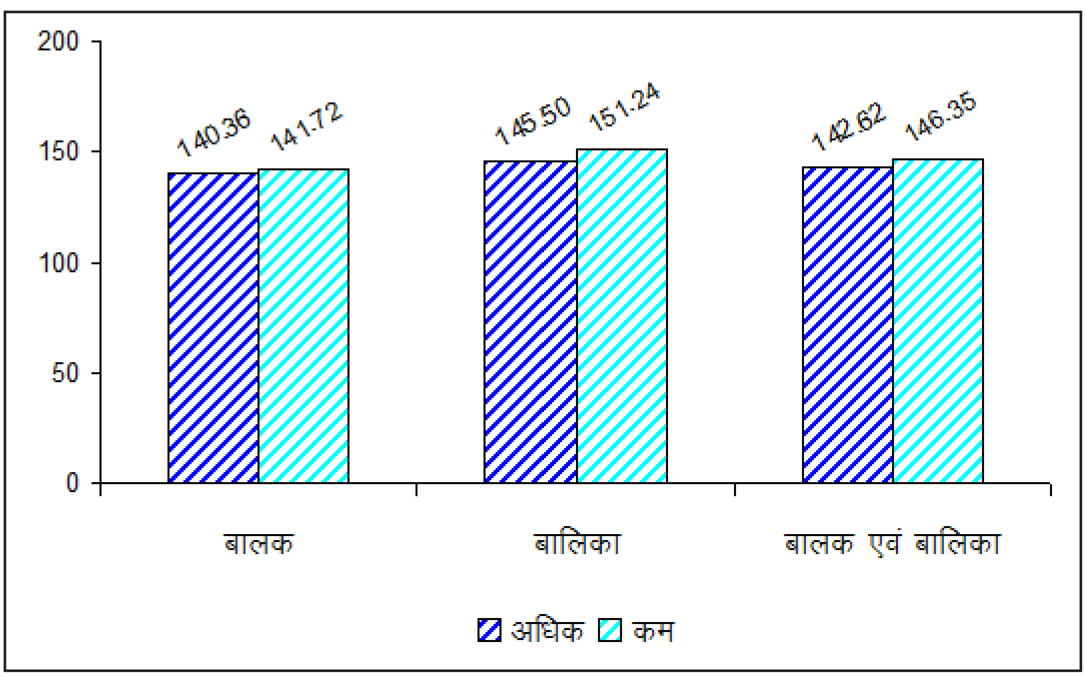

विकासशील देशों में पोषण कार्यक्रमों का प्रबंधन

जयंती जोशी *

प्रस्तावना – "Healthey nation develop from Healthey Citizen." Healthey Citizen develop From healthey children so the health of nation is in the hands of the poeple.

अनेक विकासशील देशों के लिये स्वास्थ्य एवं पोषण के क्षेत्र में कुपोषण एक गंभीर चुनौति है। कुपोषण के कारणों में सामाजिक आर्थिक पहलुओं के साथ-साथ शिक्षा एवं स्वास्थ्य सेवाओं का अभाव, अप्रांसगिक सांस्कृतिक परम्परायें एवं आचरण प्रमुख है।

राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण के अनुसार लगभग 53 प्रतिशत बच्चे जो चार वर्ष से कम आयु के है कुपोषण के शिकार है। 85 प्रतिशत से अधिक महिलायें खून की कमी की शिकार है। गर्भावस्था एवं प्रसव के दौरान जटिलता एवं खून की कमी के कारण प्रतिवर्ष 58,5000 महिलाओं की मृत्यु हो जाती है।

डब्लू.एच.ओ. के अनुसार पांच वर्ष से कम आयु वाले 60 प्रतिशत बालकों की मृत्यु मालन्यूट्रिशन के कारण होती है और इसमें 90 प्रतिशत बच्चे विकासशील देशों के है।

विकासशील देशों में मुख्य रूप से प्रोटीन एनर्जी मालन्यूट्रिशन व सूक्ष्म तत्वों की कमी अधिक देखी जाती है। गर्भस्थ शिशु व नवजात शिशु के लिये यह बहुत नाजुक स्थिति होती है।

बालक का पोषणिक स्तर निर्भर करता है –

- खाद्यान्न की उपलब्धता
- भोजन की पर्याप्तता
- जन्म से छ: माह तक पूर्ण स्तनपान
- संक्रामक रोगों से बचाव
- स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता
- उचित टीकाकरण
- विटामिन 'ए' सम्पूरण
- गर्भावस्था में माँ का पोषण
- शुद्ध पेयजल की उपलब्धता
- स्वच्छ वातावरण
- माँ का स्वस्थ्य व उम्र

विकासशील देशों में कुपोषण के कारण

सामाजिक पहलू – (KURUP P.J. Khandker) 'ने शोध में पाया कि बच्चें का जन्म के समय वजन,जन्म क्रम एवं Sibling में PEM HISTORY होने पर उनमें प्रोटीन केलोरी मालन्यूट्रिशन की संभावना अधिक देखी जाती है।

(Ayana So Esamai Fo, 2004) 'के शोध में देखा गया है कि गरीबी, सामाजिक स्तर जहां बच्चा रहता है, लिंग और अपूर्ण टीकाकरण PEM के मुख्य कारण है।

राष्ट्रीय सामाजिक परम्पराओं व रूढ़ियों के कारण लगभग 50 प्रतिशत लड़कियों का विवाह 18 वर्ष की आयु में हो जाता है। कम आयु में विवाह होने से वे कम आयु में गर्भधारण कर लेती है। अशिक्षा व अज्ञानता के कारण कम अन्तर से बार-बार गर्भधारण के कारण शिशु व माँ दोनों गंभीर कुपोषण के शिकार होते है। कुपोषण का यह चक्र पीढ़ी दर पीढ़ी चलता रहता है ऐसी लड़कियाँ जो स्वयं अल्पपोषित है वे कम वजन वाले कुपोषित बच्चे को जन्म देती है। **(चित्र देखें अन्तिम पृष्ठ पर)**

घरेलू व पारिवारिक पहलू – पीने हेतु साफ पानी एवं आसपास के वातावरण में स्वच्छता का अभाव होने से विभिन्न बीमारियों के साथ कुपोषण का खतरा भी बढ़ जाता है। शौचालय की सुविधा में राष्ट्रीय औसत केवल 44.6 प्रतिशत है। हमारे देश की लगभग एक चौथाई जनसंख्या के पीने का साफ पानी उपलब्ध नहीं है। जिसके कारण अतिसार संबंधी बीमारियाँ बच्चों में स्वाभाविक रूप से अधिक होने के कारण उनमें कुपोषण की दर में वृद्धि पाई जाती है।

तात्कालिक पहलू – विकासशील देशों में कुपोषण का एक बड़ा कारण है गरीबी। इसके कारण बालक को पर्याप्त आहार एवं गुणवत्तापूर्ण आहार की अनुपलब्धता होती है। कुपोषण का एक बड़ा कारण है अशिक्षा व अज्ञानता के कारण बच्चों को पूरक आहार कब देना है, कितनी मात्रा में देना है पोषक आहार की गुणवत्ता की जानकारी का अभाव भी कुपोषण का कारण है।

बीमारियों की व्यापकता – 5 वर्ष से कम आयु के लगभग 50 प्रतिशत बच्चों की मृत्यु संक्रामक रोगों जैसे निमोनिया, डायरिया, मलेरिया और खसरे के कारण होती है। इसलिये बच्चों में संक्रमण से होने वाले रोगों के अधिक फैलाव और टीकाकरण की कम दर के कारण बच्चों में कुपोषण की स्थिति देखी जाती है। **(चित्र देखें अन्तिम पृष्ठ पर)**

विकासशील देशों में पोषण कार्यक्रम – विकासशील देशों में मुख्य रूप से प्रोटीन एनर्जी मालन्यूट्रिशन तथा माइक्रोन्यूट्रियनट की कमी अधिक देखी जाती है। स्थिति यह है कि नगरीकरण व औद्योगीकरण के कारण भोजन का तरीका बदल गया है, शारीरिक गतिविधियाँ कम हो गई है, चयापाचायिक क्रियाओं में बदलाव आने से मातायें मोटापे से ग्रस्त होकर कुपोषित बालकों को जन्म दे रही है।

कुपोषण की इस गंभीर समस्या को दूर करने के लिये समाज में पोषण से संबंधित जानकारी को बढ़ाना, भोजन सम्पूरक पदार्थ एंव फोर्टीफाइड भोज्य पदार्थो के उपयोग के लिये प्रेरित करना आवश्यक है। इसके लिये हमें महिलाओं को केन्द्र बिन्दु बनाकर पूरे परिवार को इसमें शामिल करना होगा महिला साक्षरता एवं शिक्षा को बढ़ाना होगा क्योंकि शिक्षा पोषण के स्तर को बढ़ाती है।

राष्ट्रीय नीति में पोषण

- अत्याधिक कम वजन वाले बालकों का प्रतिशत कम करना।
- ब्रेस्ट फीडिंग को बढ़ावा देना (मुख्य रूप से कोलस्ट्रम फीडींग)।
- एनिमिया को कम करना।
- विटामिन ए की कमी को दूर करना।
- आयोडिन की कमी को दूर करना।
- पोषण शिक्षा को एक पृथक विषय के रूप में चिकित्सा पोरामेडिकल

* सहायक प्राध्यापक (गृहविज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

कोर्स में स्नातक स्तर तक अनिवार्य करना।

- National guidelines on infent and young child feeding (IYCF) को नर्सिंग व मेडिकल पाठ्यक्रम में रखना।
- प्रशिक्षण कार्यक्रमों में कुपोषण की समस्या, कम वजन जन्म, स्तनपान, पोषण व स्वास्थ्य शिक्षा को महत्व दिया जाये।
- सामाजिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता ASHA को कम से कम 03 दिवस की ट्रेनिंग दी जाये जिसमें शिशु एवं बाल पोषण की जानकारी दी जाये।
- प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, जिला अस्पताल के रजिस्टरर्ड डॉक्टर्स को IYCF की पूर्ण जानकारी हो।
- पोषण उन्मुखिकरण कार्यक्रम प्रत्येक जिले में चलाया जाये।
- संसद के द्वारा भी सभी राज्यों में कुपोषण की समस्या को कम करने का लक्ष्य उच्च प्राथमिकता पर रखा गया है।
- पोषण जाग्रति अभियान के द्वारा पोषण की आवश्यकता, कुपोषण का बालक के विकास पर प्रभाव, सूक्ष्म तत्वों का स्वास्थ्य के लिये महत्व, शिशु व बालकों के लिये पोषण के महत्व से संबंधित जानकारी प्रदान करना।
- NRHM (Narional Rurla health, Mission) के अंतर्गत जिला स्तर पर माइक्रोन्यूट्रियेन्ट डोफिशियेन्सी व मालन्यूट्रिशन को कम करने के लिये आयरन और फोलिक एसिड तथा विटामिन ए के सप्लीमेंट दिये जाते है।
- वेब आधारित प्रबंधन प्रणाली का सुदृढ़ीकरण और उन्नयन – शासन द्वारा वेब आधारित निगरानी एवं मूल्यांकन तंत्र विकसित किया गया है जिससे हर स्तर पर विश्वनीय आंकडे एकत्रित किये जा सके और बेहतर निर्णयों के लिये उनका विश्लेषण किया जा सकें। इस प्रणाली के उन्नयन से बच्चों में कुपोषण की वास्तविक स्थिति को जाना जा सकेगा, व भविष्य की कार्य योजना बनाई जा सकेगी। इसके लिये सभी स्तरों पर पर्याप्त संख्या में मानव संसाधन एवं आई.टी.उपकरणों की उपलब्धा सुनिश्चित करने की आवश्यकता होगी।

व्यवहार परिवर्तन संचार एवं जागरूकता – सामान्यतया देखा गया है कि कानून बनाने एवं नीतियाँ तय करने से व्यवहारिक परिवर्तन नहीं लाया जा सकता है। समाज में परिवर्तन लाने के लिये एक समग्र और मिलीजुली रणनीति जिसमें प्रिंट, रेडियों, इलेक्ट्रानिक मिडिया भी शामिल हो आवश्यक है।

- व्यवहार परिवर्तन का उद्येश्य लक्षित परिवारों में ज्ञान के स्तर,आदतोंव दृष्टिकोण को सुधारना और सामाजिक नीतियों में परिवर्तन लाना है। अन्तर्वैयाक्तिक और समुह संचार इसके लिये मुख्य साधन होंगे, जबकि मनोरंजन और जानकारी युक्त जनसंचार के कार्यक्रम सशक्त आधार प्रदान करेंगे। **(चित्र देखें अगले पृष्ठ पर)**

विजन डाक्युमेन्ट 2020 महिला एवं बाल विकास विभाग म.प्र.शासन

- सामाजिक सहभागिता और स:शक्तिकरण के लिए सामाजिक मापदण्ड एवं सामुदायिक वार्तालाप को लक्षित किया जाए। सामुदायिक समुहों द्वारा पूर्व से चिन्हित अनौपचारिक और औपचारिक सामाजिक समुह इसके प्रमुख साधन होगें।
- महिलाओं और बच्चों के हित में वातावरण निर्माण के लिये परिवार,समुदाय,राजनीतिक स्तर पर सलाह की आवश्यकता होगी इसके लिये व्यवसायिक समुहों,छबि निर्माण करने वाले,सामाजिक राजनैतिक संरचना और मास मीडिया मुख्य साधन होंगे।

व्यवहार परिवर्तन संचार और नीति एक गहन कार्य योजना है जिसमें अनेक स्तर पर लोगों और संस्थाओं को शामिल किया जाता है जैसे :– परिवार के मुखिया,समाज के प्रभावशाली व्यक्ति, धार्मिक संस्थाएं, शिक्षाविद, विश्वविद्यालय,महाविद्यालय, असंगठित व संगठित युवा,जैसे राष्ट्रीय सेवा योजना,नेहरू युवा केन्द्र, भारत स्काऊट गाईड आदि।

N.N.E.P. (National Nurtitional Education Program) के द्वारा पोषण के प्रति जागरूक करने के प्रयास किये जा रहे है। FNB (Food & Nutrition Board) तथा महिला बाल विकास मंत्रालय के द्वारा भी पोषण जागरूकता के कार्यक्रम चलाये जा रहे है।

पोषक की शिक्षा व जागरूकता में आँगनवाड़ी कार्यकर्ता, ।छड एवं आशा कार्यकर्ता की प्रमुख भूमिका है। आई.सी.डी.एस. द्वारा उन्हें इस कार्य के लिये प्रशिक्षीत किया जा रहा है। मुख्य रूप से कुपोषण के लिये।

विश्वविद्यालयों में स्नातक स्तर पर लड़कियों और लड़कों दोनों के लिये यह विषय अनिवार्य हो जिससे पोषण जागरूकता को बढ़ावा मिलेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Nutrition Science - B. Shri Laksmi.
2. Food science & Nutrition- Sunetra Roday.
3. The Double Burden of malnutrition in Asia - Stuart Gillespie
4. Vision Document 2020 - Woman & Child Department (M.P.)

(चित्र देखें अगले पृष्ठ पर)

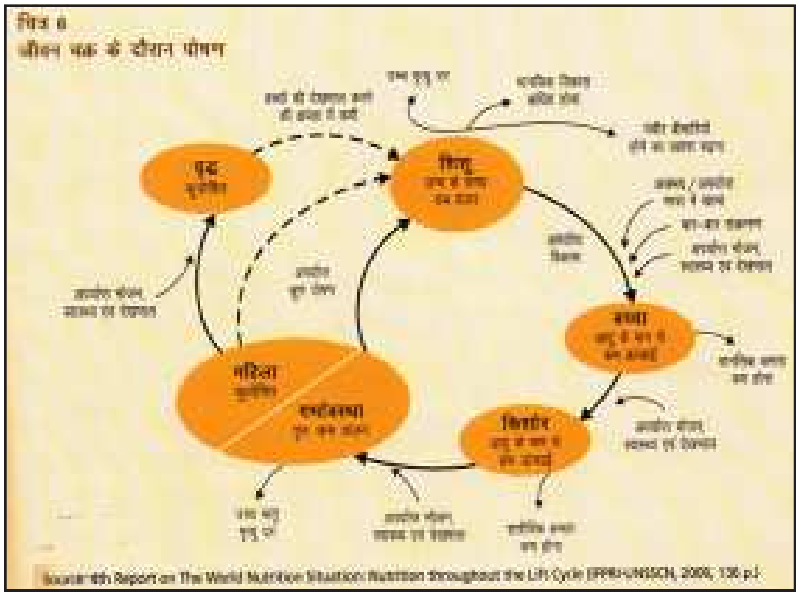
चित्र 8
जीवन चक्र के दौरान पोषण
वृद्ध
शिशु
बच्चा
किशोर
महिला
गर्भावस्था

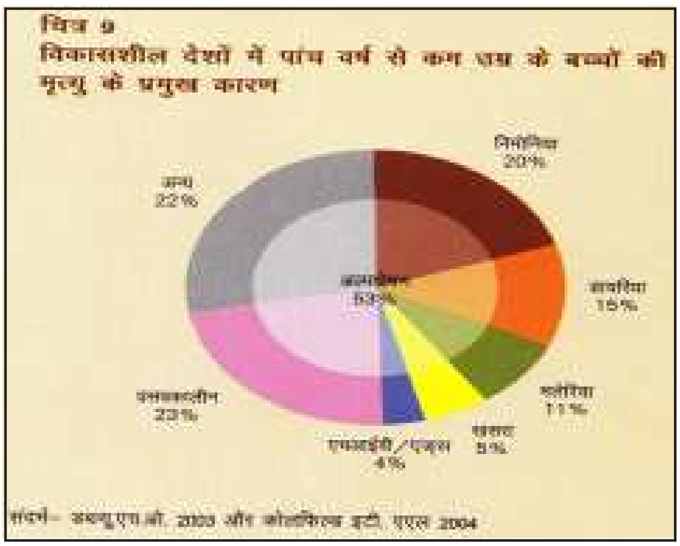
चित्र 9
विकासशील देशों में पांच वर्ष से कम उम्र के बच्चों की मृत्यु के प्रमुख कारण
निमोनिया 20%
अन्य 22%
डायरिया 15%
मलेरिया 11%
खसरा 5%
एचआईवी/एड्स 4%
नवजातकालीन 23%

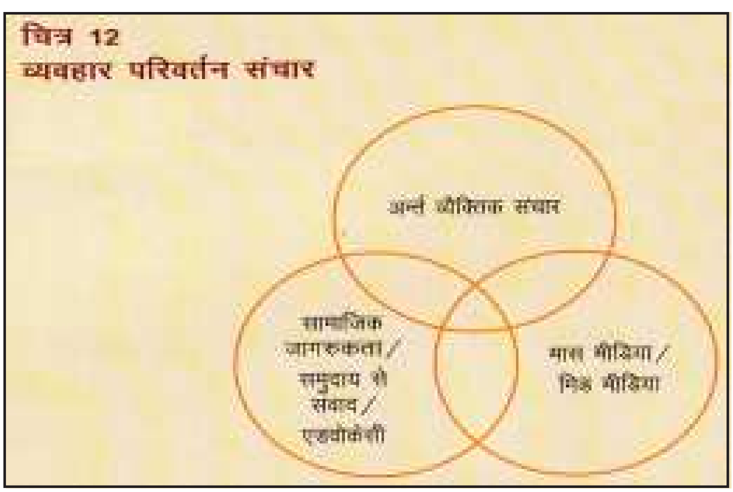
चित्र 12
व्यवहार परिवर्तन संचार
अंतर वैयक्तिक संचार
सामाजिक जागरुकता / समुदाय से संवाद / एडवोकेसी
मास मीडिया / मिड मीडिया

****

हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के सहशिक्षा एवं एकल शिक्षा में अध्ययनरत् विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक बुद्धि का अध्ययन

डॉ. आभा तिवारी * आहूति साहू **

शोध सारांश – अध्ययन का उद्देश्य हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के सहशिक्षा एवं एकलशिक्षा में अध्ययनरत् किशोर विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक बुद्धि का अध्ययन करना है। अध्ययन हेतु न्यादर्श में हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम से सहशिक्षा एवं एकलशिक्षा के 120-120 किशोर बालक एवं बालिकाओं को लिया गया। डॉ. एस. एस. जलोटा (1972) के समूह साधारण, मानसिक योग्यता परीक्षण का उपयोग किया गया है। अध्ययन के परिणामों से ज्ञात होता है कि माध्यम एवं शिक्षा की प्रकृति का संज्ञानात्मक बुद्धि पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

शब्द कुंजी – किशोरावस्था, हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम, शिक्षा की प्रकृति, संज्ञानात्मक बुद्धि।

प्रस्तावना – किशोरावस्था को 'जीवन का सबसे कठिन' काल कहा जाता है। किशोरावस्था में किशोर बालक एवं बालिका के व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों यथा-शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक तथा सामाजिक क्षेत्र में ऐसे क्रांतिकारी परिवर्तन होते हैं, जिसके कारण किशोरावस्था को एक नया जन्म की संज्ञा देते हैं। किशोरावस्था प्राप्त होने पर अधिकांश किशोरों में न केवल सामान्यीकरण चिंतन बल्कि अमूर्त चिन्तन की भी योग्यता, बाल्यावस्था की अपेक्षा अधिक आ जाती है। अमूर्त चिन्तन की योग्यता बढ़ने की प्रवृत्ति होने लगती है। भविष्य की प्रत्याशा करने, उसके लिये योजना बनाने और भविष्य में क्या हो सकता है ? इसकी कल्पना करने की योग्यता बहुत कम उम्र से ही विकसित होने लगती है, किन्तु वह योग्यता विशेष रूप से किशोरावस्था में व्यवहार में आ जाती है, मनोवैज्ञानिकों एवं बुद्धिजीवियों की मान्यता है कि व्यक्तित्व, व्यक्ति के समग्र गुणों का योग है, जिसमें बुद्धि एक प्रमुख गुण के रूप में होती है। बुद्धि में विवेकशील चिंतन तथा अमूर्त चिंतन करने की क्षमता होती है, अर्थात् सोचने, चिंतन करने का तरीका, विवेकपूर्ण, तर्कपूर्ण एवं युक्तिसंगत होता है। **विलियम स्टर्न** (1914) के अनुसार 'नयी परिस्थितियों के साथ समायोजन करने की योग्यता बुद्धि है।

रॉबिन्स और रॉबिन्स (1976) के अनुसार 'बुद्धि का अर्थ संज्ञानात्मक व्यवहारों के संपूर्ण वर्ग से होता है, जो व्यक्ति में सूझ के द्वारा समाधान करने की क्षमता, नई परिस्थितियों के साथ समायोजन करने की क्षमता, अमूर्त रूप से सोचने की क्षमता तथा अनुभवों से लाभ उठाने की क्षमता को अभिव्यक्त करती है। **जेरिस एवं गोनटेड** (2001) ने किशोरों की शारीरिक गामक क्रियाओं का उनकी बौद्धिक एवं संज्ञानात्मक क्रिया पर प्रभाव का अध्ययन किया। अध्ययन का उद्देश्य यह जानना था कि क्या किशोरों की शारीरिक गामक क्रियाओं का उनकी बौद्धिक एवं संज्ञानात्मक क्रिया पर प्रभाव पड़ता है ? यह अध्ययन 13-17 वर्ष के किशोर विद्यार्थियों पर किया गया। अध्ययन में पाया गया कि जो किशोर अधिक शारीरिक क्रियाएँ जैसे – खेलकूद, अन्य क्रियायें अधिक करते हैं, उनकी बौद्धिक, संज्ञानात्मक योग्यता, कम शारीरिक क्रियाओं वाले विद्यार्थियों की अपेक्षा अधिक होती है। कम एवं अधिक क्रिया वाले विद्यार्थियों की बुद्धिलब्धि में सार्थक अंतर पाया गया। अध्ययन के प्रमुख निष्कर्षों से ज्ञात होता है कि शारीरिक क्रियायें बुद्धिलब्धि एवं संज्ञानात्मक योग्यता के विकास में सहायक होती हैं। उपरोक्त शोध अध्ययनों से यह ज्ञात होता है कि विद्यालय का वातावरण एवं शारीरिक क्रियायें बालक एवं बालिकाओं की संज्ञानात्मक बुद्धि को सकारात्मक रूप से प्रभावित करते हैं। **डिक एवं रिडडेल** (2010) ने विद्यालय की गतिविधियों का किशोरों की संज्ञानात्मक बुद्धि पर प्रभाव का अध्ययन किया। अध्ययन का उद्देश्य यह ज्ञात करना था कि क्या विद्यालय में होने वाली गतिविधियों का किशोरों की संज्ञानात्मक बुद्धि पर प्रभाव पड़ता है ? न्यादर्श में किशोर विद्यार्थियों का चयन किया गया। अध्ययन हेतु बुद्धि परीक्षण एवं उपलब्धि परीक्षण का उपयोग किया गया। अध्ययन में पाया गया कि जिन विद्यालयों में अधिक गतिविधियां होती हैं और जो विद्यार्थी गतिविधियों में भाग लेते हैं, उनकी संज्ञानात्मक बुद्धि, उन विद्यार्थियों की अपेक्षा अधिक होती है, जिनके विद्यालयों में गतिविधियाँ कम होती है और जो विद्यार्थी गतिविधियों में कम भाग लेते हैं। विभिन्न प्रकार की विद्यालयीन गतिविधियां शारीरिक एवं मानसिक विकास को प्रभावित करती है। गतिविधियों के अभाव में मानसिक व शारीरिक विकास प्रभावित होता है। **ह्यूमन एवं नॉलोर,** (2010) ने अभिभावकों की आर्थिक स्थिति का किशोरों की संज्ञानात्मक बुद्धि के मध्य संबंध का अध्ययन किया। अध्ययन का उद्देश्य यह जानना था कि क्या अभिभावकों की आर्थिक स्थिति का किशोरों की संज्ञानात्मक बुद्धि पर कोई प्रभाव पड़ता है ? अध्ययन में किशोर विद्यार्थियों का चयन किया गया। सामान्य बुद्धि परीक्षण एवं सामाजिक-आर्थिक स्तर मापनी का उपयोग किया। अध्ययन में पाया गया कि जिन किशोरों के अभिभावकों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति उच्च होती है, उनकी संज्ञानात्मक योग्यता निम्न सामाजिक-आर्थिक स्थिति वाले किशोरों के अभिभावकों की अपेक्षा अधिक होती है।

चर –

स्वतंत्र चर	-	1. हिन्दी माध्यम 2. अंग्रेजी माध्यम
परतंत्र चर	-	संज्ञानात्मक बुद्धि
नियंत्रित चर	-	किशोरावस्था
		कक्षा नवमीं के किशोर बालक-बालिका
आयु	-	14-16 वर्ष

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (मानव विकास) शासकीय मो.ह.गृह विज्ञान एवं विज्ञान महिला महाविद्यालय (स्वशासी), जबलपुर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, शासकीय मो.ह.गृह विज्ञान एवं विज्ञान महिला महाविद्यालय (स्वशासी), जबलपुर (म.प्र.) भारत

उद्देश्य – हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के सहशिक्षा एवं एकलशिक्षा में अध्ययनरत् विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक बुद्धि का अध्ययन।

परिकल्पना – हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के सहशिक्षा एवं एकलशिक्षा में अध्ययनरत् विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक बुद्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है।

शोध विधि –

न्यादर्श –

क्र.	माध्यम	शाला की प्रकृति	छात्र	छात्रा	योग
1	हिन्दी	सहशिक्षा	60	60	120
		एकलशिक्षा	60	60	120
2	अंग्रेजी	सहशिक्षा	60	60	120
		एकलशिक्षा	60	60	120

विधि –

1. हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के सहशिक्षा एवं एकलशिक्षा विद्यालयों की सूची बनाई गई।
2. इन सूचियों में से दो-दो विद्यालयों का यादृच्छिक विधि से चयन किया गया।
3. इन विद्यालयों के 60-60 बालकों एवं बालिकाओं को न्यादर्श में चुना गया।
4. न्यादर्श में चयनित किशोर बालक एवं बालिकाओं पर संज्ञानात्मक बुद्धि का परीक्षण का प्रशासन किया गया।
5. बुद्धि परीक्षण का फलांकन कर परिकल्पना के सत्यापन हेतु प्रदत्त की सांख्यिकीय गणना की एवं निष्कर्ष प्राप्त किया गया।

उपकरण – समूह साधारण मानसिक योग्यता परीक्षण – डॉ. एस.एस. जलोटा (1972)

परिणामों का विश्लेषण एवं व्याख्या – हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के सहशिक्षा एवं एकलशिक्षा में अध्ययनरत् विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक बुद्धि के परिणाम निम्नानुसार है –

तालिका क्रमांक – 01हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के सहशिक्षा एवं एकलशिक्षा में अध्ययनरत् विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक बुद्धि के तुलनात्मक परिणाम

माध्यम	शिक्षा की प्रकृति	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन
हिन्दी	सहशिक्षा	120	37.96	4.97
	एकल शिक्षा	120	40.51	12.56
अंग्रेजी	सहशिक्षा	120	31.63	5.25
	एकल शिक्षा	120	31.57	5.59

प्रसरण विश्लेषण की सारांश तालिका (देखे अन्तिम पृष्ठ पर) – परिणामों के आधार पर कहा जा सकता है कि माध्यम एवं शिक्षा की प्रकृति का संज्ञानात्मक बुद्धि पर सार्थक प्रभाव पड़ता है। एकल शिक्षा के हिन्दी माध्यम के विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक बुद्धि सबसे अधिक एवं एकल शिक्षा के ही अंग्रेजी माध्यम के विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक बुद्धि सबसे कम है।

बुद्धि एक प्रकार का संयोगीकरण है, जिससे व्यक्ति विवेकशील तथा अमूर्त चिंतन कर सकता है, ध्येयपूर्ण क्रियायें कर सकता है, ज्ञान और संकेतों से युक्त अधिगम कर सकता है तथा नई परिस्थितियों में प्रभावपूर्ण समायोजन कर सकता है। बुद्धि में अधिगम की योग्यता भी निहित है। इस योग्यता के द्वारा यह साधारणत: अधिगम ही नहीं करता, बल्कि वह ज्ञान और संकेतों से युक्त अधिगम भी करता है। बुद्धि की योग्यता में शाब्दिक और आंकिक योग्यता, स्मृति योग्यता और निर्णय या निश्चय लेने के अतिरिक्त बुद्धि में प्रत्यय परक योग्यता भी सम्मिलित है, जिसकी सहायता से व्यक्ति अपने अनुभव के साथ लाभ उठाने की क्षमता का भी प्रदर्शन करता है। बुद्धि एक सर्वव्यापी एवं बहुत अधिक उपयोग में आने वाला प्रत्यय है। बुद्धि, सीखने समायोजन करने एवं तर्क करने की योग्यता है, ये योग्यतायें बुद्धि में ही होती है। ये सभी योग्यतायें बुद्धि में समान नहीं होती है, वरन् उनमें मात्रा का अन्तर होता है। इसका ज्ञान व्यक्ति की क्रियाओं एवं व्यवहारों के माध्यम से अप्रत्यक्ष रूप से होता है। किशोरावस्था में बुद्धि किशोरों के आत्म मूल्यांकन एवं आत्म अवधारणा को प्रभावित करने वाली महत्वपूर्ण विशेषता है। इस अवस्था में किशोर के विचार संगठित एवं परिपक्व हो जाते हैं, तो इस अवस्था में कभी-कभी किशोर बालक तर्क का शिकार हो जाता है, किन्तु इसी अवस्था में वह वास्तविकता एवं अवास्तविकता में अन्तर समझने लगता है। बुद्धि में किशोरों को विवेकशील चिंतन एवं अमूर्त चिंतन करने में एवं वातावरण के साथ प्रभावकारी ढंग से समायोजन करने में मदद मिलती है। बुद्धि में वैयक्तिक भिन्नता भी पायी जाती है। एक व्यक्ति की बुद्धि दूसरे व्यक्ति की बुद्धि से भिन्न होती है, इस भिन्नता के दो कारण है, अनुवांशिकता एवं वातावरण।

उपरोक्त परिणामों से स्पष्ट होता है कि माध्यम एवं शिक्षा की प्रकृति का संज्ञानात्मक बुद्धि पर सार्थक प्रभाव पड़ता है। एकल शिक्षा के हिन्दी माध्यम के विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक बुद्धि सबसे अधिक एवं एकल शिक्षा के ही अंग्रेजी माध्यम के विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक बुद्धि सबसे कम है। सामान्य रूप से अधिकांश विद्यार्थियों की मात्र भाषा हिन्दी रहती है एवं अन्य भाषा के जो विद्यार्थी होते हैं उनकी आपस की बोलचाल की भाषा में भी हिन्दी का प्रमुख स्थान रहता है। विद्यार्थी की चिन्तन क्षमता माध्यम से प्रभावित हो जाती है, तो ऐसे में हिन्दी बोलचाल वालों को उससे लाभ मिलता है। ऐसे में हिन्दी माध्यम के विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक बुद्धि परीक्षण में अधिक प्राप्तांक आना स्वाभाविक है।

एसिडो एवं इरिआहटे (2011) ने किशोरों की स्व अध्ययन विधि का संज्ञानात्मक बुद्धि पर प्रभाव का अध्ययन किया। अध्ययन का उद्देश्य यह मालूम करना था कि क्या किशोरों की स्व-अध्ययन विधि का संज्ञानात्मक बुद्धि पर क्या प्रभाव पड़ता है ? यह अध्ययन 109 किशोर विद्यार्थियों पर किया गया। उनकी आयु सीमा 13-17 वर्ष की थी। अध्ययन में पाया गया कि जो किशोर स्वयं निर्धारित कार्यक्रम के अन्तर्गत अध्ययन करते है, उनकी संज्ञानात्मक बुद्धि अधिक विकसित होती है। नियमित अध्ययन का प्रभाव संज्ञानात्मक योग्यता को बढ़ाता है। स्वयं निर्धारित अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक बुद्धि तीव्र गति से विकसित होती पायी गयी, जबकि अनियमित अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों की विकास गति कम पायी गई। **सुनीता एवं खादी** (2012) ने हाई स्कूल के अंग्रेजी एवं कन्नड़ माध्यम के विद्यार्थियों के शैक्षिक अधिगम एवं संज्ञानात्मक बुद्धि पर वातावरण के प्रभाव का अध्ययन किया। इन्होंने 2450 किशोर विद्यार्थियों को लिया जो सहशिक्षा विद्यालय के विद्यार्थी थे। उन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि विद्यार्थियों के शैक्षिक अधिगम एवं संज्ञानात्मक बुद्धि पर घर का वातावरण, विद्यालय का वातावरण, सहशिक्षा का वातावरण साथ ही सामाजिक-आर्थिक स्थिति भी बालकों के शैक्षिक अधिगम को प्रभावित करता है। शोध के प्रमुख निष्कर्षों से ज्ञात होता है कि अंग्रेजी माध्यम के विद्यार्थियों के विद्यालय में अच्छी गुणवत्ता, शिक्षक-शिक्षिका, अभिभावकीय प्रोत्साहन एवं घर पर पढ़ाई हेतु अच्छा वातावरण (टेबिल, लाइट, वेंटीलेशन एवं शांत

वातावरण) का प्रभाव उनके शैक्षिक अधिगम पर पाया गया। कन्नड़ माध्यम के विद्यालय के विद्यार्थियों को भी सकारात्मक वातावरण एवं उच्च सामाजिक-आर्थिक स्थिति दोनों ही प्रभाव विद्यार्थियों में सकारात्मक रूप से देखने को मिले। परिणामत: अध्ययन के दोनों माध्यमों के विद्यार्थियों के शैक्षिक अधिगम एवं संज्ञानात्मक बुद्धि पर वातावरण का सकारात्मक प्रभाव पाया गया।

निष्कर्ष – उपरोक्त परिणामों से स्पष्ट होता है कि माध्यम एवं शिक्षा की प्रकृति का संज्ञानात्मक बुद्धि पर सार्थक प्रभाव पड़ता है। एकल शिक्षा के हिन्दी माध्यम के विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक बुद्धि सबसे अधिक एवं एकल शिक्षा के ही अंग्रेजी माध्यम के विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक बुद्धि सबसे कम है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. कपिल, एच.के. (1975), सांख्यिकीय के मूल तत्व, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, पृ.सं. 607.
2. गुप्त, रामबाबू, (2000), विकासात्मक मनोविज्ञान, अष्टम संस्करण, रतन प्रकाशन मंदिर, प्रोफेसर्स कॉलोनी, दिल्ली गेट, आगरा, पृ.सं. 469-470.
3. सिंह, अरूण, (2006), आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान, चतुर्थ संस्करण, बंगला रोड, दिल्ली, 110007, मोतीलाल वनारसी दास प्रकाशन।
4. Gontard, AV : K. Zeries, (2002) Intelligence and eognitive function in Children and adolescent with spinal muscules atrophy. J. Educational psychology. 12(2) : 130-136.
5. Sunitha; N.H. (2012), Academic Learning Environment of student from english and canada medium high school J. Agricultualscience, 20 (4) 827-830.

प्रसरण विश्लेषण की सारांश तालिका

विचरण के स्रोत	स्वतंत्रता के अंश	वर्गों का योग	मध्यमान वर्ग	एफ अनुपात	पीमान
समूहों के बीच	3	7390.12	2463.37	40.83	< 0.01
समूहों के मध्य	476	28729.38	34.34		

स्वतंत्रता के अंश - 3,276

0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान - 2.62

0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान - 3.83

****

Study To Assess Socio-Economic Status Satisfaction In Railway Employees Of Ratlam Division

Dr. J.C. Porwal * Priyanka Chauhan **

Abstract - Railways in India unfolded a page in history constantly accelerating its momentum, Indian Railways, today is speeding its way in to future This paper is devoted to study on effect of welfare measure and fringe benefits on employees overall socio-economic satisfaction. The Railway has done a lot in respect of providing welfare facilities for the staff to improve their socio-economic status.
Keywords - Indian Railway, socio-economic status, satisfaction level.

Introduction - Indian Railway is the life line of the nation and the life line is in the hand of their employees. Railway does lots of efforts to improve the socio-economic status of their employees. Socio-economic status (SES) is an economic and sociological combined total measure of a person's work experience and of an individual's or family's economic and social position in relation to others, based on income, education, and occupation. When analyzing a person's SES, the household income, earners' education, place of residence, marital status, religion and occupation are examined.

Objectives Of The Study -

- To find out the perception of employees towards various fringe benefits and other facilities provided by Railway.
- To identify the socio-economic status satisfaction of employees of various departments of Ratlam division.
- To make suggestion for improvement of employees welfare measure and status.

Indian Railway - Railways were first introduced to India in 1853 from Bombay to Thane. In 1951 the systems were nationalized as one unit, the Indian Railways, becoming one of the largest networks in the world. IR operates both long distance and suburban rail systems on a multi-gauge network of broad, meter and narrow gauges. Railway network has been split in to **17 zones and 68 divisions**. Spanning 64,456 km with more than 7,133 railway stations, India's rail network is the largest in Asia and the second largest in the world.

Profile Of Ratlam Division - Ratlam Division of Western Railway came into existence on the 15th of August 1956, under Divisionalisation scheme of Indian Railways. The rail link of Ratlam Division has a glorious history of more than 130 years. The division transports more than two lakh of passengers per day by running107 BG Mail express train and 49 (31+18) BG/MG passenger train per day. There are more than 16000 employees in Ratlam division.

Data Sources And Methodology - A total of 507 respondents have been approached for data collection. A self- designed questionnaire was used for the purpose of data collection. Questionnaire consisted statements based on Likert type 5 point scale which were designed to gauge the factors constituting the socio-economic status of respondents belonging to different department.

Discussion And Analysis - In order to obtain primary data, field survey with the help of a questionnare and responses of 507 employeees were taken. (Dept. wise No. of employees) **(Graph see in the last page)**

Table 1: Educational Qualification of respondent

Educational Qualification	No. of Respondent	%Percentage of Respondent
Below 10th	33	7
10th-12th	113	22
Graduate	283	56
P.G.	278	15
Total	507	100

Table -1 revels that out of 507 respondents about 56% of the respondents are graduate, 22% are between 10th to 12th , 15% are post graduate and rest 7% are below 10th.

Table 2: Place of posting respondents

Place of posting	No. of Respondent	%Percentage of Respondent
Rural	81	16
Semi-urban	122	24
Urban	304	60
Total	507	100

Table – 2 shows that 60% of the respondent belongs to urban areas, where 24% are from semi-urban and 16% from the rural areas.

Table 3: Drug profile of respondents (Alcoholism & smoking)

Drug Profile	No. of Respondent	%Percentage of Respondent
No	296	58
Occasionally	153	30
Often	59	12
Total	507	100

* Ex. Principal, Govt college, Mandleshwar (M.P.) INDIA
** Research Scholar, Swami Vivekanand Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.) INDIA

Table -3 shows that 58% respondent should not use any drug, where 30% are occasionally use alcohol and smoke and 12% are addicted to these.

Socio-Economic Status Satisfaction

Table 4: Satisfaction level of respondent towards Family environment

Satisfaction Level	No. of Respondent
Strongly Satisfied	124
Satisfied	188
Neutral	102
Dissatisfied	64
Highly Dissatisfied	29
Total	507

Table - 4 revels that a number of employees are satisfied with their family environment, a few are not satisfied because of odd working hours and over burden.

Table 5: Satisfaction level of respondent towards Housing Facilities

Satisfaction Level	No. of Respondent
Strongly Satisfied	94
Satisfied	100
Neutral	61
Dissatisfied	194
Highly Dissatisfied	58
Total	507

Table – 5 shows that most of the employees are not satisfied with housing facility. Only those who live in their own house are satisfied.

Table 6: Satisfaction level of respondent towards Education, sports & Entertainment facilities

Satisfaction Level	No. of Respondent
Strongly Satisfied	99
Satisfied	152
Neutral	79
Dissatisfied	126
Highly Dissatisfied	51
Total	507

Table – 7 revels that employees are satisfied with the medical and health care provided by Railway, but still some are not satisfied.

Table 8: Satisfaction level of respondent towards Holidays and Leave rule

Satisfaction Level	No. of Respondent
Strongly Satisfied	126
Satisfied	181
Neutral	56
Dissatisfied	111
Highly Dissatisfied	33
Total	507

Table – 8 shows that employees are satisfied with the holidays and leave rule, but some shows their dissatisfaction for the sanction of leave.

Table 9: Satisfaction level of respondent towards Pass Facility

Satisfaction Level	No. of Respondent
Strongly Satisfied	152
Satisfied	294
Neutral	31
Dissatisfied	17
Highly Dissatisfied	13
Total	507

Table – 9 shows that employees are highly satisfied with the Railway pass facility provided to them.

Table 10: Satisfaction level of respondent towards Salary

Satisfaction Level	No. of Respondent
Strongly Satisfied	147
Satisfied	212
Neutral	59
Dissatisfied	79
Highly Dissatisfied	10
Total	507

Table – 10 reveals that most of the employees are satisfied with their salary, a few are not satisfied with their salary and other allowances.

Table 11: Satisfaction level of respondent towards Promotion Policy

Satisfaction Level	No. of Respondent
Strongly Satisfied	46
Satisfied	86
Neutral	103
Dissatisfied	178
Highly Dissatisfied	94
Total	507

Table – 11 reveals that most of the employees are not satisfied with the promotion policy.

Table 12: Satisfaction level of respondent towards Job satisfaction & working environment

Satisfaction Level	No. of Respondent
Strongly Satisfied	168
Satisfied	198
Neutral	29
Dissatisfied	79
Highly Dissatisfied	33
Total	507

Table – 12 shows that most of the employees are satisfied with their job and working. A few employees show dissatisfaction for working environment.

Summary And Conclusion -

- The employees of Ratlam division are satisfied with the family environment, which is further helpful for their efficient working. A Satisfied family environment upgrades their status in the society.

- Most of the employees are not satisfied with their quarters. They complaint that the quarters are not in good position. Those who live in their own or rented accommodations are also not completely satisfied with the location, water and electricity supply etc. Poor accommodation should decrease their status in the society.
- Most of the employees are satisfied with the education & sports facility which maintain their status in the society but also dissatisfied with the entertainment facility for them.
- A good number of employees are satisfied with the medical facility and health care. Some of them are dissatisfied with the emergency medical care and treatment for the major disease of employees.
- Most of the employees are satisfied with the holiday and leave rule. But running employees are not satisfied with the holidays and leave rule. To maintain their social status they need proper holidays and easy leave facility.
- Almost all the employees show their satisfaction towards pass facility. This facility maintains their social position.
- The employees of Ratlam division are satisfied with the salary benefits provided by the Railway. Pay commission increases their socio-economic status in the society.
- Most of the employees are not satisfied with the promotion policy. Reservation in promotion and seniority based promotion policy need some changes.
- Employees are extremely satisfied with their job and working environment and socio-economic position.
- A number of respondent said that, they occasionally drink and smoke, while a few accept that they are addicted of alcohol and smoking.

Suggestions -

- Pay commission increases their socio-economic status, so implementation of 7th pay commission is required.
- More focus should be done for entertainment of employees and their families like Rail Mela, exhibitions and other activities.
- Proper maintenance of service buildings, supply of drinking water and proper sanitation conditions in railway colonies should need improvement.
- Promotion should be given to the employees on the basis of their working efficiency not on the basis of reservation and seniority.
- Health care and medical facilities should need improvement at all levels, especially emergency medical care; more efforts should be required for the treatment of major disease of employees.
- Some employees are having tendency to develop smoking and drinking habits. These staff should be suitably counseled about the ill effects of the consumption of these dangerous items.

References :-

- Mary Edwards (1995) socio economic impact analysis.
- Ankur Sharma (2009), Employee welfare measure taken in the Indian south central railway.
- Dr Eshwari Rangaswamy, (2011), Socio-economic dimensions of the textile workers, University of Madras.
- Mahendranath Chaturvedi, (2013), Handbook for Railwaymen, Bahri publications.
- K. Ashok Kumar, Ch Bala Nageswar Rao, K Hari Prasad Reddy (2013), Employees satisfaction in Indian Railway ISSN vol 2 no 1.

Websites :-

- http://www.historyofindianrailway.com
- http://www.indianrailwayemployee.com

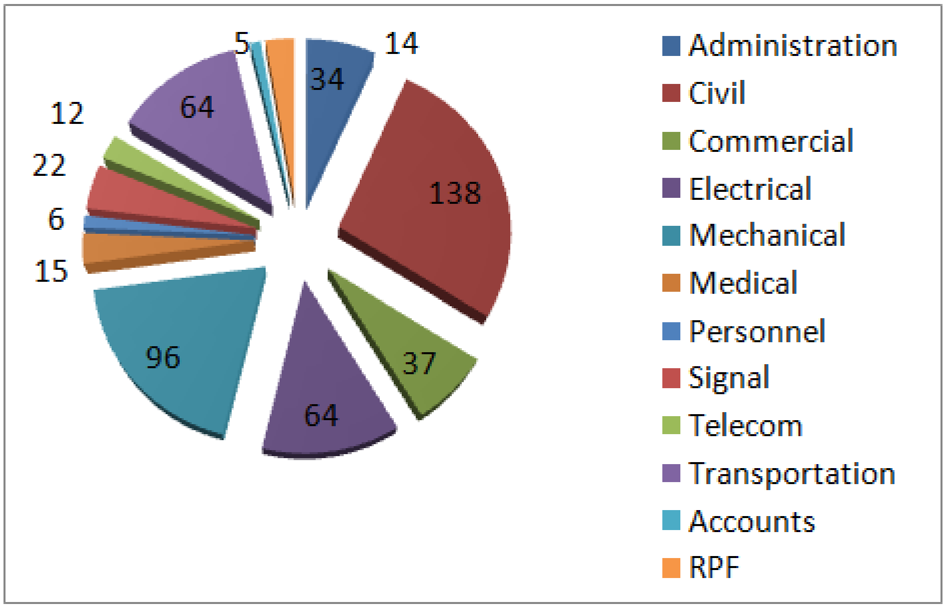

****

Analyses the dimensions & perspectives to manage the stress at work places

Dr. N. S. Rao * Lalit Pipliwal **

Introduction - Within the dynamism of social scenario stress is defined as a non specific response of the human body to any pressure made upon it. It is viewed as interactive forces between biological, psychological, individual & sociological concern. When a person feels uncomfortable, while discharging his functions, he often expresses his anger anxiety, irritability & intolerance etc. presently, the social, technical as well as environmental changes have been taken place. In human life, the motives, attitudes, believes, faith & perceptions of individuals are also changing. As fast changes are taking place within a life span of an individual at the present juncture, there seems to be less time to update the value system. As such, the modern life & its chronic pressures & challenges created fissures in our social fabrics thereby to creates stress.

Objectives - The objectives of this study are stating here –

1. To analyze the symptoms & causes for stress within work places.
2. To analyze different causes to be responsible to create stressful situations at worker's personal life.
3. To analyze the causes & effects of stress within the life style as well as at work places of workers.
4. To analyze most & chronic effects of stress on body organs of workers.
5. To find out & analyze the ways & means to face & overcome the stressful situation at work place & society also.
6. To analyze the perspective approaches to develop a comfortable life scenario as well to overcome the stressful situation at the part of working class.

Symptoms' of stress at work places - The different persons are living in our society as individual basis or as group basis. There are several imbalances and in orderly forces are created within our body organs may be identified as signals of the symptoms of stress. It may develops the distortions in the functioning of body organs that create the symptoms of stress. Here, the exhibit produce some important signs or signals to show the symptoms of stress as arising within the attitude & behavior of human body . In respect of mental phenomenon of stress, there are some symptoms' like insomnia, nightmares depression, irritability, distrust & need to get love from others are being arise. In respect of physical symptoms, the exceeds anxiety, worry, guilt, nervousness heart burn, stomach pain & frequent urination are being shows. While studying about attitudinal & behavioral symptoms, some of them are irritability, feet taping, compulsive behavior, frustration & unsociability are shows .

Exhibit -Different signs or symptoms of stress at individual & group levels of workers.

The signs or symptoms of stress as shows within body organs may broadly be divided into three major parts vise mental, physical as well as attitudinal . The exhibit shows them with their inner contents as given here -

Signs or Symptoms of stress **(Table see in the last page)**

Degrees of the symptoms and signals of stress at work places - The nature & operational working design has gone through drastic changes over the last century and it is still changing at fast speed. The wide & dimensions of stress at work place causes by conditions in that working areas are dyeing negatively affect an individual's performance. The symptoms of job stress may be created from the unrequited & unpleasure attitude & behavior arising from the human body & mind in a particular situation. Comprehensively there are different degrees to show the level of symptoms of stress which have been arising within male and female workers. Here, the symptoms of work, stress are being categorized on the basis of both types of workers as mentioned earlier.

Exhibit - Showing the degrees of symptoms of stress to be create as well as consequences of stress among male & female workers at work places. **(Table see in the last page)**

The exhibit shows the different symptoms as created within the organs of human body of workers at their work places. In respect of male workers quite a large part of them, i.e. more than average have the stress with their anxiety, worry, guilty, mental pressure, non concentration and family conflicts. On an average the symptoms like angriness, frustration, depression, nervous habits absenteeism and physical illness are shows in male workers. Out of them as below average shows the symptom of insomnia and nightmares at their life routine. In respect of female workers quite a large part of them i.e. more than average shows the symptoms of stress by their anger men, frustration, absenteeism, physical illness as well as by way of family conflicts. On an average the symptoms like anxiety, nervous habits, depression, mental pressure and non concentration are shows in female workers. Out of them as below average shows the symptoms of insomnia & nightmares at their life style.

Causes to be responsible for stress at work places - In present scenario the stress at work places as caused by modern life style accelerated rhythm of life, complications

*Research Guide, Mewar University (Raj.) INDIA
** Research Scholar, Mewar University (Raj.) INDIA

in job performance, unhealthy work environment indifferent attitudes, greater information flow, excessive competition, chronic shortage of time & fast social life etc. Within the present life style of workers, it has observed that there are several causes to be responsible for stress at their work places.

Exhibit No. – Showing the causes of stress in context of worker's family and social levels.

Different causes to be responsible for stress	Ranked
1. Constant tiredness, weakness & fatigue	IV
2. Family withdrawal, isolation and feeling overwhelmed	V
3. Poor facilities & opportunities	VI
4. Self oriented nature	VII
5. Old customs & traditions	II
6. Continue heavy cost of living	I
7. Smoking & drug habits	VIII
8. Illiteracy & low education	III

The exhibit shows that within the overall life style of workers, the foremost & most important cause to be responsible for stress is continue heavy cost of living and old customs & traditions as prevailing at their family & society. Afterwards, the illiteracy, low education, constant tired man, weakness & fatigues are also having the causes for stressful situation on the part of workers. Then the next important rank denotes the family withdrawal, isolation & feeling overwhelmed with poor facilities & opportunities are also responsible for stress. Some other causes as self oriented nature , smoking & drug habits may also be responsible for stress concerning of worker's life style.

Consequences of " Stress" - The consequences of stress within the life style of workers on their body and behavioral patterns may broadly be divided into five major parts i.e. biological, psychological, sociological, economical and environmental etc. In respect of biological effects of stress are as spasmodic pains in neck & shoulders , minor muscular twitches, excessive hair losses, digestive imbalances duodenal ulcers and skin out breaks etc. It also triggers mental & emotional problems such as insomnia, headaches, irritability & depression . In respect of psychological consequences as arising from stressful situations are shyness, insomnia, depression, hopelessness, fatigue, self-hate hyper sensitive to criticism, hostile, irritability, lack of self control, poor self image as well as a state of panic situations. The mental & emotional stress adverse effects with asthmatic conditions. Moreover, the frequent urination, boredom and acute cynicism are also the consequence of stress. The social consequences may be insecurity, non co operation, conflict, loneliness, disloyalty, irresponsibility, violence, exploitations and heavy smoking & drug habits. The economic consequences may be more devotion to earn income , long stay at work places heavy cost of living, cutoff in some consumption habits etc. The indifferent behavior, undesirable contacts in society, mutual entrust and insecurity may be includes in environmental situations.

Showing the exhibit area & level of the symptoms of the consequences of stress at individual & group level of workers.

Sr.no	Area of the Symptoms of the consequences of stress	Ranked
1	Biological	I
2	Psychological	II
3	Sociological	III
4	Economical	V
5	Environmental	III IV

The exhibit depicts different area of the symptoms of the consequences of stress within the purview of worker's life style. Accordingly, most comprehensive & major part concerning of biological effects have been put up by first ranks. The next & important area is psychological consequences have been stands its second rank. The third rank shows the sociological aspects which represent the factors of the social consequences of the stress at worker's life style. Afterwards the environmental and economic aspects having the fourth and fifth ranked respectively arising within the consequences of stress .

Managing "stress" - While analyze the stressful situations at work places, it is important to identify & recognize the symptoms & signals of the stressful situations towards managing the critical & undesirable happening of the attitude & behavior of worker's life style. Within present scenario of life style of average family of workers, it is required for them by individual as well as group level to overcome the stressful situations & to make an optimum stress level by empathetically understanding the relations between their family & job as well as their worthwhile strength & weaknesses. It has stated that some of the foremost & perfect ways & means to be very needful to face the negative situations as well as to overcome the mental distortion & imbalances as arising out of stressful situations. Broadly some of them are stating here

1. **Life style -** A major part of working class realize that the life style is the decisional part not only to create & to overcome the stress at their social as well as work places . It include the living standards, daily routines ignore the bad habits, punctuality, medicated & hygienic, cares, encourage civil affairs, developing discipline & morale values .

2 **Thoughts -** Within the present scenario , the vicious, outlooks, perceptions mental preparedness, opinions and overall thoughts are much important to make the stressful situation. It is very critical part to make perspective thoughts & perceptions among workers to overcome the stressful situations on their part. For it, the tolerance ability, sacrificing habits, devotional attitudes, pleasure moments, healthy working environment as well as yoga methods may be very useful for them .

3. **Behavior -** The behavioral patterns of workers have the multidisciplinary field that seeps knowledge of behavior among the segments of individual, group & organization. It is required to make trustfulness, rational, inspirational, collaboration, devotional & emotional attitudes & behavior among workers. The behavior of workers may be influenced by a variety of different forces & work place environment might be able to make some perspective behavioral patterns among workers.

4. **Developing Physical Ability -** Physical abilities may be reoffered to people's capacities to engage in the physical

tasks to perform a job which required different physical capabilities. The capabilities are strength, flexibility, stamina & speed etc. While analyze the managing stress, it is most required to make a force able & agile manners to develop proper abilities to perform the required job & overcome the stressful situations. Moreover it is required to manage & maintain the healthy working conditions with harmonious environment.

5. **Nourishments -** Undoubtedly it is fact that to some extends the contribution of nourishments are being worthwhile to make healthy overcome the body organs as well as to stressful situations.

There are several evidences indicates that increased consumption of fiber, proteins & Vitamin rich fruits, food & vegetables are steps that can greatly increase the body's ability to cope with the physiological effects of stress.

6. **Personality -** Personality plays an important role in the process for managing stress. Personality of workers denotes the unique , comprehensive perspective & stable pattern of behavior, thoughts and emotions as shown by them. There are several ways to make better personality are trustfulness, co operative attitudes, self disciplined responsive & emotional stability etc. to make to reduce the stress at work places.

Complementary ways & means to overcome " stress" – role of managerial cadres

- Develop the right optimum & perspective attitudes & behavior and do not react under pressure.
- More attention to be given towards the development of self by discipline, healthy behavior, positive attitudes, integrity, enthusiasm & devotion to work etc.
- Appropriate & optimum adjustments may be set up with work place culture. Making one self adapt to the various aspects of it such as customary trends, time schedule, dress code, Communication patterns, hierarchy, responsiveness as well as the behavioral patterns with each other.
- To encourage new, innovative & creative ideas, views thoughts & approaches from workers aims to ensure that we are making maximum use of our resources & capacities.
- Create morale & values by means of code of conducts, proper counseling , devotionality, reliability & informal relations with workers.
- Concentrate on controlling the overall situations to create visualization.
- Have some optimistic approaches to job & its performance & appraisal process.
- Provide several motivational applications specified as fair wages & allowances, job, security, promotion, recognition of work, participation & opportunities for advancements.
- Provide facilities & opportunities allowing people the liberty to lead the life they choose and providing them cultural liberty is important for human development.
- More attention to give workers to make an appropriate work life balances which are beneficial to all. For it workers may be given a balancing & fair attention towards their work schedule, relationship patterns, children, family leisure & personal development etc.

References :-

1. Chandan J.S. " Organizational Behavior " (1994) Vikas Publishing House Pvt. Ltd.
2. Sharma G.D. " Management and the Indian Ethos " (2001) Rupa & co.

Signs or Symptoms of stress

Mental		Physical	Attitudinal
Insomnia	Irritability	Excess anxiety	Feet Tapping
Nightmares	Distrust	Worry, Guilt	Irritability
Depression	Need to be love	Nervousness	Compulsive behavior
		Heart burn	Frustration·
		Stomach pain	unsociability
		Frequent urination	

Symptoms of work stress in workers	CATEGORY OF WORKERS					
	MALE			FEMALE		
	More than Average	Average	Below Average	More than Average	Average	Below Average
1. Angerness & Frustration		✓		✓		
2. Anxiety, Worry & Guilt	✓				✓	
3. Depressions & Nervous habits		✓			✓	
4. Mental pressure & non concentration	✓	✓		✓	✓	
5. Absenteeism					✓	
6. Insomnia & nightmares			✓			✓
7. Physical illness		✓		✓		
8. Family Conflicts	✓			✓		

Chhattisgarh as a Tourism Brand: Possibilities and Potentials

Dr. Kaustubh Jain * Prem Shankar Dwivedi **

Abstract - Tourism is an important sector playing a crucial role in the economic development of the country. It is one of the highest growing sectors in the world as well as in our country. In the recent years attraction of tourism has increased to Chhattisgarh state but still less when compared with the other states of our country. Tourism in the state can be divided in following types: cultural and ethno- tourism, pilgrim tourism, adventure tourism, business and travel tourism, eco – tourism, rural tourism etc The state is full of potential and unexplored tourist sites which needs serious and sincere efforts for its exploration. Against this background an effort has been made in this paper to make SWOT Analysis and tried to offer suggestions for positioning the brand image of Chhattisgarh state as a tourist destination.
Key Words - SWOT Analysis, brand image, economic, tourist sites.

Introduction - Over the years the graph of growth and diversification of tourism in the world has continuously been growing rapidly. This sector can provide jobs to even poor of the poorest because tourism does not come alone; it grows with the growth of its stakeholders. The contribution of Travel & Tourism reached to a total of 9.8% of world GDP (US$7.6 trillion) in 2014. The sector now supports nearly 277 million people in employment – that is 1 in 11 jobs on the planet. Instead of global challenges of economic, social and political fluctuations this sector's growth is forecasted to grow by 3.8 annually over the next ten years. Tourism gives confidence to local people, community, employers and government to conserve and protect biodiversity of our eco-system and thus it strengthens the concept of sustainable development.

Thus it can be said that tourism is a way of making this earth a more beautiful and safe place which gives an equal opportunity for growth to everyone, Whether it is hotel/motel, transport, construction, railway, banking, insurance and many other allied sectors.

Tourism in India – Tourism in India has grown in leaps and bounds over the years. Many states of the country are full of possibilities and potentialities of tourism development like Chhattisgarh, Madhya Pradesh, Goa, Kerala, Gujarat etc. Diversity of this country is reflected through its languages, cuisine, traditions, customs, music, dance, religious practices and festivals, art and craft and its holistic healing traditions.

Recent years have witnessed high growth in foreign tourist arrivals (FTAs) which result in high foreign exchange earnings (FEEs).In year 2014 the global rate of international tourist arrivals was 4.7% where as India witnessed growth of 10.6% in FTAs. FTAs during 2014 was 77.03 lakh as compared to the FTAs of 69.68 lakh during 2013.The foreign exchange earnings from tourism in rupee term during 2014 was [1] 1,20,083 crore with a growth of 11.5%.To promote and encourage tourism the government of India has launched the scheme of tourist visa on arrival(TVoA) enabled with electronic travel authentication (ETA) scheme on 27th November 2014 to travel to India for the purpose of tourism related short stay of 30 days .

India has rich cultural, historical, religious, and natural heritage which provides a huge potential for development of tourism and creation of job. In due recognition of this potential two major schemes of Swadesh Darshan and Prasad have been initiated to improve carrying capacity of the tourist destinations and to promote sustainable development. The schemes focus on integrated development of theme based circuit and pilgrim centres to attract both domestic and international tourists. To promote river cruise, working group was constituted by the central government to examine the modalities of cruise tours connecting places of religious importance. The working group in its report identified 8 tourist circuits on national waterways. Along with this special focus is given to promote Swachh Bharat – Swachh Paryatan with the aim to ensure cleanliness and hygiene at tourist destinations.

Below the given table - 1 shows the importance of tourism in the revenue and employment for the country:

Table - 1 **(See in the last page)**

Above table elucidates the importance of tourism sector in our country, which contributes to nearly 7% of GDP and 12.36% of employment to our country.

Tourism in Chhattisgarh - The 26th state of India which was formed on 1st November,2000 by partitioning 16 Chhattisgarhi-speaking south-eastern districts of Madhya Pradesh, now which has nearly completed its 15 years of independent identity by maintaining the high growth rate among the other states of the country .

* H.O.D. (Commerce) AISECT University, Bhopal (M.P.) INDIA
** Research Scholar (Management) AISECT University, Bhopal (M.P.) INDIA

As per a report on tourist footfall in India in 2013 released by the market research division of the Ministry of Tourism, Chhattisgarh has climbed to 10th rank from 16th in 2012. Tribal and rural tourism are still to be explored as it has immense potential. The outstanding scenic beauty, historical and archaeological sites, the water falls, the hill stations, the wild life sanctuaries, the national parks, the heritage monuments, forts and unexplored forests, scenic hill ranges, Buddhist sites, caves, hill plateaus and friendly people have placed the state in an advantageous position. The state is stepped in traditions yet is exposed to information technology revolution in the country. Swami Vivekananda Airport Raipur, Chhattisgarh got national award of Best Airport (Rest India) in 2013-14, from the ministry of tourism, government of India.

As data shows below in the table - 2 that Chhattisgarh state was among top 10 states in number of domestic tourist arrivals in 2013 but again in the report of 2014 it could not come under the list of top 10 states neither in domestic tourist arrivals nor in foreign tourist arrivals.

Share of top 10 states /UTs of India in Number of Domestic Tourist Visits in 2013

Table - 2 **(See in the last page)**

Against this background an attempt has been made in the present paper to make SWOT Analysis of the state and to offer suggestions for positioning brand image of Chhattisgarh around its strengths as a tourist destination.

Geographical Features of Chhattisgarh – Chhattisgarh state is situated in the central of India. The geographical location of the state is 17p 46 'north to 24p 5' north latitude and from 80p 15' east to 84p 46' east longitudes. The total area of Chhattisgarh is 1, 35,191 sq km. the north –south length of the state is 360 km, while the width from east to west is 140km. Area wise it ranks 10th state in the country. Chhattisgarh borders the states of Madhya Pradesh in the north – west, Maharashtra in the west, Telangana to south – west, Andhra Pradesh in the south, Odisha in the east, Jharkhand in the north – east and Uttar Pradesh .Raipur is the capital of the state. Majority of the people in Chhattisgarh speak Hindi, Chhattisgarhi and local dialects, they can also understand English language.

Chhattisgarh offers the tourist a destination with a difference for those, who are tired of the crowds at major destinations, Bastar with its unique cultural and ecological identity will come as a breath of fresh air. The green state of Chhattisgarh has 44% of its area under forests and is one of the richest biodiversity areas in the country. The northern and southern state has hilly area whereas central of the state has plain area.

SWOT Analysis -

Strengths-

Eco – tourism – This state is fortunate to have 12% share of India's forests, three national parks and 11 wild wildlife sanctuaries. The national parks are the major attraction of Chhattisgarh. It has several modern attractions in protected areas such as Kanger Vally national parks, Barnawapara, Sitanadi, Udanti and Achanakmar sanctuaries which has now become home for the endangered wild buffalo(Bubalis bubalus) and the even more endangered hill myna(Gracula religiosa peninsvlaris) are the state animal and state birdrespectively. The state has taken several steps for their preservation. Natural attractions are being prompoted with increased local participation and incouragement to herbal gardens and natural health resorts. The mystique of aboriginal tribal ethno-medicine, which predates even Ayurveda has been preserved and practiced over the millennia. Mainpat(Sarguja), Keshkal valley(Kanker), Chaiturgarh (Bilaspur), Bagicha(Jashpur), Kutumbsar caves, Kailash caves, Tirathgarhfalls, Chitrakot falls(Bastar) are all exhilarating destinations being promoted for nature and wildlife tourism. Wildlife areas, camping grounds and trekking facilities would be few of the prime attractions.

Pilgrim tourism - The state encourages development of pilgrimage centres. Rajim, Champaranya, Dongargarh, Shivrinarayan, Girodhpuri, Dantewada, Ratanpur, Sirpur and others are popular and main destinations for pilgrim tourism.Sirpur would be part of the wider Buddhist tourism circuit. Sirpur is a historical town in the district of Mahasamund in the state of Chhattisgarh, on the banks of the river Mahanadi. It was an important centre of Buddhist from the 6th the 10th century A.D. and was visited by Hieun Tsang, the 7th Century Chinese Pilgrimist and Scholar. The beauty of this magical place has witnessed the presence of His Holiness Dalai Lama too in March 2013. The three holy rivers mahanadi, Pairi and Sondur, meet at Rajim which is popularly known as the "Prayag" of the Chhattisgarh. From pilgrim tourism point of view it an important tourist destination which attracts tourists on annual Rajim Lochan Mahotsav. Rajim is famous for its rich cultural heritage and the beautiful ancient temples. Shri Rajim Lochan mandir is dedicated to Lord Vishnu which is at Rajim.

Business and travel tourism- Chhattisgarh encourages investments in establishment of business- cum- recreation centers to cater to the needs of business travelers. Investments for the entertainment needs of business tourists with high purchasing power, facilities such as hotels, entertainment and amusement parks, multiplexes, health spas, shopping malls and golf courses are being encouraged.

Culture and ethno – tourism- Chhattisgarh is very rich in its culture, traditions and festivals. Now it has identified and is developing ethnic villages and private sector is encouraged for proper maintenance and professional site management of important heritage sites/ monuments. Bhoramdeo , rajim, sirpur,Tala, Malhar and Sheorinarayan are prime sites for heritage tourism.

Culture, Heritage and village Tourism - State will identify and develop heritage properties i.e. old palaces, Havellies etc as places of tourist interest. These will be integrated with the Eco tourism Circuits. Bhoramdeo, Rajim, Sirpur, Tala, Malhar, Sheorinarayan, Rock paintings of Raigarh, Ramgarh, Tumhan , Barsur and Kharod will be promoted as prime heritage sites.Festivals like Dusshera of Bastar, Madai of Narayanpur and Dantewada, Ramoram mela of Sukma,

Bhoramdeo,Khairagarh, Malhar, Sheorinarayan Mahotsav and Chakradhar Samoroh of Raigarh will also be promoted.Festivals like Dusshera at Bastar, Madai at Dantewada and Narayanpur,Bhoramdeo, Raut Nacha and Chakradhar Samaroh are being marketed for global exposure.

Weaknesses/Challenges-

- Inadequate transport facility is proving to be weakness of the sector.
- Lack of enough security arrangements does not let people to be relaxed.
- Lack of trained and educated Guides may less the interest and curiosity of tourists.
- Limited availability of tourism information and new updates is also being a barricade in developing tourism.
- Limited railway routes to the southern part of the state create a lot problem for tourists.
- Facilities and services are poor in many sites of tourist importance.
- providing healthy environment to tourist places is also a challenge.
- Local people are also not interested or aware of importance of tourism who can contribute in the growth of the sector with the growth of their own art and crafts by preserving the environment if supported properly.
- There are many spots which can be developed as a tourist sites but Lack of proper marketing and advertising and sometimes government willpower is the reason behind there backwardness.

Opportunities- Chhattisgarh is rich in forest area which is 44% of total area of the state with three national parks and 11 wildlife sanctuaries. The state is full of greenery and full of tourism potential. After becoming news state Chhattisgarh has progressed a lot but it could not focus much on tourism. Development of basic infrastructure is the biggest opportunity for the tourism of the state. Chhattisgarh is known for its tribal culture; their culture, traditions, rituals, dance and songs are the real identity of the state and they offer great potentials for the rural tourism in the state. Other states have been given funds and they have identified sites for rural tourism hence if central and state governments along with the local people show their will power the state may get the glory of growth which is waiting for it.

The state also has unexplored opportunity in many spots of historic and pilgrim importance. Many tourist sites like Sirpur, Rajim, Ratanpur, Dongargarh and many more can be developed with the international standards so that we can be in the position to create the state as tourist center for domestic and foreign tourists.

Threats- The Chhattisgarh tourism industry is facing internal as well as external threats. The tourism sector is facing the competition from other states, especially from neighboring states such as Odisha, Madhya Pradesh, West Bengal, Tamil Nadu, Andhra Pradesh states attract more domestic as well as foreign tourists in the field of heritage tourism. Tourism can develop and survive in a safe and secured environment. The state suffers from the threat of Naxalism which pose a serious threat to the development of this sector. This is the reason why Chhattisgarh has still not been connected to the south part of Chhattisgarh which immense potential to be explored.

Government Policies and Future Plans- Chhattisgarh is emerging as a promising tourist destination in the country. The state government has taken several policy initiative measures for the development of various segments in tourism. The following are the measures undertaken by government of Chhattisgarh. They are:

1. The state government has decided to bring tourist activities under the priority sector.
2. It has decided to create infrastructure facilities so that entrepreneurs could open hotels/motels, amusement parks etc.
3. Developing Raipur as a tourist destination by promoting adventure sports. Chhattisgarh's first and largest man-made Jungle Safari at Naya Raipur is expected to be ready for visitors soon.
4. To promote economically, culturally and ecologically sustainable tourism in the State.
5. Strengthen the quality and attractiveness of the tourism in Chhattisgarh.
6. Preserve, enrich and showcase the rich and diverse cultural and ecological heritage of the State.
7. Increase the contribution of tourism to the economic development of interrelated sectors.
8. Encourage and promote private sector initiatives in developing tourism related infrastructure.
9. Transform the role to Government of that of facilitator.
10. Promote new concepts in tourism such as time-share eco tourism, village tourism, adventure tourism.
11. Respect the intellectual integrity and rights of the local communities. To meet these objectives, the State has identified specific initiatives.

Suggestions -

1. Allow corporate sponsorship for heritage buildings instead of leaving it in an abandoned state so that the potential of the sector is explored.
2. The aim of tourism should not limit itself to only sightseeing but it should create an experience. For example there can be activities for the children, interactivity for the tourist with the culture of the place etc.
3. Linking bus services to the rail and air services encourage the tourists to travel freely.
4. Packaged train travel, easy bus connections and safe car hire services with knowledgeable personnel.
5. The tourism ministry should surely pursue aggressive online and other marketing strategies to promote Chhattisgarh as a must-visit location.
6. Sell niche tourism areas separately, this state of India is currently in a position where it can make a cash cow out of selling customized experiences, luxury spa sessions, rare animal sanctuaries, religious pilgrimage tours.

7. The state government must take action to solve security problems and regional conflicts.
8. Proper training is to be given to the guides to provide correct information about the places.
9. The state government should come along with attractive packages.
10. Proper long term plans should be laid down to develop the tourist spots.

Conclusion- Chhattisgarh has a beautiful array of ancient sculptured temples, monuments, religions spots; hill ranges wildlife sanctuaries, bird sanctuaries and unexplored forests. Chhattisgarh is a peaceful state surrounded with green forests which may attract anyone to visit and to connect him with nature. Government has also taken steps for its tourism developments but a lot depends on the way information is packaged and distributed which can go a long way in improving tourist traffic in the state. Chhattisgarh has a lot of potential and unexplored tourist sites with sincere efforts and will power the state and stakeholders it can become a tourist destination not only for our country but for the world.

References :–

1. G.Satyanarayana and M.V. Raghavalu; Problems and prospects of tourism in Backward Areas, Southern Economics vol.-44, June15, 2005, P-13
2. Ministry of Tourism, Government of India, Annual Report 2014-15, P-95, 97.
3. Depertment of Tourism, Ministry of Tourism & Culture, Government of India; National Tourism Policy 2002
4. India tourism statistics at a glance,2014, P-12-13
5. De,Sumit Kumar and Shrivastava,Dr.Rajesh, Sarguja Sambhag Me Paryatan Udyog Ki Sambhavna Ka Adyayan, Research Zone vol-5,June 20013,P-63-66
6. Ministry of Tourism, Government of India, National Tourism Awards 2013-2014, P-12
7. Research Journal of Arts, Management & Social sciences, vol-V, September, 2011, P-183 -192, 235-241.
8. India tourism statistics at a glance,2013, P-12
9. Patwal, Anup Singh; The contribution of eco-tourism for sustainable livelihood development in Rajaji National Park,Uttarakhand,vol-1(4) ,2013,P- 108
10. www.tourism.nic.in
11. www.chhattisgarhtourism.net
12. http://bastar.gov.in/bastar_tourism.htm
13. http://surguja.gov.in/tourist_places.htm
14. http://bilaspur.gov.in/Tourism.html
15. http://raipur.nic.in/tourism.htm
16. http://durg.gov.in/DistrictProfile_TouristPlaces.html
17. http://www.cso.gov.bw/index.php/sector-statistics

Table - 1

Year	Contribution of tourism in GDP of the country (%)			Contribution of tourism in employment of the country (%)		
	Direct	Indirect	Total	Direct	Indirect	Total
2009-10	3.68	3.09	6.77	4.37	5.80	10.17
2010-11	3.67	3.09	6.76	4.63	6.15	10.78
2011-12	3.67	3.09	6.76	4.94	6.55	11.49
2012-13	3.74	3.14	6.88	5.31	7.05	12.36

Source: Annual report 2014-15, Ministry of tourism, Government of India.

Share of top 10 states /UTs of India in Number of Domestic Tourist Visits in 2013

Table - 2

Rank	State/UT	Domestic Tourist Visit in 2013(P)	
		Number	Percentage Share %
1.	Tamil Nadu	244232487	21.3
2	Uttar Pradesh	226531091	19.8
3	Andhra Pradesh	152102150	13.3
4	Karnataka	98010140	8.6
5	Maharashtra	82700556	7.2
6	Madhya Pradesh	63110709	5.5
7	Rajasthan	30298150	2.6
8	Gujarat	27412517	2.4
9	West Bengal	25547300	2.2
10	Chhattisgarh	22801031	2.0
Total of Top 10 States		972746131	84.9
Others		172534312	15.1
Total		1145280443	100.0

Source: State/UT Tourism Departments (Provisional)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) Oct. to December 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

Socio-Environmental Issues Of Bus Rapid Transit System At Bhopal

Dr. Rita Sachdev *

Introduction - Bus Rapid Transit (BRT) concept is becoming increasingly utilized by the cities looking for cost effective transit solution. Bus Rapid Transit System (BRTS) attempts to address the deficiencies of the earlier public transport system by providing a rapid, high quality, safe and secure transit operations. However, in order to gather a large number of commuters to public transport, there is a need to offer good quality and comfortable service. For Bhopal, the first step in this direction was the launch of 'My Bus,' the Bus Rapid Transit System (BRTS), a new form of public transport system in India. My Bus was carefully named to highlight a sense of public ownership of the new improved version of public transport in the city. Bhopal is the capital city of Madhya Pradesh. My Bus, for the first time in India have added push button features for pedestrians to access the system and has special security measures to ensure women safety. Thus with a view to improve the public transport system in the city and encourage people to use it, Madhya Pradesh Govt. introduced the BRTS in Bhopal on September 27 ,2013 under its Integrated Mass Transit Plan. According to the 2011 Census, the city of Bhopal has a population of 18.43 lakhs and the municipal area is spread out in 285 sq km, with 647 Km of urban roads. Bus Rapid Transit (BRT) can help to reduce oil consumption and associated emissions of air pollution and greenhouse gases. BRT also can help mitigate growing traffic congestion and encourage more sustainable urban development.

Environmental Degradation - One of the critical and most immediate problems faced by Bhopal is the health impact of urban environmental pollution. The reasons being air pollution inadequate water, sanitation, drainage, solid waste services and urban and industrial waste management. There is phenomenal increase in traffic load in the city, which is one of the major causes of pollution in the city. SPM and NOx levels also showed a diurnal variation consistent with traffic variations while, the SO_2 levels were generally low. Though the ambient levels of Carbon mono-oxide could not detected, a large number of vehicles emitting greater than 5% of carbon mono- oxide and higher than 7000 ppm of hydrocarbons were detected, the levels being much higher than the standards. Environmental Problems associated with the different water resources are identified to be; ground water contamination, chemical pollution, microbial contamination, affecting Human health due to waterborne diseases

Access to Public Transport - To cater for the intra-city travel demand the public transport comprises of minibuses and tempos. In terms of capacity, road space utilization and environmental degradation the tempos, mainly operating from the urban fringes to city core, have been found to be quite insufficient. Moreover the quality of service provided by minibuses and tempos is poor with no arrival / departure schedules and request stops anywhere on the route. Even with this service quality, the minibuses and tempos cater nearly 31% and 12% of the intra-city travel demands by mechanical modes. Both minibuses and tempos do not have any organized terminal facilities. The intercity bus terminal at Nadra in the old city acts as a major node for the inter-city.

Transport, Energy and the Environment - The amount of air pollution and greenhouse gas emissions caused by transport activities depends upon factors that are specific to individual cities, including: the number of vehicles and the extent to which these vehicles are used; characteristics of the transportation fleet (e.g., vehicle type, engine and emission control technology, average vehicle age, and quality of maintenance); types of fuel used; and local conditions, such as topography and climate. Except for topography and climate, governments have the ability to enact policies and programs that can significantly address each of these factors. These include standards for fuel economy and quality, inspection and maintenance programs, and transport demand management programs, such as improved public transport, parking management, congestion pricing, and vehicle occupancy requirements. More efficient use of energy and a cleaner energy supply will simultaneously boost our energy security, grow our economies and lower our emissions.

Benefits of BRTS - Socio-economic and environmental benefits of BRTS are summarized herewith:

Category	Description
Urban Form	More sustainable urban form, including densification along major corridors· Reduced cost of delivering services such as electricity, water and sanitation
Economic	Reduced travel time· More reliable product deliveries· Increased economic productivity· Increased employment, improved work condition

*Asst. Professor (Commerce) Govt. Arts and Commerce College, Bhopal (M.P.) INDIA

Environmental	Environmental reduced emission of air pollutant Reduced noise
Social	More equitable access throughout the city· Reduced accident and injuries Increased civic pride and sense of community

Impacts of BRTS - The potential impact of this project can be seen on three stages- the design stage, construction stage and operational stage whereas positive impacts are observed such as Time saving benefits to transit users, Fuel Savings from public transport operations, Reduction in air pollution, Reduction in traffic congestion, Noise and vibration reduction, etc. Negative impacts on components of environment at design stage are Removal of Structures, Removal of trees and vegetation, Land Acquisition. Social Impacts are Impact on road safety and Accidents while environmental impacts are on air quality in that area and Change in SPM, CO, NO levels **(See in the last page)**

Climate - There are no adverse effects on climatic conditions such as temperature; wind etc. microclimate may get affected due to removal of vegetation and addition of road surface. There may be a temperature difference in the areas adjacent to road surface and other areas due to reduction in roadside plantation.

Physiography- BRTS Project may alter the local physiographic as well as the drainage pattern. Minor cut-and-fills are designed to improve the road geometry and parallel cross structure is added to improve drainage. These changes are minor as there will be a slight change in height and width of the road cross-section.

Drainage - There is no alteration of existing drainage system but there will be slight changes in drainage characteristics because of topographical changes. This project can only have a negative impact when the slopes created for the improvement of road geometry are not re-vegetated or stabilized.

Vegetation - Number of mature trees were cut during construction of BRTS corridor and compensatory plantation was planned by authority to reduce the impact and environmental degradation.

Ambient Noise - Noise, aptly defined as unwanted sound is one of the most undesirable consequences of road development. Crushing plants and asphalt production plants produce high noise levels, 90-100 dBA. Movement on vehicles, unloading of construction materials, construction activities are some of the sources during construction phase whereas heavy traffic adds to the noise pollution during operation phase. Average noise levels increase from 1 to 2 dB for each 10 km per hour increase in average traffic speed. The higher level of noise may because of continuous traffic flow on majority of road stretch which was a part of NH Carrying state traffic during day as well as night. But after implementation of BRTS the noise levels have considerably reduced due to free traffic flow and no congestion problem.

Observations - The transport sector also is a leading cause of local air pollution, causing two million air pollution-related deaths annually, according to the World Health Organization. The transport-related pollutants that impact human health include lead, particulate matter (PM), ozone (O_3), Volatile organic compounds (VOC), nitrogen dioxide (NO_2), carbon monoxide (CO), ammonia (NH_3) and Sulphur dioxide (SO_2). Air pollution also damages waterways, agriculture, and man-made structures, such as buildings.

Social Impacts - As with other indicators, the social impacts of a BRTS will depend on how the system is designed, some of these impacts are stated above.

Property expropriation and resettlement - Usually the greatest concern in social appraisal of infrastructure projects is with property expropriation and involuntary resettlement. Normally BRT systems will be designed in such a way as to minimize involuntary resettlement, and in fact BRTS frequently make it possible for municipalities to put off or stop all together new road projects which would have much higher levels of involuntary resettlement.

System Sociability - Public transport systems can also provide one of the few places in a city where all social groups are able to meet and interact. An affordable and high-quality system can attract customers from low income, middle income and high income sectors. This role as a common public good can be quite healthy in creating understanding and easing tensions between social groups. The new system may also mean that persons who previously had no travel options now can visit the entire city.

Safety - The separation of public transport vehicles from mixed traffic and the improvements to pedestrian crossings and traffic signalization are measures typically employed to make a new BRT operate efficiently. These same measures also tend to produce significant safety benefits. Thus reductions in vehicle accidents and pedestrian, accidents often accompany the implementation of a new system.

Design Stage - Plans should be made such that minimum vegetation is removed. Excavation should be avoided during monsoon to reduce soil erosion. Rainwater harvesting system should be proposed to reduce water runoff.

Some major social impacts like displacement of Para-Transit workers could be avoided by negotiation and compromise to ensure that at least some existing operators enjoy the benefits of the new system, while at the same time not holding the public interest hostage to the demands of these private interests.

Construction Stage - As majority of waste generated consist of concrete and masonry, recycling of this waste by conversion to aggregate can offer benefits of reduced landfill space and reduced extraction of raw material for new construction activity. Recycled aggregate can also be used as a sub base for road construction. Domestic waste generated from labor camps should be collected and composted on site along with the biomass from the land clearing activities. The non-compostable and non-recyclable portion of the waste should be collected and transported to

the nearest identified landfill site. Noise prone activities could be restricted to the extent possible during night.

OVERALL ENVIRONMENTAL IMPACT -

Analysis of air composition along the corridor: Pre BRTS and Post BRTS

Table showing the change in the Pollutant levels.

YEAR	SO2 Level	NO_x Level	SPM Level
2009	6.24	20.83	522.16
2012	3.36	19.12	412.80
2014	2.00	9.50	218.90

(Source- CPCB)

The data shows that level of pollutant has reduced.

Analyzing the characteristics of the city in terms of climate, socio economic activities, land use, network and connectivity, it was easily seen that the city enjoys a moderate climate, being centrally located it is well connected to all the regions, and being a state capital a large number of people are engaged in administrative activities, about 47% of the total land-use belongs to residential area, and that of transportation is 15%. Talking about the project, as 48% of the trips depend on public transportation, the BRTS is divided among 4 different corridors; all the corridors put together account for a total length of 44kms. All in all, the project is not only time saving, fuel saving, but also reduces traffic congestion and noise pollution. But as every job has its pros and cons, the project comes up with problems like, land acquisition and removal of green cover. The suggested measures from our side are that plans should be made such that minimum vegetation is removed, for every amount of removed vegetation, new green belt should be proposed.

Avoiding excavation during monsoon and noise prone activities during night will be of great relief to the city dwellers. Lastly, restriction of speed should also be imposed to reduce emission rate. Regular maintenance of the vehicle should be made mandatory.

Conclusion And Discussion - A sustainable transport system must provide mobility and accessibility to all urban residents in a safe and environment friendly mode of transport. The rapid growth in the number of motor vehicles has resulted in severe traffic congestion and air pollution in many cities of the country. Bus rapid transit (BRT) is a term applied to a variety of public transportation system using buses to provide faster, more efficient service than an ordinary bus line. The goal of these systems is to approach the service quality of rail transit while still enjoying the cost savings and flexibility of bus transit so the city can be self sustainable. BRTS Bhopal has improved access for local riders and advanced public transportation systems while reducing the environmental impacts of transportation. Moving people quickly, at a low cost, with reduced greenhouse gases and air pollutants helps cities grappling with rapid growth, congestion and environmental concerns.

- Level of pollutant reduced.
- The Carbon monoxide (CO) which is the major constituent of the vehicular emissions has reduced to considerable level.
- Improved air quality.

References :-

1. Draft Environment and social management, framework for the GEF-5 project on Efficient and Sustainable City Bus Services (ESCBS) for the Bhopal city, PPC: LEA associates South Asia Pvt Ltd., 2014
2. Bhopal Municipal Corporation. www. bhopalmunicipal .com
3. Environmental Impact Assessment for BRTS, www. isca. in
4. Bajracharya, Ashim (2008), The impact of modal shift on the transport ecological footprint, A case study of the proposed BRTS in Ahmedabad,India.
5. Chaurasia Devarshi , BRTS: A Sustainable way of city transport (case study of Bhopal BRTS) , (IJEAT). ISSN: 2249-8958,volume-3,issue-4,april2014.
6. APEC Energy database
7. Bhopal City Development Plan under JNNURM

Impact on Soil

Design Stage	Construction Stage	Operational Stage
● Loss of useful soil ● Generation of debris ● Wearing away of top soil	● Erosion of top soil· ● Contamination by lubricants and fuel ● Compaction of soil ● Contamination from wastes	● Spill from accidents ● Deposition of lead

Impact on Air

Design Stage	Construction Stage	Operational Stage
● Dust generation during dismantling Reduced buffering of air and noise pollution, ● Hotter and drier microclimate	● Dust generation ● Asphalt odour ● Noise, dust, pollution ● Odour/ smoke	● Noise ● Dust ● Pollution

Impact on water

Design Stage	Construction Stage	Operational Stage
• Siltation due to loose earth	• Change of drainage • Stagnant water pools in quarries • Decrease of ground water recharge area • Contamination by fuel and lubricants • Contamination by asphalt leakage • Contamination from overuse waste	• Spill contamination by fuel lubricants and washing of vehicles

Impact on Flaura and Fauna

Design Stage	Construction Stage	Operational Stage
• Loss of Biomass	• Loss of ground for vegetation Removal of vegetation/Tree Cutting • Lowered productivity use as fuel wood	• Impact of pollution on vegetation • Toxicity of vegetation
• Disturbance • Loss of Habitat	• Disturbance • Poaching	• Collision with traffic

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Impact Of armed Conflict On Economy And Tourism - A Study Of State Of Jammu And Kashmir

Mohd. Sajad Dar *

Abstract - During the last two and half decades Jammu and Kashmir has been under the political turmoil. During the turmoil hundreds and thousands of precious lives have been wasted. When we look into the circumstances in Jammu and Kashmir it is not only the precious lives that has been lost, other segments of the state also received a considerable down fall. In this study we have tried to identify the impact of this armed conflict on the economic growth in Jammu and Kashmir region with special reference to tourism sector. The specific objective of the study is to get the inferences about the impact of armed conflict on: (i) the overall Economy of Jammu and Kashmir (ii) tourism sector in Jammu and Kashmir.The study was conducted in two stages. In the first stage we have identified the relationship between the growth in the armed conflict and growth in economy of the state. Number of fatalities every year due to armed conflict has been taken as proxy for the growth in armed conflict and NSDP has been taken as the indicator of the economic growth. In the second stage the relationship between number of fatalities and tourist count has been identified. Thestudy finds a significant negative relationship between the growth in the armed conflict and economic growth of the Jammu and Kashmir. Also a significant negative relationship between the armed conflict and economy of the state was found to be occurring. Results revealed that with every unit increase in the armed conflict (which in this case is number of fatalities) decreases the NSDP by .065 units (unit is Rs in Billions). Also when we tried to identify the relationship between the armed conflict and tourism a very significant negative correlation between the two variables was found to be existing (correlation=-.65). While analyzing the impact of armed conflict on the tourist count of the state it was found to be having very high impact. The regression results imply that with every one unit increase in the armed conflict there is a decline of .232 units in the tourist count (here unit of tourist count is in thousands). Thus supports the results which were interpreted by the graphical representation. Implications of the study are also discussed.

Introduction - Kashmir is a stunning and captivating land that abounds with natural beauty. Adorned by snow-capped mountains, wildflower meadows, immense glaciers, and sparkling lakes, Kashmir has often been compared to heaven on earth. However, this pristine image of Kashmir has been replaced by a much more frightening one. India and Pakistan both claim ownership of Kashmir and this dispute has resulted in two major wars as well as thousands of deaths, human rights violations, and atrocious acts of aggression. The conditions of violence in Kashmir are beyond the minds of people. Suicide bombings, attacks by militant groups and open fire by security forces are the main reasons for hostility. Civilians are killed on a daily basis. Every year, there are countless reported cases of torture, rape, deaths in custody, extrajudicial executions, and disappearances. Indiscriminate violence has marked the area since 1989. During the turmoil it is not only the expensive and valuable lives that have been lost but it has also affected theeconomic condition of Kashmir very badly. Reluctance of businessmen to set up business and decline in the number of tourist count has very drastically affected the economy of the Jammu and Kashmir. During the Pre-militancy era the favorite destination was the beautiful Kashmir valley, but with the eruption of violence the tourist lands were deserted and also the people who used to visit Shri Mata Vaishno Devi shrine and Amarnath also diminished. From last few years jammu and kashmir has witnessed increase in number of the tourists to Vaishno Devi shrine, in Jammu region and to Leh in Ladakh Though the number of tourists to Srinagar has increased with the launch of the peace process, their specific targeting by the militants have led to decline in their numbers. The local people bemoan this tragedy befalling on them. In Kashmireconomy has been completely shattered due to ongoing turmoil. While earlier thousands of outsiders thronged to the city, now only hundreds visit the valley. The count of the tourists has fallen from millions in 1980,s to thousands during the peak of the turmoil. Violence has also directly affected other important sources of livelihood such as agriculture, horticulture, and the handicraft industry. These sectors have become the survival mechanisms for the local people but are not flourishing. The state is known for wide variety of agricultural and horticulture products. However, the conflict environment has prevented people from maximally utilizing this gift of the nature. The horticulture industry has also suffered directly

*Research Scholar, R.D.V.V., Jabalpur (M.P.) INDIA

as well as indirectly due to conflict situation.

Impact of armed conflict on the Economy of Jammu and Kashmir - Terrorism imposes significant economic effects on societies and will not only lead to direct material damage, but also to long term effects on the local economy. The identification and the estimation of these economic effects of terrorism have received broad attention in economic literature and research during the last few decades. Primary economic impact of terrorism "refers to the effects arising from the immediate aftermath of a terrorist event". These effects include the physical destruction of urban objects, and the human casualties (injuries and losses of human life). There is a direct relationship between the armed conflict and economy of the state. Armed conflict has led to decline in handicraft business, agricultural production and tourism count, especially in the late 1980 s (Mahapatra, 2007). Even basic infrastructure like power supply, roads, communication systems and drinking water remain poor because resources are diverted to counter-terrorism activities (Mahapatra, 2007). Likewise silviculture is not possible anymore since Kashmir s forests have become the perfect hiding place for terrorists. Inevitably there is a clear connection between terrorism and increasing unemployment as well. Statistics have shown that the employment rate declined from 44.3 percent in 1981 to 36.6 percent in 2001. Considering that the government is almost the only employer (due to the lack of private investments), that fact is not really surprising. Another very important cost of violence is the waste of human talent" and "loss of creativity that has stunted development and has forced people to think only of survival not of progress (Mahapatra, 2007). Quality of education has suffered dramatically since schools and universities are often closed or even come under fire because of terrorism related activities (Jarudi, 2002). What remains are thousands of low level educated students with no hope for a job driving them to enter into terror groups. Thousands of local boys turned to militant training across the border. The basic cause is not ideological or the jihad factor. Most went because they have nothing here. No future. No job. No hope. If they had hope, they would not go" (Jarudi, 2002). Thisevolution gave the aggrieved party the opportunity to demonstrate their displeasure against the government, however, those who perceived a slight chance to find employment elsewhere and had sufficient funds to leave Kashmir migrated to different parts of India (Ahmad & Hussain, 2011). As a matter of fact, Jammu & Kashmir s economic growth could not keep up with the national level (Ahmad & Hussain, 2011) and can exhibit only 5.27 percent annual growth during the first three years of the tenth five year plan in comparison to the national average of 6.6 percent (Finance & Planning Commission, 2007). Similarly, "in 2007, the per capita income of the state is only two-thirds of the national average in India (Finance & Planning Commission, 2007). The economic cost of the conflict cannot be confined to a particular sector of industry or investment prospect, but it had affected the important sources of livelihood of local people such as tourism, horticulture and handicraft industries also (Ahmad &Hussain, 2011). Nevertheless, terrorism and violence are not the only cause for Jammu & Kashmir s economic depression but "poor policy management, corruption and lack of infrastructure" as well (Mohapatra, 2007). So in this study we will identify how much terrorism has impact on the economy of the state.

Impact on armed conflict on the tourism of Jammu and Kashmir - Tourism which was thought to be the backbone of Jammu and Kashmir has been drastically affected by the evolution of the armed conflict. The state which was the favored situation of the tourists till 90 s has been deserted of the tourists for a very long time. Terrorism often causes cancellations and withdrawal of travel plans to certain destinations; though indicate the tourism industry as extremely indestructible (Chauhan & Khanna, 2009). The negative news by most of the international and national news channels makes it unthinkable to the people around the world to visit Jammu and Kashmir, because the way they present the news makes jammu and kashmir the terrorist paradise (Buckley and Klemm, 1993). Further it is suggested that locals and foreigners are equally likely to be involved in a crime scenario which causes the crucial variable "fear of the unknown and the risk" (Chauhan & Khanna, 2009). The news channels and reports play a very important role, the way they make situation worse in Jammu and Kashmir no one else has contributed to that. They make the dead bodies speculative in their news channels like they are showing some sort of miraculous objects not keeping in view the psychological effects they have on people. (Ashraf, 2008). In order to avoid "this intentional or unintentional damage to the travel business in Jammu & Kashmir, and to keep a positive image alive media and officers of the travel industry must cooperate and closely work together. In addition, the local tourism industry could try to implement common marketing strategies such as incentive airline tickets or hotel rate discounts (Sonmez & Graefe, 1998) to promote the destination and to limit the impact of militancy on this sector.In an attempt to gain a deeper inside view into the special relationship between terrorism and tourism many studies proposed that tourists (and sometimes also important sights) might be the perfect victim for terrorism since they are sensed as representatives of their countries and therefore cause a much higher media coverage and international attention. Consequentially, the involvement of the concerned countries of origin increases pressure on the actual targeted government and the worldwide publishing of the militants opinions makes travellers the best channel for militants to get the messages and demands across (Richter, 1983). In this regard also the attack on the tourist is perceived as attack on the government that is why tourists are sometimes attacked to show their anger against the government (Ryan, 1993). In Jammu and Kashmir many such incidents have also taken place where the people from the resistance have attacked the local and foreign tourists. So in this study we

will also try to identify the impact of armed conflict on the tourism of the state.

References :-

1. Ahmad, I. M. & Hussain, N. A. (2011): „Impact of Turmoil on Tourism of Kashmir. Journal of Economics and Sustainable Development 2(7), pp.1-7
2. Akhtar, S. (2007): „War on Terrorism & Kashmir Issue. Research Fellow, Institute of Regional Studies, pp. 1-9.
3. Arunatilake, A. et.aI. (1999), The Economic Cost of the War in Sri Lanka, Institute of Policy Studies, Colombo.
4. Ashraf, F. (2002): „Jammu and Kashmir Dispute: Examining Various Proposals for its Resolution. Published by The Institute of Strategic Studies in Islamabad, Series: Islamabad Papers (20), pp. 1-51
5. Chaudhary, P. (2002): „Religious Terrorism – The Latest Threat (Juxtaposition of Jammu s Heritage –Living and Vibrant versus Dead and Decaying. Strategies for the World s Cultural Heritage. Preservation in a globalized world: principles, practices and perspectives. 13th ICOMOS General Assembly and Scientific Symposium, Madrid, pp. 311-314

****

Marketing Potential In India Rural Market

Dr. Pradeep Kumar Sharma *

Introduction - Indian Rural Market - India consists of about 650,000 villages. These villages are peopled by about 850 million consumers making up for about 70 per cent of population and contributing around half of the country's Gross Domestic Product (GDP). Consumption patterns in these rural areas are steadily changing to increasingly resemble the consumption patterns of urban areas. Some of India's largest consumer companies serve one-third of their consumers from rural India. Owing to a constructive changing consumption trend as well as the probable size of the market, rural India provides a large and striking investment opportunity for private companies. India's per capita GDP in rural regions has grown at a Compound Annual Growth Rate (CAGR) of 6.2 per cent since 2000.

Opportunities in Indian Rural Market - Almost 70% of the Indian population lives in villages and rural areas. Rural India consumes almost 60% of the total goods manufactured in India with majority of the products coming from FMCG sector. Market research firm Nielsen expects India's rural FMCG market to reach a size of US$ 100 billion by 2025. According to another report by McKinsey Global Institute forecasts the annual real income per household in rural India to rise to 3.6 per cent 2025, from 2.8 per cent in the last 20 years. Rural market offers significant growth potential. Growing adaptability to innovative products is increasing in the minds of rural customers.

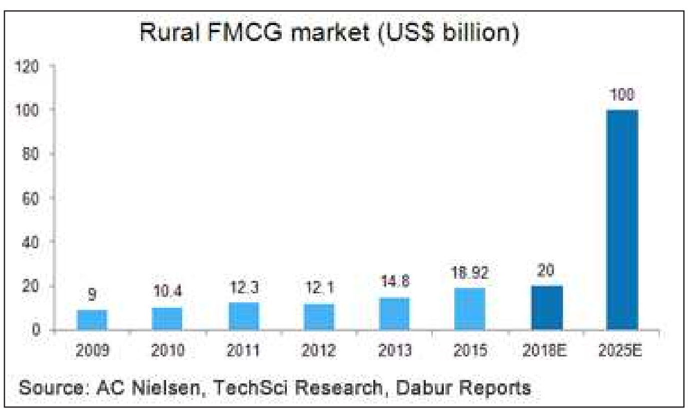

Rural Segment Quickly Gearing Up -

- In rural markets, durables like refrigerators as well as consumer electronic goods are likely to witness increasing demand in the coming years as the government plans to invest considerably in rural electrification.
- The Fast Moving Consumer Goods (FMCG) sector in rural and semi-urban India is expected to cross US$ 20 billion by 2018 and US$ 100 billion by 2025.
- The rural FMCG market extended at a CAGR of 13.2 per cent to US$ 100 billion during 2009–15.

Challenges in Indian Rural Market - Although the rural market does offer a huge untapped potential, it should also be recognized that it is not that easy to operate in rural market because of numerous problems. The major issues are as follows:-

Several Languages and Dialects - The existence of local languages causes major difficulty for companies in promoting their products in rural market and it is difficult for the companies to prepare promotional advertisements in every local language.

Low Literacy Level - It is hard to educate the potential consumers in rural market about products due to low level of literacy.

Logistic Problems - The deprived state of rural infrastructure is one of the major concerns of most of the companies planning to invest in this sector. Although the rural population is huge it is not possible to form an effectual distribution system and reach out to a considerable number of target consumers.

Seasonal and Variable Demand - Monsoon being the harvesting season in India and agriculture being the key occupation of majority of the rural population the demand for goods is majorly controlled in during the monsoons when the income is comparatively high.

Availability of duplicate and cheap brands in rural market - The existence of duplicate brands, which are quite common in rural parts, at lesser prices gives considerable competition to the firms.

Marketing Strategy in Rural India - A marketing strategy which is massively untapped by most of the companies is employing the villagers themselves to market the products.HUL has the lead the way in this form of marketing by the launch of the campaign HUL Shakti, where village women are employed to form a distribution network of HUL products in the rural areas. Employing local people for

* Professor (Commerce) Govt. Hamidia Arts & Commerce College, Bhopal (M.P.) INDIA

marketing particularly in areas where it is difficult to transport and commute was a ground-breaking way to increase accessibility and marketing of the Bottom of the Pyramid products.

In rural India marketing of a product mostly happens by the word of the mouth and by peer experiences of use of the product, due to the comparative less use of television and almost no access to internet. Research has also proved that if villagers are satisfied with the product they do not change their products frequently. As whole Brand loyalty is high in rural market. For that reason the primary aim of any firm should be to position their brand in the mind of the rural population well, during the initiation phase which will enable them to have a enduring and long lasting presence in the market. Companies should try to associate a good-will with their brand.

Government Initiatives for Rural Sector - With the growing demand for skilled labour, The Govt. of India plans to train 500 million people by 2022, and is looking out for corporate players and entrepreneurs to facilitate in this venture. Corporate, government, and educational organisations are amalgamating in the effort to train, educate and produce skilled workers.

The Govt. has decleared the Pradhan Mantri Krishi Sinchaee Yojana (PMKSY), with a proposed outlay of Rs 50,000 crore (US$ 746 million) spread over a period of five years starting from 2015-16. The scheme aims to supply irrigation to every village in India by converging various continuing irrigation schemes into a single focused irrigation programme. The Government of India aims to spend Rs 75,600 crore (US$ 11.28 billion) to supply electricity through separate feeders for agricultural and domestic consumption in rural areas.

The Government of India seeks to encourage innovation and technology development in the remote rural and tribal areas. The programme named 'Nav Kalpana Kosh' aims to improve rural areas at various levels, such as governance, agriculture and hygiene. Similarly many other efforts are being made by the Government for the upliftment of rural India.

Future or Rural Indian Market - With the effort of Government the rural regions are already well covered by basic telecommunication services and are now witnessing increasing penetration of computers and smart phones. Keeping in views these developments, online portals are being viewed as key channels for companies trying to enter and establish themselves in the rural market. The Internet has become a cost-effective means for a company looking to overcome geographical barriers and widen its reach. As is the trend with urban India, consumers in the rural regions are also expected to cuddle online purchases over time and drive consumption digitally.

References :-

1. Subramanian, R., Gupta, P. Leveraging the Indian rural opportunity: a new approach. Tata Strategic Management Group, 1-4.
2. Wath, M., Agarwal P. (2011). Rural marketing in Indian corporate world: issue and challenges. 1 (4),750-755
3. www.ibef.org
4. www.indianmba.com/occasionalpapers.

****

भारतीय बैंकिंग प्रणाली में गैर निष्पादनीय परिसम्पत्तियाॅ और पूँजी पर्याप्तता मानक

डॉ. विवेक कुमार पटेल * डॉ. पल्लवी मिश्रा **

शोध सारांश – बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बाद से भारत के सर्वांगीण विकास में वाणिज्यिक बैंको ने उल्लेखनीय भूमिका निभाई है लेकिन इसी के साथ–साथ विगत वर्षों में बैंकों की लाभदायकता गिरी है। नीची लाभदायकता का एक प्रमुख कारण बैंकों की गैर निष्पादनीय परिसम्पत्यिों (Non-Performing Assets) में भारी वृद्धि हो जाना है।

प्रस्तावना – गैर निष्पादनीय परिसम्पत्यिॉ बैंको एवं वित्तीय संस्थाओं द्वारा वितरित वे ऋण हैं जिनके मूलधन एवं उस पर देय ब्याज की वापसी समय से नहीं हो पाती या बिल्कुल नहीं हो पाती।

वर्तमान समय में भारतीय बैंकिंग क्षेत्र की एक प्रमुख समस्या NPAs में निरन्तर वृद्धि का होना है। मार्च 2006 के अन्त में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों, निजी क्षेत्र के बैंको तथा विदेशी बैंकों की NPAs क्रमश: रूपये 42106 करोड़ रू07782 करोड़ तथा रू0 1927 करोड़ रूपये थी जो मार्च 2010 तक और अधिक बढ़ गई। वस्तुत: NPAs से अभिप्राय बैंकों द्वारा प्रदन्त ऐसे सभी ऋणों और उन पर देय ब्याज से है जिनका भुगतान काफी विलम्ब से प्राप्त होता है या होता ही नहीं है। किसी वित्तीय वर्ष में मूल्यांकन का भुगतान 180 दिन तथा ब्याज का भुगतान 365 दिन से अधिक दिनों तक नही होने पर उस ऋण को गैर–निष्पादनीय या अनर्जक परिसम्पत्तियों के श्रेणी में शामिल कर लिया जाता है। आजकल बैंकों की लाभ–प्रदता की न्यूनता के लिए बढ़ती हुई NPAs को काफी हद तक उत्तरदायी ठराया जाता है। गैर निष्पादनीय परिसम्पत्तियों के बढ़ने से बैंकों तथा वित्तीय संस्थाओं की समस्या दो रूपों में बढ़ती है–

प्रथम – इस प्रकार से वितरित ऋणों पर बैंकों को होने वाली किसी भी आय को खातों में दर्ज नहीं किया जा सकता है।

द्वितीय – वसूल न किये जाने वाले ऋणों की एवज में बैंकों को नकदी का प्रावधान पृथक से करना होता है।

बैंको से वितरित ऋणों की निष्पादनीय एवं गैर निष्पादनीय रूपों में वर्गीकृत किया जाता है –

निष्पादनीय अथवा मानक परिसम्पत्तियाँ – बैंकों द्वारा वितरित ऐसे सभी ऋण निष्पादनीय परिसम्पत्तियॉ माने जाते हैं जिनका मूलधन एवं उस पर देय ब्याज समय से बैंक को प्रप्त होता रहता है। इसलिये इन्हे मानक परिसत्पत्तियों की संज्ञा दी जाती है। इसमें ऐसे ऋणों को भी शामिल किया जाता है जिनमें बकाया मूलधन तथा उस पर देय ब्याज का भुगतान क्रमश: 180 दिन तथा 365 दिन से अधिक समय तक किसी वित्तीय वर्ष में नहीं रोका जाता। इस प्रकार की परिसम्पत्तियों के लिये बैंको को किसी भी प्रकार का प्रवाधान नहीं करना पड़ता।

गैर निष्पादनीय परिसम्पत्तियॉ – बैंकों द्वारा वितरित ऐसे सभी ऋण और उस पर देय ब्याज गैर–निष्पादनीय परिसम्पत्ति के रूप में पहचाने जाते हैं जिसमें किसी वित्तीय वर्ष में मूलधन का भुगतान 180 तथा ब्याज भुगतान 365 दिन से अधिक दिनों तक रोक लिया जाता है गैर–निष्पादनीय परिसम्पत्तियों को पुन: निम्नलिखित 3 वर्गो में वर्गीकृत किया जा सकता है।

घटिया परिसम्पत्तियॉ या सब स्टैंडर्ड परिसम्पत्तियॉ – जब बैंकों द्वारा प्रदत्त ऋणों के मूलधन तथा उस पर देय ब्याज का भुगतान 2 वर्ष तक प्राप्त नहीं होता है तो ऐसे ऋणों घटिया परिसम्पत्तियॉ या सब स्टैंडर्ड परिसम्पत्तियॉ की श्रेणी में रखा जाता है। ऐसे ऋणों को न्यूनतम 1 वर्ष तक घटिया परिसम्पत्तियॉ ही मानी जाती है और बैकों द्वारा इनके पुनर्भुगतान की व्यवस्था करने हेतु नवीन अनुसूची (Schedule) तैयार की जाती है।

संदेहात्मक परिसम्पत्तियॉ – बैंकों द्वारा वितरित वह ऋण राशि जो 2 साल तक घटिया परिसम्पत्ति रह चुकी है किन्तु उनके वसूल होने की संभावना है संदेहात्मक परिसम्पत्तियॉ की श्रेणी में मानी जाती है इस श्रेणी में अधिकांशत: ऐसी बीमार या ऋण कम्पनियॉ द्वारा लिये गये ऋण आते हैं जिन्हें औद्योगिक एवं वित्तीय पुनर्निर्माण बोर्ड (BIFR) को संदर्भित किया जा चुका है। और बोर्ड की ओर से उन कम्पनियों के पुनरूत्थान हेतु उन्हें वित्तीय सहायता प्राप्त होना सुनिश्चित है।

क्षति परिसम्पत्तियॉ – बैंको द्वारा संवितरित वह ऋणराशि जिसके भुगतान वापसी की सम्भावनाऐं समाप्त हो चुकी है किन्तु अभी तक उन्हे अपलिखित नहीं किया गया है क्षति परिसम्पत्तियॉ कहलाती है। हॉलाकि इन ऋणों की वसूली की सम्भावना लगभग क्षीण हो जाती है फिर भी इनका कुछ न कुछ निस्तारण मूल्य (Salvage) अवश्य निर्धारित किया जाता है।

उल्लेखनीय है कि NPAs में हो रही वृद्धि को दृष्टिगत रखते हुए भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा अनेक कदम उठाये जाते है। वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय बैंकिंग प्रतिमानों के अनुरूप RBI ने भारतीय बैंकों कर NPAs के लिये प्रावधानीकरण मानक सुनिश्चित कर रखे हैं। अर्थात् बैंकों को ऋणों की वसूली न होने से होने वाली सम्भावित हानि के विरूध्द सुरक्षा के रूप में अपनी निधियों का एक निश्चित प्रतिरात पृथक से रखना अनिवार्य कर दिया गया है।तीन प्रकार की NPAs के लिए यह प्रतिशत अलग–अलग तय किया गया है, जैसे –

* विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला – अनूपपुर (म.प्र.) भारत
** अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय श0 के0 महाविद्यालय, मऊगंज, जिला, रीवा (म.प्र.) भारत

1. घटिया परिसम्पत्ति के दशा में	10%
2. संदेहात्मन परिसम्पत्ति की दशा में	20%
3. क्षति परिसम्पत्ति की दशा में	100%

31 मार्च 2011 को भारत के 20 उच्च बैंकों की गैर निष्पादनीय परिसम्पत्तियों को आगामी तालिका की सहायता से स्पष्ट किया गया है।

प्रमुख बैंकों की गैर-निष्पादनीय परिसम्पत्तिया (NPAs) 31 मार्च 2011 तक (राशि करोड़ रूपये में)

क्र.	बैंको के नाम	Gross NPAs	Net NPAs
01	ICICI Bank	10,034.26	2,407.36
02	State Bank Of India	25,326.29	12,347.90
03	State Bank Of Patiyala	1,381.68	620.77
04	State Bank Of Hydrabad	1150.45	562.72
05	Bank Of India	4,811.55	1,944.99
06	Bank Of Baroda	3,512.50	790.88
07	Union Bank Of India	3,622.82	1803.44
08	Punjab National Bank	4,379.39	2038.63
09	Indian Overseas Bank	3,089.59	1328.42
10	Oriental Bank Of Commerce	1,920.54	938.15
11	Canara Bank	3,089.21	2347.33
12	UCO Bank	3,150.36	1824.55
13	IDBI Bank	2,784.73	1677.91
14	Vijaya Bank	1,355.78	741.16
15	Syndicate Bank	2,598.97	1,030.84
16	Central Bank Of India	2,394.00	847.00
17	United Bank Of India	1,355.78	757.41
18	Allahabad Bank	1,647.92	736.37
19	Bank Of Maharashtra	1,173.70	610.95
20	Dena Bank	842.24	54.89

Source – RBI NPA Figures for the year ended march 2011

पूँजी पर्याप्तता मानक (Capital Adequacy Norms) – वैश्विक स्तर पर बैंको का सफल संचालन करने हेतु और उनकी उत्तरजीविता को बनाए रखने हेतु सन् 1988 में Bank For International Settlements BIS द्वारा स्विटजरलैंड में बासिल मुख्यालय पर एक समिति का गठन किया गया था। जिसे The Committee on Banking Regulations and supervisory Practices (Basel Committee) के नाम से पुकारा जाता है इस समिति द्वारा जुलाई 1988 में पूंजी पर्याप्तता व पूँजी प्रतिमानो के संदर्भ में दिशा निर्देश जारी किए गए इन निर्देशों को अनेक राष्ट्रों के केन्द्रीय बैंकों द्वारा स्वीकार किया गया। भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा 1 अप्रैल 1992 से इन दिशा निर्देशों का अनुसरण किया जा रहा है। इन दिशा-निर्देशों में पूँजी पर्याप्तता अनुपात (Capital Adequacy Ratio-CAR) बनाए रखने पर विशेष जोर दिया गया ताकि बैंकिंग प्रणाली को सुदृढ़ सक्षम और स्थायी बनाया जा सके। इन दिशा-निर्देशों को BASEL-I 1988 कहा जाता है। BASEL-I में उल्लेखित दिशा-निर्देशों की पालन करते समय बैंकों ने जाखिम मापन के प्रति कोई विशेष ध्यान नहीं दिया, परिणामस्वरूप अंतर्राष्ट्रीय बैंकिंग प्रणाली 2008-09 ने अधिक संकट की चपेट में आ गई है अनेक ख्यातिमान बैंक धाराशायी हो गये तथा विश्वस्तर पर एक गम्भीर संकट छा गया, सरकारो की ओर से अपने बैंकों को बचाने हेतु विशाल पैकेजेस दिये गये। फिर बैंकों की साख पर प्रश्न चिन्ह लग गया। ऐसी स्थिति में की घोषणा की गई, किन्तु BASEL-II में उल्लेखित Tier I Capital Fund और Tier-II Capital Fund की अवधारणा भी कमजोर पड़ गई और दिसम्बर 2010 में 'The BASEL Committee on Banking Supervision(BC BS)' द्वारा आयोजित बैठक में बसेल- खख के नियमों व उप- नियमों में संशोधन की मांग की गई। भारत सहित 28 देशों में इस बैठक में पूंजी पर्याप्तता व सरलता से संबंधित अनुपात मानको को स्वीकार किया गया। इन नवीनतम मानको को BASEL-III कहा जाता है।

वस्तुत: बैंकों के स्थायित्व तथा दीर्घकालीन उत्तरजीविता को कायम रखने के लिये पूंजी पर्याप्तता मानको तथा अनुपातो पर बल दिया जाता है। BASEL-II के अनुसार बैंक की जोखिम भारित सम्पत्ति (Risk Weighted Assets) और न्यूनतम पूंजी का मानक अनुपात 8 होना चाहिए भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा इसे 9 प्रतिशत के रूप में सुनिश्चित किया गया है। BASEL-III "The BASEL Committee On Banking Supervision के मुख्य दिशा-निर्देश निम्नवत् हैं-

- उत्तोलक अनुपात (Levexage Ratio) 3 प्रतिशत निर्धारित किया गया है और यह सन् 2018 से प्रभावी होगा।
- तरलता अनुपात के दो भागों में विभाजित किया गया है।
  - Short-Term : Liqudity Coverage Ratio(LCR) &
  - Long-Term : Net Stable Funding Ratio (NSFR)
- Tier – 1 पूँजी आवश्यकता को 4 प्रतिशत के स्थान पर 6 प्रतिशत कर दिया गया है।
- 3 प्रतिशत की कुल आवश्यकता तथा 'Tier-1 पूँजी आवश्यकता' के अन्तर की पूर्ति Tier-2 Capital Requirement से की जा सकती है।
- सामान्य समता और लाभों का पुन: विनियोजन (Common equity and Retained earning) को ऋण उपकरणों के बजाय ज्यादा महत्व दिया जाना चाहिए।
- Tier-1 Capital Requirment के कुछ तत्वों ख्याति, अदृश्य परिसम्पत्तियॉ स्थगित कर सम्पत्तियॉ (Kreffered Tax Assets) आदि आयोग्य घोषित कर दिया गया है-

बॉसेल-1 और बॉसेल-2 के अनुसार पूँजी आवश्यकता (Capital Requirment) की तुलनात्मक अध्ययन निम्नांकित तालिका से किया जा सकता है-

	बॉसेल-1 BASEL-1	बॉसेल-2 BASEL-2	भारत India
Tier-1	4%	6%	6%
Core Tier-1	2%	4-5%	-
Tier-1+Tier-2	3%	8%	9%
Conserration Buffer	NA	2-5%	NA
Counter Cyclical Buffer	NA	0-25%	NA
Total Capital	8%	10.35%	9%
Requirments		13.0%	

हालॉकि बासेल-3 को लागू करने हेतु भारतीय बैंकिंग उद्योग जोखिम प्रबन्धन और पूँजी पर्याप्तता अनुपात की पूरी तैयारी कर रहा है। फिर भी विशेषज्ञों के मतानुसार भारतीय रिजर्व बैंक को अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, इन चुनौतियों को निम्नांकित तालिका की सहायता से समझा जा सकता है। **(देखे अगले पृष्ठ पर)**

निष्कर्ष – उल्लेखनीय और चिन्ताजनक तथ्य यह भी है कि आज भी भारतीय बैंकों का पूँजी आधार (Capital Base) बहुत कम है। और सभी बैंकों में इस संदर्भ में एकरूपता भी नही है। RBI द्वारा प्रत्येक बैंक के लिए 9% का पूँजी

पर्याप्तता अनुपात (उअठ) निर्धारित किया गया है। किन्तु अधिकांश व्यापारिक बैंकों का यह अनुपात 9% से कम है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. Dr. O.P. Sharma & Dr. K.K. Sharma UGC.NET
2. Manu Prakash Shrivastava VCG. (NET) IRP RBI NPA Figures for the year march 2011 The Indian Banker, Volume VI No. 03 march 21
3. www.rrb.org.in
4. www.indianbank.co
5. www.indiabankbranches.com

बसेल – 3 Liquidty Coverage Ratio Stock of rightLiqudity Ratio=Quality Liqudity Assets Net Cash outflows over 30 daysTime Period =100% Net Stable funding Ratio (NSPR) available amount of stable funding Required amount of stable funding 100%	R.B.I. के वर्तमान मानक Number of Days 2-7, 3-14, 15-20 maximum permissible 5%,10%, 15%, 20% gap (A5% of outflows) No Such Norms

Source : The Indian Banker Volume VI No 3 March 2011 – P 5.5

****

भारत की प्रगति का सशक्त घटक- कौशल विकास

डॉ. सीता चतुर्वेदी *

प्रस्तावना – हमारा भारत वर्ष अनेकता में एकता का प्रतीक है जिस में विभिन्न धर्मों और जातियों के लोग निवास करते है। जनगणना 2011 के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या 121 करोड़ है जिसमें 67.2 करोड़ व्यक्ति 15–59 वर्ष की आयु के है, जिन्हें सामान्यतया कार्यशील जनसंख्या माना जाता है। इनमें से लगभग 25 करोड़ व्यक्ति 15 से 24 वर्ष की आयु के है जो वर्ष 2011 की कुल जनसंख्या का 21 प्रतिशत है। अन्य शब्दों में हम यह कह सकते है कि हमारा देश युवा शक्ति से सम्पन्न देश है यदि हम इस शक्ति, का सही सद्धपयोग करेगे तो देश के आर्थिक विकास में मदद मिलेगी। अन्य शब्दों में युवा ऊर्जा किसी भी देश के सामाजिक एवं आर्थिक विकास को गति देने वाली ताकत बन सकती है बशर्ते उसे एक सही दिशा और मार्गदर्शन प्राप्त हो जाए। हमारे देश में शिक्षा का स्तर अत्यंत सुदृढ़ है। बस, आवश्यकता है कि हम इन शिक्षित युवाओं की शक्ति का सदुपयोग विनिर्माण के क्षेत्र में करे और इसके लिए सम्पूर्ण हिन्दुस्तान को अपने बल का प्रयोग करना होगा। माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने देश की इस ताकत को पहचाना है और 25 सितम्बर 2014 को 'मेक इन इंडिया' कार्यक्रम का शुभारंभ किया, यह कार्यक्रम भारत सरकार द्धारा प्रस्तावित एक कार्यक्रम की श्रृंखला है जिसके अन्तर्गत भारत में अपने उत्पादों का निर्माण करने के लिए बहुराष्ट्रीय कम्पनियों और घरेलू कम्पनियों को प्रोत्साहित करने का कार्य सम्पन्न किया जा रहा है। इसी कार्यक्रम की श्रृंखला से जुडी सुशक्त कड़ी कौशल विकास के क्षेत्र को विस्तृत रूप दिया गया है जिसके अन्तर्गत ऑटोमोबाईल, रसायन, आई टी, फार्मा, वस्त्र, बंदरगाह, विमानन, चमड़ा, पर्यटन और आतिथ्य कल्याण, रेल्वे, डिजाइन, विनिर्माण, अक्षय ऊर्जा, खनन, जैव प्रौद्योगिकी और इलेक्ट्रानिक्स से जुडे क्षेत्रों में रोजगार सृजन संबंधी कार्य सम्पन्न किए जा रहे है। इस कार्यक्रम की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि अंतरिक्ष (74%), रक्षा (49%) और समाचार मीडिया (26%) को छोड़कर शेष सभी क्षेत्रो में 100% FID निवेश की अनुमति प्रदान की गई है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत उच्च गुणवत्ता मानको को स्थापित कर पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभाव को न्यूनतम करना है, जिसके परिणामस्वरूप भारत में पूंजी और प्रौद्योगिकी को आकर्षित करने में मदद मिलेगी।

क्या है यह मेक इन इंडिया – सरल शब्दों में इसका अर्थ है कि अच्छी और जरूरत की वस्तुओं में गुणवत्ता का निर्माण अधिक से अधिक भारत में होगा। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रधानमंत्री चाहते है कि आवश्यक वस्तुओं के पैकेट या वस्तु पर मेड इन इंडिया लिखा हो यह शब्द किसी वस्तु अथवा पैकेट पर तभी अंकित हो सकता है जब कि उस वस्तु का निर्माण भारत में हुआ हो।

उदाहारणार्थ – सेंमसंग मोबाईल के पीछे या सेमसंग मोबाईल के पैकेट पर अंकित जानकारी पर यदि हम नजर डाले तो ज्ञात होता है कि उस पर मेड इन कोरिया लिखा होता है क्यों कि सेमसंग कोरिया में बनता है। इससे यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि जो वस्तु जहाँ भी निर्मित अथवा तैयार होती है उस पर उसी जगह अथवा स्थान का नाम अंकित होता है।

क्या होता है इसका फायदा – इसका सबसे बड़ा फायदा यह होगा कि देश में निर्मित वस्तु की कीमत कम होगी। इसके अलावा अगर वस्तु का निर्माण भारत में ही होगा तो उस वस्तु का निर्यात कर राजकीय खजाने को भरा जा सकता है।

लक्ष्य –

- मध्यावधि की तुलना में विनिर्माण क्षेत्र में 12–14 प्रतिशत प्रतिवर्ष वृद्धि करने का लक्ष्य।
- देश के सकल घरेलू उत्पाद में विनिर्माण की हिस्सेदारी 2022 तक 16 से 25 प्रतिशत करना।
- विनिर्माण क्षेत्र में 2022 तक 100 मिलियन अतिरिक्त रोजगार सृजित करना।
- ग्रामीण प्रवासियों और शहरी गरीब लोगों में समग्र विकास के लिए समुचित कौशल का निर्माण करना।
- घरेलू मूल्य संवर्द्धन और विनिर्माण में तकनीकी ज्ञान में वृद्धि करना।
- भारतीय विनिर्माण क्षेत्र की वैश्विक प्रतिस्पर्धा में वृद्धि करना।
- भारतीय विशेष रूप से पर्यावरण के संबंध में विकास की स्थिरता सुनिश्चित करना।

शोध का उद्देश्य – प्रस्तुत शोध आलेख का उद्देश्य प्रबंध व्यावहारिक एवं उपयोगितावादी दोनों ही मान्यताओं पर आधारित है, जिसके अन्तर्गत शासन द्धारा संचालित विशेष कार्यक्रम मेंक इन इंडिया एवं कौशल विकास से संबंधित समस्त महत्वपूर्ण विषय बिन्दुओं पर प्रकाश डाला जायेगा।

परिकल्पनाएँ–

- यह कार्यक्रम सभी वर्ग के कौशल श्रमिकों को तैयार करने में प्रभावी होगा।
- यह कार्यक्रम देश की आबादी को रोजगार उपलब्ध कराने में सफल होगा।

प्रविधि–प्रस्तुत शोध अध्ययन में आँकड़ो के एकत्रीकरण हेतु द्वितीयक समंको का सहयोग लिया गया है।

भारत में कौशल विकास परिदृश्य – हुनरमंद हाथों की जरूरत देश और समाज को हमेशा रही है। देश और समाज के विकास में यह जरूरी तत्व है कि हर हाथ हुनरमंद हो और हर हाथ में कुछ न कुछ करने का कौशल हो, कोई भी उत्पादन क्षेत्र बिना कुशल जनशक्ति के सफल नहीं हो सकता। इसी सिलसिले में यह संतोषजनक बात है कि सरकार ने कौशल विकास की दिशा में नए उपाय किए है। जिसके हमें भविष्य में सार्थक परिणाम देखने को मिलेगे। हम कौशल को अहम् विषय इसलिए मान रहे है क्योंकि हमने आज के युवा को शिक्षित कर दिया है किन्तु क्या केवल उसे शिक्षित मात्र कर देने से उसे

* (वाणिज्य विभाग) अटल बिहारी वाजपेयी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

भविष्य में रोजगार अथवा अजीविका का साधन प्राप्त हो पायेगा। इस विषयबिन्दू पर विचार करना हम सबके लिए सबसे अहम् विषय है।

आँकड़ो पर गौर करे तो नेशनल सैंपल सर्वे (एनएसएसओ) के मुताबिक देश में सिर्फ 3.5 प्रतिशत युवा ही हुनरमंद है, जबकि देश को 12 करोड़ कौशल श्रमिको की आवश्यकता है। यदि हम हुनर और कौशल की स्थिति पर भारत का आंकलन करे तो इसकी स्थिति संतोषजनक प्राप्त नही होती हैं आँकड़ो का यदि हम अध्ययन करे तो पूर्णत: स्पष्ट होगा कि चीन 45 प्रतिशत, अमेरिका में 56 प्रतिशत, जर्मनी में 74 प्रतिशत, जापान में 80 प्रतिशत और दक्षिण कोरिया में 16 प्रतिशत लोग कौशल प्राप्त है। अत: इन सभी आँकड़ो से स्थिति पूर्णत: स्पष्ट हो गई है कि अभी हमे अपनी कौशल क्षमता में कितना सुधार करना है। इसलिए इस विषय बिन्दूओं पर ध्यान देते हुए वर्तमान सरकार ने 'स्किल इंडिया मिशन' की शुरूआत की है। प्रधानमंत्री के इस ड्रीम प्रोजेक्ट 'स्किल इंडिया' का मुख्य लक्ष्य 2022 तक 40 करोड़ से ज्यादा लोगो को हुनरमंद अर्थात् कौशल में निपूर्ण बनाना है।

एनएसएसओं द्वारा वर्ष 2011-12 में कराए गए अंतिम सर्वेक्षण के अनुसार, भारत की आबादी 1,267 अरब से अधिक है और कामगारो की संख्या 4741 लाख है, जिनमें से 3369 लाख ग्रामीण कामगार है और 137.2 मिलियन शहरी कामगार है। वर्ष 2010 में बेरोजगारी से सम्बन्धित रजिस्टर में चार करोड़ 17 लाख लोग पंजीकृत थे। बेरोजगारी की 8.8 प्रतिशत दर और प्रतिवर्ष लगभग 1.5 प्रतिशत की दर से बढ़ती आबादी में सभी को सार्थक रोजगार मुहैया कराना सचमुच एक चनौतीपूर्ण कार्य है। जनसांख्यिकीय संदर्भ में करीब 35 प्रतिशत भारतीयों की आयु 15 साल से कम है और करीब 50 प्रतिशत आबादी 25 साल से कम उम्र की है भारत की मध्यम आयु 24 वर्ष है, जो दुनिया की सबसे कम उम्र वाली जनसंख्याओं में से एक बनती है।

कौशल विकास कार्यक्रम में महिलाओं को विशेष प्रोत्साहन - 2001 की जनगणना के मुताबिक देश की कुल जनसंख्या की 48% महिलाएँ है। महिलाओं द्वारा चलाए जा रहे उद्योग भारतीय अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण अंग है और देश के विकास को बढाने में एक सामरिक भूमिका निभा रहा है। सरकार की स्किल इंडिया योजना में लड़कियाँ और महिलाएँ अधिक से अधिक अपनी उपस्थिति दर्ज करा पाए इस हेतु शासन द्वारा महिलाओं को स्थानीय आवश्यकता के अनुसार दोपहर पारी में अध्ययनसुविधा उपलब्ध कराई गई है। इस योजना के लिए सरकार की समस्त व्यवस्थाएँ सम्पन्न हो चुकी है। कौशल विकास केन्द्रों में महिलाओं की अधिक से अधिक भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु शासन ने महिला वर्ग हेतु आरक्षण व्यवस्था लागू की है। स्किल इंडिया के तहत जिन क्षेत्रों में महिलाओं की दक्षता को संवारने की बहुत अधिक आवश्यकता है वह है हस्तशिल्प अर्थात् हाथ से निर्मित अथवा तैयार वस्तुएँ। यह पूर्णत: सत्य है कि हस्तशिल्प यानि हाथो से निर्मित वस्तुओ, सिलाई-कढ़ाई, रेशम उद्योग के क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी अत्यंत ही सराहनीय है किन्तु खेद का विषय है कि महिलाएँ जिस कार्य को इतनी लगन और मेहनत से सम्पन्न करती है उस वस्तु को बाजार में अत्यंत ही न्यून मूल्य पर अंका जाता है। परिणाम स्वरूप उन्हें अत्यधिक न्यून राशि पारिश्रमिक के रूप में प्राप्त होती है अत: महिलाओं को उनके कार्य का उचित पारिश्रमिक प्राप्त हो और वह इस क्षेत्र में अपनी एक विशिष्ट पहचान बनाने में सफल हो इस दिशा में शासन उन्हें तकनीकी सुविधाएँ स्किल इंडिया के तहत प्रदान करेगा। इससे कौशल विकास से हमारे राष्ट्र को दो महत्वपूर्ण परिणाम प्राप्त होंगे **प्रथम** भारत की पुरानी सभ्यता बरकरार रहेगी। **द्वितीय** कुशल श्रमिक वर्ग अधिक से अधिक पारिश्रमिक का अर्जन करने में सफलता प्राप्त करेगा। यदि हम कपड़ा उद्योग के श्रमिक वर्ग के आँकड़ो पर नजर डाले तो हमें ज्ञात होगा कि इस क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका बढ़-चढ़कर है ध्यान देने योग्य बात ये है कि कपड़ा क्षेत्र में समग्र रूप से विकासशील देशों में एक तिहाई से अधिक और एशियाई देशों में पचास प्रतिशत तक महिलाएँ है। भारत में श्रम-बल की स्थिति 50.4 प्रतिशत है। देश में 23 लाख बुनकर है जिनमें 80 प्रतिशत महिलाएँ है। उत्तरपूर्व के कई राज्यों में बुनकर का काम महिलाओं का ही कार्यक्षेत्र है। यहाँ रेशम से जुड़ी अलग-अलग गतिविधियों में महिलाओं की भागीदारी 54 प्रतिशत तक है। इस क्षेत्र में सरकार का कौशल विकास यदि सफल होता है साथ ही महिलाओं को तकनीकी ज्ञान प्रदान किया जाता है तो यह आँकड़ा परिवर्तित होने में अधिक समय नही लगेगा।

मेक इन इंडिया एवं स्किल डेवलपमेन्ट के लाभ-

- भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा 2014-15 के लिए हाल ही में जारी वार्षिक रिपोर्ट यह स्पष्ट करती है कि भारत की संवृद्धि का परिदृश्य लगातार सुधर रहा है और वास्तविक गतिविधियों के सूचकांक इसके सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में 7.6 प्रतिशत वृद्धि के अनुमानों के अनुरूप हैं।
- शासन में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (FDI) के नियमों में शिथिलता प्रदान की है ताकि देशी और विदेशी कम्पनियाँ अपने उत्पाद भारत में बनाने और विदेश में सरलतापूर्वक विक्रय करने में सफल हो सके।
- यह अनुमान भी लगाया जा रहा है कि मेक इन इंडिया से विभिन्न क्षेत्रों में विनिर्माण की गतिविधियों में वृद्धि दर्ज होगी और जीडीपी में उनका योगदान भी बढ़ेगा।
- विनिर्माण गतिविधियों में वृद्धि से कुशल कार्यबल के लिए भारी संख्या में रोजगार सृजन होगा।
- प्रतिव्यक्ति आय में सुधार होगा।
- आरंभिक स्तर के पदों पर रिक्तियों का प्रमुख कारण कौशल में कमी है जिसे हम भविष्य में दूर करने में सफल होगे।
- भारत की जनसंख्या का एक बड़ा भाग युवा वर्ग जो कि कुल जनसंख्या का 50 प्रतिशत है इन्हें हम कौशल विकास के माध्यम से भविष्य में सरलता पूर्वक रोजगार का सृजन करने में सफल होंगे।

निष्कर्ष एवं सुझाव - भारत समस्त राष्ट्रो के बीच में अपनी एक पहचान बनाने के लिए लगातार प्रयत्नशील है और वह इस कार्य के लिए अपनी युवा शक्ति का विवेकपूर्ण ढंग से प्रयोग करना चाहता है किन्तु यह भी पूर्णत: सत्य है कि भारतीय नियोक्ता कुशल मानव बल की जबरदस्त किल्लत से जूझ रहे है। कारण: रोजगार के लिए आवश्यक विशेषज्ञता की कमी। भारतीय शिक्षा व्यवस्था शानदार मस्तिष्को को जन्म देती रही है, लेकिन रोजगार विशेष के लिए जरूरी कौशल की उसमें कमी है। श्रम ब्यूरो की 2014 की रिपोर्ट के अनुसार भारत में औपचारिक रूप से कुशल कार्यबल वर्तमान आकार केवल 2 प्रतिशत है। युवाओं को कौशल प्रदान करने के लिए शिक्षा का व्यवसायीकरण बेहद महत्वपूर्ण हैं उसके साथ ही समाज के अन्य वर्गो जैसे महिलाओं, हाशिए पर पड़े लोगों, आदिवासियों आदि को ऐसे प्रशिक्षण कार्यक्रम की आवश्यकता है, जो उनकी विविध एवं विशिष्ट जरूरतों के अनुसार हो। हाशिए पर पड़े अधिकतर वर्गो को कौशल प्रशिक्षण प्रदान करने मे निरक्षरता एक समस्या हो सकती है। लेकिन महिलाओं को कौशल प्रषिक्षण प्रदान करने में पारिवारिक मसलो और सामाजिक बंधनों से भी जूझना पड़ सकता है। किसी भी कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए इन तथ्यों को ध्यान में रखने की आवश्यकता है। वर्तमान समय में स्किल इंडिया मिशन देश का

सबसे बड़ा अभियान है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत सरकार असंगठित क्षेत्र के लोगों को प्रशिक्षण देगी। सरकार इस मिशन के जरिए युवाओं को हुनरमंद बनाकर रोजगार के काबिल बनाएगी जिसके लिए हर राज्य में कौशल विश्वविद्यालय स्थापित करेगी। इस मिशन के लिए सरकार ने इस साल बजट में 5,040 करोड़ रूपये आवंटित किए है इसके साथ ही शासन का मुख्य मिशन मेक इन इंडिया की सफलता के लिए भी कार्यक्रम जारी रखेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. चिनाय दिलीप, योजना (2015) 648, सूचना भवन, सीपीओ परिसर, लोधी रोड़, नयी दिल्ली-110003, भारत में कौशल विकास परिदृश्य की नयी परिभाषा, पृष्ठ क्रमांक 9-11
2. कुमारी पवन रेखा योजना (2015) 648, सूचना भवन, सीपीओ परिसर, लोधी रोड़, नयी दिल्ली-110003, स्किल इंडिया फ्रेमवर्क: आधी आबादी के लिए पूरा मौका, पृष्ठ क्रमांक-35-37
3. मंथा एस.एस. योजना (2015) 648, सूचना भवन, सीपीओ परिसर, लोधी रोड़, नयी दिल्ली-110003, कौशल: भारत की प्रगति का अनिवार्य घटक, पृष्ठ क्रमांक-32
4. शर्मा तरूण कुमार योजना (2015) 648, सूचना भवन, सीपीओ परिसर, लोधी रोड़, नयी दिल्ली-110003, कौशल विकास में चुनौतियाँ एवं उघमिता, पृष्ठ क्रमांक- 63-65
5. सिंह शीलवन्त, रस्तोगी कृति, सारिका, निबंध (2015), ऐसस पब्लिशिंग इंडियन प्राइवेट लिमिटेड, पृष्ठ क्रमांक IV 34
6. www.businessinsider.in
7. www.mpsofindia.com
8. www.allonmoney.com
9. www.thehindu.com
10. www.yojana.gov.in

****

व्यवसायिक वातावरण एवं उसके घटक

डॉ. ज्योति जायसवाल *

शोध सारांश – व्यवसायिक वातावरण एक ओर जहॉ देश के आर्थिक विकास, समृद्धि एवं रोजगार का मार्ग प्रशस्त करता है वही दूसरी ओर उपयुक्त व्यवसायिक वातातरण के अभाव में गरीबी, भुखमरी, बेरोजगारी एवं अशान्ति की स्थितियॉ सम्पूर्ण अर्थतंत्र को झकझोर देती है। बदलते हुये परिवेश का मूल्यांकन, पूर्वानुमान एवं इसके प्रभावों का निर्धारण करने के पश्चात ही व्यवसाय द्वारा सफलतापूर्वक अपनी नीतियों एवं योजनाओं का निर्माण किया जा सकता है।

शब्द कुंजी –व्यवसाय, वातावरण, समाज, मूल्य, आर्थिक घटक।

प्रस्तावना – व्यवसाय राष्ट्र एवं समाज के वातावरण में रहकर अपनी क्रियाओं को संचालित करता है। सरकार की नीतियॉ एवं निर्णय समाज के मूल्य, विश्वास एवं लक्ष्य, वैधानिक नियमों का ढॉंचा, राजनैतिक प्रणाली, नैतिक स्तर एवं मान्यताऍ तथा सम्पूर्ण आर्थिक परिवेश व्यवसाय को प्रतिपल प्रभावित कर रहा है या निर्मित कर रहा है। समाज की बदलती हुई विचारधाराऍ, प्रबंध का नया दर्शन, परिवर्तनशील औद्योगिक तथा सांस्कृतिक परिवेश सभी कुछ व्यवसाय को छूता है तथा नये स्वरूप एवं नई मान्यताओं को ग्रहण करने के लिये व्यवसाय को बाध्य करता है।

इसप्रकार जो व्यवसाय बदलते हुये परिवेश में अपनी कार्यपद्धतियों, उत्पादन प्रणालियों संगठन संरचनाओं, नेतृत्व शैलियों, दर्शन व लक्ष्यों में नवीनता नहीं लाता है समाज की रचना में उसका कोई योगदान नही होता है।

इसप्रकार यह स्पष्ट है कि व्यवसायिक वातावरण विभिन्न गतिशील, जटिल व अनियंत्रित बाह्य आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, भौतिक व तकनीकी घटकों का योग है जिनके अंदर व्यवसाय को कार्य करना पड़ता है। वातावरण ही व्यवसाय को नये आकार, स्वरूप व नयी भूमिकाऍ, मान्यताऍ, व नये तेवर ग्रहण करने को बाध्य करता है। अनेक परिस्थितियों में नये अवसरों की खोज में वातावरण से व्यवसाय को प्रोत्साहन व एक नयी ऊर्जा प्राप्त होती है, और यह भी सत्य है कि व्यवसाय भी वातावरण के परिवर्तन में महत्वपूर्ण घटक होता है।

उद्देश्य –

1. व्यवसाय के सफल संचालन हेतु व्यवसायिक पर्यावरण की स्थिति का ज्ञान प्राप्त करना।
2. व्यवसायिक पर्यावरण की परिवर्तनशीलता के बारे में ज्ञान प्राप्त किया जा सके, ताकि पर्यावरण द्वारा उपस्थित किये जाने वाले प्रतिरोधों एवं चुनौतियों का मुकाबला किया जा सके।
3. देश की आर्थिक क्रियाओं के विकास के लिये पर्यावरण का आधिकाधिक प्रयोग किया जा सके।

व्यवसायिक वातावरण के घटक – इसे मुख्य रूप से दो भागों में बॉटा जा सकता है।

1. आंतरिक घटक
2. बाह्य घटक

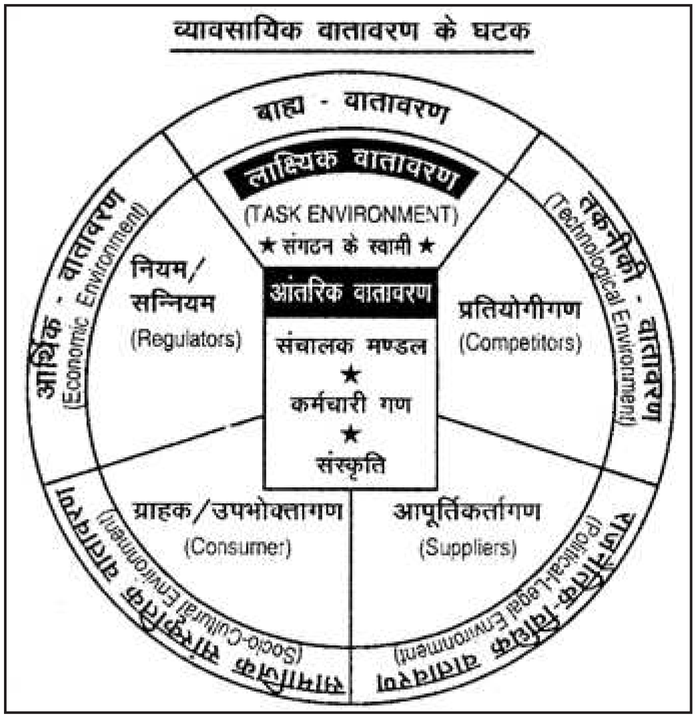

व्यवसाय का आंतरिक वातावरण–व्यवसाय के आन्तरिक वातावरण पर नियंत्रण रखना आसान होता है। लेकिन इसमें भी निरंतर जटिलताऍ एवं बाधाऍ उत्पन्न होती रहती है इसलिये व्यवसाय के आन्तरिक वातावरण की पहचान करना तथा इसे पूर्ण रूप से समझना व्यवसाय का प्रथम दायित्व हो जाता है।

व्यवसाय के आन्तरिक वातावरण के महत्वपूर्ण घटक निम्न है।

1. व्यवसायिक लक्ष्य एवं उद्देश्य
2. व्यवसायिक एवं प्रबंधकीय नीतियॉ
3. व्यवसायिक संसाधनों की उपलब्धि, कार्यशीलता एवं उपादेयता
4. व्यवसायिक संगठन संरचना, विकेन्द्रीकरण, विभागीयकरण, दायित्व, भूमिकाऍ, शक्ति, समूह दबाव
5. व्यवसायिक प्रबंध सूचना प्रणाली एवं सम्प्रेषण व्यवस्था

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोतर महाविद्यालय, मुरैना (म.प्र.) भारत

6. व्यवसायिक दृष्टि एवं व्यवसायिक दायित्वों के प्रति दृष्टिकोण

व्यवसाय का बाह्य वातावरण–व्यवसायिक वातावरण के वे तत्व जो फर्म के नियन्त्रण में नहीं रहते है, व्यवसाय किसी की रिक्तिता में संचालित नहीं किया जाता, वरन समाज के अन्तर्गत कार्यशील विभिन्न शक्तियों, दशाओं एवं तत्वों की अनुक्रिया में किया जाता है, ये वातावरण की वास्तविक व्यवसाय के संचालन एवं प्रगति को प्रभावित करती रहती है अत: व्यवसायिक निर्णय कर्ताओं को सदा वातावरण के प्रभावों को स्वीकार करके अपनी योजनायें बनानी चाहिये।

बाह्य वातावरण के महत्वपूर्ण घटक निम्नलिखित है–

1. **आर्थिक घटक**–इसमे आर्थिक घटनायें, आर्थिक नीतियॉ, मॉग एवं पूर्ति विनियोग, औद्योगिक प्रवृत्तियॉ, वित्तीय एवं आर्थिक दबाव, विनियोग प्रवाह व स्तर, आयात–निर्यात, राजकोषीय व कराधान नीतियॉ मौद्रिक नीति आदि सम्मिलित किये जाते है।

व्यवसाय के आर्थिक वातावरण में मुख्यत: तीन घटको का समावेश होता है।

(अ) आर्थिक प्रणाली –देश में किस प्रकार की आर्थिक प्रणाली अपनायी गयी है, इसका भी व्यवसाय पर प्रभाव पड़ता है पूॅजीवादी अर्थव्यवस्था में व्यवसाय की पूरी स्वतंत्रता रहती है, तो साम्यवादी अर्थव्यवस्था में सरकार का पूर्ण नियंत्रण रहता है। भारत जैसे देश में मिश्रित अर्थव्यवस्था अपनायी गई है जिसमें सार्वजनिक एवं निजी दोनों क्षेत्रों का सह–अस्तित्व होता है।

(ब)आर्थिक नीतियॉ –किस देश की आर्थिक नीति उस देश में पनपने वाले व्यवसाय, उद्योग एवं आर्थिक क्रियाओं को महत्वपूर्ण ढंग से प्रभावित करती है।एक देश की आर्थिक नीतियों में निम्नलिखित नीतियॉ मुख्यत: सम्मिलित है –

1. औद्योगिक नीति
2. औद्योगिक अनुज्ञापन नीति
3. मौद्रिक नीति
4. राजकोषीय नीति
5. कर नीति

(स) आर्थिक दशायें–प्रत्येक प्रकार का व्यवसाय आर्थिक वातावरण से प्रभावित होता है। पूॅजी, संयत्र एवं मशीने, भवन, स्टॉक, कार्यालय, उपकरण, नगद संसाधन आदि व्यवसाय को गहन रूप से प्रभावित करते है। अर्थव्यवस्था में कुशल श्रमिकों एवं तकनीशियों की उपलब्धि एवं कीमत भी व्यवसाय के लिये विचारणीय होता है।

2. **जनसांख्यिकीय घटक**–व्यवसाय के लिये जनसंख्या का असीम महत्व है। व्यवसायिक क्रियाओं द्वारा उत्पादित सेवाऐं तथा उत्पादन मनुष्यों के लिये ही तैयार किये जाते है इस विपणन प्रधानयुग में जनसंख्या के विभिन्न पहलुओं जैसे – आयु, भौगोलिक, फैलाव, जनसंख्या में बच्चों और वृद्धों का हिस्सा, विवाहित जोड़े धर्म, जाति, लिंग आदि के आधार पर जनसंख्या का वितरण आदि का इतना अधिक महत्व हो गया है जितना पहले कभी न था। लोगों की आवश्यकताऍ रूचि फैशन, स्टाईल, उपभोग प्रवृत्तियॉ, क्रय शक्ति, आदि व्यवसाय को प्रभावित करते है।

3. **भौतिक घटक**–व्यवसाय का भौतिक वातावरण न केवल व्यवसाय की संरचना को प्रभावित करता है वरन इसके भावी विकास को भी निर्धारित करता है। व्यवसाय एवं प्रकृति का गहरा संबंध है भौतिक वातावरण व्यवसाय के उत्पादों, मॉग प्रारूप विपणन, लागत संरचना, सामग्री उपयोग, मूल्य, पूर्तिप्रवाह, उपभोक्ता व्यवहार, व्यापार प्रसार, एवं व्यवसायों को दी जाने वाली सामाजिक स्वीकृति को गहनता से प्रभावित करता है।

4. **राजनीतिक घटक**–इसमें मुख्य रूप से राजनीतिक व शासकीय व्यवस्था, आर्थिक व शासन प्रणाली, राजनीतिक दृष्टिकोण, प्रशासनिक संस्थाये, संवैधानिक व्यवस्था एवं सुरक्षा आदि सम्मिलित माने जाते है।

5. **वैज्ञानिक एवं तकनीकी घटक**–विज्ञान ज्ञान उपलब्ध कराता है, प्रौद्योगिकी उसका उपयोग करती है राष्ट्र का तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी विकास उत्पादन की प्रणालियों, नयी वस्तुओं, नये बाजार, कच्चे माल के स्त्रोंत, नई सेवाओं, नये यंत्र व उपकरणों आदि को प्रभावित करता है तकनीकी प्रगति के कारण ही उद्योगों में क्रान्ति संभव हुई है तकनीकी विकास के क्षेत्र में होने वाले परिवर्तन महत्वपूर्ण होते है जो उद्योग व व्यवसाय के स्वरूप को प्रतिदिन बदल रहे है।

6. **सामाजिक एवं सांस्कृतिक घटक**–इसमे सामाजिक मूल्य, प्रथायें, आस्थाये, धारणायें, सामाजिक व्यवस्था, भौतिकवाद, धर्म, संस्कृति, संस्कार आदि प्रमुख माने जाते है जैसे, भारत एक धर्म एवं त्यौहार प्रधान देश है, इसलिये यहॉ धार्मिक गतिविधियों से संबंधित वैधानिक व्यवसाय को बढ़ाने में अनुकूल वातावरण मिला है।

7. **वैधानिक एवं न्यायिक घटक**–इसमें न्याय व्यवस्था विभिन्न प्रकार के व्यवसायिक औद्योगिक, श्रम नियंत्रण सन्नियम, सन्नियम प्रशासन व्यवस्था आदि मुख्य माने जाते है।

8. **अंतर्राष्ट्रीय घटक**–विभिन्न देशो के बीच व्यापारिक संबंध अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारिक समझौते, अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थायें, भूमंडलीकरण एवं आर्थिक उदारीकरण आदि घटक भी व्यवसायिक वातावरण को प्रभावित करते है।

निष्कर्ष–व्यवसाय और वातावरण में घनिष्ट संबंध है। दोनों एक दूसरे को प्रभावित करते है किसी देश में उद्योग, व्यापार, एवं व्यावसायिक क्रियायें बहुत सीमा तक वहॉ के आर्थिक, भौतिक, राजनीतिक, वैधानिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, तकनीकी एवं जनसंख्या संबंधी स्थितियों से प्रभावित होती है यह स्थितियॉ जितनी अनुकूल होती है उतनी ही व्यवसायिक गतिविधियॉ बढ़ती है। प्रतिकूल परिस्थितियों में व्यवसाय प्रगति नही कर पाता जैसे देश में स्वतंत्रता के बाद सरकार की समाजवादी आर्थिक नीति एवं प्रतिबंधात्मक उपायों से 1991 तक व्यवसायिक गतिविधियों को संचालित करने में काफी कठिनाइयॉ आयी। एवं वर्ष 1991 के बाद उदारीकरण एवं वैश्वीकरण की नीति के कारण व्यवसायिक गतिविधियों में गति आ गई। आज देश में व्यवसायिक गतिविधियों के लिये अनुकूल आर्थिक एवं राजनीतिक वातावरण है सामाजिक एवं कानूनी स्थितियों में भी परिवर्तन आया है। ये सब परिवर्तन व्यवसायिक वातावरण को अनुकूल बना रहे है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यसायिक पर्यावरण – डॉ. जे.सी. पंत।
2. व्यवसायिक पर्यावरण – डॉ. व्ही.सी. सिन्हा।
3. परीक्षा मंथन – पर्यावरण विशेषांक।
4. डॉ. एम.के.गोयल – पर्यावरण शिक्षा (पेज क्र. 294 से 300)
5. वेबसाईट।
6. पत्रिका 2014
7. दैनिक भास्कर 2014
8. प्रतियोगिता साहित्य–यू.जी.सी.नेट।

****

पसंद ब्रेड कम्पनी के उत्पादन एवं वितरण व्यवस्था का अध्ययन (रीवा के रतहरा स्थित प्लांट के संदर्भ मे)

क्रितिका सिंह* रूपेश द्विवेदी**

शोध सारांश – ब्रेड एक महत्वपूर्ण उपयोगी जीवन को लाभकारी एवं पौष्टिक खाद्य पदार्थ प्रदान करता है। जो कि हर वर्ग के लोगों को प्राप्त हो सकता है। जिससे की सभी व्यक्ति उपयोग कर सकते हैं। यह बीमार व्यक्तियों को चाय व नाश्ते मे भी दिया जाता है। जिससे पौष्टिक व लाभ कारी व हल्का खाने का रूप प्रदान करता है एवं रोजगार का अच्छा माध्यम भी है।

प्रस्तावना – गेंहूँ से बनी ब्रेड एक विशेष प्रकार की ब्रेड है जिससे विश्वभर में लोगों द्वारा पसंद किया जाता है। हर प्रदेश का इसे बनाने का अलग अलग विधि का प्रयोग किया जाता है। इसमे गेंहू के आटे का ब्रेड और अंकुर बना रहता है। जो स्वास्थ्य कि प्रति अच्छा उपयोगी होता है।रोटी और ब्रेड गेहूँ पर आधारित सुविधा जनक भोजन है। मधुमेह के रोगियों के लिए विटामिन और खनिज दूध रोटी की कई किस्में है इसकी खपत भोज्य पदार्थो के समूहों के लिए अधिक है।ब्रेड और टोस्ट की खपत दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है और इन तेजी से स्वैच्छिक एजेन्सियों और राज्य के स्वास्थ्य विभागों द्वारा प्रबंधित बच्चों को खिलाने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। यह उद्योग महत्वपूर्ण रूप से सभी वर्गो के लोगों के बीच में खपत की एक आम वस्तु बन गई है।चाय और काफी के साथ साथ नाश्ते के रूप में लिया जाता है। ब्रेड के व्यवसाय से लोगों को रोजगार मिलता है एवं लोगों की आर्थिक स्थिति सुधरती है।

परिकल्पना –

1. ब्रेड खाने से सम्पूर्ण पोषक तत्वों की पूर्ति न होना
2. ब्रेड के धन का अपव्यय होता है।
3. बिजली की अनियमितता से कार्य न हो पाना।
4. प्रशिक्षित कर्मचारियों की कमी।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध में प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों का संकलन किया जाएगा।समंकों का वर्गीकरण सारणीयन एवं विश्लेषण कर वास्तविक परिणाम वास्तविकता से मेल नहीं खाते तो शोध को दोहराया जाएगा।

उद्देश्य –

1. ब्रेड उद्योग को बढ़ावा देना।
2. रोजगार के अवसर प्राप्त हो सके।
3. भोज्य पदार्थ के रूप में उपयोग अधिक से अधिक करने के लिए प्रेरित करना।
4. व्यवसाय का एक प्रमुख साधन व माध्यम है।
5. प्रबंधन व्यवस्था सही करना।

शोध विश्लेषण – रीवा शहर में पसंद घोघर में स्थित यह उद्योग स्थापित है। प्रति व्यक्ति आप में साक्षरता लगभग(65 प्रतिशत) परिवार को बनाए रखने के लिए काम करने के लिए बाहर जा रहे है।इनमें महिलाओं की बड़ी संख्या है तथा लोगो के जीवन स्तर में वृद्धि हुई है।पसंद ब्रेड कम्पनी के शोध में यह स्पष्ट हुआ कि कम्पनी में कुल 11 मशीन है जिनमें से 7 मशीन ब्रेड बनाने के उपयोग में लाई जाती है तथा 3 मशीन टोस्ट के उत्पादन हेतु उपयोग में आती है। तथा एक 1 मशीन भट्ठी है जो समस्त ओवर मशीन में कचरे को जाने से रोकती है।

ब्रेड के उत्पादन हेतु 2 मशीन है जो कच्चा माल को ब्रेड रूप में तैयार करने का कार्य करता है इस मशीन का उपयोग ब्रेड पकाने हेतु किया जाता है।कम्पनी में ब्रेड को कटने हेतु कटर 2मशीन है। जिसमें ब्रेड को अलग–अलग आकार में कटा जाता है।मोल्डर मशीन का उपयोग गूथे हुए मैदा को व्यवस्थित रूप से साचे में डालने हेतु तैयार करना होता है तथा यह मशीन मैदा को मोड़कर गोल तथा लम्बा करने का कार्य करती है।आटा गूथने की मशीन होती हैजो कि 50 कि0ग्रा0 आटे/मैदा को एक बार में गूथने का कार्य करती है गूथने के बाद आटे या मैदा को एक लम्बी मेज में हल्के कपडे से ढक कर रख दिया जाता है।जिससे खमीर के कारण आटे/मैदा में खट्यपन आ जाता है और इसमें कार्बनडाइ आक्साइड गैस बनती है जो कि समूचे आटे/मैदा को एक स्पंज की तरह हल्का कर देती है जब भट्ठी में ब्रेड को सेका जाता है तो ताप के कारण गैस ब्रेड को छलनी करते हुए उड़ जाती है यह विशेषता केवल गेंहू के आटे में होती है पसंद ब्रेड कम्पनी के तीसरे मंजिल में एक मशीन है जो कि गैसी फायर नाम से जाना जाता है इस मशीन का कार्य ओवन मशीन में जाने वाले अवशिष्ट को रोकना होता है। इस मशीन को चलाने के लिए ईधन में लकडी का उपयोग किया जाता है।अत्यन्त गर्म होने के कारण इस मशीन को भट्ठी भी कहॉ जाता है।

प्रतिदिन का उत्पादन सारणी
Day wise prodestion (Bread)

Produsttion वस्तु	Quantity लागत	Per.k.g. प्रति/कि.ग्रा.रू0	Total Amount कुल लागत
Folur (आटा/मैदा)	700k.g	22रू0	15400
Suger(शक्कर)	70k.g	30 रू0	2100
East(खमीर)	14k.g	300रू0	4200
Salt(नमक)	6.300gram	10 रू0	63
Calciam (कैल्शियम)	2.100gram	200रू0	4200
Emprovers	420gram	1166रू0	490

* शोधार्थी (वाणिज्य) अ. प्र. सि. विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
** अतिथि विद्वान (वाणिज्य) अ. प्र. सि. विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

Asiticasif	280gram	800रू0	224
Water(पानी)	385liter		
Rifaion oil (रिफाइन तेल)	7liter	80 रू0	560
Vanspti oil (वनस्पति तेल)	7liter	85रू0	595

स्रोत साक्षात्कार

सारणी विश्लेषण – सारणी में साइर ही कि सबसे कम मूल्य नमक में एवं सबसे ज्यादा मैदा खरीदने में लागत लगती है।

समस्याऐं – ब्रेड उद्योग में कच्चे माल के रूप में उपयोग आने वाला आटा स्थानीय न होकर इंदौर से मँगाना पड़ता है।दूर से आने में यातयात की समस्या से माल विलस से पहुँचना आदि ये अनिश्चिता बनी रहती है कभी–कभी बिजली की समस्या होने पर माल जैयार नही हो पाता जिससे रूकावट बनी रहती है तथा उद्योग में काम करने वालो व्यक्ति प्रशिक्षित व अप्रशिक्षित एवं दूर के होते है जो त्योहारो में अवकाश में चले जाते हैं जिनके कारण उत्पादन प्रभावित होता है और वर्षा अधिक व प्राकृतिक प्रकोप से वितरण में भी समस्याऐं रहती है।

सुझाव – ब्रेड बनाने के लिए जो इंदौर से आटा व खमीर जैसे कच्चे माल का क्रय किया जाता है वो अगर सह व्यापार रीवा उद्योग स्थपित हो जाय तो बेरोजगारी व लागत मूल्य में कमी बनी रहेगी तथा स्थनीय लोगों को प्रशिक्षण देकर उनको रोजगार दिया जाय तथा विद्युत आपूर्ति की आवश्यकता बनाए रखने के लिए बिजली विभाग की आवश्यक सहयोग देना चाहिए।इस प्रकार से उद्योग को लाभकारी व पौष्टिक ब्रेड उपलब्ध कराया जा सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. ब्रेड कंम्पनी मैनेजर से ली गई जानकारी।
2. शोध प्रविध के द्धारा।
3. www.google.com
4. न्यूज पेपर।

****

टाइल्स एवं नल फिटिंग का अध्ययन (रीवा जिले के अनन्तपुर स्थित उद्योग का अध्ययन)

राजेश कुमार विश्वकर्मा * रूपेश द्विवेदी **

शोध सारांश – टाइल्स एवं नल फिटिंग में एक बहुत ही महत्वपूर्ण रूप से उपयोगी सिद्ध हुआ है।इसके कारण घर की सुन्दरता पानी की उत्ताम व्यवस्था एवं साफ-साफाई बनी रहती है तथा इसमें रोजगार के अवसर भी प्राप्त होते है। जिससे लाभ की प्राप्ति होती है। तथा उपभेक्ता की आवश्यकता की पूर्ति होती है।

प्रस्तावना – टाइल्स भी फिटिंग हमारे जीवन में बहुत ही महत्वपूर्ण रूप से उपयोगी आने वाली निर्मित वस्तु है। नल की फिटिंग से घर में पानी की व्यवस्था करते है जिससे पानी कर उपयोगिता से पानी बेकार नहीं होता है।उसका पानी उपयोग किया जाता है।टाइल्स लगाने से घर की सुन्दरता आर्कषण रूप प्रदान करता है।नल व टाइल्स फिटिंग नये घर ढौर के आधार पर तेजी से उपयोग बढ़ रहा है।नल के फिटिंग से पानी को पाइप के द्धारा आवश्यकतानुसार रसोई घर,बाथरूम,शौचालय आदि जगहो में आसानी से उपयोग किया जाता है।तथा टाइल्स फिटिंग से घरो को खूबसूरत व कीटाणु रहित घर प्राप्त होता है।यहॉ पर नल एवं टाइल्स की सामग्री को इन्दौर जबलपुर से मगाया जाता है।तथा यह व्यवसाय रोजगार के लिए अच्छा साधन है।

परिकल्पना –

1. नल एवं टाइल्स फिटिंग का ज्ञान न होना।
2. नल एवं टाइल्स फिटिंग को बढ़वा न देना।
3. नल एवं टाइल्स के प्राशिक्षित मजदूर न होना।
4. नल एवं टाइल्स फिटिंग में ज्यादा पूजी की लागत का होना।
5. नल एवं टाइल्स फिटिंग में रोजगार की सम्भावना ज्यादा न होना।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध प्रविधि में प्राथमिक एवं द्वितीयक समंको का संकलन किया जाएगा। समंको का वर्गीकरण सारणीयन एवं विश्लेषण से मेल नही खाते तो शोध को दोहराया जाएगा।

उद्देश्य–

1. नए उत्पादो का विकास।
2. व्यापार का वैज्ञानिक रूप का अध्ययन करना।
3. व्यापारिक समस्याओ का समाधान।
4. नियंत्रण एवं अनुमापन का अध्ययन।
5. प्रबंधन व्यवस्था सही करना है।

शोध विश्लेषण – रीवा में अनन्तपुर स्थित शिव ट्रेडर्स से टाइल्स एवं नल फिटिंग व्यवस्था से जानकारी प्राप्त किया गया। जिससे यह ज्ञात हुआ कि आइकन टाइल्स 8 x12इंच की लागत 160रू0 एवं विक्रय मूल्य 180 रू 10 x13 आइकन टाइल्स 230 रू एवं विक्रय मूल्य 260रू पालो टाइल्स 10x15 का क्रय मूल्य 270रू एवं विक्रयमूल्य 300 रू जानसन टाइल्स 2x2f का क्रय मूल्य 840 एवं विक्रय मूल्य 900 रू होता है कजरिया टाइल्स 2x2f क्रयमूल्य 850 रू विक्रय मूल्य 910 रू 10x15 की टाइल्स में 250रू लागत एवं विक्रय मूल्य 300 रू होता है। कोहिनूर टाइल्स 2x2f की 650रू लागत मूल्य एवं विक्रय मूल्य 750 रू होती है।डेल्टा टाइल्स 2x2f की लागत मूल्य 700रू एवं विक्रय मूल्य 750रू होती है। टाइल्स 2x2f की 1120 रू क्रय मूल्य एवं विक्रय मूल्य 1400रू होती है। इटालिक टाइल्स 2x2f की लागत मूल्य 850रू एवं विक्रय मूल्य 1000रू होती है डिजिटल टाइल्स 2x2f की लागत मूल्य 700रू एवं विक्रय मूल्य 100रू होती है।तथा फिलर काक नल में लागत मूल्य 180रू एवं विक्रय मूल्य 200रू नल का लागत मूल्य 250रू एवं विक्रय मूल्य 280रू।बाम्ब टोटी की लागत 550रू एवं विक्रयमूल्य 600रू।हिन्डवेयर नल 1350रू की लागत मूल्य एवं विक्रयमूल्य 1495 रू कूल्स नल की लागत 850रू एवं विक्रयमूल्य 1050रू, पर्ल नल की लागत 130रू एवं विक्रय मूल्य 150रू, टाइटन नल की लागत 250रू एवं विक्रयमूल्य 300रू, सोनाटा नल 450रू एवं विक्रय मूल्य 550रू होती है सोसइटी नल की लागत 420रू एवं विक्रय मूल्य 520रू होती है।

नल का विवरण सूची

वस्त	लागत मूल्य प्रति इकाई	विक्रय मूल्य प्रति इकाई	लाभ इकाई
पिलर कॉक	350रू	450रू.	100रू
एननल काक	180रू	200रू	20रू
सावर नल	250रू	280रू	30रू
वाम्स टोटी	550रू	600रू	50रू
हिन्डवेयर नल	1350रू	1495रू	145रू
पूल्स नल	850रू	1050रू	200रू
पर्ल नल	130रू	150रू	20रू
टाइटन नल	250रू	300रू	50रू
सोनाटा नल	450रू	550रू	100रू
सोसाइटी नल	420रू	520रू	100रू

स्श्रोत साक्षात्कार।

सारणी विशलेषण – सारणी से स्पष्ट है कि सबसे ज्यादा लाभ वूल्स नल में 200रू नग एवं सबसे कम 20रू प्रति नग पर्ल नल एवं माध्यम बाम्स टोटी में 50रू प्रति नग लाभ प्राप्त होता है।

समस्याए –

1. व्यवसाय की पर्याप्त जानकारी न होना।

* शोधार्थी (वाणिज्य) अ.प्र.सि. विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
** अतिथि विद्वान (वाणिज्य) अ.प्र.सि. विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

2. प्रबंध व्यवस्था की समस्या।
3. सम्बधित सामग्री का उपलब्ध होना।
4. टाइल्स एवं नल फिटिंग सामग्री का ऊँची कीमतो पर मिलना।
5. यातायात की सहायता।

सुझाव –

1. टाइल्स एवं नल फिटिंग के बारे में विज्ञापन करके उसकी सुविधाओ के बारे में लोगों को अवगत कराना।
2. टाइल्स एवं नल की सह लागत में क्रय–विक्रय करना।
3. विभिन्न वित्तीय संस्थाओ द्धारा ऋण उपलब्ध कराना।
4. प्रशिक्षित कर्मचारियो के द्धारा कार्य करवाना।
5. टाइल्स एवं नल का विभिन्न आकारो की उपलब्ध कराना।

निष्कर्ष – टाइल्स एवं नल की फिटिंग का महत्वपूर्ण आवश्यकता होती है। तथा इसके माध्यम से लोगों को रोजगार के अवसर प्राप्त होते है।टाइल्स एवं नल फिटिंग से व्यवसाय में अधिक से अधिक लाभ की मात्रा प्राप्त होती है।टाइल्स एवं नल फिटिंग घरो का आकर्षण सुन्दरता व पानी का सही ढंग से उपयोग होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. वुकलेट–आइकन, सिरोमिक टाइल्स लिमिटेड।
2. वुकलेट–कजरिया, निकाटो टाइल्स लिमेटेड।
3. शोध प्रविधि, सी0आर0कोठारी, 2013–14,हिमालया पब्लिकेशन।
4. शोध प्रविधि, एस0आर0सचिदेव , 2011–12, हिमालया पब्लिकेशन
5. साक्षात्कार प्राप्त आकड़े।
6. समाचार पत्र – दैनिक जागरण,दैनिक भास्कर,स्टार समाचार, पत्रिका, नवभारत आदि।
7. www.google.com

****

मूल्य परिवर्तित कर - अवधारणा एवं प्रभाव

डॉ. राजू रैदास *

शोध सारांश – मूल्य परिवर्तित कर एक ऐसी कर व्यवस्था है जिसमें वस्तु उत्पादक से उपभोक्ता तक पहुंचने में एक श्रंखला से गुजरती है, बिक्री की श्रंखला में प्रत्येक व्यापारी से इस प्रकार कर वसूलना ही कर भी प्राप्त हो जाए और वस्तु का मूल्य भी न बढ़े यही वेट का मूल आधार है। वेट लागू करने में कठिनाइयों तो है किन्तु व्यापारी एवं सरकार व्यवसाय का पूरा हिसाब - किताब सही रखें, पर्याप्त सूचना तंत्र विकसित हो तो यह व्यवस्था लाभप्रद हो सकती है।

प्रस्तावना – केन्द्रीय सरकार एवं राज्य सरकारें को अपनी आय बढ़ाने के लिये कर का सहारा लेते हैं। केन्द्रीय सरकार वस्तुओं पर उत्पादन शुल्क कर के व्यय में लगाती है। राज्य सरकारों द्धारा वस्तुओं पर बिक्री कर लगाकर प्रावधान किया जाता है। वस्तु उत्पादक से उपभोक्ता तक एक श्रंखला से होकर गुजरता है। उत्पादक से मुख्य वितरक, मुख्य वितरक से थोक व्यापारी, थोक व्यापारी से फुटकर व्यापारी, फुटकर व्यापारी से उपभोक्ता वस्तु खरीदता है। इस प्रक्रिया में प्रत्येक व्यापारी अपने खरीद मूल्य में खर्चे व लाभ जोड़कर माल बेचता है। सरकार उपरोक्त वर्णित व्यापारियों में से किससे बिक्री कर वसूल करें, यह प्रश्न विचारणीय है। यदि राज्य सरकार केवल प्रथम बिक्री पर बिक्री कर वसूलती है। इससे आगे होने वाली बिक्री, मूल्य वृद्धि कर से बच जाती है, और यदि प्रत्येक व्यापारी से उसकी पूरी बिक्री राशि पर कर वसूला जाता है, तो वस्तु का मूल्य बहुत अधिक बढ़ जाता है। इस विसंगति से बचने के लिये ही वेट लगाया गया है। बिक्री के श्रृंखला में प्रत्येक व्यापारी से इस प्रकार कर वसूलना है, कि कर भी प्राप्त हो और वस्तु का मूल्य भी अधिक न बढ़े यही वेट का मूल आधार है। इस प्रणाली के अंतर्गत वस्तु पर लगने वाली कर की दर निर्धारित कर दी जाती है जो उत्पादक या निर्माता माल बेंचता है तो वह बिक्री की राशि पर क्रेता से कर वसूलता है। इस प्रकार यह प्रक्रिया उस समय तक चलती रहती है जब तक माल अपंजीकृत व्यापारी या उपभोक्ता तक नहीं पहुँचता है।

वेट के अधीन माल एवं सेवाओं पर कर लगाया जाता है जो विभिन्न क्रयों पर लगाये जाने वाले कर का एक प्रबंधकीय क्रय है। वर्तमान उत्पादन मूल्य, बिक्री कर, निगम कर आदि की गणना अलग-अलग ढंग से की जाती है। प्रत्येक राज्य के बिक्री कर अधिकारी अपने - अपने ढंग से बिक्री कर की गणना करते हैं और कर की दर में भी बहुत अंतर है। इससे अंतर्राज्यीय व्यापार प्रभावित होता है, यदि इन सबकी गणना वेट विधि से की जाय तो कार्य काफी सुगम हो सकता है।

वेट के उद्देश्य –

- पूरे देश में एक जैसी कर व्यवस्था लागू करना।
- पूरे देश में माल के अंतर्राज्यीय प्रवाह के लिये कराधान के एक जैसे नियम बनाना।
- कर की एक सरलतम प्रणाली लागू करना।
- करों को वसूल करने के लिये एक व्यवस्था प्रदान करना।
- उत्पादन से बिक्री तक के विभिन्न स्तरों पर अंकेक्षण को विस्तार देकर कर वसूली सुगम बनाना।

बिक्री कर व वेट में अंतर है। वेट बिक्री कर के विकल्प के रूप में अपनाया जाता है। बिक्री कर बिक्री की श्रंखला में एक ही बार लगाया जाता है, जबकि वेट बिक्री के प्रथम बिन्दु अथवा अंतिम बिन्दु पर लगाया जाता है।

भारत में मूल्य परिवर्धित कर की विधियाँ : भारत में मूल्य वरिवर्धित कर की दो विधियाँ हैं –

आवर्त विधि – इस विधि के अंतर्गत उस व्यापारी पर मूल्य परिवर्धित कर लगाया जाता है जिसकी वर्ष में सकल आवर्त निर्धारित राशि से अधिक हो जाती है। यदि व्यापारी की सकल आवर्त 50 लाख रूपये से अधिक हो जाती है, तो वेट के अंतर्गत कर चुकाना होता है। दिनांक 23.04.2002 से यह आवर्त राशि 10 लाख रूपये कर दी गई है।

वस्तु विधि – इस विधि के अंतर्गत उन वस्तुओं को निर्धारित कर दिया जाता है जिसकी बिक्री पर व्यापारी को वेट के अंतर्गत कर चुकाना होता है। तथा शेष वस्तुओं की बिक्री कर उसे बिक्री कर के अंतर्गत कर चुकाना होता है।

मूल्य परिवर्धित कर के गुण : मूल्य परिवर्धित कर में अनेक विशेषतायें पाई जाती है –

सरल कर संरचना – विभिन्न देशों में वस्तुओं पर अनेक प्रकार के अप्रत्यक्ष कर लगाये जाते हैं और वस्तुओं को कर की दर के आधार पर विभिन्न श्रेणियों में बाटा जाता है।

कर अपवंचन में कमी – कर अपवंचन का प्रमुख कारण करो की उच्च दर तथा विविधता होती है। वेट के अंतर्गत कर की दर कम रखकर भी अधिक आय प्राप्त होती है, क्योंकि बिक्री की श्रंखला में प्रत्येक व्यापारी को कर देना होता है। प्रत्येक व्यापारी यह प्रयास करता है कि बीजक के आधार पर क्रय - विक्रय करें अन्यथा उसका कर दायित्व बढ़ जायेगा। इस प्रकार क्रय - विक्रय का बीजक लेने - देने से एवं उसका सही हिसाब रखने से कर अपवंचन में स्वत: कमी हो जाती है।

कर की दर कम – इस कर का क्षेत्र व्यापक होता है, क्योंकि बिक्री की श्रंखला में सभी व्यापारियों को कर देना है फलस्वरूप कर की दर कम रखकर भी कर की अधिक राशि एकत्रित की जा सकती है। निर्यात को कर मुक्त रखना सरल - जिस माल का देश से विदेशों को निर्यात किया जाता है, उस पर करों में छूट दी जाती है, ताकि हमारा माल विदेशों में अन्य देशों की तुलना अधिक मंहगा न पड़े। इन करों की छूट के संबंध में व्यापारियों को यह शिकायत रहती है कि उन्हें करों की पूरी छूट नहीं मिल सकी, क्योंकि उनकी सही - सही गणना करना सही नही है। वेट के अंतर्गत कर को उत्पादन लागत से अलग

*अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, उमरिया (म.प्र.) भारत

करना सरल है। अत: उत्पादक को कर की पूरी छूट देकर निर्यात को प्रोत्साहित किया जा सकता है। कर भार पारदर्शी – बिक्री की श्रृंखला में उत्पादक या निर्माता से उपभोक्ता तक माल पहुँचने में बीजक जारी किया जाता है, जिससे यह सरलता से ज्ञात हो सके कि किसी वस्तु पर वास्तव में कितना कर भार हुआ, यदि सरकार यह समझती है कि उपभोक्ता को कर भार अधिक पड़ रहा है तो इसमें कमी कर सकती है। और यदि उपभोक्ता अभी और अधिक कर भार वहन कर सकता है और उसे अपने खर्च के लिये अधिक राशि पाने के लिये कर की दर बढ़ सकती है।

लागत पर कर से बचाव – वेट के अंतर्गत बिक्री की श्रृंखला में व्यापारी उसी राशि पर कर देता है जो उसने क्रय मूल्य में जोड़ी है। अत: किसी भी राशि पर कर नहीं लगता।

कर भार में कमी करना संभव – बिक्री की श्रृंखला में वस्तु जितनी अधिक हाथों में होती हुई उपभोक्ता तक पहुँचती है, उसका मूल्य बढ़ता जाता है, और उपभोक्ता पर कर भार बढ़ जाता है।

यदि वस्तु का निर्माता बिक्री की श्रृंखला में से थोक व्यापारी तथा फुटकर व्यापारी को निकाल दे और स्वयं ही अपनी फुटकर दुकानें खोलकर सीधा माल उपभोक्ता को बेंचे तो वस्तु का फुटकर भाव कम हो सकता है। और जब वस्तु का फुटकर भाव कम हो जायेगा तो कर भार भी स्वत: कम हो जायेगा।

वेट लागू करने में कठिनाइयाँ – यद्यपि वेट में कर भार न्यायसंगत ढंग से उपभोक्ता पर पड़ता है, किन्तु इसे लागू करने में अनेक कठिनाइयॉ सामने आती हैं।

सही गणना संभव नहीं – वेट को लागू करने में सबसे महत्वपूर्ण शर्त यह है कि मूल्य वृद्धि का सही–सही लेखा रखा जाय। भारत में अधिकतम व्यापारी अशिक्षित हैं, और वे अपने व्यापार का पूरा हिसाब–किताब नहीं रख सकते, ऐसी स्थिति में वेट की सही गणना संभव नहीं है।

सूचना एकत्र करने में कठिनाई – यदि बड़े व्यापारी अपने क्रय – विक्रय का सही हिसाब – किताब रखें और उस आधार पर कर का भुगतान भी करें, तो भी सरकारी तंत्र को उसकी सत्यता की जाँच के लिये दूसरे व्यापारियों से सूचना एकत्रित करनी होगी, कि वास्तव में वह व्यापारी माल खरीदते समय उतना कर दे चुका है जितने कर की क्रेडिट वह मांग रहा है। भारत में इस प्रकार की सूचना एकत्रित करने के लिये कोई तंत्र विकसित नहीं हुआ है। कर्मचारी सुविधा भोगी व भ्रष्ट है, और उसे हिस्सा देकर कर बचना सरल कार्य है।

एकल कर प्रणाली लागू करने में कठिनाई – भारत के कुछ राज्यों में वेट लागू किया गया है किन्तु बिक्री कर समाप्त नही किया गया है, फलस्वरूप कुछ व्यापारियों को वेट व बिक्री कर दोनों का भुगतान करना पड़ रहा है, जबकि वेट की अवधारणा बिक्री कर को समाप्त कर एक सरल कर प्रणाली लागू करने से है।

सुझाव – वेट प्रणाली वास्तव में न्याय संगत कर प्रणाली है, फिर भी इसे लागू करने में अनेक कठिनाइयाँ है, जिससे वेट की अवधारणा का सही पालन नहीं होता।

व्यापारी को अपने व्यापार का पूरा एवं व्यवस्थित हिसाब–किताब रखना चाहिये। सरकारी तंत्र को सही–सही व्यापारिक सूचनाओं को एकत्रित करने का प्रयास करना चाहिये। भारत के सभी राज्यों को समान रूप से बिक्री कर को समाप्त कर वेट लागू करना चाहिये, ताकि वेट या बिक्री कर में से किसी एक का भुगतान करना पड़े, अथवा बिक्री कर को समाप्त कर एक सरल कर प्रणाली लागू करनी चाहिये।

संदर्भ ग्रथ सूची :–

1. भारत 2011, सूचना प्रकाशन विभाग नई दिल्ली।
2. भारत में कर नियोजन श्री पॉल सकलेचा रमेश बुक डिपो, जयपुर।
3. मध्यप्रदेश में विक्रयकर डॉ. एच.सी.मेहरोत्रा, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स आगरा, वर्ष 2004–05
4. अप्रत्यक्ष कर, डॉ.एच.सी. मेहरोत्रा, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स आगरा, वर्ष 2010–11

****

Globalization And Indian Agriculture- General Consequences

Dr. R. P. Saharia *

Abstract - The term globalization refers to International Integration. It includes opening up of world trade, development of advanced means of communication, internationalization of financial markets, growing importance of MNC's, population migrations and more generally increased mobility of persons, goods, services, capital, data and ideas. It is a process through which the diverse world is unified into a single society. In short it is a creation of world into a global village. It is the recent concept that has come to govern the world since end of the 20th century with the end of the cold war and melting down of Soviet Union. The need of structural changes in various world economies, dominance of market related economies, growing importance of private resources and capital and pressure of world bank and other International organizations like IMF have started this process in many of the developing countries like India. It has brought in new opportunities to developing countries. Greater... access to foreign markets, technology transfer, improved productivity and higher living standard are some of the advantages of this process to the countries like India. But it has also, creates new challenges like growing inequality across and within nations, volatility in financial market and environmental deteriorations. As Indian is agrarian economy it is wise to know the impact of Globalization on Indian economy. An overview of Indian, agricultural sector indicates that'globalization did not yield the desired results in India. It has marginally contributing hi minimizing poverty, and removing social inequalities. The desired objectives of this process have not been achieved in India. As far agricultural sector is concerned we have seen mixed results in the country. It is clear, of the study that agriculture plays key role in the economy. Agriculture employees 60% of Indian population, yet it contribution varies only from 15 to20% of the GDP. After adoption of globalization in 1991 Indian agriculture growth rate increase but at present the economy condition of the farmers is not satisfactory because input cost is high and output cost is low. Cut off of subsidies are hindering growth of-agricultural sector, in the words of GamaniCorea, former Secretary- General, UNCTAD, "Globalization instead of being an equalizing process, has only widened the gap between the two to terms of monopoly in science and technology, flowof capital, access to natural resources, communication and nuclear armament"

Introduction - The term globalization refers to International Integration. It includes opening up of world trade, development of advanced means of communication, internationalization of financial markets, growing importance of MNC's, population migrations and more generally increased mobility of persons, goods, services, capital, data and ideas. It is a process through which the diverse world is unified into a single society. In short it is a creation of world into a global village. It is the recent concept that has come to govern the world since end of the 20thcentury with the end of the cold war and melting down of Soviet Union. The need of structural changes in various world economies, dominance of market related economies, growing importance of private resources and capital and pressure of world bank and other International organizations like IMF have started this process in many of the developing countries like India. It has brought in new opportunities to developing countries. Greater access to foreign markets, technology transfer, improved productivity and higher living standard are some of the advantages of this process to the countries like India. But it has also creates new challenges like growing inequality across and within nations, volatility in financial market and environmental deteriorations. As Indian is agrarian economy it is wise to know the impact of Globalization on Indian economy.

Objects -

1. To review prologue of globalization in Indian agriculture.
2. To study positive consequences of globalization on Indian agriculture.
3. To study consequences of globalization on Indian agriculture.

Prologue of globalization in Indian Agriculture - India entered in the process of globalization by 1991, when there was a severe economic crisis in the country. To overcome the economic crises, India approached the International Monetary Fund for financial assistance. IMF granted such assistance on the condition to make some structural changes and reforms in Indian Economy. In 1994, 124 countries along with India were signed Dankel Proposal, giving the final pass to proposal World Trade Organization was established in January 1995. The member countries involved themselves in globalization through WTO. These reforms and changes can be broadly classified into three areas: Liberalization, privatization and globalization (LPG). It includes withdrawal of government control of the market,

*H.O.D. (Economics) Govt. J.M.P. College, Takhatpur, Bilaspur (C.G.) INDIA

privatize public sector organizations and reduce export subsidies and import barriers to enable free trade. India signed GATT too and opens up its economy to the world market. Initially this process was restrained by the barriers to trade and investment but after liberalizing it, the pace of globalization has speeded up. As India is the country which is known as agrarian economy, it is essential to know that how agricultural sector in the country is connected to this process. Initially the World Trade Agreement of 1994 brought agriculture within its policy framework. The obligations and disciplines incorporated in the agreement which seek to reform trade in agriculture and provide the basis for market-oriented policies on agriculture, relate to the aspects of market access, domestic support, export competition/ subsidies,and Trade Related Intellectual Property Rights (TRIPS). Some agreements are made for simplicity in international dealings. Liberalization created an unprecedented demand hi all sectors of trade including agriculture. This demanded pragmatism on the part of Indian Government. With globalization making headway everywhere, Government had introduced reforms in agricultural sector too. Reforms in agricultural policies were felt necessary for achieving trade liberalization in the agricultural sector (Kumar et. al., 2008).

General consequences of globalization on Indian agriculture-With the operationalisation of the provisions of the World Trade Organisation, the process of globalization commenced in the major parts of the world. There has always been an air of confusion among the members and non-members of the WTO in assessing the pros and cons of globalization on the health of their economy. The sector which has created the highest number of deliberations in the WTO as well as views and counterviews has been the agriculture, an area of utmost concern for the developed and the developing world alike. India is no exception to it. Better say it has been among few countries in the world spear-heading the campaign against the biased provisions of the WTO concerning agriculture.

Following are some positive consequences of globalization on Indian agriculture.

A) Positive Consequences-

1. Availability of modern Agro- technologies - There is availability of modern agro technologies in pesticides, herbicides, and fertilizers as well as new breeds of high yield crops were employed for increase food production. These technologies included modem implementations in irrigation projects, pesticides, synthetic nitrogen fertilizer and improved crop varieties developed through the conventional, science-based methods available at the time. Use of High Yielding Varieties (HYVs) like IR8 a semi-dwarf rice variety. HYVs significantly outperformed traditional varieties in the presence of adequate irrigation, pesticides, and fertilizers.

2. Rise in production and productivity - Due to adoption of HYV technology the production of food grains increased considerably hi the country. The production of wheat has increased from 8.8 million tones in 1965-66 to 184 million tones in 1991-92. The productivity of other food grains has increased considerably. It was 71% in case of cereals, 104%for wheat and 52% for paddy over the period 1965-66 and 1989-90.Though the food grain production has increased considerably but the green revolution has no impact oncoarse cereals, pulses and few cash corps. In short the gains of green revolution have not been shared equally by all the crops.

3. Growth of National Income - Receiving the international market for the agricultural goods of India, there is an increase in farmer's agricultural product. New technology, new seeds, new agriculture practices etc. helped to grow the agricultural product. From the monetary point of view the share of agriculture sector in the economy is raised to 14.2% of the GDP (2010-11).

4. New areas employment- While exporting agricultural products it is necessary to classify the products, its standardization and processing, packing etc. Therefore, after LPG the agro allied industries has created employment in various sector like packing, exporting, standardizing, processing, transportation and cold storage etc. The industries depending on agriculture are stored and it made an increase in employments. Agriculture is the biggest unorganized sector of the Indian economy accounting for more than 90% share in the total unorganized labour force. The share of agriculture in total employment stands at 52.1%

5. Agriculture as a prime moving force - The growth of agricultural sector in India has correspondent relation with industrial growth and national income in India. It is assumed that 1% increase in the agricultural growth leads to 0.5% increase in the industrial output and 0.7% increase in the national income in India. Especially after LPG the agricultural sector in India is developing rapidly. As a result, the government of India announced agriculture as the prime moving force of the Indian economy in 2002. As per World Trade Organization data, global exports and imports of agricultural and food products in 2011 stood at $1.66 trillion and $1.82 trillion respectively. India's share in this is 2.07 per cent and 1.24 per cent respectively.

6. Rise in the share in trade - Because of the conditions of WTO all of the countries get the same opportunities, so there is an increase in the export of agricultural products. According to data provided by World Bank, India's share in exports (goods and services) rose from0.54%in 1990 to 0.67% within five years after globalization took place i.e. upto 1999. Indian exports rose by 103% during the same period.

7. Growth of Agro exports - The prices of agricultural goods are higher in the international market than Indian markets. Under developed countries reduced grants, they have to Increase in the prices. So there will be increase in the export to Indian market and if the prices grow, there will be profit. Agricultural products account for 10.23% of the total export income of the economy, while agricultural imports account for just 2.74% of the total imports. Agricultural exports was 33.54 billion $ in the year 2011-13.

8. Reduction in poverty - It is also true that globalization

is commonly characterized as increasing the gap between the rich and the poor, but it is a matter of looking at poverty hi relative terms. India's prior concern is to remove poverty, which is worse than death, and if India makes efforts, globalization can be a key to get rids of it. Moreover, the percentage of people below the poverty line has been decreasing progressively, from 36 percent in 1993-94 to 21.9 percent in 2011-12.

These are some positive consequences of globalization on Indian agriculture. But as far as a developing country like India is concerned the negative consequences are proved as more effective. These are as follows.

B) Negative Consequences-

1. Vicious debt trap and farmers suicides - There is need to examine each of the causes which have led to the current crisis in agricultural sector, and analyze the role that liberalization policies have played. Instance the state of Andhra Pradesh led to the first ever state level agreement with the World Bank, which entailed a loan of USD 830 million in exchange for a series of reforms in his state industry and government .It has implemented the World Bank liberalization policies with great enthusiasm and zest and as result the rate of farmers suicides in the 'state gone up. The National Sample Survey Organization (NSSO) Report 2005 indicates that 1 in 2 farm households are in debt and only 10 per cent of the debt was incurred for non production purposes. Also, 32.7 per cent of farmers still depend on money lenders. The National Crime Records Bureau reports that between 1997-2005 1,56,562 fanners committed suicide. Nearly 60% of them took place in the 4 progressive states, viz., Maharashtra, Andhra Pradesh, Karnataka and Madhya Pradesh. More than 20 per cent of suicides have taken place in Karnataka. (Pushap, 2007, Kumaraswamy, 2008)Hence, the experience with liberalization is critical.

2. Migration of labours - For the Indian farmer, who is already paralyzed by low productivity and lack of postharvest storage facilities has resulted in heavy loss of produce and revenue. It is only because of low tariff in Imports due to liberalized import duties which came as a bombshell. The domestic farmer could not stand in the competitiveness of internationalmarket, which has resulted in migration of labor from agriculture to other industrial activities.

3. Lower income of rural farmers - According to Nobel Prize-winning economist Joseph Stiglitz, Trade agreements now forbid most subsidies excepted for agricultural goods. This depresses incomes of those farmers in the developing countries who do not get subsidies. And since 70 per cent of those in the developing countries depend directly or indirectly on agriculture, this means that the incomes of the developing countries are depressed. But by whatever standard one uses, today's international trading regime is unfair to developing countries. He also pointed out the average European cow gets a subsidy of $ 2 a day (the World Bank measure of poverty); more than half the people in the developing world live on less than that. It appears that it is better to be a cow in Europe than to be a poor person in a developing country (Jha and Yemeni 2012)

4. Lessening international competitiveness - In India 60% of population depend on agriculture. This pressure on agriculture is increasing day by day because of the increasing population. Because of marginal land holding the production cost of Indian farmers is higher as well as the quality and standardization of agro produce is much neglected. Along with this, the curtailment in subsidies and grants has weakened the agricultural sector. On the contrary before the reduction in grants by WTO, developed countries had distributed grants on large scale. They had grown the amount of the grants on large scales in agriculture during 1988-1994. So they have not to face many difficulties if there is a reduction in grants. On this background the farmers are not in a position to compete international market.

5. Abnormal hike in Fertilizers and Pesticide prices- Immediately after globalization Indian rupee was devaluate by 25% and Indian crops became very cheap and attractive in the global market, which led Indian farmer for export and encouraged them to shift from growing a mixture of traditional crops to export oriented 'cash crops' like chilli, cotton and tobacco. These need far more inputs of pesticides, fertilizers and water than the traditional crops require. It automatically increased Fertilizer and pesticide prices by 300%. (Muralidhar and Mamatha et.al Dec.2011)

6. Electricity tariffs have also been increased - Pre liberalization, subsidized electricity policy helped farmers to keep the costs of production low. The electricity costs increased dramatically when farmers turned to the cultivation of cash crops, which needed more water, hence, more water pumps were needed andthere was higher consumption of electricity. Andhra Pradesh being traditionally drought prone, the situation further worsened. In Andhra Pradesh tariff was increased 5 times between 1998 and 2003. This caused huge, unsustainable losses for the Andhra Pradesh State Electricity Board, so it increased the electricity tariff. The fact that only 39% of India's cultivable land is irrigated makes cultivation of cash crops largely unviable, but export oriented liberalization policies and seed companies looking for profits continue to push farmers to the wall. (Muralidhar and Mamatha et.al Dec.201i;

7. Price crash - As per reforms of WTO, Indian government removed import tariffs and duties. Earlier these were working as cushion to protect and encourage domestic producers. By 2001, India completely removed restrictions on imports of almost 1,500 items including food. As a result, cheap imports flooded the market, pushing prices of crops like cotton and pepper down. As a result, most of the farmers committing suicides in Maharashtra were concentrated in the cotton belt till 2003 (after which paddy farmers followed the suicide trend). Similarly, Kerala, which is world renowned for pepper, has suffered as a result of 0% duty on imports of pepper from SAARC countries. Pepper, which sold at Rs.27,000 a quintal in 1998, crashed to Rs.5000 in 2004, a decline of 81%. (Muralidhar and Mamathaetal Dec.2011

8. Fall in agricultural employment-In 1951, agriculture

provided employment to 72 per cent of the population and contributed 59 per cent of the gross domestic product. However, by 2001 the population depending upon agriculture came to 58 per cent whereas the share of agriculture in the GDP went down drastically to 24 per cent and further to 22 per cent in 2006-07. This has resulted in a lowering the per capita income of the farmers and increasing the rural indebtedness. (Malik 2013)

Conclusion - An overview of Indian agricultural sector indicates that globalization did not yield the desired results in India. It has marginally contributing in minimizing poverty, and removing social inequalities. The desired objectives of this process have not been achieved in India. As far agricultural sector is concerned we have seen mixed results in the country. It is clear with the study that agriculture plays key role in the economy. Agriculture employees 60% of Indian population, yet it contribution varies only from 15 to20% of the GDP. After adoption globalization in 1991 Indian agriculture growth rate increase but at present the economy condition of the farmers is not satisfactory because input cost is high and output cost is low. Cut off of subsidies are hinderinggrowth of agricultural sector. In the words of GamaniCorea, former Secretary- General, UNCTAD, “Globalization instead of being an equalizing process, has only widened the gap between the two in terms of monopoly in science and technology, flow of capital, access to natural resources, communication and nuclear armament”

References :-

1. Jha and Yemeni (2012) The Dark Side Of Globalization - In ContextOf India, International Journal of Engineering and ManagementScience, Vol.3 (1) Pp.30
2. Kaushik Sanjay, Bhardawaj Sunil &Goyal Rajiv (Jan.2013)’Globalization and its Impact on Agriculture in India’International Journal of Advanced Research in Management andSocial Sciences, Vol. 2, No. 1.
3. Kumar, KiranJayasheela and Hans, V. Basil (2008). “IndianAgriculture in the Post-Economic Reforms Period”, Journal ofDevelopment Research, 1(1): 29-42.
4. Kumaraswamy, D. M. (2008;.”Agriculture in Kamataka” (Keynote Address), State level Seminar on Agriculture in Kamataka: Issues and Challenges, Sri Dhavala College, Moodbidri
5. Malik Tanveer (2013), ‘Impact of globalization on Indian economy-An overview’ article published at http://www.fibre2fashion.com/industry-article/8/738/impact-of-globalization3.asp
6. Muralidhar B.V and Mamatha D.M. et.al (Dec.2011>’Globalization and Its Impact on Indian Agriculture :A Study of Farmers’ Suicides in the State of Andhra Pradesh’ Nepalese Journal of Public Policy and Governance, Vol. xxix, No.2,Pp.l6
7. Pushap, P. (2007). “Agriculture - India’s backbone Industry and its Plight in the wake of Globalization”,The Journal ‘of World Intellectual Property Rights, 3(1-2): 159-183
8. SannurHemant, ‘Globalisation and Its Positive Impact on Indian Agriculture’ article published at http://www.academia.edu/964379

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) Oct. to December 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

Economic Reforms Policies - Environment And Sustainable Development

Usha Iyer *

Introduction - Countries of the world, particularly developing nations are now overburdened with a variety of economic compulsions ranging from feeding a large population to competing with industrial forces and in the process have failed to maintain a balance between economic activities and ecological conditions. Orthodox economics traditionally focussed on efficient resource allocation avoiding concerns on social equity and economic outcomes and their ecological entailments.

Economic planning in India since independence focussed on rapid expansion of agriculture, industry, transport and infrastructure in order to increase production and employment and reduce poverty and inequality of incomes to establish a society based on equality and social justice.

The expansion of area under cultivation, irrigation facilities by construction of dams, increasing use of fertilizers and pesticides, up gradation of technology in industries and the development of infrastructure and energy sources have all resulted in ruthless exploitation of natural resources, degrading our physical environment. Efforts towards economic development are causing a great harm to our economic and ecological situation. Population poverty, unemployment and inequality continue to persist due to over-utilization of resources and destruction of environment.

With the onset of Structural Adjustment Program (SAP) and Liberalization, Privatization and Globalization (LPG) and the thrust in economic reform policies have accelerated degradation of physical and social environment in the country. The promotion of market friendly export-led-market strategy of the products of primary sector (agriculture, forestry, fishery, mining etc.) the deregulation of industries, the strategies favouring consumerism aggravated by the media, have all resulted in adverse effect on environment.

I. Export-Led Strategy - The export-led growth strategy has led to an accelerated transformation of staple food subsistence crop lands into crash cropping. The major export oriented production are floriculture and agro-products including processed food. Intensive floriculture can be ecologically destructive as its production is highly dependent on the use of fertilizers, pesticides and other artificial inputs. It also adversely affects the livelihood of small farmers who cannot adequately invest.

The acceleration of agricultural production under the New Economic Policy has resulted in a whole gamut of agricultural activities resulting in deforestation, soil salinity, water logging and ground water depletion. Commercialization of agriculture may result in irreversible disequilibrium in the environmental scene.

The recent modifications in the export policy have led to exports of genetic resources also. The exports of wild orchids and plants will damage our biological diversity. The export of sandalwood products will damage our forests. Tax relief by the Govt. to ply-wood will greatly destroy forest resources.

The indiscriminate expansion of aquaculture have resulted in threats to bio-diversity and livelihood resources of ecologically sensitive areas.

The export of fish and fish preparations and that of ores and minerals have increased rapidly. The commercial ambitions in fisheries have led the Indian authorities to clear a number of 100% Export-oriented units for deep seas fishing by joint ventures. The export of raw material ores has led to increase in mining. When short-term foreign exchange earning is a pre-dominant motive, bringing about a structural change the long-term environment responsibility suffers. During 1991-94, 82 companies were given clearance for joint venture marine fisheries using 225 deep-sea fishing trawlers. While fish catch is declining in major parts of the world, it is increasing in the Indian Ocean. The major fishing companies and rich fish eating nations are eyeing our waters to satiate their large appetites.

Thus under the policy of economic reforms heavy reliance has been placed on exports as a means to drive the economy forward but the drive towards this export led-strategy has been rapidly sacrificing natural resources to earn foreign exchange.

II. Policies Under Liberalisation - The thrust towards exports under Liberalisation with relaxation of various controls over industrial and commercial sector has caused environmental degradation. The tax holidays to the industries in backward regions like the north-eastern states resulted in threat to environment in these ecologically fragile areas which contain vast vegetation areas, natural habitats and traditional cultures. The traditional occupations such as

*Associate Professor (Business Economics) K.J.Somaiya College of Science and Commerce,Vidyavihar, Mumbai (Maharastra) INDIA

traditional organic farming, small-scale fishing, pastorals and village industries which are most sustainable ways of living on earth are being destroyed under the competition by orienting large-scale industrialization.

Though economic reforms will result in more efficient technologies, enhance wealth and trickling down process and ultimately reduce poverty, yet it would be difficult to control the environment degrading effects. The western industrial countries have stringent environmental regulations and a judiciary to uphold the rules and laws. But in India, doubts are raised against the efficacy of the State authorities to provide good economic environment and governance. The Bhopal gas tragedy is a great example of environmental disaster due to industrial pollution.

The Central and the State Governments have been taking industrial policy decisions which would easily help environmental degradation. For eg. Haryana set up a high powered committee to take spot decisions for foreign investments, Non-resident Indian projects and 100% export-oriented projects. It also announced that all projects will be cleared through the State Pollution Control Board within 15 days. State Governments are attaching no importance to the critical environmental appraisal which the industries must undergo.

The industrial de-regulation by delicensing the automobile industry has led to a boom in investment in automobile industry at a heavy environmental cost. Indian cities are the most polluted in the world with severe impact on health of the residents. Making air-conditioners cheaper when there is a severe shortage of electricity that is produced at a great environmental cost is not healthy. The liberalisation policy to promote industrial expansion by leasing out forest lands and land ceiling acts has affected the poor people adversely.

The liberalisation of imports has led to dangerous trends for ecological balance for India. India has now become a dumping ground for entire waste of toxic gases from industrialized countries. Pepsicola Company was reported to be exporting 45,000 tones of plastic waste into India. Imports of metal wastes and lead acid battery wastes from Australia are bound to have adverse impact on our ecological system.

The Way Out - Sustainable development is defined as the development towards meeting the needs of the present generations without compromising the needs of future generations. It is a process by which development can be sustained for generations. Sustainable development focuses on inter-generation equity in the exploitation of development resources and opportunities. Sustainable development is one which conserves nature and maintains ecological order-biodiversity to live in better harmony with nature.

The ultimate goal of sustainable development is to maintain a rising trend in the welfare of the people of the present and future generations. Sustainable development can be achieved by minimizing trade-offs between economic gains and environmental damages.

The concern for environmental protection under the New Economic Policy or economic reforms is to modify the policies and to work out a model of sustainable development which will reshape the whole environment exploiting growth strategy. Those patterns of resource use which are less damaging to environment should be adopted. These patterns will involve complex choices of technology, production, organization and management and monitoring institutions. The development of an environment-friendly technology will go a long way in achieving the objective of productivity and stability.

There is a need to change the attitudes of people and create awareness to environmental issues. In agriculture, in the light of economic reforms policies small farms may be economically viable and ecologically sustainable, provided the existing distortions in organizational structure are removed.

In case of industries and mines, environment management should be made on sustainable and conservation oriented projects rather than resource exploiting and polluting projects.

Some urgent steps to be taken are -

- Environmental protection clearance to be extended to all sectors
- To close the old polluting factories that are functioning without environmental clearance
- Coal should be replaced by oil preferably to avoid smoke pollution
- Intensive research on pollution control devices

Sustainable development should consider three crucial issues -

a) Economic development (b) Equity (c) Environment

Economic activity is seen as the major culprit by many environmentalists for degradation of world's environmental resources.

The modern economists have twin responsibilities -

1. To preserve environment without a serious degradation
2. To take measures to protect environment without adversely affecting to the flow of goods and services in the economy.

This has been felt intensively all over the world as ecological ideal and ecological economics. Hence efforts must be made to include environmental preservation in economic development plans.

Sustainable development is possible only when the basic needs of the people are met by increasing the productivity of the economy without disturbing the environmental resources and by ensuring equal opportunities for all, particularly poor and marginalised groups. Sustainable development is possible by sustaining local and global environment. Environment damages have to be arrested immediately so as to leave access to such resources for posterity and they do not become extinct. Pursuing the goal of sustainable economic development can enable less developed countries to strike a balance between economic development and environmental conservation.

Economic sustainability is the ability of the local economy to sustain itself without causing irreversible damage to the natural resource base on which it depends. This implies maximizing the productivity of local economy not in terms of increase in economic capital but in relation to the sustainability of other four dimensions - Social, natural, physical and political and their respective goals.

Development strategy must be associated with ecological balances to achieve the goal of sustainable development; otherwise, we will be pushed into a futureless growth.

Strong political will and effective change in the attitude of people, ethical commitment and social concerns are critical for sustainable development and it is the need of the hour.

References :-

1. Bishwa Nath Singh et al. (2003), “Economic Reforms in India edited book, Published by APH Publishing Corporation New Delhi. Pp 281- 294.
2. Kumar Ratnesh (2006), “Environmental Economics Theory and Practices”, Deep & Deep Publications Pvt. Ltd., New Delhi, Pp 61-68.
3. Ramaswamy et al (2010), “Environmental sustainability Approaches and Policy Options” published by Regal Publications New Delhi, Pp 1-13.

****

Socio-Economic Potential Of Handicraft Industry In Jammu And Kashmir - Opportunities And Challenges

Mir Shahid Ul Islam *

Abstract - In the present paper an attempt has been made to analyze to socio-economic potential of handicraft industry in Jammu and Kashmir: opportunities and challenges as the valley is considered paradise on earth. It is said that handicraft industry has come here from Central Asia. Handicrafts is one of the biggest employment providers and the bulk of women workers are also involved in this profession. Handicrafts is a pivotal source of revenue generation of Jammu & Kashmir State. This industry is unique in terms of design, cost and quality of products and thus provides a competitive advantage on other national and international players of handicrafts market. In spite of the various advantages, the industry still needs to explore and identify various opportunities and challenges ahead to compete at national as well as at global level marketers. In this backdrop, the present research paper is an endeavor to study various avenues of social and economic upliftment of state in terms of revenue generation, foreign exchange, raising standard of labors and employment generation. The paper focuses on the contemporary challenges as well as the scope of handicraft sector in the state of Jammu & Kashmir and thereby providing suitable suggestions in order to make industry more market oriented and sustainable in future.

Keywords - Handicrafts Industry, Employment Generation, Socio-Economic Development.

Introduction - The state of Jammu and Kashmir is famous throughout the world for its scenic beauty, bracing climate and craftsmanship skills. It was during the reign of Sultan Zain-ul-Abidin, popularly known as Budshash or the great king who ruled Kashmir from 1420-70 AD that handicrafts were introduced in Kashmir. The king Zain-ul-Abidin hired skilled craftsmen from Central Asia to train local inhabitants in a number of handicrafts which were till then altogether unknown to the people of the state. Since then craft legacies continued and got encouragement and patronage from different rulers, princes, visitors to the valley, thus skills passing on from generation to generation. Jammu & Kashmir has comparative advantage in producing high quality and world famous fabrics of Pashmina and Kani shawls, silken, woolen and cotton fabrics and crafts like papier-mache, wood work, Tila work, Sozni, Crewel, etc. These products are famous world - over because of their unique craftsmanship. The handicraft sector has, however, suffered due to its unorganized structure, constraints of lack of skilled education, low capital, poor exposure to new technologies, absence of market intelligence, poor infrastructure and institutional framework.

It is against this backdrop that the present paper attempts to highlight the problems and prospects of this sector in J&K. In the contemporary state of affairs existing in the Indian economy, the handicraft sector has emerged as a focused area of interest for the scholars' community, academicians, practitioners and other allied stake holders. The sector has proven very instrumental in uplifting the regional growth particularly in rural areas and therein minimizing the imbalances prevailing in the economy. The incredible feature of the handicraft sector to contribute towards sustainable development has attracted the attention of present researchers because of the fact that the sector satisfies not only the existing set of millions of artisans but has a concern for the large number of new entrants in the handicraft sector.

Handicraft products are mostly defined as items made often with the use of simple tools, and are artistic or traditional in nature (Yojana, 2006). Handicraft products are simply as the objects made by the skill of the hand carrying a part of the creator as well as centuries of evolutionary tradition. India ranks as one of the major supplier to the total production and supply in the world handicraft industry and the industry is located almost all over the country in rural and urban areas.

Handicrafts Sector in India: An Overview - India is a diverse country in terms of ethnic traditions and culture and also a treasure house of Indian handicrafts. Exquisite handicrafts using diverse raw materials are sourced from different parts of the country. This include art metal ware, wood ware, hand printed textiles and scarves, leather crafts, hand knotted carpets and embroidered goods, wood design, shawls as art ware, stone carvings, imitation jewelry and miscellaneous other handicrafts. One of the unique feature of the handicrafts is that more often the same item of the handicraft, produced in different regions are different from each other in terms of the craftsmanship, style, color combination and finish by artesian creativity.

* **Research Scholar, R.D.V.V.Jabalpur (M.P.) INDIA**

The Indian handicrafts industry is highly labor intensive cottage based industry and decentralized, being spread all over the country in rural and urban areas. Numerous artisans are engaged in crafts work on part-time basis. Handicrafts industry plays a substantial role in building up of country in terms of its share in employment, output production and prosperity creation (Syed Khalid-2012). The handicrafts of a society often become the dominant means of livelihood. It also satisfies their daily requirements of the people and provides employment to the members of the households of the society which in turn leads towards socio-economic development. The industry provides employment to over six million artisans who include a large number of women and people belonging to the weaker sections of the society. The Handicrafts Sector plays a significant & important role in the country's economy. It provides employment to a vast segment of craft persons in rural & semi urban areas and generates substantial foreign exchange for the country, while preserving its cultural heritage. Handicrafts have great potential, as they hold the key for sustaining not only the existing set of millions of artisans spread over length and breadth of the country, but also for the increasingly large number of new entrants in the crafts activity. Presently, handicrafts contribute substantially to employment generation and exports. In addition to the high potential for employment, the sector is economically important from the point of low capital investment, high ratio of value addition, and high potential for export and foreign exchange earnings for the country.

The handicraft sector is still being fully explored in order to tap the other opportunities like its contribution to socio-economic development of the state. In order to efficiently utilize this asset, there is a need to create it as benchmark and discover the new techniques and tools that will help it to stabilize as competitive edge in the world market. There is a need to focus the hidden obstacles and opportunities that will serve as an instrumental to create a niche in the global business environment and thereby facilitating the process of wealth creations and employee generation to raising the standard of living of millions of skilled and semi-skilled artisans of the Indian subcontinent. The business environment is flexible and so is the customer residing therein. The challenge can be profitable to handicraft products by maintain the outside-in view in order to create value and deliver the same through continuous effort in the value chain process.

An Outline of Jammu & Kashmir Handicrafts - The handicrafts industry of J&K is an important sector contributing to overall development of current and other allied sectors in terms of wealth and employment creation thus occupying an important place in the economy of J & K. It is basically a cottage industry and provides direct and gainful employment to more than 3 lakh people and has the potential to facilitate the path of raising the living standards of citizens residing within and outside the boundary of state. The handicraft products have earned global acclaim for their exquisite designs, craftsmanship and functional utility. The woolen and silken carpets of the state remain unparalleled on the national scene for quality and design. The crewel embroidered pashmina, and embroidered raffle shawls, pattern of Kani shawls, intricate wood carving, production of flora design in paper mache goods, etc., are some of the world famous traditional crafts of the state. In fact, the Kashmiri craftsman possessing a unique talent for intricate workmanship is one of our most important resources. This industry has a tremendous potential and has to be perceived with concern and with a precise understanding of its values. As an export oriented industry, it has contributed considerably towards foreign exchange earnings worth crores of rupees annually. It is a cottage-based industry, which does not require heavy capital investment and heavy infrastructure such as machinery, buildings and power.

The Kashmir valley is recognized throughout the world so far as the arts and crafts as well its scenic beauty and bracing climate is concerned. It is famous for the weaving of specialized fabrics like Pashmina and Kani Shawls, Silken, Woolen and Cotton fabrics. The crafts range from woolen textiles of fleecy soft texture of matchless excellence in weaving, hand-woven carpets of the finest warp and weft, to the exquisite designs worked on Papier-Mâché, Wood Work, Silverware, etc. They are products of unique craftsmanship. The skill of the craftsmen and their capacity for intricate workmanship are assets, which can help development on a much larger scale. Besides, as an export-oriented sector, it is instrumental in foreign exchange earnings worth crores of rupees annually.

The Regional Specialties of Jammu & Kashmir state in the production of handicrafts portfolio consists of:

- Jammu – Basholi Painting, Calico Painting, Phoolkari.
- Kashmir – Carpets, Kashmiri Shawls, Wood Carving, Paper-mache, Chain stitch, Crewel, Namda.
- Ladakh – Wood carving & Painting, Clay Molding, Ladakh Pashmina Weaving, Ladakh Carpet, Thanka and Fresha Painting.

Undoubtedly Handicrafts have an important role to play in the development of country in general and J & K in particular. In the absence of large scale industries in the State, handicrafts have remained a key economic activity from times immemorial. The major chunk of foreign exchange earnings to the State come from this sector. The need is to revive the centuries old traditional handcrafts on the one hand and explore new youth friendly ventures in the same sector on the other. This sector has great potential provided Government realizes the urgent need for a shift in its policy regarding small scale industries of the Jammu and Kashmir state in general and handicraft industry in particular.

The handicraft sector occupies an important position in the economic structure of J&K state. Being eco-friendly, this sector suits to the state as it is more labour intensive and less capital intensive in nature, therefore, having scope for employment generation at a large scale. J&K handicraft products are worldwide famous for their attractive designs, functional utility and high quality craftsmanship. In the

absence of large scale industries in the State, handicrafts remained a key economic activity from times immemorial. Crafts like shawls, crewels, namdha, chain stitch, wood carving, costume jewelry, kani shawls, paper mashi, and carpets hold a significant share in the overall production and export of the state. Silken carpets in particular constitute a specialty having no parallel in quality and design at national level and therefore, it occupies an important position in the international market.

References :-

1. Annual Plan 1999-2000, Govt. of Jammu and Kashmir, Planning and Development Department, Srinagar.
2. Dr. Darakhshan Anjum; A Study Of Handicrafts Industry In J & K, A Journal of Advances in Management , IT & Social Sciences; Volume 1, Issue 4.
3. Jammu and Kashmir Handicrafts Development Corporation Ltd.
4. Kashmir Times (2002), Measure underway to boost handicraft, Jammu & Kashmir.
5. Kamal (2002), Handloom Research & Design Development Centers soon, Daily Excelsior, Jammu & Kashmir.
6. Marof Redzuan & Fariborz Aref.(2011), Constraints and potentials of handicraft industry in underdeveloped region of Malaysia; African Journal of Business Management Vol. 5(2), 256-260.Mr. Bilal Ahmad Sheikh. (2010), Structural changes in Jammu and Kashmir Economy, Thesis, Kashmir University, J&K.
7. Rather, Tariq A, J & K Handicrafts: Ingrained in Socio-Economic Ethos of India, Press Information Bureau, Govt. of India.
8. Syed Khalid Hashmi. (2012), Market for Indian Handicrafts; Excel Journal of Engineering Technology and Management Science; Vol. I No., December-January.
9. Waqar Ahmad Khan and Zeeshan Amir. (2013), Study of Handicraft Marketing Strategies of Artisans in Uttar Pradesh and Its Implications: Research Journal of Management Sciences, Vol. 2(2), 23-26.
10. Vincent Cable and Ann Weston. (1982). Working Paper: The role of handicrafts Export; Problems and Prospects based on Indian experience; No.10, Overseas Development Institute, London.

****

जन-धन पर भूकम्प का विध्वंसक कहर

डॉ. एस. के. वर्मा *

प्रस्तावना – प्रकृति का एक डरावना चेहरा भी होता है, जिन्हें हम प्राकृतिक आपदाओ के नाम से जानते है। भूकम्प, सूनामी, चक्रवात, ज्वालामुखी, विस्फोट, भूस्खनन, बाढं, हिमपात, वनाग्नि, सूखा, और समूद्री तूफान जैसी प्राकृतिक आपदाएं व्यापक तबाही का कारण बनती है। भूकम्प प्राकृतिक आपदा का सर्वाधिक विनाशकारी रूप है,जिसके कारण व्यापक तबाही होती है।भूकम्प से विश्व भर में प्रतिवर्ष अनेको व्यक्तियों की मौत होने के साथ ही अरबों-खरबों रूपयो की सम्पत्ति भी नष्ट हो जाती है। आमतौर पर भूकम्प का प्रभाव अत्यन्त विस्तृत क्षेत्र में होता है। भूकम्प व्यक्तियों को घायल करने और उनकी मौत का कारण बनने के साथ ही व्यापक स्तर पर तबाही का कारण बनता है। इस तबाही के अवानक और तीव्र गति से होने कारण जनमानस को इससे बचाव का समय नही मिल पाता हैं। 1

भूकम्प से आशय एवं परिभाषा –भूकम्प शब्द दो शब्दो से बना है भू तथा कम्प, जिसका सामान्य अर्थ पृथ्वी का कंपन है,जिस तरह किसी शान्त जल में पत्थर का टुकडा फेंकने पर गोलाकार लहरे केन्द्र के चारो ओर प्रवाहित होती है,उसी तरह भूगर्भ उदगम केन्द्र से भूकम्प लहरे चारो ओर फैलती है। भूकम्प की उत्पत्ति जिस स्थान पर होती है,उसे भूकम्प केन्द्र (फोकस) कहते हैं। [2]

सेलिसवरी के अनुसार 'प्राकृतिक कारणो से जब पृथ्वी की सतह कापने लगती है तो उसे भूकम्प कहते है।' **स्ट्रेहलर के अनुसार** 'मानव के लिए धरातल का धक्के खाना या कम्पन द्वारा हिलना ही भूकम्प हैं।' अति प्राचीनकाल में भूकम्प पूर्णत: दैविक घटना माना गया है। हमारे देश मे इसका कारण शेषनाग के फन पर पृथ्वी का टिका होना एवं भूकम्प का आना प्रकृति एवं ईश्वर के क्रोध को माना गया है। भूकम्प एक ऐसी घटना है जिस पर मानव का कोई वश नही है, भूकम्प विशिष्ट व आकस्मिक अन्तर्जात शक्तियॉ है इसके विशेष प्रभाव से पृथ्वी का क्षेत्र हिलने लगता है, इसी से वहा पर कुछ सेकण्डों में सब कुछ नष्ट होने या प्रलय मच जाने से अपार जन धन की छति हो जाती है।

भूकम्प एवं भूकम्प विज्ञान – भूकम्प एक ऐसी प्राकृतिक या दुखान्त घटना है। जिस पर मानव का कोई वश नहीं है, अनेको क्षेत्रों में वैज्ञानिक विकास की ऊँची उड़ान भरने वाला मानव आज भी भूकम्प के समक्ष स्वयं को विवस ही है, फिर भी इनके आने की घटनाओं का अध्ययन, उनकी प्रकृति, प्रवृत्ति, भूकम्प तरंगो का अध्ययन वैज्ञानिक विधि से व्याख्या कर उनका अध्ययन करने का विशेष प्रयास किया गया है। भूकम्प का अध्ययन करने वाले विज्ञान को भूकम्प विज्ञान या सिसमोलोजी (sismology) कहा जाता है। [3]

हमारी धरती मुख्य तौर पर चार परतो से बनी हुई है। इनरकोर,आउटकोर, मैनटल, और क्रस्ट। क्रस्ट और ऊपरी मैण्टल को लिथोस्फेयर कहते है। ये 50 किलोमीटर की मोटी परत वर्गो में बटी हुई है, जिन्हें टैकटेनिक प्लेट्स कहा जाता है। ये टैकटेनिक प्लेट्स अपनी जगह से हिलती रहती है लेकिन जब ये बहुत ज्यादा हिल जाती है, तो भूकम्प आ जाता है। ये प्लेट्स क्षैतिज और ऊर्ध्वाधर, दोनों ही तरह अपनी जगह से हिल सकती है। इसके बाद वे अपनी जगह तलाशती है, और ऐसे प्लेट दूसरी के नीचे आ जाती है। [4]

भूकम्प की मापनी या रिक्टर मापनी (Richer magnitude scale) **–** जिस यंत्र से भूकम्प की सघनता एवं संभावित प्रभाव को मापते है,उसे भूकम्पलेखी या सिसमोग्राफ कहते है। इसे 12 अंको की मापनी मे बाटा गया। रिक्टर पैमाना कम्पन की तरंगो की तीव्रता मापने का एक गणितीय पैमाना है। किसी भूकम्प के समय भूमि के कंपन के अधिकतम् आयाम और किसी याद्दच्छ (आर्बिट्रेरी) छोटे आयाम के अनुपात के सूारण लघुगणक को रिक्टर पैमाना कहते है। रिक्टर पैमाने का विकास 1930 के दशक मे अमेरिका वैज्ञानिक चार्ल्स रिक्टर द्वारा खोज किया गया था। 1970 के बाद से भूकम्प की तीव्रता के मापन के लिए रिक्टर पैमाने के स्थान पर 'आघूर्ण परिणाम पैमाना (Moment Magnitude Scale (MMS) का उपयोग किया जाने लगा। निम्न सारणी विभिन्न परिणामो के भूकम्पो का केन्द्र के निकट प्रभाव, तीव्रता,भूकम्प की पुनरावृत्ति को दर्शाती है।

टेबिल न0 – 01 **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

भूकम्प आने के कारण – भूकम्प पृथ्वी की आन्तरिक क्रियाओ के परिणाम स्वरूप आते है,कंपन के कारण पृथ्वी की सतह पर कंपन होता है। जिसके कारण पृथ्वी पर व्यापक स्तर में उथल-पुथल हो सकती है।भूकम्प का धरती पर विनाशकारी प्रशव, भूस्खनन, धरातल का धसाव, मानव निर्मित पुलों, क्षति, जैसी संरचनाओ की छति या नष्ट होने के रूप मे दृष्टिगोचर होता है। ज्वालामुखी विस्फोटक , भ्रंश या दरार (पृथ्वी की पटल मे आई टूटन),जलीय शर, भूसंकुचन का विकृत होना(पटल मे संकुचन),तथा प्लेट विवर्तनिकी क्रियाएं भूकम्प का मुख्यकारण है। जिस बिन्दु भूकम्प जन्म लेता है, उसे भूकम्पीय केन्द्र बिन्दु और उसके ठीक ऊपर पृथ्वी की सतह पर स्थित बिन्दु को अधिकेन्द्र अथवा अंतः केन्द्र कहते है।

विश्व की पृथ्वी के विभिन्न स्थानो पर ई0पूर्व से दिनॉक 26 अक्टूबर 2015 तक प्राप्त अभिलेखो के आधार पर अध्ययन में पाया गया कि **08 से 9.5** तीव्रता परिमाण तक सबसे बड़ेकम्प कुल 39 जिनमे सबसे बडा 9.5 तीव्रता परिमाण का चिलीकम्प जापान 22 मई 1960, दूसरा 9.2 तीव्रता परिमाण का अलस्कूकम्प युनाइटेड स्टेट्स 27 मार्च 1964, एवं तीसरा 9.1 तीव्रता परिमाण का हिन्दमहासागर भूकम्प सुमात्रा, इंडोनेशिया 26 दिसम्बर 2004, को आया। साथ ही सबसे अधिक ताकतवर कुल 61 भूकम्प आए, जिनमे 26 अक्टूबर 2015 को हिन्दुकु भूकम्प अफगानिस्तान में सबसे अधिक ताकतवर था जिनकी तीव्रता 7.5 परिमाण एवं भूकम्प का केन्द्र जमीन से 200 किलोमीटर नीचे था।

टेबिल न0 – 02 **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

* प्राध्यापक एंव विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, अमरपाटन, जिला - सतना (म.प्र.) भारत

भूकम्प की वजह से सम्पत्ति का नुकसान –ई0पूर्व0 से दिनाकॅ 26.10.2015 तक प्राप्त अश्लिेखो के आधार पर विश्व में आये भूकम्पो से 847.5 बिलियन डालर की संपत्ति नष्ट हुई है – Tohokuy भूकम्प जापान 2011 तीव्रता परिमाण 9.0 मे 235 बिलियन डालर , **Grat Hansin** भूकम्प जापान 1995 तीव्रता परिमाण 6.9 मे 200 बिलियन डालर, **Sichuaa** भूकम्प चीन 2008 तीव्रता परिमाण 6.9 मे 66 बिलियन डालर, **Irpinia** भूकम्प इटली 1980 तीव्रता परिमाण 9.0 मे 57 बिलियन डालर, **Aangshan** भूकम्प चीन 1976 तीव्रता परिमाण 7.8 मे 42 बिलियन डालर , **Northidqey** भूकम्प युनाइटेड स्टेट्स 1994 तीव्रता परिमाण 6.7 मे 40 बिलियन डालर , **Craistcharch** भूकम्प न्यूजीलैण्ड 2011 तीव्रता परिमाण 6.3 मे 40 बिलियन डालर , **Chuetsu** भूकम्प जापान 2004 तीव्रता परिमाण 6.8 मे 28 बिलियन डालर , **Izmit** भूकम्प तुर्की 1999 तीव्रता परिमाण 7.6 मे 28 बिलियन डालर, **Chiliy** भूकम्प जापान 2010 तीव्रता परिमाण 8.8 मे 27 बिलियन डालर **Emiliya** भूकम्प इटली 2015 तीव्रता परिमाण 6.1 मे 15.8 बिलियन डालर , **Loma Prieta** भूकम्प युनाइटेड स्टेट्स 1989 तीव्रता परिमाण 6.9 मे 11 बिलियन डालर, 921 भूकम्प ताइबान 1999 तीव्रता परिमाण 7.6 मे 10 बिलियन डालर , **अप्रेल नेपाल भूकम्प** नेपाल 2015 तीव्रता परिमाण 7.8 मे 10 बिलियन डालर **(पुनर्निर्माण के लिए) , सैन फ्रान्सिस्कोूकम्प** युनाइटेड स्टेट्स 1906 तीव्रता परिमाण 7.9 मे 9.5 बिलियन डालर , **Grate kanto** भूकम्प जापान 1923 तीव्रता परिमाण 7.9 मे 8.2 बिलियन डालर हा।[7]

भूकम्प से मरनेवालो की संख्या – ई0पूर्व0 से दिनांक 26.10.2015 तक के रिकार्ड के आधार पर संकलित किये जाने पर विश्व में मृतको की कुल संख्यॉ 5314693 है, जिनका विवरण– पूर्व सदी से –11वीं सदी तक 1059000, 11वी सदी से–18 वी सदी तक, 2350731, 18वीं सदी से–19 वीं सदी तक, 125504, 19वी सदी से–20 वीं सदी तक,1096647,एवं 20वीं सदी से–21 वीं सदी,26 अक्टूबर 2015 तक, 682811 है। जिनमें लापता एवं जख्मी व्यक्तियो की संख्या का उल्लेख नही है,जिनका अनुमान मरने वालो की संख्या अनुसार लगाया जा सकता है, कि कितने गुना व्यक्ति लापता एवं जख्मी हुए होगे। इसके अलावा 1923 के टोकियो याकोहामा क्षेत्र के कंपन मे 05 लाख भवन नष्ट हुए। युगोस्लोवाकिया का **Wdk Ldklth** नगर ,जापान के टोकियो नगर का अधिकांश भाग, टर्की मे टेन्जियर नगर, आदि सभी नगर एवं 1737 के भूकम्प मे कलकत्ता नगर ही नष्ट हुआ बल्कि 02 लाख व्यक्ति मारे गये। भूकम्प के कारण जल तरंगे,या लहरे, उच्ची ज्वार लहर ऊपर उठती है जिन्हे सुनामी कहते है,जिनके आने से भवन, सडके, रेलमार्ग, खेत, इ़द्योगएवं अपार जन–धन कुछ ही सेकण्डो मे नष्ट हो जाते है। [8]

12 अगस्त 2014 को जारी जानकारी के आधार पर दुनियॉ मे सबसे अधिक भूकम्प का खतरा एवं आशंका वाले 10 देशो मे –इण्डोनेशिया, तुर्की, मैक्सिको, अल साल्वाडोर, पाकिस्तान, फिलीपीन्स, इक्काडोर, शरत, नेपाल, एवं जापान का नाम सूची मे है। [9]

भविष्य में भूकम्प की संभावनायें –हिमालय क्षेत्र मे आ सकता है भीषण भूकम्प एवं दो भागों मे बटेगा अमेरिका महाद्वीप । नेपाल मे 25 अप्रैल 2015 को भारी तबाही मचाने वाला जो 7.5 तीव्रता भूकम्प आया था ठीक उसी तरह अफगानिस्तान मे 26 अक्टूबर 2015 दिन सोमवार को 7.5 तीव्रता भूकम्प टेक्टोनिक प्लेट्स के टकराने के कारण आया है।, एक शीर्ष भारतीय भूकम्प विज्ञानी सीपी राजेन्द्रन का कहना है कि यह संकेत है,कि हिमालय क्षेत्र अबूकम्पीय दृष्टि से बहुत सक्रिय है। साथ ही ईरान में जन्मे वैज्ञानिक न्यूक्लियर इंजीनियर डॉ.मेहरान तबाकोली ने दावा किया है, कि अमेरिका महाद्वीप मे अगले कुछ महीनो के अन्दर ही भीषण भूकम्प आयेगा। इसके चलते अमेरिका महाद्वीप दो भागो में बंट जायेगा । इस भूकम्प के बाद आने वाली सुनामी से भीषण तबाही होगी जिससे एशिया और अमेरिका में करीब 04 करोड लोग मारे जा सकते है । इस भूकम्प के बाद उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका महा़द्वीप अलग हो जायेगा, भूकम्प की शुरूआत चीन से होगी वहॉ से पैदा होने वाली सुनामी कैलिफोर्निया को तबाह कर देगी।

मैसाचुसेट्स इस्टीट्यूट आफ टेक्नालाजी के पृथ्वी वायुमण्डलीय और ग्रहीय विज्ञान विभाग के पोस्ट ग्रेजुएट डॉक्टर और लॉस एलामास नेशनल लेबोरेटरी मे एन्ड्रयू डेलोरे के नेतृत्व वाली अनुसंधान टीम के सदस्य कबिन चाओ ने कहा , 'भूकम्प से पृथ्वी की परत मे 6 हजार किलोमीटर दूर तक के क्षेत्र में लचीलापन क्षमता में मूलभूत बदलाव आ सकता है, जिससे कुछ हफ्ते तक तनाव झेलने की उसकी क्षमता बदल सकती है '। [10]

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. साइटिफिक ISSN 2394.3734
2. सामाजिक विज्ञान मध्यप्रदेश राज्य शिक्षा केन्द्र भोपाल–वर्ष 2015 पृष्ट.क्र–58.
3. डॉ0 चतुर्भुज मामोरिया–भौतिक भूगोल साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा पृष्ट.क्र–76.—78
4. Web dunia शनिवार, 31 अक्टूबर 2015
5. https://hi.wikipedia.org/wiki & https://hi.wikipedia.org/s/1reo
6. http://www.elist10.com/top-10-biggest-earthquake-ever-recorded-history.
7. Net / lists of earthquakes property damage in world.
8. Net https://en.wikipedia.org/wiki/Lists_of_ earthquake
9. Net / http://lists10.com/10-countries-prone-earthquakes
10. स्टार समाचार पत्र सतना 28.अक्टूबर 2015

टेबिल न0 – 01

रिएक्टर परिणाम	वर्णन	भूकम्प प्रभाव	होने की पुनरावृत्ति
2..0 से कम	सूक्ष्म	सामान्यत: महसूस नहीं किया जा सकता पर पैमाने पर अंकित हो जाता हैं।	लगभग 8000 प्रतिदिन
2.0 से 2.9	छोटे	प्राय: महसूस नहीं, किन्तु दर्ज	लगभग 10000 प्रतिदिन
3.0 से 3.9	छोटे	प्राय: महसूस होते है किन्तु क्षति नही	49000 प्रति वर्ष (अनु.)
4.0 से 4.9	हल्के	घरेलू वस्तुओ में कपंन ,कंपकंपाने का शोर , कुछ क्षति संभव	6200 प्रति वर्ष (अनु.)
5.0 से 5.9	मध्यम	छोटे क्षेत्रो में बनी कच्ची इमारतो को क्षति संभव, अच्छी इमारतो में हल्की क्षति संभव	800 प्रति वर्ष
6.0 से 6.9	शक्तिशाली	160 कि.मी (100 मील) तक के व्यास के आबादी वाले क्षेत्रो में विध्वंसकारी हो सकते है।	120 प्रति वर्ष
7.0 से 7.9	बडे	बडे क्षेत्रो में प्रभावी क्षति और विध्वंस संभव	18 प्रति वर्ष
8.0 से 8.9	महान	कई सौ मील के क्षेत्र में ध्वसंकारी 01 प्रति वर्ष	
9.0 से 9.9		कई सहस्त्रो मील तक ध्वसंकारी, **20 वर्षो में एक** सर्वाधिक तीव्रता वाले दर्ज भूकम्प 22 मई 1960 में ग्रेट चिली मे दर्ज त्रीवता 9.5 थी	
10 से 12 तक	कथा जनक	कभी दर्ज नही	अत्यधिक बिरल (अज्ञात.)

रिएक्टर परिणाम एवं रिएक्टर पैमाना विवरण

स्त्रोत – संयुक्त राज्यू गर्भ सर्वेक्षण अभिलेखो पर आधारित 5

टेबिल न0 – 02

विश्व के 10 सबसे बडे भूकम्प

विश्व में भूकम्प प्रतिदिन आते है।लेकिन सभी भूकम्प घातक एवं खतरनाक नही होते मोटे तौर पर खतरनाक भूकम्प 10 चिन्हित है जो इस प्रकार है।

क्र	भूकम्प का विवरण	अवधि	तीव्रता	मृतक संख्या	धन हानि (डालर में)	बेघर–घायल
1	वेल्डीविय भूकम्प चिली जापान	22.5.1960	9.5	1655	55 करोड	3000–20 लाख
2	प्रिंस विलियम अलस्का अमेरिका	27.3.1964	9.2	199	40 करोड	–
3	हिन्द महासागर सुमात्रा इंडानेशिया	26.12.2004	9.1	230000	10खरब	5 लाख
4	कैमचटका भूकम्प रूस	04.11.1952	9.0	–	–	–
5	तोहोक भूकम्प जापान	11.03.2011	9.0	15881	36.6 खरब	6142–2668
6	चिली भूकम्प अफ्रीका	16.9.1615	8.8	–	01 लाख	–
7	सुमात्रा प्रशान्त महासागर कनाडा	25.11.1833	8.8	–	–	–
8	इक्काडोर कोलम्बिया	31.01.1906	8.8	1500	–	–
9	चिली भूकम्प जापान	27.02.2010	8.8	525	20 करोड	25
10	कैसकैडियॉ भूकम्प प्रशान्त महा.अमेरिका	26.01.1700	8.8	–	–	–
	महायोग			249760	47 अरब 55 करोड 01 लाख	

स्त्रोत– https://hi.wikipedia.org/wiki 6

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) Oct. to December 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

वित्तीय समावेशन में किसान क्रेडिट कार्ड की भूमिका-एक अध्ययन

डॉ. रिखबचन्द्र जैन *

शोध सारांश – वित्तीय समावेशन वंचित और कम आय वर्ग के विशाल वर्गो के लिए सस्ती कीमत पर वित्तीय सेवाओं के वितरण से है जबकि बैंकिग संस्थाओं द्वारा वित्तीय समावेशन के अन्तर्गत एक तरीका किसान क्रेडिट कार्ड का वितरण से हैं जिससे कृषको को आवश्यकतानुसार एवं समय पर सरल एवं आसान तरीके से वित्तीय सहायता उपलब्ध कराना है। वित्तीय समावेशन हेतु सार्वजनिक बैंको की मजबूती तथा निजी बैंको की सहभागिता आवश्यक है। जिसके अन्तर्गत अधिक आबादी को बैंक से जोड़ा जा रहा है ताकि सार्वजनिक अनुदान लाभार्थी के खाते में सीधा जमा हो और प्रशासनिक लागत कम आवे वित्तीय समावेशन इसलिए महत्वपूर्ण हो गया कि हमें बचत के प्रति आदत बढानी हैं, औपचारिक ऋण रास्ते उपलब्ध कराने है, इसके लिए आर.बी.आई बैंक रहित गॉवों में व्यापार संवाददाता नियुक्त करना, इलेक्ट्रोनिक लाभ हस्तान्तरण लागू करना तथा के. वाई. सी. के नियमों में ढ़ील देकर वित्तीय समावेशन में महत्ती भूमिका अदा कर रहा है।
शब्द कुंजी – वित्तीय समावेशन, किसान क्रेडिट कार्ड, बैंकिग प्रणाली ।

प्रस्तावना – स्वतंत्रता के 65 वर्ष पश्चात भी जनसंख्या का एक बहुत बड़ा वर्ग अभी भी बैंक रहित है। भारत में बैंको के प्रति व्यवस्को का योगदान 35 प्रतिशतहै जबकी विश्व में 50 प्रतिशतयोगदान हैं उसमें भी महिला व्यवस्क मात्र 26 प्रतिशत ही योगदान हैं 2005 से रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया एवं भारत सरकार ने वित्तीय समावेशन हेतु कार्य आरम्भ किया। वर्तमान में भारतीय बैंको के समक्ष एक व्यापक चुनौति विशाल जनसंख्या के वित्तीय समावेशन की है। सरकार को अपनी कल्याणकारी योजनाओं को लागू करने के लिए बैंको के सहयोग की आवश्यकता है। सरकार का लक्ष्य देश में बैंकिग सेवा तथा व्यवसाय को सशक्त बनाना है। वित्तीय समावेशन हेतु सार्वजनिक बैंको की मजबूती एवं निजी बैंको की सहभागिता आवश्यक है इसके लिए बैंको की नई शाखाऐ खोली जायेगी। जिससे रोजगार के नये अवसर उत्पन्न होगें, सरकार द्वारा छात्रवृत्तियॉ, पेंशन, वेतन आदि का भुगतान बैंक खातो के जरिये किया जाता है। हाल ही में प्रधानमंत्री जनधन योजना के अन्तर्गत 7.5 करोड़ नये खाते खोले गये इसके लिए आवश्यक है कि देश के प्रत्येक क्षेत्र में बैंको की पहुँच हो तथा प्रत्येक व्यक्ति का बैंक खाता हो।

शोध का उद्देश्य –

1. भारत में वित्तीय समावेशन की स्थिति का आकलन करना।
2. किसान क्रेडिट कार्ड की प्रगति का अध्ययन करना।
3. वित्तीय समावेशन में अधिक से अधिक आबादी को कैसे जोड़ा जाय मालूम करनां
4. वित्तीय समावेशन के उपकरणों पर आबादी का कितना विश्वास है मालूम करना।

शोध प्रविधि – शोध का अध्ययन प्रकाशित पुस्तके व द्वितीयक संमको तथा सरकारी, अर्द्ध सरकारी संस्थाओं से प्राप्त जानकारी का वर्गीकरण सारणीयन एवं विश्लेषण करके निष्कर्ष ज्ञात करना हैं।

वित्तीय समावेशन– भारतीय संदर्भ में वित्तीय समावेशन वंचित और कम आय वर्ग के विशाल वर्गो के लिए सस्ती कीमत पर वित्तीय सेवाओं के वितरण से है।

किसान क्रेडिट कार्ड – बैंकिग व्यवस्था से किसानों को आवश्यकतानुसार व समय पर सरल एवं आसान तरीके से वित्तीय सहायता दिलाना है जिससे खेती संबधी बीज, खाद, दवाईया, उर्वरक एवं जरूरी उपकरणों के क्रय के लिए वित्त की आवश्यकता की पूर्ति हो सके इस योजना के अन्तर्गत कृषको को उनकी भूमि की उपजाऊ क्षमता तथा कृषि जोत की मात्रा के आधार पर किसान क्रेडिट कार्ड दिया जाता है। किसान चाहे तो अपने कार्ड के माध्यम से तुरन्त नगद राशि आहरित कर सकता है, इस योजना के अन्तर्गत कृषक अपनी इच्छानुसार कृषि संसाधनो को क्रय कर सकता हैं इसमें ब्याज की दर भी बहुत कम ही रहती है।

बैंकिग प्रणाली – किसी भी देश की अर्थव्यवस्था में बैंकिग प्रणाली का महत्वपूर्ण योगदान होता है देश के आर्थिक विकास में बैंको की केन्द्रीय भूमिका होती है भारत में बैकिग विकास विभिन्न चरणों मे होते हुए वित्तीय समावेशन में महत्वपुर्ण भूमिका निभा रहा है।

इस प्रकार भारत में वित्तीय समावेशन में बैंको के माध्यम से किसान क्रेडिट कार्ड एक उपकरण के रूप मे महत्ती योगदान दे रहा है।

भारत में वित्तीय समावेशन क्यों महत्वपूर्ण है – नीति निर्माताओं ने मुख्य रूप से तीन आवश्यकताओं के लिए भारतीय ग्रामीण और अर्द्धग्रामीण क्षेत्रो के वित्तीय समावेशन पर ध्यान केन्द्रित किया है।

1. **बचत के प्रति आदत पैदा करने के लिए –** कम आय वर्ग जिसका मुख्य कारण बचत कम होने से पूँजीनिर्माण कम होना हैं वहॉ लोगो को पारम्परिक तरीके से हट कर बचत को प्रोत्साहित करते हुए उत्पादकीय बनाना है।
2. **औपचारिक ऋण रास्ते उपलब्ध कराना –** अब तक बैंक रहित आबादी परिवार दोस्तो और साहूकारों पर निर्भर रहा हैं ऋण की आसान एवं सस्ती उपलब्धता गरीबों (वंचित वर्गो) के लिए आवश्यक है।
3. **सार्वजनिक अनुदान एवं कल्याण कार्यक्रमों में अन्तराल होना–** गरीब व्यक्ति के पास वास्तव में कम अनुदान पहुॅच पाता है और ज्यादा प्रशासनिक व्यय हो जाता है। अत: वित्तीय समावेशन के अन्तर्गत सरकार ने

*सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

गरीब वर्ग को उनके बैंक खातो के माध्यम से सीधे नगद हस्तान्तरण के लिए प्रेरित कर रहा हैं अधिक से अधिक अनुदान सीधे रूप से लाभार्थी को मिले इसके लिए एक कुशल और सस्ती बैंकिंग प्रणाली की आवश्यकता है। जरूरत होने पर डाकघरो को भी जोड़ा जाएँ।

वित्तीय समावेशन हेतु भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा उठाये गये कदम – वित्तीय समावेशन के लिए 2004 में खान आयोग की स्थापना की गई जिसमें बैंको से आग्रह था कि जनसंख्या के विशाल वर्गो के लिए ऐसे खाते खोलना जो शून्य या बहूत कम राशि के साथ उपलब्ध कराना है 'नो फ्रिल्स' खाता बनाने की आवश्यकता पर बल दिया है। भारतीय रिजर्व बैंक ने निम्न कार्यक्रम अपनाये।

1. बैंकिग सेवा व्यापार संवाददाताओं (BCS) के माध्यम से घरो में पहुँचता है – व्यवसाय प्रतिनिधि इस बैंक रहित आबादी के ग्रामीण परिवारों के घरों तथा खेतो तक बैंक मदद करती है। यह बैकिंग कियोस्क और अल्ट्रा लघु शाखा (USBS) के माध्यम से कर रहा है।

2. इलेक्ट्रोनिक लाभ हस्तान्तरण (EBT**) –** सरकार ने लाभार्थियों के खातो में सीधे भुगतान के हस्तान्तण की प्रक्रिया शुरू कर दी है। इससे लागत कम करते हुए लाभार्थियों को बेहतर लाभ और राहत प्रदान करने की उम्मीद है।

3– के.वाई.सी. (KYC) नियमों में ढ़िल – कमजोर वर्गो के खाते अधिक खोले जाये इसके लिए रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया में के.वाई.सी. (KYC) (अपने ग्राहक को जानो) के नियमों में ढ़ील दी है।

वित्तीय समावेशन के अन्तर्गत ग्रामीण शाखाओं में गतिविधियों –

क्र	मदें	2014–15
1	ग्रामीण शाखाओं की संख्या	49571
2	शिविर लगाने वाली शाखाऐ	32509
3	शिविरो की संख्या	306188
4	कुल प्रतिभागियों की संख्या	1,48,26,647
5	शिविर में खोले गये खातो की संख्या	56,57,092
6	शिविर में पहले से खाता धारक की संख्या	66,86,518

वित्तीय समावेशन के अन्तर्गत 2014–15 में ग्रामीण शाखाओं में 3,06,188 शिविर लगाये जिसमें 56,57,092 नये खाते खोले गयें।

बैंकवार ATM का वितरण (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

वित्तीय समावेशन में वितरण तालिका के अनुसार ग्रामीण व नगरीय क्षेत्रों में बढ़ रहा है। 2013 से 2014 में 36 प्रतिशत ATM का वितरण अधिक हुआ है इसमें सार्वजनिक क्षैत्र के बैंको का योगदान अधिक है तथा पिछले वर्ष से वृद्धि दर भी अधिक हैं निजी बैंक को सहभागिता बढ़ानी चाहिए साथ–साथ विदेशी बैकों के का वितरण भी बढ़े।

2014–15 में शाखा रहित 2000 से कम आबादी वाले गॉव 4,90,000 चयनित किये गये उसमें से 3,90,387 को 14,207 बैंक शाखाओं ने कवर किया हैं। इसमें व्यावसायिक संवाददातो द्वारा 3,57,856 तथा 18,324 अन्य तरीके से जोड़ा है।

वित्तीय समावेशन योजना सभी बैंकिग सस्थाऐं(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका वित्तीय समावेशन योजना में ग्रामीण क्षेत्र की बैंको की शाखाऐं 2010 से 2015 के बीच बढ़ रही हैं शाखा रहित गॉवों में बैंकिग सुविधाओं का विस्तार प्रत्येक वर्ष लगभग 50 प्रतिशत से बढ़ रहा है।व्यावसायिक संवाददाता की संख्या एवं जमा राशि दोनों बढ़ रही है।

किसान केडिट कार्ड की संख्या एवं राशि में 2014 से 2015 में वृद्धि क्रमश: 7 तथा 19 प्रतिशत हुई ऑवर ड्राफ्ट सुविधा भी बढ़ रही है।

कुल मिलाकर वित्तीय समावेशन के अन्तर्गत 2014 से ग्रामीण क्षेत्र में बैंक शाखा रहित क्षेत्रों में व्यावसायिक संवाददाता द्वारा आबादी को कियोस्क व अल्ट्रा लघु शाखा के माध्यम से जोड़ा है इसके अन्तर्गत नये खाते शून्य शेष पर भी खोले जा रहे हैं जब नये खाते अधिक होगे तो किसान क्रेडिट कार्ड भी अधिक जारी होते है। इस प्रकार वित्तीय समावेशन में के.सी.सी. का योगदान है।

वित्तिय समावेशन की चुनौतियॉं –

1. बैंको के लिए पूंजी जुटाने के नियम उदार बनाने होगे।
2. गैर निस्पादित परिसम्पत्तियों का प्रबंधन भारतीय बैंको की एक समस्या है।
3. बैंको को ग्रामीण क्षेत्र में नई शाखा खोलना भी एक चुनौति है।
4. प्रतिस्पर्धा के कारण ग्रामीण बैंको की समस्या बढ़ सकती है।
5. आज आबादी का बड़ा हिस्सा बैंक से वंचित है।
6. व्यावसायिक संवाददाताओं की नियुक्ति एवं वेतन की समस्या।
7. कृषक वर्ग को किसान क्रेडिट कार्ड से जोड़ना भी एक समस्या है।
8. किसान क्रेडिट कार्ड के मोनेटरिंग की समस्या

ई–बैंकिग के प्रति अविश्वास के कारण –

1. गोपनीयता का अभाव
2. धोखे की स्थिति में जिम्मेदारियो का अभाव
3. ई–बैंकिग की जानकारी का अभाव
4. व्यक्तिगत जानकारियों की चोरी का भय
5. ए.टी.एम. से सम्बधित समस्याऐं
6. संचालन सम्बंधि जोखिम
7. सर्वर डाउन होने का डर
8. राशि गुम होने का डर
9. के.वाई. सी. के नियमो से आयकर देने का डर

निष्कर्ष –वित्तीय समावेशन में अधिकांश आबादी को सस्ती व सरल वित्तीय सहायता उपलब्ध कराना है जिसमें किसान क्रेडिट कार्ड भी एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहा हैं वित्तीय समावेशन व्यापारिक संवाददाताओं, इलेक्ट्रोनिक लाभ हस्तान्तरण एवं के.वाई.सी. के नियमों में ढ़ील देकर बैंक लाभार्थी के खाते में सीधा अनुदान जमा कर रहा हैं तथा किसान क्रेडिट कार्ड का वितरण भी बडा रहे हैं। अभी हमें बैंको की कार्य प्रणाली में और सुधार करना है। ताकी बैंक जनता के विश्वसनीय हो सके।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :–

1. रिजर्व बैंक वार्षिक रिर्पोट 2014
2. www.pmjdy.gov.in
3. Agarwal, parul 2014 financial inclusion in india- IOSR Journal of Business and management Vol-16 issue6 june 2014
4. Crisil (2013) in clusix financial inclusion index june 2013
5. लीड बैंक नीमच

बैंकवार ATM का वितरण

बैंक	2013			2014			कुल प्रतिशत वृद्धि
	ग्रामीण	नगरीय	कुल	ग्रामीण	नगरीय	कुल	
सार्वजनिक बैंक	9645	66247	75882	21810	94854	116664	54
निजी बैंक	3190	41521	44711	3982	45092	49074	10
विदेशी बैंक	28	1206	1234	32	1124	1156	-6
कुल	12863	108974	121827	25824	141070	166894	36

वित्तीय समावेशन योजना सभी बैंकिग सस्थाऐं

	मार्च 2010	मार्च 2014	मार्च 2015	2014 से 2015 में अंतर
ग्रामीण क्षेत्र में बैंक की शाखा	33378	46126	49571	3445
शाखा रहित गॉवो में बैंकिग सुविधा	34316	337678	504142	166464
गॉवो में कुल बैंकिग सुविधाऐं	67694	383804	553713	169909
नगरिय क्षेत्र में व्यावसायिक प्रतिनिधी संख्या	447	60730	96847	36117
बचत खाता धारक की संख्या (मिलियन)	60.2	126.00	210.3	84.3
बचत खाता धारक की जमा राशि (बिलियन रूपय)	44.3	273.3	365.0	91.7
बचत खाता धारक की संख्या व्यावसायिक प्रतिनिधी संख्या (मिलियन)	13.3	116.9	187.8	70.9
बचत खाता धारक की जमा राशि व्यावसायिक प्रतिनिधी (बिलियन रूपय)	10.7	39.0	74.6	35.6
बचत खाता धारक की कुल संख्या (मिलियन)	73.5	243.0	398.1	155.1
बचत खाता धारक की कुल जमा (बिलियन रूपय)	55	312.3	439.5	127.3
किसान क्रेडिट कार्ड की संख्या (मिलियन)	24.3	39.9	42.5	2.6
किसान क्रेडिट कार्ड की जमा राशि (बिलियन रूपय)	1240.1	3684.5	4382.3	697.8
ओवर ड़ाफ्ट सुविधा बचत खाता धारक संख्या मिलियन	0.2	5.9	7.6	1.7
ओवर ड़ाफ्ट सुविधा बचत खाता धारक जमा राशि बिलियन	0.1	16.0	19.9	3.9

स्त्रोत :- RBI ANNUAL Report 2010,21014,2015

****

भारतीय अर्थव्यवस्था-एक संक्षिप्त विश्लेषण (सामाजिक संरचना के परिप्रेक्ष्य में)

रावेन्द्र सिंह *

प्रस्तावना – समाजवादी चिन्तन की शुरूआत राबर्ट ओन के चिन्तन से मानी जाती है। सेण्ट साईमन थामस मूर इस श्रेणी के सर्वाधिक महत्वपूर्ण विचारक है। मार्क्स के पूर्व के समाजवादी मध्ययुगीन अर्थदासों की तरह के औद्योगिक दासों की परिस्थितियों में बदलाव के लिये आदर्श सामाजिक व्यवस्था की स्थापना करना चाहते थे। किन्तु वे इसके क्रियान्वयन हेतु कोई ठोस तार्किक योजना नहीं बना पाये। इसलिए मार्क्स के पूर्व के समाजवाद को काल्पनिक समाजवाद की संज्ञा दी जाती है। मार्क्स का महत्वपूर्ण योगदान यह है कि उन्होंने काल्पनिक समाजवाद को वैज्ञानिक समाजवाद में बदल दिया, (उनका स्पष्ट था पूँजीवादी का उन्मूलन में बदल दिया) उनका उद्देश्य स्पष्ट था पूंजीवादी व्यवस्था का उन्मूलन व साम्यवादी समाज की स्थापना, साम्यवाद का प्रेत जहाँ लाखों के लिये डरावना सपना था वहीं करोड़ों लोगों के लिए देवदूत।

भारत में समाजवाद की लोकप्रियता बीसवीं शताब्दी में दिखलाई देती है जो रूस की साम्यवादी क्रांति की सफलता से प्रेरित थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद पं. नेहरू के नेतृत्व में भारत ने अपनी लोकतांत्रिक यात्रा शुरू की क्योंकि वह लोकतांत्रिक आस्थाओं में विश्वास रखते थे। परन्तु आर्थिक क्षेत्र में अहस्तक्षेप की नीति के समर्थक नहीं थे। वे भारत की आर्थिक समस्याओं का हल समाजवाद में ही पाते थे। नेहरू का आदर्श राजनीतिक स्वतंत्रता व आर्थिक न्याय के बीच समन्वय था। उन्होंने कांग्रेस को इस बात की प्रेरणा दी की वह समाजवादी ढंग से जनता के आर्थिक सामाजिक कल्याण के लिये साहसपूर्वक प्रयत्न करें।[1]

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत की समस्याओं के समाधान के लिए विशाल राष्ट्रीय प्रयास आवश्यक था, उसका काम केवल चक्र विरोधी नीति अपनाने से नहीं चल सकता था, फलत: उसने सामाजिक और आर्थिक उत्तोलक (Economic Lever) के रूप में 'आयोजन' का सहारा लिया। समाजवादी आयोजन से प्रभावित होने के कारण हमने मार्क्सवादियों से समाज की संकल्पना ग्रहण की, किन्तु साथ ही हमारे विचारकों ने न्यायोचित समाज के पूर्ण विकास के लिए पूंजीवादी समाज के लोकतांत्रिक मूल्यों को भी अपरिहार्य माना। इस प्रकार हमने दो चरम समाजों के गुणों का लाभ उठाते हुए जिस समाज की कल्पना की वह लोकतांत्रिक समाजवाद (Democratic Socialism) के नाम से विख्यात हुआ। लोकतांत्रिक समाजवाद के सिद्धान्त पर आधारित समाज में लोकतंत्र और समाजवाद वस्तुत: ऐसे समाज की रचना के साधन होते हैं जिसमें जनता का जीवन स्तर उन्नत करने के लिए एक वर्ग द्वारा दूसरे वर्ग का शोषण रोका जाता है तथा व्यक्ति को आत्माभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त होती है अत: मानवीय व्यक्तित्व का अपेक्षाकृत पूर्ण और मुक्त विकास लोकतांत्रिक समाजवाद का सर्वोच्च लक्ष्य है। हाल ही में भूतपूर्व सोवियत रूस में भी बाजार आधारित अर्थव्यवस्था (Market Based economy) चालू की गई है। भारत भी अपनी अर्थव्यवस्था में उदारीकरण कर रहा है और सरकारी नियंत्रण एवं विनियमन को कम करता जा रहा है, परन्तु इसके साथ-साथ नेहरू के लोकतांत्रिक समाजवाद के दर्शन का परित्याग नहीं कर रहा है।[2]

समाजवाद भारत के पहले प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू की भरोसेमंद विचारधारा रही है। आजादी के पश्चात भारत की आर्थिक नीतियों पर समाजवाद का प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित हुआ है तथा सरकार के सभी कार्यक्रमों का मुख्य उद्देश्य एक समाजवादी समाज की स्थापना करना रहा है। दिसम्बर 1954 में संसद ने भी समाज के समाजवादी ढ़ाँचे पर मोहर लगा दी थी समय के साथ-साथ समाजवाद का ढ़ाँचा अप्रत्यक्ष तौर पर साम्यवाद में तब्दील होता चला गया। समाजवादी नीति पर हमारी अर्थव्यवस्था विभिन्न औद्योगिक नीतियों के रूप में आगे बढ़ती जा रही है जिसके अंतर्गत सरकार उपभोक्ताओं की जरूरतों की वस्तुओं एवं सेवाओं के वितरण को तथा वैकल्पिक इस्तेमाल के लिए संसाधनों के आवंटन को भी तय करती है।[3] भारत में प्रत्येक पंचवर्षीय योजनाओं में समाजवादी ढंग से विकास की बात कही गई है। हमारी ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में 'समावेशी विकास' (Inclusive growth) योजना का प्रमुख उद्देश्य ही रहा है जो समाजवाद का दूसरा रूप ही है। हम कहाँ तक समावेशी विकास किये है, इसका मूल्यांकन करना अत्यन्त आवश्यक है। मैंने अपने इस शोध पत्र में कुछ पैरामीटर के आधार पर मूल्यांकन करने का प्रयास किया है जो निम्नलिखित है –

चालू दैनिक बेरोजगारी की दर जो 1999-2000 में 7.3 प्रतिशत थी, बढ़कर 2004-05 में 8.3 प्रतिशत हो गयी,[4] बावजूद इसके कि दसवीं योजना के दौरान जी.डी. पी. वृद्धि दर औसतन 7.6% के उच्च स्तर पर थी। इसके अतिरिक्त रोजगार में समस्त वृद्धि असंगठित क्षेत्र में हुई, चाहे संगठित क्षेत्र की फर्मे अनौपचारिक रोजगार (Informal Emloyment) को बढ़ाती जा रही हैं। इससे रोजगार की गुणवत्ता में गिरावट का संकेत प्राप्त होता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि आर्थिक विकास और रोजगार में वृद्धि के बीच विपरीत संबंध देखने को मिला है। जैसा कि स्ट्रेवार्ट तथा स्ट्रीटेन[5] ने कहा है कि उत्पादन वृद्धि और रोजगार के विस्तार में विरोध हो सकता है, जब रोजगार आयोजन की ओर ध्यान न दिया जाए, तो आर्थिक विकास की गति तेज होने के बावजूद भी बेरोजगारी की समस्या बनी रहेगी। भारत में आर्थिक वृद्धि की और ध्यान तो दिया गया लेकिन रोजगार को बढ़ाने की कोई स्पष्ट नीति नहीं बनाई गई परिणाम स्वरूप भारत में 'जॉबलेस ग्रोथ' ही हुई और हम समाजवादी उद्देश्य से दूर हुए।

मानव विकास 'सूचक' जैसे साक्षरता, मातृ एवं शिशु मृत्युदर भी यह

*सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

दर्शाते हैं कि प्रगति धीमी है और भारत एशिया के बहुत से देशों से पीछे है। जबकि 2001 तक साक्षरता की दर बढ़कर 64.8 प्रतिशत हो गयी फिर भी भारत में 30.4 करोड़ व्यक्ति अनपढ़ थे जिसके कारण भारत विश्व का सबसे बड़ा अनपढ़ों का देश है। लैंगिक अनुपात (Sex Ratio) प्रति 1000 पुरूषों के लिए 933 स्त्रियां चिन्ता का एक और विषय है। इससे भी अधिक सोचनीय बात यह है कि 0-6 आयु वर्ग के बच्चों का लैंगिक अनुपात जो 1981 में 962 था तेजी से गिरकर 2001 में 927 हो गा।[6] शिशु मृत्यु दरें भी पूर्व एशिया के देशों की तुलना में नीची हैं। इसका प्रमुख कारण यह है कि भारतीय आयोजन के माडलों में मानव संसाधनों को शामिल नहीं किया गया है जिसका परिणाम यह हुआ है कि शिक्षा व स्वास्थ्य जैसे क्षेत्रों पर कोई चर्चा नहीं की गई है।[7] योजना आयोग ने समावेशी विकास का लक्ष्य रखा है। यह इस बात को स्वीकार करता है कि उत्पादिता में तीव्र वृद्धि के बावजूद, श्रम की वास्तविक मजदूरी में गिरावट आयी है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन[8] (ILO) की रिपोर्ट ने यह कठोर सत्य प्रस्तुत किया है कि 1990 और 2002 के बीच भारत के विनिर्माण क्षेत्र में वास्तविक मजदूरी में 22 प्रतिशत की गिरावट हुई, जबकि इस क्षेत्र की इस अवधि के दौरान उत्पादिता में 84 प्रतिशत की वृद्धि हुई। जाहिर है कि आर्थिक श्रम को उचित मजदूरी प्राप्त नहीं होती। व्यंगात्मक बात यह है कि प्रबंधकीय और तकनीक स्टॉफ के वेतन में 15 प्रतिशत की वृद्धि हो रही है। योजना आयोग के समावेशी विकास की रणनीति ऐसे उपायों का सुझाव देने में विफल हुई जिनके द्वारा तीव्र आर्थिक विकास द्वारा जनित अतिरेक में उन्नति से श्रम के भाग में वृद्धि हो। आज देश में श्रम प्रधान कार्यो को भी पूँजी प्रधान साधनों से किया जा रहा है। जिसके परिणाम स्वरूप बेरोजगारी की समस्या पैदा हो गई है। आज जरूरत है कि वह कार्य जो श्रम प्रधान हो, उसे श्रम द्वारा ही किया जाना चाहिए, पूँजी द्वारा नहीं। इस संदर्भ में लेबिस[9] का सुझाव अत्यन्त उपयोगी है। उन्होंने कहा कि जब प्रचलित मौद्रिक मजदूरी दर पर श्रम का आधिक्य हो तो उस मजदूरी दर पर पूँजी को उत्पादक नहीं माना जा सकता है, यदि वह ठीक वही काम करती है जिसे श्रम भी उतनी ही अच्छी तरह कर सकता है। इस तरह के निवेश पूँजीपतियों के लिए भले ही काफी लाभप्रद हो, लेकिन समाज के दृष्टिकोण से वे अलाभकारी होगें क्योंकि उनसे बेरोजगारी बढ़ेगी न की उत्पादन।

हमारे देश में गरीबी में लगातार कमी हुई - 1983 में 44.9 प्रतिशत से 1993 में 36 प्रतिशत और फिर 2004-05 में 28.3 प्रतिशत। यह घटनाचक्र ग्राम और शहरी दोनों क्षेत्रों में पाया गया। किन्तु ध्यान देने योग्य बात यह है कि सुधारपूर्वकाल (1983-93) में गरीबी में कमी की औसत दर 0.85 प्रतिशत प्रतिवर्ष थी जबकि सुधार उपरान्तकाल (1993-2004) में यह 0.70 प्रतिशत प्रतिवर्ष थी।[10] इससे यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि कुल गरीबी में कमी की दर सुधार उपरान्त काल में सुधारपूर्व काल की तुलना में धीमी थी। इसका अभिप्राय यह सकल देशीय उत्पादक (जी.डी.पी.) की वृद्धि दर चाहे सुधार उपरान्त काल में अधिक थी, फिर भी इसके परिणाम स्वरूप, गरीबी की कमी में उच्च दर जिसकी प्रत्याशा सुधारपूर्व काल में की गयी थी, व्यक्त नहीं हो पायी। नीति निर्धारकों का दावा था कि आर्थिक संवृद्धि का अंश रिसकर गरीबों तक जायेगा लेकिन आज वह स्त्रोत सूख गया है और प्रगति कुछ ही वर्गो (पूँजीपति वर्ग) तक ही सिमटकर रह गई है। सी.टी. कुरियन[11] ने इन सब के पीछे विद्यमान संरचना को ही दोषी मानते हैं। उनका कहना है कि विद्यमान संरचना के रहते हुए गरीबी निवरण में सफलता नहीं मिलेगी क्योंकि विद्यमान संरचना में साधनों पर निजी अधिकार है, उनका विवरण असमान है।

भारत में आय में घोर असमानता देखने को मिलती है। निजी क्षेत्र में वेतन की वृद्धि दर 15 प्रतिशत प्रतिवर्ष है। आई.आई.एम. से अभी पास हुए ग्रेजुएट्स वर्ष में 365 दिनों के लिए 5000 रूपये प्रतिदिन प्राप्त करते हैं। परन्तु करोड़ों ग्रामीण मजदूरों को सरकार की ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के आधीन 60 रूपये प्रतिदिन प्राप्त होते हैं और वे भी 100 दिन के लिए। ऐसी प्रखर असमानताएं अनैतिक है और इनका बने रहना सामाजिक स्थायित्व (Social Stability) के लिए खतरा है।[12] इसके लिए विशेष रूप में निगम क्षेत्र दोषी है। निगम अध्यक्ष वेतन व कमीशन के रूप में मोटी राशिया हथिया रहे है। 20 मुख्य कार्यकारी अध्यक्षों को जो कम्पनियों के संस्थापक भी है, वेतन और कमीशन के रूप में 187 करोड़ रूपये प्राप्त हुए।[13] भारत में वर्तमान में 36 अरबपति है जिनके पास कुल परिसम्पत्ति 191 अरब यू.एस. डालर है जो भारत के सकल देशीय उत्पाद (GDP) का एक चौथाई (25%) है।[14] इस प्रकार भारत में मिश्रित अर्थव्यवस्था ने अमीरों के पक्ष में काम किया है क्योंकि उनकी आर्थिक स्थिति ज्यादा मजबूत है। सुरेश डी तेन्दूलकर[15] के अनुसार जब भी मिश्रित अर्थव्यवस्था में निजी क्षेत्र में बाजार द्वारा संचालित विकेन्द्रित आर्थिक क्रियाओं का लक्षण निजी स्वामित्व में उत्पादन के साधनों के असमान वितरण के साथ मिला दिया जाता है तो इसका परिणाम आर्थिक असमानताओं में वृद्धि होता है और वही हुआ भी है।

भू-सुधार प्रोग्राम को एक भरसक उत्साह के साथ आरंभ किया गया परन्तु यह उत्साह शीघ्र ही शिथिल पड़ गया और भू-सुधारों के लिए आरंभिक जोश भी ठण्डा हो गया। मोटे तौर पर भू-सुधार विधान का परिकल्पना तो ठीक था परंन्तु इन कानूनों में बहुत दोष होने के कारण भू-सुधार विधान द्वारा ग्रामीण जनता को बहुत थोड़ा सा न्याय उपलब्ध हुआ। मध्यस्थों की समाप्ति संबंधी कानून बन जाने के बावजूद आज भी कृषि क्षेत्र में भूमि का केन्द्रीकरण है। 10 प्रतिशत लोगों के पास लगभग 56 प्रतिशत भूमि है जबकि नीची श्रेणी के 70 प्रतिशत लोगों के पास 13.8 प्रतिशत भूमि है[16] अर्थात आज भी भूमि में एक बहुत बड़ी असमानता देखने को मिल रही है। भूमि सुधार की समीक्षा करते हुए योजना आयोग[17] ने भी कहा है कि भूमि सुधार कार्यक्रमों का निष्पादन लक्ष्य की तुलना में अत्यन्त कम रहा है। इस संबंध में प्रो. दन्तवाला ने ठीक ही कहा, 'मोटे तौर पर भारत में अब तक बनाए गए भू-सुधार संबंधी कानून और निकट भविष्य में कल्पित कानून उचित दिशा में कदम हैं, किन्तु कार्यान्वियन के अभाव के कारण इनके परिणाम संतोषजनक होने से कहीं दूर हैं।'[18]

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि भारतीय अर्थव्यवस्था में समाजवाद की झलक कम दिखाई देती है जो पं. जवाहरलाल नेहरू की मंशा के भी विपरीत है। अत: आज आवश्यकता है ऐसा विकास करने की जो रोजगार बढ़ाए तथा जिसका लाभ एक निचले तबके तक जाये, तभी हम स्वर्णिम भारत की कल्पना को साकार कर सकते है तथा एक ऐसा भारत बना सकते हैं जिसमें सब खुशहाल हो, समानता हो तथा भाईचारा हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. http://hi.wikipedia.org/wiki/ भारतीय समाजवाद।
2. 'समाजवाद क्या है?' सम्पादकीय, चौथी दुनिया, 02.06.2011
3. पाण्डेय ए.के. 'भारतीय अर्थव्यवस्था-समाजवाद से उत्तर आधुनिकवाद का सफर' आलेख, राष्ट्रीय शोध संगोष्ठी शोध संक्षेपिका, 22-23 मार्च 2013, पृष्ठ-25
4. योजना आयोग 2002, विशेष दल की रिपोर्ट।
5. F Stewart and PP streeeten 'Conflicts beetween output

& Employment objectives' Third world employment Harmondswarth, 1973, PP-367

6. Census, 2001
7. Rudra Ashok 'Planning in India : an Evaluation In terms of its Models' Economic and Political weekly, April 27, 1985, PP 762
8. ILO Report, Labour and Social Trends in Asia and Pacific, 2006
9. Lewis, W.A 'The theory of Economic Growth' Oxford University Press, London, 1955, PP-356
10. S, Mahendra dev and C Ravi 'Poverty and Inequlities - india & State, 1983 - 2005
11. CT, Kurien 'Reconciling Growth and Social Justice : Strategies Versus Structure' Asian Seminar on Rural Development- The Indian Experience, New Delhi, 1986, P-382
12. दत्त एवं सुन्दरम 'भारतीय अर्थव्यवस्था' एस चन्द एण्ड कम्पनी लि. नई दिल्ली 2012 पृ. 436
13 दत्त एवं सुन्दरम भारतीय अर्थव्यवस्था एस चन्द एण्ड कम्पनी लि. नई दिल्ली 2012 पृ. 437
14. फोर्बस सूची, 2007
15. Tendulker, Suresh D 'Economic Inequalities and Poverty In India : an Interpretative Review' Bombay, 1987, PP-111
16. Patnaik utsa 'Development in capitalist Agriculture'Social Scientist, Sept,1972, P.P-174.
17. Planning commission : Report of the task force on Agrarian Relations
18. Dattawala, Report of the Tokyo Seminar on Problems of Economic Growth, Congres for cultural Freedom, PP-09

****

वैदिककाल एवं कृषि अर्थव्यवस्था

डॉ. आशा शुक्ला *

प्रस्तावना – वैदिक काल क्या है ?वैदिककाल (वैदिक युग) सी.ए. 1500–500 ई. पूर्व के दौर में भारतीय इतिहास के दौरान जो वेद सबसे पुराने शास्त्रों का हिन्दू धर्म बना रहे थे।

वैदिक काल के प्रारंभ में भारत के आर्यो उनके साथ उत्तरी भारत में बसे विशिष्ट धार्मिक परम्पराओं, शुरू के आदिवासी एवं देहाती के पश्चिमोत्तर भागों में केन्द्रित समाज, भारतीय उपमहाद्वीप यह 1200 ई. पूर्व व उसके बाद यह कृषि एक पदानुक्रम में वृद्धि से आकार का था।

भारतीय अर्थव्यवस्था में प्राचीन काल से ही कृषि प्रधान देश रहा है, ऋगवेद काल में अर्थव्यवस्था का एक संयोजन द्वारा ग्रामीण काव्य और कृषि, बड़े जार के क्षेत्र में बीज संस्करण और अनाज के भण्डारण का समतल कराने के लिए ऋगवेद में युद्ध लट का प्रमुख स्त्रोत था। आर्थिक आदान प्रदान विशेष रूप से युद्ध की एक इकाई के रूप में बाली (किंग्स) और पुजारियों (दाना) और वस्तु विनिमय का उपयोग कर पशुओं के लिए उपहार देने के द्वारा आयोजित की गई।

वैदिक युग में कृषि के लिये खानाबदोश जीवन वैदिक समाज के संक्रमण, कृषि के साथ आर्थिक गतिविधियों का प्रभुत्व गंगा इस अवधि के दौरान कृषि कार्यो की जटिलता, लोहे के औजार काला धातु के उपयोग में वृद्धि हुई। गेहूँ, चावल, जौ की फसलों की खेती कर रहे थे। इसके अतिरिक्त बढ़ईगिरी, चमड़े का काम, मिट्टी के बर्तन, ज्योतिष, आभूषण, वाईन बनाना, शिल्प व्यवसाय, तांबे के बतर्न, पीतल, सोना इसके बाद में वैदिक ग्रंथों, शीशा, चांदी का भी उल्लेख किया गया है।

कुछ विद्वानों का कहना है कि सभी व्यापारियों द्वारा पुजारियों, पशु पालकों, किसानों, शिकारियों, नाइयों और रथ बनाने के लिए शिल्प, गाड़ी बनाने, बढ़ईगिरी के व्यवसायों, घास और ईख के मैट बनाने, धातु का कार्य, धनुष सिलाई बुनाई का निर्माण ऋगवेद में उल्लेख किया गया है तथा व्यक्तिगत सम्पत्ति का मालिका का आदि तत्व ही नहीं हो और एक पूरे गुटों के रूप में भूमि, गाय–बैल पूरे अधिकार का आनंद लिया जाता रहा है तथा युद्ध के दौरान ऋण का भुगतान न करने का परिणाम के रूप में (दासी, दासा) का उल्लेख किया गया है।

प्रमुख तत्व – वैदिक संस्कृति के चटकों के साथ की पहचान पुरातत्व संस्कृतियों, गेरू रंग के मिट्टी के बर्तन, संस्कृति, गाधार संस्कृति, काले रंग के बर्तन संस्कृति, रंगीन ग्रे वेयर संस्कृति। कृषि के अलावा कुछ अन्य उद्योग भी करते थे जैसे बढ़ई का कार्य (लक्षन), लौहार का कार्य (कमार) वैद्य का कार्य (मिशक), कुम्हार का कार्य (कुलाल), बुनकर का कार्य (वाय) आदि। समय परिवर्तन के साथ कृषक की सोच में परिवर्तन आया है। मनुष्य के विचार प्रत्येक युग में बदलते रहे है और इसी का परिणाम है कि आज कृषक वैदिक युग के कुछ नाम लुप्त हो गये है और कुछ नाम विद्यमान है जैसे कृषि बंजर भूमि (पडती) वैदिक काल में था और आज भी है, हल को गांवों में नागर कहते थे इसी तरह इसे स्पष्ट किया गया है। वैदिक नाम एवं वर्तमान नाम उर्वरक–खेत, पड़ती भूमि–पडती, करोश–गोबर, कर्षण–जोतना, लबन–काटना, धान–यव, इसी तरह से अनाज को भी वैदिक नाम से जाना जाता था इसलिए प्रचलित नामों में बहुत अंतर है और बहुत से नाम लुप्त हो गये है।

वैदिक काल में बोले जाने वाले अनाजों के नाम

वैदिक काल	वर्तमान समय
गोधम	गेहूँ
जवा	जौ
ब्रीहि	धान
माप	उड़द

अनाज बोने की अलग–अलग ऋतुओं का वैदिक काल में वर्णन है जो हेमन्त में बोया जाता था और ग्रीष्म काल में पकता था। धान वर्षा ऋतु में बोया जाता था और शरद ऋतु में पककर तैयार होता था। व्यवसायिक अनाज जैसे तिलहन, दाले शीतकाल में बोया जाता था जो की अभी भी शीतकाल में ही बोया जाता है। फसल साल में दो बार बोई जाती थी। शीतकाल में बोई गई फसल चैत के महीने में पककर तैयार होती थी वहीं कृषि भारत वर्ष में आज भी है। अंतर केवल इतना है कि जलवायु विभिन्न क्षेत्रों में अलग–अलग है। खेतों की रक्षा करने के लिये उसे समय के अनुसार कीड़े, इल्ली से बचाने की समस्यायें, अतिवर्षा, अवर्षा से फसलों को हानि होती थी। खेतों की देखभाल करने के लिये अनेक वैदिक मंत्र उपयोग किये जाते थे। कृषि कार्य प्रारंभ करने के पूर्व विधि विधान से किसान खेती कार्य प्रारंभ करता था और अभी भी करता है। ऐसा प्रतीत होता है कि हमारी कृषि पद्धति वैदिक ढंग से आज भी चल रही है क्योंकि वैदिक युग में कृषि वर्षा पर निर्भर रहती थी आज में ग्रामीण क्षेत्रों एवं कुछ शहरी क्षेत्रों में दैवीय वर्ष पर निर्भर है। अच्छी वर्षा होने पर कृषि अच्छी होगी और वर्षा न होने पर अनाज नहीं होगा। वैदिक काल में सिंचाई का प्रबंध था, कुॅए तालाब होते थे यंत्रों द्वारा जल निकाला जाता था। जल दो प्रकार से मिलता था, पहला खोदने से जमीन जिसे (खनित्रिया) कहते है। दूसरा अपने आप होने वाली नदी जल इसे (स्वमंजा) कहते है। कुॅऐ से पानी पत्थर के चक्के से निकाला जाता था और एक जल कोष में रखा जाता था तथा आज भी भारत वर्ष में कुआॅ, नदी, नहर, तालाब से पानी निकाला जाता है।

कृषि मानव जीवन का आधार है इसलिए विश्व के विकासशील देशों में कृषि भूमि को अत्यधिक महत्व दिया जाता है। इसके वैदिक मंत्र भी वर्णित किये गये है।

शत्रं न: फाला विक्रषन्त भूमि
शत्रं की नाशा अभि यन्त वाहै।
शनं पर्यन्तों मधुना प्रयोभि:
शुनं शीरा शुनमस्मासु धत्त।।

अर्थात हमारे फॉल (हल्के नुकीले अग्रभाग) सुखपूर्वक पृथ्वी का

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) इंदिरा गाँधी गृहविज्ञान कन्या महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

कृषक, करते है, हलवाले (कीनाश) सुखपूर्वक थैलों से खेत जोते। मेघ, यधु तथा जल से हमारे लिये सुख बरसाये तथा सुना शीर हम लोगो में सुख उत्पन्न करे।

भारत में कृषि पशुओं के द्धारा की जाती है, पशु पालन कृषि कर्म के साथ जुड़ा हुआ है और कृषकों का जीवन निर्वाह का प्रमुख साधन भी है। वैदिक जीवनकाल में गाय का विशेष स्थान था और आज भी गाय बैल के द्धारा खेती पहले भी (वैदिक काल) में की जाती थी आज भी की जाती है। इसके साथ ही धन सम्पदा में भी गाय बैल को माना जाता था कि जितने ज्यादा गाय बैल व जानवर होगें लोगो के पास वह समाज में प्रतिष्ठा और सम्मान प्राप्त करने योग्य कहलायेंगे।

ऋगवेद में गाय को देवता मानते थे क्योंकि गाय गौरव का प्रतीक माना गया है और आज भी अपने भारत वर्ष में गाय को पूजा जाता है। बल्कि ऋगवेद में यह कहा भी गया है,

ऋषि भारद्धाज के शब्दों में – गाय ही हमारे लिये इन्द्र है, गाय ही सोमस्य की पहली घूंटी है, ये जितनी गाये हैं वे ही मनुष्यों इन्ह की साक्षात प्रतिनिधि है। मैं ह्ष्य से, मन से इसी इन्ह को चाहता हूँ।

वर्तमान में बुनकर के धंधे को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। पहले रूई को काटकर सूत तैयार किया जाता है, फिर कपड़ा तैयार किया जाता है। इससे वस्त्र जैसे–धोती, द्धुपट्टा, कम्बल व अन्य वस्त्र भी बनाये जाते है। इसे वैदिक काल में बुनकर को (बाग) कहते थे। अर्थात इसे पहले भी इसी उपयोग में बुनकर बना लेते थे आज भी इसका उपयोग किया जाता है।

अर्थवेद में तो इसकी अनूठी उपमा दी गई है। रात्रि व दिवा (दिन) की दो बहनें भी कहा गया है। जो वर्ष रूपी वस्त्र बनाने का कार्य बुनकर तैयार करती है। इनमें से रात्रि है ताना और दिन है बाना।

कृषि वर्तमान समय में विश्व स्तर पर की जाती है क्यों कि वैष्वीकरण एवं वसुधैव कुटुम्बकम का जमाना है। अर्थात इंटरनेट की स्थिति में पूरा विश्व एक है। इस आधार पर सारे कार्य किये जाते है। इसलिए कृषि विकास को ज्यादा महत्व दिया जाता है। उसमें व्यापारिक वस्तुओं का उत्पादन अधिक हो रहा है ताकि व्यापार बढ़े।

प्राचीनकाल से ही कृषि व उससे संबंधित व्यापार को बढ़ावा देने की प्रवृत्ति रही है, इसका उद्देश्य था अधिक से अधिक धन अर्जित करना। व्यापार के माध्यम से विश्व में कृषक एक दूसरे के निकट सम्पर्क और सहयोग बढ़ा रहे है। एक दूसरे के उन्नत तरीकों को अपनाकर अपने उत्पादन में वृद्धि कर सकें।

कृषि–संस्कृति हमारे देश में वैदिक संस्कृति का एक अभिन्न अंग रहा है फलत: 'वसुधैव कुटुम्बकम से प्रारंभ होकर' 'अतिथि दैवोभाव' तक इसकी यात्रा मौलिक खोज सिद्ध हो चुकी है। मानव मूल्य की तलाश कृषि के माध्यम से विकसिल करने से विश्व संस्कृति को प्रभावित किया जा सकता है। यही हमारी वैदिक संस्कृति का आधार है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:–

1. भारतीय अर्थव्यवस्था–डॉ सुषमा सिंह।
2. ग्रामीण अर्थव्यवस्था।
3. श्री बृजगोपाल भटनागर।
4. कृषि अर्थशास्त्र–श्री पी.के.गुप्ता।
5. नेट।

****

वैश्वीकरण और शिक्षा एवं मानवीय मूल्य

डॉ. शक्ति जैन *

प्रस्तावना – किसी भी देश के आर्थिक विकास में शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। व्यक्ति के स्वयं के विकास एवं राष्ट्र के आर्थिक विकास में शिक्षा का बहुत ही महत्व है। शिक्षा एक आर्थिक निवेश है जितना अधिक शिक्षा पर व्यय होगा उतना ही अधिक मानव कौशल ओर कौशल प्रशिक्षण के रूप में प्रतिफल प्राप्त होगा। अमेरिका और इंग्लैण्ड जैसे देशों में आशातीत आर्थिक विकास हुआ है उसका श्रेय शिक्षा को जाता है।

उदारीकरण और वैश्वीकरण के युग में कुशल श्रम और प्रशिक्षित मानव पूँजी की माँग है। वैश्वीकरण के इस युग में शिक्षा का उदारीकरण, निजीकरण, बाजारीकरण, व्यवसायीकरण के सकारातमक एवं नकारात्मक पक्षों में मानव जीवन को प्रभावित किया है। आवागमन और संचार के साधनों के विकास के फलस्वरूप भौगोलिक दूरियाँ कम हुई हैं। किसी भी देश का नागरिक कहीं भी जाकर शिक्षा ग्रहण कर सकता है। वर्तमान समय ज्ञान के विकास के चरमोत्कर्ष पर है, कौशल निर्माण एवं बौद्धिक संपदा बढ़ाने के लिए प्रत्येक देश प्रयत्नशील है क्योंकि जिस राष्ट्र के पास बौद्धिक संपदा के रूप में प्रबंधकीय और प्रशिक्षित संवर्ग इंजीनियर, वैज्ञानिक, कृषि विशेषज्ञ, कम्प्यूटर इंजीनियर जितने अधिक होंगे वह देश उतनी ही तेजी से विकास करेगा।

इस शोध आलेख में भारत में शिक्षा का बढ़ता स्तर एवं रोजगार के लिए पलायन करने वाले व्यक्ति तथा वैश्वीकरण और शिक्षा के सकारात्मक और नकारात्मक पहलू का विश्लेषण किया है।

भारत देश विकासशील देश है भारत देश की प्रमुख समस्यायें गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा है। शिक्षा की कमी एक गंभीर समस्या है, शिक्षण संस्थाओं का विकास (तालिका क्रमांक-1) तेजी से होने पर भी 2011 की जनगणना के अनुसार 26 प्रतिशत जनसंख्या निरक्षर है अर्थात साक्षरता का प्रतिशत 74 है। 26 प्रतिशत जनसंख्या को शिक्षा का लाभ नहीं मिल रहा है। निरक्षरता अपने आप में ही एक समस्या है सरकार इसके लिए अनिवार्य शिक्षा, सर्वशिक्षा अभियान आदि उपाय कर रही है।

तालिका क्रमांक-1
शिक्षण संस्थाओं का विकास

वर्ष	विश्वविद्यालय	महाविद्यालय	शिक्षक	एनरोलमेंट
1950	30	700	2400	5.97 लाख
2014	677	38000	8.17 लाख	280 लाख

स्रोत - दैनिक भास्कर, 7 अप्रैल, 2015

एक तरफ निरक्षर जनसंख्या, दूसरी ओर शिक्षा में गुणवत्ता की कमी भी सामने आ रही है। 2014 में 677 विश्वविद्यालय, 38000 महाविद्यालय के साथ आज भारत देश विश्व की तीसरी बड़ी शिक्षा व्यवस्था है। लेकिन गुणवत्ता की कमी देखने मिल रही है। क्योंकि विश्व के प्रथम श्रेष्ठ 200 विश्वविद्यालयों में किसी भी भारतीय विश्वविद्यालय का नाम शामिल नहीं है। यही कारण है कि भारत देश के नागरिक विदेशों में शिक्षा प्राप्त करने के लिए जा रहा है। भारत देश का प्रतिवर्ष लगभग 25 हजार करोड़ रूपया विदेशी शिक्षा पर खर्च हो रहा है।

वैश्वीकरण और शिक्षा के सकारात्मक पहलू – भारत में ज्ञान का विकास हुआ है भारत देश का नागरिक हर दूसरे देश में अपनी योग्यता प्रकट कर रहा है। विश्व की बड़ी-बड़ी संस्थाओं में भारत के युवा वर्ग को काम मिल रहा है। देश को तकनीकी लाभ मिला है। भारत देश युवाओं का देश है। कार्यशील जनसंख्या बहुत अधिक है। यहाँ 60 प्रतिशत से अधिक (15-59 आयु) युवा वर्ग है। इस युवा वर्ग को नयी-नयी तकनीक व उच्च शिक्षा के सुनहरा अवसर प्राप्त हो रहे हैं।

भारत देश का विश्व अर्थव्यवस्था में नाम हो रहा है। उसका एक कारण वैश्वीकरण और शिक्षा भी है। गोल्डमेन साक्स ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक Dreaming with BRICS : The Path to 2050 में विश्वासपूर्वक यह संभावना व्यक्त की कि BRICS देशों में भारत सकल घरेलू उत्पाद की दृष्टि से 2050 तक तीन सर्वोच्च अर्थव्यवस्था में से एक होगा।

भारत देश के युवा वर्ग कई विदेशी कंपनियों में काम कर रहे हैं और वहाँ पैसा कमाकर देश में भेज में रहे हैं। भारत में सकल आय बढ़ाने में इसका महत्व कहा जा सकता है। देश के नागरिक जागृत हुए हैं उद्योग क्षेत्र हो या व्यवसाय क्षेत्र हो या कृषि क्षेत्र हो सभी जगह आधुनिक तकनीक का उपयोग कर सकारात्मक लाभ प्राप्त हो रहा है यह वैश्वीकरण के कारण ही संभव हो पा रहा है।

वैश्वीकरण और शिक्षा के नकारात्मक पहलू – वैश्वीकरण की प्रक्रिया के दौरान आर्थिक परिवर्तनों के परिणामस्वरूप जो सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक परिवर्तन हुए हैं उन्होंने मानवीय जीवन के शाश्वत मूल्यों को हिला कर रख दिया है। वैश्वीकरण के दौर में आधुनिकीकरण का भारत देश में एक चकाचौंध की तरह प्रादुर्भाव हुआ है। भारत देश में वैश्वीकरण से देश के नागरिकों को अच्छी शिक्षा तो मिलने लगी है परंतु इनकी प्रतिभा का लाभ उठाने में नाकाम है जैसे हम देख सकते हैं कि नासा, माइक्रोसाफ्ट, इंटेल, गूगल, आई.बी.एम. जैसी विदेशी कंपनियाँ भारत में आर्थिक साम्राज्य को बढ़ाने में केन्द्रीय भूमिका निभा रही हैं।

रोजी-रोटी के लिए परदेश जाने की परंपरा नयी नहीं है लेकिन वैश्वीकरण के दौर में पलायन कर रहे लोगों को आयात-निर्यात की तरह देखा जाने लगा है। पलायन के दौर में भारत सबसे आगे है।

विदेशी रोजगार के लिए होने पलायन और उससे प्राप्त होने वाले रिसर्च, धन के विभिन्न ट्रेंडस पर प्रसिद्ध अमेरिकी अनुसंधान संस्था पी.ई.डब्ल्यू. रिसर्च ने हाल में ही एक अध्ययन किया है। रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 1990 में रोजगार के लिए पलायन करने वालों की कुल वैश्विक संख्या 15 करोड़ 40 लाख थी जो 2013 में बढ़कर 23 करोड़ 20 लाख हो गयी तथा कामकाजी

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

पलायन के आर्थिक आकार में वर्ष 2000 में यह लगभग 175 अरब अमेरिकी डालर था जो अब बढ़कर 529 अरब अमेरिकी डालर हो गया। किस देश से कितना पलायन हो रहा है तथा प्रवासी कामगारों से प्राप्त रकम को निम्न तालिका में दिखाया गया है।

तालिका क्रमांक-2

पलायन करने वाले व्यक्तियों की संख्या

भारत	1.24 करोड़
मैक्सिको	1.32 करोड़
रूस	1.08 करोड़
चीन	0.93 लाख
बांग्लादेश	0.78 लाख
पाकिस्तान	0.57 लाख
यूक्रेन	0.56 लाख

स्रोत – पी.ई.डब्ल्यू. रिपोर्ट के अनुसार।

तालिका क्रमांक-3

प्रवासी कामगारों से प्राप्त रकम (अमेरिकी डालर में)

भारत	71 अरब
चीन	60.2 अरब
फिलीपींस	26.1 अरब
मैक्सिको	22.6 अरब
नाइजीरिया	21.0 अरब
फ्रांस	21.6 अरब
मिस्र	20.0 अरब
पाकिस्तान	14.9 अरब
जर्मनी	14.7 अरब
बेल्जियम	10.8 अरब

स्रोत – पी.ई.डब्ल्यू. रिपोर्ट के अनुसार।

पलायन करने वाले व्यक्तियों की संख्या व प्रवासी कामगारों से प्राप्त रकम दोनों में ही भारत शीर्ष स्थान पर है। पलायन करने वाले व्यक्तियों में अमेरिका जाने वाले पेशेवरों की संख्या में पिछले 23 वर्षों में 200 प्रतिशत का इजाफा हुआ है। 1990 में 2 करोड़ 30 लाख लोग काम की तलाश में अमेरिका जाते थे अब यह आँकड़ा 4 करोड़ 60 लाख हो गया है। अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी 'नासा' में काम करने वाले कुल व्यक्तियों में 36 प्रतिशत भारतीय हैं इसी तरह माइक्रोसाफ्ट के 28 प्रतिशत आई.बी.एम. के, 17 प्रतिशत इंटेल के, 13 प्रतिशत व्यक्ति भारतीय हैं। इसी तरह अमेरिका और यूरोपीय देशों के चिकित्सा क्षेत्र में बड़ी संख्या में भारतीय काम रहे हैं। जो लाभ देश को मिलना चाहिए वह नहीं प्राप्त हो रहा है। अत: सरकार को इस संबंध में कुछ नीति बनाना होगी।

वैश्वीकरण के इस समय में गरीब देश इस सबसे दूर है। पलायन करने वाले लोग विकासशील देशों में हैं रोजगार आधारित पलायन के 529 अरब डालर के कारोबार में गरीब देशों की हिस्सेदारी मात्र 6 प्रतिशत है जबकि विकासशील देशों की हिस्सेदारी 71 प्रतिशत और अमीर देशों की हिस्सेदारी 23 प्रतिशत है।

वैश्वीकरण के कारण इस सभी का लाभ विकसित देशों को मिल रहा है। विकसित देशों में उच्च वेतनमान होने से व विदेशी कंपनियों के आकर्षण के कारण वहाँ पढ़ने जाने वाले विद्यार्थी वहीं रहने लगते हैं वैश्वीकरण और शिक्षा का यह नकारात्मक प्रभाव है कि जो शिक्षा का लाभ देश को मिलना चाहिए वह देश को नहीं मिल रहा है। इस संबंध में सरकार को कुछ प्रयत्न (भारत की कंपनियों का आधुनिकीकरण, आकर्षक बनाना, उच्च वेतनमान देना, विदेशी शिक्षा के लिए भेजे अवश्य पर उन्हें अपने देश व अपनी कंपनियों में ही कार्य करने का विशेष प्रलोभन देना, या चाहे तो अनिवार्य भी किया जा सकता है।) तभी भारत देश को वैश्वीकरण शिक्षा का लाभ प्राप्त हो पायेगा।

शिक्षा व मानवीय मूल्य – शिक्षा के वैश्वीकरण के कई अच्छे प्रभाव हैं लेकिन शिक्षा के बाजारीकरण के परिणामस्वरूप विश्वविद्यालयों का मूल चरित्र बर्बाद हो रहा है। भारतीय देश की सभ्यता व संस्कृति के उदाहरण दिये जाते थे आज भारत देश विश्व स्तर पर घोटालों का देश, बलात्कार, यौन शोषण का देश माना जाने लगा है। मानवीय मूल्यों में निरंतर गिरावट देखने को मिल रही है। गरीब वर्ग को शिक्षा व उच्च शिक्षा से वंचित होने से कुंठित समाज का निर्माण होता है अपराधों में वृद्धि होती है, नैतिकता में कमी आती है अत: वैश्वीकरण का लाभ यदि समाज के सभी वर्गों को मिलता है तो वैश्विक स्तर पर एक अच्छा प्रभाव दिखाई दे सकता है।

वैश्विक परिदृश्य में देखा जाये तो जितने भी विकसित देश हैं वहाँ शांति एवं सौहार्द्रता देखी जा सकती है और अविकसित व पिछड़े देशों में यह कम देखी जा सकती है। आतंकवाद व झगड़े फैलाने वाले देशों में शिक्षा का स्तर कम होता है जैसे पाकिस्तान, सीरिया, ईराक, नाइजीरिया आदि देश। आतंक फैलाने वाले देश लड़कों को शिक्षित करना नहीं चाहते यदि शिक्षित होंगे तो सोसाइड बम बनाना आसान नहीं होगा। इसी तरह लड़कियाँ शिक्षित होंगी तो यौन शोषण के विरूद्ध अपने प्रति होने वाले अत्याचार के खिलाफ आवाज उठायेंगी। यद्यपि वैश्वीकरण का यह लाभ हुआ है कि प्रत्येक देश में शिक्षा के स्तर में सुधार आया है शिक्षा का विकास हुआ है महिलायें शिक्षित होकर प्रत्येक क्षेत्र में आगे बढ़कर कार्य कर रही हैं।

अंत में कह सकते हैं कि शिक्षा सभ्यता व संस्कृति की जननी है सर्वांगीण विकास की आकांक्षा रखने वाला राष्ट्र शिक्षा को सर्वोच्च प्राथमिकता दिये बिना नहीं रह सकता है। वैश्वीकरण के इस दौर में शिक्षा ओर भी महत्वपूर्ण हो गयी है। क्योंकि सूचना प्रौद्योगिकी की अभूतपूर्व उपलब्धियों ने संपूर्ण विश्व को एक 'भूमंडलीय गाँव' में तब्दील कर दिया है। भारत देश भी नयी-नयी तकनीकों को अपनाकर शिक्षण संस्थाओं का विकास कर आगे बढ़ रहा है। आवश्यकता है कि शिक्षा का वैश्वीकरण तो हो पर बाजारीकरण न हो। निर्धन वर्ग को भी इन शिक्षण संस्थाओं का लाभ मिले तथा शिक्षा का रोजगारोन्मुखी होना आवश्यक है। भारत देश एक ग्रामीण प्रधान देश है अत: गाँव के व्यक्ति को ऐसा रोजगार मिले कि वह अपना व्यवसाय गाँव में ही खोले। तकनीकी शिक्षा प्राप्त करने वाले वर्ग का लाभ भारत देश को ही मिले। भारत देश की कंपनियाँ विदेशी कंपनियों से भी आकर्षक हो तभी यह संभव हो सकता है इस ओर सरकार को प्रयास करना चाहिए। गरीब वर्ग को शिक्षा का अधिक से अधिक अवसर दिलाना आवश्यक है अन्यथा इस वैश्वीकरण के युग में निर्धन वर्ग और भी निर्धन हो जायेगा और कई नयी समस्याओं को जन्म देगा।

शिक्षा में देश के प्रति प्रेम, परिवार के प्रति प्रेम, नैतिकता, परोपकार आदि मानवीय मूल्यों का समावेश होना आवश्यक है। धन का आकर्षण युवा वर्ग को विदेशों की ओर आकर्षित कर रहा है उसे रोकने के लिए कुछ प्रयास अवश्य होना चाहिए। सरकारी शिक्षण संस्थाओं को मजबूत बनायें तथा भारतीय उच्च शिक्षा को विश्वस्तर पर स्थापित करने के लिए आवश्यक है। तुरंत लाभ का न सोचकर शिक्षा पर विनियोग अधिक करना होगा शिक्षा पर

किया गया विनियोग गुणक की तरह कार्य करता है अच्छी गुणवत्तापूर्ण शिक्षा ही अच्छे ज्ञानात्मक और मानवीय मूल्यों का विकास कर सकती है। वर्तमान में देश में उच्च शिक्षा के समक्ष गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, रोजगारयुक्त शिक्षा, प्रतिभाओं का पलायन रोकना, शोध स्तर सुधारना, मानवीय मूल्य व नैतिकता में वृद्धि जैसी चुनौतियाँ हैं। इन समस्याओं को हल करना देश की प्राथमिकता होनी चाहिए तभी देश को वैश्वीकरण और शिक्षा का पूर्ण लाभ प्राप्त हो सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Challenges to teacher education - Kaur, Jagdish.
2. Education in India - S.N. Mukharji.
3. भारतीय शिक्षा और उसकी समस्यायें – विनोद पाठक।
4. भारत में शिक्षा के आयाम – डॉ. शंकरदयाल शर्मा।
5. कुरुक्षेत्र पत्रिका।
6. योजना पत्रिका।
7. दैनिक भास्कर, नवभारत टाइम्स, समाचार पत्र।

****

भारतीय संविधान में अंतर्निहित सामाजिक न्याय के क्रियान्वयन में सबसे बड़ी बाधा राज्य व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार : एक समीक्षा (प्रभाव, कारण व निदान के संदर्भ में)

लल्ला रैदास *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध का उद्देश्य भ्रष्टाचार से जुड़े उन विविध पहलुओं को उजागर करना, जो अब तक अनछुए हैं या जिन पक्षों पर लेखकों द्वारा जानबूझकर परदा डाला गया है या तोड़-मरोड़कर प्रस्तुत किया गया है। किन्तु यही छोटे-छोटे पहलू भारतीय राज्यव्यवस्था में एक बड़ी समस्या पैदा कर दिये हैं। इन पहलुओं का सम्बन्ध विकासशील राज्यों में पाये जाने वाले भ्रष्टाचार से जोड़ने का भी प्रयास किया गया है। इस शोध में उन कमियों से बचने का प्रयास किया गया है, जो प्राय: इस विषय के लेखकों द्वारा की जाती रही हैं। इन कमियों के पीछे कारण यह है कि इन लेखकों का सारा लेखन कार्य द्वितीयक ऑकड़ों पर आधारित होता है। अत: वह पक्ष छूट जाता है, जो भ्रष्टाचार विरोधी कार्य करते समय उपस्थित होता है। भ्रष्टाचार एक प्रक्रिया के रूप में जारी है। अत: अब इसे केवल व्यक्ति के आचरण मात्र से जोड़कर नही देखा जाना चाहिए। तीसरी कमी यह है कि इस समस्या के समाधान के लिए इन लेखकों ने सैद्धांतिक समाधान पर अधिक जोर दिया। इस शोध में तथ्यों का संकलन तो वृहद स्तर पर किया गया है किन्तु फिजूल तथ्यों के संकलन से बचने का प्रयास किया है।

शब्द कुंजी – भारतीय संविधान और सामाजिक न्याय, अवरोधक तत्व भ्रष्टाचार एवं उसकी प्रक्रियाएँ, भारतीय सुप्रीमकोर्ट एवं समाज।

प्रस्तावना – समकालीन समाज में सामाजिक न्याय की उपयोगिता निर्विवाद है और इसी कारण हमारे संविधान निर्माताओं ने भारतीय संविधान की प्रस्तावना, मौलिक अधिकार और नीति निर्देशक तत्वों में सामाजिक न्याय की अवधारणा से संबंधित प्रावधानों का समावेश किया है। इसका उद्देश्य था- भारतीय समाज के सभी घटकों के मध्य सामाजिक भाईचारा की स्थापना करना। किन्तु भारतीय राज्यव्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार ने सामाजिक न्याय के इस उद्देश्य को पीछे धकेल दिया है। अत: इस ज्वलंत समस्या की समाप्ति को लेकर भारत में जद्दोंजहद जारी है। एक समीक्षक के अनुसार भारत में पहले भ्रष्टाचार की समस्या एक चूहे की भॉति थी, जो मालिक से डरते हुए लुक-छिपकर चोरी किया करता था लेकिन अब यह समस्या एक छुट्टा सॉड़ की भॉति है, जो अनियंत्रित होकर लड़ने को तैयार है। भारतीय राज्य व्यवस्था में इसी प्रकार के उपरोक्त तथ्यों को देखकर भारतीय सुप्रीमकोर्ट को राज्यव्यवस्था की कार्यप्रणाली पर निम्नलिखित टिप्पणियॉ करनी पड़ी-

- देश की पुलिस लोगों के साथ जानवरों से भी बद्तर व्यवहार करती है।[1]
- नागरिकों को न्याय प्राप्त होने में विलम्ब के लिये वकील व कमजोर ही ढोषी हैं।[2]
- सी0बी0आई0 पर सरकार का प्रतिबंध एवं उसका कार्य व्यवहार तोते की तरह है।[3]
- भारतीय प्रधानमंत्री की चुप्पी हमें परेशान और हैरान करती है।[2]
- फांसी की सजा अक्सर आर्थिक-सामाजिक कमजोर लोगों को ही मिलती है। [4]
- बाल अपराध अधिनियम को लागू किये जाने में जिस तरह का रवैया केन्द्र और राज्य सरकारों ने अपनाया हैं, मुझे पीड़ा होती है।[5]
- भारतीय राज्यव्यवस्था का हर व्यक्ति बिकाऊ है।[6]

भ्रष्टाचार की प्रकृति और स्वरूप को उजागर करती भारतीय सुप्रीम कोर्ट की इन टिप्पणियों से स्पष्ट है कि आज भ्रष्टाचार की समस्या नैतिक आचरण में आई गिरावट से ज्यादा यह एक राष्ट्रीय, आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक व प्रशासनिक समस्या है।

Methodology– प्रस्तुत शोध प्राथमिक व द्वितीयक आंकड़ों पर आधारित है और इसके लेखन हेतु पर्यविक्षण व अनुभव प्रविधियों का उपयोग किया गया है।

Result & discussion-

भ्रष्टाचार के दुष्प्रभाव– भारत में भ्रष्टाचार का सबसे खतरनाक प्रभाव यह है कि भ्रष्टाचार के जरिए देश की संसद और विधान सभाओं में आपराधिक पृष्ठभूमि व छवि वाले तथा करोड़पति-अरबपति अधिकांश लोग चुनकर पहॅुच जाते हैं।[7] इसके बाद ये प्रतिनिधि राज्यव्यवस्था का संचालन इस ढंग से करते हैं कि स्वयं इनके सामने कानून कमजोर पड़ जाते हैं।[8] यही कारण है कि आज भी भारतवर्ष में अनेक भ्रष्टाचारी नेता कानून की गिरफ्त से बाहर हैं या ऐसे नेताओं के विरूद्ध प्रकरण तो दर्ज किये गये हैं पर जानबूझकर जॉच में देरी की जा रही है और इस कमी से एक समस्या और पैदा हो गई है कि यें भ्रष्टाचारी नेता तथा इनके द्वारा संचालित भ्रष्टसंस्थान दूसरे नाम, गुमनाम, परिवर्तित नाम से दूसरे तरीकों के जरिए भ्रष्टाचार को यथावत् जारी रखे हुये हैं। ये नेता कानून व्यवस्था की इतनी हालात बिगाड़ दी है कि भारतीय महिलाएँ अपने आपको पूर्ण सुरक्षित महसूस नही करतीं और कुछ मजबूर महिलाओं के दैहिक व्यापार का बाजार भी चल रहा है। बच्चों को बालश्रम करने, उनके लापता होने, नशा के सेवन करने एवं बालकों द्वारा अपराध में संलग्न होने व करने आदि पर रोक नहीं लग पा रही है।[9] नशा का कारोबार एवं उसका सेवन देश में लगातार बढ़ रहा है। विडम्बना यह है कि नशाबंदी के लिये सरकारें अभियान चलाती हैं लेकिन गली-गली, गॉव-गॉव शराब बेंचने का लायसेन्स भी देती हैं। इसी प्रकार नशीली व नकली दवाइयों[10] एवं मिलावटी खाद्य पदार्थो[11]का बाजार भी बढ़ रहा है। इन कारोबारियों को प्राप्त भ्रष्टनेताओं के संरक्षण व सहयोग के कारण इनके भ्रष्टाचार की पोल खोलने वालों, विरोध करने वालों की हत्याएँ की जा रही हैं[12] या ऐसे लोग स्वयं

*गेस्ट फैकल्टी (राजनीति विज्ञान) शासकीय पी.जी. कॉलेज, गाहिरा नाला, जिला,सतना (म.प्र.) भारत

आत्महत्या करने के लिये विवश हो जाते हैं[13]पर ये कारोबारी साफ बच जाते हैं।

भारतीय संविधान के अनु0 334 एवं 73वें संविधान संशोधन अधिनियम की आरक्षण व्यवस्था को इस भ्रष्टाचार के कारण विधि संगत रूप में अब तक लागू नहीं किया जा सका। इसलिए संविधान संशोधन करके आरक्षण को बढ़ाये जाने की आवश्यकता पड़ी।[14] सामान्यत: देश की ग्राम पंचायतें केवल एक ही वर्ग के हितों का प्रतिनिधित्व करती हैं और वह वर्ग है- ग्रामीण संमृद्ध वर्ग।[15] इनमें सरकारी नियमों व फर्जी ग्राम सभाओं के जरिए गैर-निर्धनों द्वारा गरीबों के लाभों,[16] ऋण व भूमि[17] आदि को हथियानें के लिये अनेक अवैध तरीकों को अपनाया जाता है। ग्राम पंचायतों पर समृद्ध वर्ग की इस प्रकार की प्रभावशीलता के पीछे कारण यह है कि सामंती सरकारों से सामंती शक्तियॉ अपना हाथ सेंक रही हैं जबकि दूसरी ओर राज्यव्यवस्था में एक पक्षीय झुकाव कायम होने के कारण दलित, शोषित व निर्बल वर्ग के लोगों को कोई स्थाई राहत प्राप्त नहीं हुई।[18]

भ्रष्टाचार ने हमारी शिक्षा व्यवस्था व आर्थिक विकास की दिशा को तहस- नहस कर समाज को दो भागों में बॉट दिया है। शिक्षा को मूल अधिकार तो बनाया गया है लेकिन उसके मूल में असमानता[19] एवं लाटरी द्वारा प्रवेश की व्यवस्था[20] होने के कारण 25 प्रतिशत गरीब बच्चों का प्रवेश मनमानी ढ़ंग से प्राइवेट स्कूल के संचालक करते हैं और देश में सभी के लिए एक समान शिक्षा व्यवस्था लागू नहीं हो पाई है।[21] अत: सतत् विकास की धाराऍं समाज के अंतिम पंक्ति में खड़े अंतिम व ग्रामीण व्यक्तियों तक नहीं पहुॅच पायी हैं।[22] इसलिए देश का एक बड़ा वर्ग निराश व उत्तेजित है जबकि पूरी दुनिया भारत के आर्थिक विकास पर नजर गड़ाए है।[23]

भ्रष्टाचार के कारण ही सभी क्षेत्रों में फर्जीवाड़ा का विस्तार तेजी से हो रहा है। इससे बहुतों को फर्जी प्रमाणपत्र के जरिए नौकरी मिल जाती है।[24] प्राकृतिक दुर्घटनाओं को आधार बनाकर फर्जी फसल सर्वेक्षण द्वारा अवैध शासकीय सहायता राशि मिल जाती है जबकि जमीनधारियों के खेतों में बटाई के रूप में काम करने वाले श्रमिकों को जमीनधारियों व प्रशासन द्वारा इन लाभों से वंचित रखा जाता है[25] क्योंकि मुआवजा राशि पट्टेदारों को ही दी जाती है। इसी प्रकार कमजोर तबके के लोगों के साथ सड़क दुर्घटना करने वाले वाहन चालकों को भी फर्जी लाइसेंस आसानी से मिल जाते हैं और ऐसे वाहन चालकों के बचाव के लिये हमारी भ्रष्ट पुलिस[26] व कुछ माननीय सांसद उनके साथ खड़े नजर आते हैं।[27] गैर-निर्धनों द्वारा अनेक अवैध तरीकों के जरिए फर्जी गरीबी रेखा का प्रमाण-पत्र बनवाकर निर्धनों के लाभों को हड़प लिया जाता है।[28] गरीबी रेखा के अधिकांश सही हकदार व्यक्ति सरकार द्वारा जारी बी0पी0एल0 के मापदण्ड[29] व पात्रता के लिए निर्धारित निर्देश व बी0पी0एल0 के मापदण्ड में जोड़ी गई विचित्र शर्तों[30] एवं अधिकारियों की मनमानी के कारण बी0पी0एल0 कार्ड बनवाने के लिये सरकारी दफ्तरों का चक्कर लगातें हैं,[31] घूस देते हैं और अपने सम्मान व अधिकार को कार्ड बनवाने के बदले बेंच देते हैं। सरकारी रजिस्टरों में फर्जी हस्ताक्षर करवाकर ग्राम सभाओं का आयोजन पूर्ण कर लिया जाता है और इसी प्रकार सरकारी निर्माण कार्य का मूल्यांकन व निगरानी की खानापूर्ति फर्जी अंकेक्षण समिति द्वारा की जाती है। मतदाता सूचियों में भी व्यापक फर्जीवाड़ा है।[32]

भ्रष्टाचार के कारण – भारत में भ्रष्टाचार के कारणों की सूची लम्बी है किन्तु सबसे प्रमुख कारण रहा है-भारतीय अर्थव्यवस्था में, उच्च जाति के जिस आर्थिक साधन सम्पन्न जमीनधारी वर्ग के लोगों को प्रारम्भ से ही निर्णायक हैसियत प्राप्त रही हैं, स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ऐसे वर्ग के लोगों द्वारा अत्यधिक आर्थिक सम्पन्नता के कारण[33] राजनीतिक स्थिति यानी शासन के निर्णय के केन्द्रों में पहुॅच को मजबूत बनाने में सफलता प्राप्त कर लेना। इसके बाद सभी स्तरों में उच्च निर्णायक पदों पर अपने चहेते व भ्रष्टलोगों को, भारी मात्रा में एवं उच्च स्तर के न्यायालयों में संदिग्ध निष्ठा वाले व्यक्तियों को कुछ मात्रा में इस वर्ग ने पदासीन कर दिया है,[34] जो अपनी यथास्थिति को और मजबूती के साथ बरकरार रखना चाहते हैं।[35] सारांशत: जिनके हाथ में आर्थिक सत्ता थी, उन्हीं के पास राजनीतिक सत्ता केन्द्रीकृत हो गई और इससे घोर असमानता और भ्रष्टाचार को ताकत मिली फिर उन्होंने 65 वर्षो के शासन के दौरान राजनीतिक प्रश्रय के जरिए भ्रष्टाचार किया और दूसरे लोगों को भ्रष्टाचार करने के लिए मदद की और बाध्य किया। इस वर्ग ने भ्रष्टाचार करने एवं फिर उसे वैधता प्रदान करने हेतु अनेक नवीन तकनीकों व111 जटिल प्रक्रियाओं का अधिकाधिक प्रचलन व इस्तेमाल किया।[36] इन्हीं तकनीकों, प्रक्रियाओं, नियमों व कानूनों के सहारे भ्रष्टाचार के संचालन की सारी प्रक्रिया टिकी है और चलती-रहती है।37 ये तकनीके निम्नांकित है-

1. भ्रष्टाचार को खत्म करने के नाम पर या किसी कारण का हवाला देकर नये कानून व संस्थाऍ बनाना, संवैधानिक उपबंधों व कानूनों में शर्ते जोड़ना[38] और फिर भ्रष्टाचार के रोकथाम के लिये करने योग्य ठोस उपायों को स्थगित कर भ्रष्टाचार को स्थाई रूप से स्थापित कर देना और भ्रष्टाचार को बढ़ाना।
2. स्वतंत्र संवैधानिक निकायों की स्वतंत्रता छीनकर उनके समानान्तर अनेक नवीन संस्थाऍ व कानून स्थापित कर देना।[39]
3. फाइलों में अजीब तर्क भरी टिप्पणी लेखन करना[40] एवं श्रृंखला (NEXUS) के रूप में मिलकर कार्य करना।[41]भ्रष्टाचार मे समूची श्रृंखला लिप्त पाये जाने पर कुछ ही लोगों पर दिखावे की कार्यवाही करना।
4. सभी स्तरों पर फैसला व कार्य आदि के बारे में 'सत्यता' की जगह 'बहुमत' पर आधारित निर्णय को मान्य ठहराना।[42]
5. भ्रष्टाचार की जॉच के लिए जॉच समितियों, आयोगों की स्थापना कर महज खानापूर्ति करना।[43]
6. नियमित काम पर रखने के स्थान पर ठेका प्रणाली की स्थापना करना।[44]
7. कठोर नियम बनाना[45] एवं शासकीय योजनाओं , नियमों में विचित्र शर्ते जोड़ना[46] व मौखिक आदेश देना।
8. जानबूझकर किसी कार्य को बेढंग तरीके या देरी से करना।
9. शासकीय लाभ व दण्ड वितरण में पक्षपात करना व पक्षपात कर उसे मानवीय भूल बताना।[47]
10. मनमानी ढंग से पदाधिकारियों का स्थानान्तरण व पदस्थापना करना।[48]
11. शासकीय दस्तावेजों को समाप्त करने में प्रयुक्त (जिम्मेदार) वास्तविक कारणों पर परदा डालना।[49]
12. घटिया किस्म की सरकारी खरीददारी करना या निर्माण कार्य में प्रयुक्त करना।
13. शासकीय खजाने या प्राकृतिक संपदा (खान,वन) की चोरी करना या करवाना।[50]
14. मनमानी ढंग से मामलों की जॉच व विवेचना करना।[51]
15. नियमों, योजनाओं, कानूनों के निर्माण में राजनीतिक हस्तक्षेप करने के लिए गुंजाइश रखना।[52]
16. शासकीय समितियों, पदों पर भ्रष्टलोगों का चयन करना।[53]
17. फर्जी प्रमाण-पत्र बनाना व फर्जी लोगों का नाम शासन की सूचियों में जोड़ना।[54]
18. शासकीय जानकारियों को गोपनीय बनाये रखना।[55]
19. शासकीय खर्चे के जरिए मामलों को न्यायालयों में ले जाना और वहॉ वर्शो तक उलझाये व लटकाये रखना।[56]
20. मोटी रकम ले-देकर दिखावें की कार्यवाही करना[57] एवं भ्रष्टाचार को दूसरे नाम व तरीकों से जारी रखने में मदद करना।

21. गरीबों के शासकीय लाभों को हड़पने के लिए अनेक अवैध तरीकों का उपयोग करना।[58]
22. कार्य को विकृत करना, कार्य से बचना, कार्य को दूसरे तक टालना व कार्य न करने के लिए मौनव्रत धारण करना एवं कार्य को बढ़ाना।[59]
23. अवाच्य, अस्पष्ट, ऊपरी लेख, अज्ञात लापता, झुलसी, गैर-इरादतन, संदिग्ध, प्रथम दृष्ट्या, लापरवाही, गोदकर, दवा के धोखे, गोली खाने से, चिमनी जलाते वक्त, चपेट में आने से, पागलों की तरह हरकत,कापी जैसी कानून-विवेचना शब्दावली का पुलिस व मीडिया द्वारा अधिकाधिक प्रयोग करना ताकि सत्य छिपा रहे, दोषी बचे रहे।
24. गरीबों को लापरवाह व अपराधी सिद्धकर लाभ व पद से उन्हें वंचित रखने के लिए एवं चहेतों को ऐसे आरोपों से बचाकर उन्हें पदासीन करने व लाभ देने के लिए त्वरित फेरबदलयुक्त कार्यवाहियॉ करना।

उदाहरणार्थ- कृत्रिम परिस्थितियॉ उत्पन्न कर उसके बाद तथ्यों को अपने हितों के अनुसार दर्शाना व छिपाना, गरीब उम्मीदवार से अधिक योग्य उम्मीदवार की तलाश कर लाना एवं निगरानी, गुप्तचरी, सूचनाओं पर नियंत्रण, कमियों की खोज, कागजात में सुधार, मीटिंग में प्रस्ताव पास कराना, अपने चहेतों को की जाने वाली जॉच की जानकारी पहले से दे देना या समयाभाव, अस्वस्थता का कारण बताकर जॉच पर मतदान की तिथि निरस्त कर देना।

25. शासकीय कार्य के लिए अतिरिक्त फीस देने की समर्थता-असमर्थता को आधार बनाकर सरकारी सेवाओं को दो भागों में बॉटना-तुरन्त किये जाने वाले कार्य व विलंब से किये जाने वाले कार्य (उदाहरणार्थ- खसरा व डिग्री प्राप्त करना)
26. निम्न जातियों व गरीबों की गतिविधियों पर सतत् निगरानी व नियंत्रण बनाये रखने के लिए व आगामी भ्रष्टाचार के आरोपों से अपने को दूर रखे रहने के लिए इन्हीं जातियों के कुछ चुनिन्दा बदमाश लोगों को अवैध तरीकों के जरिए[60] जिम्मेदारी भरे सरकारी पदों पर पदासीन किया जाना।
27. सरकारी सेवाओं के इच्छुक प्राप्तकर्ताओं की भीड़ बढ़ाकर सरकारी सेवाओं के वितरण में भ्रष्टाचार,पक्षपात करने के लिए उपभोक्ताओं की तुलना में सरकारी सेवाओं की उपलब्धता में कमी दर्शाना।
28. घूस को दूसरे माध्यमों से व बिचौलियों के जरिए मॉगना, लेना-देना।
29. नियमित व प्रत्यक्ष भर्तियों में रोक लगाकर अपने चहेतों को भर्ती करने के लिए उन्हें दीर्घकाल तक अस्थाई सेवा में रखना फिर उनकी दीर्घकालीन सेवा, अनुभव[61] व अवसर की वंचना का हवाला देकर स्थाई सेवा में रख लेना। इससे भ्रष्टाचार स्थाई प्रक्रिया का रूप ले लेता है और यही चापलूस लोग चुनाव व अन्य अवसरों पर पदस्थ करने वालों की सहायता करते हैं।
30. फर्जी वाउचर व मेडिकल का उपयोग करना[62] तथा वरीयता क्रम या प्राथमिकता क्रम भंग करना।
31. केन्द्रीय कानून व न्यायालयीन निर्णयों को अप्रभावी बनाकर अवैध भर्तियॉ करने के लिए राज्य सरकारों द्वारा केन्द्रीय कानूनों व निर्णयों के समानान्तर ही अन्य नियम बनाना व लागू करना। (NET की जगह SNET परीक्षा का आयोजन)
32. उस विभाग, योजना, क्षेत्र, कार्य, आदि के विकास में या की ओर सरकारी धन को लगाना, जारी करना, जिसमें अधिक लाभ प्राप्त/ कमीशन प्राप्त होने की संभावना हो।
33. शासकीय रकम को गोलमाल करने व चुनावी लाभ प्राप्त करने के लिए नेट वर्किंग बढ़ाने हेतु निचले स्तरों पर छोटे-छोटे कार्यक्रम व योजनाएं संचालित कर गरीबों को लुभाए रखना, पक्षपात तरीके से वितरण करना व छोटे पदों पर अस्थायी कर्मचारियों की नियुक्तियॉ करना।
34. हस्ताक्षर की जगह पदनाम लिखना एवं कार्यवाहियॉ करने के नाम पर भ्रष्टाचार के शिकायतकर्ताओं को निवास स्थान बुलाकर हत्या कर देना।
35. भ्रष्टाचार के विरूद्ध लड़ने वाले को संतुष्ट या शांत करने के लिए झूठा अलिखित आश्वासन देना, रियायत देना, कार्यवाहियॉ करना व फिजूल कार्य करना।[63]
36. घूस[64] व चातुर्यपूर्ण तरीकों[65] से ऐसे भ्रष्टलोगों का चयन करना , जो भ्रष्टाचार की प्रक्रियाओं, लाभों में किसी तरह की अड़चन पैदा न करें। ये प्रक्रियाएँ है-शासकीय रकम निकालना , निर्माण कार्य को सब तरह से वैध मानना, निर्माण के बाद बचायी गई धनराशि (लाभ) की आपसी आर्थिक बांट करना।
37. जनहित से जुड़े मुद्दों पर कानूनी-दण्ड एवं पीड़ित समूह के चुनावी असहयोग से बचने एवं अपने दोनों समूहों-सत्तासीन व सत्ताविहीन के हितों को सुरक्षित रखने के लिए निम्नांकित कार्य करना- वोट पाने के क्रम में कुछ सहायता करना,[66] सरकारी खर्चे के जरिए मामलों को न्यायालयीन प्रक्रियाओं में ले जाकर फांसना,[67] वहॉ त्वरित निर्णय न होना, टालमटोल व धीमी जॉच करना, समस्या को अनसुना बनाए रखना, फाइली कार्यवाहियों मे फंसना (अस्पष्ट जबाव), सत्य व असत्य युक्त मिश्रित जॉच व कार्यवाहियॉ करना,[68] चरणबद्ध कार्यवाहियॉ करना, कार्यवाहियों को स्थगित करना, ऐसे मामलों पर शासन की असली मंशा की जानकारी को जनसामान्य से छिपाये रखना, कृत्रिम व बाध्य परिस्थितियॉ उत्पन्न करने के बाद जॉच व कार्यवाहियॉ करना, पीड़ित समूह को उसके अपने अगुआ नेता या मूल समस्या के विरूद्ध खड़े करने के लिए वैध व अवैध कार्य करना।
38. राजनीतिक लाभ के लिए राजनीतिक फार्मूलों[69] के आधार पर एवं कमजोर वर्गो के वोट प्राप्त करने के लिए सत्तासीन वर्ग द्वारा बनायी गई एवं संचालित की जा रही गुमराह करने की नीति तथा भावनात्मक मुद्दों[70] को जनसाधारण द्वारा न समझना एवं राजनीति के प्रति नकारात्मक धारणा व उदासीनता बनाये रखना भी भ्रष्टाचार का एक महत्वपूर्ण कारण रहा है। इस नीति के अंतर्गत समाज के कमजोर वर्गो के बीच लोक-लुभावन शासकीय योजनाओं का जाल-बिछाकर इस वर्ग ने झूठे सरकारी आकड़ों का प्रचार-प्रसार किया। इस नीति के अंतर्गत समाज के कमजोर वर्गो के संपूर्ण विकास करने एवं उन्हें शिक्षित (साक्षर) बनाने के नाम पर नि:शुल्क, राजनीतिक लाभ व गंदगी से युक्त तथा असमानता पर आधारित[71] गुणवत्ताविहीन एवं उपयुक्त शैक्षणिक मापदण्डविहीन सरकारी स्कूलों की संख्या में बेतहाशा बढ़ोत्तरी की, जिससे हस्ताक्षर मात्र जानने वाले समाज का विकास तो हुआ किन्तु इससे कर्तव्यनिष्ठ नागरिकों के निर्माण पर रोक लग गई। फलस्वरूप देश में एक ऐसे बहुत बड़े तबके का विकास हुआ, जिसका गहरा संबंध स्थापित हो गया-बी0पी0एल0 पर निर्भरता, नशा, अपराध, कानूनी-उलझन, बीमारी व निराशावादी सोच आदि से।
39. सूचनाओं का निर्बाध रूप से प्रवाहित न होना एवं किसी कर्मचारी का ए0सी0आर0 वरिष्ठ अधिकारी द्वारा ही लिखा जाना।[72]
40. भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ने वालों के लिए सुरक्षात्मक उपायों का अभाव होना।
41. निजी क्षेत्र से प्रतिस्पर्धा में अनैतिक कृत्य करके सरकार को हानि पहुँचाना।

भ्रष्टाचार के अन्य महत्वपूर्ण कारण हैं-भारतीय निर्वाचनों में आज भी

काफी मात्रा में छल, बल, धन, मीडिया और नशीली वस्तुओं व सरकारी मशीनरी का उपयोग होता है। हकीकत यह है कि मीडिया के एक बड़े हिस्से ने सत्ता हितों के साथ खुद को जोड़ रखा है। यही हाल हमारी अधिकांश प्राथमिक शासकीय शिक्षण संस्थाओं का है, जो भ्रष्टाचार के संस्कारों की नर्सरी बनी हुई हैं।[73] इसी प्रकार कुछ उच्च शिक्षण संस्थान तो भ्रष्टाचार के गढ़ व अपराधियों के उत्पादन केन्द्र बनते जा रहे हैं।[74]

इस प्रकार आर्थिक कारणों से भारतीय राज्यव्यवस्था में यह राजनीतिक समस्या उत्पन्न हुई कि एक छोटे से वर्ग विशेष का प्रभुत्व कायम हुआ।[75] इस राजनीतिक समस्या ने ही भारत में व्यापक पैमाने पर भ्रष्टाचार स्थापित किया और राज्यव्यवस्था में भ्रष्टाचार बने रहने का कारण भी मूलत: आर्थिक प्रलोभन है। राज्यव्यवस्था में इस प्रकार की व्यवस्था का कायम होना स्वाभाविक था क्योंकि राजनीतिक समस्याएँ मूलत: आर्थिक प्रकृति की होती है।

भ्रष्टाचार को बढ़ावा दिये जाने में भारतीय समाज द्वारा अपनाए गए विभिन्न तरीके– यह कटु सत्य है कि भ्रष्टाचार की वृद्धि में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रशासन से ज्यादा भारतीय जनता ही दोषी है क्योंकि भले ही देश में आर्थिक गैर बराबरी मौजूद है लेकिन भारतीय संविधान ने प्रत्येक भारतीय नागरिक को विकल्पों का चयन करने की स्वतंत्रता और अवसर का अधिकार दे रखा है[76] पर इसके बावजूद भी भारतीय राज्यव्यवस्था में कोई नागरिक निम्नांकित तरीके से भ्रष्टाचार को बढ़ावा देता है–कहीं वह स्वयं भागीदार होकर, कहीं सांठगाठ कर,[77]कहीं दूसरे को भ्रष्टाचार करने के लिए प्रेरित कर, सहयोग कर व समर्थन कर,भ्रष्टाचार की अप्रगट जानकारी को प्रगट न कर,भ्रष्टाचार की प्रगट जानकारी का विरोध न कर एवं भ्रष्टाचार करने के लिए बाध्यता (परिस्थिति) उत्पन्न कर,मौनधारण कर[78] एवं विशेष रूप से राश्ट्रहित में अपने मताधिकार का सही उपयोग न कर। जनता के इस प्रकार के योगदान करने से भ्रष्टाचार के व्यापक दुष्प्रभाव उजागर हो रहे हैं।

भ्रष्टाचार रोकने के लिए सुझाव – भ्रष्टाचार को कैसे समाप्त किया जा सकता है? इस संबंध में दो मत है। पहला मत है कि छोटे–छोटे सुधारों में बड़े मुकाम को हासिल नहीं किया जा सकता। इसलिए सिस्टम में सुधार फोर्स से ही आएगा लेकिन ऐसा मैन फोर्स सोसाइटी से ही संभव है। दूसरा मत है कि सत्तासीन लोगों ने भारतीय समाज को कई स्तरों पर , कई रूपों में विभाजित कर दिया है। इसलिए समाज में अविश्वास का दायरा बढ़ चुका है। अत: इस विभाजित भारतीय समाज की ओर से भ्रष्टाचार के विरूद्ध सामूहिक आवाज आने की संभावना बहुत कम है। ऐसे में इसके विरूद्ध समाज के कुछ लोगों द्वारा जो आवाज उठाई जाएगी भी, तो उसमें भी अधिक संभावना है कि विभाजनकारी अधिक होगी, राष्ट्रीय कम । लेकिन इन सब के बावजूद सिस्टम में सुधार के लिए सामाजिक सक्रियता (गतिक लोकतंत्र) ले आने के साथ–साथ सभी जरूरी छोटे–बड़े सुधार किये जाने की आवश्यकता है। इनसे समाज में चेतना आएगी और इन्हीं सुधारों से एक दिन बड़े मुकाम को हासिल किया जा सकता है।[79] इन्हीं सुधारोंका वर्णन निम्नांकित –

1. भारतीय समाज की सोच एवं कार्यशैली में परिवर्तन – भ्रष्टाचार की समस्या प्रमुख रूप से भारतीय समाज के चारित्रिक पतन से जुड़ी है[80] और इस चरित्र की समस्या उन स्वार्थपरक ऐतिहासिक[81]व समकालीन[82]तत्वों से जुड़ी है, जिससे भारतीय समाज के चरित्र का गठन हुआ है। चरित्र के इन्हीं स्वार्थी तत्वों से जीवन के अन्य क्षेत्रों के समान ही सार्वजनिक जीवन के क्षेत्र में भी भारतीय समाज द्वारा की जानेवाली गतिविधियॉ निर्धारित होती है। इसलिए ही भारतीय राजनीति का चरित्र मूलत: सामंती अर्थात् स्वार्थी प्रकृति का है।[83]यही कारण है कि भारतीय समाज द्वारा किये जाने वाले बहुत से कार्य एवं उनके निर्णय तर्कशून्य ,अनुत्तरीय व बेहूदा होते हैं। जैसे–स्वतंत्रता प्राप्ति के इतने दिनों बाद भी हमारे चुनाव और मत हमारे सच्चे प्रतिनिधियों को क्यों नही चुन पाते? मूलत: सिस्टम में सुधार–सुधार के सही तरीकों से ही संभव है। यदि गंगा यानी शासन–प्रशासन को साफ करना है, तो गंगोत्री को साफ करना होगा अर्थात् प्रशासन का निर्माण समाज द्वारा उत्पादित लोगों से ही होता है। अत: समाज को ऐसा काम करना चाहिए कि असामाजिक तत्वों का उत्पादन और प्रशासन में उनका प्रवेश कम से कम हो और उन्हें खुद भी सक्रिय नागरिक[84] होने का परिचय देना चाहिए। सक्रिय होने के लिए नागरिकों को आवश्यक परिस्थितियों–अर्थनीति में बदलाव[85] की उपलब्धता होनी चाहिये ताकि वह स्वतंत्रतापूर्वक अपनी सक्रिय भूमिका का निर्वाह कर सके। इस मूल रिफार्म को पूर्ण किये बिना सुधार के इधर–उधर (अन्य) के तरीको का व अन्य कानून व संस्थाओं से केवल भटकाव होगा, समाधान नही। प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जिस स्तर व जहॉ तक पहुॅच संभव है, अपने–अपने क्षेत्र में अपने स्तर पर सभी लोगों को भ्रष्टाचार खत्म करने के लिए काम करना चाहिए अर्थात् देश में प्रतीक लोकतंत्र (सामाजिक उदासीनता) की जगह गतिक लोकतंत्र (सामाजिक सक्रियता)[86] की आवश्यकता है। भ्रष्टाचार के विरूद्ध लगातार युद्ध छेड़ दिया जाय,[87] जिसके लिए नागरिक सक्रियता[88] बहुत जरूरी है। समाज के सभी हिस्सों में सक्रियता को प्रारम्भ कर निरन्तर बनायें रखने के लिए आर्थिक, सामाजिक , राजनीतिक आदि सभी जरूरी क्षेत्रों में व्यापक बुनियादी फेरबदल (परिवर्तन) की आवश्यकता है, जो कि भारतीय राज्यव्यवस्था की बुनियादी समस्या है जबकि नागरिकों में त्वरित सक्रियता को प्रारम्भ करने के लिए निम्नांकित उपाय शीघ्र प्रारम्भ करना चाहिये –

- सक्रियता लाने के लिए सूचनाओं का नागरिक चेतना में अधिकाधिक प्रवेशन, शिकायती हेल्प लाइन,[89] व्हिसिल ब्लोअर[90] की सुरक्षा की व्यवस्था की जाय तथा अनियमिततायें (भ्रष्टाचार) बताओं, ईनाम पाओं योजना (प्रोत्साहन) की शुरूआत की जाय।[91]
- जनता से जुड़े हर काम की समयबद्धता तय करने के लिए सिटिजन चार्टर[92] लागू किया जाय और सभी पदाधिकारियों की समयबद्ध जबावदेही तय हो। प्रत्येक कानून में जबावदेही तय[93] करने के लिए प्रावधान के साथ–साथ दण्ड 'लोकपाल' का भी प्रावधान होना चाहिए।[94]
- सभी अपराधों के लिये अपराध की गुरूता–लघुता के आधार पर दण्ड की व्यवस्था स्थापित करने वाले जरूरी कानूनों को बनाया जाए और मौजूद फिजूल कानूनों को समाप्त किया जाए।
- न्याय प्रणाली को बेहतर बनाये बिना हम भ्रष्टाचार से लड़ाई में कभी सफल नही हो सकते क्योकि जब न्याय पराजित हो जाता है, तो भ्रष्टाचार फलता–फूलता है।[95] अत: न्यायिक क्षेत्र में निम्न सुधारों की आवश्यकता है–

1. जहॉ एक ओर त्वरित न्याय की स्थापना कायम न होने से भ्रष्टाचारियों को बचने एवं साक्ष्य को नष्ट करने के लिए मौका(अतिरिक्त समय) मिल जाता है,वहीं दूसरी ओर अनेक स्तरों पर अनेक बार प्रयास करने के बाद भी यदि उपयुक्त समय में किसी व्यक्ति या समूह को न्याय नहीं मिल पाता, तो उनमें नकारात्मक सोच व उदासीनता की भावना उत्पन्न हो जाती है और यही उसकी धारणा बन जाती है। आगे चलकर इसी धारणा के अनुसार वह निर्णय लेता है और कार्य करता है। अत:न्याय सभी व्यक्तियों को सामान्य रूप से नि:शुल्क प्राप्त हो। न्यायालयों द्वारा त्वरित निर्णय किया जाय,[96] भ्रष्टाचारियों को छोड़ा न जाय,उनके विरूद्ध तुरन्त अपराध पंजीबद्ध कर जेल भेजा जाय।
2. सभी स्तरों पर सभी निर्णय बहुमत के आधार पर न किये जायें और न ही मान्य (सही) ठहरायें जायें तथा न ही ऐसे निकाले गये निष्कर्षों के आधार पर कारवाई की जाए।[97]

3. न्यायपालिका के निर्णयों को सकारात्मक गुण-दोष विवेचना से परे न माना जाय।[98]

4. सरकार या सरकारी अधिकारी द्वारा नागरिकों पर न्यायालय में गलत केस दायर करने पर उन्हें दण्ड दिया जाय।[99]

5. अपराधी के बरी होने पर जॉच अधिकारी[100] और गलत विवेचना करने वाले न्यायाधीश को दंडित किया जाय।

6. समाचार पत्रों व पुस्तकों में प्रकाशित गंभीर खबरों को स्वप्रेरणा से प्रसंज्ञान लेकर याचिका मान लेना चाहिये।

2. ईमानदार लोगों को(विशेषकर हाशिये के लोगों को)राजनीति में अधिकाधिक प्रवेश करना चाहिये[101] अर्थात् अल्पतंत्र की जगह देश में असली लोकतंत्र स्थापित होना चाहिये।[102]

3. चुनाव में धन,बल,छल,सरकारी मशीनरी व सत्ता पक्ष में मीडिया आदि का कम से कम प्रयोग एवं मतदान करना अनिवार्य[103]किया जाय।निर्वाचन की निष्पक्षता व विश्वासनीयता बनाये रखने के लिए कलर फोटोयुक्त मतदाता परिचय पत्र, मतदान की पावती एवं पोलिंग बूथ में मत देने वाले मतदाताओं की फोटो खींची जाय।

4. भ्रष्टाचार की गंगोत्री को साफ किया जाय अर्थात् राज्यव्यवस्था और अर्थनीति में बदलाव किया जाय।[104]

5. शासन के सभी स्तरों पर (राजनीतिक एवं प्रशासनिक दोनों स्तरों पर) भर्ती प्रक्रिया पारदर्शी, निष्पक्ष, प्रमाणिक व सभी साक्षात्कारोंकी वीडियों रिकार्डिग होनी चाहिये और इसे (रिकार्डिग को) संस्थानों की बेवसाइट पर डाल दिया जाना चाहिये।[105] उच्च पदों की भर्ती की प्रारंभिक परीक्षाओं में सभी परीक्षार्थियों के लिए एक समान केवल सामान्य अध्ययनका प्रश्न पत्र हो किन्तु ऐच्छिक विषय का प्रश्न पत्र न हो तथा साक्षात्कार परीक्षा के अंक कम से कम हों। ऐसी व्यवस्था कायम होने से सरकारी हस्तक्षेप करने के लिए गुंजाइश कम से कम रहेगी।

6. शिक्षा प्रणाली एवं माता-पिता, परिवार तथा प्राथमिक स्कूल भ्रष्टाचार के संस्कारों की नर्सरी[106] न बनें तथा समूचे देश में एक समान गुणवत्ता वाली केवल सरकारी स्कूलें हों और सरकारी स्कूलों में से कुछ स्कूलों में फर्क केवल सुरक्षात्मक आधार पर विशेष कारणों से किया जाना चाहिये। देश में केवल सरकारी स्कूल ही रहें, यदि ऐसी व्यवस्था करना संभव नहीं है, तो यह व्यवस्था की जाए कि राष्ट्रीय राजधानी (नई दिल्ली) की उच्च गुणवत्ता वाली (प्राइवेट व सरकारी दोनों) स्कूलों व कॉलेजों में संचालित पाठ्यक्रम एवं अध्ययनों को कुछ टीवी चैनलों (Video Confererencing) द्वारा लगातार सीधा प्रसारण की व्यवस्था भारत सरकार को अनिवार्य रूप से सुनिश्चित करनी चाहिए। इससे एक ओर देश में मौजूद तथा बढ़ रहे शैक्षणिक अन्तर में कमी आएगी, तो दूसरी ओर धन के अभाव में उच्च गुणवत्ता युक्त शिक्षा प्राप्त न कर पाने से वंचित छात्रों को घर बैठे ही लाभ प्राप्त होगा। तीसरा लाभ समूचे देश में एक समान राष्ट्रीय एकता का विकास होगा। चौथा लाभ यह होगा कि आरक्षण की प्रासंगिकता खुद खत्म हो जाएगी।

7. भ्रष्टाचारी लोगों का नाम सार्वजनिक रूप से बेबसाइटों पर डाल दिया जाना चाहिये।

8. विशिष्ट वर्ग (Elites Class) के पदासीन रहने के दौरान की उन शासकीय भेदभावी वितरण की अवैध गतिविधियों (अपात्र लोगों को लाभ देना, पात्र लोगों को लाभ से वंचित करना, आर्थिक रूप से कमजोर व निर्बल लोगों को कानूनी प्रक्रियाओं में फंसाना, शासन की भावी दण्डात्मक कार्यवाहियों व योजनाओं के लाभों से वंचना आदि का भय दिखाना, जो कि मतदाता के लिए लाभ, हानि, भय, आशा-निराशा के कारण के रूप में प्रगट होती है) पर रोक लगायी जाय, जिनका प्रयोग अक्सर सत्ताधारी पार्टी द्वारा चुनाव केसमय में निर्बल वर्गो के मत (Vote)को प्राप्त करने के लिए किया जाता है[107] और इन गतिविधियों के कारण ही ऐसे मतदाता विवश हो जाते हैं। ऊपर के अधिकारियों को नीचे की सूचनाओं को उपलब्ध कराकर मतदाताओं को विवश करने का काम निचले स्तर के शासकीय कर्मचारी व दलाल करते हैं। किसी न किसी तरीके को आश्रय बनाकर निर्बल वर्गो के घरों में ये कर्मचारी, जमीनधारी, मुखिया व दलाल हर समय घुसपैठ बनाये रखते है किन्तु चुनाव के समय में अधिक सक्रिय हो जाते हैं। ऐसे लगने लगता है कि निर्बल वर्गो की बस्ती में शासन ने ऐसे कामों के लिए इन्हें नियमित (पदस्थ) कर रखा है। चुनाव के बाद इन्हें चुनाव में लाभ पहुॅचाने के हिसाब से शासन द्वारा लाभ उपलब्ध कराया जाता है।[108] ऐसी गतिविधियों पर रोक न लगाकर चुनाव सम्पन्न करा लेना, स्वतंत्र मत देने के अधिकार से उन्हें वंचित करना है।

9. शासन के अंदर एवं उसके संरक्षण में गुप्त अवैध गतिविधियॉ चला रहें वर्ग[109] को कानून के हवाले करना एवं राजनीतिक व्यवस्था में ऐसे वर्ग के उत्पादन एवं प्रवेशन (भर्ती) पर रोक लगाने के लिये जरूरी कदम उठायें जायें। अर्थात् बदमाश सफेदपोशी सत्ताधारी नेताओं द्वारा संरक्षित अपराधिक लोगों के उस समूह की गतिविधियों पर लगातार सूक्ष्म निगरानी रखी जाय और उन पर कानून सम्मत कार्यवाही की जाय, जो कि उच्च स्तर के पदों (प्रशासनिक व उच्च शिक्षा के पदों में पदासीन भी) पर पदासीन हैं। एक ओर ये लोग शासन की महत्वपूर्ण गोपनीय बैठकों, कार्यों, निर्णयों (जैसे - जॉच ,कार्यो व उसकी कार्यवाहियों, भर्ती से सम्बन्धित परीक्षा प्रक्रिया व प्रश्न-पत्र निर्माण, साक्षात्कार, निर्वाचन प्रक्रिया एवं मतगणना प्रक्रिया)आदि में हिस्सा लेते है,[110] दूसरी ओर यही लोग अपराधिक लोगों व नेताओं, पुलिस, जॉच एजेंसियों, शव-परीक्षण करने वाले डॉक्टरों,न्यायालय के भ्रष्ट न्यायाधीशों, नशा विक्रेताओं, उद्योगपतियों, हत्या करने वाले बिचौलियों ,मीडिया कर्मियों व अवैध खनन में संलग्न माफियाओं आदि के बीच उपरोक्त वर्णित शासन की गोपनीय जानकारियों को साझा करते हैं। यही कारण है कि बड़ी-बड़ी परीक्षाओं के पेपर भी लीक हो जाते हैं।[111] आपस में अवैध कार्यो से प्राप्त रूपयों का लेन-देन करते हैं।[112] आपस में लगातार संपर्क बनाये रखते हैं। एक श्रृंखला के रूप में मिलकर कार्य करते हैं। यह वर्ग चुनाव मे प्रत्यक्ष रूप से तो कम सक्रिय (भाग लेता) होता है किन्तु जिस विशिष्ट वर्ग ने उसे संरक्षण दे रखा है, चुनाव में उसकी जीत सुनिश्चित करने के लिए निर्णायक भूमिका (उपजाऊ जमीन) जरूर तैयार करता है और सहयोग करता है एवं इसके लिए यह वर्ग सर्व साधारण जन का विभिन्न प्रकार से भयादोहन करने का मार्ग अपनाता है। गुण्डा-अपराधियों को कुछ भ्रष्ट पुलिस वालों व कथित नेताओं का संरक्षण प्राप्त हैं। अपराधी नेताओं के काम आते हैं। यह वर्ग इतने शातिर दिमाग का है कि कई बार अकेले ही भ्रष्टाचार के शिकायतकर्ताओं को शासन की प्रक्रियाओं व नियमों के अधीन कार्यवाही करने के नाम पर सरकारी दफ्तरों व अपने घरों में बुलाकर हत्या तक कर देते हैं और इनके ऐसे कार्यो का पता तक नहीं चल पता फिर भी उन्हें वैधता प्राप्त हो जाती है। उनके ऐसे कार्यों पर परदा इसलिए पड़ा रहता है कि-

- यह वर्ग प्रत्यक्ष रूप से साधुरूप धारण किये रहता है।
- यह वर्ग अपने कार्यो को कानूनी नियमों व प्रक्रियाओं से ढके रहता है।
- सामान्यत: यह वर्ग मिलकर कार्य करता है।
- गॉव में, मुहल्लों में इनके एजेन्ट होते हैं, जो जनता के बीच इनके कार्यो का गुणगान करते रहते हैं और विश्वास बनाये रखते हैं, इन वर्गो को गुमराह कर उनकी गुप्तचरी करते हैं। यही एजेन्ट चुनाव के समय में चुनावी गतिविधियों में शामिल होते हैं।[113]

10. लोगों से प्राप्त आवेदनों व शिकायतों पर भारत की उच्च स्वतंत्र संरचनाओं

द्वारा क्या कार्यवाही व निर्णय किया गया है, इसकी सूचना सम्बन्धित व्यक्ति तक सही समय में पहुँचे। इसका दायित्व उक्त संरचनाओं को स्वयं अपने निगरानी में सम्पन्न करना चाहिये क्योकि वे शिकायतें उन पदाधिकारियों के विरूद्ध भी हो सकती हैं, जिनके बीच होकर उक्त सूचना को गुजरना होता है। इसलिए कई बार उक्त सूचना को डॉक विभाग द्वारा आवेदक को नहीं दी जाती, जिससे शिकायत का उद्देश्य व न्याय के प्रति विश्वास खत्म हो जाता है। यदि भारतीय सुप्रीम कोर्ट या किसी भी संस्था द्वारा भेजी गई सूचना सम्बन्धित व्यक्ति को प्राप्त न हो या विलम्ब से प्राप्त हो, तो गंभीर विचारणीय विषय है।

11. देश के प्रत्येक नागरिक का एक राष्ट्रीय पहचान पत्र (आधार कार्ड) तथा एक निर्वाचन परिचय पत्र (नागरिकता कार्ड) होना चाहिए एवं दोनों को आपस में जोड़ा जाना चाहिए। अर्थात् निर्वाचन आयोग द्वारा त्रिस्तरीय (लोकसभा , विधानसभा, ग्राम पंचायत) निर्वाचन नामावली जारी नहीं की जानी चाहिए।

12. न्यायालयों द्वारा बलात्कार, हत्या व भ्रष्टाचार के बड़े मामलों के अपराधियों को जेल एवं दण्ड से सरल तरीकों से अर्थात् रूपये या राजनीतिक लाभ के आधार पर जमानत के जरिए रिहा न किया जाये क्योंकि इससे यह साबित होता है कि न्याय सिर्फ पैसे वालों के लिए है।[114]

13. **लाभ या दण्ड का वितरण** –शासन व न्यायालय द्वारा दिये जाने वाले लाभ व दण्ड हर दृष्टि से सही तथा समयबद्ध जॉच के बाद ही उपयुक्त पात्र व्यक्तियों को मिल सके, इसे सुनिश्चित किया जाये। इस प्रकार की जॉच परीक्षा के रूप में या कानूनी, आर्थिक, चिकित्सीय आदि आधारों पर सम्पन्न की जा सकती है अर्थात् लाभ या दण्ड का वितरण राजनीतिक लाभ को प्राप्त करने के उद्देश्य से नहीं किया जाना चाहिए। इनका वितरण ऐसा हो कि व्यक्तियों के मध्य अन्याय, विभाजन एवं असमानता का जन्म न हो।

14. आरक्षण व्यवस्था को पूरी ईमानदारी से लागू किया जाये या संविधान में वर्णित अनुसूचित जाति, अनुसूचित जन–जातियों के विकास के लिए एक समान अवसर व परिस्थितियॉ उपलब्ध कराई जाए ताकि देश को प्राप्त सन् 1947 की स्वतंत्रता इस वर्ग के लोगों को भी प्राप्त हो सके।[115] कहने का तात्पर्य सिर्फ इतना ही है कि इन वर्गो के विकास के लिए शासन ऐसा ठोस एवं स्थाई कदम उठाये कि इन वर्गो का पूर्ण विकास हो सके और इसके बाद आरक्षण व्यवस्था को धीरे–धीरे खत्म किया जाये।

15. प्रत्येक स्थान के लिए अलग–अलग नाम जारी किया जाये अथवा प्रत्येक स्थान का एक कोड नं0. होना चाहिये। हमारे देश में एक ही नाम के कई स्थान मौजूद हैं। इस कारण भ्रष्टाचार के खिलाफ कानूनी कार्यवाही करते समय भ्रम उत्पन्न होने की संभावना बनी रहती है और भ्रष्टाचारी इसका लाभ उठाते हैं।

16. किसी भी पदाधिकारी के कार्यकाल मेंवृद्धि करना, प्रभार देना, अतिरिक्त कार्य सौपना, अनुभव के आधार पर वरीयता देना या कार्य पर रखना,मुख्य पदाधिकारी(संस्था प्रमुख) के समानान्तर अन्य उप या सहायक पदाधिकारी को रखना, किसी भी कार्य में असहयोग करना आदि ऐसे कार्य कम से कम किये जाये।

17. आवेदन की पावती व्यवस्था– दिये गये आवेदन की रिसीविंग हर विभाग में हर व्यक्ति को सरल तरीके से प्राप्त हो। यह व्यवस्था ऐसी हो, जिसमें रिसीविंग त्वरित प्राप्त हो जाये और कोई भी विभाग या पदाधिकारी रिसीविंग देने से मना न कर सके तथा दिये गये आवेदन में फेर–बदल न कर सके।

18. किसी सर्वोच्च संस्था के प्रमुख से मिलने (भेंट करने) की व्यवस्था एवं प्रमुख के समक्ष विचार–अभिव्यक्ति करने की स्वतंत्रता सभी लोगों को समान रूप से उपलब्ध होनी चाहिये क्योकि व्यक्ति अक्सर असामान्य परिस्थिति में ही सर्वोच्च पदाधिकारी से मिलने का प्रयास करते हैं। मिलने के समय की पदाधिकारी की सुरक्षात्मक समस्या उस समय उत्पन्न परिस्थिति के अनुसार निम्नांकित तीन ढ़ंग से सुलझायी जानी चाहिए–

- सामान्य जन की अनावश्यक भीड़ कम करने के लिए–कौन मिल सकता है और कौन नहीं मिल सकता ? इसका निर्धारण करना।
- सामान्य अपराधी के लिए – जॉचकर व बॉधकर मिलवाना।
- गम्भीर अपराधी के लिए –सम्बन्धित का नाम व आवेदन की विषय–वस्तु (विचार–अभिव्यक्ति) का केवल सार्वजनिक रूप से प्रसारण।

19. आवेदित समस्या का समाधान– निचले स्तर की संस्थाओं/ पदाधिकारियों पर कानून–संगत कार्य न करने का आरोप लगाते हुए किसी समस्या का समाधान करने व सूचना अधिकार अधिनियम के तहत जानकारी प्राप्त करने आदि के बारे में यदि कोई व्यक्ति निचले विभागों/पदाधिकारियों से क्रमश:समस्या का समाधान/जानकारी प्राप्त नहीं करना चाहता बल्कि उसी विभाग से सम्बन्धित सर्वोच्च कार्यालयों से समस्या का समाधान व जानकारी प्राप्त करना चाहता है,तो सर्वोच्च कार्यालयों को समस्या का समाधान व जानकारी प्राप्त करने के लिए अपने से निचले स्तर के किसी भी कार्यालय (विभाग) में आवेदक को जहॉ तक संभव हो कदापि नही भेजना चाहिए बल्कि निचले स्तर के कार्यालयों से जानकारी प्राप्त कर एवं उचित कार्यवाही कर अपने कार्यालय द्वारा आवेदक की समस्याओं का समाधान किया जाना चाहिए क्योंकि सर्वोच्च स्तर के अधिकारियों से मिलना, आवेदन देना, समस्या का समाधान प्राप्त करना, उस समय जरूरी हो जाता है, जब निचले स्तर के कार्यालयों के प्रभावशाली, अपराधिक प्रकृति वाले अधिकारी एवं भ्रष्टाचार की शिकायत के लिए स्थापित हेल्पलाइन के पदाधिकारी अपने कर्तव्यों का निर्वाह नहीं करते और इससे आवेदक की सुरक्षा खतरे में पड़ जाती है और उसे न्याय नहीं मिल पाता। एक अच्छी संस्था का लक्षण है कि जनता से प्राप्त सही आवेदनों (Inputs)को स्वीकार करे व प्राप्त गलत आवेदनों (Inputs) को दृढ़ता से अस्वीकार करे।

20. शासन के महत्वपूर्ण दस्तावेजों की सुरक्षा व संधारण के लिए कोडयुक्त रजिस्टर व फाइलें होनी चाहिए। इसी प्रकार दस्तावेजों को नष्ट करने वाली सभी प्रकार की गतिविधियों पर रोंक लगायी जानी चाहिए। इस प्रकार की गतिविधियों में प्राय: भ्रष्टाचारी या भ्रष्टाचारी समूह द्वारा शासकीय दस्तावेजों को नष्ट करने में प्रयुक्त किये गये वास्तविक कारणों पर परदा डालने के लिए प्राकृतिक घटनाओं (बाढ़, आग, खराब–मौसम, अवधि) दुर्घटनाओं, भूलों, चोरियों (Stealing) एवं निचले स्तर के कर्मचारियों आदि को दोषी घोषित किया जाता है।

21. सम्पूर्ण देश के प्रत्येक शासकीय पद की भर्ती के लिए एक पात्रता परीक्षा उत्तीर्ण करना अनिवार्य होना चाहिए। यह पात्रता परीक्षा भारत सरकार के नियंत्रण में नियमित रूप से सम्पादित की जानी चाहिए और भारत सरकार को इस परीक्षा हेतु एक स्थाई पात्रता परीक्षा आयोग की स्थापना करनी चाहिए। ऐसे आयोग का कार्य केवल पात्रता परीक्षा सम्पन्न करना हो। पात्रता परीक्षा में जरूरतमंद लोगों को आरक्षण संविधान के दायरे में दिया जाय, राजनीतिक लाभ के आधार पर नहीं।

Conclusion & Suggestion - प्रस्तुत अध्ययन के आंकड़ो के विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि कागज मे लिखने मात्र से कुछ नहीं होता, किसी भी व्यवस्था में क्रियान्वयन ज्यादा महत्वपूर्ण पहलू है।[116] पर स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के वर्षो में खानापूर्ति और सरकारी ऑकड़ों को पेश कर मालपूर्ति (धन–संग्रह) पर अधिक ध्यान दिया गया है। इसलिए भले ही दलितों के लिए योजनाऍ चल रही हैं, आरक्षण जारी है पर आज तक ऐसे लोगों के घरों, चेहरों, कपड़ों या बच्चों की बोली में विकास एवं विचार अभिव्यक्ति

की स्वतंत्रता की स्थिति व उसकी सुरक्षा के विकास का कोई खास लक्षण नही दिखता। जबकि दूसरी ओर भ्रष्टलोग अपने पद का दुरूपयोग कर धनकुबेर बनते जा रहे हैं और लाभ उठा रहे हैं फिर भी इनके ऐसे भ्रष्टकार्यों पर तब तक परदा पड़ा रहता है, जब तक कि इनके विरूद्ध कोई कार्यवाही नहीं की जाती, आपसी सामंती शक्तियों के गठजोड़ का तालमेल बिगड़ नही जाता।[117]

67 साल के बाद आज भी उच्च पदों पर उच्च जाति के लोग भारी मात्रा में हैं। इसलिए दलितों, निर्बलों की बात वहॉ अड्रेस नहीं हो रही है। अपवादिक स्थितियों को छोड़ दिया जाय, तो वास्तविकता यह है कि देश में इतने कानून व संस्थाऍ मौजूद हैं लेकिन जिस तरह से साधन संपन्न लोगों को न्याय प्राप्त हो जाता है,उस ढ़ंग से और उस ढ़ंग का न्याय दलितों को भी प्राप्त हो जायेगा,हमारी राज्यव्यवस्था में निश्चित नहीं है। प्रशासनिक संगठनों के आंतरिक कार्यकरण में जाति व लिंग आधारित भेदभाव अभी भी जारी है। इन्हीं बातों को कई बार माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने व्यक्त किया है। इसका परिणाम यह हुआ आज देश की जेलों में दलितों की संख्या सबसे ज्यादा है।[118]

वास्तव में भारतीय समाज की संवेदना और सहयोग की भावना में अत्यधिक गिरावट आ जाने के कारण भ्रष्टाचार इतनी प्रबल स्थिति तक पहुॅचा है।[119] इस भ्रष्टाचार पर शीघ्र रोक लगाने की आवश्यकता है, अन्यथा देश के गरीब व्यक्ति के लिए सामाजिक न्याय का बचा-कुचा मूलमंत्र भी पूर्णतया खारिज हो जाएगा और जैसा कि प्रसिद्ध पत्रकार अमिताभ अग्निहोत्री ने कहा है 'लमहों ने खता की है, सदियों ने सजा पायी है।'[120]

संक्षेप में-दलित, निर्बल वर्ग जितना ही आरक्षण के अलावा आत्मनिर्भर होने का प्रयास करेगा और सवर्णों की केवल आलोचना करने की बजाय हर क्षेत्र में बराबरी करने का प्रयास करेगा[121] तथा इसी प्रकार हमारी राज्यव्यवस्था में मौजूद अति आर्थिक व भूमि की विषमता,अति ढील(छुट्टा)व्यवस्था,[122] नियमों-कानूनों- संस्थाओं के सहारे अवैध कार्यो का संचालन, सत्यता की जगह बहुमत को सर्वोच्चता, राजनीति के प्रति सामाजिक उदासीनता, स्वार्थपरता, जातीय दुर्भावना,[123]सूचनाओं पर नियंत्रण, विलंब व खर्चीला न्याय, अमीर-गरीब के बच्चों के लिए अलग-अलग शिक्षा, निर्वाचन प्रक्रिया में अवैध तरीकों का प्रयोग, न्याय प्रणाली की घेराबंदी[124] आदि विभिन्न कमियॉ जितनी ही दूर होती चली जाएगी, उतना ही राज्यव्यवस्था से भ्रष्टाचार कम होता जाएगा और सामाजिक न्याय की स्थापना होती चली जाएगी।

Acknowledgement – शोध लेखन की मुझे प्रेरणा डॉ0अम्बेडकर के इस कथन से प्राप्त हुई कि 'पढ़े-लिखे व्यक्ति का सबसे बड़ा दोष यह है कि वह पढ़ाई पूर्ण कर लेने के बाद अपने अधिकार में लग जाता है, उसे दूसरों के हक की चिन्ता नहीं रहती।' 'मौलिक लेखन की प्रेरणा प्रो0आर0के0सिंघल सर से प्राप्त हुई।'किसी भी भ्रष्टाचार की घटना में कौन-सी नियमितताऍ (प्रक्रियाऍ) काम कर रही हैं, उन्हें संग्रहकर व्यवस्थित लिख डालो। यह निर्देश डॉ0एस0पी0शुक्ल सर ने मुझे दिया था। इस लेखन में प्रो0 ए0एम0त्रिपाठी एवं प्रो0 हरेश्वर राय,शासकीय पी0जी0कालेज, सतना एवं प्रो0मुकेश चौधरी, राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान, पटना ने भी बहुत सहयोग किया है। हम इन सभी विद्वान प्राध्यापकों के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पी-7 न्यूज, टी.वी. चैनल (संचालक- मि.ज्योति नारायण) दिनांक-25.04.2013
2. ए.बी.पी.न्यूज, टी.वी. चैनल (ग्रुप संपादक- शाजी जमैन) दिनांक-11.10.2014
3. श्री न्यूज, टी.वी. चैनल (ग्रुप संपादक- पंकज वर्मा) दिनांक-30.04.2013
4. फोकस न्यूज, टी.वी. चैनल (मैनेजिंग संपादक- शैलेश कुमार) दिनांक-31.08.2015, समय-10:17 पी.एम.
5. लोकसभा टी.वी. (भारत सरकार का चैनल) दिनांक 09.04.2015, समय-6:15 ए.एम.
6. अर्चना, वार्षिक पत्रिका, प्रकाशन वर्ष 2012-13, प्रकाशक-शा.ठा.रणमत सिंह महा.रीवा, पृष्ठ-50
7. जनसत्ता, समाचार-पत्र, दिनांक 18.11.2013, पृष्ठ-8
8. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-17.03.2015, मुख्य पृष्ठ
- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-16.04.2014, पृष्ठ-5
- आशीर्वादम्, डॉ.ए.डी., राजनीति विज्ञान, प्रकाशन वर्ष-2001,प्रकाशक-एस.चन्द एण्ड कम्पनी लि.,नईदिल्ली, पृष्ठ-643
- कटारिया,डॉ. सुरेन्द्र, लोकप्रशासन : सिद्धान्त एवं व्यवहार, प्रकाशन वर्ष-2007, प्रकाशक-नेशनल पब्लिशिंग हाउस, जयपुर, पृष्ठ-859.दैनिक भास्कर, समाचार पत्र, जबलपुर, दिनांक-15.11.2014, डी.बी. स्टार अतिरिक्त पृष्ठ-1
10. टी.वी. 24 न्यूज, टी.वी. चैनल (संचालक- अनुराधा प्रसाद), दिनांक 03.05.2013
- श्री न्यूज टी.वी. चैनल (ग्रुप संपादक-पंकज वर्मा),दिनांक 11.12.2014
11. लोकसभा, टी.वी. (भारत सरकार का चैनल) दिनांक 16.12.2014, समय-9:11 ए.एम.
12. समय सहारा, साप्ताहिक, समाचार-पत्र, दिनांक 26.12.2003 मुख्य पृष्ठ
13. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-16.10.2013, मुख्य पृष्ठ
14. भारत का संक्षिप्त संविधान, प्रतियोगिता दर्पण, प्रकाशन वर्ष- 2005, प्रकाशक-उपकार प्रकाशन, आगरा पृष्ठ- 51,55
15. रूद्र दत्त एवं सुन्दरम, डॉ0 के0पी0एम0, भारतीय अर्थव्यवस्था, प्रकाशन वर्ष-2006,प्रकाशक-एस.चंद एण्ड कम्पनी लि., नईदिल्ली, पृष्ठ-318
- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-15.04.2015, मुख्य पृष्ठ
16. रूद्र दत्त एवं सुन्दरम, डॉ0 के0पी0एम0, भारतीय अर्थव्यवस्था, प्रकाशन वर्ष-2006,प्रकाशक- एस.चंद एण्ड कम्पनी लि., नईदिल्ली, पृष्ठ-303,317,318
- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-05.04.2014, पृष्ठ-5
- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-15.04.2015, मुख्य पृष्ठ
- गेना, डॉ.सी.बी., तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष 2005,प्रकाशक-विकास पब्लिशिंग हाउस, प्रा.लि., नईदिल्ली, पृष्ठ-196
17. रूद्र दत्त एवं सुन्दरम, डॉ0 के0पी0एम0, भारतीय अर्थव्यवस्था, प्रकाशन वर्ष-2006, प्रकाशक- एस.चंद एण्ड कम्पनी लि., नईदिल्ली, पृष्ठ-316,317
- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-07.04.2015, पृष्ठ-9
- जनसंदेश, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-06.05.2015, पृष्ठ-6
- जनसंदेश, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-18.04.2015, पृष्ठ-6
- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-23.04.2015, पृष्ठ-9
- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-25.04.2015, पृष्ठ-8
18. म0प्र0 के मुख्यमंत्री द्वारा की गई एक कार्यवाही- सी.एम. भवदीय, पत्र क्रमांक-ओ.एस.डी.- 9828599/07/15, भोपाल, दिनांक 13.11.2007 के पालन मे(शिकायत-08),कलेक्टर सतना द्वारा

प्रतिलिपि-आवेदक, लल्ला रैदास, ग्राम उमरिहा को सूचनार्थ एवं सम्बन्धित प्रकरण की पटवारी जांच प्रतिवेदन, दिनांक 25.02.2008

प्रस्तुत प्रकरण पर समूचे शासन ने अपने सत्ताविहीन समूह के पक्ष में कार्य किया क्योंकि व्यक्ति सामाजिक भूमिकाओं के माध्यम से ही अन्य सब प्रकार की भूमिकाओं मे उलझते हैं।इसी तथ्य को जाग्वाराइव इस प्रकार व्यक्त किया-राजनीतिक असहमति का कारण सामाजिक असहमति होता है।अर्थात् राजनीतिक व्यवस्था की समस्याएं अपने पर्यावरण से संबंधित होती है।(गेना, डॉ.सी.बी., तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष 2005,प्रकाशक- विकास पब्लिशिंग हाउस, प्रा.लि., नईदिल्ली, पृष्ठ- 212,246,247)

19. जनसत्ता, समाचार-पत्र, दिनांक-26.05.2014 पृष्ठ-6
20. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-05.04.2014, पृष्ठ-5
21. जनसत्ता, समाचार-पत्र, दिनांक 26.05.2014 पृष्ठ-6
22. रूद्र दत्त एवं सुन्दरम, डॉ0 के0पी0एम0, भारतीय अर्थव्यवस्था, प्रकाशन वर्ष-2006,प्रकाशक- एस.चंद एण्ड कम्पनी लि.,नईदिल्ली, पृष्ठ-314
23. तथ्य भारती, आर्थिक मासिक पत्रिका,(संपादक-दीनानाथ दुबे, कोटा, राजस्थान) अंक-मई 2010,पृष्ठ-3
24. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-21.03.2014, मुख्य पृष्ठ
- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-22.03.2014, मुख्य पृष्ठ
25. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-04.06.2014, पृष्ठ-4
26. दैनिक भास्कर, सतना, दिनांक-17.04.2015, पृष्ठ-4
- दैनिक भास्कर, सतना, दिनांक-13.04.2015, पृष्ठ-6
- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-15.04.2015, पृष्ठ-3
27. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-01.04.2015, मुख्य पृष्ठ
28. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-04.03.2014, पृष्ठ-5
- रूद्र दत्त एवं सुन्दरम, डॉ0 के0पी0एम0, भारतीय अर्थव्यवस्था, प्रकाशन वर्ष-2006,प्रकाशक- एस.चंद एण्ड कम्पनी लि., नईदिल्ली, पृष्ठ-317,349
29. रूद्र दत्त एवं सुन्दरम, डॉ0 के0पी0एम0, भारतीय अर्थव्यवस्था, प्रकाशन वर्ष-2006,प्रकाशक- एस.चंद एण्ड कम्पनी लि., नईदिल्ली, पृष्ठ-303
30. रूद्र दत्त एवं सुन्दरम, डॉ0 के0पी0एम0, भारतीय अर्थव्यवस्था, प्रकाशन वर्ष-2006,प्रकाशक- एस.चंद एण्ड कम्पनी लि., नईदिल्ली, पृष्ठ-303
31. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-07.06.2014, पृष्ठ-2
32. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-30.04.2014, पृष्ठ-2
33. तथ्य भारती,आर्थिक मासिक पत्रिका,(संपादक-दीनानाथदुबे,कोटा,राजस्थान)अंक-मई2010,पृष्ठ-11(अध्याय-क्या हमारा जनतंत्र वाकई अमीरो का है ?)
34. राज्यसभा, टी.वी. (भारत सरकार का चैनल) दिनांक 08.12.2014,(कार्यक्रम,वाद-विवाद,कैद मे कमजोर)
- राज्यसभा, टी.वी. (भारत सरकार का चैनल) दिनांक 12.04.2015,(कार्यक्रम,वाद-विवाद सामाजिक पूर्वाग्रह और आरक्षण के सवाल)
- तथ्य भारती, आर्थिक मासिक पत्रिका, (संपादक-दीनानाथ दुबे, कोटा, राजस्थान) अंक-मई 2010, पृष्ठ-11(अध्याय-क्या हमारा जनतंत्र वाकई अमीरो का है ?)
- गेना, डॉ.सी.बी., तुलनात्मक राजनीति , प्रकाशन वर्ष 2003, प्रकाशक-विकास पब्लिशिंग हाउस, प्रा. लि., नईदिल्ली, पृष्ठ-228
- जनसंदेश, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-18.10.2015, पृष्ठ-8
- रिसर्च जरनल, शोध धारा, प्रकाशन वर्ष-2014-15, प्रकाशक-शैक्षिक एवं अनुसंधान संस्थान, उरई जालौन,(उ0प्र0)संपादक - डॉ0 राजेशचन्द्र पाण्डेय, पृष्ठ-102(सुप्रीमकोर्ट के मुख्य न्यायाधीश-जे.एस.वर्मा के अनुसार)
35. जनसत्ता, समाचार-पत्र, दिनांक-05.11.2013 पृष्ठ-6
- गाबा, डॉ0 ओ.पी., राजनीति-सिद्धात की रूपरेखा, प्रकाशन वर्ष-2004, प्रकाशक-मयूर पेपर बैक्स, नौएडा, पृष्ठ-40
36. कटारिया,डॉ. सुरेन्द्र, भारतीय लोकप्रशासन, प्रकाशन वर्ष-2007, प्रकाशक- दीपक परनामी, आर.बी.एस.ए. पब्लिशर्स, जयपुर, पृष्ठ-551-552
37. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-15.04.2015, मुख्य पृष्ठ
38. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-07.05.2014, पृष्ठ-1 एवं 6
- सईद, प्रो0 एस.एम., भारतीय राजनीतिक व्यवस्था, प्रकाशन वर्ष-2006, प्रकाशक-भारत बुकसेन्टर, लखनऊ, पृष्ठ-39
- कटारिया, राजपाल, (अनुवादक एवं संपादन), श्रमिक विधियां, रिप्रिन्ट संस्करण-2014,प्रकाशक ओरिएन्ट पब्लिशिंग कम्पनी,नईदिल्ली व इलाहाबाद,(औद्योगिक विवाद अधिनियम-1947 की पांचवी अनुसूची- अनुचित श्रम व्यवहार) पृष्ठ-593
- टी.वी. 24, न्यूज चैनल (संचालक-अनुराधा प्रसाद), दिनांक 23.04.2015
- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-17.04.2015, पृष्ठ-4
- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-25.04.2015, पृष्ठ-8
39. दि हिन्दू, समाचार पत्र, (पी.जे. थामस-नियुक्ति विवाद)दिनांक 05.04.2011, इन्टरनेट मे उपलब्ध जानकारी।
40. दैनिक भास्कर, समाचार पत्र, सतना, दिनांक-21.11.2014, मुख्य पृष्ठ
41. दैनिक भास्कर,समाचार पत्र, सतना, दिनांक-01.10.2013, पृष्ठ-10
42. दि हिन्दू, समाचार पत्र, (पी.जे. थामस-नियुक्ति विवाद)दिनांक 05.04.2011, इन्टरनेट मे उपलब्ध जानकारी।
43. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-07.04.2015, मुख्य पृष्ठ
पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-23.04.2015, मुख्य पृष्ठ
44. कटारिया,डॉ. सुरेन्द्र, भारतीय लोकप्रशासन, प्रकाशन वर्ष-2007, प्रकाशक- दीपकपरनामी, आर.बी.एस.ए., पब्लिशर्स, जयपुर, पृष्ठ-552
45. कटारिया,डॉ. सुरेन्द्र, भारतीय लोकप्रशासन, प्रकाशन वर्ष-2007, प्रकाशक- दीपकपरनामी, आर.बी.एस.ए., पब्लिशर्स, जयपुर, पृष्ठ-551
46. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-27.04.2015, पृष्ठ-8
- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-29.04.2015, मुख्य पृष्ठ
- जनसत्ता, समाचार-पत्र, दिनांक 08.05.2014 पृष्ठ-6
- दैनिक भास्कर, सतना, दिनांक-20.04.2015, मुख्य पृष्ठ
- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-15.04.2015, मुख्य पृष्ठ
- गेना, डॉ.सी.बी., तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष 2005,प्रकाशक- विकास पब्लिशिंग हाउस, प्रा.लि., नईदिल्ली, पृष्ठ-196
47. दैनिक भास्कर, समाचार पत्र, सतना, दिनांक-05.06.2010, पृष्ठ-13
- दैनिक भास्कर, समाचार पत्र, जबलपुर, दिनांक-18.05.2010, पृष्ठ-8

- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-27.04.2015, पृष्ठ-7

48. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-27.04.2015, पृष्ठ-8
49. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-30.04.2014, पृष्ठ-4

- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-01.12.2013, पृष्ठ-1
- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-30.11.2013, पृष्ठ-3

50. दैनिक भास्कर, समाचार पत्र, सतना, दिनांक-23.03.2015, पृष्ठ-4
51. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-08.01.2014, पृष्ठ-8
52. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-27.04.2015, पृष्ठ-8
53. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-13.04.2015, पृष्ठ-09

- दिनांक 01.05.2015,समय-7:11पी.एम. को इन्टरनेट मे उपलब्ध जानकारी (व्यापम महाघोटाला,म0प्र0)

54. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-04.03.2014, पृष्ठ-5

- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-01.05.2015, पृष्ठ-6

55. आर.टी.आई. के एक मामले में जबलपुर, उच्च न्यायालय द्वारा की गई एक कार्यवाही-आपका आवेदन-पत्र Form-अ दिनांक 28.05.2010, Marked I.D. No.-40/2010-11, (JBC.H. Court R.T.I. दिनांक 16.06.2010)
56. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-07.04.2015, पृष्ठ- 8
57. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-04.05.2014, पृष्ठ-2
58. रूद्र दत्त एवं सुन्दरम, डॉ0 के0पी0एम0, भारतीय अर्थव्यवस्था, प्रकाशन वर्ष-2006,प्रकाशक- एस.चंद एण्ड कम्पनी लि., नईदिल्ली, पृष्ठ-316,317
59. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-09.04.2015, मुख्य पृष्ठ

- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-27.04.2015, पृष्ठ-7
- दैनिक भास्कर, समाचार पत्र, सतना, दिनांक-22.04.2015, पृष्ठ-4

60. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-29.04.2015, मुख्य पृष्ठ

- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-15.04.2015, मुख्य पृष्ठ

61. रोजगार और निर्माण, साप्ताहिक समाचार पत्र, भोपाल, दिनांक-14.07.2014 से 20.07.2014 तक मे प्रकाशित, पृष्ठ-6

62 कटारिया,डॉ. सुरेन्द्र, भारतीय लोकप्रशासन, प्रकाशन वर्ष-2007, प्रकाशक- दीपक परनामी, आर.बी.एस.ए., पब्लिशर्स, जयपुर, पृष्ठ-547

63. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-01.05.2015, पृष्ठ-6

- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-03.05.2015, पृष्ठ-7
- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-01.05.2015, पृष्ठ-9
- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-27.04.2015, पृष्ठ-8
- रोजगार और निर्माण, साप्ताहिक समाचार पत्र, भोपाल, दिनांक-14.07.2014 से 20.07.2014 तक मे प्रकाशित, पृष्ठ-6

64. दिनांक 01.05.2015,समय-7:11पी.एम.को इन्टरनेट मे उपलब्ध जानकारी (व्यापम महाघोटाला, म0प्र0)
65. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-15.04.2015, मुख्य पृष्ठ
66. तथ्य भारती, आर्थिक मासिक पत्रिका,(संपादक- दीनानाथ दुबे,कोटा,राजस्थान) अंक - मई 2010 ,पृष्ठ-11(अध्याय-क्या हमारा जनतंत्र वाकई अमीरो का है ?)

67 पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-07.04.2015, पृष्ठ-8

68. म0प्र0के मुख्यमंत्री द्वारा की गई एक कार्यवाही-सी.एम., म.प्र.,भवदीय,पत्र क्रमांक-ओ.एस.डी.9828599/07/15, भोपाल, दिनांक 13.11.2007 के पालन मे,पटवारीहल्का-डेगरहट,तहसील रामपुर बाघेलान जिला सतना द्वारा दिनांक 25.02.2008 को की गई जांच का प्रतिवेदन

69 आशीर्वादम्, डॉ.ए.डी., राजनीति विज्ञान, प्रकाशन वर्ष-2001, प्रकाशक-एस.चंद एण्ड कम्पनी लि.,नईदिल्ली, पृष्ठ-640, 641

70. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-26.12.2013, मुख्य पृष्ठ

- डॉ0 नंदलाल, राजनीति विज्ञान, बी.ए. खंड़ी डशा. प्रकाशन वर्ष-2014, प्रकाशक-शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, पृष्ठ-188
- आशीर्वादम्, डॉ.ए.डी., राजनीति विज्ञान, प्रकाशन वर्ष-2001, प्रकाशक-एस.चंद एण्ड कम्पनी लि.,नईदिल्ली, पृष्ठ-641, 643
- वर्मा, डॉ0 वी.पी., आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन, प्रकाशन वर्ष-2012, प्रकाशक लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, पृष्ठ-674, 675, 676

71. जनसत्ता, दिनांक 26.05.2014 पृष्ठ-6
72. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-27.04.2015, पृष्ठ-8
73. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-02.08.2014, पृष्ठ-8 (प्रो0-राजीव गुप्ता, राजस्थान, वि.वि. के लेख से)

- दैनिक भास्कर, समाचार पत्र, सतना, दिनांक-13.07.2010, पृष्ठ-16

74. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-03.05.2015, पृष्ठ-1,6,9
75. तथ्य भारती, आर्थिक मासिक पत्रिका,(संपादक-दीनानाथ दुबे, कोटा, राजस्थान)अंक-मई 2010, पृष्ठ-11(अध्याय-क्या हमारा जनतंत्र वाकई अमीरो का है ?)
76. समय सहारा, साप्ताहिक समाचार पत्र, दिनांक 26.12.2003, मुख्य पृष्ठ
77. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-11.02.2014, मुख्य पृष्ठ
78. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-09.04.2015, मुख्य पृष्ठ
79. राज्यसभा, टी.वी. (भारत सरकार का चैनल) दिनांक 08.12.2014
80. कटारिया,डॉ. सुरेन्द्र, भारतीय लोकप्रशासन, प्रकाशन वर्ष-2007, प्रकाशक-दीपक परनामी, आर.बी.एस.ए., पब्लिशर्स, जयपुर, पृष्ठ-347

- टोटल, टी.वी., चैनल, (डिप्टी संपादक-आशुतोष सहाय) दिनांक-02.03.2011,समय 8:00पी.एम.
- जनसत्ता, दिनांक 03.11.2013 पृष्ठ-07
- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-06.10.2013, मुख्य पृष्ठ
- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-10.12.2013, पृष्ठ-10
- डी.डी.-1 दूरदर्शन (भारत सरकार का चैनल) दिनांक 24.03.2014 समय 8:30 पी.एम.

81. जनसत्ता, दिनांक 05.11.2013 पृष्ठ-6
82. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-11.02.2014, मुख्य पृष्ठ
83. टोटल, टी.वी., चैनल, (डिप्टी संपादक-आशुतोष सहाय) दिनांक-02.03.2011,समय 8:00 पी.एम.
84. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-02.08.2014, पृष्ठ-8 (प्रो0-आनंद कुमार,जे.एन.यू. के लेख से)
85. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-02.08.2014, पृष्ठ-8 (प्रो0-आनंद कुमार,जे.एन.यू. एवं प्रो0-सुभाष चन्द, हिन्दी विभाग, कुरूक्षेत्र के लेख से)

- जनसत्ता, दिनांक 26.05.2014 पृष्ठ-4

86. राज्यसभा, टी.वी. (भारत सरकार का चैनल) दिनांक 08.12.2014
87. कटारिया,डॉ. सुरेन्द्र, भारतीय लोकप्रशासन, प्रकाशन वर्ष-2007, प्रकाशक-दीपक परनामी, आर.बी.एस.ए., पब्लिशर्स, जयपुर, पृष्ठ-544

- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-06.10.2013, मुख्य पृष्ठ

88. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-02.08.2014, पृष्ठ-8 (प्रो0-आनंद कुमार,जे.एन.यू. के लेख से)

s

- कटारिया,डॉ. सुरेन्द्र, लोकप्रशासन :सिद्धान्त एवं व्यवहार, प्रकाश वर्ष-2007, प्रकाशक-नेशनल पब्लिशिंग हाउस, जयपुर, पृष्ठ-80

89. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-08.03.2014, पृष्ठ-2 (अरविन्द केजरीवाल)
90. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-06.10.2013, मुख्यपृष्ठ
91. कटारिया,डॉ. सुरेन्द्र, भारतीय लोकप्रशासन, प्रकाशन वर्ष-2007, प्रकाशक- दीपक परनामी, आर.बी.एस.ए., पब्लिशर्स, जयपुर, पृष्ठ-611
92. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-08.03.2014, पृष्ठ-2 (अरविन्द केजरीवाल)
93. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-08.03.2014, पृष्ठ-2 (अरविन्द केजरीवाल)
94. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-08.03.2014, पृष्ठ-2 (अरविन्द केजरीवाल)
95. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-02.08.2014, पृष्ठ-8 (डॉ0 राजेश पासवान, जे.एन.यू. के लेख से)
96. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-02.08.2014पृष्ठ-1, 8 (डॉ0 राजेश पासवान,जे.एन.यू. के लेख से)
97. दि हिन्दू,समाचार पत्र,(पी.जे. थामस-नियुक्ति विवाद) दिनांक 05.04.2011,इन्टरनेट मे उपलब्ध जानकारी
98. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-02.08.2014, पृष्ठ-8 (डॉ0 राजेश पासवान, जे.एन.यू. के लेख से)
99. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-07.04.2015, पृष्ठ-8
100. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-08.01.2014, पृष्ठ-8
101. जनसत्ता, दिनांक 05.11.2013 पृष्ठ-6

- जनसत्ता, दिनांक 09.03.2014, पृष्ठ-रविवारी अंक
- गाबा, डॉ0 ओ.पी., राजनीति-सिद्धात की रूपरेखा, प्रकाशन वर्ष-2004,प्रकाशक-मयूर पेपर बैक्स, नौएडा, पृष्ठ-53
- कटारिया,डॉ. सुरेन्द्र, भारतीय लोकप्रशासन, प्रकाशन वर्ष-2007, प्रकाशक-दीपक परनामी, आर.बी.एस.ए., पब्लिशर्स, जयपुर, पृष्ठ-347

102. तथ्य भारती, आर्थिक मासिक पत्रिका,(संपादक-दीनानाथ दुबे, कोटा, राजस्थान) अंक-मई 2010, पृष्ठ-11(अध्याय-क्या हमारा जनतंत्र वाकई अमीरो का है ?)
103. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-23.11.2013, पृष्ठ-8 (भाजपा नेता-लालकृष्ण आडवानी)
104 पत्रिका,समाचार-पत्र, सतना,दिनांक-02.08.2014,पृष्ठ-8(प्रो0-आनंद कुमार,जे.एन.यू.के लेख से)
105 पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-02.08.2014, पृष्ठ-8 (प्रो0-राजीव गुप्ता, राजस्थान, वि.वि. के लेख से)
106. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-02.08.2014, पृष्ठ-8

- कटारिया,डॉ. सुरेन्द्र, भारतीय लोकप्रशासन, प्रकाशन वर्ष-2007, प्रकाशक- दीपक परनामी, आर.बी.एस.ए., पब्लिशर्स, जयपुर, पृष्ठ-554 (भारतीय राष्ट्रपति- डॉ0कलाम)

107. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-27.10.2013, पृष्ठ-3
108 पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-06.05.2015, पृष्ठ-4
109. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-03.05.2015, पृष्ठ-18

- गेना, डॉ.सी.बी., तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशन वर्ष 2003,प्रकाशक- विकास पब्लिशिंग हाउस, प्रा.लि., नईदिल्ली, पृष्ठ-176

110. राज्यसभा, टी.वी. (भारत सरकार) दिनांक 09.05.2013 (C.B.I.निदेशक-जोगिन्दर सिंह)

- दैनिक भास्कर, समाचार पत्र, सतना, दिनांक-17.04.2014, पृष्ठ-14
- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-23.04.2015, पृष्ठ-8
- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-03.05.2015, पृष्ठ-18

111. दिनांक 01.05.2015, समय-7:11 पी.एम. को इन्टरनेट में उपलब्ध जानकारी (व्यापम महाघोटाला, म0प्र0)

- जनसंदेश, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-14.05.2014, पृष्ठ-8

112. दिनांक 01.05.2015, समय-7:11 पी.एम. को इन्टरनेट मे उपलब्ध जानकारी (व्यापम महाघोटाला, म0प्र0)
113. गाबा, डॉ0 ओ.पी., राजनीति-सिद्धात की रूपरेखा, प्रकाशन वर्ष-2004, प्रकाशक-मयूर पेपर बैक्स,नौएडा, पृष्ठ-260
114. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-12.05.2015, पृष्ठ-8

- गाबा, डॉ0 ओ.पी., राजनीति-सिद्धात की रूपरेखा, प्रकाशन वर्ष-2004,प्रकाशक-मयूर पेपर बैक्स, नौएडा, पृष्ठ-360

115. ए.बी.पी. न्यूज चैनल, (ग्रुप संपादक-शाजी जमैन) दिनांक 31.08.2015,समय 6:09पी.एम.,(कन्नड़ लेखक कलबुर्गी की हत्या से उठे सवाल)
116. टोटल,टी.वी., चैनल(डिप्टी संपादक-आशुतोष सहायं) दिनांक-01.03.2011, समय 8:00 पी.एम. (प्रसिद्ध पत्रकार अमिताभ अग्निहोत्री)
117. इंडिया टी.वी.चैनल(संपादक-रजत शर्मा) दिनांक 09.05.2015, समय-22:56 पी.एम.(कार्यक्रम - आपकी अदालत)

- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-14.05.2015, मुख्य पृष्ठ
- दिनांक 01.05.2015, समय-7:11 पी.एम. को इन्टरनेट मे उपलब्ध जानकारी (व्यापम महाघोटाला, म0प्र0)

118. राज्यसभा, टी.वी. (भारत सरकार) दिनांक 07.12.2014 (देश मे अपराधों का आंकड़ा)
119. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, क्रमशः दिनांक-17.04.15, 23.04.15, 25.04.15, 27.04.15,28.04.15,29.04.15 एवं 01.05.15, 03.05.15, 11.05.15, 14.05.15,
120. टोटल टी.वी., चैनल (डिप्टी संपादक-आशुतोष सहाय) दिनांक-01.03.2011, समय 8:00 पी.एम.
121. मेहता,जीवन,राजनीति विज्ञान,B.A.III Sem.प्रकाशन वर्ष 2013, प्रकाशक-S.B.P.D. पब्लिशिंग हाउस, आगरा, पृष्ठ-118, 119
122. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-06.10.2013,मुख्य पृष्ठ, (गांधीजी का विचार)
123. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-15.04.2015, मुख्य पृष्ठ

- जनसत्ता,समाचार-पत्र,नई दिल्ली,दिनांक- 05.11.2015, पृष्ठ-6

124. पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-29.04.2015, मुख्य पृष्ठ

- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-06.05.2015, मुख्य पृष्ठ
- स्टार, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-07.05.2015, मुख्य पृष्ठ
- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-12.05.2015, पृष्ठ-1, 8
- पत्रिका, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-14.05.2015, मुख्य पृष्ठ
- जनसंदेश, समाचार-पत्र, सतना, दिनांक-17.05.2015, पृष्ठ-8

****

भारत चीन संबंधों के बदलते आयाम- मोदी की चीन यात्रा का संदर्भ

डॉ. श्रीकांत दुबे *

शोध सारांश – प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की चीनी यात्रा के दौरान भारत और चीन सीमा विवाद का न्यायसंगत, स्थायी और परस्पर स्वीकार्य हल खोजने पर सहमत हुए हैं। साथ ही दोनों नेताओं ने सीमावर्ती क्षेत्र में शांति व सौहार्द बनाए रखने की सभी कोशिशें जारी रखने की प्रतिबद्धता भी जताई। किन्तु दूसरी ओर पाक अधिकृत कश्मीर में चीनी दखल, नत्थी बीजा और सीमा विवाद के साथ वियतनाम में तेल खोजने के काम पर चीनी रुख भारत के लिए चिंता के सबब है। चीन ने वियतनाम पर अपनी धमकी वाला रुख कायम किया है। भारत के लिए चीनी रुख भविष्य में सभी कुछ आसान नहीं होने की ओर इशारा कर रहा है। भारत को चीनी खतरों को भॉपना एवं उनके प्रति सचेत रहने की नीति पर चलना होगा।

प्रस्तावना – एशिया की पहली और तीसरी बड़ी आर्थिक शक्तियॉ और जनसंख्या के लिहाज से विश्व के पहले और दूसरे बड़े देश, भारत और चीन जब मिलते हैं तो पूरी दुनिया की निगाहें इन पर टिक जाती है। मोदी एवं जिनपिंग की मुलाकातों से यह अहसास होने लगा है कि चीन जहॉ एक ओर मेल मिलाप की कवायद करना चाहता है वहीं दूसरी ओर वह दादागिरी का रुख भी कायम रखना चाहता है। एक अंदेशा यह भी है कि चीन निवेश का लालीपॉप दिखाकर सीमा संबंधी मुद्दे पर भारत को कमजोर करना चाहता है। वह समय समय पर भारतीय सीमा में घुसपैठ कर अपनी आक्रामक नीति का स्पष्ट संकेत देता रहा है। भारत से अमेरिकी एवं जापान से बढ़ती नजदीकी चीन में बौखलाहट पैदा कर रही है।

संबंधों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि – समाजवादी समूह के बाहर भारत पहला देश था जिसने वर्ष 1950 में चीन के साम्यवादी स्वरूप की स्थापना के समय ही उसे मान्यता देते हुए उसके साथ कूटनीतिक संबंध स्थापित किये। 1954 में जवाहरलाल नेहरू ने पंचशील को आधार बनाकर समझौते किये किन्तु 1962 में चीन ने भारत की पीठ में छुरा घोंपते हुए उस पर आक्रमण कर दिया एवं हिन्दी चीनी भाई भाई के नारे तो तार तार कर दिया। लंबे समय तक संबंधों में दरार बनी रही। 1988 में राजीव गांधी ने विज्ञान एवं तकनीकि के क्षेत्र में कुछ समझौते कर सीमा विवाद की दिशा में भी सकारात्मक कदम उठाने के प्रयत्न किये। कालांतर में नरसिंहराव, अटलबिहारी बाजपेई एवं मनमोहन सिंह ने भी संबंध सुधारने के प्रयत्न किये लेकिन सीमा विवाद का मसला बराबर सुलगता रहा। वर्तमान समय भी चीनी घुसपैठ एवं सीमा विवाद की दशा को किसी भी रूप में उपयुक्त नहीं कहा जा सकता। चीनी घुसपैठ का मुद्दा दोनों देशों के लए ज्वलंत बना रहा।

सीमा विवाद की वास्तविकता – 1962 में युद्ध के पश्चात भारत एवं चीन के मध्य सीमा विवाद दोनों के मध्य सबसे बड़ा ज्वलंत मुद्दा है। दोनों राष्ट्र 1962 से उलझे हुए है। इंदिरा गांधी ने कूटनीतिक संबंध स्थापित किये, नरसिंह राव ने वास्तविक नियंत्रण रेखा संबंधी समझौता किया, अटल बिहारी बाजपेई ने तिब्बत को चीनी अंग मान लिया इन सब के बाद भी सीमा विवाद कायम है। चीन का कहना है कि भारत ने उसकी 98000 किलोमीटर जमीन पर अधिपत्य स्थापित किया है तो भारत मानता है कि चीन ने उसकी 38000 किलोमीटर जमीन पर कब्जा कर रखा है। मोदी तथा जिनपिंग की मुलाकात इस सीमा विवाद को सुलझाने की दिशा में आगे बढ़ने हेतु अहम कदम होगा। सीमा विवाद के हल की दिशा में सर्वप्रथम जिनपिंग को पहल करनी होगी क्योंकि जिनपिंग चीनी सत्ता में सर्वेसर्वा है लेकिन मोदी की शक्तियों की सीमाएॅ है। भारतीय प्रधानमंत्री संसद से बंधे है। सीमा विवाद के हल की संभावना इसलिए भी है कि दोनों राष्ट्र एक दूसरे के लिए अपना महत्व जानते हैं। जहॉ भारत चीनी उत्पादों के लिए एक बड़ा उपभोक्ता बाजार है, वही चीन भारत के लिए प्रगति एवं विकास के नए आयाम का एक मार्ग है।

हाल ही में चीन ने वास्तविक नियंत्रण रेखा पर स्थिति स्पष्ट करने की मोदी की पेशकश स्वीकार नहीं की है। चीन का कहना है कि वह एल.ए.सी. पर कोड ऑफ कंडक्ट को महत्व देगा। चीन जहॉ एक ओर अरुणाचल से लगी 2000 किलोमीटर सीमा पर विवाद बता रहा है तो वहीं दूसरी ओर भारत के अनुसार चीन तक 4000 किलोमीटर तक सीमा विवादित है। इस इलाके पर चीन ने 1962 के युद्ध के बाद कब्जा कर लिया था।

चीनी घुसपैठ की अवधारणा – 1962 के युद्ध के बाद से भारतीय सीमा में चीनी घुसपैठ अनवरत जारी है। भारतीय सीमा में चीनी घुसपैठ ने कई सवाल खड़े किये हैं। एक ओर जहॉ चीन मेल मिलाप की कवायद करता है तो वहीं दूसरी ओर घुसपैठ के माध्यम से दादागिरी भी बनाए रखना चाहता है। और संभवत: हम पहले की तरह अब भी चुपचाप सब सहने को मजबूर दिख रहे हैं। चीन भारतीय सीमा में घुसपैठ कर अपनी आक्रामक नीति का स्पष्ट संकेत देता रहा है और अभी भी दे रहा है। वह भारत के अन्य राष्ट्रों से बढ़ती नजदीकी को पचा नहीं पाता है और सीमा पर घुसपैठ जैसे मसले को लाइमलाईट में रखना चाहता है। दोनों राष्ट्रों के लिए इसका हल आसान नहीं है। जिन इलाकों में चीनी घुसपैठ बढ़ी है वहॉ भारत ने भी ढॉचागत निर्माण कार्य शुरू कर दिया है। वह भारत के इरादे भी भॉप गया है। चीन हमेशा इस प्रयास में रहता है कि सीमा विवाद का हल उसके पक्ष में हो जाये इस हेतु चीन के शीर्ष नेतृत्व की ओर से बयान आते हैं किन्तु इन बयानों में ईमानदारी का स्पष्ट अभाव दिखाई देता है।

भारत चीन के बीच 4056 किलोमीटर की वास्तविक नियंत्रण रेखा है। चीन प्रारंभ से ही मेकमोहन रेखा को नकारता रहा है। भारत चीन युद्ध के बाद से अब तक सीमा विवाद का निपटारा नहीं हो पाया। भारत सीमा संबंधी नक्शे सौंप चुका है लेकिन चीन ने आज तक ऐसा नहीं किया विगत दो दशकों में सीमा विवाद पर दोनों देशों के मध्य 17 दौरों की बातचीत हुई है लेकिन वह बेनतीजा रही। विगत 65 वर्षो में चीन 37 बार घुसपैठ कर चुका है। लद्दाख से सड़क के रास्ते से घुसपैठ करने वाला चीन अब पैंगोंग झील के जरीये भारतीय जलक्षेत्र में घुसने की कोशिश कर रहा है। चीन प्रारंभ से ही अपनी

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति शास्त्र) शासकीय गृहविज्ञान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.) भारत

विस्तारवादी नीति का प्रवर्तक रहा है। हाल ही में चीन ने अरुणाचल प्रदेश को अपने कब्जे में दिखाया था। 90 हजार वर्ग किलोमीटर पर अरुणाचल सीमा तथा 38 हजार वर्ग किलोमीटर क्षेत्र पर कश्मीर सीमा में चीन ने अपना कब्जा कर रखा है। पाक अधिकृत कश्मीर के करीब 52 सौ वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में चीनी कब्जा है तो चीन ने समुद्री सीमा पर भी तनाव पैदा कर रखा है। हिन्दमहासागर में 80 प्रतिशत तेल टेंकर चीन के हैं, 65 प्रतिशत भारत के व 60 प्रतिशत जापान के सक्रिय है। सीमावर्ती देश म्यांमार और बांग्लादेश चीनी प्रभाव के कारण संवेदनशील बने हुए हैं। मणिपुर में भी तनाव की स्थिति है। अरुणाचल प्रदेश और मणिपुर के बाद अब नागालैंड भी चीनी निशाने पर है। चीन ने खुनजां बाजार क्षेत्र को अपना केन्द्र बनाया है तथा चीनी सेना के हेलीकॉप्टरों ने जून 2009 में चुमार क्षेत्र में वास्तविक नियंत्रण रेखा को लांघ कर दूषित खाद्य सामग्री भारतीय सीमा में गिराई है। भारतीय सेना का मानना है कि एल ओ सी के पार 200 आतंकवादी भारतीय सीमा में घुसपैठ की फिराक में है।

सीमा विवाद हल करने की दिशा में किये गये उपाय – भारत यात्रा पर आये चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग ने भारत को आश्वासन दिया है कि चीनी सेना भारतीय सीमा से वापस चली जाएगी। इस आश्वासन का असर भी हुआ और वह यह कि चीनी सेना के 35 जवान वापस चले गये लेकिन यह कोई प्रथम प्रयास नहीं था इसके पूर्व भी कई प्रयास हो चुके हैं लेकिन विवाद का कोई हल नहीं निकला है। सीमा विवाद हल करने हेतु अब तक कई संयुक्त बैठकें हो चुकी है। कई बार दोनों देश सीमा विवाद हल करने हेतु आपसी रजामंदी पर सहमत हुए लेकिन ठोस परिणाम नहीं निकला। अब तय किया गया है कि सैन्य अफसरों की बैठकें हर माह होगी, सैन्य मुख्यालयों के बीच हॉटलाईन शुरू की जाएगी तथा सीमा पर अब तक बनी सहमति के आधार पर एक फ्रेमवर्क तैयार होगा। 1954 में नेहरू ने चीनी यात्रा कर संबंधों की शुरूआत की। 1988 में राजीव गांधी की चीन यात्रा पर दोनों देशों ने सीमा विवाद सुलझाने का दावा किया गया। 1993 में नरसिंह राव की चीनी यात्रा के दौरान सीमा पर शांति बनाए रखने का समझौता हुआ। 2003 में अटलबिहारी बाजपेई और 2008 में मनमोहन सिंह की यात्रा भी सकारात्मक रहीं। दूसरी ओर 1996 में चीनी राष्ट्रपति च्यांग जमिन ने भारत यात्रा के दौरान पुराने विवाद समाप्त किये जाने पर जोर दिया। 2006 में हूं चिंताओ ने भारत यात्रा के दौरान आपसी सहयोग में तेजी लोने का आश्वासन दिया।

भारत व चीन के मध्य विवादास्पद मुद्दे – भारत व चीन के मध्य पिछले पॉच दशकों से चार प्रमुख विवादास्पद मुद्दे रहे है पहला, सीमा विवाद – सीमा निर्धारित करने वाली मेकमोहन रेखा को चीन नहीं मानता और भारतीय सीमा में घुसपैठ करता है। वही अरुणाचल प्रदेश को अपनी सीमा में दिखाता है। दूसरा, भू भाग पर कब्जा – चीन ने पॉच दशक से पूर्वी जम्मू कश्मीर में अक्साईचिन पर कब्जा किया हुआ है जिसका क्षेत्रफल 38 हजार वर्ग किलोमीटर है। पाकिस्तान भी जम्मू कश्मीर में कब्जाई भूमि में से 5180 वर्ग किलोमीटर का क्षेत्र चीन को 1963 में सौंप चुका है। तीसरा, घेराबंदी – चीन सरकार श्रीलंका, म्यांमार, पाकिस्तान, बांग्लादेश और ईरान में बंदरगाह बना रहा है। इसे भारत की घेराबंदी माना जा रहा है। नेपाल में भी चीन ने दखल बढ़ा ली है। अब तो वह तिब्बत में नेपाल सीमा तक और भूटान तक रेल लाईन बिछाने जा रहा है तथा चौथा, पाक की मदद – चीन लम्बे समय से पाकिस्तान का हर क्षेत्र में सहयोग कर रहा है विशेष तौर पर हथियारों की आपूर्ति और परमाणु क्षमता वृद्धि में। पाक अधिकृत कश्मीर में चीन की ओर से रेललिंक लाइन बिछाई जा रही है हाल ही में भारत ने चीन के समक्ष यह मुद्दा उठाया है।

प्रधानमंत्री मोदी की यात्रा के दौरान हुए समझौते – दोनों देशों के मध्य अग्रलिखित करार किये गये – व्यापारिक संतुलन खत्म करने हेतु टास्कफोर्स के गठन का निर्णय, दोनों देशों के सैन्य अफसरों की हर माह बैठकें, सैन्य मुख्यालयों के मध्य हॉटलाईन, सीमा विवाद पर अभी तक बनी सहमति हेतु फ्रेमवर्क का निर्माण। 10 अरब डालर के 24 समझौते हुए। इनमें विदेश नीति और कूटनीति के क्षेत्र में आठ, आर्थिक क्षेत्र में पॉच, विज्ञान के क्षेत्र में चार, शैक्षणिक क्षेत्र में तीन और रोजगार के क्षेत्र में दो समझौते, तकनीकी में एक, व पर्यटन के क्षेत्र में एक समझौता सम्मिलित है। चीन भारत के पॉच शहरों को स्मार्ट सिटी के रूप में विकसित करेगा तथा नाथुला से मानसरोवर का नया रास्ता खोला जायेगा।

भारत चीन संबंधों में सुधार की संभावनाऍं – पिछले पॉच दशकों से चल रहे प्रयासों से भारत चीन संबंधों में सुधार की प्रबल संभावनाऍं है।विभिन्न उपायों के द्वारा संबंध सुधारे जा रहे हैं।

1. **पंचशील सिद्धांत का अनुसरण –** पॉच सिद्धांतों की शुरूआत ही एक दूसरे की संप्रभुता के लिए सम्मान के सिद्धांत से हुई है। दोनों देशों के लिए यह जरूरी है कि वे अपनी द्विपक्षीय समस्याऍं और विवाद रणनीतिक दृष्टिकोण से सुलझाए और दोनों देशों के रिश्तों के सतत् विकास में बाधा बनने से रोके। पंचशील के आधार पर एक दूसरे के हितों का ध्यान रखकर आगे बढ़ना होगा।
2. **भारत को कूटनीतिक दबाब बनाना होगा –** चीन की शुरू से ही विस्तारवादी नीति रही है घुसपैठ की स्थिति से निपटने के लिए भारत को रणनीति बनानी होगी, भारत को मजबूती से अपने हितों को उठाना होगा। भारत को वैश्विक स्तर पर चीन को घेरना होगा।
3. **चीन के दुश्मनों को दोस्त बनाए –** चाणक्य नीति पर चलकर भारत को उन राष्ट्रों के साथ मित्रता बढ़ानी होगी जो चीन के साथ मतभेद के रिश्ते रखते हैं। उदाहरणार्थ वियतनाम, जापान, बांग्लादेश, भूटान आदि ऐसे राष्ट्र हैं।
4. **प्रभावी विदेश नीति की आवश्यकता –** इंदिरा गांधी के पश्चात अटलबिहारी बाजपेई के शासनकाल में प्रभावी विदेश नीति दिखाई दी किन्तु विगत वर्षो में प्रभावी विदेश नीति का न होना भारत चीन के संबंध आगे बढ़ाने में एक नई बाधा रही। मोदी के प्रधानमंत्री बनने के पश्चात इस दिशा में काफी संभावनाऍं दिखाई दे रही हैं। इसे सबंध सुधारने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम कहा जा सकता है।
5. **चुनौती का जोरदार ढंग से सामना –** भारत को संबंधों में सावधानी बरतने व अपना पक्ष जोरदार ढंग से रखने की आवश्यकता है क्योंकि चीन एक चतुर राष्ट्र है व उसकी कूटनीति को समझ कर ही चलना होगा।
6. **शांतिपूर्ण सहयोग की आवश्यकता –** चीन को आर्थिक विकास प्रक्रिया बनाए रखने के लिए राष्ट्रों के शांतिपूर्ण सहयोग की आवश्यकता है। वह भारत से सहयोग अपेक्षित रखता है।
7. **भारत के अन्य राष्ट्रों के साथ संबंधों का प्रभाव –** जब तक भारत अमेरिका या भारत जापान संबंध थे तब तक चीन ने परवाह नहीं की लेकिन भारत अमेरिका जापान त्रिकोण ने चीन को अत्यधिक बैचेन कर दिया है। उसे अब सहयोग की आवश्यकता है।
8. **भारतीय बाजार की आवश्यकता –** चीन जैसे विकसित राष्ट्र को अपने उत्पादों के लिए भारत से ज्यादा अच्छा बाजार नहीं मिल सकता चीन इसे बखूबी जानता है। भारत को इसका लाभ चीन की मंशाओं को नियंत्रित करने में उठाना चाहिए।

निष्कर्ष – भारत और चीन के रिश्तों का अंतरराष्ट्रीय रणनीतिक बिसात पर विशेष स्थान है। जहॉ नेहरूवादी आदर्शवाद ने नई विश्व व्यवस्था लिखने में दोनों के बीच सक्षम मित्रता की कल्पना नहीं की न ही 20वीं सदी के उत्तरार्ध में चीनी यथार्थवाद ने भारत के संभावित उदय को खतरे के रूप में देखा है। कालंतर में हुए संघर्ष इसी का परिणाम है लेकिन अब युग भारत व चीन के मध्य सहयोग का है क्योंकि समुद्री रेशम मार्ग और नए रेशम मार्ग जैसे केन्द्रों को भू–राजनीतिक दष्टिकोण से देखे जाने के कारण ये रिश्ते संदेह की बलि बनेंगे। भारत के लिए यह ठीक होगा कि वास्तविक नियंत्रण रेखा पर चीनी करतूतों से वह घबराए नहीं। चीनी क्षेत्र में उसे अपने फायदे के लिए जहॉ भी हो सके चीन के साथ सहयोग के रास्ते तलाशते रहने चाहिए। पसंद के राष्ट्रों के साथ भागीदारी के जरिये अपनी रणनीतिक स्वतंत्रता कायम रखनी चाहिए और अधिक कूटनीतिक पहल के जरिए दक्षिण एशिया के देशों को चीन के पाले में जाने से रोकना चाहिए। हिंद महासागर को लेकर चीन के बयानों से ज्यादा चिंतिक नहीं होना चाहिए लेकिन भारत के पास पिछले दस साल से है ईरान स्थित याबाहर बंदरगाह है इसको विकसित कर भारत चीन से निपट सकता है। भारत चीन से सावधान रहने के लिए दक्षिणी एशियाई महासंघ की स्थापना के प्रयास कर सकता है। भारत उसे बेहतर संबंध बनाने के लए मजबूर भी कर सकता है क्योंकि भारत के साथ मैत्री बढ़ाना ही उसके लिए सही विकल्प है। प्रधानमंत्री मोदी ने सीमा विवाद के मुद्दे पर गेंद चीनी पाले में डालते हुए कहा कि रिश्तों को मजबूती के साथ आगे ले जाना है तो चीन को नए नजरिये से सोचना पड़ेगा।

भारत चीन के हित आपस में जुड़े है अब आगे बढ़ना है पीछे हटने का सवाल ही नहीं साथ ही एक जगह खड़े रहना विकल्प नहीं है दोनों देशों के मध्य कुछ विवाद हैं लेकिन इस हेतु पर्याप्त राजनीतिक परिपक्कता चाहिए। दोनों देशों में इस समय परिपक्व राजनीतिक नेतृत्व है एवं दोनों ने संबंधों को नई मजबूती प्रदान की है आशा है भविष्य में दोनों देश संबंधों की नई परिभाषा लिखेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. त्रिपाठी, आर. डी., इंडिया चाइना रिलेशन, फ्यूचर पब्लिकेशन, बिज बुक्स
2. गुरूस्वामी एण्ड सिंग, इंडिया चाइना रिलेशन, दी बार्डर इश्यू एण्ड बियांड, विवा बुक्स, न्यू देलही 2009
3. कल्प नारायण एस,, इंडिया एण्ड चाइना सिस्टम ऑफ्टर 1962, इंस्टीट्यूट ऑफ डिफेंस स्टडीज एण्ड एनॉलिसिस
4. राघव, व्ही, आर., इंडिया चाइना रिलेशन ए मिलिट्री पर्सपेक्टिव, ज्ञान पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली
5. राव निरुपमा, द इंडिया चाइना इश्यू, द हिन्दु मई 14, 2015
6. राव निरुपमा, द इंडिया चाइना वार, 50 इयर्स लेटर द ट्रीव्यूनल।

****

लोकतंत्र में जनविरोध के अधिकार की समीक्षा

डॉ. कल्पना वैश्य *

प्रस्तावना – लोकतंत्रीय व्यवस्था में प्रदर्शन एवं जन आन्दोलन देश के जनमत को प्रकट करने का एक साधन है तथा यह लोकतंत्रीय भावनाओं के प्रसार का भी एक प्रमुख साधन है। भारत में जनआन्दोलन या जनविरोध का श्रीगणेश परतंत्रता के समय दासता की बेड़ियों को तोड़ने के लिए गांधी जी द्वारा किया गया जिसका उद्देश्य था, सत्याग्रह के द्वारा सुषुप्त जनता में चेतना का संचार करना। गांधी जी द्वारा संचालित किए गए 'असहयोग आन्दोलन', 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन', तथा 'भारत छोड़ो आंदोलन' तत्कालीन ब्रिटिश सरकार पर दबाव बनाने के महानतम अस्त्र थे, जिसके प्रबल जनसमर्थन के कारण न केवल तत्कालीन सरकार को झुकना पड़ा बल्कि अंततः भारत को स्वतंत्रता भी प्राप्त हुई, लेकिन गांधी जी द्वारा संचालित सभी आंदोलन के केन्द्र में अहिंसा थी, क्योंकि उनकी मान्यता थी कि केवल शान्ति प्रेम एवं अहिंसा से ही सारी समस्याओं का समाधान हो सकता है।

जन विरोध का अर्थ – जन-विरोध वास्तव में जन आन्दोलन की राजनीति का पर्याय है और जिसको विशेष प्रसिद्धि 17वीं शताब्दी में इंग्लैण्ड के गृहयुद्ध में प्राप्त हुई जब क्रॉमवेल की सेना के प्रत्येक रेजीमेण्ट ने प्रतिनिधि निर्वाचित किये जिन्हें आन्दोलनकर्ता कहा गया। कालान्तर में फ्रांसीसी क्रान्ति एवं इंग्लैण्ड में शान्तिकाल में इस शब्द का खूब प्रयोग हुआ। आधुनिक विश्व के सभी दक्षिण पंथी एवं वामपंथी दल 'आन्दोलन' शब्द का खूब प्रयोग करते हैं, क्योंकि इसे वे दमन मूलक सरकार एवं समाज व्यवस्था के विरूद्ध लोकमत जाग्रत करने का उपयुक्त साधन समझते हैं। इस प्रकार आन्दोलनकर्ता वह व्यक्ति समूह है जो स्त्री-पुरूषों की एक बड़ी संख्या के चिन्तन तथा आचरण को उत्तेजना की दिशा में मोड़े।

रजनी कोठरी ने 'आन्दोलन की राजनीति को प्रत्यक्ष कार्यवाही बताते हुए लिखा है कि प्रत्यक्ष कार्यवाही एक संविधानेत्तर राजनीतिक तकनीक है, जिसका प्रयोग किसी समूह द्वारा किसी राजनीतिक परिवर्तन के उद्देश्य से सरकार के विरूद्ध किया जाता है।'[4]

ऑक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी के अनुसार– 'आन्दोलन किसी विशेष लक्ष्य की ओर बढ़ने या व्यक्तियों द्वारा की जाने वाली निरन्तर क्रियाओं या प्रयासों का क्रम है।'

ब्लूमर ने भी कहा है कि 'सामाजिक आन्दोलनों को जीवन की एक नवीन व्यवस्था स्थापित करने का सामूहिक प्रयत्न कह सकते है।'

इस प्रकार जन विरोध सामूहिक रूप से सत्ता के विरोध की राजनीतिक तकनीक है जो संविधानेत्तर साधनों में विश्वास करती है, जिसका उद्देश्य सरकार की नीति, कार्यों या सरकार में ही परिवर्तन करना होता है।

जनविरोध आन्दोलन के प्रमुख तत्व– लम्बे समय से जन विरोध आन्दोलन अस्तित्व में रहे है तथा आज भी ये आन्दोलन विभिन्न रूपों से विश्व स्तर पर अपना अस्तित्व बनाए हुए हैं। भिन्न-भिन्न विद्वानों के द्वारा इस अवधारणा को परिभाषित भी किया गया है। जिसके आधार पर इसकी प्रकृति स्पष्ट होती है तथा कुछ मौलिक तत्व जैसे- यह सामूहिक प्रयास है, इसका प्रयोग सत्ता के विरूद्ध होता है, इसका आरम्भ किसी न किसी समस्या से होता है, यह किसी न किसी निश्चित विचारधारा से प्रभावित होता है। 'लगभग प्रत्येक जन आन्दोलन किसी न किसी विचारधारा से प्रभावित होता है, क्योंकि विचार धारा सामाजिक आन्दोलन का प्रमुख अंग है।'[5] यह निरंतर गतिशील होते हैं तथा ये क्रियात्मक पक्ष के माध्यम से अपने आपको प्रकट करते है। जैसे-सभा का आयोजन, विरोध दिवस मनाना, पम्पलेट बांटना, पोस्टर लगवाना, बसें और रेलें रोकना, सार्वजनिक स्थानों पर धरना प्रदर्शन, सार्वजनिक सम्पत्ति को नुकसान पहुँचाना आदि।

भारतीय लोकतंत्र एवं जन विरोध आन्दोलन– भारत में जनविरोध का प्रारम्भ वैसे तो ब्रिटिश राज की अलोकतांत्रिक दोषपूर्ण नीतियों के विरूद्ध हुआ लेकिन विधिवत रूप में यदि हम देखे तो पायेंगे कि 19वीं शताब्दी के मध्य में 1869 में नील विद्रोह प्रारंभ हुआ जिसका मुख्य कारण 1859 ई. के रेंट अधिनियम के विरूद्ध उपजा असंतोष था। इसी प्रकार से महाराष्ट्र में 1875 में साहूकारों के विरूद्ध कुनबी कृषकों का असन्तोष भी दक्षिण उपद्रव के रूप में विरोध के रूप में सामने आया। इसके बाद गुजरात,चम्पारन,कर्नाटक, पंजाब, दक्षिण भारत एवं उत्तर प्रदेश के अनेकों कृषक जनआन्दोलन कृषक असंतोष के परिणाम स्वरूप हुये।

पराधीन भारत में प्रमुख रूप से गांधी जी के द्वारा सोई हुई जनता में चेतना जाग्रत करते हुए ब्रिटिश सरकार पर दबाव बनाने हेतु विभिन्न आन्दोलन किये गये जिनके प्रबल जनसमर्थन के कारण ब्रिटिश सरकार को अंततः झुकना पड़ा तथा भारत को स्वतंत्रता प्राप्त हुई, लेकिन गांधी जी द्वारा चलाए गए इन सभी आन्दोलनों की विशेषता थी शांति, प्रेम एवं अहिंसा को शस्त्र के रूप में प्रयोग करना।

स्वतंत्रता के बाद भाषायी आधार पर पुनगर्ठन के बाद बाम्बे गुजरात के, मराठी दंगें, आंध्र प्रदेश निर्माण हेतु **रामलु** का उपवास एवं उनकी मृत्यु मास्टर **तारासिंह** की पंजाबी सूबे की मांग के कारण उग्र आन्दोलन किया गया। सन् 1966 में सम्पूर्ण देश में व्यापक अशांति के माहौल में हिंसक आन्दोलनकारी घटनाओं की बाढ़ सी आ गयी।

सन् 1971 में विरोधी दलों ने महसूस किया कि उनमें देशव्यापी जन-आधार का अभाव है इसलिए उनके द्वारा गैर संवैधानिक तरीके से सत्ता प्राप्ति पर ध्यान लगाना शुरू किया, उदाहरण स्वरूप 1973 से भारतीय जनसंघ तथा संगठन कांग्रेस ने गुजरात में आन्दोलनात्मक मार्ग का सहारा लेते हुए 'बंद' का आयोजन करते हुए जुलूस निकाला तथा उसमें छात्र समुदाय को भी शामिल किया। इस आन्दोलन में पर्याप्त हिंसा का सहारा लिया गया। तत्कालीन सरकार पर दबाव हेतु छात्रों द्वारा गठित 'नवनिर्माण समिति' द्वारा लूट आगजनी, बसों बिल्डिंगों में पथराव, बैंक पर आक्रमण, तथा

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति शास्त्र) शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

गुण्डागर्दी का सहारा लेते हुए योजनाबद्ध तरीके से सत्तारूढ़ दल के सदस्यों के घरों पर भी प्रदर्शन किये गये। गुजरात आन्दोलन के कारण 95 निर्दोष लोग मारे गए तथा 933 लोग घायल हुए। लूट एवं आगजनी के कारण 2.5 करोड़ रू. से अधिक की सरकारी तथा निजी सम्पत्ति नष्ट हुई।

18 मार्च 1974 को प्रमुख रूप में छात्रों द्वारा मंहगाई एवं बेरोजगारी की समस्या के कारण पटना में 4 राजनीतिक दलों एवं असमाजिक तत्वों के सहयोग से प्रदर्शन की महायोजना बनाई जो हिंसा में परिवर्तित हुई तथा इसमें लगभग 27 लोगों की मृत्यु हो गयी, सरकार पर दबाव बनाने हेतु जय प्रकाश नारायण के नेतृत्व में अक्टूबर 1974 को बिहार बंद का आह्वान किया गया जिसमें 544 हिंसात्मक घटनाओं के कारण पुलिस को 54 बार गोली चलानी पड़ी लगभग 500 लोग घायल हुए और 70 मारे गए।

इसी प्रकार जार्ज फर्नाण्डीज के नेतृत्व में सन् 1974 में ही व्यापक रेल हड़ताल की योजना बनाई गई लेकिन तत्कालिक सरकारी दृढ़ उपायों से देश को विनाश से बचा लिया गया। जून 1975 में आन्दोलन एवं हिंसा की राजनीति अपने चरम पर थी।

सन् 1979 में अखिल असम विद्यार्थी संघ द्वारा 'गज सत्याग्रह' का आयोजन किया गया जिसका मुख्य उद्देश्य लगभग 70 लाख बंगलादेश एवं नेपाल से आकर असम में बसे लोगों को चिन्हित कर बाहर करना था, जो लगभग पांच वर्षो तक चलता रहा इसमें भी अनेक निर्दोष लोग घायल हुए तथा अनेकों मृत्यु को प्राप्त हुए।

1985 से लेकर 1992 तक पंजाब में अकाली दल नेतृत्व में धार्मिक एवं राजनीतिक मांगों को लेकर किए गए आन्दोलनों में विभिन्न हिंसात्मक गतिविधियों के कारण लगभग 10 हजार लोग आतंकवाद का शिकार हुये। 'भारत के कुछ हिस्सों विशेषकर आन्ध्रप्रदेश, बिहार, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़ और उड़ीसा में वामपंथी उग्रवाद (नक्सलवाद) एक विध्वंसक ताकत बनी हुई है। आन्ध्रप्रदेश और बिहार वामपंथी उग्रवादी गतिविधियों के मुख्य कार्यक्षेत्र हैं। जहां अधिकांश वारदात और हत्यायें हो रही हैं। वामपंथी उग्रवादी हिंसा में 1996 से पहली बार वृद्धि हुई है। वर्ष 2001 में 1209 घटनाओं में 564 मौतों की सूचना है, जबकी वर्ष 2005 में 1594 घटनाओं में (516 मौतों) की सूचना थी।'[9]

भारत में आए दिन भ्रष्टाचार को लेकर पेट्रोल एवं गैस की कीमतों को लेकर विरोध होता रहता है। यौनिक अत्याचार तथा दुष्कृत्यों के विरोध में राष्ट्रीय स्तर पर रैली शांतिपूर्ण प्रदर्शन कैंडल मार्च, लोकपाल बिल को लेकर अन्ना हजारे का आन्दोलन, वर्तमान में हार्दिक पटेल के नेतृत्व में गुजरात का पाटीदार या पटेलो को आरक्षण से संबंधी आन्दोलन की एक लम्बी श्रृंखला है।

मुख्य रूप से भारतीय लोकतंत्र में स्वतंत्रता के पूर्व एवं पश्चात किए गए आन्दोलन हैं- गांधी जी के नेतृत्व मे नील, असहयोग, सविनय अवज्ञा, भारत छोड़ो, सरदार पटेल के नेतृत्व मे वारडोली, जेपी का संपूर्ण क्रांति आन्दोलन, वी.पी. सिंह का भ्रष्टाचार मुक्त आन्दोलन, विनोवा भावे का भूटान आन्दोलन, अन्ना हजारे का लोकपाल विल के समर्थन में किया गया आन्दोलन, बाबा रामदेव का कालाधन वापसी एवं स्वदेशी अपनाओ आन्दोलन, अरविन्द केजरीवाल किरण वेदी एवं कुमार विश्वास का जन आन्दोलन तथा वर्तमान में हार्दिक पटेल की अगुवाई में पाटीदार समाज के आरक्षण हेतु किया जा रहा जन आन्दोलन आदि। 'अभी हाल ही में उत्तर प्रदेश सरकार नियुक्ति की नीति का विरोध करते हुए तथा स्थाई नौकरी की मांग को लेकर लखनऊ विधानसभा के पास जमा होकर हजारों लोगों ने प्रदर्शन किया'

जनविरोध के अधिकार की समीक्षा- जन आन्दोलन करते हुए मौजूदा व्यवस्था में परिवर्तन की मांग लोकतंत्र का एक तरीका है तथा यह उपयुक्त भी है लेकिन मुद्दा यह है कि जब यह तरीका हिंसक हो जाए, जो अक्सर होने की सम्भावना होती है, या जन-धन की हानि का कारण बने या देश और लोगों की प्रगति में बाधक बने, लोगों की दैनिक दिनचर्या प्रभावित हो, तब भी क्या यह तरीका उचित है। क्या जनता के पास असंतोष दूर करने के लिए कोई और प्रभावी उपाय नहीं है।

लोकतंत्र समीक्षा के जुलाई सितम्बर अंक 1983 के पृष्ठ 106 में भी कुछ इसी प्रकार के विचार अभिव्यक्त किए गए है कि 'आन्दोलन की राजनीति विष-कन्या सदृश है जिसके संग सहवास करने से लोकतंत्रीय शासन अपने विनाश को आमंत्रण देता है।'14 लगातार जन आन्दोलन से जिसमें हिंसा, घृणा, बन्द, हड़ताल, घेराव पथराव, आदि शामिल होते हैं उनसे राष्ट्र का वातावरण विषाक्त होता है तथा राष्ट्र की प्रगति एवं अर्थव्यवस्था पर भी नकारात्मक असर पड़ता है।

भारतीय लोकतंत्र में तो आये दिन विरोधी दलों के द्वारा अर्थव्यवस्था एवं प्रशासनिक कार्यो में बाधक बनते हुए किसानों एवं जनता को भड़काने का कार्य किया जाता है। जैसे रेल्वे हड़ताल के दौरान देश के विभिन्न भागों में हुए छुट-पुट आन्दोलनों में लगभग 124 करोड़ रू. का तथा राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को इससे दस गुना नुकसान हुआ। वस्तुत: हमारे देश में जन विरोध का उद्देश्य सरकार को विफल करते हुए राष्ट्रीय कार्यक्रमों को छिन्न-भिन्न करते हुए सत्ता प्राप्त करना होता है। प्रश्न यह उठता है कि सम्पूर्ण घटना चक्र को देखते हुए क्या जन विरोध के इस अधिकार का प्रयोग करते हुए संविधानेत्तर कार्यवाहियों से लोकतंत्र पद्धति से चुनी हुई व्यवस्था को नष्ट करना उचित है। क्योंकि लोकतंत्र ऐसी जीवन पद्धति है जिसमें निर्णय खुले तौर पर लिए जाने चाहिए, जनता को शांतिपूर्ण ढंग से सरकारों को परिवर्तित करने एवं चुनने का अधिकार होना चाहिए तथा सभी राजनीतिक कार्यक्रमों को संवैधानिक प्रावधानों के अन्तर्गत ही अभिव्यक्त करना चाहिए, लेकिन ऐसा करने के लिए बार-बार तथा कथिक अंतिम हथियार के रूप में जन विरोध या 'सत्याग्रह' का सहारा लेना लोकतंत्र नहीं है और न ही वैधानिक ढंग चुनी हुई सरकार के सदस्यों को डरा धमकाकर या दबाव बनाकर इस्तीफा दिलवाना लोकतंत्र है। वस्तुत: लोकतंत्र में अभिव्यक्ति और बहस की स्वतंत्रता होती है, लेकिन क्या लोकतंत्र के नाम पर सुनिश्चित एवं योजनाबद्ध आन्दोलन उचित है। वास्तव में लोकतंत्र में सरकार का विरोध हो सकता है लेकिन राष्ट्रीय हितों की बलि देकर नहीं। लोकतांत्रिक स्वतंत्रता का अर्थ स्वच्छन्दता कदापि नहीं है और न ही लोकतंत्र की अवमानना है। भारतीय लोकतंत्र में जन विरोध आन्दोलनकारियों के द्वारा इस तथ्य को भली-भांति नहीं समझा है, इसलिए लोकतंत्र के नाम पर अक्सर हिंसक प्रदर्शनों का आयोजन हुआ, देश की अर्थव्यवस्था को पंगु बनाया गया, राष्ट्र का ध्यान सामाजिक एवं आर्थिक कार्यो से हटाया गया, वैधानिक ढंग से चुने हुए जन प्रतिनिधियों को अपदस्थ करने के लिए अराजकता, अव्यस्था, अस्थिरता एवं अशांति का वातावरण पैदा करने की कोशिश की गयी। लाखों करोड़ों निरपराध आम-जन घायल हुए या मृत्यु को प्राप्त हुए। राष्ट्रीय सम्पत्ति तथा व्यक्तिगत सम्पत्ति का भारी नुकसान हुआ।

वास्तव में देश में अनुशासन व्यवस्था एवं स्थिरता लाने के लिए आम जन एवं सरकार दोनों को ही समझना होगा एवं अनावश्यक होने वाले आन्दोलनों की राजनीति पर अंकुश लगाना ही होगा। इस पर अंकुश लगाने हेतु निम्नलिखित सुझावों पर अमल करना आवश्क है-

- जनता को शिक्षित एवं जागरूक करना होगा और इसके लिए सार्वजनिक प्रश्नों एवं मुद्दों के सम्बन्ध में रेडियों एवं दूरदर्शन के द्वारा प्रभावशाली भूमिका का निर्वहन किया जा सकता है।
- देश में ऐसे राजनीतिक दल जो सत्ता प्राप्ति के लिए असंवैधानिक साधनों का सहारा लेते हैं उनका समर्थन किसी भी स्थिति में न किया जाये।
- राजनीतिक दल अपने उत्तरदायित्वों का निर्वहन करते हुए केवल वैधानिक उपायों के माध्यम से ही सत्ता प्राप्त करने का प्रयास करें।
- सत्तारूढ़ दल या शासन को ऐसे निर्णय नहीं लेना चाहिए जिससे सार्वजनिक असंतोष पैदा हो और यदि ऐसा कठोर निर्णय शासन के द्वारा ले ही लिया गया हो तो उस सम्बन्ध में जन आन्दोलन से पूर्व ही जनता की उचित मांगों को स्वीकार करना चाहिए।
- शासन को न केवल जन मांगों को ध्यान में रखना होगा बल्कि विपक्ष की उपेक्षा भी नहीं करनी चाहिए, हमेशा उनके रचनात्मक सुझावों को गम्भीरता से लेते हुए मानना चाहिए। जिससे विरोधी दलों को महसूस हो कि राष्ट्र निर्माण में उनकी भी महत्वपूर्ण भूमिका है।
- देश की आर्थिक स्थिति में सुधार करते हुए गरीबी, बेरोजगारी, मंहगाई आदि दूर करने के प्रयास करने चाहिए, जिससे निराशा, एवं असंतोष का वातावरण समाप्त किया जा सके।
- इसी प्रकार मुद्रा स्फीति को रोकने एवं मूल्य वृद्धि को रोकने के प्रयास होते रहने चाहिए साथ ही खाद्यान्न की आपूर्ति एवं उसके उचित वितरण की व्यवस्था करते हुए दैनिक आवश्यकताओं की वस्तुओं के बढ़ते हुए मूल्यों को रोकने के प्रयास करने चाहिए।
- राष्ट्रीय विकास एवं उत्थान हेतु आन्दोलन की राजनीति से बचना चाहिए क्योंकि लोकतांत्रिक सरकार के विरूद्ध आन्दोलन एवं हिंसा का सहारा राष्ट्र के प्रति आघात ही है।

निष्कर्ष– अन्ततः निष्कर्ष स्वरूप मैं यही कहना चाहूंगी कि जन विरोध आन्दोलन में यदि जन–धन की अनावश्यक हानि होती है, जनता के दैनिक कार्यकलाप बाधित होते हैं तो यह बिल्कुल भी उचित नहीं हैं क्योंकि 'यह अधिकार लोकतंत्र को भ्रष्ट एवं विकृत करता है क्योंकि यह मनुष्य की विवेकशीलता के स्थान पर हठधर्मिता पर विश्वास करता है। इस राजनीति का आधार संकीर्ण, अतार्किक तथा कलहपूर्ण होता है। इसमें हिंसा एवं अन्यायपूर्ण कार्यों की पूरी–पूरी सम्भावनाएं रहती हैं। जन विरोध का प्रयोग करते हुए विरोध करने वाला पक्ष अपने मत एवं दृष्टिकोण को पूर्ण आदर्श मानकर दूसरे पक्ष को येन–केन प्रकारेण मानने को बाध्य करता है।'[15]

इसी प्रकार विश्व में घटित तमाम जन विरोध आन्दोलनों एवं उसके परिणामों के आधार पर यही कहना उचित है कि लोकतंत्र में विरोध का अधिकार तो मिलना चाहिये लेकिन सीमाओं के साथ, असीमित रूप में इसका प्रयोग राष्ट्रहित में तो बिल्कुल भी नहीं है इसलिए हाल ही में उच्चतम न्यायालय के एक निर्णय के अनुसार भी राजनीतिक दलों या श्रमिक संगठनों के आह्वान पर आयोजित बन्द को असंवैधानिक व गैर कानूनी ठहराया गया है, क्योंकि बन्द के दौरान ऐसी घटनायें हो जाती हैं जो नागरिकों के बुनियादी अधिकारों को आघात पहुंचाती हैं तथा आम जनता के सामान्य कार्य कलाप में बाधक होती हैं एवं उसका जीवन अस्त–व्यस्त हो जाता है।

इस प्रकार सामान्य तौर पर इस प्रश्न का कि 'क्या व्यक्ति को लोकतंत्र में शासन का विरोध करने का अधिकार है या नहीं, या है तो किस सीमा तक', के उत्तर में हम कह सकते हैं कि शासन के आदेशों का पालन करना व्यक्ति का कानूनी कर्तव्य है, इसलिये उसे उसके विरोध का अधिकार नहीं है लेकिन उसका नैतिक अधिकार है कि यदि शासन सामान्य कल्याण या जन इच्छा का प्रतिनिधित्व नहीं करता है तब नागरिकों को ऐसी सरकार को बदलने के लिए जन विरोध का अधिकार होता है, फिर भी यह उसके लिए अंतिम औषधि की तरह हो न कि प्रतिदिन के भोजन की तरह। इस प्रकार जनविरोध का अधिकार लोकतंत्रीय व्यवस्था में वास्तविक रूप में जनमत को प्रकट करने तथा लोकतंत्रीय भावनाओं के प्रसार का सच्चा साधन बन पायेगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. जॉन डिकिन्सन : उद्धृत, बी.ओ.की.,पॉलिटिक्स, 'पार्टीज एण्ड प्रेशर' गुप्त, पंचम संस्करण, पृ.7
2. आमण्ड तथा पावेल : कम्परेटिव पॉलिटिक्स,पृ.77
3. के.सी. महेन्द्र : 'पब्लिक प्रोटेस्ट्स एण्ड सिविल लिवर्टीज इन इण्डिया', यपॉलिटिकल साइंस रिव्यू,पृ.195–196
4. रजनी कोठारी : पॉलिटिक्स इन इण्डिया, 1970,पृ. 220
5. डॉ. एस.सी. सिंघल : भारतीय शासन एवं राजनीति, लक्ष्मी प्रकाशन, आगरा संशोधित संस्करण, 2008,पृ.364
6. श्रीराम महेश्वरी : एनोमिक सिचुएशन एण्ड पॉलिकिल इन इण्डिया, पॉलिटिकल साइंस रिव्यू, दिसम्बर, जनवरी, 1974, पृ. 190
7. डॉ. पुखराज जैन एवं डॉ. बी.एल.फड़िया : भारतीय शासन एवं राजनीति (राज्यों की राजनीति सहित), साहित्य भवन पब्लि,आगरा, 2007, पृ. 816
8. रणजीत सिंह दरडा : 'भारतीय लोकतंत्र एवं आन्दोलन की राजनीति', लोकतंत्र समीक्षा, 1973, पृ. 108
9. वार्षिक रिर्पोट : 2005–06, भारत सरकार गृह मंत्रालय,पृ. 23
10. दैनिक भास्कर : सागर संस्करण, रविवार, 18 नवम्बर, 2012, पृ. 9
11. दैनिक भास्कर : सागर संस्करण, शुक्रवार, 30 नवम्बर 2012, पृ. 6
12. दैनिक भास्कर : सागर संस्करण, सोमवार 31 अगस्त 2015, पृ. 7
13. दैनिक भास्कर : सागर संस्करण, गुरूवार 3 सितम्बर 2015, पृ. 8
14. लोकतंत्र समीक्षा, जुलाई–सितम्बर
15. डॉ. आर.एन.त्रिवेदी, डॉ. एम.पी. राय : भारतीय शासन एवं राजनीति, कॉलेज बुक डिपो जयपुर, 2004 पृ. 529

****

भारत में निर्वाचन अपराध एवं भ्रष्ट आचरण

भावना ठाकुर *

प्रस्तावना – भारतीय संसदीय प्रजातंत्र में निर्वाचन का महत्वपूर्ण स्थान है। वह निर्वाचन ही है जिसके माध्यम से जन प्रतिनिधि निर्वाचित होकर संसद एवं विधानमण्डलों का गठन करते हैं और सरकार भी बनाते हैं। सरकार की पारदर्शिता जनप्रतिनिधियों की स्वच्छ छवि, ईमानदारी एवं निष्ठा पर निर्भर करती है। यही कारण है कि निर्वाचन के आरम्भिक स्तर पर ही जन प्रतिनिधियों अर्थात् अभ्यर्थियों की सत्य निष्ठा की परख कर ली जाती है। 'नाम निर्देशन (Nomination) के समय ही यह देख लिया जाता है कि–

1. अभ्यर्थी निर्वाचन के लिये योग्य है या नहीं,
2. उसका आचरण कैसा है
3. वह किसी अपराध में तो लिप्त नहीं है, आदि।

साथ ही निर्वाचन के संचालन की पारदर्शिता का भी पूरा ध्यान रखा जाता है। निर्वाचन मशीनरी का सदा यह प्रयास रहता है कि निर्वाचन 'स्वतंत्र एवं निष्पक्ष' हो। मशीनरी पूर्ण निष्ठा एवं कर्त्तव्यपरायणता से कार्य करें। निर्वाचन में कहीं भी अनियमितता एवं अवैधानिकता न हो।

यह सब कुछ होते हुए भी कई बार निर्वाचन में अनियमिततायें एवं अवैधानिकतायें हो जाती है। अभ्यर्थी और उनके अभिकर्त्ता 'भ्रष्ट आचारण कर बैठते है। 'अपराध भी कारित हो जाते हैं। यह सब चुनावी विवाद पेरा कर देते हैं जिनका निराकरण निर्वाचन आयोग एवं न्यायालयों द्धारा किया जाता है। इन सबकी अपनी प्रक्रिया है।

लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम 1951 की धारा 123 से 136 तक में भ्रष्ट आचरण, अपराधों एवं उनके लिए शास्तियों के बारे में प्रावधान किया गया है।

भ्रष्ट आचरण क्या है – धारा 123 के अन्तर्गत निम्नांकित कृत्यों को भ्रष्ट आचारण में सम्मिलित किया गया है–

1. किसी व्यक्ति को निर्वाचन में खड़ा होने या न होने, किसी व्यक्ति के पक्ष में मतदान करने या न करने, अपनी अभ्यर्थिता (Candidature) वापस लेने या न लेने आदि के लिये 'रिश्वत' का लेन–देन करना।
2. किसी व्यक्ति के निर्वाचन अधिकारी के स्वतंत्र प्रयोग में हस्तक्षेप करना या उस पर 'असम्यक् असर' (Undue influence) का प्रयोग करना, जैसे–
   (क) क्षति कातिर करने की धमकी देना,
   (ख) सामाजिक बहिष्कार करने की धमकी देना,
   (ग) दैवी अप्रसाद (divine displeasure) या आध्यात्मिक परिनिन्दा (spiritual) का भय बताना आदि।
3. किसी व्यक्ति ये 'धर्म, मूलवंश, जाति, समुदाय या भाषा' के आधार पर मत देने या न देने की याचना करना या किसी अभ्यर्थी के निर्वाचन पर प्रतिकूल प्रभाव डालने के लिये धार्मिक प्रतीकों, राष्ट्रीय प्रतीक या राष्ट्रध्वज या राष्ट्रीय संप्रतीक का उपयोग करना या दुहाई देना।
4. किसी अभ्यर्थी के निर्वाचन पर प्रतिकूल प्रभाव डालने के लिये नागरिकों के विभिन्न वर्गों के बीच धर्म, मूलवंश, जाति, समुदाय या भाषा के आधार पर 'शत्रुता या घृणा की भावनाएं' पैदा करना।
5. किसी अभ्यर्थी के निर्वाचन पर प्रतिकूल प्रभाव डालने के लिये 'सती प्रथा' का प्रचार–प्रसार करना या उसे गौरवान्वित करना।
6. किसी अभ्यर्थी के 'वैयक्तिक शील या आचरण' पर मिथ्या आरोप लगाना।
7. मतदाताओं को मतदान के लिये लाने ले जाने हेतु किसी 'यान या जलयान' को भाड़े पर लेना या उपाप्त करना और उसका उपयोग करना।
8. निर्धारित सीमा से अधिक 'व्यय' करना।
9. सरकारी सेवकों की अवैध रूप से 'सेवाएं' प्राप्त करना अर्थात सरकारी मशीनरी का दुरूपयोग करना।
10. किसी 'बूथ पर बलात् कब्जा करना' आदि।

सन्देह से परे साबित किया जाना– भ्रष्ट आचरण का आरोप अभ्यर्थी के लिये अत्यन्त घातक होता है। इससे न केवल निर्वाचन रद्द हो जाता है अपितु अभ्यर्थी आगे के लिये भी निर्वाचन में अभ्यर्थी होने से निवारित हो जाता है। अत: यह आवश्यक है कि भ्रष्ट आचरण के आरोपों को (1) ठोस प्रमाणों से, तथा (2) संदेह से परे, (Reasonable dout) साबित किया जाये। (एस.बलदेव सिंह मान बनाम एस. गुरूचरण सिंह, ए.आई.आर. 1996 एस.सी. 711096) यह भी देखा जाना अपेक्षित है कि क्या भ्रष्ट आचरण अभ्यर्थी या उसके अभिकर्त्ता की सम्मति से हुआ है। (मनोहर जोशी बनाम नितिन भाऊराव पाटिल, ए.आई.आर. 1996 एस.सी. 796)

रिश्वत– निर्वाचन अर्जी में केवल रिश्वत का आरोप लगा देना मात्र पर्याप्त नहीं है, अपितु उसे संदेह से परे साबित किया जाना भी आवश्यक है। मात्र यह कह देना पर्याप्त नहीं है कि हरिजन मतों को क्रय करने के लिये रूपये बांटे गये। यह बताना भी आवश्यक है कि यह राशि कब, किसके द्धारा और किस–किस को दी गई। (मणीराम बनाम सुरेन्द्रकुमार, ए.आई.आर. 1993 पंजाब एण्ड हरियाणा 152)

व्यय–निर्वाचन में निर्धारित सीमा से अधिक व्यय करना भ्रष्ट आचरण की परिधि में आता है। (आर.पी. अल्हीथान बनाम पी.एच.पाण्डियन, ए.आई.आर. 1996 एस.सी. 1599)

निर्वाचन में अधिक व्यय करना रिटर्न में कम बताना भ्रष्ट आचरण है। (शशिभूषण वाजपेयी बनाम माधवराव सिंधिया, ए.आई.आर. 1998 मध्यप्रदेश 31)

यान या जलयान का उपयोग–मतदाताओं को मतदान के लिये लाने ले जाने हेतु यान या जलयान का भाड़े पर लेना या उपाप्त करना और उसका उपयोग करना भ्रष्ट आचरण है।

ऐसे मामलों में मतदाताओं द्धारा यान या जलयान का नि:शुल्क उपयोग किया जाना आवश्यक है। (धमेश प्रसाद वर्मा बनाम पैयाजल आजम, ए.आई.आर. 1984 एस.सी. 1516)

सरकारी सेवकों की सेवा लेना–किसी सरकारी सेवक को निर्वाचन में अभिकर्ता के रूप में नियुक्त किया जाना भ्रष्ट आचरण है। (सत्यदेव बनाम पदम दवे, 1955 एस.सी.आर. 549)

* सहायक प्रध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय रेहटी जिला–सीहोर (म.प्र.) भारत

क्या हिन्दू, हिन्दुत्व और हिन्दूवाद का प्रयोग भ्रष्ट आचरण है–अभी कुछ समय पूर्व एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह उठा था कि क्या चुनावी सभाओं में 'हिन्दू एवं हिन्दुत्व' की बात करना भ्रष्ट आचरण है? उच्चतम न्यायालय ने इसका नकारात्मक उत्तर देते हुए इन शब्दों की अत्यन्त सुन्दर व्याख्या की है। उच्चतम न्यायालय ने कहा–

'हिन्दूवाद इस महाद्वीप की जीवन शैली है, मानसिकता है। धार्मिक समन्वय एवं सहिष्णुता का पोषक और हमारी उच्च सांस्कृतिक परम्परा की पहचान है। हिन्दुत्व भारतीयकरण का पर्याय है। यह एक सार्वभौम संस्कृति का पोषक है। इसमें सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, साहित्यिक एवं कलात्मक सभी पहलू समाहित हैं। धर्म के रूप में हिन्दूवाद विभिन्न प्रकार की संस्कृतियों, सिद्धान्तों एवं जीवन शैली का संगम है। सैद्धान्तिक रूप से हिन्दूवाद आस्था एवं विश्वास के सभी रूपों को अपने में सन्निहित किये हुए है। विश्व के अन्य धर्मों की तरह हिन्दू धर्म किसी ईश्वरीय सत्ता का दावा नहीं करता, यह किसी एक ईश्वर या देवता की पूजा–अर्चना भी नहीं करता, यह किसी हठधर्म की वकालत भी नहीं करता, यह किसी एक दार्शनिक विचारधारा में भी विश्वास नहीं करता, यह किसी भी धर्म अथवा पंथ के संकुचित परम्परागत रूप की तुष्टि भी नहीं करना चाहता। विस्तृत भाव में हिन्दू धर्म एक जीवन शैली से अधिक कुछ नहीं है।'(डॉ.रमेश यशवन्त प्रभु बनाम प्रभाकर काशीनाथ कुन्ते, ए.आई.आर. 1996 एस.सी. 1113)

निर्वाचन अपराध–लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम 1951 की धारा 125 से 136 तक में विभिन्न प्रकार के निर्वाचन अपराधों तथा उनके लिए शास्तियों के बारे में प्रावधान किया गया है। निर्वाचन सम्बन्धी मुख्य–मुख्य अपराध निम्नलिखित है –

1. नागरिकों के विभिन्न वर्गों के बीच धर्म, मूलवंश, जाति, समुदाय या भाषा के आधार पर शत्रुता या घृणा की भावनाएं संप्रवर्तित करना। तीन वर्ष तक की अवधि का कारावास या जुर्माना या दोनों। (धारा 125)
2. मतदान समाप्ति से पूर्व 48 घंटों के भीतर चुनावी सभा आयोजित करना आदि। दो वर्ष तक की अवधि का कारावास या जुर्माना या दोनों। (धारा 126)
3. निर्वाचन सभाओं में उपद्रव करना। छह माह तक की अवधि का कारावारा या दो हजार रूपये तक का जुर्माना या दोनों। (धारा 127)
4. मुख्य पृष्ठ पर मुद्रक एवं प्रकाशक के नाम व पते बिना निर्वाचन पुस्तिकायें, पोस्टर आदि प्रकाशित करना। छह मात तक की अवधि का कारावास या दो हजार रूपये तक का जुर्माना या दोनों (धारा 127–क)
5. मतदान की गोपनीयता को भंग करना। तीन माह तक की अवधि का कारावास या जुर्माना या दोनों। (धारा 128)
6. निर्वाचन में आफिसरों द्वारा अभ्यर्थियों के लिये कार्य करना। छह माह तक की अवधि का कारावास या जुर्माना या दोनों। (धारा 129)
7. मतदान केन्द्रों के निकट अवैध रूप से मत संयाचना (convassing) करना। 250 रूपये तक जुर्माना। (धारा 130)
8. मतदान केन्द्रों में या उनके निकट विच्छृंखल आचरण (Disorderly Conduct) करना। तीन माह तक की अवधि का कारावास या जुर्माना या दोनों। (धारा 132)
10. निर्वाचन के लिये अवैध रूप से यान भाड़े पर लेना या उपाप्त करना। तीन माह तक की अवधि का कारावास एवं जुर्माना। (धारा 133)
11. निर्वाचन कार्य में लगे व्यक्तियों द्वारा साशय अपने पदीय कर्त्तव्यों का भंग किया जाना। पांच सौ रूपये तक जुर्माना। (धारा 134)
12. सरकारी सेवकों द्वारा निर्वाचन अभिकर्त्ता, मतदान अभिकर्ता या गणन अभिकर्त्ता के रूप में काम किया जाना। तीन माह तक की अवधि का कारावास या जुर्माना या दोनों। (धारा 134 क)
13. मतदान केन्द्र में या उसके निकट शस्त्र लेकर जाना या घूमना। दो वर्ष तक की अवधि का कारावास या जुर्माना या दोनों। (धारा 134 ख)
14. मतदान केन्द्र से अप्राधिकृत रूप से मतपत्रों का हटाना, बाहर ले जाना, आदि। एक वर्ष तक की अवधि का कारावास या पांच सौ रूपये तक जुर्माना या दोनों। (धारा 135)
15. बूथ पर बलात् कब्जा करना। न्यूनतम एक वर्ष का तथा अधिकतम तीन वर्ष तक की अवधि का कारावास एवं जुर्माना। यदि बूथ पर बलात् सरकार की सेवा में के किसी व्यक्ति द्वारा किया जाता है। न्यूनतम तीन वर्ष का तथा अधिकतम पांच वर्ष तक की अवधि का कारावास एवं जुर्माना। (धारा 135 क)
16. मतदान के दिन नियोजकों द्वारा अपने कर्मकारों अथवा कर्मचारियों को सवेतन अवकाश नहीं दिया जाना। पांच सौ रूपये तक जुर्माना। (धारा 135 ख)
17. मतदान के दिन शराब आदि का विक्रय किया जाना, दिन जाना या वितरित किया जाना। छह माह तक की अवधि का कारावास या दो हजार रूपये तक जुर्माना या दोनों। (धारा 135 ग)
18. नाम निर्देशन पत्र को कपटपूर्वक निरूपित या नष्ट करना।निर्वाचन से संबंधित किसी सूची, सूचना, दस्तावेज आदि को विरूपित या नष्ट करना, मतपेटी में मतपत्र से भिन्न कोई चीज डालना, आदि।

छह माह तक की अवधि का कारावास या जुर्माना या दोनों। रिटर्निंग आफीसर, पीठासीन आफीसर आदि की दशा में दो वर्ष तक की अवधि का कारावास या जुर्माना या दोनों। (धारा 136)

इस प्रकार धारा 125 से 136 तक में निर्वाचन विषयक अपराधों एवं उनके लिये शस्तियों का उल्लेख किया गया है।

मतदान करने के हकदार व्यक्ति को मतदान करने से अवैध रूप से रोकना या निवारित करना धारा 135 क के खंड (क) के अंतर्गत दंडनीय अपराध होगा। (डॉ.एस.बी. अमरखेड़ा बनाम बासनगौड़ा, (1993)3 के.एल.जे. 448)

निर्वाचन में फर्जी मतदान को रोकने के लिये अभिज्ञान पत्र (Identity Card) दिये जाने की व्यवस्था की गई है। लेकिन अभिज्ञान पत्र प्रदाय (Supply) नहीं किये जाने के आधार मात्र पर निर्वाचन स्थगित नहीं किया जा सकता है। (रामदेव भण्डारी बनाम निर्वाचन आयोग (1995) 1 पी.एल.जे.आर. 82 एस.सी.)

कुछ अपराधों को संज्ञेय (Congnizable) अपराध बनाया गया है। संज्ञेय अपराध से अभिप्राय ऐसे अपराध से है जिसमें पुलिस अधिकारी द्वारा किसी व्यक्ति को वारंट के बिना गिरफ्तार किया जा सकता है। (दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 2 ग)

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अनुच्छेद 19
2. प्रिंट (महशूर) जि.ब. ए.सी.टी.ओ, (1994) 2 एस.सी.सी. 434
3. दिनेश त्रिवेदी ब. भारत संघ (1997) 4 एस.एस.सी. 306
4. भारत का संविधान।
5. डॉ.एस.बी.अमरखेड़ा बनाम बासनगौड़ा (1993) 3 के.एल.जे. 448

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) Oct. to December 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

प्राचीन भारतीय न्याय व्यवस्था की उपयोगिता वर्तमान सन्दर्भ में

डॉ. जे. के. संत *

प्रस्तावना – न्यापालिका सरकार का वह अंग है जो आवश्यकतानुसार कानूनों की व्याख्या करती है, और कानून के भंग करने वालों को उचित दण्ड देती है, न्यायपालिका शासन का अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग बन गयी है, यदि किसी राज्य में उचित और निष्पक्ष न्यायपालिका नहीं है तो अधिकारों की सुरक्षा खतरे में पड़ सकती है। इसके महत्व पर प्रकाश डालते हुये प्रो0 गार्नर ने लिखा है कि– न्याय विभाग के अभाव में एक सभ्य राज्य की कल्पना नहीं की जा सकती, कोई भी सभा बिना विधानमण्डल के रहता है, यह बात समझ में आ सकती है, लेकिन ऐसे किसी सभ्य राज्य की कल्पना भी नहीं की जा सकती जिसमें न्यायपालिका या न्यायाधिकरण की कोई भी व्यवस्था नहीं हो। एक कदम आगे बढ़ते हुए ब्राइस ने कहा है कि ' यदि न्याय का दीपक बुझ जाये तो अंधेरा कितना गहन होगा इसकी कल्पना नहीं की जा सकती ' गैटल के अनुसार – 'अपना कार्य करना और दूसरों के कार्यो में हस्तक्षेप न करना ही न्याय है'। भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है। लोकतंत्र को स्थायित्व और सुदृढ़ आधार प्रदान करने में स्वतंत्र व निष्पक्ष न्यायपालिका की भूमिका हमेशा ही महत्वपूर्ण रही है। इसलिए यह जरुरी हो जाता है कि न्यायपालिका को विधायी और कार्यपालिका शक्तियों के हस्तक्षेप से निष्पक्ष बनाया जाएं।

प्राचीन न्याय व्यवस्था – एक आदर्श न्याय व्यवस्था की संरचना प्राचीन भारतीय राजशास्त्री चिन्तन में सर्व प्रथम देखने को मिलती है, विषाद विषयों का विस्तृत एवं वैज्ञानिक विवरण प्राचीन भारतीय राजशास्त्र में उपलब्ध होता है। न्यायपालिका के अन्तर्गत नीचे से लेकर सर्वोच्च स्तर तक न्यायालयों के संगठन तथा उसकी स्वतन्त्रता की व्यवस्था पायी जाती है। प्राचीन राजविदों ने न्याय व्यवस्था का बड़ा ही वृहद रोचक एवं सुव्यवस्थित वर्णन किया है। प्राचीन भारत में न्याय व्यवस्था को व्यवहार तथा उसकी स्थापना को व्यवहार स्थापना की संज्ञा दी जाती थी। मनु ने भी इसे व्यवहार नाम से संबोधित किया है।[1] 'काव्यापन ने व्यवहार शब्द की दो परिभाषाऍ दी है, जिसमें एक शब्द की व्युत्पत्ति के आधार पर है और जो प्रमुख रुप से विधि की ओर संकेत करती है, और दूसरी परम्परा के आधार पर झगड़े, मुकदमें या विवाद से संबन्धित है। व्यवहार शब्द की व्युत्पत्ति वि+अब+हार से हुई है। उपसर्ग वि का प्रयोग बहुत के अर्थ में, अब का संदेश के अर्थ में तथा हार का हटाने या हरण करने के अर्थ में प्रयोग हुआ, इस प्रकार व्यवहार के तात्पर्य उस कार्य से है जिसके द्वारा नाना प्रकार के सन्देह दूर किया जा सकें।'[2] 'कौटिल्य के व्यवहार पदके स्थान पर विवाद का प्रयोग किया है।'[3] इस प्रकार हम देखते है कि प्राचीन व्यवहार शब्द आधुनिक प्रक्रिया का द्योतक है। मनुष्य–मनुष्य के बीच होने वाले कलह के वास्तविक रुप को जमानत, लिखित प्रमाण, भोग प्रमाण आदि के आधार पर उसे समझकर उसके मूल कारण का निराकरण किया जाय। किस व्यक्ति ने दूसरे व्यक्ति के अधिकार हरण करने की चेष्टा की है, और कितनी मात्रा में उस व्यक्ति को उसकी इस अनाधिकार चेष्टा की मात्रा के अनुसार दण्ड मिलना चाहियें और दूसरे व्यक्ति को उसके अधिकार को भोगने की सुविधा प्राप्त होनी चाहियें। इन्ही समस्याओं के समाधान हेतु प्राचीन भारतीय राजशास्त्र में न्याय व्यवस्था की आवश्यकता अनुभव की गई है। ताकि मात्स्यन्याय व अनाचार से प्राणियों को सुरक्षा प्रदान किया जा सके।

प्राचीन का धर्म सभा आज का सर्वोच्च न्यायालय – सर्वोच्च न्यायालय धर्म सभा है। इसमें राजा स्वयं मुख्य न्यायाधिपति होता है। इस न्यायालय में राजा कुछ इने–गिने ब्राम्हणों एवं मंत्र के ज्ञाता मंत्रियों के परामर्श से विभिन्न विवादग्रस्त विषयों का निर्णय करता है और उसे क्रियान्वित करता है। स्पष्ट है कि इस धर्म सभा में एक धर्माध्यक्ष होता है जिसे धर्मस्थ नाम से सम्बोधित किया गया है। धर्मस्थ के पद पर राजा स्वयं आरुढ़ होता है। राजा के अनुपस्थिति में इस पद पर राजा द्वारा नियुक्त किया हुआ विद्धान ब्राम्हण के आसन को ग्रहण करता है। इस सभा में बैठकर या खड़े होकर दाहिने हॉथ को उठाकर विनम्रभाव से राजा (धर्माध्यक्ष) कार्यार्थियों के कार्यो को देखता है।'[4] जो आज वही कार्य सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश करता है। वर्तमान में एक मुख्य न्यायाधीश एवं तीस अन्य न्यायाधीश होतें हैं, (आवश्यकतानुसार संसद द्वारा संख्या में कम या ज्यादा की जा सकती है) जो विभिन्न विवादग्रस्त विषयों के लिये अलग–अलग बेन्च गठित किये जातें हैं। जो ऐसा प्रतीत होता है मानों प्राचीन न्यायव्यवस्था का निरुपण किया जा रहा है।

प्राचीन का सभ्य सभा आज का उच्च न्यायालय – इस सभा के विषय में वर्णित है जब राजा स्वयं कार्य देखने में असमर्थ हो तो राजा को अपने स्थान में एक विद्धान ब्राम्हण को व्यवहार अवलोकन हेतु नियुक्त करना चाहिये। इस ब्राम्हण को तीन सम्यों के साथ सभा में बैठकर राजा के द्वारा दियें जाने वाले समस्त कार्यों का अवलोकन करना चाहिये। इसी सन्दर्भ में यह व्यवस्था भी पायी जाती है, कि जिस स्थान पर वेदज्ञ तीन ब्राम्हण और राजा द्वारा अधिकृत एक विद्धान ब्राम्हण बैठकर न्याय का कार्य करते है। वह स्थान सभा के नाम से सम्बोधित किया जाता है। इस प्रकार धर्मशास्त्रों में इन दो प्रकार की सभाओं की ओर संकेत किया जाता है। परन्तु इन सभाओं के विषय में जो वर्णन उपलब्ध है उससे इस विषय का लेशमात्र भी बोध नहीं होता कि इन सभाओं के अधिकारों में क्या अन्तर है। ऐसा जान पड़ता है कि दोनों सभाओं के अधिकार समान है हमनें इसे सभ्य सभा के नाम से इसलिये सम्बोधित किया है कि इनमें न्याय कार्य देखने वाले अधिकारियों को मनु ने सभ्य नाम से पुकारा है।'[5] एक स्थल पर यह भी वर्णन मिलता है कि सभा में प्राड्‌विवाक नाम का एक अधिकारी होता है। इस विषय में मानवधर्मशास्त्र में इस प्रकार का वर्णन प्राप्त होता है। सभा में प्राप्त हुये साक्षियों से अर्थी और प्रत्यर्थी के समक्ष प्राड्‌विवाक को सांत्वना देतें हुये साक्षी से इस प्रकार पूॅछना चाहियें कि इन दोनों अर्थी और प्रत्यर्थी ने परस्पर इस कार्य में जो कुछ किया

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति शास्त्र) शासकीय तुलसी महाविद्यालय, अनूपपुर (म.प्र.) भारत

हो इसके विषय में तुम जो कुछ जानते हो वह सच-सच बतलाओं क्योंकि तुम्हारी इसमें साक्ष्य है।'[6] 'अत: स्पष्ट है कि मनुस्मृति में प्राड्‌विवाक नाम का एक अधिकारी है। यह प्राड्‌विवाक अति प्राचीन नाम है, गौतम व नारद ने भी इसका उल्लेख किया है।'[7]' प्राड् शब्द प्रच्छ धातु से बनता है और विवाक वाक से क्रमश: इनका अर्थ है मुकदमेबाजों से प्रश्न पूछना या सत्य का विश्लेषण करना अमर कोष में इसे अक्षदर्शक नाम से भी सम्बोधित किया गया है। धर्माध्यक्ष, धर्मप्रवक्ता या धर्माधिकारी नामों से भी अभिहित किया गया है।'[8]' जो आज भी उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति भारत के राष्ट्रपति सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश और राज्य के राज्यपाल से परामर्श करने के पश्चात् करते हैं।, जो सर्वोच्च न्यायालय के अधीनस्थ कार्य करती है। जो ऐसा प्रतीत होता है मानों प्राचीन न्यायव्यवस्था का निरुपण किया जा रहा है।

प्राचीन निम्नस्तरीय न्यायालय आज का सत्र न्यायालय एवं ग्राम न्यायालय – ऊपर हमने जिस धर्मसभा का विवेचन प्रस्तुत किया है वह सर्वोच्चन्यायालय का अवबोधक है साथ ही उपर्युक्त विवरण से यह भी स्पष्ट होता है कि कुल, जाति, श्रेणी, गण व जनपत धर्म के अनुसार निम्न अपराधों पर निर्णय देने के लिये उक्त नामों की निम्नस्तरीय अदालतें भी होतीं है। जो अपने अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत इन धर्मो की रक्षा करते हुयें विवादों का निर्णय करती है।'[9]'याज्ञवल्क्य स्मृति का कथन है कि विवादों का निर्णय कुलों गांव की पंचायतों, श्रेणियों, पूगों तथा गणों द्वारा भी होता था।'[10] 'श्री कांशी प्रसाद जायसवाल के शब्दों में मानव धर्मशास्त्र में जाति, जानपा और श्रेणी के नियम कानून मान्य किये गये हैं। इस बात में किसी प्रकार का सन्देह नहीं है, कि वर्ण की अन्य दो संस्थायें सामूहिक संस्थायें है।'[11] 'वृहस्पति स्मृति में स्पष्ट कहा गया है कि कुल न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध श्रेणी न्यायालय में और श्रेणी न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध पूग न्यायालय में अपील होती है।'[12] 'इसके ऊपर सभ्य सभा एवं धर्म सभा का स्थान है। अत: उपर्युक्त प्राप्त संकेतों के आधार पर कहा जा सकता है कि प्राचीन भारतीय वांगमय में निम्नतम न्यायालय कुल से लेकर उच्चतम न्यायालय धर्म सभा तक की श्रंखलाबद्ध योजना प्रस्तुत की गई है। जो वर्तमान में सत्र न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध उच्च न्यायालय में और उच्च न्यायालय के विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालय में अपील होती है। इसके अतिरिक्त ग्राम न्यायालय अधिनियम 2008 को पारित किया गया ताकि पंचायत स्तर पर न्याय को पहुँचाया जा सके। जिससे इन अदालतों में सरल एवं लचीली प्रक्रिया अपनाई जाए, जो ऐसा प्रतीत होता है मानों प्राचीन न्यायव्यवस्था का निरुपण किया जा रहा है।

प्राचीन व्यवहारों पर पुनर्विचार आज का न्यायिक पुनरावलोकन – व्यवहार निर्णय में न्यायाधीश की असावधानी से अनिष्टकारी परिणाम निकल सकते है और आहत पक्ष को पुन: हानि उठानी पड़ सकती है। इसके अतिरिक्त मनुष्यों से भूल हो जाना भी स्वाभाविक है। अत: मुकदमों में पुनर्चिन्तन की व्यवस्था पर जोर दिया गया है। इस विषय में व्यवस्था है कि व्यवहार अवलोकन कार्य में यदि मंत्री अथवा प्राड्‌विवाक ने भूल की है तो उसे दण्डित करना चाहिये।'[13] 'उस व्यवहार को राजा को स्वयं पुन: देखना चाहियें इस प्रकार मंत्री अथवा न्यायाधीश द्वारा की गई अशुद्धियों के निराकरण हेतु राजा को व्यवहारों के पुनर्चिन्तन का आदेश धर्मशास्त्रों में दिया गया है। जो वर्तमान में न्यायिक पुनरावलोकन ऐसा प्रतीत होता है मानों प्राचीन न्यायव्यवस्था का निरुपण किया जा रहा है।

न्यायपालिका की स्वतंत्रता – भारतीय राज शास्त्र में स्वतंत्र न्यायपालिका की आवश्यकता अनुभव की गई है ताकि राज्य में शक्ति व सुव्यवस्था स्थापित की जा सके। परन्तु आधुनिक भारत में न्यायपालिका की स्वतंत्रता सैद्धातिक में है व्यवहार में नही चूंकि वर्तमान में कानून अंधा ही नहीं बहरा और गूँगा भी हो गया है। जबकि न्यायपालिका को विधायिका एवं कार्यवालिका से पूर्णत: स्वतंत्र होनी ही चाहियें जिससे निष्पक्ष निर्णय लिया जा सके। तथा न्यायालय केवल कानूनी गतिविधियों तक सीमित न रहे अपितु नागरिकों को दशा सुधारने तथा उन्हें मूलभूत अधिकार दिलवाने में सक्रिय हो जाए तो इससे न्यायालय की सकारात्मक भूमिका बढ़ जाती है।

भारत के उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश एवं कार्यकाल – (सारणी देखे अगले पृष्ठ पर)

निष्कर्ष – सर्वोच्च न्यायालय के रुप में धर्मसभा तथा उसके नीचे समानान्तर अधिकार सम्पन्न सभ्य सभा (उच्च न्यायालय) निम्न स्तरीय न्यायालय, व्यवहारों पर पुनर्विचार, न्यायपालिका की स्वतंत्रता का वर्णन न्यायाधीषों अर्थात सभ्यों की जिन योग्यताओं का विशद विवरण प्राचीन भारत में उपलब्ध होता है वह आज भी अनुकरणीय है न्यायधीशों को न केवल कानून का पण्डित बल्कि शास्त्रों अर्थात विविध विषयों का भी ज्ञान होना चाहियें। उन्हे अत्यन्त संयमी, विद्वान, ईमानदार तथा निष्पक्ष होना चाहियें। प्राचीन न्याय व्यवस्था में जमानत, लिखित प्रमाण, साक्ष प्रमाण, भोग प्रमाण आदि का व्यापक वर्णन ऐसा प्रातीत होता है कि मानों आज का निरुपण किया जा रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यवहारान्दि दृक्षुस्तु ब्राम्हणे: सह पार्थिव: मनु 8/1
2. वि नानार्थेडव सन्देहे हरणं हार उच्यते।
3. अर्थ0 3/16, 4/7 मिताक्षरा एवं अपरार्क, याज्ञ0 2/6
4. मनु0 8/1-11
5. मनु0 8/10
6. मनु0 8/79-80
7. गौतम0 13/26-27
8. मान सोल्लास 2/2 श्लोक 93
9. याज्ञ0 2/30 नारद0 1/7
10. हिन्दू राज्यतंत्र, द्वितीय खण्ड पृ0 199-120
11. ग्रामोदेशष्य यत्कुर्यात सत्य लेख्यं परस्परम्।
12. वृहस्पति स्मृति 1/28-30
13. अमात्या: प्राड्‌विवाको वा यत्कुर्यु: कार्यमन्यन्ता।
14. जूनियर रिसर्च फैलोषिप तथा लैक्चरशिप हेतु राष्ट्रीय एवं रान्य स्तरीय पात्रता परीक्षा राजनीति विज्ञान - अरुण दत्त शर्मा

भारत के उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश एवं कार्यकाल –

क्र.सं.	न्यायाधीश	कार्यकाल
1	हीरा लाल कानिया	26 जनवरी, 1950 से 6 नवम्बर, 1951
2	पंजली शास्त्री	7 नवम्बर, 1951 से 3 जनवरी, 1954
3	मेहर चन्द्र महाजन	4 जनवरी, 1954 से 22 दिसम्बर, 1954
4	बी के मुखर्जी	23 दिसम्बर, से 1954 से 3 जनवरी, 1956
5	एस आर दास	1 फरवरी,1956 से 30 सितम्बर, 1959
6	बी पी सिन्हा	1 अक्टूबर, 1959 से 31 जनवरी, 1964
7	पी बी गजेन्द्र गडकर	1 फरवरी, 1964 से 15 मार्च, 1966
8	ए के सरकार	16 मार्च, 1956 से 29 जून, 1966
9	के सुब्बाराव	30 जून, 1966 से 11 अप्रैल, 1967
10	के एन वांचु	12 अप्रैल, 1967 से 24 फरवरी, 1968
11	एम हिदायतुल्ला	25 फरवरी, 1968 से 16 दिसम्बर, 1970
12	जे सी शाह	17 दिसम्बर, 1970 से 21 जनवरी, 1971
13	एस एम सीकरी	22 जनवरी,1971 से 25 अप्रैल, 1973
14	ए एन रे	26 अप्रैल, 1973 से 27 जनवरी, 1977
15	एम एच बेग	28 जनवरी, 1977 से 21 फरवरी, 1978
16	वाई वी चन्द्रचूड़	22 फरवरी, 1978 से 11 जुलाई, 1985
17	पी एन भगवती	12 जुलाई, 1985 से 21 दिसम्बर, 1986
18	आर एस पाठक	22 दिसम्बर, 1986 से 18 जून,1989
19	ई एस वेंकटरमैया	19 जून, 1989 से 17 दिसम्बर, 1989
20	सव्यसाची मुखर्जी	18 दिसम्बर, 1989 से 25 सितम्बर, 1990
21	रंगनाथ मिश्र	26 सितम्बर, 1990 से 24 नवम्बर, 1991
22	के एन सिंह	25 नवम्बर,1991 से 12 दिसम्बर, 1991
23	एम एच कानिया	13 दिसम्बर, 1991 से 18 नवम्बर, 1992
24	ललित मोहन शर्मा	19 नवम्बर, 1992 से 11 फरवरी, 1993
25	एम एन वेंकटचेलैया	22 फरवरी, 1993 से 24 अक्टूबर, 1994
26	ए एम अहमदी	25 अक्टूबर,1994 से 24 मार्च, 1997
27	जे एस वर्मा	25 मार्च, 1997 से 17 जनवरी, 1998
28	एम एम पुंछी	18 जनवरी, 1998 से 9 अक्टूबर, 1998
29	आदर्श सेन आनन्द	10 अक्टूबर, 1998 से 31 अक्टूबर, 2001
30	एस पी भरुचा	1 नवम्बर, 2001 से 5 मई, 2002
31	बी एन किरपाल	6 मई 2002 से 7 नवम्बर, 2002
32	गेल बल्लभ पटनायक	8 नवम्बर, 2002 से 18 दिसम्बर, 2002
33	वी एन खरे	19 दिसम्बर, 2002 से 1 मई, 2004
34	एस राजेन्द्र बाबू	2 मई, 2004 से 31 मई, 2004
35	रमेश चन्द्र लाहोटी	1 जून, 2004 से 31 अक्टूबर, 2005
36	योगेश कुमार सब्बरवाल	1 नवम्बर, 2005 से 31 जनवरी, 2007
37	के जी बालकृष्णन	14 जनवरी, 2007 से 11 मई, 2010
38	एस एच कपाड़िया	12 मई, 2010 से 28 सितम्बर, 2012
39	अलतमस कबीर	29 सितम्बर, 2012 से अब तक

****

सामाजिक न्याय के पक्षधर - स्वामी विवेकानंद

डॉ. अनिल कुमार जैन *

प्रस्तावना – न्याय' समाज की आत्मा है। सामाजिक न्याय में, मुख्य रूप में हर लिंग, जाति, वर्ग का व्यक्ति जीवन पथ पर अपनी योग्यता के अनुसार, समाज में उचित स्थान को प्राप्त करें यही अपेक्षा होती है। इसके लिये समता, बंधुता का भाव और स्वतंत्रता के मूल्यों के प्रति आचरण का आग्रह समाज में अनिवार्य है। सामाजिक न्याय के ही माध्यम से समाज के सभी सदस्यों को उनको अपने विधिक अधिकारों से वंचित किये बिना तथा बहुसंख्यक तथा अल्पसंख्यक के भेद की उपेक्षा करके, अधिकतम कल्याण किया जाना संभव है।

जब भारत पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ा था, तथा भारतीय समाज अशिक्षा, अज्ञान, सामाजिक वैषम्य, निर्धनता, अंधविश्वास, धर्म की पतनोन्मुखता के अंधकार में पूरी तरह आच्छादित था। देश का सामान्यजन अपने गौरवशाली अतीत व धर्म की मर्यादा को भी विस्मृत कर चुका था तथा वर्तमान के प्रति लक्ष्यहीन और भविष्य के प्रति दिशाहीन हो गया था। ऐसे समय स्वामी विवेकानंद एक नवीन आलोक के साथ अवतरित हुए थे। उन्होंने भारत के नवजागरण काल में राजा राम मोहनराय, दयानंद सरस्वती तथा रामकृष्ण परमहंस जैसे मनीषियों के सुधारवादी प्रयासों को ही नवीन वैचारिक क्रांति में परिवर्तित कर आधुनिक भारत के नवीनीकरण करने का संकल्प लिया।[1]

अपने संकल्प को क्रियान्वित करने के लिये, उन्होंने तीन लक्ष्य निर्धारित किए धर्म की पुनर्स्थापना, हिन्दू धर्म पर आस्था तथा देशवासियों में आत्म गौरव को जागृत करना। धर्म और राष्ट्र के प्रति सम्मान व समर्पण की उग्र भावना के माध्यम से, किसी भी राष्ट्र में सहज ही नवचेतना का संचार किया जाना संभव है। अत: स्वामी जी को अपना लक्ष्य प्राप्त करने में आशातीत सफलता मिली और वे आधुनिक भारत के पुराधा बन गये।

अपने ध्येय की प्राप्ति के प्रयास में सर्वप्रथम स्वामी विवेकानंद ने भारत को निकट से जानने के लिये सन् 1890 से 1893 तक संपूर्ण भारत का भ्रमण किया, तथा देश की अवनति के कारणों को प्रत्यक्ष अनुभव किया। परिणामस्वरूप परम्परागत हिन्दू धर्म में प्रचलित कुरीतियों, कुसंस्कारों, जातिपाति की शुद्धता पर उन्होंने अपना आक्रोश व्यक्त करते हुए धर्म की भ्रमपूर्ण धारणा का खण्डन किया तथा समतामूलक समाज की स्थापना के उद्देश्य से समष्टिवादी दृष्टिकोण का प्रतिपादन किया।[2]

स्वामी विवेकानंद ने भारत की सांस्कृतिक विचारधारा की नब्ज को पहचान कर यह जान लिया था कि धर्म यहां के जनमानस का मेरूदण्ड है। जीवन केन्द्र है। प्राण तत्व है। यह व्यक्ति और समाज दोनों के लिये उपयोगी है। वास्तव में देश में गुलामी के लंबे काल के कारण जो पतन हुआ, सामाजिक अन्याय और कुरीतियों का विस्तार हुआ, उसका दोषी वस्तुत: धर्म नहीं है। धर्म का गलत प्रयोग है। अत: वे ऐसे धर्म प्रचार के लिये संकल्पित हुए जो मनुष्य के लिये ग्रहण योग्य हो। उसके इहलौकिक जीवन यात्राओं में बाधक न हो। स्वामी जी ने धर्म के शक्तिशाली अस्त्र के माध्यम से देश के पुन: उत्थान के प्रयासों के साथ-साथ जन साधारण की निर्धनता, असमानता, भेदभाव पर भी ध्यान केन्द्रित किया। निर्धन तथा निम्न वर्ग में चेतना का संचार करने तथा आत्म विश्वास जागृत करने के लिए, शिक्षा को उन्होंने परम आवश्यक बताया।

विवेकानंद ने एक तरफ वेदान्त पर आधारित भारतीय सभ्यता और संस्कृति की महानता से, विश्व के लोगों को परिचित कराया वहीं दूसरी तरफ भारतीय समाज और धर्म में व्याप्त कमियों के निवारण के लिए उल्लेखनीय प्रयास किये जिससे समाज में सभी वर्गो के बीच न्याय एवं समता और नैतिकता पर आधारित भातृत्व भाव सुदृढ़ हो सके। वे गरीबों, दलितों, शोषितों और नि:सहाय लोगों के प्रति असीम संवेदना रखते थे। एक साक्षात्कार में उन्होंने कहा 'जब तक मेरे देश का एक कुत्ता भी भूखा रहता है, तब तक उसको भोजन देना और उसकी देखभाल करना मेरा कर्तव्य है।[3] उन्होंने यह भी कहा है 'जो लोग भूख से मर रहे है, उनकी रक्षा करना ही वेदान्त का सार है। इससे स्पष्ट होता है कि उन्होंने वेद और वेदान्त के आधार पर अपने सामाजिक न्याय के दर्शन का प्रतिपादन किया। उनका मत था समाज के सभी लोगों को सम्मानपूर्वक जीने का अधिकार है, और ज्ञानी जन के लिए आत्माऐं उनकी अपनी ही आत्मा है।[4]

स्वामी विवेकानंद की रचनाओं और भाषणों में यत्र-तत्र उन्होंने जो विचार व्यक्त किये वे सामाजिक न्याय का समर्थन करते है। वे कहते है ' मैं भगवान या धर्म को नहीं मानता जो न तो विधवाओं के आंसू पोंछ सकता है और न अनाथों के मुँह में एक टुकड़ा रोटी पहुँचा सकता है।[5] समाज में उच्च वर्ग की शोषणवादी प्रवृत्ति की निंदा करते हुए उन्होंने कहा कि 'वे लोग जिन्होंने गरीबों और विवश लोगों को कुचलकर धन पैदा किया है, वे उन 20 करोड़ देशवासियों के लिए इस समय जो भूखे और असभ्य बने हुए है, यदि कुछ नहीं करें तो इस सामाजिक अन्याय के लिए वे घृणा के पात्र है।[6]वस्तुत: स्वामीजी के मन में आम जनता के प्रति प्रगाढ़ प्रेम था। उन्होंने कहा था ' विश्व में एक ही ईश्वर है, एक ही ऐसा ईश्वर है, जिसमें मुझे आस्था है, वह ईश्वर सभी जातियों के दीन और दरिद्र लोग है।' उन्होंने अनुभव कर लिया था कि 'स्मरण रखिये राष्ट्र झोपड़ियों में रहता है।' दलितों के प्रति सदियों से हो रहे अमानवीय व्यवहार और सामाजिक न्याय के प्रति उनके आक्रोश की अभिव्यक्ति निम्न शब्दों में हुई है 'भूख से पीड़ित मनुष्य को धर्म का उपदेश देना हास्यास्पद है। भारत ऐसा देश हो गया है जहां दस या बीस लाख साधु तथा एक करोड़ ब्राम्हण, करोड़ों लोगों का खून चुसते है।[7] सामाजिक अन्याय की जड़ धर्म का दुरूपयोग है।

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

अत: स्वामी विवेकानन्द ने जाति व्यवस्था की अनियंत्रित शब्दों में निंदा भी की है। उनका मत था कि 'निम्न जातियों को उनके मानवीय अधिकारों तथा सामाजिक न्याय से वंचित रखने के लिए ब्राम्हण, पुरोहितों व सवर्ण जातियों ने मिलकर जातिप्रथा तथा अस्पृश्यता का महाजाल बुन रखा है।[8] भारत की हजार साल की दासता की जड़ जनता का दमन ही है। देश में आज तक सामाजिक अत्याचारियों ने और अभिजातीय निरकुंश वर्गो ने, बहुसंख्यक जनता का शोषण किया है। उन्होंने आम जनता को इतनी घृणा और तिरस्कार की दृष्टि से देखा और उन्हें इतना अपमानित किया कि वह मनुष्यता ही खो बैठी है।[9]

विवेकानंद का यह दृढ़ विश्वास था कि शक्तिशाली भारत के भविष्य का निर्माण साधारण जनता की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक उन्नति से ही संभव होगा। इसके लिए उन्होंने समाज के पाखण्डी शोषक वर्ग की धूर्तता, कुटिलता और अमानवीय व्यवहार की तीव्र भर्त्सना की। उन्होंने यह कहा कि 'भारत के उच्च वर्गो, तुम शून्य हो, तुम भविष्य की सारहीन नगण्य वस्तु हो। तुम अपने को शून्य में विलीन कर दो और तिरोहित हो जाओ और अपने स्थान पर नये भारत का उदय होने दो। उस नये भारत की हल की मूंठ पकड़े हुए किसान की कुटिया में से, मछुआरों, मोचिओं और भंगियों की झोपड़ी से उठने दो। उठने दो उसे परचून वाले की दुकान से और पकौड़ी बेचने वाले की भट्टी से, उठने दो उसे कारखाने से, हाटों और बाजारों से। इन साधारणजनों ने हजारों वर्षो तक उत्पीड़न सहा है। जिसके परिणामस्वरूप इनमें आश्चर्यजनक सहन शक्ति उत्पन्न हो गई है। उन्हें रोटी का आधा टुकड़ा ही दे दीजिये फिर तुम देखोगे कि सारा विश्व भी उनकी शक्ति को संभालने के लिए पर्याप्त नहीं होगा। जिस क्षण तुम तिरोहित हो जाओगे उसी क्षण तुम नव जागृत भारत का उद्घाटन घोष सुनोगे।[10]

स्वामी जी ने साधारण जन की क्षमता का सही आंकलन किया क्योंकि उनमें यह स्वीकार करने का साहस था कि भारतीय समाज में दो उच्च जातियों अर्थात् ब्राम्हणों तथा क्षत्रियों का सदैव वर्चस्व रहा है और इन दोनों वर्गो ने भारत की गरीब जनता का शोषण किया है। इसी कारण उन्होंने दलितों के लिये सामाजिक समानता के अधिकार का पूरजोर समर्थन किया। यह समानता पुरातनवाद तथा ब्राम्हणों की, स्मृतियों में व्याप्त ऊँच-नीच के सिद्धान्त का प्रतिवाद प्रस्तुत करती है। उनका सामाजिक चिन्तन तत्वत: सामाजिक न्याय सिद्धान्त का समर्थन है। स्वामीजी ने देश के सभी लोगों के लिए समान अवसर की मांग रखी। उन्होंने स्वीकार किया कि यद्यपि प्रकृति में असमानता है तदापि समाज में सबके लिए समान अवसर होना चाहिए यदि कुछ को अधिक और कुछ को कम अवसर दिया जावें तो दुर्बलों को सबलों से अधिक अवसर दिया जाना चाहिए। अर्थात् ब्राम्हण को शिक्षा की उतनी आवश्यकता नहीं हैं जितनी की चाण्डाल को। प्रकृति ने जन्म से जिसे सूक्ष्म बुद्धि नहीं दी, उसे अधिक न्याय व सहायता की पात्रता स्वयं सिद्ध है। विवेकानंद पूरजोर शब्दों में देशवासियों को आदेशित करते है कि पद दलित, दरिद्र और अज्ञानी को अपना भगवान समझो।[11] सामाजिक न्याय के क्रियान्वयन के लिये उनका यह स्पष्ट दिशा दर्शन है।

समाज में समानता के आग्रह में उनकी दृष्टि सिर्फ आर्थिक सहायता की ओर केन्द्रित नहीं थी। उनमें लक्ष्य सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक भ्रातृत्व स्थापित करना था जिसमें नैतिक तथा बौद्धिक आत्मीयता समाहित थी। वे समाज सुधार पर अवश्य बल देते है, किन्तु उनकी अभिलाषा रही है कि सभी मनुष्यों की आत्मा वसुधा तल से आरोहण कर, स्वर्णिम देवत्व को प्राप्त करने की दिशा में अग्रसर हो।

स्वामीजी की एक वैचारिक और महत्वपूर्ण देन स्वतंत्रता की उनकी अपनी अवधारणा है। उन्होंने कहा ' जीवन में सुख और समृद्धि की एकमात्र शर्त है, चिन्तन और कार्य की स्वतंत्रता। जिस क्षेत्र में यह नहीं है उस क्षेत्र में मनुष्य जाति और राष्ट्र का पतन होगा।' उनके अनुसार शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक स्वतंत्रता की ओर अग्रसर होना तथा दूसरों को उसकी ओर अग्रसर होने में सहायता देना मनुष्य का सबसे बड़ा पुरूस्कार है। उन्होंने शक्ति और निर्भयता का संदेश दिया है।

विवेकानंद ने मुख्य रूप से वेदान्त दर्शन पर आधारित हिन्दू धर्म का इस आधार पर समर्थन किया था कि यह नैतिक मानवतावाद और आदर्श आध्यात्म दर्शन का एक सार्वभौम प्रतिरूप है। उनके विचार में, हिन्दू धर्म ही मानवउ जाति के उद्धार के लिए, नैतिक तथा आध्यात्मिक विधानों के काल निरपेक्ष नियमों की संहिता है। उनको हिन्दू धर्म की महानता और सार्वदशिकता में अखण्ड विश्वास था परन्तु उनकी पीड़ा यह भी थी कि पाखण्डी पण्डितों और पुरोहितों ने धर्म के विकास के स्थान पर अपने स्वार्थ का विकास कर इसे कलंकित कर दिया। इस पर स्वामीजी का आक्रोश कई रूपों में प्रकट हुआ है - 'आज पृथ्वी पर ऐसा कोई धर्म नहीं है जो हिन्दू धर्म के समान गरीबों और निम्न जाति वालों का गला ऐसी क्रूरता से घोटता हो।[12] इसलिये वे सामाजिक अन्याय में प्रयुक्त वर्गगत तथा जातिगत श्रेष्ठता के विचारों तथा व्यवहार के प्रचलित रूढ़िवादी एवं अस्पृश्यता संबंधित आचरण का, वे कठोरता से उन्मूलन करना चाहते थे जिसने हिन्दू समाज को शिथिल सारबद्ध तथा विघटित कर दिया था। इस स्थिति से मुक्ति के लिये उनका एक ही अभिमत था कि सामाजिक एकता के लिये सामाजिक समरसता की स्थापना आवश्यक है। भेदभाव व छूआछूत से हटकर समभाव व सर्वोदय की भावना से ही, वेदान्त के आधार पर भारत को विश्व गुरू का गौरव प्राप्त हो सकता है। यह सत्य है कि वे मूल चर्तुवर्ण व्यवस्था को पुनर्जीवित करने के पक्षधर थे। इसके लिए सिर्फ निम्न स्तर के लोगों को उच्च स्तर लाना जरूरी है। ब्राम्हणों को नीचे गिराने की अपेक्षा यह उचित है कि प्रत्येक वर्ग को उच्च स्तर पर ले आना चाहिए। उनके मत में राष्ट्रीय अस्मिता के लिये, सामाजिक एकता के लिए, स्वतंत्रता के आदर्श क्रियान्वयन के लिये सामाजिक समरसता अनिवार्य है।

विवेकानंद के संपूर्ण चिंतन में 'वसुधेव कुटुम्बकम्'का भाव मुख्य रहा है। वे उग्र राष्ट्रवाद के बजाय अन्तर्राष्ट्रीयता वादी थे। वे दोनों के बीच किसी प्रकार का विरोधाभास नहीं देखते थे। वेदान्त के अनुसार संपूर्ण मानवता में एकत्व विद्यमान है, परन्तु इसका विकास क्रमश: होता है। अन्तर्राष्ट्रीय भावों का विकास भी सुदृढ़ राष्ट्रीय गौरव के धरातल पर ही हो सकता है। वे भारतीय नागरिकों को समाज सेवा में संलग्न तथा राष्ट्रीय भावना से परिपूर्ण बनाना चाहते थे जिसमें वेदान्त की उदान्त भावना का जन-जन में समावेश हो सके। वे राष्ट्रीयता के लिए, समाज में ऐसे गुणवान व्यक्तियों का विकास चाहते थे जो आदर्शवादी होकर चरित्रवान, बलवान तथा आत्मनिर्भर हो। इसलिए वे कहते थे कि व्यक्ति उच्च स्तर पर कर्मयोग, भक्तियोग, राजयोग तथा ज्ञान योग की विद्या सीखें। वे कहा करते थे ' उत्तिष्ठित जागृत प्राप्य व राह्निबोधत' उठो जागो और ध्येय की प्राप्ति तक मत रूको।

स्वामी जी लोकतंत्र व समाजवाद दोनों के प्रबल समर्थक थे। वे सामयिक भारत के उन कुशल शिल्पियों में हैं, जिन्होंने आधारभूत भारतीय जीवन मूल्यों की अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में विवेक संगत व्याख्या की तथा विगत और वर्तमान परम्परा और आधुनिकता, पूर्व और पश्चिम, आध्यात्मिकता और भौतिकता, विज्ञान और विश्वास, विचार और व्यवहार, साधना और स्वास्थ्य

जैसे एक दूसरे से दूर दिखाई पड़ने वाले नदी के तटों को सामंजस्य तथा समन्वय के सेतु से जोड़ने का भागीरथ प्रयत्न किया। स्वामी विवेकानंद के चिंतन कोष में भारतीय नवनिर्माण के उर्वर बीज तो यत्नपूर्वक संकलित है, साथ ही उसमें पीड़ित मानवता के पुनसृजन की कार्य साधक योजना भी सन्निहित है।[14]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जैन डॉं. साधना : स्वामी विवेकानंद का वैचारिक दर्शन : ए जर्नल ऑफ एशिया फार डेमोक्रेसी एण्ड डेवलपमेंट मुरैना वाल्यूम XIII (2) सन 2013, पृ.-131
2. जैन डॉं. साधना : स्वामी विवेकानंद का वैचारिक दर्शन : ए जर्नल ऑफ एशिया फार डेमोक्रेसी एण्ड डेवलपमेंट मुरैना वाल्यूम XIII (2) सन् 2013, पृ.-132
3. लाइफ ऑफ विवेकानंद : वाल्यूम-II, अल्मोड़ा अद्वैत आश्रम (1953) पृष्ठ 782.
4. स्वामी विवेकानंद पत्रावली, प्रथम भाग पृष्ठ 243.
5. द कम्पलीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानंद वाल्यूम-6, पृष्ठ 389 अल्मोड़ा अद्वैत आश्रम 1953
6. वर्मा डॉ. विश्वनाथ प्रसाद : मार्कसिज्म एण्ड वेदान्त : द विश्वभारती क्वाटर्ली 1954 में प्रकाशित लेख.
7. वर्मा डॉ. विश्वनाथ प्रसाद : मार्कसिज्म एण्ड वेदान्त : द विश्वभारती क्वाटर्ली 1954 में प्रकाशित लेख.
8. वर्मा डॉ. विश्वनाथ प्रसाद : आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तक : लक्ष्मीनारायण आगरा (1992) पृष्ठ 146
9. द कम्पलीट वर्क्स ऑफ सामग्री विवेकानंद वाल्यूम-5, पृष्ठ 45 अल्मोड़ा अद्वैत आश्रम 1953.
10. द कम्पलीट वर्क्स ऑफ सामग्री विवेकानंद वाल्यूम-4 पृष्ठ 394-95 अल्मोड़ा अद्वैत आश्रम 1953
11. अवस्थी डॉ. अमरेश्वर एवं डॉ. अवस्थी : आधुनिक भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक चिन्तक, रिसर्च जयपुर (1990) पृष्ठ 94-95
12. सिंह प्रतापसिंह : आधुनिक भारत का सामाजिक और आर्थिक इतिहास, रिसर्च जयपुर, पृष्ठ 103
13. खिमेसरा डॉ. ज्ञानचंद : स्वामी विवेकानंद का समाज दर्शन : रचना (द्विमासिक) जनवरी-फरवरी 2013 म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल, पृष्ठ 60-61
14. थापक डॉ. प्रज्ञा : स्वामी विवेकानंद का भारत दर्शन औन उनका संदेश : रचना (द्विमासिक) जनवरी-फरवरी 2013 म.प्र.हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल, पृष्ठ 26

****

विन्ध्य प्रदेश के विलय में सरदार बल्लभ भाई पटेल की भूमिका

डॉ. पूर्णिमा शर्मा * अशोक कुररिया **

प्रस्तावना – वर्तमान मध्यप्रदेश के बिलासपुर जिले तथा उत्तरप्रदेश के इलाहाबाद और झांसी जिलो के बीच में रियासतें का एक और समूह था, जिसे बुन्दलेखण्ड कहते थे। ये रियासतें उन बुन्देला और बघेला वीरों की याद दिलाती थी, जो उस क्षेत्र में कभी लुटेरों की तरह घूमते थे। बुन्देल राजपूत वंश के थे। मुगल साम्राज्य के समय बुन्देलखण्ड अच्छी स्थिति में था। छत्रसाल ने इस रियासत का गौरव बढ़ाया था। बघेलखण्ड रीवा के महत्वपूर्ण राज्यों व कुछ अन्य छोटे राज्यों से मिलकर बना हुआ था। रीवा का राजपरिवार राजपूतों के बघेलखण्ड से संबंधित था। तेरहवीं सदी में अन्हिवाड़ा पाटन के गुजराती राजवंश का एक सदस्य मध्यभारत में आ गया था तथा बांधवगढ़ सन् 1597 ई. में अकबर द्वारा विजय किये जाने तक बघेलों की राजधानी रहा। अकबर शासित बघेलखण्ड में रीवा मुख्य नगर बन गया था। बुन्देलखण्ड का कुल क्षेत्रफल 12,000 वर्गमील था, जनसंख्या 17 लाख थी तथा राजस्व लगभग 1 करोड़ रूपये था।

बुन्देलखण्ड व बघेलखण्ड राज्य में 35 रियासतें बुन्देलखण्ड राज्य में कुछ रियासतें बहुत छोटी थी। उनमें से 15 रियासतों का कुल क्षेत्रफल 50 वर्गमील था, इनमें ओरछा का राजस्व सबसे ज्यादा, 20 लाख रूपये था, जबकि अन्य 12 रियासतों में अधिकांश रियासतें पिछड़ी हुई थी। बुन्देलखण्ड व बघेलखण्ड दोनों रियासतों का राजनैतिक अस्तित्व भिन्न था और इन दोनों राजपूत वंशों में पारम्परिक शत्रुता थी।

जब इन रियासतों के संगठन का प्रश्न उपस्थित हुआ तो कई विकल्प सामने आये। यह सुझाव दिया गया कि बघेलखण्ड और बुन्देलखण्ड को क्रमश: मध्यप्रान्त और संयुक्त प्रान्त में मिला दिया जाये, परन्तु इसमें कठिनाई यह थी कि संयुक्त प्रान्त पहले से बड़ा था क्योंकि छत्तीसगढ़ की बहुत सी रियासतें उसमें मिलाई गई थी। रीवा की रियासत और उसके महाराजा को दी गयी थी कुछ रियासतों के बदले में रीवा के महाराज समस्त रियासतों का एक संघ बनाने को राजी हो गये, परन्तु उन्होंने जो शर्तें रखी थी वे प्रत्यक्ष रूप से इतनीअयुक्तिसंगत थी कि मामला कुछ समय के लिये वहीं अटक गया था रीवा का प्रतिनिधिमंडल मार्च के प्रथम सप्ताह में दिल्ली गया और वहाँ श्री वी.पी. मेनन से मिला उन्होंने आश्वासन दिया कि रीवा कुछ शर्तों पर संघ में मिलना चाहता है, श्री मेनन ने सरदार पटेल से चर्चा की तथा उन्हें सारी स्थिति की जानकारी दी। सरदार पटेल ने श्री वी.पी. मेनन से कहा कि कुछ मांगो को स्वीकार करना कठिन है अत: तुम रीवा जाओ और वहां स्थिति का अध्ययन करो और उस आधार पर स्व निर्णय से कार्य को। 11 मार्च 1948 को श्री वी.पी. मेनन रीवा गये। रीवा के महाराजा से उन्होंने चर्चा की। महाराजा ने कहा कि यदि स्थानीय पार्टी ने नेता संघ में शामिल होने को तैयार हैं तो उन्हें कोई परेशानी नहीं है। तब श्री वी.पी. मेनन ने स्थानीय नेताओं से चर्चा की। स्थानीय नेताओं की प्रथम मांग थी कि रीवा के महाराजा को प्रस्तावित संघ का राजप्रमुख बना दिया जाये। श्री वी.पी. मेनन ने इसका विरोध किया परन्तु वे इस बात पर सहमत हो गये कि राजप्रमुख व उपराज प्रमुख के चुनाव में रीवा को प्रमुखता दी जानी चाहिये। उनकी दूसरी मांग यह थी कि प्रस्तावित संघ की विधान परिषद को एकात्मक अथवा संघीय में से किसी भी प्रकार का संविधान बनाने की स्वतंत्रता होगी। श्री मेनन अनिच्छा के बावजूद इस मांग से सहमत हो गये। स्थानीय नेताओं की अगली मांग थी कि कि यदि विधान परिषद के राज्य प्रतिनिधि बहुमत के द्वारा रीवा को संघ से पृथक करना चाहे तो वे ऐसा कर सकते है, अथवा अन्य संघ में रीवा के शामिल होने या न होने का प्रश्न विधान परिषद् के चुनावों तक टाल दिया जाये, जिससे कि नेताओं को स्थानीय भावनाओं को समझने का अवसर मिल सके। यद्यपि स्थानीय नेताओं का यह कहना था कि प्रस्तावित संघ से रीवा के पृथक होने की संभावना का अवसर लगभग नगण्य है फिर भी इस मुद्दे पर श्री मेनन की असहमति की वजह से काफी अधिक चर्चाएं चली। ऐसी स्थिति में श्री मेनन ने करार में यह अनुबंध जोड़ दिया कि यदि प्रस्तावित संघ की विधान परिषद् में रीवा के तीन चौथाई प्रतिनिधि परिषद् की पहली बैठक के एक महीने के भीतर रीवा को संघ से पृथक करने के पक्ष में मत देते है तो यह करार रीवा के लिये प्रभावशाली नहीं होगा। हालांकि रीवा के नेताओं की पृथकतावादी प्रवृत्तियों के लिये उससे अधिक सुअवसर कोई नहीं हो सकता थापरन्तु श्री मेनन को यह विश्वास था कि संघ के गठन के बाद रियासत मंत्रालय भविष्य की सारी स्थितियों को नियंत्रण में ले लेगा तथा रीवा संघ से बाहर नहीं हो पायेगा।

इनके अलावा एक अन्य मांग यह थी कि जब तक विधान परिषद की बैठक नहीं हो जाती तब तक रीवा तथा बुन्देलखण्ड के दो अलग-अलग मंत्रालय होंगे, एक रीवा में तथा दूसरा नौगांव में, तथा रीवा के महाराजा दोनों के राजप्रमुख होंगे। इसके बाद रीवा के महाराजा का प्रिवीपर्स निश्चित किया गया। यह निर्णय किया गया कि रीवा के महाराज को दस लाख रुपये प्रिवीपर्स दिया जायेगा। इसके बाद मेनन ने महाराजा तथा स्थानीय प्रजामण्डल के प्रतिनिधियों से बातचीत की तथा प्रस्तावित संघ का नाम विंध्यप्रदेश निर्धारित किया। इस तरह चर्चाओं के पश्चात् करार समझौते पर बुन्देलखण्ड के शासकों ने 13 मार्च को हस्ताक्षर किये। नये संघ का उद्घाटन अप्रैल 1948 को श्री एन.वी. गाडगिल द्वारा किया गया। इस संघ का कुल क्षेत्रफल 24,598 वर्गमील था और जनसंख्या 35,69,455 थी और वार्षिक राजस्व 2,43,30,734 रूपये था

* शोध निर्देशक (राजनीति विज्ञान) रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
**शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

आरम्भ में इस संघ के दो मंत्रालय थे एक बुन्देलखण्ड के लिये दूसरा बघेलखण्ड के लिये परन्तु दो पृथक मंत्रालयों का यह प्रयोग असफल रहा। रीवा के महाराजा ने सरदार पटेल को पत्र द्वारा जानकारी दी कि 'राज्य में अनेक राजनीतिक पार्टिया हैं जैसे बघेलखण्ड कांग्रेस कमेटी सम्बद्ध प्रजामण्डल, आजाद प्रजामण्डल तथा पवाईदार संघ। जब राज्य में इतनी सारी पार्टियाँ है और हर पार्टी सत्ता प्राप्त करने की कोशिश कर रही है तब इसके सिवाय दूसरा कोई नहीं हो सकता कि जनता अपना नेता स्वंय चुने विशेषकर उस स्थिति में जब मैंने सत्ता छोड़ दी है और उसे जनता के हाथ में सौंप दिया है।

सरदार पटले का मत था कि रीवा में पार्टियों की अनिश्चित स्थिति को देखते हुए राज्य के हितों की दृष्टि से रीवा के महाराजा श्री रामराव देशमुख को मुख्यमंत्री घोषित कर दें। उन्हें यह स्वतंत्रता होगी कि वे पार्टियों के नेताओं से परामर्श करके अंतरिम सरकार की रचना करें। रीवा के महाराजा ने इस व्यवस्था को स्वीकार कर लिया। इस मंत्रालय ने भी भ्रष्टाचार कुलपक्षपात और अद्क्षता के मामले में नये कीर्तिमान स्थापित किये। इस कारण महाराजा रीवा तथा महाराजा पन्ना के साथ नये सिरे से बातचीत शुरू हुई। दोनों राजा 20 नवम्बर को दिल्ली आये। पुराना समझौता रद्द करके नया समझौता तैयार किया गया। इसके अनुसार प्रत्येक शासक से कहा गया कि वह अपनी रियासत के शासन संबंधी पूर्ण और अनन्य अधिकार, क्षेत्राधिकार और सत्ता भारत सरकार को सौंप दे।72 लम्बे समय तक विचार विनिमय के बाद शासकों ने एक नये समझौते पर हस्ताक्षर करने शुरू कर दिये। केवल रीवा के महाराजा अलग रहे, परन्तु व्यक्तिगत एवं वित्तीय लाभ का ध्यान करके उन्होंने भी अपना विचार बदल दिया और नये समझौते पर हस्ताक्षर किये। इसके पश्चात् सरदार पटेल ने युक्तप्रान्त और मध्यप्रान्त के मुख्यमंत्रियों को इस उद्देश्य से दिल्ली बुलाया कि वे आपस में मिलकर यह तय करें कि ये रियासतें उनके दोनों प्रान्तों में मिलाये जाने के लिये किस प्रकार विभाजित की जा सकती है, परन्तु मुख्यमंत्रियों में कोई समझौता न हो सका। तब सरदार पटेल के सामने इसके अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं था कि विन्ध्य प्रदेश को केन्द्र शासित क्षेत्र के रूप में अपने अधीन कर लिया जाये। यह कार्य 1 जनवरी 1950 को पूर्ण हुआ। विन्ध्य प्रदेश एक उपराज्यपाल के अधीन कर दिया गया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मेनन वी.पी. दि स्टोरी आफ दि इंटीग्रेशन ऑफ इण्डियन स्टेट्स पृष्ठ-211
2. व्हाईट पेपर ऑन इण्डिरून स्टेट्स, पृष्ठ-49
3. मेनन वी.पी. दि स्टोरी आफ दि इंटीग्रेशन ऑफ इण्डियन स्टेट्स पृष्ठ-214-15
4. वही, पृष्ठ-217
5. शंकर वी. सरदार पटेल: चुना हुआ पत्र व्यवहार (भाग-1), पृष्ठ-649, रीवा के महाराजा का पत्र सरदार पटेल को 7-4-48
6. वही, पृष्ठ-654
7. हॉडा राजेन्द्र लाल, देशी रियासतों में स्वाधीनता संग्राम का इतिहास, पृष्ठ-259
8. व्हाईट पेपर ऑन इण्डियन, स्टेट्स, पृष्ठ-49

****

वर्ग संघर्ष के सम्बन्ध में लोकनायक जयप्रकाश नारायण के विचारों का अध्ययन

डॉ. पुष्पलता मिश्रा* डॉ. पी.के. चतुर्वेदी**

प्रस्तावना – लोक नायक जयप्रकाश नारायण ने वर्गो के आधार पर कमजोर लोगों के संगठन बनाने और अपने अधिकारों के लिए शान्तिमय संघर्ष करने का आव्हान किया था। उनकी चिन्तन धारा में और गाँधी दोनों मिले हुए थे। इनके प्रभाव के कारण वे यह मानते थे कि पीडित वर्गो के लोग पीडा से मुक्त होने के लिए स्वयं खडे हो तथा वे इस हेतु अहिंसक सत्याग्रह का रास्ता अपनाऐं। वे यह भी मानते थे कि हिंसा बलवानों का हथियार है , सामान्य जन का नहीं तथा किस संघर्ष में हिंसा होती है, वह व्यापक जन संघर्ष नहीं हो सकता है।

सर्वोदय और वर्ग-संघर्ष –लोकनायक जयप्रकाश नारायण की पृष्ठ भूमि सर्वोदय की थी। इस कारण वे यह मानते थे कि भारत में वर्ग संधर्ष का स्वरूप मार्क्सवाद के वर्ग-संघर्ष से भिन्न प्रकृति का होगा। इसमें हिंसा करने का कोई प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होगा। यह शत्रुता पर आधारित न होकर स्नेह भाव पर आधारित रहेगा इस संघर्ष में यह नई बात होगी जो सामान्यत: वर्ग संघर्ष में नहीं होती है। संघर्ष के कई रूप हो सकते है। गरीब, अमीर, शाक्तिशाली-दुर्बल के बीच का संघर्ष अहिंसक भी हो सकता है। किन्तु इसके लिए संघर्ष करने वालो को जेल जाना पड़ सकता है, लाठी खानी पड़ सकती है तथा और भी संकट झेलना पड़ सकता है।

सर्वोदय और सम्पूर्ण क्रान्ति – लोकनायक जयप्रकाश नारायण ने सर्वोदय के लिए किये जाने वाले आन्दोलन को सम्पूर्ण क्रांति आन्दोलन का नाम दिया। उन्होंने कहा कि सम्पूर्ण क्रांति होती है तभी सर्वोदय होता है। सर्वोदय जहाँ नहीं है वहाँ सम्पूर्ण क्रांति भी नहीं होती है। सबके भले में, सबके उदय में शोषको का भी उदय होगा। किन्तु वास्तव में इसका अर्थ है कि शोषकों को शोषण करने से बचाया जाय। शोषण बन्द होगा तो इससे अपने वर्ग का, समाज का तथा उनका स्वयं का भी हित होगा। किन्तु इसके लिए असहयोग या अन्य किसी प्रकार का शांतिमय संघर्ष भी करना पड़ सकता है। यदि सही अर्थ में जनता का राज लाना है तो उसके लिए सामाजिक परिवर्तन करना ही पड़ेगा। जनता को आर्थिक, नैतिक और सामाजिक स्वतंत्रता दिलानी होगी। देश में थोड़े से लोगों के पास ढेर सारी सम्पति हो और बाकी लोगों में इतनी गरीबी हो, तो जनता का राज नहीं हो सकता। जब गरीबी, बेकारी, शेषण का खात्मा होगा और जनता स्वयं अपने कामों में सीधा हिस्सा लेने लगेगी तब ऐसा कहा जा सकेगा कि यह लोक शाही सही अर्थ में जनता का राज है।

वर्ग संघर्ष में हिंसा अनिवार्य नहीं है – लोक नायक जयप्रकाश नारायण ने यह स्वीकार किया था कि वर्ग-संघर्ष शब्द से ही कुछ लोगों के मन में मार्क्सवादी कल्पना आ जाती है। इस संघर्ष में हिंसा होने का खतरा बना ही रहता है। लेकिन उनका पक्का विश्वास का संघर्ष शांतिमय ही होना चाहिये। इसमें संघर्ष है किन्तु यह गरीबों के संगठन के लिए तथा इनके प्रतिपादन के लिए है।

संघर्ष में अगर हिंसा का प्रयोग होता है तो यह बहुत बुरा होगा। इससे संघर्ष पीछे चला जायगा। हिंसा-प्रतिहिंसा की श्रृंखला बन जायगी। इस प्रकार के हिंसक संघर्ष में संघर्ष के पीछे जाने की सम्भावना ही अधिक रहती है। इसलिए ऐसी परिस्थिति ही नहीं बनने देना चाहिये कि हिंसा फूट पडे। अन्यथा इसमें गरीबों का ही नुकसान होगा।

इस प्रकार वर्ग-संघर्ष में हिंसा होगी ही, सब बात दिमाग से निकाल देनी चाहिये। नेतृत्व की योग्यता और संगठन पर उसका असर अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। यदि यह ठीक रहे तो वर्ग-संघर्ष व्यापक सत्यागृह का रूप ले सकता है।

निष्कर्ष – इस प्रकार वर्ग संघर्ष के सम्बन्धमें लोकनायक जयप्रकाश नारायण के विचार अत्यंत महत्वपूर्ण और समाज को दिशा देने वाले हैं। यह विचार आज भी प्रासंगिक हैं। आज समाज जीवन में सभी दिशाओं से हिंसा के प्रयोग की सम्भावनाऐं बहुत बढ़ गई है। अनेक-अनेक रूपों में आतंकवाद जडे जमाता और उनका विस्तार करता ही जा रहा है। इसे विवशता में ही लोगों को सहन करना पडता है। जब लोग बुराई को या अन्याय को असंगठित स्थिति में भोगने के लिए विवश होते है तो उसमें से कोई ताकत पैदा नहीं होती है। किन्तु जबके ही लोग अहिंसा के आधार पर संगठित रूप से अन्याय प्रतिकार करते हुए कष्ट झेलते है तो उनका ऐसा त्याग समाज परिवर्तन की ताकत बन जाता है। लोकनायक जयप्रकाश नारायण के ये विचार आज भी आशा की किरण बनकर आप लोगों के जीवन को प्रकाशित कर सकते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मेरी विचार यात्रा - जयप्रकाश नारायण।
2. सम्पूर्ण क्रान्ति के लिय आवाहन - जयप्रकाश नारायण।
3. सम्पूर्ण क्रान्ति सबके लिए - आचार्य राममूर्ति।
4. हिन्द-स्वराज्य - महात्मा गाँधी।
5. मेरे सपनों का भारत - महात्मा गाँधी।
6. रूची का वर्ग-संघर्ष - आचार्य राममूर्ति (सम्पादक)।
7. लोकनीति - विनोबा।

****

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय स्नातक महाविद्यालय, हाटपीपल्या, जिला-देवास (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय स्नातक महाविद्यालय, हाटपीपल्या, जिला-देवास (म.प्र.) भारत

महिला विकास हेतु भारत सरकार की नीतियाँ एवं कार्यक्रम

सुमन मरावी *

प्रस्तावना – 'किसी भी देश का विकास तभी सम्भव है जब वहाँ कि सामाजिक स्थिति उत्थान के चरम सीमा पर हो इसके लिए समाज को चाहिए कि महिला उत्थान का विशेष ध्यान एवं सहयोगात्मक भावना का विकास करें'।

समूचे विश्व में मातृव की भूमिका अग्रणी रही है, लेकिन यह कहाँ गया है कि किसी भी सफल व्यक्ति के पीछे किसी सफल महिला का हाथ रहा है। शायद इसी लिए महिला को समाज एवं राष्ट्र में विशेष स्थान दिया गया है। भारत देश विश्व में धर्मों का गढ़ माना गया है, मानव की वास्तविक शक्ति के पीछे महिलाओं की विशेष भूमिका रही है मानव के जीवन को बनाने एवं विकास के पीछे महिला सशक्तीकरण की भूमिका सर्वश्रेष्ठ मानी गयी है। सन1948 ई0 में जब मानव अधिकारों की घोषणा की गई थी तभी से महिलाओं को समाज में विशेष योगदान एवं स्थान दिया गया था। ताकि महिलाओं को देश की आर्थिक सामाजिक एवं राजनीतिक उन्नति के लिए विशेष प्रयास किया जा सके एवं महिलाओं को भी समाज में पुरूषों के समान अधिकार दिया जा सके।

महिला विकास के क्षेत्र में भारत सरकार का योगदान – संस्कृत में एक श्लोक है 'जननी जन्भूमि स्वर्गादपी गरीयसी' अर्थात पृथ्वी एवं देवियों से जन्म देने वाली माता का स्थान सर्वश्रेष्ठ माना गया है।

भारत सरकार ने महिलाओं के उत्थान के लिए कई सामाजिक एवं राष्ट्रीय कार्यक्रमों के द्वारा महिलाओं को हर क्षेत्र में बढ़ाने का विशेष प्रयास किया जाता है ताकि महिला भी समाज में पुरूषों की तरह कदम से कदम मिलाकर चल सकें और उन्नति प्रदान कर सके।

महिला साक्षरता – भारत देश में महिलाओं (बालिकाओं) को देश में साक्षर बनाने के लिए सरकार ने यूनीश्रेष्ठ के माध्यम से देश में महिलाओं को पढ़ाने – लिखाने का विशेष प्रयास किया है जिसमें 6 व 8 से 14 व 8 तक आयु वर्ग के बच्चों के लिए नि:शुल्क शिक्षा का प्रावधान रखा गया है। एवं बालिकाओं के लिए अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान रखा गया है इसके अलावा भारत सरकार ने महिलाओं के लिए अलग स्कूल एवं कालेजों का निर्माण किया है ताकि बालिकाएं शिक्षा ज्यादा से ज्यादा एवं समय पर प्राप्त कर सकें जो इसके लिए पढ़ना बढ़ना प्रौढ़ शिक्षा एवं सर्वशिक्षा अभियान के माध्यम से बालिकाओं को शिक्षा देने का विशेष प्रयास किया गया है। इसी लिये **सी0बी0एस0सी0 एवं दिल्ली बोर्ड स्कूलों में लड़कों की अपेक्षा लडकियों ने ज्यादा अंक एवं स्थान प्राप्त करने का प्रयास किया है।**

मौलिक अधिकार में समानता – महिलाओं को समाज में बराबर का स्थान प्रदान करने के लिए सरकार ने महिलाओं (बालिकाओं) को मौलिक अधिकार के क्षेत्र में समानता का अधिकार प्रदान किया है एवं समाज की स्थिति एवं एकता को बढ़ाने के लिए महिला कार्यक्रम को विशेष स्थान प्रदान किया है ताकि महिलाऐं भी समाज में पुरूषो के साथ कदम पर कदम मिलाकर देश का विकास कर सके।

महिला उत्थान कार्यक्रम – भारत सरकार ने महिलाओं को जागरूकता बढ़ाने के लिए समय समय पर नये – नये प्रयास किये हैं जैसे कि रेडियो, टेलीवीजन के माध्यम से एवं नुक्कड़ – नाटक एवं सीरियलों के द्वारा महिलाओं की समस्याओं को दूर करने का प्रयास किया हैं एवं फिल्मो के द्वारा दहेज प्रथा एवं सामाजिक कुरीतियों को रोकने के लिए मानव जीवन में महिला जागरूकता को बढ़ाने के लिए कदम पर कदम योगदान किया है ताकि महिला कल्याण हो सके।

महिला कल्याण योजनाऐं – भारत सरकार ने दूरदर्शन टेलीविजन चैनल पर महिला विकास कार्यक्रमों का प्रतिदिन शाम 9:00 बजे कार्यक्रम प्रसारित किया जाता है इसके अलावा सरकार ने लाडली योजना, लक्ष्मी बाई योजना, जननी योजना, कस्तूरवा गांधी योजना एवं इन्दिरा गांधी योजना जैसी योजनाऐं सरकार ने चलायी है ताकि महिलाएं भी समाज में पुरूषों के समान स्थान प्राप्त कर सके एवं इन विभिन्न योजनाओं का लाभ ले सके ताकि देश उन्नति के मार्ग पर चल सके किसी भी राष्ट्र की उन्नति का मार्ग तभी सम्भव माना जा सकेगा जब सभी देश वासियों का विकास हो सके एवं कल्याण कारी योजनाओं का विकास शीघ्रता पूर्वक चल सके एवं महिलाओं का स्थान देश में बढ़ाया जा सके।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. ग्राम विकास योजना पत्रिका फरवरी 2014
2. नव भारत पेपर जनवरी 2014
3. www.google.com

****

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) Oct. to December 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

Role Of Early Buddhism In Cultural Continuum Of Asia (With Special Reference To Central Asia And China)

Dr. Preeti Prabhat *

Abstract - Asian continent represents the most rugged terrain consisting of loftiest mountains, deadliest deserts, almost impossible to negotiate passes and most variable climate. Still it came very close to achieving the goal of a unified human culture. Mostly, when cultures mature they self impose stringent racial, national, political and cultural boundaries around them. The process of transmission of culture is often hampered by political interference and opportunities of interaction are harshly curbed. A number of studies have been made about various aspects of Indian influence in far off lands. But in this paper an attempt has been made to analyze the causes and circumstances which led to the genesis and survival of this stupendous historical phenomenon. This kind of peaceful cultural transmission and assimilation is rarely as the whole region merged into single cultural identity. A casual analyses is attempted here of this success story of indomitable spirit.
Key words - Buddhism, Cultural transmission, Multi-ethnicity, Multiculturalism, Social standardization, Assimilation, Multiracialism.

Introduction - India had close commercial and cultural relations with the outside world since early times. India played the torch bearer and Buddhism became its light. In the early sixth century of Christian era, Buddhist influence and plethora of activities increased in Central Asia and China. The term Central Asia here refers to the area presently known as Sinkiang Uighur Autonomous Region of China. The arid desert of Taklamakan occupies the central and larger part of this region. It is bounded by Tian-Shan Mountain in the north, Kunlun in south, Karakorum and plateau of Pamirs in the south. The northern and southern edges of Talamakan desert were dotted with small oasis states as Kashgar, Yarkand, Khotan, Kucha, Urumqi and Turfan. They were the strongholds from where the Indian influence emanated. The great Silk route played an important role in dissemination of Indian culture and its fusion with other cultures between 1st century B.C to12th century A.D. The Silk route started at Loyang in east China and terminated in the Roman empire. The modern historians prefer it to call 'Sutra route' as the Oasis states and the main trading centers along the silk route are replete with archaeological material of Indian origin and influence. The glaring fact of history is that this kind of peaceful cultural transmission and assimilation is not found very often. The newly emerged Central Asian Oasis states were not culturally and politically circumference in the beginning of Christian era, hence widely open to foreign influence. British archaeologists Sir Aurel Stien, German A. Von Le Coq and French Sinologists Paul Pelliot had unraveled a most spectacular world of Buddhist stupas, cave temples adorned with exquisite murals, sculptures, manuscripts and documents in Indian scripts. Many German, Russian and Japanese missions are busy exploring the region.

Khotan emerges as the important centre of Indian influence and from here Buddhism appears to have spread all over central Asia and China. Stein unearthed many stupas and Buddhist monuments in Khotan. Other than art and architecture, the Buddhist manuscripts discovered in the region are very important. Birch bark fragments of Prakrit Dhammapada and Sanskrit manuscript Saddharmapundarika have been discovered at Khotan. A large catche of kharoshthi documents are also discovered.

Kizil cave complex in Kucha region is also a centre of Buddhist art. Wall paintings here depict a variety of subjects as scenes of Buddha's early life, Jatakas, Avdans, figures of Bodhisattvas and others. Turfan in north is another point of fusion of cultures, dominated by Buddhism. The German mission recovered fragments of Asvaghosha's Sariputa prakarnam from here. Bezekilk in Turfan was a large Buddhist complex consisting of more than hundred monasteries. This centre is rich in large sized Buddha figures, Jataka tales and figures of demi Gods. Buddhist paintings are also found at Miran, monuments at Yoktan, Endre and Rawak in Central Asia.

The most important Buddhist remains are the 492 caves at Tun huang in China, dug and decorated by monks between fourth to fourteenth century A.D. The wall paintings depict an array of Jataka stories, Sutra illustrations, scenes from Buddha's life and figures of Buddha and Bodhisattavas.

The glaring fact of history is that this kind of peaceful cultural transmission and assimilation is not found very often. This success story is of indomitable human spirit and the whole region merged into a single cultural entity. Culture is generally defined as a unique constellation of traits belonging to a designated aggregate of people. The transmission of culture takes place from generation to generation and from cultures to cultures. The newly emerged Central Asian Oasis states were not culturally and politically circumferenced immediately before and around the beginning of Christian era, hence

*Asst. Professor (History) Pt. Deen Dayal Upadhyaya Government P.G. College, Lucknow (U.P.) INDIA

widely open to foreign influence. Similarly in China, Buddhism met a little political resistance. Buddhism has to meet a warm welcome in China, during the rule of Han dynasty. Still Buddhism managed to enter China in first century A.D. and made its presence felt in the Chinese court as well as society around the second century A.D. After the disintegration of Han dynasty, northern China was ruled by nomadic tribes who helped in popularizing Buddhism in China. During the rule of northern Wei dynasty Buddhism recorded an unprecedented growth in number of its adherents and creative activities. There were around 100 Buddhist monasteries in northern Wei capital P'ing-Ch'eng in 477A.D and their new capital Loyang boasted of as many 1367 monasteries in 534 A.D .

Multi-ethnicity and multiracialism of central Asian Oasis states prepared a fertile ground for the growth of Multiculturalism. In Central Asia multiculturalism set ablaze a trail of efflorescence of unprecedented artistic and literary vivacity. Historical evidence suggests that Indians visited and lived in small groups in Central Asian states and China. In spite of being ethnic minority people of Indian descent were never denied of opportunity, neither did they face any type of political and social coercion. The most starting point is that majority who initiated interaction and assimilated itself the cultural traits of minority. It has been noted that cultural miscegenation produces beneficial results for the society. To a great extent, politically fractional China was culturally unified under Buddhist influence. No part of China, ruled by different dynasties appears to have remained untouched by religion.

Effective and positive communication is the key factor which helps to mould structural pluralism to cultural pluralism. When interacting cultures show willingness to open dialogue, mutual understanding feeling of co-operation follow naturally. Thence emerges a collective culture that is acceptable to and approachable for all people concerned. It has been noted that cultural miscegenation produces beneficial results for the society. Possibly no other better example can be cited other than the region of central Asia. Buddhism was at the helm of affairs during this whole eventuality. It is said that religion takes form of social value which members of society try to upkeep. The ritual part of religion assigns different duties to different people and brings them together. In the same manner when there is mutual borrowing among trend of different cultures, they become interdependent. The study of Indo Chinese trade relations explain this very well. Offering of Saptratna is considered as pious in Buddhism. As the Buddhism flourished in China there was more and more import of pearls and other precious stones which were counted as Saptratna. In such capacity religion may act as a binding force. Probably that is why Buddhism was able to impart a single cultural identity to the whole region of Central Asia and China. To a great extent, politically fractional China was culturally unified under Buddhist influence. No part of China, ruled by different dynasties appears to have untouched by religion.

Through the process of social standardization some of the traits of human behavior and activities become cultural. Often development in tool making, art, religious beliefs and rituals become socially standardized, hence cultural and in turn easily gain popularity. In central Asia and China, royal patronage extended to Buddhist faith and Buddhist art bestowed upon them the status of social standardization. Similarly the Kharoshthi scripts of north India gained popularity because it was adopted as administrative language by many Central Asian oasis states. It is opined that the impact of social standardization is so deep that it seeps even into unconscious fantasies of man. Apparently the most magnificent Buddhist art and architecture of central Asia and China nowhere appears to be a professional assignment for artists. The artists seem to have tried to pour their heart into these paintings and sculptures, they exhibit to have breathed and dreamt Buddhism.

Buddhism did not reach China in a religious vacuum, as Confucianism and Taoism were fairly well developed faith among Chinese people. There is no evidence of confrontation between foreign and native religions because Buddhism was received as a compliment rather than competitor. Both these religions somewhat lacked in philosophical arena where Buddhism was much stronger. Buddhism in the form of Buddha provided them a very attractive and miraculous personality to worship and a doctrine of eternal bliss which is attainable by all believers of it. An elaborate system of rituals and a fascinating pantheon of Buddha's, Bodhisattavas and numerous demi-Gods simply overwhelmed these people. Serenity of Buddhism pervaded all walks of life of the Central Asian and Chinese people.
In all probability the reason behind this peaceful assimilation was the pantheism of eastern religions. Buddhism is not very averse to fostering thoughts and deities of other religion. Mostly the new deity is either synthesized with some existing deity or adopted as it is. It is amazing to see that the utilitarian concept of society, still a utopian dream, was near achieved by these people. A cosmopolitan culture came into being with concerted efforts of diverse culture and races.

Conclusion: Thus, it may be surmised that with an aroma of spirituality, benevolence, tolerance and at par communication between the cultures, we will be better equipped to face the challenges of the modern civilization. It has been rightly said regarding the spread of Buddhism in Central Asia, 'The drop departed from its native home found a shell and became a pearl'.

References :-

1. Bapat,P.V. 1956,2500 Years of Buddhism, Delhi, Publications Division .
2. Banerjee,P. 1994, The spread of Indian Art and Culture to Central Asia and China, Indian Horizons, Vol.43. Nos. 1-2
3. Chandra, Lokesh. 1993.The Sutra Route; The Beyond within; Cultural Horizons of India, Vol. 3 Tara Chandrika, New Delhi International Academy of Indian Culture and Aditya Prakash.
4. Gray, Basil. Buddhist Cave Paintings at Tun Huang. London.
5. Honigmann, John J. 1963. Understanding Culture, New York; Harper and Row Publishers.
6. Stein, Aurel. 1921.Serendia. London; Oxford University Press. Reprint, New Delhi. 1980.
7. Zurcher, E. 1959. The Buddhist Conquest of China. Leiden; E.J.Brill.

Development Of Buddhism In Maharashtra-A Historical Context

Dr. Manik Gajbhiye*

Introduction - Gautama Buddha , the founder of Buddhism , taught mankind on this blessed soil of India , over 2500 years ago. The Buddha delivered his first sermon of Isipatana , Modern Sarnath before the five ascetics who had been his companions at Urvela. Two month later , The extorted his first 60 disciples" to go and wonder forth in all direction and preach the dhamma . The great Ashoka , the third Mauryan Emperor , Who offer witnessing the horrible suffering and misery of the people in the Kalinga war , found solace and peace of mind in the Dhamma and then to repay his debt to the Boudhha , He launched a vigorous compaign to preach and propogate the sublime teaching of the blessed one , with his energetic efforts , The Great Ashoka took out Buddhism from the caves and monasteries and made it a National and International Religion of India . then Buddhism dominated the Indian scene in all fields.

Buddhism based on individual freedom, social equality , fraternity and kindness hence it reached to all level . Buddhism spread in Maharashtra through the trade. The International trade and the excess production in agriculture increased and inspired the art and skill in the region of maurya and satavahana many Viharas were built up in Maharashtra .Many Viharas were ruin but the evidence remain in form of caves, Near about 1000 Buddhist caves were found in 60 different parts of Maharashtra . sea part of Dahanu to Nasik has Indragad , Tringalwadi and Nasik caves . The Trade route to Sopara , Kalyan , Thane through Naneghat , towards Junner there are Jivdan Vihar Pulu-sonala , Naneghat Junner Buddhist Caves and find the port of Sopara , Kalyan and Thane to Borghat Sawaghat , Kanheri , Bhaje , Karle , Bedsa , Shelarwadi caves . Gomasi From the port of chaul , Rojapur to Mahad Warandaghat towards the Ter there are Kuda, Mahad , Kol , Shirwad caves . From Dabhol and Chiplun to Kumbhar Lighat towards kashad and We find Chiplun and Kashod caves. From Bharuch port to paithan We find Pitalkhara caves . From the rout of Ujjain. Mahishmati to paithan there is Ajantha.

The pillars in Karle cave was donated by Theratul of Sopara namely Satimita was inscripted on it. The evidence found about inscription it caves. All evidences shows that the followers of Buddha were numerous in Maharashtra found in the excavation from Mauryan Period in 300 AD. And many things are related to Buddhism specially Chaitya , Vihar , Caves etc. It shows that Buddhism in Maharashtra was spread not only in caves of Bhikkus but all over in Maharshtra in common people inscription on caves, shows the donor of all levels who were the followers of Buddhism.

Buddhism has had a history of some are thousand years in Maharashtra Royal support was an important elements in its spread and prosperity . The earliest dynasty to claim Maharashtra as a part of its empire was that of the Mauryas. Inscriptional evidence of Mauryan rule over the Bombay and Kokan region comes during the time of Ashoka (274-237 B.C.) . A fragment of Ashokas rock edit (viii) was found at Sopara which may have been the district head quarters of the Maurayan Empire during time of Ashoka . The Satvahana Inscription occurs at Naneghat , Karle , Bhaja , Bedsa , Khada and Kanheri . The Vakataka inscription at Ajanta suggest the patronage enjoyed by the Buddhist monastic establishment at Ajanta .

The kings who ruled over Maharashtra from time to time wheather sakas, satavahanas , Vakatakas and Rastraktus was but they supported the Buddhism establishment as a matter of political and public policy . It is highly probable that the Buddhism had arrived in Mashrshtra to 450B.C. The introduction of Buddhism in to Western India , it is generally stated can't be placed before the region of the great Ashoka of around 250 B.C. such an argument is based exclusively on archaeological evidence and ignorance or dismisses out of hand ,literally evidence to the countra ry. The Sutta Nipatta's regarded as one of the oldest text on grounds of the antiquity both of its idias and its language perhaps some of the oldest part of this work are the Atthakvagga and the parayanavagga . A Commentery on these two parts is the Niddesa , included in canonical pali literature, This canon seems to have been closed for all practical purposes by the time the third Patliputra council came to be held around 237 BC.

The Bavari story is very old and there is no reason to question its authentically. There is nothing inherently rayable in a group of people from the Aurangabad region hearing of the Buddha undertaking a Journey in quest of the master. According to some account s a few of Baveris disciples returned to the Deccan after their conversion and probably founded the first monastic settlement there the route followed by them is of great relevance to us in determining the spread

*Asst. Profesor, Dr. Babasaheb Ambedkar Siddhu Kahnu Murmu Center for Dalit and Tribal Studies, MGAHV, Wardha, INDIA

of Buddhism from the north and east to the south and west . If the event is of a historical nature and we see no reason to doubt its essential anthenticity, it may be placed before 486BC. i.e. before the passing away of the Buddha . The literary source which gives evidence about the existence of Buddhism in Maharashtra is the story of Bavari. The story of Bavary and his disciples found in the preamble to the parayanavagga is a great significance for the beginning of Buddhism In Maharashtra , Bavari was a Brahmanai anchorite who had his Asramas near Alka in the Ashoka country . (Ashoka has been identified with the area now covered by the Nanded Nizamabad-Aurangabad region of Maharashtra and Andhra Pradesh) Bavari came to hear of the Buddha and his mission in some what miraculous circumstances and sent his 16 Brahmanas disciples to meet with Buddha in savatti. The text describes the rout taken by Bavaris disciples from Alaka to Magadha.Bairat is also associated with Ashokan edicts , indicating its importance in Buddhist history.during the Ashoka time there may have been more such instances of people from the surat . Broad area travelling to Binar and bringing Buddhism back with them . The frequent contacts between Broach and sopara may also have had Buddhistic implication.

Ashoka had definitely exposed Buddhism as his personal faith and according to Buddhist tradition , undertook extensive building activity , Ashoka's empire included the Bombay area as is indicated by a copy of his edict discovered at sopara presumed to be the headquarters of the Maurayas. Ashoka is Law of morality prevailed among the rashtrikas ,peterikas and Bhojas and it may be expansion of already existing nuclear Buddhist communities in these area of Maharashtra . Theravadi sangha sent missions to various parts of India and to Ceylon. Among these places mentioned are Aparanta to which yonarakkhita was dispatched and Mahadhammarakkhita sent in Maharashtra.

It is highly probable the Buddhism had arrived in Maharashtra by 450 BC. If not earlier. They may have taken routes along Ujjeni Mahissali-Bodhan-paithan route through the Nagpur region and through Bairat Broach-sopara route . Before 250 BC the Buddhist communities in the region Maharashtra must have been very small possible scattered monastic settlement house building of bricks . By 200 BC. the Buddhist communities began to use excavated dwelling in the Borghat , The Nasik region and Ajanta these excavated dwelling and shrines give us a more less connected history of Buddhism in Maharashtra until about the 11th century.

Buddhism was in a flourishing state of Maharashtra and several caves were excavated at Bhaja, Kondane, Kharhad, Bedsa, Karle, Nasik, Junnar & Ajanta during the rule of Satvahanas. In Maharashtra recently only caves are available in the form of residential and others, residential form of Bhikkhus like Vihar, Adhyayog, Pasad and Himmiya caves are found along the tradesman way farer and having natural beauty places in Maharashtra. In the west Maharashtra in hilly area along the Sahyadris and its beautiful surroundings. In Maharashtra on and average there are one thousand caves at sixty places engraved. Among them 70% are before AD 300. In these caves 222 engraved on slab stone which are readable of period BC 300. In 156 inscription these are the names of donors among them no source of way of subsistence are found from the carving. Excluding them 35% are tradesman, 23% rules, 12% officers, 12% Bhikkhus and Bhikkuhunis, 10% farmers and likewise doing other occupations and 8% mohammedan (any individual of foreign race) with this percentage it shows that businessman were mostly attracted towards the Buddhism. But this percentage should not be treated as fact and hardly depend upon circumstances. Agriculturist might be on large scale devotees and donors. It is possibility the gifts could be used for building Viharas rather than giving help to construct linis along the tradesman way.

It has been noticed also that most of the monastic establishments in western India were also centers for monastic education and Thera Bhadantas were the qualified teachers some of the most outstanding monastic educational centers in Western India were at Ajanta, Bhaja, Junnar, Kanheri, Karle, Kuda and Nasik.

The development of Buddhism is one of the most significant events in the long cultural history of India. Buddhism was a product of timeless wisdom of the Buddha and his own immediate cultural background rooted in the Magadha in the 6th Century B.C. great changes were occurred in Magadha during that century. During the time of Buddha Magadha was completely Brahmanised land. The pali text mentioned kings such who used to perform a various vedic sacrifices. Due to the simple doctrines of Buddha, Magadha changed his social life. Bhikkhus promulgated the doctrines and the path of good living called Dhamma in western part of India. They co-ordinate in their efforts to development of Buddhism. They had only one objection the life that was the spread of their faith. They worked from morning to till night to preaching the gospel of Buddha. They could beg when they felt hungry and devote the rest of their time to their faith. Buddha gave advice to them to go and wander for the gain of many for the welfare of the many out of compassion for the world. Ashoka's own son Mahendra and daughter Sanghamitra went to Sri Lanka sthavir Mahadeva was dispatched to Mahishanamandala (Mysore, Khandesh) Yavan Dharmarakshita was dispatched to Ararantak Pradesh, Mahadharmarakshita was dispatched to the rest of the Maharashtra Sthavir Maharakshita was dispatched to yavana Pradesh it is cited in Dipvamsa edited by Sastri Swami Dwarikadas.

The edicts of Ashoka styled as Dhammalipi were intended to propagate Buddhist moral precepts. In his edicts the world Dhamma appears very frequently Dhamma means Buddhist religion. It also means the doctrine of the Buddha. Ashoka edicts were thus primarily mean to propagate the moral precepts according to the doctrine of the Buddha. It helps in creating a positive atmosphere for the propagation of Buddhism.

During the Mauryan period to ksatrapa period Buddhism

flourished as the predominant religion in India. A large number of viharas chaityas, stupas and other establishment were constructed during this period for the Buddhist sangha and lay followers in Maharashtra.

References :-

1. More M.S. (2004), Maharashrtatil Baudha Dhammacha Itihas ," Kaushaly Prakashan, Aurangabad. M.S.
2. Dixit M.G. (1941), Valabhi the Buddhist University' Historical and Economical studies ,Fergusson college of Pune.
3. Warder,A.K.(1970),Indian Buddhism, Motilal Banarsidas , Delhi
4. Gokhle.B.G.(1976), Buddhism in Maharashtra ,"AHistory, popular prakashan Bombay.
5. Ancient India,
6. Mahavansa
7. Gokhale .B.G," Thervada Buddhism in western India" in journal of the American oriented society,92/2.
8. Neharu. J.(1947) Glimpseses of world history.O.V.P.New Delhi.
9. Sastri, Swami Dwarkadas (1996) Dipvamasaa .Buddha Akar granthamala, M.G.Kashi vidyapith Vanarasi (U.P.).
10. Altekar.A.S. (1975) Education in Ancient India ,Manohar Prakashan,vanarasi (V.P.).
11. Chaudhari, B. N. (1969), Buddhist Centers in Ancient India, Calcutta Sanskrit College.
12. Datta, N (1954), Early Monastic Buddhism, Indological Book House, Varanasi.
13. Omvedt, Gail (2003) Buddhism in India, Sage Publication, New Delhi.
14. Conze, Edward (1965) Buddhism, Essence and Development, New York, Harper Trachbooks.

****

राष्ट्रीय चैतन्य के प्रकाश में आधुनिक इतिहास लेखन - एक विश्लेषण

डॉ. नितिन सहारिया *

प्रस्तावना - अति प्राचीन काल से भारतीय परम्परा में यह अवधारणा प्रचलन में रही है कि हम ब्रह्मा से उत्पन्न मानस पुत्र मनु की संतान हैं और मनु को ही सर्वप्रथम पृथ्वी का शासक होने का गौरव प्राप्त है। इसलिये प्रथम शासक होने के कारण वे ही सृष्टि के प्रथम विधि नियन्ता है। साथ ही अन्यत्र जन-जन में यह विश्वास बना रहा कि वेद अपौरूषेय हैं और ब्रह्मा के मुख से समाज कल्याण के निमित चिन्तकों व मनीषियों ने इनका प्रणयन करके इन्हें संकलित किया है। इस निमित विविध धर्मग्रन्थो में इस प्रकार के कथानकों को स्थान दिया गया। साथ ही मनु से प्रचलन में आई नृवंश परम्परा और युग प्रवर्तक के रूप में मनु की वंशावली का उल्लेख भी हमें इन ग्रन्थों से प्राप्त होता है। यद्यपि यह एक कथानक है जिसे भारतीय परम्परा सृष्टि के आदिकाल से दुहराती आ रही है। इसी कथानक के साथ पल्लवित व विकसित होते अनेक प्रसंगों, घटनाक्रमों, राजाओं, राजवंशों, साम्राज्यों से संबंधित उद्धरण तथा सांस्कृतिक अभिव्यजंना के स्वर भी इन धर्मग्रन्थों में देखने व सुनने को मिलते हैं। यह सब एक कथानक होते हुए भी भारतीय परिप्रेक्ष्य में एक साकार घटनाक्रम है जो कि युगों-युगों से भारतीय चिन्तन की परम्परा में परिवर्धन व परिमार्जन के साथ नाराशंसी और गाथाओं के रूप में प्रतिष्ठापित होता रहा। इसके अलावा परम्पराओं व संस्कृति की झलक देखने को मिलती है जो विश्व के अधिकांश भाग को अपने प्रभाव में लिये थी। परम्पराएँ भी अपने भीतर एक सत्य को समाहित किये हुये होती है। किन्चित अंतर दृष्टि व व्याख्या का है। इस प्रकार का चिन्तन भारतीय जनसामान्य में श्रमण परम्परा के रूप में प्रवाहित होता रहा और प्रकारान्तर से भारतीय ज्ञान के पुरोधा मनीषियों के प्रयासों से इतिहासरूपी धर्मग्रन्थों के रूप में संकलित होता रहा। पुराज्ञान की इस विद्या के संकलन के पीछे भारतीय मनीषा का एकमेव उद्देश्य था कि -

'धर्मार्थकाममोक्षाणामुपदेश समन्वितम्।
पुरावृतं कथायुक्तं इतिहासं प्रचक्षते' !!

यह पुराज्ञान, कथाएं, शिक्षाप्रद जीवन वृत्त, वंशावली, इत्यादि विद्याओं से ही इतिहास का बोध होता है। प्रकारान्तर से इस प्रकार के इतिवृत्तों, मान्य परम्पराओं, रीति-रिवाजों जो कि व्यक्ति की ऐहिक लौकिक परलौकिक भौतिक व आध्यात्मिक उन्नति के लिए आवश्यक थे, जैसे विषयों को इतिहास कहा जाने लगा। ज्ञातव्य है कि इस प्रकार के इतिहास संबंधी उद्धरण प्राचीन धर्मग्रन्थों में पढ़ने व सुनने का मिलते हैं। भारतीय इतिहास के दर्शन को भारतीय दर्शन के माध्यम से ही समझा व आत्मसात किया जा सकता है। भारतीय इतिहास के वैशिष्टय को 'एकं सत् विप्रा : बहुधा वदन्ति'[1] जैसे बोध वाक्य में ढूंढ़ने की आवश्यकता है। किन्तु भारतीय इतिहास की इस अवधारणा को 18 वीं शताब्दी के विद्वानों के द्वारा स्वीकार नहीं किया गया। आधुनिक परिप्रेक्ष्य में इतिहास को वैज्ञानिक दुष्टिकोण से देखा जाने गया है। आधुनिक मनुष्य आत्मचेतन है और इस कारण अब इतिहास की उन्नत श्रृंखला में अतीत, वर्तमान और भविष्य परस्पर रूप से संलग्न है। इतिहास तब प्रारम्भ होता है जब आदमी यह सोचना प्रारंभ करता है कि समय केवल प्राकृतिक प्रक्रिया नहीं है। केवल ऋतुओं का आवर्तन और मानव जीवन का चक्र ही इसमें सम्मिलित नहीं है, बल्कि यह विशिष्ट घटनाओं का एक क्रम है, जिसमें संचेतन रूप से मनुष्य सक्रिय है और जिसे वह अपनी चैतन्यता से प्रभावित कर सकता है। अपनी तर्कशक्ति के प्रयोग से अपने परिवेश को समझने व तद्धरूप क्रिया करने की दीर्घावधि संघर्ष ही इतिहास है।[2]

भारत में आधुनिक विद्या के रूप में इतिहास निर्धारण व लेखन का कार्य एक विषम परिस्थिति में, जब वह परतन्त्र था, एक दीर्घ व सुनियोजित लक्ष्य विशेष को ध्यान में रखकर ब्रितानी सम्प्रभुओं के द्वारा किया गया। उन्होंने अपने इस विशिष्ट निहितार्थ को पूर्ण करने के लिए इस काल्पनिक विचार को प्रसारित व प्रचारित किया कि 'भारत में अंग्रेजों का आगमन एक दैवीय योजना का परिणाम है क्योंकि ब्रितानी शासन व विधि के कारण भारत का पिछड़ापन समाप्त हो जायेगा और भारत में एक नवीन राजनीतिक चेतना का सूत्रपात होगा। ऐसे में उन्होंने अनुकूल पक्षों को उजागर करने, प्रतिकूल पक्षों एवं तथ्यो के प्रति गजनिमीलिका का दृष्टिकोण बनाने अथवा स्वयं के अनुरूप बनाकर प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया। इस लक्ष्य के पुरोधा के रूप में मिला, मैक्समूलर, फिशर, स्मिथ, जोन्स व अन्य थे जिन्होंने इतिहास के माध्यम से भारतीय जनमानस के सामने इतिहास को एक ऐसे रूप में प्रस्तुत किया जो कि भारतीयों के लिए सिर्फ हीनता का विषय था। इस प्रकार इतिहास का वैचारिक प्रभाव इतना था कि उस साम्राज्यवादी विचारधारा से प्रस्फुटित हुई अन्य विचारधाराओं द्वारा स्वतंत्रता के पश्चात् भी भारत के इतिहास व पाठ्यक्रय को कलंकित करने का प्रयास जारी रहा। ऐसे वैचारिक झंझावतों के मध्य जब भारत का लिखित इतिहास पढ़ाया जाता है तो उससे भारत की श्रेष्ठता का भान न होकर दीनता व हीनता का ही बोध होता है।

इसी ब्रितानी साम्राज्यवादी इतिहास लेखन की धारा के समानान्तर इतिहास लेखन की राष्ट्रवादी धारा का प्रादुर्भाव हुआ। इसके गर्भ में यह विचार निहित था कि 'यदि पाश्चात्य विद्वान साम्राज्यवाद को पोषित करने के लिए भारतीय इतिहास को विकृत कर सकते हैं तो भारतीय भी राष्ट्रवाद के पक्ष में भारतीय इतिहास की वास्तविकता व यर्थाथता को प्रकाश में लाकर इसका उपयोग राष्ट्रीय चेतना के लिए कर सकते हैं।' 19 वीं शती के अन्त में ढाई दशकों में राष्ट्रवादी आन्दोलन के विकास ने भारतीय इतिहासकारों को इतिहास लेखन हेतु आधार प्रदान किया। इन इतिहासकारों ने ब्रितानी इतिहासकारों के बहुत से अस्पष्ट रवैयों के विरूद्ध प्रतिक्रिया व्यक्त की। भारतीय और प्राचीनता एवं स्वतंत्र अस्तित्व पर (यूनानी अथवा अन्य संस्कृति से, लिखकर भारत को गर्व का अनुभव कराया। इन रचनाओं में अद्भुत निरन्तरता पर बल दिया गया।'[3] वस्तुत: राष्ट्रवादी इतिहास लेखन

* शासकीय एम.एम.महाविद्यालय, कोतमा, जिला-अनूपपुर (म.प्र.) भारत

की जो परम्परा भारत में विकसित हुई उसका 19 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में ही प्रारम्भ हो चुका था। राष्ट्रवादी इतिहास लेखन के प्रेरणापुन्ज के रूप राष्ट्रीयता के प्रसार के फलस्वरूप लाला लाजपतराव, आर.जी.भण्डारकर, वी.के.राजवडे, आर.सी. मजुमदार, वी.डी.सावरकर जैसे अन्य प्रमुख इतिहासकार सामने आये। स्वतंत्रता के पूर्व व पश्चात इतिहास लेखन की यह राष्ट्रवादी चेतना अनवरत रूप से जारी रही। डॉ. काशी प्रसाद जायसवाल, ए.एस. अल्तेकर, पी.वी. काणे, राजबली पाण्डेय, वासुदेवशरण अग्रवाल, गौरीशंकर झा, हरिहरनाथ त्रिपाठी, डॉ. ताराचन्द्र, आर.पी. त्रिपाठी, डॉ.गोविन्दचन्द्र पाण्डेय जैसे चिन्तकों ने इस परम्परा को आगे बढ़ाते हुये भारतीय इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठों को जनसामान्य तक लाने का प्रयास किया। प्रस्तुत शोध-पत्र में वर्तमान वैश्वीकरण के दौर में इतिहास की जो नवराष्ट्रवादी दृष्टि उभरकर सामने आयी है उसके विविध पक्षों की युक्तिसंगत गवेषणा का प्रयास किया।

नव राष्ट्रवादी इतिहास लेखन – पिछले तीन दशको से विश्व भूपटल पर कुछ पाश्चात्य राष्ट्रों द्वारा स्वयं की सांस्कृतिक विरासत की पुरातनता को श्रेष्ठ सिद्ध करने का प्रयास किया जा रहा है कि सम्पूर्ण विश्व का सांस्कृतिक परिदृश्य एक ही है। इसी नूतन आयाम के परिणामस्वरूप बाजारवाद व भौतिकवाद को बढ़ावा मिला है। हमारी संस्कृति, धर्म और राष्ट्र पर वर्तमान में प्रबल आक्रमण हो रहे हैं। विश्व का परिदृश्य आज बाजार के समरूप प्रतीत होता है। वैश्वीकरण के नाम पर तथाकथित प्रगति के नाम पर भारतवर्ष के मूल सांस्कृतिक मूल्यों पर कुठाराघात किया जा रहा है। हमारी कृषि प्रधान व ऋषि प्रधान संस्कृति को नष्ट करने का प्रयास विगत 200 वर्षो से हो रहा है। यह एक प्रकार की आर्थिक परतन्त्रता का जाल है, जो इस देश के लिए राजनीतिक स्वतन्त्रता के बाद पुन: एक परतंत्रता का वातावरण तैयार कर रहा है। इतिहास भी विश्रृंखलन के इस दौर से गुजर रहा है। महर्षि अरविन्द ने अपनी कृति 'संस्कृति के आधार' में इस सांस्कृतिक विश्रृंखलन की परिकल्पना को अभिव्यक्त किया है और उन्होंने भारतवासियों का ध्यान इस और आकर्षित करने का प्रयास भी किया है कि हिन्दू जीवन पद्धति को पाश्चात्य संस्कृति के कुप्रभावों के दौर से गुजरना पडेगा।[4] इसी प्रकार की अवधारणा को प्रकारान्तर में सामवेल हॉटिंगटन ने अपनी पुस्तक 'द क्लैश ऑफ सिविलाईजेशन ऑफ द वर्ल्ड आर्डर' में प्रतिपादित किया है कि विश्व परिदृश्य में आज विचारों का टकराव समाप्त हो चुका है अर्थात शीत युद्ध समाप्त हो चुका है लेकिन हम सांस्कृतिक टकराव के युग में प्रवेश कर चुके हैं। 19 वीं से 20 वीं शताब्दी में इतिहासकार स्पेंगलर भी इस भौतिक प्रगति को ध्यान में रखकर यूरोपीय संस्कृति के अंत की बात करते हैं। वस्तुत: यहाँ इन नूतन आयामों को वैश्वीकरण या उससे प्रस्फुटित होती नवसाम्राज्यवाद के रूप में देखना श्रेयस्कार होगा। एडवर्ड सईद (लिटरेरी क्रिटिसिज्म) और एजाज अहमद (इनथियरी) 1992-93 इंडेन जैसे अमरीकी इतिहासकारों ने लक्ष्य विशेष को ध्यान में रखकर लिखना प्रारंभ किया। इस प्रकार के दृष्टिकोण से वे हमारा ध्यान उन प्रश्नों की व्याख्या में लगाना चाहते हैं जो कि साम्राज्यवादी मीमांसा के फलस्वरूप हमारे समक्ष प्रस्तुत हुये हैं। वस्तुत: इन विद्वानों का लक्ष्य भारतीय जनमानस को मानसिक रूप से गुलाम बनाकर उनकी संस्कृति को निम्नतर प्रदर्शित करना है तथा अपने बाजारवाद के स्वार्थ को पूरा करना है। इस प्रकार की वैश्विक इतिहास लेखन की अवधारणा के प्रतिरोध स्वरूप इससे अधिक भारतीय इतिहास और संस्कृति व उसकी पुरातनता व मूल्यों को सहेजने व उसकी श्रेष्ठता को चिरन्तन व जनोपयोगी बनाये रखने के निमित राष्ट्रवादी विचारधारा का नवराष्ट्रवादी विचारधारा के रूप में रूपान्तरण हुआ। इस महानतम उद्देश्य के लिए कार्य करने वाले मनीषी इतिहासकार भारत की प्राचीन संस्कृति ओर परम्परा में वर्तमान वैज्ञानिक एवं भौतिक जगत के साक्ष्यों को ढूँढने का प्रयास चल रहा है जिसके परिणाम सकारात्मक होते दिख रहे हैं। आज भारतीय मूल्यों की श्रेष्ठता व प्राचीनता विश्वस्तर पर मान्यता प्राप्त कर रही है। इन प्रयासों में वेदों में विज्ञान और तकनीकी की विभिन्न अवधारणाओं को खोजा जा रहा है। नूतन अनुसंधानो व पुरातात्विक स्थलों पर हो रहे नवीन उत्खनन कार्यो से प्राप्त पुरा सामग्रियों का साहित्यिक स्त्रोत के साथ सामंजस्य स्थापित किया जा रहा है। भारतीय चिन्तकों व मनीषियों की विज्ञानपरक अवधारणाओं को प्रकाश में लाने का प्रयत्न किया जा रहा है।

भारतीय संस्कृति पर होने वाले प्रबल सांस्कृतिक आक्षेपों व दुश्चक्रों के प्रतिरोध में राष्ट्रवादी विचारधारा सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के रूप में सामने आ रही है। इस विचारधारा के इतिहासकारों, जिसमें पुरातत्ववेत्ता भी समान रूप से सम्मिलित हैं यथा- विष्णुश्रीधर वाकणकर, श्री स्वराज्य प्रकाश गुप्त, बी.बी.लाल, श्री राम साठे, डॉ. शिवाजी सिंह, प्रो. ठाकुरप्रसाद वर्मा, डॉ.श्रीनिवास कल्याणरमण, श्री बालमुकुन्द, डॉ.सीताराम दुबे, ईश्वरशरण विश्वकर्मा, के .एन.दीक्षित, डॉ. शरद हेबालकर, प्रो.सतीशचन्द्र मित्तल, एस.आर.राव, वी.डी.मिश्रा, भगवान सिंह, मीनाक्षी जैन, डी.एन.त्रिपाठी, बी.एन.मिश्रा, आलोक त्रिपाठी, प्रो. खडगवाल, आर.एस.विष्ट, के.एन.शास्त्री, स्वामी शंकरानन्द, डॉ. पुसालकर, जी.सी. पाण्डेय, राजाराम, कुँवर बहादुर कौशिक, गुंजन अग्रवाल, प्रदीपराव, प्रो.आनन्द मिश्रा, दामोदर झा, डॉ. मक्खनलाल, मस्तराम सिंह, डॉ. रत्नेश त्रिपाठी, डॉ. रामदेव भारद्वाज इत्यादि विद्वानों ने भारतीय संस्कृति के स्वर्णिम व उत्कृष्ट पक्षों को सामने लाकर उन सभी मिथकों का पटाक्षेप कर दिया है जिसके आधार पर पाश्चात्थ विद्वानों व उनके मानस पुत्रों ने भारतीय समाज व संस्कृति को विभाजित करके भारतीय इतिहास की दिशा को भ्रमित करने का षडयंत्र रचा था।

इन विद्वानों ने भारतीय इतिहास को विघटित करने वाली अवधारणाओं यथा- आर्य आगमन व आक्रमण, आर्य-द्रविड सभ्यता, वैदिककालीन संस्कृति, प्राचीन भारत में इतिहास लेखन की परम्परा व इतिहास बोध, भारतीय कालगणना, पुराणों की ऐतिहासिकता, बुद्ध की तिथि, महाभारत युद्ध, प्राचीन नगरों व राजवंशओं की प्रमाणिकता व ऐतिहासिकता, अयोध्या, भारतीय परम्पराओं को मूल्यपरकता, मध्यकालीन संघर्ष, 1857 का स्वातंत्र्य महासमर, स्वतन्त्रता आन्दोलन जैसे विविध विषयों को सामने लाकर राष्ट्रीय चेतना को जागृत ही नहीं किया वरन् इनके प्रयासों से भारतीय इतिहास लेखन की दिशा में एक नवीन युग का सूत्रपात किया। इसी लेखनावधि के नवजागरण में श्रीराम साठे ने अपनी कृति 'भारतीय इतिहासशास्त्र कथा' व 'आर्य कौन थे'? से इस वैचारिक अनुष्ठान को आधार प्रदान किया, साथ ही पूर्व के उन सभी अभिमतों का खण्डन किया जो कि राष्ट्रीय चेतना के विरोध में लिखे गये थे और उन्हे वर्तमान ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में भी स्वीकार किया जा रहा है। नवराष्ट्रवादी चेतना के अंतर्गत श्री विष्णुश्रीधर वाकणकर के अभूतपूर्व योगदान को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। भारतीय इतिहास की पुरातनता के लिए उनके द्वारा शैल चित्रों पर किये गये शोध कार्य अभूतपूर्व हैं। भीमबैठका की गुफाएँ जो कि आज विश्व धरोहर के रूप में भारतीय इतिहास की पुरातनता को सिद्ध करती हैं उनके प्रयासों का ही सुफल है। वर्तमान में सारस्वत- सैन्धव सभ्यता के यथेष्ट प्रमाण उपलब्ध हुये उसकी आधारिक संरचना के पीछे वाकणकर महोदय की प्रेरणा ने ही कार्य किया। उन्होंने लुप्त ऋग्वैदिक सरस्वती नदी के प्रवाह मार्ग पर अनुसंधान किया व

उसके प्रवाह व तटीय क्षेत्रों पर विकसित हुई नागर सभ्यता के स्थलों को खोज निकाला। इतिहास संकलन योजना के निर्देशन में वाकणकर महोदय व अन्य विद्वानों ने इस सभ्यता से संबंधित प्रश्नों जैसे–सरस्वती का मूल उद्गम कहाँ है? क्या सरस्वती हिमालय से निकलकर सिन्धु की और जाती थी? उसका पुरातन मार्ग क्या था? क्या प्राचीन सिन्धु घाटी की सभ्यता का आधार सारस्वत सभ्यता संस्कृति ही रही है? प्राचीन इक्ष्वाकु, संवरण, प्राचीनवाप, चायमान आदि राजवंशों का सारस्वत सभ्यता में क्या योगदान था? जैसे अन्य प्रश्नों का ऐतिहासिक तथ्यों के आलोक में निराकरण करने का प्रयास किया है।[7]

डॉ. श्री निवासन कल्याणरमण ने इस शोधयात्रा के आधार पर ही सरस्वती पर सप्त खण्डात्मक सन्दर्भ ग्रन्थों की रचना की। जिसमें भारतीय इतिहास से संबंधित उस काल्पनिक विकृति से उपजी उस धुंध को लगभग समाप्त कर दिया गया जिसमें हड़प्पा सभ्यता के विनाश के लिए आर्य आक्रमण को उत्तरदायी ठहराया जाता था। उनका अभिमत है कि हिमालय से अरब सागर तक 1600 कि.मी. लम्बे क्षेत्र में सरस्वती नदी का यह प्रकटीकरण वस्तुत: भारत की सभ्यता और विश्व के सात अरब लोगों की आधारशिला का अन्वेषण है।[8] उन्होंने सरस्वती सभ्यता पर अथक प्रयास करके उस पुरातन सभ्यता को वर्तमान में पुनर्जीवित कर दिया जो कि भारतीय समाज से विस्मृत होने लगी थी। उन्होंने सरस्वती की बेबसाईट (http//sarsvati.simplnet.comhttp//www.probys/sarsvati) निर्मित कर सरस्वती से संबंधित विविध विषयों पर 30 हजार फाईलें उपलब्ध कराई हैं साथ ही 2000 ई.में, 1115 पृष्ठों का विस्तृत ग्रन्थ प्रस्तुत किया है। इस ग्रन्थ व सात खण्डों में सरस्वती सभ्यता, नदी, प्रौद्योगिकी, शिलालेख आदि अन्य विषयों पर एतिहासिक परिप्रेक्ष्य में युक्तिसंगत व्याख्या प्रस्तुत की है।[9]

इसी प्रकार की वैचारिक मिथकता को अमरीकी पुराविद्वों डॉ. जार्ज पोसेल, डेल्स एवं एलिजावेथ राल्फ ने 'इंडस सिटिज' नामक पुस्तक में अमान्य कर दिया है। साथ ही यह भी सिद्ध करने का प्रयास किया है किस प्रकार इस विषय को विकृत किया गया है।[10] इस विषय पर डॉ. देवन्द्र सिंह चौहान का कार्य भी उल्लेखनीय है उन्होंने यह सिद्ध करने प्रयास किया है कि ऋग्वेद में 75 मंत्रों में सरस्वती का उल्लेख हुआ है जो कि यह प्रमाणित करता है कि इस ग्रन्थ की ऋचाएँ इसी नदी के तट पर रची गई है।[11] वस्तुत: सरस्वती सभ्यता ही वैदिक हिन्दू संस्कृति की प्राचीनता का द्योतक है। नूतन अनुसंधानों के आलोक प्रख्यात इतिहासविद्धों ने गौरवपूर्ण भारतीय इतिहास की उस विभाजन रेखा का भी पटाक्षेप कर दिया है जिसके द्वारा पाश्चात्य विद्वानों ने भारतीय इतिहास को विभाजित व विकृत किया था।

वर्तमान राष्ट्रवादी विचारधारा के अग्रदूतों ने आर्य–अनार्य जैसे काल्पनिक विखण्डन के सिद्धान्त को छिन्न–भिन्न कर दिया है। इस दिशा में विद्वानों का प्रयास स्तुत्य है। श्री राम साठे महोदय ने अपनी कृति 'आर्यन्स हू वेयर देय (1991),[12] 'वैदिक आर्य समस्या एक चिन्तन' (1998),[13] में आर्य आक्रमण व प्रजाति जैसे मिथक को अस्वीकृत करते हुये नवीनतम ऐतिहासिक व्याख्या प्रस्तुत की है। डॉ. शिवाजी सिंह 'ऋग्वैदिक आर्य और सिन्धु सरस्वती सभ्यता' इस दिशा में किया गया एक सफलतम् अनुसंधान है।[14] इसके अतिरिक्त भगवान सिंह ने ऋग्वेद की व्याख्या कर तर्क प्रस्तुत किया है कि सिन्धु सभ्यता वैदिक ही थी तथा वैदिक सभ्यता नागर जीवन शैली की द्योतक है जिनकी सामाजिक संस्थाएँ विकसित थीं और वे किलेबन्द नगरों में रहते थे। उनका व्यापार समृद्ध व विस्तारित था।[15] जगतपति जोशी ने हडप्पा संस्कृति के सभी चरणों के स्थलों की सरस्वती घाटी में सर्वव्यापकता को स्वीकर किया। है।[16] ऐसा ही मत वर्तमान में अनेक इतिहसकारों का है।[17] इसके अलावा इस मत का समर्थन आस्को परापोला ने 'साउथ एशियन आर्क्योलॉजी' में तथा ग्रेगारी एल. पोशाल ने अपने हड़प्पन सिविलाईशन: एक कन्टेम्परिर पर्सपेक्टिव नामक ग्रन्थो के माध्यम से किया है। अत: इस प्रकार के नूतन अभिमत पाश्चात्य विद्वानों की उस मिथ्या वस्तुनिष्ठ इतिहास अवधारणा पर पश्न चिन्ह लगाते हैं जिसके माध्यम से उन्होंने भारत के स्वर्णिम इतिहास को विकृत किया। वेदों में वर्णित सरस्वती नदी का अस्तित्व उपग्रहों से प्राप्त चित्रों के आधार पर भी प्रमाणित हो चुका है।[18] इसके अतिरेक लेखन की इस नवपुरानत विद्या के अंतर्गत डॉ. ठाकुर प्रसाद वर्मा व स्वराज्य प्रकाश गुप्त की महत्वपूर्ण कृति 'अयोध्या वैदिककाल से वर्तमान तक' का उल्लेख करना भी समीचीन होगा जिसे माननीय उच्चतम न्यायालय ने अयोध्या विवाद में प्रमाण के रूप में स्वीकृत किया है।

वर्तमान इतिहास लेखन के क्षेत्र में इतिहास को राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में देखने व समझने की चेष्टा की जा रही हैं। जिसके कि सकारात्मक परिणाम अब सामने आने लगे है।डॉ. रवि प्रकाश आर्य द्वारासम्पादित 'आर्यावर्त का प्राचीन इतिहास' में सृष्टि के प्रारम्भ से कलियुग की 51 वीं शताब्दी तक का भारत के विभिन्न राज्योंके राजनीतिक इतिहास की सागोपांग व्याख्या मिलती है।[19] भारतीय कालक्रम को लेकर भी पूर्व के विद्वानों का दृष्टिकोण अपेक्षापूर्ण था। रोमिला थापर का यह मत कि इस अवधारणा को लेकर चलने वाले विद्वानों ने मिलके अन्य विचारों की काट तो प्रस्तुत कर दीं मगर मिल द्वारा प्रस्तुत काल विभाजन को चुनौती नहीं दी।[20] वर्तमान शोधों के प्रकाश में निराधार प्रतीत होता है। अभी एक दो दशकों में भारतीय कालगणना व उसकी पद्धति को लेकर विद्वानों ने नूतन आयाम स्थपित किये हैं। इसी श्रृंखला में वासुदेव पोद्दार का ग्रन्थ 'विश्व की कालयात्रा' व डॉ. दामोदर झा का 'सृष्टि का इतिहास' महत्वपूर्ण शोध ग्रन्थ हैं। इन ग्रन्थों में सृष्टि की उत्पत्ति से लेकर वर्तमान तक कि भारतीय कालावधि व उसके विविध उपांगो का वैज्ञानिक विश्लेषण मिलता है।[21] श्री राम साठे का ग्रन्थ 'महाभारत युद्ध कालनिर्णय समस्या' एक शोधपरक कृति है जिसमें महाभारत युद्ध की तिथि को खगोल विज्ञान, साहित्यिक व पुरातात्विक साक्ष्यों के आधार पर निर्धारित किया गया है। इस ग्रन्थ में पाश्चात्य विद्वानों के भारतीय कालक्रम से संबंधित मिथक अवधारणाओं का भी खण्डन किया गया है जो कि वर्तमान सन्दर्भ में अवश्यम्भावी भी प्रतीत होता है। अब यह स्वीकार किया जाने लगा है कि महाभारत का युद्ध 5117 वर्ष पूर्व हुआ था।[22] इसके अतिरिक्त डॉ. रविप्रकाश आर्य द्वारा संपादित कृति भारतीय कालगणना का वैज्ञानिक एवं वैश्विक स्वरूपय में मत व्यक्त किया है कि 'भारतीय कालगणना की सर्वाधिक प्राचीनता, सूक्ष्मता एवं वैज्ञानिकता इस बात का स्पष्टतया प्रतिपादन करती है कि मानव का प्रथमोन्मेष इसी भूखण्ड पर हुआ एवं ऋषियों ने किसी व्यक्ति, जाति, देश, धर्म को आधार न मानकर काल के मौलिक अस्तित्व को स्वीकार करते हुए काल के सूक्ष्मातिसूक्ष्म अंश से लेकर वृहत्तम स्वरूप का परिगणन व प्रतिपादन किया। इस प्रकार कहा जा सकता है विद्वानों के द्वारा भारतीय कालगणना के परिप्रेक्ष्य में किये गये शोध कार्य प्रकारान्तर में भारतीय इतिहास को एक नवीन दृष्टि प्रदान करेंगे। यह निर्विवाद सत्य है कि विश्व का एक बड़ा भाग भारतीय संस्कृति के प्रभाव में था। अब इसके पक्ष में पुरातात्विक प्रमाण भी उपलब्ध हो रहे हैं जिनके आधार पर कहा जा सकता है कि वैदिक संस्कृति ही विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है व समस्त सभ्यताओं व सम्प्रदायों की जननी है। डॉ. शरद हेवालकर का शोध ग्रन्थ 'कृणवन्तों विश्वर्मायम' व 'भारतीय संस्कृति का विश्व संचार' इस विषय को प्रमाणिकता

प्रदान करने का महत्वपूर्ण व सार्थक प्रयास है। उन्होंने भारतीय संस्कृति व परिवेश से आच्छदित भू-भागों का विस्तार से वर्णन किया है।[24] प्राचीन भारतीय समाज व संस्कृति के पक्ष में विश्वस्तर पर कुछ सकारात्मक अवधारणा साकार हुई है। गोविन्द चन्द्र पाण्डेय की 'भारतीय समाज तात्विक विवेचन' एवं 'स्पिरिचुवल विजन एण्ड सिम्बालिक फार्म्स इन ऐंश्येण्ट इंडिया', तथा रमेन्द्रनाथ नन्द्री का 'प्राचीन भारत में धर्म के सामाजिक आधार' भारतीयों के उच्च और समृद्ध सामाजिक जीवन को प्रकाश में लाने का अद्वितीय प्रयास है।

आधुनिक इतिहास के लेखन पर कुछ प्रमाणिक ग्रन्थ अभी पिछले कुछ वर्षो में प्रकाशित हुये हैं। इस क्षेत्र में डॉ. सतीशचन्द्र मित्तल के अभूतपूर्व योगदान को विश्लेषित करना अपरिहार्य होगा। आधुनिक विशेषकर स्वतन्त्रता आन्दोलनों व ब्रिटिश इतिहासकारों पर उन्होने पर्याप्त दृष्टि डालने का प्रयास किया है। 'फ्रीडम मूवमेण्ट इन पंजाब', 'भारत का सामाजिक-आर्थिक इतिहास', 'विश्व में साम्राज्यवादी साम्यवाद का विकास तथा पतन' '1857 का स्वातंत्रय समर' '1857 : वनवासी नेतृत्व', आदि शोधपरक कृतियाँ उस ऐतिहासिक सत्य को उद्घाटित करती हैं जिसे आजतक सत्ता लोलुपता के कारण जनसामान्य के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया। मित्तलजी का हाल ही में प्रकाशित ग्रन्थ 'ब्रिटिश इतिहासकार तथा भारत' उन ब्रितानी इतिहासकारों पर लिखा गया ग्रन्थ है जिन्हें कि भारतीय इतिहासकार विषय प्रेरक के रूप में मान्यता प्रदान करते है।[25] उन्होंने ब्रितानी इतिहासज्ञों जोन्स, विलिक्सन, सर जान शोर, विल्सन, मिल, जेम्स टाड व अन्य इतिहासकारों की स्वार्थपूर्ण दृष्टि को उजागर किया है। साथ ही यह भी उद्घाटित करने का प्रयास किया है कि किन उद्देश्यों को ध्यान में रखकर इन पादरीरूपी इतिहासकारों ने भारतीय इतिहास को किस प्रकार से विकृत किया है। इसके अलावा उनकी एक महत्वपूर्ण कृति कांग्रेस अंग्रेज भक्ति से राजसत्ता तक' (2011) तथाकथित उन कांग्रेस के कर्णधारों पर कटाक्ष करने का प्रयास है जिन्होंने स्वहितों के पोषण के लिए राष्ट्रहित को नेपथ्य में डाल दिया। उन्होंने 400 से अधिक ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि किस प्रकार 1857-1947 ई. तक के राष्ट्रीय संघर्ष को तथा इसके पश्चात् कांग्रेस द्वारा गठित सरकार ने और ब्रिटिश विद्वानों ने इस सन्दर्भ में अनेक विसंगतियों तथा भ्रमों को प्रचारित किया।[26]

इसके अतिरिक्त वर्तमान में हो रहे नूतन अनुसंधानों ने इस नवराष्ट्रवाद को गति प्रदान की है। पुराणों में भारतीय इतिहास व संस्कृति के सूत्रों को खोजा जा रहा है। वनवासी जीवन व संस्कृति के पक्षों को उद्घाटित करने की दिशा में इतिहासकार प्रयासरत हैं। इस प्रकार नवराष्ट्रवादी मीमांसा व दर्शन भारतीयों में राष्ट्रगौरव और स्वाभिमान को जागृत करने का प्रयास है साथ ही नवसाम्राज्यवाद के प्रहारों से रक्षा करने का एक सशक्त माध्यम भी है। ध्यातव्य है कि यह एक महिमामण्डन का प्रयास नहीं अपितु भारतीय इतिहास को भारतीयता की दृष्टि से राष्ट्रीय चैतन्य के प्रकाश में व्याख्यायित करने का प्रयास है।

अन्तत: यह कहना ही युक्तिसंगत होगा कि इतिहास प्रारम्भ से ही राष्ट्रीय अस्मिता को व्याख्यायित करने का विषय रहा है। प्राचीन सन्दर्भों के इतिहासपरक अध्ययन से स्वत: ही इस प्रकार की अवधारणा को बल मिलता है। निश्चित ही भारतीय संस्कृति एक गौरवशाली परम्परा की अनुगामिनी रही है और सहस्त्राब्दियों से इतिहास उस परम्परा को व्याख्यायित करने का एक सशक्त माध्यम रहा है। ऐसी ही अवधारणा व भारतीय इतिहास में एक निश्चित योजना के तहत उत्पन्न विकृतियों व साम्राज्यवादी इतिहासकारों द्वारा इतिहास की एकपक्षीय व्याख्या के प्रत्युत्तर स्वरूप इतिहास लेखन की इस परम्परा का उद्भव हुआ है। राष्ट्रवादी इतिहासकार एक ओर पाश्चात्य व उनके अनुसरणकर्ता शिष्यों द्वारा भारत की छवि धूमिल करने से व्यथित थे तो वहीं दूसरी ओर भारतीय चिन्तन की महान परम्पराओं के द्वारा पोषित समाज व्यवस्थाओं के पतन और पश्चिमी राष्ट्रों के फलते-फूलते पूँजीवादी समाज, जो भारत के शोषण एवं दोहन के द्वारा समृद्ध हो रहा है, के घोर वैषम्य को देखकर चिंतित हैं। इतिहास लेखन की इस अवधारणा को मूल उद्देश्य भारतीय व भारतीयता को पुन: प्रतिष्ठापित करना है। भारतीय इतिहास व संस्कृति पर द्वेषपूर्ण योजना के द्वारा किये गये प्रहारों का प्रति उत्तर देने का यह एक सशक्त व अभिनव प्रयास है। वस्तुत: वर्तमान में चल रहे ऐतिहासिक अनुसंधानों के आलोक में यह विचार मूर्त होते प्रतीत होता है कि इतिहास एक समयावधि के पश्चात् अपने वैशिष्टय को पुन: दोहराता है। यही बात भारतीयता के पक्ष में भी अनुकूल परिलक्षित होती है। राष्ट्रवादी इतिहास लेखन परम्परा का उद्भव 19 वीं शताब्दी में प्रारम्भ हुआ था उन्होंने प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता को एक समृद्ध अवस्था के रूप में प्रस्तुत किया। वैचारिक अधिष्ठान का ऐतिहासिक विकास के साधन के रूप में अंगीकार करते हुए इन इतिहासकारों ने राष्ट्रीय स्वाभिमान को पुनर्जागरित करने का सफल प्रयास किया है। अपने इस स्वरूप से राष्ट्रवादी अवधारणा नवराष्ट्रवादी के रूप में वैश्वीकरण के प्रतिरोध के रूप में वह सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का उदय है। वर्तमान में जब साम्राज्यवाद का उदय नवसाम्राज्यवाद के रूप में हो रहा है तो अपनी संस्कृति व राष्ट्र की रक्षा के लिए आवश्यक है कि भारतीय मूल्यों के परिप्रेक्ष्य में भारतीय इतिहास की व्याख्या की जाए। मूल्यों के भावी अस्तित्व और विकास की सम्भावना तभी हो सकती है, जब वे अपने आधार पर दृढ़ रहते हुए अनावश्यक एवं अस्वास्थ्यकर तत्वों का निवारण करते हुए सामयिक वातावरण से उचित पोषण प्राप्त करते रहें। यही राष्ट्र के उत्थान का मूल मंत्र है। इसकी अवहेलना से या तो किसी राष्ट्रव उसकी संस्कृति के मूल तत्व ब्राह्म आक्रमणों के प्रबल अघातों से धाराशायी हो जाते है। यह दोनों मार्ग ही एकांतिक मार्ग हैं, जहाँ से राष्ट्रवाद या नवराष्ट्रवादी इतिहास लेखन की दिशा चल रही है। नीति, नय और न्याय का पक्ष इसकी ओर सकारात्मक है साथ ही यह भी एक अकाट्य सत्य है कि व्याख्या की यह प्रविधि पुरानूतन प्रविधि है जो विशुद्ध रूप से भारतीय संस्कृति के अक्षुण्य मूल्यों पर आधारित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पणिनी 4/23/23
2. बर्क, जे. -रिफलेक्शन ऑन हिस्ट्री, 1959 पृ. 31
3. चन्द्र सतीश - मध्यकालीन भारत का इतिहास लेखन, धर्म और राज्य का स्वरूप, पृ. 41
4. महर्षि अरविन्द - संस्कृति के आधार, अरविन्दो आश्रम, पाण्डेचेरी।
5. विशेषज्ञ दिप्पणी, दुबे सीताराम-अध्यक्ष, प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व अध्ययनशाला, हिन्दु विश्वविद्यालय बनारस।
6. साठे, श्रीराम - आर्य कौन थे?
7. देखे वाकणकर, विष्णुधर - वैदिक सरस्वती नदी शोध अभियान पृ. 2
8. कल्याणरण 2000 : खण्ड 13
9. वैदिक सरस्वती नदी शोध अभियान पृ. 4
10. वहीं
11. चौहान देवन्द्र सिंह-पुण्य सलिला सरस्वती नदी- भारतीय सभ्यता

की सृजन स्थली।
12. देखें, साठे, श्रीराम – आर्यन्स हू वेयर दे?
13. देखे वाकणकर – वैदिक आर्य समस्या एक चिन्तन।
14. सिंह, शिवाजी – ऋग्वैदिक आर्य और सिन्धु सरस्वती सभ्यता, बनारस, 2004।
15. देखें, सिंह, भगवान – हड़प्पा सभ्यता और वैदिक साहित्य 2003।
16. जोशी, जे.पी.का लेख द इडस सिविलाईजेशन : एक कन्सीडेरेशन ऑन दि बेसिक ऑफ डिस्टीव्यूशन मैप्स, 1984 नई दिल्ली।
17. गुप्ता, एस.पी. द लोस्ट सरस्वती एण्ड इंडस सिविलाईजेशन, 1989 जोधपुर व लाल, बी. बी., द अर्लियेस्ट सिविलाईजेशन ऑफ साउथ एशिया, 1997 नई दिल्ली पृ. 281, 287।
18. देखें, दैनिक द हिन्दु नई दिल्ली 13/11/2006।
19. देखें, आर्यावर्त का प्राचीन इतिहास 2004, अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना नई दिल्ली।
20. थापर, रोमिला, इतिहास की पुर्नव्याख्या, पृ. 91।
21. देखें, पोद्दार, वासुदेव का ग्रन्थ विश्व की कालयात्रा व डॉ. दामोदर झा– सृष्टि का इतिहास अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना नई दिल्ली।
22. अवलोकन महाभारत का युद्ध, अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना नई दिल्ली।
23. अवलोकन भारतीय कालगणना का वैज्ञानिक एवं वैश्विक स्वरूप – अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना नई दिल्ली।
24. हेवालकर, शरद, कृणवन्तो विश्वमार्यम अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना नई दिल्ली।
25. मित्तल, सतीश – ब्रिटिश इतिहासकार तथा भारत, अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना नई दिल्ली 2010
26. मित्तल, सतीश – कांग्रेस : अंग्रेज भक्ति से राजसत्ता तक, 2011, अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना नई दिल्ली 2010

****

भोपाल रियासत में गैर मुस्लिम धार्मिक स्थलों का निर्माण

डॉ. ममता खोईया *

प्रस्तावना – भोपाल रियासत की नवाब बेगमों ने जहां मस्जिदों का निर्माण करवाया, दूसरी ओर मंदिरों का निर्माण भी करवाया। मंदिरों के निर्माण कार्य बेगमों की न्यायप्रियता, दानशीलता, समानता एवं धार्मिक विचारों को दर्शाता है। भोपाल रियासत की नवाब बेगम अपनी जनता के प्रति समानता का व्यवहार करती थी तथा मंदिरों का निर्माण कार्य एवं उनके लिए दान भूमि आदि बना देना उनकी न्यायप्रियता को दर्शाता है।

भोपाल रियासत के ज्यादातर मंदिर कुदसिया बेगम और उनकी पुत्री नवाब सिकंदर बेगम के समय में सन् 1840 ई. से 1870 ई. तक सिद्धीकी हसन खान के इत्तेदार से पहले तक ही कायम हुए सन् 1901 ई. में नवाब सुल्तानजहां बेगम के नवाब होने के बाद मंदिरों की स्थापना में बढ़ोत्तरी हुई अनेक मंदिर सरकारी सहयोग से कायम हुए। 1930 ई. में भोपाल रियासत की आबादी 30 हजार थी, लेकिन किन्हीं कारणो से नवाब ने 55 हजार घोषित की थी जिसमें 98 प्रतिशत आबादी मुस्लिम थी और कुल मिलाकर तात्कालिक मंदिरों की संख्या दो दर्जन थी[2]

श्रीजी का मंदिर–यह मंदिर का निर्माण नवाब कुदसिया बेगम ने 1819 ई. में जब मंडप का स्थान खरीदकर वहां जामा मस्जिद का निर्माण शुरू किया। तो सभामंडप के कुछ हिस्से पर जैन फिरके के लोगो का कब्जा था। नवाब कुदसिया बेगम ने हिन्दुओ और जैनियों को वैकल्पिक भूमि तथा भारी भरकम रकम दी थी। हिन्दुओं को लखेरापुरा में श्रीजी के मंदिर के लिये भारी रकम दी थी। तभी से वहां श्री जी का मंदिर कायम है।[3]

शीतलदास मंदिर–इस मंदिर का निर्माण नवाब सिकंदर जहां बेगम के आर्थिक सहयोग से 1844 सन् से होना बताया जाता है मंदिरों के करीब बड़े तालाब के किनारे भारत भवन के नीचे एक पुरानी गुफा भी है जो करीब 100 साल पुरानी है वही पर भी लोग ध्यान लगाया करते थे। वर्तमान मंदिर में पहले इसी मुकाम पर जो बगिया है उसके बारे में बताया जाता है किसी समय उस स्थान पर हिन्दू विद्वान शख्सियत रहते थे जिसको कुछ लोग तांत्रिक भी कहते थे। वे लोग अपने चमत्कार से लोगों को चमत्कृत करते थे। उनके उत्तराधिकारी भी अच्छे जानकार लोग है। आखिर में 1844 ई. में नवाब सिकन्दर बेगम के समय में इस बगिया के उत्तराधिकारी शीतलदास थे जो जबरदस्त इल्म वाले संत थे काफी लोग उनके पास आते थे। खुद नवाब सिकंदर बेगम उनका एहतिराम मानती थी। संत शीतलदास ने रियासत के कुछ मामलों में नवाब बेगम को सहयोग भी दिया। नवाब सुल्तानजहां बेगम ने मंदिर के बनने में सहयोग किया एवं मंदिर के पुजारी को वजीफा जारी किया यह वजीफा हमीदुल्ला के समय तक जारी रहा।

महादेव मंदिर– कुदसिया बेगम के अहदे हुकूमत 1829 ई. में पीर दरवाजे के पास बीसा हजारी की खिड़की में यह मंदिर तामीर हुआ। यह इलाका अब सिन्धी मार्केट कहलाता है।

दिगम्बर व श्वेताम्बर मंदिर–भोपाल की जामा मस्जिद के पास जैनियों के दो मंदिर करीब–करीब ही है यह मंदिर दिगम्बर और श्वेताम्बर फिरके के है। एक मदिर काजीपुर में और दूसरा जैन मंदिर रोड़ पर है। नवाब कुदसिया बेगम ने जामा मस्जिद की तामीर के वक्त इसकी तामीर के लिए रूपया दिया था।[4]

मरघटिया मंदिर– 1830 ई. में नवाब कुदसिया बेगम के दौर में महादेव का एक मन्दिर बनाया गया इससे मिला हुआ श्मशान घाट भी था जो अब दूसरी जगह बना दिया गया यह मन्दिर मरघटिया मन्दिर कहलाता है। यह मन्दिर मुन्शी हुसैन खां के तालाब से आगे मॉडल ग्राउंड के सामने हमीदिया रोड पर है। सावन भादों में यहा एक मेला भी आर्य समाज मन्दिर लगाता है।[5]

आर्य समाज मन्दिर–नवाब सुल्तान जहां बेगम के अहद में आर्य समाज मंदिर सन् 1912 ई. में जुमेराती में बना। आर्य समाज के अब कई मंदिर बन चुके है। इनकी खासियत यह है कि इस मंदिर के साथ आर्य समाज की किताबों की अपनी एक लायब्रेरी भी है।

गुफा मंदिर– हनुमान का यह मन्दिर सन् 1930 ई. में नवाब हमीदुल्लाह खां की हुकूमत के जमाने में लालघाटी के करीब बना। इस मंदिर को गुफा मंदिर कहते है। इस मन्दिर के साथ धर्मशाला और संस्कृत स्कूल भी है। सनातन धर्म के लोग सावन के महीने में इसकी जियारत के लिए आते है।

हनुमान का मन्दिर नवाब हमीदुल्लाह खां के जमाने में ही 1930 ई. में छोले मुहल्ले में यह मन्दिर बना। कृष्णजी का मन्दिर और दुर्गा का मन्दिर भी इसके पास है। इनके साथ धर्मशाला भी है। हर मंगल को यहां मेला लगता है जिसमें बहुत लोग आते है। इस जगह को पिकनिक की जगह की तरह भी समझा जाता है।

झरने वाला मन्दिर– 1935 में जैन फिरके का यह मन्दिर तामीर हुआ। उस वक्त नवाब हमीदुल्ला खां ने जमीन दी थी और तामीर के लिए रूपया भी दिया था नये अन्दाज से बना हुआ यह मन्दिर स्टेट बैंक के चौराहे से थोड़ा आगे कैम्ब्रेज स्कूल के सामने है। बिरला मन्दिर अरेरा पहाड़ी पर बिरलावालों ने लक्ष्मीनारायण मन्दिर बनाया। हुकूमत ने इस मंदिर के लिए कई एकड़ जमीन दी। 5.78 एकड़ जमीन पर यह मन्दिर 1.75 एकड़ में बना है यह भोपाल का सबसे बड़ा मन्दिर है। इस मन्दिर से मिली हुई लाइब्रेरी और म्यूजियम भी है। शहर में हर जगह से यह मन्दिर नजर आता है इस मंदिर से नये पुराने भोपाल की खूबसूरती देखने के लायक है।

झूलेलाल का मन्दिर सिंधियों के पेशव झूलेलाल के नाम से एक बहुत बड़ा मन्दिर भोपाल इन्दौर रोड़ पर बैरागढ़ में बनाया गया है।

कमाली मंदिर–मंदिर कमाली घोड़ा नक्कास में हमीदिया रोड़ पर हनुमान का एक मन्दिर नवाब कुदसिया बेगम के दौर में 1830 ई. में तामीर हुआ। सन् 1845 ई. में कमाली नाम के एक फकीर थे। उनका नाम नारायण दास था।

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय स्वामी विवेकानन्द महाविद्यालय, सारंगपुर (म.प्र.) भारत

सिकंदर बेगम ने उनको कमाली का खिताब दिया था। कमाली नाम के एक बाबा हिन्दू संत नवाब सिकंदर बेगम के समय में आते थे। जहां आज मंदिर बना है वह बाबा वहां बैठकर पूजा करने लगे उस समय एक बहुत बड़ा बाग और वीरान इलाका था कमाली बाबा इबादत करने लगे तो रात को कमाली जी शंख बजाते।[6]

एक दिन नवाब बेगम ने शंख की आवाज सुनी और पूछा कि ये शंख कौन बजाता है लोगों ने बताया कि कोई संत बाहर से आये हुए है। वही शंख बजाते है इस बात को सनुकर नवाब बेगम ने उन्हें शहर से बाहर निकलने का हुकूम दिया। जब दरबारी बाबा को शहर से बाहर निकालने गये तो बाबा ने निकलने से मना कर दिया और कहा कि मै यहां कुछ दिन पूजा करके चला जाऊँगा। नवाब बेगम ने हुक्म की तामील न होने पर उन्हे मार डालने के आदेश दिया जब सिपाही बाबा को मारने गये तो कमाली बाबा मुर्दा पाये गये। सिपाहियों ने जाकर बेगम को बता दिया। लेकिन दूसरे दिन फिर शंख की आवाज सूनाई दी तब नवाब बेगम ने सिर और हाथ पैर काटने के आदेश दिया जब सिपाही सिर और हाथ पैर काटने गये तो पहले से ही उनके हाथ पैर कटे मिले सिपाहियों ने बेगम को सब बता दिया कि उनका किसी ने कत्ल कर दिया है उस रात को फिर शंख की आवाज सुनाई दी तो नवाब बेगम सुबह खुद बाबा को देखने गई तो कमाली बाबा को जिंदा बैठे हुए देखा तब कमाली बाबा को इबादत करने की इजाजत दे दी गयी। इसके बाद बेगम न कमाली बाबा को मंदिर बनाने के लिए आठ एकड़ जमीन दी और सालाना वजीफा मुकर्रर किया तभी कमाली का मंदिर का निर्माण हुआ।

सेंट फ्रांसिस चर्च–भोपाल रियासत की बिट्रिश सैन्य छावनी सीहोर में थी। अनेक अधिकारी ईसाई यहां आकर बस गए रियासत में कैथोलिक चर्च को अनुमति नवाब सिकंदर बेगम द्वारा दी गई 1924 में इस चर्च का निर्माण फादर बर्नाड पिस्टोइया की देखरेख में हुआ। रियासत की और से इस चर्च को वार्षिक ग्रांट भी दी जाती थी। नवाब बेगम हर धर्म का आदर करती थी बेगमों ने मंदिर मस्जिद तथा गिरजाघरों के निर्माण में काफी धन खर्च किया है।[7]

भोपाल के नवाबों व बेगमात ने अपनी गैर मुस्लिम प्रजा के धार्मिक स्थल बनवाने में मदद की इन मन्दिरों व पुजारियों की पूरी जिन्दगी मदद की। वजीफे दिए और उनके लिए जमीन भी वक्फ की इनमें से कई मंदिर स्थापत्य का अदभूत नमूना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हुसैन, डॉ.हाजी माजिद– राजा भोज से आज तक का इतिहास प्रकाशन एक्शन हाउस किलोल पार्क भोपाल सन् 1999 पृ.154
2. हुसैन, डॉ.हाजी माजिद– राजा भोज से आज तक का इतिहास प्रकाशन एक्शन हाउस किलोल पार्क भोपाल सन् 1999 पृ.154
3. हुसैन, डॉ.हाजी माजिद– राजा भोज से आज तक का इतिहास प्रकाशन एक्शन हाउस किलोल पार्क भोपाल सन् 1999 पृ.154
4. हामिद, डॉ.रजिया भोपाल दर्पण बाबुल इल्म पब्लिकेशन्स दिल्ली पृ.139
5. हामिद, डॉ.रजिया भोपाल दर्पण बाबुल इल्म पब्लिकेशन्स दिल्ली पृ.140
6. हुसैन, डॉ.हाजी माजिद– राजा भोज से आज तक का इतिहास प्रकाशन एक्शन हाउस किलोल पार्क भोपाल सन् 1999 पृ.141
7. हुसैन, डॉ.हाजी माजिद– राजा भोज से आज तक का इतिहास प्रकाशन एक्शन हाउस किलोल पार्क भोपाल सन् 1999 पृ.150–160

****

देवास राज्य का ऐतिहासिक अध्ययन

डॉ. मलिका खान *

प्रस्तावना – मुगल साम्राज्य के सूर्यास्त के समय मराठे शक्तिशाली हुए। होलकर, सिन्धिया, गायकवाड़ ओर भौंसले वंश ने पूरे भारत वर्ष में अपना साम्राज्य विस्तारित किया। होल्कर ने पूरे मालवा ओर निमाड़ पर अपना प्रभाव स्थापित किया।

इन्दौर से 35 कि.मी. दूर देवास स्थित है जो ऐतिहासिक रूप से प्रसिद्ध था। पवारों के मूल पुरूष साबूसिंह उर्फ़ शिवाजी के पुत्र कृष्णाजी ओर पौत्र बुआजी थे। बुआजी के पुत्र कालूजी के दो पुत्रों ने देवास राज्य की स्थापना की।तुकोजीराव ने बड़ी पाती ओर शिवाजी राव ने छोटी पाती राज्य को आगे बढ़ाया।

'देवास रियासत बड़ी पाती' – सन् 1789 से 1827 तक राणाजी बड़ी पाती का शासक रहा।12 दिसम्बर सन् 1818 को देवास के दोनों राजाओं तुकोजीराव द्वितीय व आनन्दराव पंवार के साथ संधि की गई। दोनों राजाओं ने अपने प्रतिनिधि के रूप में सखाराम बापू गंधे को यह संधि उत्पन्न करने के लिए नियुक्त किया। देवास राज्य की कम्पनी से की गई संधि की शर्तें इस प्रकार है –

1. देवास राज्य ब्रिटिश सरकार के संरक्षण में रहेगा।
2. उसे 50 अच्छी नस्ल के अश्व व 50 पैदल रखने का अधिकार होगा जो आवश्यकतानुसार ब्रिटिश सरकार की सेवा के लिए उपलब्ध रहेंगे तथा शेष सेना भी उपलब्ध रहेगी।
3. तीन वर्ष पश्चात् देवास की सैनिक टुकड़ी में 100 अश्वारोही व 100 पैदल हो जायेंगे।
4. देवास, सारंगपुर आलोट, रिंगनोद तथा बालोदा परगने राजा के पूर्ण अधिकार में रहेंगे साथ ही धार राज्य, सुन्दरसी व डोंगला परगनों से जो आय प्राप्त करेगा उसका 7 प्रतिशत देवास को देगा।
5. ब्रिटिश सरकार देवास के विद्रोही ठाकुरों का दमन करने में देवास के राजा की सहायता या विवाद की स्थिति में उनकी मध्यस्थता करेगी।
6. देवास का राजा किसी अन्य राज्य से ब्रिटिश सरकार की स्वीकृति के बिना कोई संधि नहीं कर सकेगा।
7. अपने क्षेत्र में राजा सम्प्रभु रहेगा तथा राजा और उसके परिवार या संबंधियों के मध्य हुए विवादों में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं किया जायेगा।
8. देवास के दो राज्य जो संयुक्त रूप से राज्य पर शान करते हैं, यह तय करें कि दोनों के राज्य का प्रशासन चलाने के लिये एक ही कार्यवाहक (मंत्री) रहेगा।

1857 के स्वाधीनता संग्राम के समय देवास राज्य के काफी मेवाती विद्रोह करते थे जिनका अंग्रेजों की सहायता से दमन किया गया था। कृष्णरावजी की मृत्यु 1899 में हुई 14 अप्रैल सन् 1900 में तुकोजीराव तृतीय के नाम से गद्दी पर बैठा। 14 अक्टूबर सन् 1993 को तुकोजीराव ने राज्य से संन्यास लेकर पाण्डिचेरी प्रस्थान किया। 30 सितम्बर सन् 1937 को, वही उसका देहावसान हो गया और शासन का कार्यभार कौन्सिल द्वारा चलाया गया। 20 जुलाई 1935 को विक्रमसिंह राव द्वारा कोल्हापुर से आकर कौन्सिल के अध्यक्ष के नाते राज्य संचालन का कार्य अपने हाथों में ले लिया गया। 18 मार्च सन् 1938 को विक्रमसिंह राव का राज्याभिषेक हुआ।

बाद में देवास बड़ी पाती का उत्तराधिकार उसके अपने पुत्र कृष्णरावजी को सौंप दिया था। मध्यप्रदेश में राज्य के विलय के समय कृष्णरावजी की बड़ी पाती का शासक था।

देवास छोटी पाती – दिसम्बर सन् 1818 में देवास छोटी पाती को भी देवास बड़ी पाती की ही भांति अंग्रेजों से अधीनस्थ सहकारिता का समझौता करना पड़ा। यह समझौता देवास के दोनों राजाओं तुकोजीराव पंवार और आनन्दराव पंवार से एक साथ सम्पन्न हुआ। इस समझौते में 8 धाराएँ थी। काफी समय तक देवास राज्य की दोनों पातियों का संचालन एक ही शासक करता था, परन्तु वह परम्परा नारायणराव महाराज के समय समाप्त हो गई और बाद में दोनों राज्यों के पृथक-पृथक दरबार तथा सवारिया सम्पन्न होना प्रारम्भ हुआ। बड़ी पाती के महाराजा रूघनाथराव था और देवास छोटी पाती के महाराजा हेमंतराव बापू साहब थे। देवास छोटी पाती के महाराज आनन्दराव का दत्तक पुत्र हेमंतराव 1640 ई. में गद्दी पर बैठा था। उसकी मृत्यु 1864 ई. हुई थी। उसके बाद उसका पुत्र नारायणराव राजा बना था। 19 फरवरी 1892 में उसकी मृत्यु हो गई। उसके बाद उसके बड़े भाई के पुत्र मल्हाराव को राजपद प्राप्त हुआ। 1987 में उसे शासन के अधिकार प्राप्त हो गए। सन् 1934 से 1943 तक सदाशिवराव खासे साहब छोटी पाती का शासक था। 2 दिसम्बर 1943 को उसकी मृत्यु हो गई। उसके बाद उसका पुत्र यशवंत राव पंवार राजपद का अधिकारी बना। इसी शासक के समय 1948 ई. में देवास राज्य मध्यभारत में विलीन हुआ।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शोध समवेत – पत्रिका।
2. एचीसन – 'ए कलेक्शन ऑफ ट्रिटीज़ एण्ड सनद्स।'
3. प्रभा श्री निवासूलू – 'मालवा द अण्डर मराठन।'

****

* विभागाध्यक्ष (इतिहास) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) Oct. to December 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

महिला उत्थान - मध्यप्रदेश शासन की पहल

डॉ. उमा लवानिया *

शोध सारांश – स्वतन्त्र भारत में जो क्रांतिकारी परिवर्तन हुए हैं। महिलाओं के उत्थान के लिए स्त्री और पुरूषों को संविधान में समान रूप से समस्त मूलभूत अधिकार प्रदान किए गए हैं, राजनीतिक एवं प्रशासनिक दृष्टि से मध्यप्रदेश राज्य की स्थापना 01 नवम्बर, 1956 को हुई। मध्यप्रदेश सरकार द्वारा महिलाओं के उत्थान के लिए विभिन्न कल्याणकारी योजनाऐं क्रियान्वित की जा रही है **– लाडली लक्ष्मी योजना, मंगल दिवस योजना, उषा किरण योजना, विधवाओं हेतु 'यूएन वूमन' की योजना, तेजस्विनी ग्रामीण महिला सशक्तीकरण परियोजना, मध्यप्रदेश में महिलाओं का सबलीकरण, किशोरी बालिकाओं के लिए सबला योजना, बेटी बचाओ अभियान, गौरवी केन्द्र का शुभारंभ, स्वागतम् लक्ष्मी योजना, मध्यप्रदेश बाल-संरक्षण आयोग** आदि इस प्रकार मध्यप्रदेश सरकार निरंतर महिलाओं के उत्थान के लिए प्रयासरत हैं।

प्रस्तावना – स्वतन्त्र भारत में जो क्रांतिकारी परिवर्तन हुए हैं : उन सब का प्रभाव हमारे पारिवारिक जीवन पर पड़ रहा है, यह सत्य है कि देश में शिक्षा, चिकित्सा, यातायात, कृषि, औद्योगिक विकास, दूर संचार, कला, तकनीकी क्षेत्रों में जो प्रगति हुई है वह भारत की एक शक्ति बन गया है। जहां तक सामाजिक जीवन में परिवर्तन का संबंध है, उसमें भी क्रांतिकारी परिवर्तन हुए हैं। लोगों का जीवन स्तर बढ़ा है और मानसिक सोच में बड़ा भारी अंतर आया है। खान-पान, पहनावा और जीवन शैली बदली हैं।

महिलाओं के उत्थान के लिए स्त्री और पुरूषों को संविधान में समान रूप से समस्त मूलभूत अधिकार प्रदान किए गए हैं, परन्तु सामाजिक कुरीतियों एवं विषमताओं के कारण महिलाएं अपने इन अधिकारों से वंचित रह जाती है। अत: महिलाओं को संवैधानिक तथा कानूनी सुरक्षा प्रदान करने के लिए जनवरी, 1992 में राष्ट्रीय महिला आयोग की स्थापना की गई। साथ ही ग्रामीण महिलाओं के कल्याण के लिए भी हर राज्य में महिला आयोग का गठन किया गया।

राजनीतिक एवं प्रशासनिक दृष्टि से मध्यप्रदेश राज्य की स्थापना 01 नवम्बर, 1956 को मध्य भारत, विन्ध्य प्रदेश तथा भोपाल के तीनों राज्यों राजस्थान का सिरोंज क्षेत्र (विदिशा जिला) तथा महाकौशल क्षेत्र के 14 जिलों को मिलाकर हुई थी। प्रदेश की स्थापना के समय इसमें कुल 43 जिले थे। 70 के दशक में इसमें दो नये जिले सीहोर से भोपाल तक दुर्ग से राजनांद गॉव बने। मई-जुलाई 1998 में पुन: 16 नये जिले बने और कुल जिलों की संख्या 61 हुई। जहॉ 1956 में मध्यप्रदेश विभिन्न राज्यों या उनके अंशों से मिलकर बना था, वहीं 01 नवम्बर 2000 को फिर विभाजित हुआ और छत्तीसगढ़ नया राज्य बना। छत्तीसगढ़ बनने से मध्यप्रदेश का कुल क्षेत्रफल 4,43, 436 वर्ग कि.मी. में से 1,25,191 वर्ग कि.मी. छत्तीसगढ़ राज्य में चला गया।

इस तरह मध्यप्रदेश 01 नवम्बर, 2000 को छत्तीसगढ़ राज्य होने के पूर्व तक क्षेत्रफल के आधार पर देश का सबसे बड़ा राज्य था। छत्तीसगढ़ के अलग राज्य बन जाने के कारण अब मध्यप्रदेश का क्षेत्रफल 308,275 वर्ग किलोमीटर रह गया है तथा यह देश का सबसे बड़ा दूसरा राज्य है। मध्यप्रदेश सरकार द्वारा महिलाओं के उत्थान के लिए विभिन्न कल्याणकारी योजनाऐं क्रियान्वित की जा रही है –

1. लाडली लक्ष्मी योजना –

उद्देश्य –

1. समाज में बालिकाओं के प्रति सकारात्मक अवधारणा का विकास करना।
2. राज्य शासन द्वारा बालिकाओं के शैक्षणिक एवं आर्थिक स्तर में सुधार करना एवं उनके अच्छे भविष्य की आधारशिला रखना।
3. बालिकाओं का लिंगानुपात सुधारना।
4. बालिकाओं का उत्तम स्वास्थ्य सुनिश्चित करना।

पात्रता हेतु शर्ते-

1. यह योजना दिनांक 1 जनवरी 2006 के पश्चात् जन्म लेने वाली उन बालिकाओं के लिए है, जिनके माता/पिता ने दो जीवित बच्चों के रहते हुए परिवार-नियोजन अपना लिया हो।
2. बलिकाओं को ऑगनवाड़ी केन्द्रों में पंजीकृत होना चाहिए व उनके माता-पिता आयकरदाता नहीं होने चाहिए।
3. महिला की प्रथम प्रसूति से यदि बालिका संतान उत्पन्न हो, तो इस संतान को योजना का लाभ मिलेगा।
4. यदि दूसरी संतान भी बालिका हो, तो उसे योजना का लाभ तभी मिलेगा, जब उसके माता/पिता परिवार नियोजन अपना लें।
5. यदि दूसरे प्रसव के समय जुड़वा बालिकाऍ उत्पन्न हों, तो योजना का लाभ इन दोनों बालिकाओं को मिलेगा।
6. लेकिन यदि दूसरी बालिका/दुसरी जुड़वॉ बालिकाओं के पिता की मृत्यु हो गई हो, तो परिवार-नियोजना की शर्त आवश्यक नहीं हैं।
7. यदि परिवार ने किसी बालिका को गोद लिया हो, तो उसे भी इस योजना का लाभ पाने की पात्रता होगी।

योजना का क्रियान्वयन –

1. इस योजना के अंतर्गत बालिका के पक्ष में रू0 6,000 प्रतिवर्ष की दर से लगातार 5 वर्षो तथा अर्थात् कुल रू0 30,000 के एन.एस.सी. खरीदे जाते है।
2. बालिका के कक्षा 6वीं में प्रवेश करने पर रू. 2,000, 9वीं में प्रवेश करने पर रू. 4,000 तथा कक्षा 11 वीं प्रवेश करने पर रू. 7,500

* सहायक प्राध्यापक, प्रवर श्रेणी शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

प्रदान किए जाते हैं। इसके अतिरिक्त कक्षा 11 वीं एवं 12वीं में पढ़ाई के समय रू. 200 प्रतिमाह अलग से दिए जाते हैं।

3. बालिका द्वारा 21 वर्ष की आयु पूर्ण करने लेने पर तथा 18 वर्ष की आयु के पूर्व विवाह न करने एवं कक्षा 12वीं की परीक्षा में सम्मिलित होने की शर्त पूरी करने पर लगभग 1 लाख रूपये से अधिक की राशि का भुगतान एन. एस. सी. की परिपक्व हुई राशि से किया जाता है।

2. मंगल दिवस योजना –

- यह योजना 2007–08 में आरंभ हुई।
- उद्देश्य–

1. ऑगनवाड़ी केन्द्रों पर बच्चों की उपस्थिति बढ़ाना।
2. सुरक्षित प्रसव
3. मातृ व शिशु मृत्यु–दर में कमी लाना।
4. बाल कुपोषण में कमी लाना।
5. किशोरी बालिकाओं की उचित देखभाल करना।

- इसके अंतर्गत प्रथम मंगलवार को गोद–भराई, द्वितीय मंगलवार को अन्नप्राशन, तृतीय मंगलवार को जन्मदिवस कार्यक्रम एवं चतुर्थ मंगलवार को किशोरी बालिका दिवस के रूप में मनाया जाता है।
- इन कार्यक्रमों की मुख्य विशेषताएँ इस प्रकार है –

1. गोद–भराई कार्यक्रम में गर्भवती महिला की गोद भरकर उसे स्वास्थ्य व पोषण संबंधी समझाईश दी जाती है।
2. शिशु के 6 माह का हो जाने पर उसकी मां को समझाइश दी जाती है कि शिशु को मां के दूध के साथ ऊपरी आहार भी प्रदान करें।
3. किशोरी बालिकाओं को स्वस्थ रहने के लिए आयरन, फॉलिक एसिड आदि की गोलियां दी जाती है एवं उन्हें आर्थिक स्वावलंबन का प्रशिक्षण दिया जाता है।

3. उषा किरण योजना –

1. यह योजना उच्चतम न्यायालय के निर्देशानुसार घरेलू हिंसा अधिनियम 2005 के सघन प्रचार–प्रसार के उद्देश्य से शुरू की गई है।
2. यह मध्यप्रदेश शासन के महिला एवं बाल विकास विभाग द्वारा संचालित योजना है जो वर्ष 2008 में आरंभ की गई है।
3. यह योजना घरेलु हिंसा (शारीरिक, मानसिक, भावात्मक, आर्थिक या दुर्व्यवहार आदि रूपों में) से पीड़ित महिलाओं की सहायता के लिए है।
4. योजना के अंतर्गत घरेलू हिंसा का सामना कर रही महिलाओं को विधिक सहायता, शरण–गृह (नारी–निकेतन) व परामर्श–सुविधा उपलब्ध कराई जाती है।
5. योजना के संचालन के लिए प्रत्येक जिले में कलेक्टर की अध्यक्षता में एक समिति बनाई जाती है, जिसमें पुलिस, महिला एवं बाल विकास व सामाजिक न्याय विभागों के अधिकारी तथा सामाजिक संगठनों के प्रतिनिधि होते है।

3.अति–निर्धन महिलाओं को प्रसव–पूर्व सहायता राशि–

उद्देश्य – अति–निर्धन महिलाओं को प्रसव पूर्व आर्थिक सहायता उपलब्ध कराना, जिससे ये महिलाएँ प्रसव के पूर्व अपनी देखभाल कर सकें और उनके प्रसव पर होने वाले व्यय की कुछ सीमा तक प्रतिपूर्ति हो सके।

- योजना के अंतर्गत सहायता प्राप्त करने के लिए अपेक्षित पात्रता निम्नानुसार है–

1. गर्भवती महिला की आयु 19 वर्ष या इससे अधिक हो।
2. गर्भवती महिला अति–निर्धन के रूप में पंजीकृत अर्थात् पीला राशनकार्डधारी हो।
3. सहायता– राशि केवल दो जीवित बच्चों के जन्म तक ही देय होगी।

4. विधवाओं हेतु 'यूएन वूमन' की योजना–

- अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस की 100 वीं वर्षगॉठ को रेखांकित करते हुए 'यूएन वूमन' ने भारत, नेपाल व श्रीलंका की विधवाओं को लक्ष्य करके एक नई योजना का आरंभ किया है।
- इस तीन वर्षीय योजना का वित्त पोषण संयुक्त रूप से Un Womens Swiss Nation Committee व स्टेण्डर्ड चार्टड बैंक द्वारा होगा।
- भारत में इस योजना के अंतर्गत विशेष रूप से 'एचआईवी' पीड़ित विधवाओं पर ध्यान केन्द्रित किया जाएगा, जबकि नेपाल में युवा विधवाओं व श्रीलंका में संघर्ष वाले क्षेत्रों पर ध्यान केन्द्रित किया जाएगा।
- भारत में यह योजना गिल्ड ऑफ सर्विसेज व आस्था संस्थान के संयुक्त तत्वाधान में क्रियानिवत होगी।

5. तेजस्विनी ग्रामीण महिला सशक्तीकरण परियोजना–

- यह परियोजना 2006 में लागू हुई।
- इसका मुख्य उद्देश्य महिलाओं को नवीन एवं समुन्नत आजीविका के साधन उपलब्ध कराने हेतु लघु वित्त उपलब्ध कराना और इसके लिए स्व–सहायता समूहों की स्थापना करना।
- यह परियोजना मध्यप्रदेश के कुल 6 जिलों– बालाघाट, डिण्डोरी, मण्डला, पन्ना, छतरपुर व टीकमगढ़ में लागू है।

6. मध्यप्रदेश में महिलाओं का सबलीकरण–

- पंचायतों एवं नगर निकायों में महिलाओं हेतु 50 प्रतिशत आरक्षण।
- वन समितियों में महिलाओं के लिए एक तिहाई पद आरक्षित तथा अध्यक्ष/उपाध्यक्ष में से एक पद महिला को देना अनिवार्य।
- महिलाओं में रचनात्मकता को प्रोत्साहित करने के लिए रानी दुर्गावती पुरस्कार, समाज सेवा के लिए राजमाता विजय राजे सिंधिया व वीरता के लिए रानी अवंतिबाई पुरस्कार।
- महिला अभियोगियों को महिला वकील उपलब्ध कराने का निर्णय।
- देश में पहली बार मध्यप्रदेश में जेंडर आधारित बजट बनाया गया।
- खेलों में महिलाओं को प्रोत्साहित करने के लिए राज्य महिला हॉकी अकादमी की ग्वालियर में स्थापना।
- संपत्ति की रजिस्ट्री महिला के नाम से होने पर स्टाम्प शुल्क में रियायत।

7. शवशोरी बालिकाओं के लिए सबला योजना –

- यह भारत सरकार के ग्रामीण विकास विभाग की योजना है, जो वर्ष 2011 में 8 मार्च को लागू की गई। ज्ञात हो कि इस तिथि को अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस मनाया जाता है।
- इसका अन्य नाम है। Rajiv Gandhi Scheme for Empowerment of Adolescent Grils/RGSEAG अर्थात् किशोरी बालिकाओं के सशक्तिकरण हेतु राजीव गांधी योजना।
- इस योजना में 11–14 वर्ष की शाला त्यागी किशोरी बालिकाओं तथा 15–18 वर्ष की समस्त किशोरी बालिकाओं को शामिल किए जाने का प्रावधान है।
- इस तरह इस योजना में 11 से 18 वर्ष तक की किशोरी बालिकाओं को शामिल किया गया है और फिर इन्हें दो श्रेणियों में विभाजित किया गया है।

- इस योजना का उद्देश्य किशोरी बालिकाओं को सशक्त बनाकर, उनके पोषण एवं स्वास्थ्य में वृद्धि करके, उन्हें परिवार –आधारित उपयोग जीवन–कौशल उन्नयन एवं परिवार तथा शिशु रक्षा के संबंध में जागरूक करना है।
- यह योजना भारत के सभी राज्यों/ केन्द्रशासित प्रदेशों में कुल 200 जिलों में लागू है।
- मध्यप्रदेश में यह योजना 15 जिलों श्योपुर, राजगढ़, सीधी, नीमच, झाबुआ, टीकमगढ़, रीवा, भिण्ड, दमोह, सागर, इन्दौर, जबलपुर, भोपाल, बैतूल एवं बालाघाट जिलों में लागू की गई है।

8. बेटी बचाओ अभियान–

- सामान्यत: सम्पूर्ण मध्यप्रदेश में और विशेषत: कुछ जिलों में गिरता हुआ लिंगानुपात एक चिंता का विषय है। ज्ञात हो कि 1961 में मध्यप्रदेश में शिशु लिंगानुपात (0–6 आयु वर्ग) 967 था, जो 2011 में गिरकर 912 पर पहुँच गया।
- मुरैना में तो शिशु लिंगानुपात मात्र 825 व भिण्ड में 835 है। इसका प्रमुख कारण यहाँ बेटियों की भ्रूण हत्या का अधिक होना है।
- विशेषज्ञों का कहना है कि एक स्वस्थ बाल लिंगानुपात को कम से कम 952 तो होना ही चाहिए, नहीं तो आने वाले समय में समाज को प्रबल लैंगिक विषमता का सामना करना पडेगा।
- अत: बेटियों के पक्ष में वातावरण बनाकर जनसंख्या में उनका अनुपात बढ़ाने के उद्देश्य से मध्यप्रदेश में बेटी बचाओं अभियान का श्रीगणेश किया गया है और इसके प्रति जनमत जाग्रत करने के लिए एक स्लोगन दिया गया है**– बेटी है तो कल है।**
- मध्यप्रदेश में प्रति वर्ष **5 अक्टूबर को बेटी बचाओं दिवस** भी आयोजन किया जाता है।
- चम्बल संभाग (भिंड, मुरैना जिले) की ऑगनवाड़ी कार्यकर्ताओं ने मुट्ठी बॉधो बहना नाम से जनजागृति दल बनाए हैं, जो महिलाओं को समझाती हैं कि बेटी बचेगी, तभी सृष्टि बचेगी।

9. गौरवी केन्द्र का शुभारंभ – मध्यप्रदेश सरकार द्धारा महिलाओं के सम्मान और संरक्षण दिशा में बेटी बचाओं अभियान, मुख्यमंत्री कन्यादान और लाड़ली लक्ष्मी जैसी अभिनव योजनाओं के बाद अब एक और महत्वपूर्ण कदम के तहत महिला सम्मान व संरक्षण के लिए 16 जून, 2014 को राजधानी भोपाल में देश के पहले एकीकृत संकट समाधान केन्द्र (वन स्टॉप क्राइसिस रिज्यूलेशन सेंटर (ओएससीसी) 'गौरवी' केन्द्र का प्रारंभ किया गया। इस प्रथम 'गौरवी केन्द्र' का शुभारंभ भोपाल के जयप्रकाश चिकित्सालय में प्रख्यात अभिनेता आमिर खान ने किया। ओएससीसी के तहत स्थापित 'गौरवी केन्द्र' मध्यप्रदेश सरकार एवं एक्शन एड (एनर्जी) की संयुक्त कार्य योजना है। गौरवी केन्द्र में मुख्य रूप से हिंसा और बलात्कार की शिकार महिलाओं को मदद दी जाएगी।

10. स्वागतम् लक्ष्मी योजना – महिलाओं के सम्मान, सुरक्षा और कल्याण के प्रति, प्रतिबद्ध मध्यप्रदेश सरकार ने महिलाओं की सुरक्षा की दिशा में एक और कदम बढाते हुए स्वागतम् लक्ष्मी योजना का शुभारंभ किया है। प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री शिवराज सिंह चौहान ने 24 जनवरी 2014 को अन्तर्राष्ट्रीय बालिका दिवस के अवसर पर राजधानी भोपाल के रविन्द्र भवन में महिला एवं बाल विकास विभाग की इस योजना का शुभारंभ किया। राज्य सरकार की इस योजना के तहत महिलाओं को अब जन्म से जीवन के अन्तिम पड़ाव तक सरकार की ओर से सुरक्षा और सुविधाएँ मिल सकेंगी। राज्य सरकार की स्वागतम् लक्ष्मी योजना समग्र उद्देश्य और लक्ष्य समूह के लिए लागू की जा रही है। स्वागतम् लक्ष्मी योजना नामक इस कार्यक्रम में माता के गर्भ में पल रही नवजात, विद्यालय एवं महाविद्यालय जाने वाली छात्राएं, घरेलू कामकाज एवं श्रमिक महिलाएं इत्यादि लक्ष्य समूह शामिल है। इसके साथ ही चिकित्सालयों में बालिका जन्म के बाद जच्चा–बच्चा का स्वागत, मेधावी बालिकाओं का सम्मान, उत्कृष्ट कार्य करने वाली महिलाओं को प्रोत्साहन, महिला जनप्रतिनिधियों का सम्मान, संवेदनशील पुरूषों का सम्मान, शाला, महाविद्यालय, पंचायत में महिला प्रतिनिधियों का सम्मान एवं स्वागत भी इस योजना के महत्वपूर्ण अंग है।

11. मध्यप्रदेश बाल–संरक्षण आयोग (Child Rights Protection Commission)

- आयोग का मुख्यालय भोपाल में स्थित है।
- बच्चों के हितों की सुरक्षा और उनके सम्पूर्ण विकास के उद्देश्य से मध्यप्रदेश सरकार ने वर्ष 2008 में इस आयोग की स्थापना का निर्णय लिया।
- आयोग में एक अध्यक्ष व न्यूनतम 2 महिला सदस्यों सहित कुल 6 सदस्य होते है। इनके सदस्यों का कार्यकाल नयूनतम 3 वर्ष या 60 वर्ष की आयु होता है।
- इस समय श्रीमती उषा चतुर्वेदी इसकी अध्यक्ष है। उनकी नियुक्ति अप्रैल 2012 में हुई थी और वे अगले तीन वर्षो तक इस पद पर बनी रहेंगी।

मध्यप्रदेश सरकार निरंतर महिलाओं के उत्थान के लिए प्रयासरत है महिलाओं के उत्थान से ही परिवार, समाज एवं राष्ट्र का विकास संभव है। महिलाएँ सामाजिक व्यवस्था में प्रत्येक परिवार की गृहस्थी को मजबूत बनाने के लिए सक्षम हैं। वे पारिवारिक जिम्मेदारियों को पूर्ण करते हुए सामाजिक दायित्व, राष्ट्रीय दायित्व, आर्थिक दायित्व का निर्वहन करती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कामकाजी महिलाएं – शीला सलूजा, चुन्नीलाल सलूजा।
2. महिला विश्वकोष– रमा शर्मा, एम.के. मिश्र।
3. महिला विकास– रमा शर्मा, एम.के. मिश्र।
4. नारी सशक्तिकरण– डॉ0 हरीदास रामजी शेण्डे सुदर्शन।
5. आत्मनिर्भरता का स्वरूप – विनय दुबे, डॉ0 उमा लवानिया, डा0 भावना रमैया आज की नारी।
6. मध्यप्रदेश शासन की कल्याणकारी– पूनम जायसवाल योजनाएँ।
7. युग निर्माण योजना – अगस्त, 2008
8. भारत में मानव अधिकार – अरूण चतुर्वेदी, संजय लोढा।

****

खतरे बदलते पर्यावरण के

प्रो. गीता मेहरा *

प्रस्तावना – हमारे चारों ओर प्रकृति के व्याप्त तत्व पर्यावरण का सृजन करते है, साथ ही उन्हीं तत्वों का उपयोग कर सांस्कृतिक मानव, सांस्कृतिक पर्यावरण का निर्माण करता है, परन्तु मानव को उत्प्रेरक मूलभूत तत्व प्राकृतिक पर्यावरण से ही प्राप्त होते है, प्राकृतिक प्रणालियाँ विगत सदी में औद्योगिक, वैज्ञानिक तथा तकनीकी प्रगति ने अनेक विसंगतियों को जन्म दिया। यह अवधारणा वैचारिक स्तर पर बनी कि पर्यावरण न केवल परिवर्तन है बल्कि वह मानव क्रियाओं से उत्पन्न प्रभावों के प्रति संवेदनशील भी है।

उल्लेखनीय है, कि पर्यावरण पुनर्जनन क्षमता में कमी आने के परिणामस्वरूप गुणवत्ता में अपरिवर्तनीय भारी गिरावट महसूस की जाने लगी, जल, मृदा, भूमि, वन एवं सम्पूर्ण पर्यावरणीय गुणवत्ता को मानव की अन्धाधुंध एवं लगातार मांग ने प्रभावीत किया तथा उनमें ह्रास की प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होने लगी।

अनेक अध्ययनों ने स्थानीय, प्रादेशिक, राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय पर्यावरणीय समस्याओं की ओर ध्यान आकर्षित किया।

मानव समाज एवं पर्यावरण के बीच उक्त संबंध – पृथ्वी पर मानव जीवन के उपरान्त इसका विकास निरन्तर होता रहा परन्तु मानव को अपने विकास काल में जलवायु संबंधी अनेकानेक समस्याओं एवं परिवर्तनों का सामना करना पड़ा, किन्तु उसने अपनी बुद्धि और विवेक की सहायता से औजारों का आविष्कार किया एवं जीवित रखने में हुआ, भोजन की प्रारंभिक आवश्यकता को पूरा करने के लिये कठिन परिश्रम एवं संघर्ष करना पड़ा। उसने अपने साथी मनुष्यों के साथ मिलकर रहना एवं प्रकृति में पाये जाने वाले कन्द–मूल फलों और शिकारों की खोज में एक साथ जीना सीखा। विद्वानों की यह धारणा है कि मानव ने पाषाण युग में कृषि, कृषि आविष्कारों को पूर्णरूपेण अपना लिया। इस युग में मानव का जीवन अधिक परिवर्तित हो गया। मानव ने स्थायी निवास बनाकर रहना प्रारंभ कर दिया और धीरे–धीरे बस्तियाँ बस गई। बस्तियों का आकार बढ़ा और ये गांवों में बदल गई। इनमें से कई छोटे आरक्षित नगर बन गये जिन्होंने अनेक निवासियों और पशुओं की जंगली पशुओं और अन्य समूहों से रक्षा करना प्रारंभ किया इस फलस्वरूप मानव के व्यवस्थित जीवन के फलस्वरूप एक सामाजिक संगठन जीवन विकसित होने लगा।

वर्तमान समय में औद्योगिक, वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास के साथ–साथ जनसंख्या वृद्धि भी प्रारंभ हुई, जनसंख्या वृद्धि के साथ–साथ मानव समाज की आवश्यकताओं में वृद्धि इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये मानव ने प्राकृतिक–संसाधनों का अन्धाधुन्ध दोहन प्रारंभ कर दिया। वन सम्पदा का विनाश हुआ, अविवकपूर्ण दोहन से भौतिक सुखों में तो वृद्धि हुई, लेकिन जीवधारियों का आपसी सन्तुलन गड़बड़ाने लगा। प्रकृति में असंतुलन होने लगा। मानव समाज ने प्राकृतिक संसाधनों की ओर घोर उपेक्षा की इसके कारण मानव जाति के लिये गम्भीर संकट एवं समस्यायें उत्पन्न हुई।

सामाजिक समस्यायें और पर्यावरण – ऊर्जा से संबंधित समस्याये – प्राकृतिक संसाधनों का विकास के लिये अतिदोहन पर्यावरण को प्रभावित करता है। जिसके परिणाम स्वरूप अनेक सामाजिक समस्या में उत्पन्न होती है। सीमित प्राकृतिक संसाधन – प्रमुख रूप से भूमि, वायु, जल एवं ऊर्जा अत्यधिक दबाव में है तथा मानव की भाव प्रवण क्रियाओं एवं स्वभाव ने प्रदूषित कर दिया है। विज्ञान मानव को विकास पूर्ण जीवन को व्यतीत करने के लिये सब कुछ प्रदाय कर सकता है, लेकिन एक इंच भूमि को एक लीटर जल या वायु को जोड़ नहीं सकता या प्रदाय नहीं कर सकता है।

ऊर्जा संकट के कारण –

1. जनसंख्या में तीव्र वृद्धि, शहरीकरण–शहरों, नगरों की तीव्र गति से निरन्तर विस्तार के कारण ऊर्जा/विद्युत की मांग की तुलना में ऊर्जा/विद्युत की आपूर्ति में अत्यधिक रूप से कमी होना।
2. तीव्र गति से शहरों के विस्तार के साथ–साथ उद्योगों की संख्या में तीव्र गति से वृद्धि वर्तमान समय में नित नई औद्योगिक स्थापना हो रही है।
3. दिन–प्रतिदिन विद्युत की चोरी के कारण ऊर्जा/विद्युत उत्पादन एवं वितरण/आपूर्ति में अवरोध उत्पन्न हुआ है।

पेयजल संकट की समस्या – वर्तमान समय में संसार में जनसंख्या की वृद्धि के कारण पेयजल संकट की समस्या उत्पन्न हो गई है। संसार में जहाँ एक ओर पेयजल संकट उत्पन्न हो गया है तो दूसरी ओर जल प्रदुषण से भी संकट उत्पन्न हो रहा है। तथा दिन–प्रतिदिन जनसंख्या वृद्धि, शहरी करण के कारण भी पेयजल संकट उत्पन्न हो गया है। शुद्ध पेयजल प्राप्त करना कठिन हो गया है। अंतर्राज्यीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर होने वाला विवाद भी पेयजल संकट के कारण उत्पन्न हुआ है। 21 वीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों में ही लगभग 55 प्रतिशत से 65 प्रतिशत तक जनसंख्या किसी ने किसी रूप में जल संकट कर रही है। तथा संसार के 75–85 प्रतिशत राष्ट्रों में जल संकट की स्थिति उत्पन्न हो गई है।

लोगों का पुनर्नियोजन एवं पुनर्वास समस्यायें– मानव सभ्यता ने हमेशा मानव निर्मित एवं प्राकृतिक आपदाओं से उत्पन्न समस्याओं का सामना किया है, इन आपदाओं के कारण विनाश एक प्रकार की घटना है जो कि ए निश्चित क्षेत्र स्थान एवं समय पर होती है। इसके कारण कभी–कभी जीवन की अत्यधिक क्षति, धन एवं सम्पत्ति को नुकसान होता है। प्राकृतिक आपदाओं के अंतर्गत भूकम्प, ऑधी, तूफान, बाढ़, सूखा, हिमपात/हिमधाव या हिमवर्षा का रिसाव, कृषि पद्धतियों, जल में तेल का रिसाव बाँधों का निर्माण आदि इन आपदाओं का प्रभाव सभी पुरूषों, महिलाओं शिशुओं, पशुओं आदि सभी पर दिखागई देता है। इन आपदाओं के पश्चात लोगों का

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

पुनर्नियोजन एवं पुनर्वास के क्षेत्र में सहायता कार्यक्रमों की आवश्यकता होती है। विभिन्न भौतिक एवं सामाजिक एवं आर्थिक कारणों से लोगों को अपना स्थान छोड़ना पड़ता हैऔर दूसरे स्थान पर उनको बसाया जाता है। इसको पुनस्थापित एवं पुनर्वास कहते है।

भूकम्प, ज्वालामुखी, विस्फोट, बाढ़ चक्रवात, हिमपात, हिमवर्षा आदि प्रमुख आपदायें जिनके प्रभाव के कारण अधिक संख्या में मनुष्य/लोग विस्थापित होते है।

गुजरात में 26 जनवरी 2001 को आये भूकम्प के समय 19,000 के लगभग लोगों की मृत्यू हुई, 2,00,000 से अधिक लोग दुर्घटना ग्रस्त हुये अधिक संख्या में प्रभावित क्षेत्र से लोग दूसरे स्थान को प्रवास कर गये थे। वर्ष 1999 में उड़ीसा राज्य में आये चक्रवात के समय 02 लाख से अधिक लोग अन्य स्थान पर विस्थापित हुये।

जिन स्थानों पर आपदाओं के प्रभाव से पुनर्वास किया जाता है। उन स्थानों पर विस्थापित लोगों का सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक समायोजन की समस्यायें उत्पन्न होती है और उनका ताना-बाना छिन्न-भिन्न हो जाता है।

आपदाओं के प्रभाव के कारण विस्थापित लोगों का पूर्व स्थान एवं धरती से भावनात्मक लगाव होता है, जब वह अन्य स्थान पर विस्थापित होते है, तब उनको पूर्व स्थान को छोड़ने पर आघात पहुँचता है। तथा उस धरती, भवनों, खेतों खलिहान आदि से बिछुड़ने का दर्द जीवन पर्यन्त होता है।

विस्थापित लोगों के पुनर्वास होने के पश्चात उनको परम्परागत व्यवसाय कृषि पशुचारण मछली पकड़ना, वनोपज को संग्रहित करना एवं अन्य रोजगार विस्थापितों को पुनर्वास स्थलों/क्षेत्रों में उपलब्ध नहीं होने के कारण बरोजगारी एवं सुविधाओं की समस्याएँ विकसित होती है।

औद्योगीकरण एवं उपभोक्तावादी, सुख, वैभव, आर्थिक विकास इस मानवीय प्रवृत्ति ने प्राकृतिक संसाधनों का इतना दोहन कर लिया है कि पर्यावरण में असंतुलन की स्थिति उत्पन्न हो गई है।

पर्यावरण के बिगड़ने रूपस्व से सारा विश्व चिंचित है, किन्तु इस ग्रह की दुर्दशा के लिये हम मानव ही जिम्मेदार है। हमारी तृष्णा ने विराट रूप धारण कर लिया है। अत: इसके दुष्परिणाम ही को भुगतने है।

वर्तमान की तुलना में पहले प्रकृति अधिक स्वच्छ थी अर्थात् वायु, जल, तथा स्थल का अब जो रूप है, वह वैसा नहीं था। वह जीवन के लिये अधिक अनुकूल था। उसमें लगातार ह्रास आने से ही वह स्वच्छ से चलकर प्रदूषित अवस्था में पहूँच गया है। पर्यावरण प्रदूषण में मानवीय हस्तक्षेप की प्रमुख भूमिका रही है। सुख-सुविधाओं की खोज में मनुष्य ने प्रकृति के संसाधनों का अति दोहन किया है। बढ़ती जनसंख्या के कारण पोषण के लिये अधिक अन्न उपजाने और उनके लिये विविध आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये उसने तमाम कल कारखाने की स्थापना की इससे उत्पादन तो बड़ा है, किन्तु पर्यावरण के घटकों में क्रमश: परिवर्तन आता रहा। इस परिवर्तन के प्रति मनुष्य निरन्तर अनुकूलित होने का प्रयास करता आया है। किन्तु अब स्थिति अत्यन्त विस्फोटक बन चुकी है और पर्यावरण अब अत्यधिक प्रदूषित हो चुका है, जिससे यह समग्र मानव जाति के लिये नाना प्रकार से घातक बन रहा है।

विकास तथा जीवन शैली को सुधारने के लिए हमने पिछले कुल दशक में जो रास्ता चुना है उस पर चल कर यह संभव नहीं होगा। एक ओर पर्यावरण बिगड़ रहा है तो दूसरी ओर प्राकृतिक संसाधनों का तेजी से दोहन हो रहा है। विश्व की जनसंख्या 2011 में 7 अरब को पार कर गई थी वर्ष 2025 में यह 8 लाख हो जायेगी। ऐसा अनुमान है। आगे भी यह सिलसिला चलेगा। वर्ष 2050 तक बड़े-बड़े शहरों में लगभग एक अरब लोगों को पानी की कमी का सामना करना होगा।

इस प्रकार अगर हम देखें तो पूरे विश्व तथा भारत के सामने अनेक समस्याऐं है जो पर्यावरण से जुड़ी है। जहाँ तक उद्योग से यातायात के साधनों के प्रदूषण का प्रश्न है तो उन पर नियंत्रण के लिये सरकारी विभाग तथा संस्थाऐं है। उन्हें अपना काम सही तरह से करना होगा।

कुछ हद तक व्यक्तिगत स्तर पर परिवार के स्तर पर तथा सामाजिक स्तर पर हम सभी योगदान दे सकते है। इंधन तथा ऊर्चा का अप० रोंके प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करें तो कॉफी हद तक समस्यायें कम हो सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मासिक पत्रिका - अविष्कार - जून 2015
2. मासिक पत्रिका - विज्ञान प्रगति - जुलाई 2015
3. पर्यावरण अध्ययन - लेखक एम.पी. सिंह, नरेन्द्र प्रसाद।
4. पर्यावरणीय अध्ययन - लोकेश श्रीवास्तव, अर्चना पाण्डे।

****

महिलाओं के अपराध रोकने में समाज की भूमिका

डॉ. शैलजा दुबे * समता तिवारी **

प्रस्तावना – अपराध किसी भी परिपेक्ष्य या परिस्थिति में हुआ हो न्यायोचित नहीं हो सकता। किन्तु सामाजिक परिवेश में आज हम इतने सभ्य तो हो ही गए है कि हर स्तर पर सुधार की गुंजाईश है। यही ध्यान में रखते हुए हमारी न्याय व्यवस्था कार्य कर रही है। महिलाओं द्वारा किए गए अपराध पश्चात उनके जीवन को सुधार यात्रा, सुधार गृह अथवा जेल में प्रवेश द्वार से आरम्भ हो सकती है क्योंकि ये सर्व स्वीकार्य तथ्य है कि अपवाद को अगर छोड दिया जाए तो अधिकतर अपराध महिलाओं द्वारा क्षणिक आवेश (जिसका पश्चाताप उन्हें आजीवन रहता है) अति विषम परिस्थिति अथवा अनचाहे भी हो जाता है। किंतु इन महिलाओं के सुधार की स्वर्णिम किरण है इनका अपना परिवार से अटूट संवेदनशील लगाव। सुधार के विभिन्न स्तरों में शिक्षण, स्वावलंबन आदि के कहीं पहले आता है वैचारिक प्रोत्साहन। 'सब कुछ खत्म हो गया' जैसे वाक्य उन्हें मानसिक रूप से उसी दलदल में बने रहने के लिए मजबूर कर सकते हैं। यदि उम्मीद जगाई जाए कि विराट जीवन का एक पृष्ठ यदि मलीन हो भी गया तो भी सुधार कर उसे विस्मृत कर देना असंभव नहीं है, एक नई ऊर्जा व आत्मबल का संचार किया जा सकता है।

महिला अपराधियों के अपराध का मुख्य कारण ही समाज है। पुरूषों द्वारा किए गए अपराध तो मुख्यत: काम, क्रोध, मद, लोभ की वजह से होते है जो कि व्यक्ति के स्वयं के नियंत्रण में हैं। किन्तु महिलाओं द्वारा किए गए अपराधों की वजह सामाजिक व्यवस्था ही है जिनमें मुख्यत: अशिक्षा, दहेज प्रथा, बाल विवाह, कन्या भ्रूण हत्या, यौन उत्पीड़न, पुरूषों में बढ़ती नशे की प्रवृति आदि है। जिन्हें समाज ही दूर कर सकता है। एक नारी के कई रूप है जिनमें मुख्यत: माँ, बेटी, बहन, पत्नी है।

कैदी महिलायें कहीं न कहीं शोषिता होने के कारण उनसे उभरे टकराव और बेबसी का जिन्दा उदाहरण हैं। इनमें से अधिसंख्य औरतें लगातार बेइन्साफी के खिलाफ हैं और इस समाज की चौखट पर अन्याय की शिकार हो दम तोड़ रहीं हैं।

हम उन परिस्थितियों से निपट सकते है लेकिन शिक्षित समाज की शर्त पर क्योंकि उन कारक तत्वों पर काबू नहीं पा सकते जिन कारणों से समाज में अपराध और अपराधी पनपते है। दूसरा कारण जब तक समाज में गरीब और अमीर की खाई नहीं पटती तब तक अपराध भी होते रहेंगे और अपराधी भी पैदा होते रहेंगे। हम खुश हो जाते है कि आज देश भर की जेलों में अपराधियों को अच्छी मूलभूत सुविधाएं, अच्छा खाना, बेहतर स्वास्थ्य की सुविधाएं दी जाती हैं। अगर ये ही सारा खर्च ईमानदारी से उनके पोषण–स्वास्थ्य और शिक्षा के साथ परिवार नियोजन पर करें तो शायद पूरे तौर पर चाहे नहीं लेकिन आधे अपराधी तो घटाए ही जा सकते हैं। अपराध की शुरूवात और रूझान लालच से और अंत जेल की काल कोठरी में होता है। एक स्वस्थ सामाजिक वातावरण बनाने, उन्हें शिक्षित करने का दायित्व हम सब पर ही है। हम और आप मिलकर कितनी जवाबदेही निभा रहे हैं। ये पहले सोचना होगा। देश में फास्ट्रैक कोर्ट के चलन के बावजूद और कानूनी साक्षरता के बावजूद ये न्याय, ये शिक्षा उस अंतिम महिला तक आज भी नहीं पहुंच पाया हैं, जिसकी इन्हें सबसे बड़ी जरूरत है।

अत: सबसे जरूरी है अपराधी प्रवृत्ति से दूर रखने के लिये उन्हें वैचारिक सम्बल दिया जाए। उन्हें बेहतर जीवन के लिए तैयार करने के साथ प्रोत्साहन देना कि इंसान का जीवन ही सुधार के लिए है, जो होना ही चाहिए।

अब विषय आता है उद्यम विकसित कर महिला अपराधियों को स्वावलंबित करने का। जेल में महिलाओं को सजा स्वरूप झाड़ू लगवाकर एवं गेंहूं चुनाई कराकर इतिश्री पर्याप्त नहीं हैं, हुनर के साथ प्रोत्साहन राशि भी आकर्षक की जा सकती है। जो कम से कम इतनी तो हो कि बाहर निकलकर उसका उपयोग अपना कोई छोटा व्यवसाय करने में काम आए।

जेल के परिपेक्ष्य में जेल नियमावली के नियम 647(क) में बंदियों के श्रम को तीन भागों में वर्गीकृत किया है कठोर, मध्यम और हल्के। साथ ही इनके श्रम के हिसाब से बंदियों का पारिश्रमिक निर्धारित किया गया है। जिसमें कार्य के अनुसार अकुशल बंदी को 50 रूपये एवं कुशल बंदी को 55 रूपये प्रतिदिन की दर से प्रदाय किया जाता है। यह पारिश्रमिक बंदी के एकाउण्ट में जमा किया जाता है। इसका 50% पीड़ित पक्ष को प्रतिकर राशि के रूप में भुगतान किया जाता है। बाकी बची 50% राशि पुनर्वास हेतु अपर्याप्त है। इसके अतिरिक्त जो प्रयास किए जाने चाहिए उनमें ऐसी सभी संस्थाए जो इस तरह की महिलाओं के द्वारा बनाए गऐं उत्पादों को सहर्ष स्वीकार कर बिक्री में मदद करती है, उनका संपूर्ण विवरण रिहाई के समय महिलाओं के पास होना चाहिए। यदि सुधार ग्रह या जेल केवल दी गई सजा को काटने का स्थान नहीं वरन एक संस्थान के रूप में कार्य करें। तो कम से कम महिलाओं को जेल अवधि में अच्छे आचरण का प्रमाण पत्र देने से कोई हिचक नहीं होनी चाहिए।

महिला कैदियों के पुनर्वास में सार्थक प्रयास तभी हो सकता है, जब सरकार द्वारा भी कुछ राशि ऋण रूप में आसानी से महिलाओं को उपलब्ध कराई जा सके। एक लंबी अवधि जेल में बिताने के बाद महिलाएं एक हद तक कम संसाधनों में अच्छे जीवन के गुर सीख ही चुकी होती है। ऐसे में छोटा सा प्रोत्साहन भी बड़ी मदद कर सकता है। जो कुछ भी रोजगार स्थापित करने हेतु इन्होंने जेल में सीखा है, उसे बाहर आकर भी यदि महिला जारी रखे एवं सरकारी संस्थान उचित दाम पर खरीदे, यह एक बहुत बड़ी राहत है। स्व सहायता समूह, सहकारी संस्थानों के माध्यम से इनके पुनर्वास के प्रयास अधिक सुलभ हो सकते है तथा उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार सहजता से सुलभ हो सकते है।

* निर्देशिका, प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र एवं सामाजिक कार्य) महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नाकोत्तर (स्वशासी) महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र) भारत
** शोधार्थी, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र) भारत

यह तो है संस्थानों एवं स्वयं महिला द्वारा किए गए प्रयास जिनसे अपराधी प्रवृति को जड़ से खत्म किया जा सकता है। अब समाज का पक्ष देखें। स्वीकार करना कठिन अवश्य है किन्तु समाज भी कहीं न कहीं उत्तरदायी बन बैठता है महिलाओं द्वारा किए गए अपराध के लिए। समाज के नियम महिलाओं व पुरूषों के लिए आज भी अलग है। महिला का अपने हित में लिया गया फैसला समाज को कम स्वीकार होता है। जिसके चलते छुपकर लिया गया अनुचित निर्णय अपराध का रूप धारण कर लेता है।

महिलाओं को आए दिन कहीं न कहीं निर्वस्त्र घुमाया जाता है, जिंदा जलाया जाता है। रिपोर्ट करो तो धमकाया जाता है। जबरन वैश्या बनाया जाता है, धर्म के नाम पर बहलाया-फुसलाया जाता है, बेटियों को गर्भ में ही मरवाया जाता है, भेड़-बकरियों की तरह खरीदा-बेचा जाता है, खाप पंचायतों के आदेश-अध्यादेश पर प्रेमी-युगलों को पेड़ों पर लटकाया जाता है, फाँसी पर चढ़ाया जाता है। जिंदा औरतें अपने ही घरों में असुरक्षित हैं और 'आशा किरण में अंधेरे पसरे पडे हैं।

समाज ने रोजगार भी महिलाओं व पुरूषों के लिए बिना किसी उचित कारण पृथक कर दिए हैं। यदि कोई महिला ऑटो चलाना चाहे, उसे समाज आसानी से इजाजत नहीं देता। जबकि कई उच्च शिक्षित पुरूष इस तरह की काम कर अच्छा जीवन यापन कर रहे हैं। कई तरह की बंदिश भी कई बार महिलाओं के देह व्यापार जैसे घृणित कार्य की ओर धकेल देती हैं।

आज अनेकानेक कारणों से महिलाएं उत्पीड़न का शिकार हैं। यद्यपि शासन द्वारा महिलाओं के कल्याण के लिए उन्हें विकास की मुख्य धारा में लाने के लिए अनेक प्रावधान किए गए है। लेकिन इन सबके बावजूद उनकी स्थिति में अपेक्षित बदलाव दृष्टिगत नहीं हो रहा है।

समाज आज भीड़ में अपने को एक सभ्य समाज कहता है किन्तु एकांत में मौका पाकर पुरूष अपना बल महिलाओं पर दिखाना नहीं भूलता जिसे हम काफी हद तक स्कूलों/कॉलेजों में सामाजिक विज्ञान का अतिरिक्त पाठ्यक्रम शुरू करके ही ठीक कर सकते है। शिक्षा ही एक ऐसा अस्त्र है जो हमें अन्यायों, अज्ञान, अशिक्षा से मुक्त करा सकती है तथा जीने का तरीका भी सिखाती है, जिससे महिलाओं में अन्याय, शोषण तथा दबाव के विरूद्ध संघर्ष करने की काबलियत आ सकती है। शिक्षित महिला और समाज ही सामाजिक बुराईयों को समाप्त कर सकता है। नारी के लिये शक्ति के साम्यिक और सक्रिय हिस्से की मांग करने के लिये प्रयास करना आवश्यक है। महिलाओं के अपराध को रोकने तथा उन्हें स्वस्थ्य मनोशारीरिक, सामाजिक, आर्थिक विकास का अवसर सुलभ कराना अतिआवश्यक है।

अगर समाज एक प्रतिशत भी जिम्मेदारी लेता है कि महिलाओं के द्वारा अपराध में वह उत्तरदायी है तो सुधार वहाँ भी आवश्यक है। समाज उन्हें दोबारा स्वीकार करे। उनके सुधार पर प्रोत्साहन दे एवं स्वावलंबी होकर जीने की यात्रा में सहयोग करें। समाज का नैतिक संबल ही सबसे बड़ा सहारा है, महिला कैदियों के पुनर्वास हेतु समाज द्वारा स्वीकार किए जाने पर ही समाज के प्रति विश्वास कायम हो सकता है, जो कि सबसे बड़ा प्रयास है महिला कैदियों को पुन: स्थापित करने हेतु।

हम एक ऐसे कल्याणकारी राज्य की कल्पना करते हैं, जहां वैभव-सुख-शांति चाहे कम हो किंतु अपराध कम से कम हो, कोई मजबूर न हो, शोषित न हो, कोई अन्याय का शिकार न हो, लेकिन क्या हम ऐसा समाज देख पा रहे हैं। पृथ्वी के आधे संसाधनों की हकदार नारी को अधिकार दिए बिना वास्तविक कल्याण या विकास नहीं हो सकता है।

अन्त में स्वामी विवेकानन्द द्वारा दी गई उक्ति प्रासंगिक है 'स्त्रियों की अवस्था में सुधार लाए बिना विश्व कल्याण असंभव है, जैसे की एक पंख से उड़ान भरना'।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्री आर.एस.विजयवर्गीय, मध्यप्रदेश जेल नियमावली, वाधवा लॉ हाऊस वर्ष 2010
2. डॉ. लालजी मिश्रा, मध्यप्रदेश जेल प्रबंधन।
3. डॉ. विद्युल्लता, संपादक औरत मासिक पत्रिका।
4. श्रीमती सोमेशपाल, सहायक जेल अधीक्षक, केन्द्रीय जेल भोपाल।

****

जनजातियों में सांस्कृतिक एवं सामाजिक चेतना साहित्य के संदर्भ में

डॉ. एस.एस. राठौर *

प्रस्तावना - स्वतंत्रता के पश्चात् भारत के नियोजित विकास की जो योजनाऐं बनी उनमें मूल भूत रूप से आर्थिक विकास के कार्यक्रम रखे गये और कालान्तर में अपेक्षित आर्थिक परिणाम भी प्राप्त हुए। साथ ही साथ मानव विकास व सामाजिक-संस्थागत विकास की आवश्यकता भी महसूस हुई। आर्थिक विकास से अलग रहकर मानविकी परिस्थितियों को जानना, समझना और विकसित करने में शिक्षा की जागरूकता का महत्वपूर्ण स्थान है।

मानव की मूलभूत आवश्यकताओं के पश्चात् शिक्षा एक आवश्यक आवश्यकता के रूप में उभरकर आई है। उसका एक महत्वपूर्ण कारण था कि शिक्षा ही ज्ञान व जागरूकता का आधार थी। पूर्ण जागरूक मस्तिष्क ही राष्ट्र का निर्माण कर सकता है। भारतीय मानव समाज में एक बड़ा प्रतिशत अनुसूचित जनजातियों का है। भारतीय अनुसूचित जनजाति ज्यादातर दूरस्थ जंगलों में निवास करती है। जहॉ आवागमन/संचार/स्वास्थ्य/शिक्षा के साधनों और सुविधाओं का अभाव पाया जाता हैं परिणामस्वरूप यह समाज की मुख्य धारा से अभी भी बहुत दूर हैं।

राष्ट्र के निर्माण में जनसंख्या सीमा और सम्प्रभुता का महत्वपूर्ण योगदान है। राष्ट्रीय विकास में ज्ञान व विवेकपूर्ण नागरिक ही अपनी सेवायें प्रदान कर सकते है। भारतीय जनजाति समाज का शिक्षा, ज्ञान व जागरूकता के क्षेत्र में पीछे होना, विकास के लक्ष्य व मापदण्डों की पूर्ति में बाधक है इसलिये जनजातीय समाजों में सम्प्रभुता विषयक ज्ञान व जागरूकता का अध्ययन वर्तमान समय में समीचीन है। मानव समाज में भौतिक एवं अभौतिक संस्कृति की प्रगति भारत में उल्लेखनीय रही है। भारतीय समाज के विभिन्न घटकों ने मिलकर अपनी आवश्यकतानुसार व्यवस्थाओं का प्रादुर्भाव किया। कालान्तर में यही व्यवस्था जब हमारी आवश्यकता में परिवर्तित हो गई और संस्कृति के रूप में हमने इसे स्वीकार कर लिया।

भारतीय संस्कृति के निर्माण में ग्रामीण और शहरी संस्कृति के अतिरिक्त जनजातीय संस्कृति का भरपूर योगदान रहा हैं। यदि यह कहा जाय कि भारतीय संस्कृति जनजातीय संस्कृति की नींव पर खड़ी है तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी।[1] भारतवर्ष की संस्कृति एवं सभ्यता की सम्पूर्णता अपने आप में अनूठी है। इसका कारण यहॉ के निवासियों की विभिन्न सांस्कृतिक अस्मिता है जो अपने आप में संमृद्ध है। भारत के विभिन्न पर्वतीय, मैदानी क्षेत्रों मे तरह तरह की जनजातियां, भिन्न-भिन्न सांस्कृतिक तत्वों एवं विशेषताओं के साथ निवास कर रही है। ये जनजातियां आज के वैज्ञानिक दौर में काफी पीछे हैं और उनके उपयोग का संसाधन अधिकतम प्राकृतिक है। इस तरह से यह अपेक्षाकृत अधिक प्रकृति के समीप स्वस्थ्य एवं मेहनती है।

सांस्कृतिक आधार पर भारतीय जनजाति को बैरियर एल्विन ने चार भागों में विभक्त किया है। सांस्कृतिक आधार में उनके पारिवारिक या सामाजिक जीवन सहित समस्त समग्रता आ जाती है। एल्विन ने सांस्कृतिक विभाजन में संस्कृति सम्पर्क को ही आधार माना है। इनके अनुसार प्रमुख प्रकार निम्न है-

1. आदिमतम स्थिति में जीवन बिताने वाली जनजातियां।
2. आदिमतम जीवन में कुछ परिवर्तन कर जीवन बिताने वाली जनजातियां।
3. वे जनजातियां जिनकी संस्कृति बाह्य संस्कृति के सम्पर्क में आने से समाप्त हो रही है।
4. वे जनजातियां जो बाहरी संस्कृति में आने के बावजूद भी अपनी प्राचीन संस्कृति को उसी प्रकार बनाये हुए हैं।

वर्तमान में आधुनिकीकरण की प्रक्रिया सभी क्षेत्रों में दिखाई देती है। सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक के अतिरिक्त संचार, आवागमन के साधनों का विकास आदि क्षेत्रों में तेजी से परिवर्तन हो रहे हैं और परिवर्तन का प्रकार शहरी क्षेत्रों से धीरे-धीरे ग्रामीण क्षेत्रों की ओर जा रहा हैं। जनजातियों में सांस्कृतिक, राजनैतिक सामाजिक परिवर्तनों का यही आधार है। डॉ. मजूमदार ने भारतीय जनजातियों को सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक आधार पर तीन भागों में बांटा है।

1. हिन्दू प्रभाव से पूर्णरूपेण रहित आदिम जातियां।
2. आंशिक हिन्दू प्रभाव से प्रभावित जनजातियां।
3. ईसाई व हिन्दू प्रभाव से प्रभावित जनजातियां।

आर्थिक जीवन स्तर के आधार पर जनजातियों का वर्गीकरण डॉ. रवीन्द्रनाथ मुखर्जी ने किया है। उन्होंने आर्थिक वर्गीकरण में जीविकापार्जन को प्रमुख आधार माना है। इस प्रकार उनके द्धारा किया गया विभाजन निम्नवत् है-

1. शिकार करने एवं भोजन इकट्ठा करने वाली जनजातियां।
2. पशुपालक जनजातियां।
3. कृषि कार्यो वाली जनजातियां।
4. उद्योग धंधे में लगी जनजातियां।
5. मछली मारना एवं शहद इकट्ठा करने वाली जनजातियां।
6. वनोपज से जीवन यापन करने वाली जनजातियां।

कुछ जनजातियां अपने स्थानीय क्षेत्र की खदानों, उद्योगों, चाय बागानों के श्रमिक के रूप में कार्य करती है। बिहार, बंगाल एवं आसाम की जनजातियां इसी श्रेणी में आती है। शासन के प्रयासों से कुछ स्थानीय साधनों पर आधारित लघु उद्योगों की स्थापना हो रही है जिसमें जनजातियों को शासन प्रोत्साहन भी देती है।

वर्तमान समय में समय के परिवर्तन के साथ जनजातियों के और भी कुछ रूप सामने आये है।

* प्राध्यापक, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.) भारत

क. राजनीति में प्रवेश कर आर्थिक स्थिति में सम्पन्नता लाने वाले जनजातीय व्यक्ति।

ख. कुछ जनजाति समूह लूट, राहजनी, डकैती आदि में शामिल हैं।

ग. बडे-बड़े लोगों के साथ रहकर जनजाति के लोग अपने साहस और निर्भीकता का दुरूपयोग करते हुए अर्थोपार्जन करते हैं।

संघर्ष – फणीश्वरनाथ रेणु ने अपने उपन्यास 'मैला आंचल' में जनजातियों के संघर्ष को बहुत ही विस्तृत एवं प्रभावकारी ढंग से चित्रित किया है। ये अदम्य साहसी लोग कुछ भी कर सकने में सक्षम है। इनको अच्छे एवं बुरे का ज्ञान बहुत ही कम होता हैं। इनकी समझ समाज के अन्य लोगों से भिन्न होती है। ये लोग झाड़-फूंक, टोटके, ओझा, बलिप्रथा पर भी बहुत विश्वास करते है। जिन जनजाति के लोगों की आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी होती है वो समाज के अपने लोगों में दबदबा को कायम रखते हुए इनके यहॉ अपने रीति-रिवाजों के आधार पर ही शादी विवाह आदि सम्पन्न कराये जाते है। ये रूढ़िवादिता से अधिक प्रभावित होते है।

ऐतिहासिक मान्यताओं के आधार पर ये जनजातियां स्वयं को राजपूत (गोड) या एक समान पूर्वज की अच्छी सामाजिक स्थिति का वर्णन करते हैं। बैगा, भतरा, भील, भिलाला, बरेला, बियार, धनवार, कोरकू, कोंदर, कमार, कोल, पनिका और धुर्वे आदि प्रमुख है।

अंत में आज वर्तमान समय में भी इन जनजातियों को मुख्य धारा से जोड़ने की महती आवश्यकता है। इनमें जागरूकता लाना तथा इन्हें शासन की सारी योजनाओं का ज्ञान कराना अति आवश्यक है। शिक्षा से ही इन जनजातियों का कल्याण एवं विकास सम्भव है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय आदिवासी उनकी संस्कृति और सामाजिक पृष्ठभूमि। – डॉ. ललित विद्यार्थी
2. भारत में जनजातीय संस्कृति – डॉ. विजय शंकर उपाध्याय।
3. सामाजिक मानव शास्त्र – डॉ. मजूमदार
4. द एवरीगिनल्स – एल्विन बैरियर
5. मैला आंचल – फणीश्वरनाथ रेणु

****

समाज और मीडिया

डॉ. मंजू गायकवाड़ *

शोध सारांश – जीवन में मनुष्य के लिये मानव समाज आवश्यक है क्योंकि मनुष्य की कई आवश्यकताएँ हैं,और वह स्वंय अकेला अपनी उन समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकता है। मानव सामाज में जितना महत्वपूर्ण स्थान बाजार का है, उतना ही अहम् हैं मीडिया का स्थान। मीडिया और समाज दोनों ही एक दूसरे से जुडे हुए हैं। इनके आपसी संबंध बडे ही महत्व के है। मीडिया अर्थात एक माध्यम। हमारे भारतीय समाज में भी मीडिया एक साधन के रूप में कार्य कर रहा है किन्तु वर्तमान में मीडिया पर बाजार हावी होता जा रहा है। यदि शरीर समाज है तो उसकी कई आवश्यकताएँ है। बाजार आवश्यकताओं की पूर्ति का एक उत्तम स्थान है। मीडिया आवश्यक पूर्ति का साधन या माध्यम है। इस प्रकार समाज बाजार और मीडिया तीनों ही महत्वपूर्ण है और एक दूसरे से संबधित है। एक छोर पर यदि समाज है और दूसरे छोर पर बाजार है तो उनके मध्य एक अहम भूमिका है मीडिया की।

प्रस्तावना – भूतकालीन परिस्थियों पर यदि दृष्टीपात करें तो हम यह पाते है कि स्वतंत्रता से पूर्व हमारे देश में केवल मुद्रित मीडिया ही था जिसमें समाचार पत्र, पत्रिकाएँ आदि छपते थे। आजादी से पूर्व मीडिया का एक 'मिशन' होता था जो कि सेवा कार्य से सम्बधित था। हमारे देश में कई बडे और अच्छे नेता थे जो महान और पत्रकार थे। वे समाचार पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित करते थे जैसे-

1.	लोकमान्य तिलक	–	मराठा ,केसरी
2.	महात्मा गांधी	–	हरिजन , यंग इंडिया,नवजीवन
3.	सुभाष चन्द्रबोस	–	फारवर्ड मार्च
4.	मौलाना आजाद	–	अलहिलाल।

इसके अतिरिक्त संजीवनी, स्वराज्य, कर्मवीर ,हिन्दु, लीडर आदि कई रचनाएँ थी। इन सभी का उद्धेश्य था देश को आजाद करना ,और विभिन्न सामाजिक बुराईयों जैसे –अस्पृश्यता साम्प्रदायिकता, अंधविश्वास आदि को दूर करना साथ ही सामाजिक सुधार करना यथा स्वभाषा, राष्ट्रीय जागरण, नारी उत्थान, आध्यत्मिक उत्थान तथा साम्राज्यवाद का विरोध। हमारे राष्ट्र के इन सभी बडे नेताओं ने समाचार पत्र – पत्रिकाओं के माध्यम से अपने देश की सेवा की, समाज की बुराईयों को दूर करने का प्रयास किया एवं समाज की भलाई का महत्वपूर्ण कार्य किया। स्वतंत्रता के पश्चात मीडिया में 'मिशन' का स्थान 'व्यवसाय' ने ले लिया। इस प्रकार धीरे-धीरे मीडिया का लक्ष्य सेवा नहीं रहा अपितु उस पर व्यवसाय हावी हो गया। मीडिया के क्षेत्र में व्यवसाय और मिशन का द्वन्द मूलत: यथार्थ और आदर्श का संघर्ष है साथ ही किसी सीमा तक यह वर्तमान और अतीत के अंतर को भी दर्शाता है। पहले मीडिया का एक साधन था समाचार पत्र पत्रिकाएँ जिनका उद्धेश्य समाज सुधार एवं जनता की सेवा था।किन्तु आज मीडिया के पूर्व लक्ष्य 'सेवा एवं सुधार पर बाजारवाद हावी हो गया है। मीडिया सामाजिक सरोंकारों सें दूर होने लगा और अपनी सजिम्मेदारियों को भूलने लगा है। बडे-बड़े औद्योगिक घराने के लोग मीडिया से जुड गए और अखबार प्रकाशित करने लगे। जिस प्रकार साबुन तेल, टूथपेस्ट इत्यादि में जरूरत के साथ मुनाफा जरूरी था उसी प्रकार वे भी अपना लाभ एवं निजि स्वार्थ देखने लगे। विज्ञापनों की प्रधानता हो गई। आज बड़े से बड़ा एवं अच्छें से अच्छा समाचार पत्र विज्ञापनों से भरा होता है। सुंदर लिखाई, साफ सुथरी प्रिटिंग सुंदर रंगीन चित्रों सहित चटपटी मसालेदार खबरें बनने लगी। समाचारों में भी वस्तुओं की तरह मिलावट होने लगी और समाचार ज्ञान व जानकारियाँ सत्य से दूर जाने लगे। पूंजीवादियों एवं औद्योगिक घरानों ने अपनी अनीति से कमाई सम्पत्ति की रक्षा हेतु समाचार पत्रों को एक ढाल की तरह उपयोग किया। सेक्स,हिंसा और अपराध से आज समाचार पत्र भरे रहते हैं। टी.वी. में भी यही खबरें देखने, सुनने को मिलती है। प्राकृतिक आपदा, पुनर्वास के समाचार, जनहित की समस्याएँ इनकी उपेक्षा की जाती है। आज समाचारों में 'सनसनी' को प्रमुखता दी जाती है। अब संपादको के स्थान पर प्रबंधको का महत्व बढ़ गया है। आज संपादक तो हाशिये पर चले गए है और प्रबंधको का लक्ष्य अपने समाचार पत्रों की बिक्री बढ़ाना हो गया है। इस प्रकार वर्तमान में समाचार पत्रों की संख्या बढ़ी ,उनकी प्रिंटींग साफ सुथरी हुई, रंग सुन्दर हुए, सनसनीखेज खबरें बनी, चित्र रंगीन हुए चटपटी खबरें व मसालेदार समाचार बने। कुल मिलाकर बाहरी चमक दमक और भौतिक सुंदरता बढ़ी किन्तु मात्र बाह्य सुंदरता बढ़ी और जैसे कि शरीर तो खुबसूरत हो गया किन्तु आत्मा खोखली हो गई। देश में तकनीकी विकास, भौतिक उन्नति तथा प्रौद्योगिक और वैज्ञानिक प्रगति तो बहुत हुई किन्तु सामाजिक दायित्व का पतन हुआ।

प्रभाव– आज भौतिकवाद की चपेट में सभी है। बाजार वाद के कारण विभिन्न समाचार पत्रों में गला काट प्रतिस्पर्धा प्रारंभ हो चुकी है। तरह –तरह के इनामों एवं उपहारों का चलन शुरू हो चुका है। जहां अखबार ज्ञान देने, शिक्षा प्रदान करने का कार्य करते थे वहीं अब लोगों को गुमराह करने का कार्य भी कर रहे है। समाचार पत्र एवं पत्रिकाएँ लोगों को भ्रमित कर रही है। अखबार की खबरें समाज को संदेह में डाल रही है। आज मीडिया की विश्वसनीयता का संकट उत्पन्न हो चला है। भौतिकता के प्रभाव से मीडिया भी नहीं बच पाया है किन्तु इसी भौतिकवाद के कारण मीडिया पर बाजारवाद इतना अधिक हावी हो गया है कि धन लेकर कुछ भी लिखा जा सकता है। पैसा देकर कुछ भी छपवाया एवं यहां तक कि दिखाया भी जा सकता है। इस प्रकार ब्लैकमेल कर कई कार्य किए एवं करवाये जाते है। अत: आज समाचारों पर विश्वास करना दूभर हो गया है किन्तु जिस प्रकार चिकित्सक अपना व्यवसाय करते हुए भी रोगी का उपचार करता है और एक शिक्षक भी विद्यार्थी को सही ज्ञान एवं

* सहायक प्राध्यापक (समाज शास्त्र) शासकीय जे.यो. छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.) भारत

उचित दिशा शिक्षा के माध्यम से प्रदान करता है एवं समस्याओं का समाधान करता है ठीक उसी प्रकार मीडिया को भी अपना समाजिक उत्तरदायित्व याद रखना है। मीडिया पर व्यवसायिकता हावी होने से समाज भी उससे प्रभावित हो रहा है। टी.वी. पर विज्ञापनों द्वारा लोगों को वस्तु खरीदने हेतु आकर्षित किया जाता है एवं समाचार पत्रों द्वारा भी जनता को लुभाया जाता है जिससे कई बार लोग अनावश्यक एवं अनुपयोगी वस्तुएं खरीद लेते है जो कि अच्छी भी नहीं होती है सनसनीखेज खबरें देख सुनकर व पढ़ कर कई किशोर एवं युवा अपराध कर बैठते है। सैक्स, ग्लैमर एवं हिंसा की खबरें पढ़ कर तथा देख व सुनकर अपराधों की संख्या बढ़ती जा रही है। भ्रष्टाचार को सही रूप में उजागर करने तक तो ठीक है लेकिन लोगों की प्रायवेसी भी भंग हो रही है। आए दिन टेपकांड, सीडी कांड हो रहे है। प्रतिस्पर्धा और लोकप्रियता के जाल में आज मीडिया फस चुका है। विभिन्न समाचार पत्रों में आपस में द्वन्द व तनाव है। अखबार विज्ञापनों पर बहुत ज्यादा निर्भर हो गए है साथ ही टी.वी भी। आज समाचार पत्रों का मुद्रित मीडिया होने के करण दृष्य एवं श्रव्य मीडिया से संघर्ष हो रहा है। आज नई बाजार व्यवस्था का आधार नई टेक्नालॉजी है। वर्तमान में हम जिस वैज्ञानिक एवं औद्योगिक युग में भौतिक एवं प्रौद्योगिक जीवन जी रहे है उस नये प्रौद्योगिक युग को लोग कम्प्यूटर और टेलीविजन के प्रतीको से व्यक्त करते है। बाजार हमें वस्तुए देता है और हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है इस कारण हम उससे तो अलग हो ही नहीं सकते है। मीडिया एक माध्यम है जो हमें राह दिखाता है या कि समाज को मार्ग बतलाता है किन्तु आज सामाजिक मर्यादा के मापदंड नष्ट हो रहे है। सामाजिक मूल्यों ,नैतिकता व आदर्शो का एवं हमारी भारतीय संस्कृति का अवमूल्यन हो रहा है और मानव समाज पतन के गर्त में गिरता जा रहा है जहाँ अंधकार ही है।

वस्तुत: हम आशावादी है अत: अंत में निष्कर्षात्मक रूप से यही कि मीडिया चाहे वह प्रिंट मीडिया हो या इलैक्ट्रॉनिक, दृष्य हो या श्रव्य माध्यम हो वह संपूर्ण मानव जाति हेतु एक अच्छा साधन बने। वह भौतिकता की चकाचौंध में न पड़कर जनहित के बारे में सोचे बुराईयों का विरोध कर अच्छे विचारों एवं भलाई का समर्थन करे। वह अपने ऊपर व्यवसायिकता मात्र को हावी न हाने दे। व्यवसाय के साथ वह अपनी सामाजिक जिम्मेदारी को भी समझे। वह अपने पूर्व उद्देश्य सेवा भाव या जनता की सेवा को सदा याद रखे। मीडिया और समाज के रिश्ते बेहतर बनें। मीडिया अपनी सही भूमिकानिभाएँ, वह भारतीय समाज को सही रास्ता दिखलाए क्योंकि उसे समाज का कल्याण करना है। आज हमारे देश भारत में मीडिया को अपना पहले वाला लक्ष्य 'सेवा' नहीं भूलना है। वर्तमान में आवश्यकता इस बात की हैकि भारतीय समाज का मीडिया व्यवसाय के साथ सामाजिक कर्तव्य को भी याद रखें एवं दोनो में तालमेल करके अपने कार्य में संतुलन बनाये रखे क्योंकि सामाजिक जीवन में भी संतुलन बहुत आवश्यक है। अत: व्यवसाय और सेवा में उचित समन्वय स्थापित कर समाज को एक नई दिशा दे और स्वंय राष्ट्र को गौरवान्वित करें तभी राष्ट्र का विकास एवं समाज की प्रगति हो सकेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मीडिया और समाज -ओम गुप्ता (2002) पृ.12
2. मीडिया विमर्श - रामशरण जोशी (2002) पृ.62
3. हिन्दी पत्रकारिता का बाजार भाव -जवाहरकौल (2000) पृ 61
4. पत्रकारिता की चुनौतियाँ - गणेश मंत्री (2000) पृ 29,38

****

सामाजिक जीवन में प्रतीकों का महत्व

प्रो. प्रिशिला अन्द्रेय्स *

प्रस्तावना – प्रतीकों का संसार मानवीय संसार का अभिन्न अंग है। प्रतीक शब्द से ही स्पष्ट है कि बहुधा व्यक्ति जो कुछ भी व्यक्त करता है, उसके समग्र अर्थ को वह साफ–साफ व्यक्त नहीं करता है, वरन् विभिन्न चीजों तथा भावों को व्यक्त करने के लिए कुछ ऐसे चिह्नों या प्रतीकों का व्यवहार करता है जिनके माध्यम से वह अपने वास्तविक भाव की ओर देखने या सुनने वालो को संकेत करता है। भौतिक वस्तुओं के अतिरिक्त आध्यात्मिक और रहस्यात्मक शक्तियाँ और घटनाओं का ज्ञान प्रतीकों के माध्यम से होता है। कला, साहित्य, परम्परा, धर्म आदि मानव जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में प्रतीक केन्द्रीय तत्व के रूप में कार्य करते हैं। अनुभूति और विचार, कल्पना और रहस्य से सम्बन्धित तथ्य है।

प्रतीकों के द्धारा प्रत्येक समाज अपने आदर्शों, मूल्यों और वैचारिक मान्यताओं को अपने सदस्यों तक पहुँचाता है। समूह के लोगों में प्रतीकों के माध्यम से ही सांस्कृतिक लक्षणों का आन्तरीकरण होता है। ऋषि–मुनियों ने प्रतीकात्मक स्वरूपों के द्धारा लौकिक और पारलौकिक जगत के विभिन्न रहस्यों और वास्तविकताओं का उद्घाटन किया है।

लॉक का विचार है कि प्रयोगकर्ता मनुष्य ही प्रतीक को अर्थ प्रदान करता है। इस प्रकार किसी भी पदार्थ, वस्तु, रंग, क्रिया या आवाज आदि को प्रतीक के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। वस्तु के स्वरूप और उनके अर्थ में अंतर कर देना ही उसे प्रतीक बना देता है। जब यह वस्तु अपने प्रतीकात्मक अर्थ में प्रयोग होने लगती है तो चिह्न का रूप ले लेती है।

व्हाइट ने प्रतीक की परिभाषा में लिखा है – 'प्रतीक वह वस्तु है जिसके मूल्य का अर्थ उसके प्रयोगकर्ता द्धारा प्रदान किया जाता है।'

प्रतीकों की उत्पत्ति – आर.के. मुखर्जी के विचार से चिंतन और प्रतीकों की सृष्टि केन्द्रीय नाड़ी व्यवस्था में स्थित विद्युत स्नायुनाल के द्धारा होती है। मनुष्यों में संचार की प्रक्रिया का प्रारंभ चिल्लाने और शारीरिक मुद्रा बनाने से हुआ है। प्रतीकों की उत्पत्ति का मुख्य कारण मनुष्यों की सामाजिकता है। पारिवारिक और सामूहिक जीवन में ही प्रतीकों का जन्म होता है। मानवीय अन्त:क्रिया में मनुष्यों की विभिन्न मूल्यों, आदर्शों, व्यवहार प्रतिमानों तथा स्थिति और भूमिकाओं से सम्बन्धित अनेक प्रतीकों का ज्ञान होता है।

सांस्कृतिक विकास के साथ प्रतीकों का संसार विस्तृत होता जाता है। मनुष्यों का प्रत्यक्षीकरण, चिंतन, मनोवृत्तियां और व्यवहार अधिक से अधिक प्रतीकात्मक होते जाते हैं। लैंगर का विचार है कि प्रतीकों की उत्पत्ति मानवीय आवश्यकताओं के फलस्वरूप हुई है। प्रतीकों का प्रयोग मनुष्य की शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक है। प्रतीकों का सृजन व्यक्ति की मौलिक आवश्यकता है। मस्तिष्क का कार्य नित्य नवीन प्रतीकों और चिह्नों का निर्माण करता है। मानवीय अन्त:क्रिया में प्रतीकों का जन्म होता है। सामूहिक जीवन में ही प्रतीकों का विकास होता है।

सामाजिक जीवन में प्रतीकों का महत्व – सामाजिक जीवन में प्रतीकों का अत्यधिक महत्व होता है प्रतीकों का सबसे महत्वपूर्ण कार्य सामाजिक व व्यक्तिगत व्यवहारों का संगठन और नियंत्रण करना है। प्रतीकों के माध्यम से व्यक्ति को व्यवहार करने का सही व संक्षिप्त तरीका सरलता से प्राप्त हो जाता है और सरलता से वह अपने को, अपनी सामाजिक परिस्थितियों के अनुकूल कर लेता है। प्रतीक सामूहिक चेतना का सामूहिक प्रतिनिधित्व करता है। इस कारण इसमें व्यक्ति के व्यवहारों को नियंत्रित करने की अपार शक्ति होती है। आधुनिक चित्रकला, नृत्य आदि एक प्रकार से प्रतीकों पर ही निर्भर है क्योंकि इनमें ऐसे प्रतीकों का प्रयोग किया जाता है, जिनके माध्यम से व्यापक विचार, भावना आदि को व्यक्त करना सरल हो जाता है। नृत्य में भी प्रतीकों का प्रयोग न किया जाए तो नृत्य का अस्तित्व ही खतरे में पड़ जाएगा। राष्ट्रीय जीवन के प्रतीक के रूप राष्ट्रीय झण्डा राजनीतिक एकता तथा आत्मत्याग की भावना को जागृत करता है।

इसी प्रकार धर्म के क्षेत्र में प्रतीकों का अपना महत्व होता है। क्रॉस को देखते ही एक ईसाई के मन में धर्म व पवित्रता की भावना जागृत हो जाती है, पवित्र कुरान इस्लाम धर्म के मानने वालों में भाईचारे का भाव भर देती है और भगवद्गीता कर्मयोग द्धारा मुक्ति के पद को प्रशस्त करने का प्रतीक बनकर हिन्दुओं में नवजीवन का संचार करती है। अत: स्पष्ट है कि प्रतीक अपने आप में एक ऐसा साधन होता है, जिसके द्धारा मानव के अनेकानेक विचार एवं मनोभाव दूसरों तक सहज ही पहुँच जाते हैं।

श्री लेस्ली व्हाइट के अनुसार – सारा मानव व्यवहार प्रतीकों के प्रयोग से ही रूप लेता है। प्रतीकों की सहायता से ही मूक–बधिर व्यक्तियों में भी व्यक्तित्व का उत्तम विकास सरलता से किया जा सकता है और प्रतीक ही सामाजिक व्यवहारों में और इस कारण सामाजिक जीवन में एकरूपता व संगठन ले आते हैं।

श्री रास का कथन है कि सामाजिक प्रतीक समाज के सदस्यों को एकसूत्र में बाँधते हैं और उन्हें उन धारणाओं, संवेगों तथा मूल्यों में भाग लेने का अवसर प्रदान करते हैं, जो सामूहिक जीवन में दृढ़ता प्रदान करते हैं। प्रतीक कायर को भी वीर बना सकता है, महान आदर्शों से उसके व्यक्तित्व, भावों को ओत–प्रोत कर सकता है।

निष्कर्ष – प्रतीक मनुष्य के जीवन के प्रत्येक पक्ष व्यक्तिगत, सामूहिक, धार्मिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक जीवन आदि को प्रभावित करते हैं। अत: मनुष्य के प्रत्येक व्यवहार से इनका घनिष्ठ सम्बन्ध है, इसीलिए व्यक्ति अपने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नये प्रतीकों की रचना करता है ताकि उसकी विविध आवश्यकताओं की पूर्ति होती रहे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. समाजशास्त्र का सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य, लेखक – डॉ. रवीन्द्रनाथ मुकर्जी।
2. समाजशास्त्र, लेखक – प्रो. गुप्ता एवं शर्मा।
3. भारतीय समाज के परिप्रेक्ष्य, लेखक – डॉ. धर्मवीर महाजन, डॉ. कमलेश महाजन।
4. शास्त्रीय–समाजशास्त्रीय परम्परा, लेखक– डॉ. डी.एस. बघेल।

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

Changing Scenario Of Agriculture Marketing In Madhya Pradesh

Dr. Mini Kochar *

Abstract - The concept of market emerges as a socio- economic device to facilitate the need of people. Marketing plays an important role in agricultural economy. Agriculture in India occupies two fold phenomenons: production and marketing. To an 'agriculturist 'market means sale and purchase of agricultural products. Production is a resultant of material, financial inputs and labour, while marketing is an act of exchange of products or goods for money. The basic purpose of exchange is to enable the farmer to have accessibility for a wider range of goods through established or regulated markets. It is very important to have a proper marketing system to make full use of modern improved techniques for betterment of rural economy. Good marketing system is very essential to match with production surplus in any sector.
Key words - Marketing system, production surplus, infrastructure, contract farming, Haats, Agricultural development, Purchasing power, etc.

Introduction - Study Area - Madhya Pradesh, as its name implies lies in the heart of India. It covers 3, 08,000 sq.km, making second largest state in India after Rajasthan which occupies 9.38% of the country's area. At present Madhya Pradesh consists of 10 divisions and 50 districts. It is a part of peninsular plateau of India lying in north central part, whose boundary can be classified in the north by the plains of Ganga-Yamuna, in the west by the Aravali, east by the Chhattisgarh plain and in the south by the Tapti valley and the plateau of Maharashtra. The state consists largely of a plateau streaked with the hill ranges of Vindhyas and Satpuras. The hills give rise to major river systems- the Narmada, and the Tapti running from east to west, and the Chambal, Son and Betwa, from west to east. Intersected by these meandering rivers and dotted with hills and lakes, the State has varied natural settings of great beauty.

Like other parts of India, Madhya Pradesh also has three major seasons – summer, Monsoon and winter. During summer (March-June), the temperature in the entire state ranges above 29.4°C. In general, the eastern parts of Madhya Pradesh are hotter than the western parts. The south-west Monsoon usually breaks out in mid June and the entire state receive a major share of its rainfall between June and September.

Primarily, it has an agricultural and pastoral economy. The population of Madhya Pradesh is over 7 crores. More than 74.73% of the population is rural, depending mainly upon agriculture. Approximately 49.03% area in state is under cultivation of total cropped area 63% is sown in Kharif season, 37% in Rabi season and the multiple cropped area in the state is about 31%. Wheat, Soybean and Jowar (Sorghum) are the main Crops. Paddy and Coarse Millets are also sown in large parts. Pulses, Cereals and Groundnut are also grown. Important among the cash crops are Cotton, Sugarcane and Oil Seeds. Mandsaur is the largest opium producing district in the country. The state share (2007-08) in national production of oilseed is 21.34% (Soyabean 49.95%), pulses16.60%, (Gram 30.26%). The state ranks first in production of oilseed and second in production of pulses. The state also leads in spices production and is second producer of Coriander in country.

Structure Of Agriculture Markets - In a backward state like Madhya Pradesh during the decades of fifties and sixties, in most of the villages Agricultural market was in its simplest form, where the buying and selling of agricultural produce was done. These were the periodical markets popularly known as 'Bazaar' or 'Haat' in local language. These markets assemble once in a week or bi-weekly, where transfer of small agricultural surplus from vegetables to grains takes place between consumers and producers. Prior to independence, the agricultural marketing which tends to be one of the biggest component of rural economy remained unorganized. The actual transformation or change in pattern of rural marketing took place in the end of seventies decade. The lack of institutional support in providing forward and backward linkages were then identified which had been a major setback in promotion of rural markets (Rajagopal, p.p29).

The Government of Madhya Pradesh began its efforts to regulate the unorganized rural markets. This action was taken in order to secure a remunerative price for the produce that a farmer takes to the market. It became necessary to regularize the working of market and to put an end to the malpractices prevailed in the rural markets due to middlemen. Under agriculture produce market act (1937) which was enforced by many state governments, Madhya Pradesh also made efforts in this direction.

The regulatory framework for agricultural marketing is unique in state which consists of two distinct sets of measures. One of these is development and regulation of primary markets which can also be termed as crop markets. These markets were popularly known as 'Regulated Markets' came into existence in rural areas of state in shape of 'Krishi Upaj Mandis' i.e. crop markets. The second set of measures is the regulation of markets through series of legal documents. Presently in the state there are 520 regulated

*Asst. Professor (Geography) Institute for Excellence in Higher Education, Bhopal (M.P.) INDIA

markets of which 246 are main wholesale markets known as Krishi Upaj Mandi and the remaining 274 are known as Sub Mandi as they possess lower level of infrastructure. These Sub Mandis are controlled by the respective Krishi Upaj Mandi of that area.

Periodical Markets Or Fairs - Besides these regulated crop markets the retail market centres known as Haats provide the service weekly or bi-weekly. These markets are the main channels of distribution of local agricultural produce and the consumer goods brought from urban areas. Another form of periodical markets is fairs which are held once or twice a year serves a wider area. These fairs are inevitable part of religious and traditional life in rural areas of state. Along with social gatherings at the time of festivals or at some holy place, the exchange of farm marketable surplus and trade of other items in smaller quantity fulfill the needs of the people of that particular area also takes place. Today these fairs are organized by Gram Panchayats and state Animal Husbandry department. Now days it has been observed that the face of Haats and Fair have changed due to increase in income level in rural areas. Automobiles like Tractors, jeeps, Motorcycles, etc. and fast moving consumer goods (FMCG)or household goods, such as Television sets, refrigerators, coolers, music systems, cell phones, toiletries, cosmetics, shoes and readymade garments are commonly found items in these markets.

Recent Trends In Agricultural Marketing - "Today more than anything else the agriculture sector needs well functioning markets to drive growth, employment and economic prosperity in rural areas of the country" as stated by the then Union Minister for Agriculture a decade ago. To provide model agricultural marketing law for guidance to the state government had requested to suitably amend their respective Agricultural Produce Marketing Committee (APMC) to act for deregulation of marketing system in the country. This was mainly to promote investment in rural marketing infrastructure, moving corporate sector to undertake direct marketing and to facilitate national integrated markets.

In Madhya Pradesh a decade ago agricultural marketing acquired a new shape with the entrance of corporate world in this field. The government opened the doors for corporate world in agricultural marketing with a new concept of contract farming. As a result several multinational companies entered into rural marketing. ITC was the first MNC who entered in agro- marketing for trading mainly oilseed and food grains. This company brought the idea of E-Choupal equipped with V-sat and internet facilities. These corporate companies conceive a supply chain aimed at delivering value to the customers (Farmers) on sustainable basis farmers sell their produce at pre- declared prices which are more or less equal to MSP (Market Selling Price).These companies not only purchase the agro- products, such as food grains, oilseeds, vegetables and fruits from local farmers but also sell Fertilizers, pesticides, pump-sets, Tractors and consumer items to fulfill their needs.

Contract Farming - A new concept in which the cultivators only plant the company's crops and it provides inputs like improved seeds, saplings, modern implements, regular inspection of crop and the advisory service on crop management. In such type of Farming company purchases several acres of land to produce vegetables and fruits in particular to sell in retail markets in urban areas for example, "Reliance Fresh". This type of farming has helped farmer to an extent in terms of commercialization of agriculture by increasing margins for procuring and processing. The profits in agri-business are very high at the same per hectare yield also show an increase in last decade.

The Table below is showing the name of MNC's entered in contract farming in MP

S.No	Name of Company	Crops
1	ITC—IBD (Green Centre)	Soya bean
2	Cargill India	Wheat, Maize and Soya bean
3	Hindustan Lever ltd	Wheat
4	Ion Exchange Envirofarms ltd.	Organic products of Banana, Papaya, and Wheat,
5	Marico ltd.	Safflower
6	Sanjeevani Orchards Pvt ltd	Pomegranate

Source: Website of Mandi Board, Madhya Pradesh

Conclusion And Suggestions - Such type of farming not only accelerated the pace of agriculture development in last decade but also the income levels have gone up which is being reflected in the changing life style and the consumption pattern in rural areas. Agriculture Growth rate in Madhya Pradesh also showed an upward trend in last five - six years. The growth rate in agriculture which was about 18% in 2011-12 increased to 24.99% in 2013-14.Wheat production in 2004-05 was 73.27 lakh tones increased up to193 lakh tones in 2013-14. Similarly, Rice production increased from13.09 lakh tons in 2005-06 to 69.50 lakh tones in 2013-14. Literacy rate, women and girl child education awareness regarding health and cleanliness, etc, have shown an upward trend in villages which indicates the positive change in socio - economic life. Therefore it can be interpreted that the growth of agriculture can change the face of rural areas.

- Hence it is advisable for the growth and development of agriculture the large investment should be made which will help in enhancing the purchasing power of rural population.
- Rural marketing system should be made more beneficial to farmers.
- Rural marketing has to be more transparent and technically advanced.
- Above all it should be without interference of middlemen so that the actual profit goes to farmer.

References :-

1. Desai, V. (1976), *Agricultural Development: A case study*, Bombay: Popular Prakashan Pvt. Ltd.
2. Kulkarni, K.R. (1956), *Agriculture marketing in India,* Bombay: Somaiya Publication.
3. Lekhi, L.R. (1986), *Agricultural Development in India,* Bombay: Somaiya Publication.
4. Rajagopal,(1996),Development of *Agriculture marketing in India,* Jaipur: Rupa Books Pvt.Ltd.
5. Saxena, H.M. (19840,*Geography of Marketing-Concepts and methodology*, New Delhi: Sterling Publishing

साक्षरता प्रतिरूप - उज्जैन संभाग के सन्दर्भ में स्थानिक तथा कालिक विश्लेषण

डॉ. अख्तर बानो *

प्रस्तावना – शिक्षा तथा साक्षरता से ज्ञान में वृद्धि होती है और एक उन्नत समाज बनता है। निरक्षरता के कारण समाज पिछड़ा रह जाता है। अत: समाज और देश की उन्नति के लिए शिक्षा तथा साक्षरता पहली सीढ़ी है। राष्ट्र संघ के जनसंख्या आयोग के अनुसार किसी भाषा में एक साधारण संदेश को पढ़ने एवं लिख सकने की क्षमता रखने वाले व्यक्ति को साक्षर कहा जाता है। उज्जैन संभाग में छ: जिलों में साक्षरता में भिन्नता है और किसी भी जिले में पूर्ण साक्षरता नहीं है अत: उज्जैन संभाग में शत प्रतिशत साक्षरता हो इस हेतु प्रयास आवश्यक है। प्रस्तृत शोध पत्र में साक्षरता में कमी के कारणों को खोज कर इन्हें दूर करने के सुझाव दिए गए हैं।

अध्ययन क्षेत्र – उज्जैन संभाग मध्य प्रदेश के पश्चिम में स्थित है। इसका अक्षांशीय विस्तार 21°26' से 24°28' उत्तरी अक्षांश तथा 74°44' से 77°20' पूर्वी देशान्तर तक है। इसमें छ: जिले देवास, शाजापुर, उज्जैन, रतलाम, मन्दसौर और नीमच सम्मिलित हैं। उज्जैन संभाग का कुल क्षेत्रफल 33958 वर्ग किलो मीटर तथा कुल जनसंख्या 8684007 (2011) है।

तालिका क्र.1 (देखे अगले पृष्ठ पर)

उज्जैन संभाग : जिलेवार साक्षरता दर (देखे अगले पृष्ठ पर)

उद्देश्य – उज्जैन संभाग के सभी जिलों में पूर्ण साक्षरता नहीं है तथा साक्षरता में बहुत अधिक भिन्नता है। अत: क्षेत्र में साक्षरता में कमी के कारण ज्ञात कर शत प्रतिशत साक्षरता हेतु सुझाव देना अध्ययन का उद्देश्य है।

विधि तंत्र –अध्ययन क्षेत्र की साक्षरता के आंकडे जनगणना रिपोर्ट 2001 तथा 2011 से लिए गए हैं तथा जिलेवार विश्लेषण कर आवश्यकतानुसार रेखा चित्र बनाये गए हैं। अध्ययन हेतु आंकडे वर्ष 2001 तथा 2011 के लिए गए हैं।

उज्जैन संभाग में साक्षरता के स्थिति – तालिका क्र.1 से स्पष्ट है की उज्जैन संभाग में वर्ष 2001 से 2011 तक जनसंख्या में वृद्धि हुई है। संभाग के केवल शाजापुर जिले को छोड़कर सभी पांच जिलों में साक्षरता दर बढ़ी है। सर्वाधिक साक्षरता दर उज्जैन जिले (73.6) में है, सबसे कम (68.0) साक्षरता दर रतलाम जिले में है। साक्षरता दर में असमानता के आधार पर अध्ययन क्षेत्र को दो भागों में बांटा गया है।

(अ) उच्च साक्षरता दर वाले जिले (70 प्रतिशत से अधिक)

(ब) मध्यम साक्षरता दर वाले जिले (60 से 70 प्रतिशत)

(स) निम्न साक्षरता दर वाले जिले (60 प्रतिशत से कम)

(अ) उच्च साक्षरता दर वाले क्षेत्र – उज्जैन संभाग के शाजापुर, उज्जैन, मन्दसौर जिलों में साक्षरता दर 70 प्रतिशत (वर्ष 2001) से अधिक है। यह दर मध्य प्रदेश (64.8) तथा भारत से अधिक है। वर्ष 2011 में उच्च साक्षरता वाले जिले देवास, शाजापुर, उज्जैन, मन्दसौर और नीमच हैं।

तालिका क्र.1 से स्पष्ट है की वर्ष 2001 में उज्जैन संभाग में केवल तीन जिले उच्च साक्षरता दर में शाजापुर (71.14), उज्जैन (71.18) और मन्दसौर (70.65) सम्मिलित थे। वहीं दस वर्ष पश्चात वर्ष 2011 में इस वर्ग में पांच जिले (देवास, शाजापुर, उज्जैन, मन्दसौर और नीमच) सम्मिलित हो गए।

उच्च साक्षरता दर वाले जिलों में नगरीकरण तथा उद्योगीकरण अधिक हुआ है। शैक्षणिक संस्थाओं में वृद्धि हुई है। सरकार द्वारा चलाये गए साक्षरता अभियान का प्रभाव भी इन जिलों पर हुआ है। देवास में औद्योगीकरण के कारण नगरीकरण में वृद्धि हुई है और इसका प्रभाव आस पास के क्षेत्रों पर पड़ा है तथा साक्षरता दर में वृद्धि हुई है।

शाजापुर जिले में साक्षरता हर विगत दस वर्षो में वृद्धि न होकर कमी (70.2) आई है, यह विचारणीय है। सर्वाधिक वृद्धि नीमच जिले में (71.8) हुई है इसका कारण नगरीकरण का प्रभाव शिक्षा पर दिखाई देता है। सरकारी योजनाऐं जैसे बेटी पढ़ाओ, महिलाओं की पढ़ाई हेतु आवागमन की सुविधा देना, प्रतिभा किरण योजना, विक्रमादित्य योजना एवं कई प्रकार की छात्रवृति योजना के कारण शिक्षा और साक्षरता दर में वृद्धि हुई है। ग्रामवासी भी अब जागरूक होकर अपनी पुत्रियों को शहर में पढ़ने भेज रहे है। समाज में स्त्रियों की दशा में सुधार हो रहे हैं।

(ब) मध्यम साक्षरता दर वाले जिले (60-70 प्रतिशत) –वर्ष 2001 में तीन जिले देवास (61.04), रतलाम (67.65) और नीमच (66.40) मध्यम साक्षरता दर में सम्मिलित थे। वर्ष 2011 में केवल रतलाम जिला (68.0) इस वर्ग में आता है। इसका कारण रतलाम में जनजातियाँ अधिक है जो सैलाना तहसील में निवास करती है। इनका प्रमुख व्यवसाय परंपरावादी कृषि है। सरकार द्वारा शिक्षा तथा साक्षरता की योजनाओं का लाभ इन तक पूरी तरह से नही पहुंच पाता है। अत: रतलाम जिले में साक्षरता दर में वृद्धि नाम मात्र की हुई है।

(स) निम्न साक्षरता दर वाले क्षेत्र (60 प्रतिशत से कम) – आधार वर्ष 2001 तथा वर्तमान वर्ष 2011 में उज्जैन संभाग का एक भी जिला इस वर्ग में नहीं है।

साक्षरता दर में हुई वृद्धि हेतु सुझाव – उज्जैन संभाग के सभी जिलों में साक्षरता दर में वृद्धि हुई है। केवल शाजापुर जिले में नाम मात्र की कमी आई है, फिर भी यहाँ 70.2 प्रतिशत साक्षरता दर है। अध्ययन क्षेत्र म

* विभागाध्यक्ष (भूगोल) आर.जी. शासकीय पी.जी. महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत

ें शत प्रतिशत साक्षरता दर करने हेतु निम्न सुझावों पर अमल करने की आवश्यकता है ।

- क्षेत्र के प्रत्येक ग्राम को पक्की सड़कों से जोड़ना चाहिए ताकि वर्षा ऋतु में जो स्कूल बंद हो जाते हैं वे खुलें और अध्यापन कार्य वर्ष भर हो।
- उद्योग धंधे स्थापित होने चाहिए ताकि स्थानीय लोगों को रोजगार मिले और परिवार के सभी बच्चे शिक्षा प्राप्त कर सके।
- प्रत्येक ग्राम में प्राथमिक विद्यालय शौचालय सहित होना चाहिए।
- महिला साक्षरता अभियान लगातार चलना चाहिए क्योंकि एक महिला पुरे परिवार को साक्षर बना सकती है।
- अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीणों को जागरूक करने हेतु स्वयंसेवी संस्थाओं को आगे आना चाहिए।
- अध्ययन क्षेत्र में स्त्री पुरुष के भेद को कम करने की आवश्यकता है। इस हेतु बुजुर्गों को प्रयास करना चाहिए तभी ये सोच मिटेगी की लड़का ही बुढ़ापे का सहारा होगा।

नष्कर्ष – उज्जैन संभाग की कुछ साक्षरता दर वर्ष 2001 में 68.05 थी जो वर्ष 2011 में बढ़कर 71.15 हो गई। यह वृद्धि मध्य प्रदेश की साक्षरता दर (70.6) से तो अधिक है किन्तु देश की साक्षरता दर (74.0) से कम है। क्षेत्र में जो योजनाऐं साक्षरता दर में वृद्धि हेतु चलाई जा रही है उन्हें पुरजोर तरीके से क्रियान्वित करने की आवश्यकता है। मुख्य रूप से शाजापुर और रतलाम जिलों में ताकि जनजातियां जागरूक होकर शिक्षा की और आकर्षित हों।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Chandana, R.C. (2002) Geography of Population, Kalyani Publishers, New Delhi.
2. कुमार, प्रमिला (2006) मध्य प्रदेश एक भौगोलिक अध्ययन, मध्य प्रदेश हिंदी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।

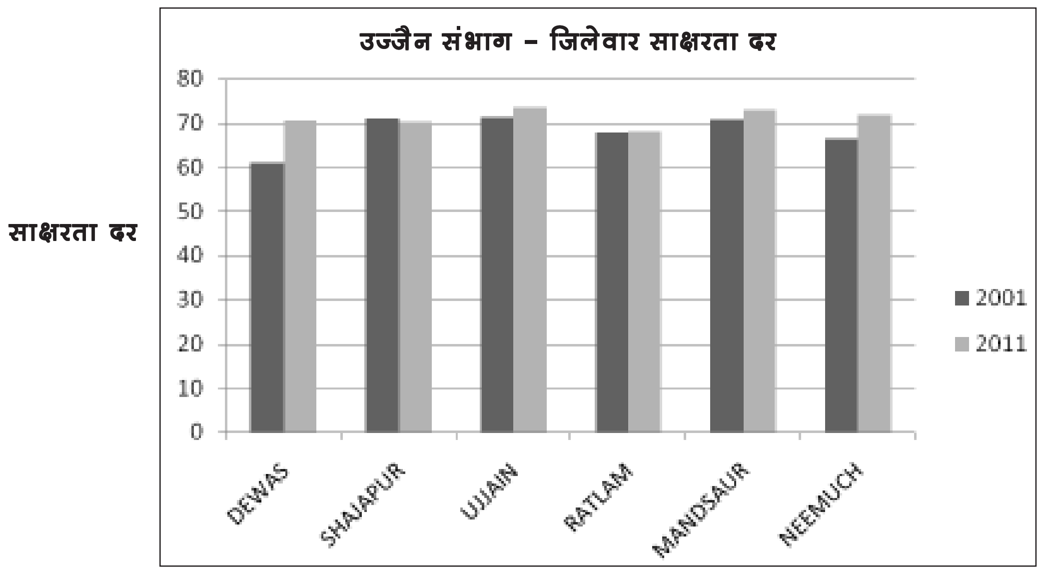

चित्र क्र.1

तालिका क्र.1 – उज्जैन संभाग – जिलेवार क्षेत्रफल, जनसंख्या एवं साक्षरता दर

क्र.	जिला	क्षेत्रफल वर्ग कि.मी.	जनसंख्या		साक्षरता दर	
			2001	2011	2001	2011
1	देवास	7020	1308223	1563712	61.04	70.5
2	शाजापुर	6195	1290685	1512681	71.14	70.2
3	उज्जैन	6091	1710982	1986864	71.18	73.6
4	रतलाम	4861	1215393	1455069	67.65	68.0
5	मन्दसौर	5535	1183724	1340411	70.65	72.8
6	नीमच	4256	726070	826067	66.40	71.8
	उज्जैन संभाग	33958	7435077	8684007	68.05	71.15
	मध्य प्रदेश				64.8	70.6
	भारत				64.8	74.0

स्त्रोत : जनगणना रिपोर्ट 2001 तथा 2011
मध्य प्रदेश के समाजार्थिक संकेतांक 2000 – 2001

****

जल प्रदुषण की समस्या के निवारण में जनसाधारण की भूमिका - भारतीय नदियों के विशेष संदर्भ में

डॉ. विक्रम वर्मा * प्रो. शांतिलाल ईरवार **

शोध सारांश - प्राचीनकाल से कहावत चली आ रही हैं कि 'जल ही जीवन है।' पृथ्वी की उत्पत्ति के आधारभूत पंच तत्वों में जल का स्थान सर्वोपरी है। पंच तत्वों में मात्र जल ही है जो तीनों अवस्थाओं में उपस्थित होकर जैव मण्डल में जीवन का सृजन करता है। मानव स्वास्थ्य की सुरक्षा के लिए पेय जल का स्वच्छ हो आवश्यक है। बढ़ते प्रदुषण के कारण सुरक्षित पेयजल के लिये नदियों को प्रदुषण मुक्त रखना होगा। इसके लिये शासन के साथ जनसाधारण की भूमिका होनी चाहिये।

प्रस्तावना - भारतीय सभ्यता और संस्कृति में जल का विशेष महत्व है। भारत में नदियों को पवित्र मानकर आदिकाल से गंगा जैसी नदियों की पूजा की जाती रही है। भारत की आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं भौतिक कारकों में नदियों की भूमिका अहम है। नदियाँ भारत के बड़े भू-भाग पर पीने योग्य पानी तथा कृषि कार्य हेतु जल की सुविधा उपलब्ध कराती है। इन नदी घाटियों में ही सभ्यताओं का उदय तथा विकास हुआ है। आज इन प्राचीन पूजनीय नदियों में प्रदुषण का संकट विकराल रूप धारण कर चुका है जिसके कारण पीने लायक स्वच्छ पानी एक गंभीर समस्या बन गयी है। प्राचीन काल से ही ये नदियाँ पेयजल का उत्तम स्त्रोत रही है किंतु आज ये नदियाँ प्रदुषण की इतनी भेंट चढ़ चुकी हैं कि इनका पानी पीने योग्य नहीं है। रासायनिक अपशिष्ट, कूड़ा-करकट, गंदे सीवर आदि का जल इन नदियों में बहाया जा रहा है जिससे इनके प्रदुषण का स्तर भी बढ़ता जा रहा है।

उद्देश्य - वर्तमान में भारत ही नहीं सम्पूर्ण विश्व जल संकट से गुजर रहा है। यही गति रही तो यह समस्या भविष्य में विकराल रूप धारण कर लेगी। यदि तीसरा विश्व युद्ध होता हैं तो यह कहना कदापि अतिश्योक्तिपूर्ण नहीं होगा कि वह 'स्वच्छ पेय जल' के लिये होगा। पानी प्रत्येक जीव की अनिवार्य प्राथमिक आवश्यकता है। पृथ्वी पर पेय जल का मुख्य स्त्रोत नदियाँ ही है। इन नदियों में प्रवाहित जल को प्रदुषण से बचाने हेतु सुझाव देना तथा किस प्रकार जन सहयोग से हमारी नदियों को सुरक्षित रखा जाये ताकि जल संकट से मुक्ति मिल सके।

शोध प्रविधि - किसी समस्या को हल करने में अनुसंधान पद्धिति का महत्वपूर्ण स्थान होता है। अनुसंधान से नवीन ज्ञान प्राप्त होता है तथा यह ज्ञान में नवीन प्रवाह या परिवर्तन लाता है। प्रस्तुत शोध पत्र में द्वितीय आंकड़ों का प्रयोग किया गया हैं जिसमें नदी जल प्रदुषण पर पत्र-पत्रिकाओं तथा भारत सरकार द्वारा प्रकाशित विभिन्न रिपोर्ट, नदी विकास की विभिन्न योजनाओं, गंगा सफाई अभियान तथा पुस्तकों आदि में प्रकाशित आंकडों एवं जानकारियों का प्रयोग किया हैं।

नदियाँ भारत की जीवन रेखा कहीं जाती है। इन नदियों के द्वारा एक ओर पेय जल की प्राप्ति होती हैं, वहीं दूसरी ओर कृषि उत्पादन में सहयोग प्रदान करती है। देश में प्रवाहित नदियों को निम्न आधार पर वर्गीकृत किया जाता है -

1. **अपवाह क्षेत्र के आधार पर -** भारत विश्व का क्षेत्रफल में सातवाँ बडा देश है। यहाँ की नदियों को प्रमुख रूप से तीन वर्गों में विभाजित किया जाता है। प्रथम वर्ग में वे नदियाँ आती जिनके अपवाद क्षेत्र का विस्तार 20,000 वर्ग किलोमीटर से अधिक है। इसके अंतर्गत देश की प्रमुख बड़ी नदियाँ जैसे गंगा, सिंधु, ब्रह्मपुत्र आदि आती हैं। इनकी संख्या देश में 14 हैं। द्वितीय वर्ग में ऐसी नदियाँ सम्मिलित की जाती है जिनका अपवाह क्षेत्र 2,000 से 20,000 वर्ग किलोमीटर का है। यह वर्ग मध्यम आकार का हैं जिसमें देश की 44 नदियाँ आती हैं। तृतीय वर्ग में ऐसी नदियों को शामिल किया जाता है जिनका अपवाह क्षेत्र 2,000 वर्ग किलोमीटर से कम है और इनकी संख्या देश में 55 है। देश में प्रवाहित होने वाले जल की सम्पूर्ण मात्रा का 90 प्रतिशत बड़ी और मध्यम नदियों के प्रवाह क्षेत्र में सम्मिलित है।[1]
2. **भौगोलिक क्षेत्र के आधार पर -** भारत जैसे विशाल देश में नदियों का जाल बिछा हुआ है। उत्तर भारत में प्रवाहित होने वाली नदियाँ हिमालय से निकलती है। इन नदियों को तीन वर्गों सिंधु, गंगा एवं ब्रह्मपुत्र में विभाजित किया जाता है। इन नदियों का स्त्रोत हिमानी है। इसके अलावा मध्य भारत में प्रायद्वीपीय पठार की नदियाँ है, जिनमें गोदावरी, कृष्णा, कावेरी, पेन्नार, नर्मदा, ताप्ती, माही, साबरमती, चम्बल आदि प्रमुख नदियाँ है। जिनमें जल का स्त्रोत वर्षा है। दक्षिण में पश्चिम एवं पूर्वी घाटों पर छोटी नदियाँ हैं।

भारत में नदी जल संसाधन -भारत में जल संसाधनों का भण्डार है। भारत में वार्षिक वर्षा की मात्रा 4,000 लाख हेक्टेयर मीटर की है।[2] भारतीय नदियों में 1,64,500 करोड़ घन मीटर जल प्रवाहित होता है जिसका 61 प्रतिशत गंगा, ब्रह्मपुत्र एवं उसकी सहायक नदीयों, 20 प्रतिशत सिंधु एवं उसकी सहायक नदियों तथा शेष 19 प्रतिशत दक्षिण भारत की नदियों में प्रवाहित होता है।[3]

भारत में जल संसाधन (देखे अन्तिम पृष्ठ पर) -

समस्या विकराल रूप धारण करती जा रही है। भारत में ग्रीष्म काल के समय में यह समस्या अधिक बढ़ जाती है। भारत में जल संसाधन पर्याप्त होने के बावजूद आज उनका उपयोग नहीं कर पा रहे है। भारतीय नदियों में प्रवाहित होने वाले दूषित अवशिष्टों से नदियों का जल प्रदुषित हो गया है।

सामान्यत: स्वच्छ जल में संतुलित सीमा से अधिक मात्रा में अवांछित तत्वों के समावेश के कारण उसका वास्तविक स्वरूप बदल जाता है ऐसे जल

* विभागाध्यक्ष एवं प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय माधव महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
**सहायक प्राध्यापक (भूगोल) राजीव गाँधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत

को प्रदुषित जल व इस प्रक्रिया को जल प्रदुषण की क्रिया कहा जाता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार 'प्राकृतिक व कृत्रिम स्त्रोतों से उत्पन्न अवांछित बाहरी पदार्थों के कारण जल प्रदुषित हो जाता है तथा वह विषाक्तता तथा ऑक्सीजन की सामान्य स्तर से कम मात्रा के कारण जीव-जन्तुओं के लिये हानिकारक हो जाता है व इसके कारण कई प्रकार के संक्रामक रोग फैलने लगते हैं।' जल प्रदुषण विभिन्न रूपों में देखा जाता है। सतही जल नदी, झीलें, तालाब आदि स्थानों पर मिलता है। इन जल स्त्रोंतों में सोडियम, क्लोरीन, कैल्शियम, सल्फेट, मैग्नेशियम के आयन पाये जाते है।[4] ये आयन प्राकृतिक स्त्रोतों द्वारा सागरीय जल से वायुमण्डल में प्रवेश कर वर्षा जल के साथ पुन: धरातल पर प्रकट होते है। इनके अलावा सीसा, पारा, जस्ता, कैडमियम आदि के कारण जल विषाक्त हो जाता है।

नदियों का प्रदुषण -केवल दक्षिण भारत की नदियों को छोडकर यह सौभाग्य हैं कि उत्तरी भारत में विश्व के अन्य देशों की अपेक्षा बहते हुये जल के रूप में नदियों में अथाह जल राशि भरी हुई है। परन्तु वर्तमान में बढ़ते हुये औद्योगिकरण एवं नगरीकरण के कारण घातक रूप से नदियों का जल प्रदुषित हो रहा है। उत्तर भारत की कई नदियों में प्रदुषण के कारण पानी पीने योग्य नहीं है। भारत में योजना आयोग द्वारा एक अनुमान लगाया गया हैं कि विभिन्न उद्योगों द्वारा कितना निरर्थक पदार्थ नदियों में छोड़ा जाता हैं।

उद्योगों द्वारा नदियों में बहाये जाने वाला अपशिष्ट

क्र.	उद्योग	दूषित जल का आयतन/ उत्पादित वस्तुओं की प्रति इकाई पर
1	कागज और क्राफ्ट पेपर	1,90,000-3,00,000 लीटर /टन कागज
2	दफ्ती कागज	76,000 लीटर/टन बोर्ड
3	खाद/उर्वरक	5,700-6,000 लीटर/टन अमोनिया
4	शराब उद्योग	5,100 लीटर 1,000 प्रति कि.ग्रा. छोई के पिछे
5	चमड़ा उद्योग	2,400-3,000 लीटर प्रति 100 किलोमीटर चमड़ा के पीछे
6	इस्पात मिल	2,700-3,000 लीटर प्रति टन इस्पात
7	तेल शोधक कारखाने	1,350-1,700 लीटर टन तेल संशोधन
8	सूती वस्त्र	12,600-37,800 लीटर प्रति 1,000 मीटर कपड़ा

स्त्रोत -डॉ. चतुर्भुज मामोरिया एवं एवं डॉ. जे. पी. मिश्रा, 'भारत का वृहत् भूगोल', साहित्य भवन, आगरा, 2008, पृ. क्र. 754

भारत की नदियों में जो प्रदुषण मिलता हैं उसका 60 प्रतिशत साग-सब्जियों तथा फलों का अंश एवं नगरों का अवांछित व विषैला तरल व ठोस अपशिष्ट होता है। 10 प्रतिशत घास और चारा से, 6 प्रतिशत चमड़े, काँच, रबड़, प्लास्टिक, जंग लगी धातुओं से, 6 प्रतिशत कागज, चिथड़े तथा शेष 18 प्रतिशत राख एवं धुल से प्रदुषण होता है।

नदी प्रदुषण एवं जल समस्या के निवारण में जनसाधारण की भूमिका - यह निर्विादित सत्य हैं कि केवल कानूनों के बल पर ही प्रदुषण एवं पेय जल संकट से मुक्ति नहीं पायी जा सकती है। शासन कानून बानाकर उसे लागू कर सकती है, लेकिन उसकी एक सीमा है। इनका पालन जन सामान्य को ही करना है। गंगा परियोजना आज इसका ज्वलंत उदाहरण है। मुख्य बात यह हैं कि जब तक आम आदमी नदियों की सुरक्षा के प्रति अपना दायित्व नहीं समझेगा तब तक इस दिशा में सुधार मुश्किल है। इसके लिए सटिक एवं कारगर प्रयासों की आवश्यकता हैं जो आम जन की भूमिका से ही सफल हो सकते हैं -

1. बच्चों के मन में प्रकृति के प्रति मोह पैदा करने की आवश्यकता है। प्राकृतिक जल संसाधनों के संरक्षण के लिए प्रेरित करना होगा।
2. नदियों के निकट स्थापित उद्योग प्रदुषण नियंत्रण हेतु मशीनें नहीं लगाते है। इसका अर्थ यह कदापि नहीं हैं कि मानवता के भविष्य को नकारकर हम अपना विकास करें। विश्व में इसका उदाहरण हैं कि औद्योगिक क्रांति के बाद ब्रिटेन की टेम्स नदी प्रदुषित हो गयी थी किंतु वहाँ की शासन, उद्योगपतियों तथा जन साधारण के सहयोग से उसे प्रदुषण मुक्त किया गया। इस प्रकार की जागृति भारत में भी आवश्यक हैं।
3. नदियों में हो रहे प्रदुषण को रोकने के लिये यह अति आवश्यक हैं कि जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित किया जाये।
4. नदियों के जल प्रदुषण को रोकने के लिये सीवेज स्टेशनों को विकसित करके उनकी सहायता से दूषित जल की सफाई करके सिंचाई या नदी में जल डालना चाहिये।
5. शवों के दाह संस्कार के लिये जन सामान्य में जागरूकता लायी जाना आवश्यक है। जन साधारण को पेरित करना होगा कि व शवों को नदियों में विसर्जित नहीं करें तथा इस हेतु सभी शहरों में जनसंख्या के अनुपात में विद्युत शवदाह गृह स्थापित हो।
6. नदियों के किनारे ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में सुलभ शौचालयों का अधिक से अधिक निर्माण एवं उपयोग किया जाये। इससे न केवल नदियों की सफाई होगी बल्कि रोजगार एवं जल प्रदुषण में भी सुधार होगा।
7. नदियों में भावी पीढ़ी हेतु भी स्वच्छ जल प्रवाहित होता रहे इसके लिये स्वैच्छिक संस्थओं, बड़े-बड़े औद्योगिक घरानों को आगे आना चाहिये द्धनदियों में जल ही नहीं अमृत प्रवाहित होता है जिससे देश के करोड़ लोगों का जीवन चलता हैं। जब तक भारत की नदियों का स्वास्थ्य ठीक रहेगा तब तक देश के सवासौ करोड़ लोगों का स्वास्थ्य भी ठीक रहेगा। इसके लिये सभी को मिलकर प्रयास करने होगें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मामोरिया एवं मिश्रा, डॉ. चतुर्भुज एवं डॉ. जे. पी (2008), भारत का वृहत् भूगोल, साहित्य भवन , आगरा, पृ क्र. 72
2. opcit (2), P. 750
3. opcit (3), P. 751
4. गुर्जर एवं जाट, रामकुमार एव बी. सी. जाट (2006) यपर्यावरण भूगोल', पंचशील प्रकाशन, जयपुर, पृ.क्र. 187
5. Abridged Report of th National Commission on Agriculture, 1976
6. Report of the Irrigation Commission, 1972
7. "Problem of Water Pollution." Yojana, Vol. 24, No. 08, May 1980
8. Y.K. Murthy, `Water for Tomorrw' Commerce Annual, 1976

भारत में जल संसाधन

(दस लाख घन मीटरों में)[2]

क्र.	नदी बेसिन	सम्भावित		उपयोग में लाया गया		
		धरातलीय बहाव	भूगर्भिक जल	धरातलीय बहाव	भूगर्भिक जल	योग
1	सिन्धु, सतलज, व्यास	76,907	11,109	46,048	8,515	54,563
2	गंगा	5,09,760	82,698	13,421	49,955	1,73,376
3	ब्रह्मपुत्र	4,99,914	20,803	5,058	220	6,278
4	लूनी तथा गुजरात और कच्छ की नदियाँ	12,278	4,937	3,812	8,389	12,201
5	साबरमती	3,663	2,467	1,470	1,826	3,296
6	माही	7,702	2,476	3,830	1,083	4,913
7	नर्मदा	44,331	4,937	2,786	1,372	4,158
8	ताप्ती	17,982	5,184	5,383	1,545	6,928
9	गोदावरी के उत्तर की ओर बहने वाली नदियां	32,024	5,184	11,756	299	12,055
10	ब्राह्मणी एवं वैतरणी	27,363	5,184	4,320	136	4,456
11	महानदी	66,644	12,343	21,287	277	21,564
12	गोदावरी	1,17,997	14,194	32,732	5,389	38,121
13	कृष्णा	62,784	9,628	52,437	6,513	58,950
14	पेन्नार	6,858	2,374	5,031	1,390	6,421
15	कावेरी	18,601	5,801	17,930	2,557	20,487
16	प्रायद्वीप के पश्चिम में बहेल वाली नदीयां	2,17,894	13,577	13,467	अप्राप्त	13,467

स्त्रोत –डॉ. चतुर्भुज मामोरिया एवं एवं डॉ. जे. पी. मिश्रा, 'भारत का वृहत् भूगोल', साहित्य भवन, आगरा, 2008, पृ. क्र. 751

****

मन्दसौर जिले में स्वास्थ्य सेवाऐं एवं दशाएँ

डॉ. बी.एल. पाटीदार * डॉ. आर.के. श्रीवास्तव **

प्रस्तावना – मानव जीवन का वास्तविक सुख उत्तम स्वास्थ्य में निहित है, यह तभी संभव है जब आहार, विहार और संयम का अनुपालन किया जाए। परन्तु जाने अनजाने हमारे द्धारा ऐसी गलतियाँ हो जाती है जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक प्रमाणित होती है और हम चिकत्सा के सहारे जीने के लिए बाध्य हो जाते है। प्रदूषित पर्यावरणीय दशाओं, असन्तुलित आहार, गरीबी, स्वच्छ पेयजल आपूर्ति का अभाव, स्वच्छ आवास का अभाव, भौतिकतावादी एवं भाग-दौड़ भरी जीवन शैली, स्वास्थ्य जागरूकता सम्बन्धी शिक्षा की कमी, कुपोषण आदि के कारण वर्तमान समय में बीमारियों का जाल फैल गया है। इससे समाज में स्वास्थ्य का स्तर निरन्तर गिरता जा रहा है।

स्वास्थ्य सुविधा मानव की आधारभूत आवश्यकता हो गई है। इसलिए इसे सभी व्यक्तियों के लिए मौलिक अधिकार के रूप में घोषित किया गया है। स्वास्थ्य सेवा एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है जिसमें सभी व्यक्तियों के शारीरिक एवं मानसिक विकास के लिए प्रयास किया जाता है। स्वास्थ्य सेवाओं का क्षेत्र विस्तृत है, इसमें स्वास्थ्य जागरूकता शिक्षा, स्वास्थ्य पुनर्वास, स्वास्थ्य जाँच, स्वास्थ्य परामर्श, रोगों के रोकथाम की जानकारी रोगों का उपचार, रोगी की सेवा करना आदि सम्मिलित है। किसी भी राष्ट्र की प्रगति के लिए वहाँ की जनसंख्या एक प्रेरक शक्ति होती है। जनसंख्या तब ही लाभकार होती है, जबकि नागरिक 'स्वस्थ' हों। देश में नागरिकों का स्वास्थ्य, उपलब्ध चिकित्सा सेवाओं (Health Services) पर निर्भर होता है। इसीलिए क्षेत्र विशेष में उपलब्ध स्वास्थ्य सेवाओं का विश्लेषण एवं विवेचन करना आवश्यक होता है।

अध्ययन क्षेत्र – मन्दसौर जिला मध्यप्रदेश के उत्तर-पश्चिमी भाग में $23^0 45'$ से $24^0 45'$ उत्तर अक्षांश तथा $74^0 22'$ से $75^0 55'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य 5517 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला हुआ भौगोलिक दृष्टि से मालवा पठार का एक भाग है। जिला उष्ण कटिबंधीय मानूसनी जलवायु के अन्तर्गत आता है। यहाँ की औसत वार्षिक वर्षा 860 मिलीमीटर है। 2011 की जनगणना के अनुसार जिले की कुल जनसंख्या 1339832 है जो 9 नगरीय बस्तियों तथा 906 ग्रामों में निवासरत है।

विधितंत्र – स्वास्थ्य सेवाओं के अन्तर्गत अस्पताल, डॉक्टर, नर्स, उपलब्ध सुविधाओं, आदि से सम्बन्धित द्धितीयक समंकों को एकत्र कर उनके विश्लेषण द्धारा जिले में उपलब्ध चिकित्सा सुविधाओं को ज्ञात किया गया।

स्वास्थ्य सुविधायें एवं दशाएँ – वार्षिक स्वास्थ्य सर्वे 2010 के अनुसार जिले में जन्म दर 19 प्रति हजार तथा मृत्यु दर 7.1 प्रति हजार थी। शिशु मृत्यू दर (आई.एम.आर.) 64 प्रति हजार जीवित बच्चे एवं मातृ मृत्यु दर (एम.एम.आर) 2.68 प्रति हजार जीवित बच्चे थी। जन्म के समय महिला-पुरूष अनुपात 910, 0-4 वर्ष में 907 एवं सभी उम्र में 940 प्रति हजार थी। इस प्रकार शिशु एवं मातृ मृत्यु दर कुपोषण की ओर संकेत करते हैं। इनमें से भी बालिका मृत्यु दर बालकों अपेक्षा अधिक है जिसका प्रमुख कारण उनको पर्याप्त पोषण एवं स्वास्थ्य सुविधाओं का न मिल पाना है।

2010 के सर्वे अनुसार जिले में प्रति लाख जनसंख्या पर अस्पतालों की संख्या 4 एवं प्रति लाख जनसंख्या पर शय्याओं की संख्या मात्र 54.63 है।

राष्ट्रीय पोषण संस्थान हैदराबाद (National Institute of Nutrition Hyderabab) द्धारा वर्ष 2011 में किये गए सर्वेक्षण के अनुसार जिले में अति कम वजन के बच्चों का प्रतिशत 20.8, मध्यम कुपोषित बच्चों का प्रतिशत 31.7 एवं सामान्य बच्चों का प्रतिशत 47.5 है। आंकड़े दर्शाते हैं कि जिले में अभी भी 52.5 प्रतिशत बच्चे कुपोषण के शिकार है। जिले की रिपोर्ट (एम.पी.आर.) के अनुसार यह प्रतिशत 22.86 है।

राष्ट्रीय पोषण संस्थान की रिपोर्ट के अनुसार जिले में पितृ साक्षरता दर 63.2 एवं मातृ साक्षरता दर 41 प्रतिशत है जो काफी कम है।व्यवसाय, धन्धे आदि पर राष्ट्रीय पोषण संस्थान की रिपोर्ट के अनुसार जिले में 50.4 प्रतिशत लोग मजदूरी करके अपना भरण-पोषण करते हैं। निम्न आय स्तर होने के कारण इनका स्वास्थ्य मापदण्डों के अनुरूप नहीं रह पाता एवं ये कुपोषण जनित रोगों से जल्दी ग्रसित हो जाते हैं। रिपोर्ट के अनुसार जिले की केवल 45.5 प्रतिशत गर्भवती महिलाएँ ही अपना पंजीयन गर्भावस्था के 16 सप्ताह के दौरान आंगनवाड़ी केन्द्र या अस्पताल में करवाती है।

मध्यप्रदेश मानव विकास रिपोर्ट 2007 के अनुसार जिले में उप स्वास्थ्य केन्द्र की गाँव से औसत दूरी 3.7 किमी तथा प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र की दूरी 17.52 किमी है। इस रिपोर्ट के अनुसार जिले में कुल 61.1 प्रतिशत जनसंख्या को सुरक्षित साफ पीने का पानी उपलब्ध है जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में केवल 57.58 प्रतिशत लागों को ही पीने का साफ पानी उपलब्ध हो पाता है।

जिले में उपलब्ध चिकित्सा सुविधाएं – जिले में शासकीय चिकित्सा सेवायें जिला अस्पताल, सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तथा उप स्वास्थ्य केन्द्रों के रूप में उपलब्ध हैं इनमें ऐलोपैथिक एवं आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धतियों से उपचार की सुविधाएँ प्राप्त है।

अस्पताल-जनसंख्या अनुपात (HPR) - जिले में 2010-11 के अनुसार प्रति सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र जिसमें जिला चिकित्सालय भी सम्मिलित है द्धारा 4,46,600 जनसंख्या सेवित होती है। प्रति प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र 31,900, प्रति उप स्वास्थ्य केन्द्र द्धारा 7,881 तथा प्रति आयुर्वेदिक अन्य पद्धति के औषधालायों द्धारा 36,211 जनसंख्या सेवित होती है। जिले में प्रति 2,931 जनंसख्या पर एक शैय्या उपलब्ध है।

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत
* प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय महाविद्यालय, पिपल्या मण्डी, जिला मन्दसौर (म.प्र.) भारत

चिकित्सा शैय्या–जनसंख्या अनुपात (BPR) – अस्पतालों की दक्षता एवं क्षमता का आंकलन उनमें मरीजों के लिए उपलब्ध पलंगों (Beds) की उपलब्धता से किया जाता है। मन्दसौर जिले में 2010–11 की गणना के अनुसार 1,627 जनसंख्या पर एक पलंग की सुविधा उपलब्ध थी। इसमें आयुर्वेदिक औषधालयों से प्राप्त शैय्याओं की संख्या भी सम्मिलित है।

सारणी–1 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका 1 का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि 2000–01 एवं 2010–11 में ऐलोपैथिक चिकित्सालयों जिन्हें सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र भी कहा जाता है, की संख्या में कोई परिवर्तन नहीं आया है। इनमें से एक मन्दसौर (जिला चिकित्सालय), एक गरोठ तथा एक भानपुरा में स्थित है। जिले में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों (PHC) की संख्या 2000–01 में 46 थी जो 2010–11 में घटकर 42 रह गई। उप स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या 2000–01 में 164 थी जो 2010–11 में बढ़कर 170 हो गई। इस प्रकार उप स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या में 6 की बढ़ोतरी हुई है। आयुर्वेदिक, यूनानी तथा होम्योपैथिक चिकित्सा पद्धति के औषधालयों की संख्या में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। इनकी संख्या जिले में 37 है।

शैय्याओं की दृष्टि से देखें तो ऐलोपैथिक चिकित्सा पद्धति के औषधालयों में इनकी संख्या 2000–01 में 427 थी वहीं 2010–11 में बढकर यह 793 हो ई है। इस प्रकार कुल 366 शैय्याओं की वृद्धि इन दस वर्षो के दौरान देखने को मिलती है। अन्य पद्धति के चिकित्सालयों में शैय्याओं की संख्या में काई परिवर्तन नहीं हुआ है।

इस प्रकार उपलब्ध चिकित्सालयों की संख्या जनसंख्या वृद्धि के मुकाबले पर्याप्त नहीं है। जिला चिकित्सालय में शैय्याओं की संख्या में जरूर आशाजनक वृद्धि हुई है। जिले के अस्पतालों में रोगी कल्याण समिति के माध्यम से विकास कार्यो को गति देने का प्रयास किया जा रहा है। कहा जा सकता है कि जिले में स्वास्थ्य मापदण्डों को पूरा करने के लिए चिकित्सा सुविधाओं में वृद्धि की दरकार है।

सारणी 2 के अनुसार जिले में 2011 में केवल मन्दसौर, गरोठ एवं भानपुरा में ही सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र स्थित हैं। प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या मन्दसौर ब्लॉक में 06, मल्हारगढ़ में 07, सीतामऊ में 05, गरोठ में 12 एवं भानपुरा में 12 है। उप स्वास्थ्य केन्द्र मन्दसौर में 44, मल्हारगढ़ में 35, सीतामऊ में 37, गरोठ में 35 एवं भानपुरा ब्लॉक में 19 है। जिले में आयुर्वेदिक औषधालय मन्दसौर ब्लॉक में 12, मल्हारगढ़ में 05, सीतामऊ में 09, गरोठ में 07 तथा भानपुरा में 04 है। 2000–01 एवं 2010–11 में ब्लॉकवार अस्पतालों की संख्या में विशेष अन्तर नहीं आया है।

सारणी 2 (देखे अगले पृष्ठ पर)

चिकित्सा अधिकारी एवं कर्मचारी – डॉक्टर, नर्स एवं अन्य चिकित्सा कर्मचारियों की संख्या का 2000–01 एवं 2010–11 में तुलनात्मक अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि इनकी संख्या में वृद्धि के बजाय कमी हो गई है। जबकि इन दस वर्षों में जनसंख्या में लगभग 13 प्रतिशत की वृद्धि हो गयी है। 2000–2001 एवं 2010–2011 की तुलना करें तो इस दौरान जिले में 35 डॉक्टर, 11 नर्स एवं 51 कम्पाउण्डरों की कमी हो गई है। स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी के कारण गंभीर बीमारियों से ग्रसित रोगियों को इन्दौर, उदयपुर, अहमदाबाद आदि शहरों की ओर जाना पड़ता है।

सारणी – 3 (देखे अगले पृष्ठ पर)

डॉक्टर–जनसंख्या अनुपात (DPR) – 2010–11 की गणना अनुसार देखें तो जिले में 24,811 जनसंख्या पर एक डॉक्टर उपलब्ध है जबकि परिवार कल्याण एवं स्वास्थ्य मंत्रालय भारत सरकार की वार्षिक रिपोर्ट 2007–08 में की गई अनुशंसा के अनुसार 3,500 जनसंख्या पर एक डॉक्टर होना चाहिए। स्वास्थ्य केन्द्रों में डॉक्टर की भूमिका महत्वपूर्ण होती है किन्तु जिले में विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में डॉक्टरों की कमी स्वास्थ्य सुविधाओं की दृष्टि से सबसे गंभीर समस्या है।

नर्स जनसंख्या अनुपात (NPR) – स्वास्थ्य रक्षा एवं रोगियों की देखभाल हेतु चिकित्सालयों में नर्स की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। मन्दसौर जिले में 5,173 जनसंख्या की सेवा करने हेतु एक नर्स उपलब्ध है, वहीं 55,826 जनसंख्या की मरहम पट्टी करने के लिए एक कम्पाउण्डर उपलब्ध है।

निष्कर्ष – जिले में स्वास्थ्य देख–रेख सुविधाओं (Health Care Facilities) के स्थानिक वितरण में पर्याप्त असमानताएँ और विषमताएँ दिखाई पड़ती है। यहाँ स्वास्थ्य सुविधाओं को उपलब्ध करवाने में सबसे बड़ी बाधा डॉक्टरों की कमी है। शहरी क्षेत्रों की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सुविधाओं का अधिक अभाव पाया जाता है। राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (NRHM) योजना के लागू होने के बावजूद जिले के दूरस्थ इलाकों में प्राथमिक स्वास्थ्य योजनाओं का क्रियान्वयन पूर्ण क्षमता के साथ नहीं हो रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. खत्री, हरीश कुमार (2012), स्वास्थ्य भूगोल, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल, इ. 30
2. Nutritional Rehabilation Centre (NRC), Operational Guideline (2011) National Rural Health Mission Delhi,
3. राष्ट्रीय पोषण संस्थान हैदराबाद (National Institute of Nutrition Hyderabab)
   सर्वेक्षण रिपोर्ट 2011 में किये गए सर्वेक्षण
4. चौहान, धर्मेन्द्र सिंह एवं मुकेश शर्मा, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य भूगोल, साहित्यागार, जयपुर, 7
5. Madhya Pradesh Human Development Report 2007, Oxford University Press, New Delhi
6. Mishra, R.P., Medical Geography of India, National Book Trust of New Delhi,

सारणी-1
मन्दसौर जिला - चिकित्सालय, औषधालय तथा शैय्याएँ

चिकित्सालय/औषधालय/शैय्याएँ	**2000-2001**	**2010-2011**	**अन्तर**
1. ऐलोपैथिक चिकित्सालय	03	03	00
2. प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र	46	42	-04
3. उप स्वास्थ्य केन्द्र	164	170	+06
4. आयुर्वेदिक/होम्यापैथिक/यूनानी औषधालय	37	37	00
योग	**250**	**252**	**+02**
उपलब्ध शैय्याएँ-			
1. ऐलोपैथिक चिकित्सालय	427	793	+366
2. अन्य पद्धति चिकित्सालय	30	30	00
योग	**457**	**823**	**+366**

स्रोत- कार्यालय मुख्य चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अधिकारी, मन्दसौर 2011

सारणी 2
मन्दसौर जिला - ब्लॉकवार चिकित्सालय तथा शैय्याएँ (2010-11)

चिकित्सालय/औषधालय	**मन्दसौर**	**मल्हारगढ़**	**सीतामऊ**	**गरोठ**	**भानपुरा**
ऐलोपैथिक चिकित्सालय	01	निरंक	निरंक	01	01
प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र	06	07	05	12	12
उप स्वास्थ्य केन्द्र	44	35	37	35	19
आयुर्वेदिक औषधालय	12	05	09	07	04
योग	**63**	**47**	**51**	**55**	**36**
उपलब्ध शैय्याएँ					
ऐलोपैथिक चिकित्सालय	536	42	68	96	51
अन्य पद्धति के चिकित्सालय	30	निरंक	निरंक	निरंक	निरंक

स्रोत- कार्यालय मुख्य चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अधिकारी, मन्दसौर 2011

सारणी - 3
मन्दसौर जिला : चिकित्सा अधिकारियों एवं कर्मचारियों की संख्या

वर्ष	**चिकित्सा अधिकारी**		**संक्रामक रोग निवारणार्थ कर्मचारी**	**स्वास्थ्य निरीक्षक**	**नर्स**	**कम्पाउण्डर**	**अन्य**	**योग**
	ऐलोपैथी	**अन्य पद्धति**						
2000-01	80	21	3	-	270	75	118	870
2010-11	54	12	-	-	259	24	314	663
अन्तर	**-26**	**-09**	**-3**	**-**	**-11**	**-51**	**-196**	**-207**

स्त्रोत - कार्यालय मुख्य चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अधिकारी, मन्दसौर 2011

****

भगवद्गीता में योगशास्त्र - लोकमान्य तिलक के अनुसार

डॉ. पुष्पा कपूर *

शोध सारांश – भगवद्गीता के'योग' को विभिन्न विचारकों ने अपनी-अपनी दृष्टि से पृथक नामों से पुकारा है। गीता की मौलिकता निष्काम कर्मयोग है। गीता कर्म का सूक्ष्म विवेचन प्रस्तुत करती है।

प्रस्तावना – गीता हमारे सम्मुख जो योगशास्त्र प्रस्तुत करती है। वह गहन, उदार, एवं बहुपक्षीय है, जिसके अन्तर्गत आत्मा के विकास तथा ब्रह्म तक पहुँचने के विविध मार्ग सम्मिलित हैं। विभिन्न प्रकार के योग का सम्बन्ध उस आन्तरिक अनुशासन से है जो आत्मा की स्वतंत्रता एवं एकता को बताता है। इस अनुशासन से सम्बद्ध प्रत्येक वस्तु 'योग' कहलाती है। इस प्रकार योग के कई प्रकार हैं जैसे – हठयोग, तंत्रयोग, पातंजल योग, ज्ञानयोग, भक्तियोग, कर्मयोग आदि।

गीता के 'योग' शब्द से अभिप्राय – योग शब्द 'युज' धातु से बना है जिसका अर्थ है जोड़। गीता में योग का अर्थ उस अवस्था से है जहाँ जीवात्मा, परमात्मा से मिलती है तथा उस मार्ग से भी है, जिसके द्वारा वह मिलती है। अत: गीतोक्त योग शब्द को साध्य एवं साधन दोनों ही अर्थ में लिया गया है। यद्यपि गीता के दूसरे अध्याय के 50वें श्लोक में योग की एक निश्चित परिभाषा दी गई है –

बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते।
तस्माद्योगाय युज्यस्व योग: कर्मसु कौशलम्।।

जो साम्य बुद्धि से युक्त हो जाये, वह इस लोक में पाप और पुण्य दोनों से ही अलिप्त रहता है, इसलिये योग का आश्रय कर। योग ही कर्मो में कुशलता है। कर्म की कुशलता इस बात में निहित है कि कर्म इस प्रकार किये जायें कि कर्मो में बन्धन न हो। गीता के प्रत्येक अध्याय के अन्त में जो अध्याय समाप्ति का संकल्प है – 'श्रीमद्भगवदगीता सु उपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे' इससे स्पष्ट है कि ब्रह्मविद्या का योगशास्त्र ही गीता का विषय है। ब्रह्मविद्या अर्थात् ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति हो जाने पर ज्ञानी पुरूष के लिये दो मार्ग निष्ठायें हैं –

लोकेऽस्मिन्द्विविधा निष्ठापुरो प्रोक्ता मयानध।
ज्ञानयोगेन सांख्यानां कर्मयोगेन योगिनाम्।। (3-3)

एक है सांख्य अथवा संन्यास मार्ग, जिसमें ज्ञान हो जाने पर कर्म छोड़कर विरक्त रहना पड़ता है और दूसरा है कर्म मार्ग, जिसमें कर्म इस तरह से करते रहना है, जिससे मोक्ष प्राप्ति में कुछ भी बाधा न हो। संन्यास मार्ग, जिसका दूसरा नाम ज्ञान मार्ग या निवृत्ति मार्ग भी है, का वर्णन उपनिषदों व अन्य ऋषियों के ग्रंथों में है, परन्तु कर्म मार्ग की तात्विक विवेचना भगवद्गीता के अतिरिक्त अन्य ग्रंथों में नहीं है। तिलक का मत है कि विषय की यह अपूर्वता गीता के अध्याय समाप्ति दर्शक संकल्प में 'ब्रह्म विद्यायां योगशास्त्रे' कहकर दिखाई गई है। तिलक मानते हैं कि भगवद्गीता के विषय को कर्मयोग न कहकर 'कर्मयोगशास्त्र' कहना ही उचित होगा।

कर्मयोग से गीता का अभिप्राय – कर्म 'कृ' धातु से बना है, जिसका अर्थ 'करना', 'व्यापार' और 'हलचल' होता है। तिलक के अनुसार इसी सामान्य अर्थ में गीता में कर्म शब्द का उपयोग हुआ है। गीता में कर्म का अर्थ नित्य अथवा नैमित्तिक आदि से ही न होकर उन सबसे है जो मनुष्य करता है – जैसे खाना, पीना, बोलना, सुनना, देखना, मनन, ध्यान, श्वासोच्छवास करना, आज्ञानिषेध, इच्छा, निश्चय करना आदि सबसे ही है। इसके अंतर्गत समस्त कायिक, वाचिक एवं मानसिक कर्म सम्मिलित हैं। गीता में अनेक प्रकार की व्यक्त सृष्टि निर्माण करने की ईश्वरीय कुशलता एवं अद्भूत सामर्थ्य को योग कहा गया है। गीता के सातवें अध्याय के 25वें श्लोक में –

नाहं प्रकाश: सर्वस्य योगमाया समाकृत:।
मूढोऽयं नाभिजानाति लोको मामजमव्ययम्।।

अपने योगरूप माया से आच्छादित रहने के कारण मैं सबको अपने स्वरूप से प्रकट नहीं दिखाई देता। मूढ़ लोग नहीं जानते कि मैं अज (जन्मरहित) और अव्यय हूँ।

न च मत्स्थानि भूतानि पश्य मे योगमेश्वरम।
भूतभृन्न च भूतस्थो ममात्मा भूतभावन:।। (9-5)

और मुझमें सब भूत भी नहीं है। देखो, (यह कैसी) मेरी ईश्वरीय योगसामर्थ्य है। भूतों को उत्पन्न करने वाली मेरी आत्मा, भूतों का धारण करके भी भूतों में नहीं है।

एतां विभूतिं योगं च मम यो वेत्ति तत्तवत:।
सोऽविकम्पेन योगेन युज्यते नात्र संशय:।। (10.7)

जो मेरी इस विभूति अर्थात् विस्तार के और योग अर्थात् विस्तार करने की युक्ति या सामर्थ्य को जानता है, उसे नि:सन्देह स्थिर (कर्म) योग प्राप्त होता है।

न तु मां शक्यसे द्रष्टुमने नैव स्वचक्षुषा।
दिव्यं ददामि ते चक्षु: पश्य मे योगमेश्वरम्।। (11-8)

परन्तु तू अपनी इसी दृष्टि से मुझे देख न सकेगा, तुझे मैं दिव्यदृष्टि देता हूँ, (उससे) मेरे इस ईश्वरीय योग अर्थात् योगसामर्थ्य को देख।

इसी अर्थ में श्रीकृष्ण को योगेश्वर भी कहा गया है। तिलक के अनुसार एक कर्म को करने के सर्वोत्तम उपाय को योग कहते हैं। योग की परिभाषा 'योग: कर्मसु कौशलम्' की गई है। गीता में सर्वप्रथम सांख्यशास्त्र के अनुसार समझाया गया है कि युद्ध क्यों करना चाहिए और फिर योग की विवेचना करते हुए कहा गया है कि सिद्धि-असिद्धि दोनों में समबुद्धि रखने को योग कहते हैं।

'योग' शब्द को प्रवृत्ति मार्ग अथवा कर्म मार्ग का पर्याय मान लेने पर कर्मयोग की प्रमुख समस्या यह है कि कर्म कौन से किये जाएें ताकि उनसे बन्धन न हो। गीता कर्मो को चुनने का सार्वभौम आधार देती है और यह आधार है – समत्व बुद्धि से अर्थात् कुशलता से कर्म करना। दूसरे शब्दों में

* प्राध्यापक (दर्शनशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

यही फल त्याग या निष्काम कर्म करना है। तिलक का मत है कि इसी फल त्याग के आधार पर गीता सर्वभूतहित तथा लोकसंग्रह की दृष्टि से स्वधर्म के पालन पर जोर देती है।

यह माना गया है कि 'कर्मणाबध्यते जन्तुर्विद्या सु प्रमुच्यते' अर्थात् जीव कर्म से बँधता है और ज्ञान से मुक्त होता है, किन्तु कर्म तो स्वयं जड़ है अत: वे बन्धन हो ही नहीं सकते। वास्तव में ममत्वयुक्त बुद्धि ही बन्धन का कारण है। कर्म की योग्यता-अयोग्यता के विचार में बुद्धि की शुद्धता-अशुद्धता का विचार अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखता है। अत: तिलक के अनुसार गीता के कर्मयोग शास्त्र का प्रथम सिद्धांत यह है कि पहले व्यवसायात्मिका बुद्धि को शुद्ध स्थिर रखना चाहिये -

व्यवसायात्मिक बुद्धिरेकेह कुरूनन्दन।
बहुशाखा हयनताश्च बुद्धयोऽव्यवसायिनाम्।। (2-41)

तिलक के अनुसार आध्यात्म दृष्टि से यही सब सदाचरणों का मूल अर्थात् कर्मयोगशास्त्र का रहस्य है। गीता में कहा गया है - फलाशा छोड़कर निस्संग बुद्धि से किया हुआ कर्म सात्विक अथवा उत्तम है -

नियतं संगरहितमरागद्धेशेत: कृतम्।
अफलप्रेप्सुना कर्म यत्रत्सात्विकमुच्यते।। (18-23)

फल प्राप्ति की इच्छा न करने वाला मनुष्य, (मन में) प्रेम या द्धेष न रखकर बिना आसक्ति के (स्वधर्मानुसार) जो नियत कर्म करता है, उसको सात्विक कहते हैं।

तिलक कर्मयोग शास्त्र की उत्तम व्याख्या इस श्लोक को बताते हैं -

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेशु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मति संगोऽस्त्व कर्मणि।। (2-47)

इस श्लोक में सम्पूर्ण कर्मयोग का रहस्य रीति से समझा दिया गया है। सर्वप्रथम कहा गया है कि मात्र कर्म में ही तेरा अधिकार है, फल में तेरा अधिकार नहीं है। मन में फलाशा रखकर कर्म करने वाला मत हो तथा कर्म ने करने का आग्रह तू मत कर। इस प्रकार तिलक के अनुसार कर्म बंधन से छुटकारा पाने के लिये कर्म छोड़ देना उचित मार्ग नहीं है, अपितु ब्रह्मात्मैक्य ज्ञान से बुद्धि को शुद्ध करके परमात्मा के समान आचरण करते रहने से नैष्कर्म्य सम्भव होता है। ममत्वयुक्त आसक्ति के छूट जाने पर कर्म के बन्धन स्वयं ही टूट जाते हैं।

निष्कर्ष - तिलक के अनुसार इन्द्रियों की वृत्तिा या सब कर्मों को नष्ट करने के दुराग्रह में न पड़ते हुए मनोनिग्रहपूर्वक फलाशा छोड़कर सुख-दु:ख को समान समझते हुए निष्काम बुद्धि से लोकहित के लिये कर्मों को करते रहना ही श्रेष्ठ तथा आदर्श मार्ग है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्रीमद्भगवदगीता रहस्य अथवा कर्मयोगशास्त्र - लो. बाल गंगाधर तिलक, अनुवादक-श्री माधवराव सप्रे, अपोलो प्रकाशन, जयपुर (2009)।
2. द भगवद्गीता - डॉ. राधाकृष्णन, हिन्दी अनुवादक-विराज, राजपाल एण्ड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली (1969)।
3. श्रीमद्भगवदगीता - शांकरभाश्य, हिन्दी अनुवादक - श्री हरिकृष्णदास गोयन्दका, गीताप्रेस, गोरखपुर।

****

Inspiring By Literature

**Dr. Manisha Dwivedi * Gopal Prasad Rathore **

Introduction - Indian literature and authorship has seen radical changes over the past few decades. One such change that the visible is that of shift of audience preference from suspense and drama novels to a little fresh and young theme of campus novels. Campus novels managed a successful hike in Indian market owing to the fact that college the phase is considered to be one of the most entertaining and developing phase of an individual's life. Since most of the prospective readers themselves belonged to the category of students, they profoundly adopted it as a delicacy.

This in turn attracted the attention of more and more authors in this field which was otherwise considered a grey area. When we talk about campus novelists some of the prominent names that pop up in our mind are that of Anirban Mukherjee author of 'Love, A rather Bad Idea', Neeraj Chhibba author of 'Zero Percentile Missed IIT Kissed Russia', 'Ajay Mohan Jain author of 'Nothing can be as crazy', Sidin Vadukut author of 'The Dork' so forth and so on.Among all the authors that are currently ruling the mind of readers, Chetan Bhagat can be introduced as arguably one of the best skillful, salutary and outflanking campus novelist. Mr. Bhagat's writings such as 'Five point someone, Two States, Half Girlfriend, A Night @ the Call Centre' and many more successfully penetrated if not dominated the age old themes that existed earlier. Though Chetan Bhagat reached zenith of his popularity owing to a little contribution of Bollywood where his novel 'Five Point Someone' was transformed into a critically acclaimed film yet his talent as a campus novelist remains undisputed.

If we talk about the writing style of Chetan Bhagat, it could be best described as amalgamation of "descriptive writing and persuasive writing." This conclusion sounds fair or atleast closest to fair owing to the fact that Mr. Bhagat has squeezed some of his personal experiences in his novels. That makes it a little obvious that the personal experience would be reasonably shared in a persuasive manner thereby charming and influencing the reader to think as author thought and feel what the author felt. Persuasive writing is an important aspect of Chetan Bhagat's writings because it is this aspect which spellbound and pushes the reader into a virtual world where the author's character are standing.

Another important aspect of Chetan Bhagat's writing is that his writings emotionally describe the prevailing social issues in the society. He is a contemporary author who proficiently projects the issues that are prevalent in the society. A very good example could be that of acceptance of love marriage between persons of different communities as described in the novel 'Two States', increasing pressure of studies on students as described in 'Five Point Someone' and at last but not the least the issue of communal and religious agitation between different religions as described in "Three Mistakes of my Life.' This tells us that the purpose of writing these novels is not just to entertain the audience but also motivate and pursue them to disown and abandon beliefs that give rise to these kinds of social evils. Hence it can be safely asserted that Chetan Bhagat's writings are positively persuasive and radical. This aspect of writing brings him in the category of Prem Chand who also made continuous efforts to influence and evolve society by using his writings.

Though it would be naïve and inordinate to say that author of such a great stature (Prem Chand) can be compared or equated with anyone, yet it can be stated that he erected a class where such authors can fit in. The latest additions in writings of Chetan Bhagat such as 'What young India Wants' and 'Making India Awesome' clearly describes the theme of his writing which is social and national transformation.

In conclusion, the author of this write-up would like to state that the writings of Chetan Bhagat have brought radical changes in the area of literature. His novels have significantly and substantially contributed to uplift theme of campus novels which remained untouched in the Indian society for a considerable amount of time. The flavor of social issues adds worthy spice and entertainment to his novels which are both enjoyed and appreciated by the readers. It would not be a wrong projection to say that such kind of authorship has its own magnetic character which attracts the interest of people. In the end the author of this write-up would like to resolve and conclude that literature and writings have been an instrumentality in bringing positive social changes in India since inception and therefore deserves all due respect for upholding the sanctity of this sphere.

References :-

1. Jain Mohan Ajay, Nothing can be as crazy, Rupa Publication, 1st Edn, 2009.
2. Mukherjee Anirban, Love, A rather Bad Idea, Shrishti Publications,1sstEdn, 2010.

***Asst. Prof., Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA**
**** M. phill. Scholar, Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA**

3. Bhagat Chetan, Five Point Someone: What not to do at IIT, ,Rupa Publications India, 2ndEdn, 2014.
4. Bhagat Chetan, The 3 Mistakes of my Life, Rupa Publications India, 2ndEdn, 2015.
5. Bhagat Chetan, Two States, Rupa Publications India, 2ndEdn, 2014.
6. Chhibba Neeraj, Zero Percentile Missed IIT Kissed Russia, Rupa Publication, 1stEdn, 2009.
7. Vadukutauthor Sidin of 'The Dork'Penguin India, 1stEdn, 2009.

Websites -

1. timesofindia.indiatimes.com
2. www.famousauthors.org
3. www.rightcopywriter.com
4. www.thehindu.com

Articles -

1. Ms. Renu Singh &Ms. Shikha, Multicultural Context of Chetan Bhagat's2 States: The Story of My Marriage, available at http://www.languageinindia.com/march2013/renutwostatesfinal.pdf as visited on 6th December 201.5
2. Sanika Abhyankar, Chetan Bhagat – The Mystery Behind His Popularity, available at http://www.rightcopywriter.com/blog/general/chetan-bhagat-the-mystery-behind-his-popularity.html as visited on 6th December 2015.

****

प्रेम का उत्कृष्ट रूप - आसाढ़ का एक दिन

प्रीति कुमारी *

शोध सारांश – आसाढ़ का एक दिन के माध्यम से मोहन राकेश ने प्रेम के उस उत्कृष्ट रूप को समक्ष रखा है जिसमें प्रेम शारीरिक वासना के स्तर तक न पहुँकर भावना के स्तर पर ही बना रहता है व समाज की उस मानसिकता को भी दर्शाया है जहाँ व्यक्ति के चरित्र का निर्धारण उसकी आर्थिक स्थिति के आधार पर किया जाता है। मल्लिका के लिए 'वारांगणा' शब्द का प्रयोग करने पर भी उन्होंने अन्त में उसे विलोम की विवाहित दिखाकर उसके चरित्र को गरिमा प्रदान की है व नाटक को औदात्य प्रदान किया है।

प्रस्तावना – 'आसाढ़ का एक दिन' 1958 ई0 में रचित मोहन राकेश का प्रथम नाटक है। राकेश ने लीक से हटकर नाटक लिखने में सफलता प्राप्त की है। उनके नाटक विभिन्न नये प्रश्नों को उठाते भी हैं और संवेदनात्मक गहराई के साथ कुछ प्रश्नों का हल सुझाते भी हैं राकेश के व्यक्तित्व व तत्कालीन सामाजिक स्थितियों दोनों का प्रभाव था कि उनके सभी नाटकों में नायिका ही केन्द्र में दिखती है। आसाढ़ का एक दिन में 'माल्लिका' के माध्यम से उन्होंने नारी की उन कोमल भावनाओं को स्पर्श किया है जो प्रेम को गरिमा प्रदान करती हैं व सम्मानित भी करती हैं।

इस नाटक की प्रत्यक्ष विषय वस्तु कालिदास के जीवन से सम्बन्धित है किंतु मल्लिका की उपस्थिति एवं उसका औदात्य उसे नायिका प्रधान बना देता है। लोंजाइनस के अनुसार अभिव्यंजना की श्रेष्ठता और विशिष्टता का नाम उदात्तता है।'[1] कालिदास मल्लिका के लिए उसकी कोमल भावनाओं को अभिव्यक्ति देता रूप है तो मल्लिका कालिदास की एकमात्र प्रेरणा। मोहन राकेश ने जिस एकाग्रता, तीव्रता और गहराई के साथ मल्लिका की भावनाओं को स्पर्श करते हुए पाठक के अन्त:मन को स्पर्श किया है वह अद्‌भुत है। मल्लिका कालिदास से जुड़ी अपनी भावना से प्रेम करती है। अम्बिका (मल्लिका की माँ) जब मल्लिका से कालिदास और उसके सम्बन्ध में प्रचलित अपवाद के विषय में कहती है तो मल्लिका उसे स्पष्ट करती है– 'मैंने भावना में एक भावना का वरण किया है। मेरे लिए वह सम्बन्ध और सब सम्बन्धों से बड़ा है। मैं वास्तव में अपनी भावना से प्रेम करती हूँ जो पवित्र है, कोमल है, अनश्वर है....।'[2] जब राज्य कालिदास को सम्मान देता है वह अपनी सारी भावनाओं को एक ओर कर कालिदास को जाने को प्रेरित करती है वह जानती है कि कालिदास की प्रतिभा को विकसित होने का यही अवसर है अगर वह कमजोर पड़ी तो हो सकता है कालिदास वहाँ न जाये किन्तु वह उसके मार्ग की बाधा नहीं बनना चाहती इसीलिए उसके प्रेम पर विश्वास भी जताती है 'विश्वास करते हो न कि मैं तुम्हें जानती हूँ? जानती हूँ कि कोई भी रेखा तुम्हें घेर ले तो तुम घिर जाओगे। मैं तुम्हें घेरना नहीं चाहती। इसलिए कहती हूँ जाओ।'[3]

मल्लिका भलीभाँति जानती है कि कालिदास के न होने से उसके स्वयं के जीवन में कितनी रिक्तता आ जाएगी। किन्तु वह स्वार्थी नहीं बनती वरन् अपने प्रेमी के लिए अपने ही प्रेम को न्योछावर कर देती है। हालांकि उसे विदा करने के बाद वह स्वयं को नहीं रोक पाती और रोने लगती है किन्तु अपनी भावनाओं को कालिदास की उन्नति में बाधक नहीं बनने देती।

इस रचना में प्रेम के दो अलग-अलग मूल्य हैं। माल्लिका का प्रेम 'प्लेटोनिक' किस्म का प्रेम है जो बलिदान में भी सार्थकता महसूस करता हैं उसका प्रेम जीवन की जरूरत नहीं जीवन का आधार है– 'मैं टूटकर भी अनुभव करती रही कि तुम बने रहो। क्योंकि मैं अपने को अपने में न देखकर तुममें देखती थी।'[4] यही कारण है कि सबकुछ हाथ से निकल जाने पर भी मल्लिका को कोई शिकायत नहीं है। जब उसकी माँ कालिदास पर आक्षेप करती है तो अंत में वह यही कहती है– 'उनके सम्बन्ध में कुछ मत कहो माँ, कुछ मत कहो ...।'[5] कालिदास भी मल्लिका से प्रेम करता है किन्तु कालिदास के लिए प्रेम जीवन का हिस्सा है आधार नहीं। मल्लिका उसकी प्रेरणा है, उसमें मल्लिका से जुड़ाव तो है पर त्याग की भावना नहीं। जब उसे अपनी प्रतिभा को पहचान देने का एक अवसर मिलता है तो उसके समक्ष दो विकल्प उपस्थित हो जाते हैं –

प्रथम– वह मल्लिका के साथ रहकर मेहनत से अपना जीवन यापन कर लेखन कार्य करे।

द्वितीय – वह उज्जयिनी जाकर राज्याश्रय में रहकर लेखन कार्य करे जिससे उसके आर्थिक अभाव की पूर्ति तो हो जायेगी किन्तु मल्लिका को अकेला छोड़ना होगा।

यहाँ कालिदास द्वितीय विकल्प को ही चुनता है। वह अपने आर्थिक अभाव की पूर्ति के लिए मल्लिका को छोड़कर चला जाता है।

स्थितियाँ परिवर्तित होती हैं कालिदास उज्जयिनी जाकर सत्ता ग्रहण करता है और गुप्त वंश की दुहिता से उसका विवाह हो जाता है। अम्बिका भी शारीरिक रूप से अस्वस्थ रहने लगी है जिससे मल्लिका को घर का कार्य करना पड़ता है किन्तु इस सबके अनन्तर अगर कुछ नहीं बदला तो वह मल्लिका का कालिदास के प्रति प्रेम है, उसकी कोमल भावना है। वह आज भी उसी भावना से कालिदास से प्रेम करती है व उज्जयिनी से आये व्यापारियों से मंगाकर 'ऋतुसंहार', कुमारसम्भव और मेघदूत की प्रतियों को पढ़ती है और हर रचना को पढ़कर जब कालिदास की रचनाओं में स्वयं को पाती है तो अपने जीवन की सार्थकता अनुभव करती है 'मैं यद्यपि तुम्हारे जीवन में नहीं रही, परन्तु तुम मेरे जीवन में सदा बने रहे हो। मैंने कभी तुम्हें अपने से दूर नहीं होने दिया। तुम रचना करते रहे, और मैं समझती रही कि मैं सार्थक हूँ, मेरे जीवन की भी कुछ उपलब्धि है।'[6]

कोई भी रचनाकार तभी महान बनता है जब वह भोगे हुए यथार्थ को रचना में संप्रेषित करता है। कालिदास की प्रसिद्धि उसकी रचनाओं के कारण हुई किन्तु उन रचनाओं में तो मल्लिका व उसके साथ बिताये जीवन की स्मृतियाँ ही होती थी (स्वयं कालिदास ने भी इसे स्वीकारा हैं) 'लोग सोचते

* शोधार्थी (हिन्दी) अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़ (उ.प्र.) भारत

हैं मैंने उस जीवन और वातावरण में रहकर बहुत कुछ लिखा है। परन्तु मैं जानता हूँ कि मैंने वहाँ रहकर कुछ नहीं लिखा। जो कुछ लिखा है वह यहाँ के जीवन का ही संचय था। 'कुमारसम्भव' की पृष्ठभूमि यह हिमालय है और तपस्विनी उमा तुम हो। 'मेघदूत' के यक्ष की पीड़ा मेरी पीड़ा है और विरह-विमर्दिता यक्षिणी तुम हो यद्यपि मैंने स्वयं यहाँ होने और तुम्हें नगर में देखने की कल्पना की। 'अभिज्ञान शाकुन्तल' में शकुन्तला के रूप में तुम्हीं मेरे सामने थीं। मैंने जब जब लिखने का प्रयत्न किया तुम्हारे और अपने जीवन के इतिहास को फिर-फिर दोहराया। और जब उससे हटकर लिखना चाहा तो रचना प्राणवान् नहीं हुई।'[7]

कश्मीर जाते हुए जब मल्लिका कालिदास की प्रतीक्षा करती है तो कालिदास वहाँ नहीं आता क्योंकि उसके अंदर मल्लिका की आँखों में झांकते प्रश्नों का सामना करने का साहस नहीं था। परन्तु वह यह सोचकर तब भी निश्चित रहता है कि मल्लिका के मन में इसके बाबजूद भी उपेक्षा का भाव कभी नहीं जागेगा।

यह मल्लिका का प्रेम व उसकी कोमल भावनाएं ही हैं जिन पर कालिदास संदेह नहीं कर पाता। उसे स्वयं पर भरोसा नहीं हैं न जाते वक्त था न उसके बाद। 'मैं यहाँ से क्यों नहीं जाना चाहता था? एक कारण यह भी था कि मुझे अपने ऊपर विश्वास नहीं था। मैं नहीं जानता था कि अभाव और भर्त्सना का जीवन व्यतीत करने के बाद प्रतिष्ठा और सम्मान के वातावरण में जाकर मैं कैसा अनुभव करूँगा।'[8] स्वयं के जीवन में विवाह के पश्चात भी वह मल्लिका से सदैव यह अपेक्षा रखता है कि आत्मीय स्तर पर मल्लिका की भावनाओं और उसके जीवन में एक स्थान सदैव शेष रहे जिस पर सिर्फ उसका अधिकार रहे। इसीलिए जब वह वापस आने पर मल्लिका को वारांगणा के रूप में पाता है तो वह स्वयं को असहाय पाता है क्योंकि वह अपेक्षा करता था कि वह कभी भी लौटकर आये मल्लिका के जीवन में कुछ भी नहीं बदलेगा 'जाने के दिन तुम्हारी आँखें का जो रूप देखा था, वह आज तक मेरी स्मृति में अंकित है। मैं अपने को विश्वास दिलाता रहा हूँ कि कभी भी लौटकर आऊँ, यहाँ सब कुछ वैसा ही होगा।'[9]

मोहन राकेश मल्लिका के लिए'वारांगणा' शब्द का प्रयोग भले ही करते हैं किन्तु उन्होंने इस बात के पूरे संकेत दिये हैं कि अंत में वह विलोम की विवाहिता है। जब कालिदास अंत में मल्लिका के पास वापस आता है और विलोम से जाने के लिए कहता है तो विलोम पूछता है मैं यहाँ से क्यों चला जाऊँ 'क्योंकि तुम यहाँ लौट आये हो? ...... क्योंकि वर्षो से छोड़ी हुई भूमि आज फिर तुम्हें अपनी प्रतीत होने लगी है? ..... क्योंकि तुम्हारे अधिकार शाश्वत हैं?'[10] यहाँ भी विलोम इसी ओर संकेत कर रहा है कि इस घर पर, मल्लिका पर आज उसका अधिकार है। 'परन्तु समय निर्दय नहीं है। उसने औरों को भी सत्ता दी है अधिकार दिये हैं।'[11] अंत में विलोम कालिदास को छोड़कर चला जाता है किन्तु जाते समय भी वह मल्लिका को कालिदास का आतिथ्य करने को कहता है 'मैं चला जाता हूँ। इसलिए नहीं कि तुम आदेश देते हो। परन्तु इसलिए कि तुम आज यहाँ अतिथि हो, और अतिथि की इच्छा का मान होना चाहिए।'[12] आगे वह मल्लिका को कालिदास का आतिथ्य करने को कहता है- 'देखना मल्लिका, आतिथ्य में कोई कमी न रहे।'[13] ये शब्द घर का स्वामी ही कह सकता है। मोहन राकेश कहीं भी इस बात का प्रत्यक्ष रूप से उल्लेख नहीं करते कि विलोम मल्लिका का पति है किन्तु अप्रत्यक्ष रूप से कई स्थानों पर वे इस बात का संकेत अवश्य करते हैं। विलोम एक जगह अष्टावक्र के कथन पर संदेह करता है 'क्या बच्ची की आकृति सचमुच विलोम से मिलती है या ......।'[14] यदि विलोम को संदेह है कि बच्ची की आकृति उसकी जैसी ही है या किसी और की। यह संदेह भी इस बात की ओर इंगित करता है कि अब विलोम ही मल्लिका का पति है।

यहाँ वारांगणा शब्द का प्रयोग इस बात की ओर संकेत करता है कि मल्लिका विलोम की विवाहिता होकर भी कालिदास से प्रेम करती है उसकी कोमल भावनाएं आज भी कालिदास से ही जुड़ी हुई हैं। वह उन्हीं स्मृतियों के सहारे जीवित रहती है, अपने इस रूप की ओर वह संकेत करती है- 'तुमने वारांगण का यह रूप भी देखा है? आज तुम मुझे पहचान सकते हो? मैं आज भी उसी तरह पर्वत शिखर पर जाकर मेघमालाओं को देखती हूँ।'[15] मल्लिका का वारांगणा बनने का निर्णय स्वैच्छिक नहीं है, वरन् व्यक्तित्व को कुचल देने वाली परिस्थितियों के दबाव में लिया गया है। पारंपरिक दृष्टि से यह मूल्यों से विलगन लग सकता है किन्तु स्थितियों की भयावहता की दृष्टि से देखें तो यहाँ भी मल्लिका गरिमाहीन नहीं है। 'भारतीय समाज में नारी एक पत्नी के रूप में प्रतिष्ठित होती है। वह वात्सल्य प्रेम के सामने सभी प्रकार के प्रेम को तुच्छ समझती है। यही उसकी गरिमा है।'[16]

यह मल्लिका की कोमल भावनाएं ही थी जिनकी आत्मीयता कालिदास को उसकी ओर खींचती रही। 'यहाँ की एक-एक वस्तु में जो आत्मीयता थी वह यहाँ से जाकर मुझे कहीं नहीं मिली।'[17] कालिदास एक ओर आत्मीयता चाहता है दूसरी ओर सत्ता और सुविधा का भोग। जब तक उसे आत्मीयता मिलती है तब तक सत्ता नहीं मिलती। फिर सत्ता मिलती है तो आत्मीयता समाप्त हो जाती है अंततः वह सत्ता को ठुकराकर आत्मीयता की खोज में वापस लौटता है किन्तु तब दोनों ही चीजें हाथ से फिसल जाती हैं। 'विलोम की परिणीता होकर मल्लिका एक बच्चे की माँ बन चुकी है। पर कालिदास के प्रति वह उसी प्रकार स्नेहमयी और आस्थावान है। किन्तु रोमैंटिक कालिदास का सब-कुछ टूट जाता है जबकि मल्लिका टूटकर भी नहीं टूटती।'[18] कालिदास सब कुछ 'अथ' से आरम्भ करने के लिए वापस आया है किन्तु अंततः उसमें इसकी भी हिम्मत नहीं है 'मैंने कहा था मैं अथ से आरम्भ करना चाहता हूँ। यह सम्भवतः इच्छा का समय के साथ द्वन्द्व था। परन्तु देख रहा हूँ कि समय अधिक शक्तिशाली है।'[19] और वह सब कुछ छोड़कर फिर वापस चला जाता है और अंत में दोनों प्रेमी फिर से अलग हो जाते है। कालिदास का जो बिंब जनमानस में व्याप्त है मोहन राकेश ने इस नाटक में उससे अलग रूप दिखाया है 'इतना महान साहित्यकार, जिसे भारतीय संस्कृति और दर्शन का चितेरा माना जाता है, व्यक्तिगत जीवन में कोरा रोमैंटिक कायर और सेंटीमेंटल होगा यह विश्वसनीय नहीं लगता।'[20] क्योंकि समाज व्यक्ति के चरित्र का निर्धारण उसकी प्रतिष्ठा, आर्थिक स्थिति व उसके वर्ग के आधार पर करता है मोहन राकेश ने यहाँ उसी तरफ इशारा किया है।

मोहन राकेश ने मल्लिका के चरित्र को गरिमा प्रदान करते हुए उसे औदात्य प्रदान किया है। राकेश ने प्रेम के उस रूप को समक्ष रखा है जहाँ प्रेम वासना के स्तर तक न जाकर भावना के स्तर तक ही बना रहता है। प्रेम की इस आदर्श स्थिति की कल्पना भी अन्तः को स्पर्श करती है। मल्लिका का चरित्र पाठक के मन पर कई दिन तक छाया रहता है। किन्तु मल्लिका का चरित्र स्वाभाविक नहीं लगता। यह स्वीकार करना कठिन लगता है प्रेम के लिए नियति को झेल जाने वाले चरित्र आज भी समाज में उपस्थित हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मूलजी भाई बी0 पटेल, भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण -2000, पृ0 96
2. मोहन राकेश, आसाढ़ का एक दिन, राजपाल एण्ड सन्ज़ दिल्ली, संस्करण- 2007, पृ0 13

3. वही, पृ0 45
4. वही, पृ0 94
5. वही, पृ0 86
6. वही, पृ0 93
7. वही, पृ0 102
8. वही, पृ0 99
9. वही, पृ0 98
10. वही, पृ0 108
11. वही, पृ0 108–109
12. वही, पृ0 109
13. वही, पृ0109
14. वही, पृ0 108
15. वही, पृ0 94
16. डॉ0 निर्मल कौशिक, मोहन राकेश कृत आसाढ़ का एक दिन का समाजशास्त्रीय अध्ययन, सम्पा0–डॉ0 हेतु भारद्धाज, पंचशील शोध समीक्षा (त्रैमासिक हिन्दी शोध पत्रिका), जनवरी–मार्च 2014, पृ0 93
17. मोहन राकेश, आसाढ़ का एक दिन, राजपाल एण्ड सन्ज़ दिल्ली, संस्करण– 2007, पृ0 98
18. डॉ0 बच्चन सिंह, हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास, राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करण –2000, पृ0 464
19. मोहन राकेश, आसाढ़ का एक दिन, राजपाल एण्ड सन्ज़ दिल्ली, संस्करण– 2007, पृ0 110
20. डॉ0 नगेन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, मयूर पेपरबैक्स नोएडा, तीसरा संस्करण 2009, पृ0 663

****

राजेन्द्र यादव - एक चिंतन कहानी साहित्य के संदर्भ में

डॉ. प्रेमलता तिवारी *

प्रस्तावना - आधुनिक हिन्दी के कहानीकारों में श्री यादव जी का स्थान प्रमुख है। सभी विधाओं पर अधिकार रखते हुए उनकी कहानी विधा ही ऐसी है, जो जीवन की जटिल से जटिलतम परिस्थितियों में उद्‌भुत अनुभूतियों को साकार करने में सफल हुई हैं। स्वतन्त्रता के बाद के कहानीकारों में से एक समर्थ कहानीकार के रूप में इन्होंने ख्याति अर्जित की है। परिवेष से प्रभावित होकर इन्होंने न केवल उत्कृष्ट कहानियां ही दी है, अपितु कहानी आन्दोलन में बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है।

भिन्न - भिन्न रूप में बिखरी कहानियां छ: संग्रहों में प्रकाशित हुई है। परिणाम व कलात्मक उपलब्धि की दृष्टि से कहानियां विस्तृत स्वतन्त्र विवेचन की मांग करती है। कहानी विधा ही एक ऐसी विधा है जो स्वतन्त्र रूप से चली आ रही है। आज के अभाषित अस्तिव और तोतलेपन को निवस्त्र करने में आधुनिक कहानीकारों ने कोई कसर नहीं छोड़ी है। लेखक भी इनसे अलग नहीं हैं। जीवन के छोटे-बड़े, खट्टे-मीठे अनुभव अस्तित्वहीनता की बोधगम्य स्थिति, राजनैतिक और आर्थिक परिस्थितियों के कारण अपने आपमें सिमटता हुआ मध्यवर्ग इनकी कहानियों की पृष्ठभूमि माना जा सकता है। उस समय गति को ध्यान में रखकर लिखी हुई कहानियां एक अजीब परन्तु आकर्षक प्रवाह में बहती हैं, जिसमें तिरोहित होकर कुछ क्षणों के लिए पाठकी की रसमग्न हो जाता है। कहानी विधा को उन्होंने 'कला के लिए कला' तत्व पर कभी स्वीकार नहीं किया अपतु जीवन के लिए ही माना है, वे कहते है- 'हर रोज जिन्दगी किस तरह बदलती जाती है चीजों, लोगों के प्रति रूमानी संबंध, जटिज और संश्लिष्ट होते जाते है। हर क्षण एक नये आरम्भ साथ ही एक नये अन्त की अनुभूति संतुलन खोजने को प्रेरित करती है। इस सबके बीच कहानी या कला एक बारीक आश्वासन की तरह साथ चलती हैं। घोर संकट में भी गुनगुना उठने की तरह.....मस्ती और मस्ती को एक साथ व्यक्त करने के लिए....फिर कहानी तो एक वार्तालाप भी है।'

वस्तुत: विचार लेखक की समस्त कहानियों की पृष्ठभूमि साकार कर देते हैं। लेख की कहानियां कल्पना की उड़ानें नहीं हैं, भावनाओं की कल्पनामयी तरंगें नहीं बल्कि देखी और अनुभव की हुई जीन घटनायें इनमें आर्थिक पराधीनता का विरोध है। नारी हृदय का चीत्कार है। युवा पीढ़ी की विवशताओं के ठहाके हैं, जीवन की विषमताओं पर प्रहार है। व्यापक दृष्टिकोण वृत्ति है। सामाजिक संदर्भो के अनुरूप विकसित होती हुई कहानी विधा को दृष्टि में रखते हुए श्री यादवजी के पूर्ववर्ती परम्परा के प्रति विद्रोह पर नवीन स्वतन्त्र दृष्टिकोण से कथायात्रा की शुरूआत की है।

अतीत से विमुख हो स्वतन्त्रता वर्तमान में जीने के आग्रहवश उनकी कतिपय कहानियां सामाजिक संक्रमण की कहानियां है। उनकी कहानियां किसी याद विशेष से बोझिल न होकर मूल्यपरक जीवन के यथार्थ में मूल्यांकन की मांग करती है लेखक ने अपनी अभिरूचियों एवं संस्कारों के अनुरूप कहानी संसार का निर्माण किया है। वे स्पष्ट कहते हैं कि 'मैंने अपने परिवेश से भागने के लिए कहानियां नहीं लिखीं, उसे तोडकर या बेधकर गहराई और सार्थकता से उसें समझने के लिए ही इन्हें लिखा है।'

स्पष्ट है कि इनकी कहानियां विशिष्ट प्रवृत्ति को लक्षित कर सुन्दर भावावेग द्वारा सत्य खंड की प्रतिष्ठा करने में सफल हुई है। अपनी त्रुटियों को स्वीकारते हुए सशक्त शिल्प विधान के माध्यम से नित नवीन जटिल परिवर्तन की सूक्ष्म रेखाओं को जानकर उसकी दुर्बलताओं को पाठकों से साक्षात्कार कराने में सफल हुए हैं। साधारणत: जो विशेषताएं इनकी कहानियों में हैं वे निम्न हैं-

1. कतिपय अपवाद छोड़कर समस्त कहानियां रोचक व कलापूर्ण शैली में लघु आकार में लिखी हुई है, ताकि पाठक उन्हें एक बैठक में पूर्ण कर सकें।
2. हर एक कहानी का लक्ष्य जीवन जगत की कोई भी भावना या घटना है जो यथार्थ से चिपकी है।
3. स्वतन्त्र निजी वैयक्तिक विचार प्रणाली व कथावस्तु के आधार पर वैधानिक रूप से कहानी उत्तम व प्रभावशाली बनी है।

इन तीन विशेषताओं के आधार पर स्पष्ट है कि मानसिक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति के लिए लेखक ने कहानियों का नवीनतम रूप रखा है। जो विशेष बात हमारा ध्यान आकर्षित करती है वह यहीं है कि सामाजिक दृष्टि की नवीनता ने शिल्पबोध की हर मर्यादा को भिन्न-भिन्न कर अपने नये रूप को नये परिणाम में प्रस्तुत किया है।

आज के परिवेश को देखते हुए कहानियों को हम पारम्परिक तत्व पर रखने का प्रयास नहीं करेंगे। इन कहानियों को जिस पृष्ठभूमि पर लिखा गया है, उसी पृष्ठ भूमिपर स्वीकार करना है। वर्तमान परिवेश और कहानियां परस्पर पूरक हुई हैं। अतएव कसौटी का आधार आधुनिक जीवन मानकर उसकी संगति-विसंगतियों को खोजने का प्रयास किया है। परम्परा से चले आ रहे कहानी के प्राचीन तत्वों पर इन्हें सफल या असफल घोषित करने के प्रयास को नकारा गया है। कारण स्वंय लेखक ने कहा है कि 'साहित्य की किसी विधा के विकास को लेखकों और रचनाओं के नामों से समझा जा सकता है, प्रवृत्तियों से जाना जा सकता है, लेकिन सबसे सही तरीका उस परिवेश और पृष्ठभूमि को समझ लेना है जो लेखक के मानस विश्व और लेख की प्रवृत्तियों को निर्धारित करते है'।

इस विचार के आधार पर इनकी कहानियों को सीधी गतिशील जीवन के आधार पर ही स्पष्ट करने का प्रयास किया है। इनकी कहानियां जीवन की पूर्ण समग्रता प्रस्तुत नहीं करती, यह लेखक का उद्देश्य भी नहीं रहा है,

* प्राध्यापक, (हिन्दी)शासकीय महाविद्यालय, बडवाह (म.प्र.) भारत

जैसा कि उन्होने कहा है कि 'कहानी हमेशा ही किसी परिस्थिति में मनुष्य के मन और अनुभवों यानी मनोविज्ञान को समझने से प्रेषित करने का एक प्रयत्न है। उसे बनाने वाले, तत्वों और और उसके द्वारा बनाई बदली गयी स्थितियों के जीवन के खंडों का अध्ययन है, इन बनती और बनाती स्थितियों को दिशा और काल में अर्थात विस्तार और गहराई की संश्लिष्टता में साथ पकड़ने का एक कलात्मक विधान।'

कदाचित इसी विचारधारा के आधार पर इनकी कहानियां खंडित होते जाने वाले अस्तित्व के लिए संघर्षरत मध्यवर्ग के कतिपय दृष्टिकोणों को रूप मिलता है। सूक्ष्मता और सांकेतिकता के साथ साथ नये सामाजिक यथार्थ को उन्होंने अपनी पूर्ण स्वीकृति प्रदान की है। कुंठित और संघर्षरत पीढ़ी के उलझाव को गहन रूप में प्रस्तुत करने के कारण अन्तहीन कहानियों के समाप्त होने के बाद भी पाठक सोचने के लिए विवश हो जाता है।

कहानियों के कौतूहलपूर्ण आरम्भ में लेखक ने पूर्ण संदेशों के विस्तृत वर्णनों को कहीं भी मान्यता नहीं दी गई है कि वह बिना किसी बाधा के निर्णयात्मक लक्ष्य को अपना सकें। पूर्व इतिहास की आवश्यकता और अनुचित विचार की बाधा को ध्यान में रखे हुए मूल रूप पर ही लक्ष्य रख है। सीमोल्लघंन न कर कहानी के अस्वाभाविक संतुलित स्थिति को टालने का सफल प्रयास किया है। दो तीन कहानियों के आरम्भ देखियें –

तुम्हें पता है आज मेरी वर्षगांठ है और आज मैं आत्महत्या करने गया था। 'क्यों ये बदरूदी, वो रहीम आज भी नहीं आया ? वही रूखी कर्कश आवाज।' बाबू वह तो हल्दी चूना लगा के पड़ा है। यह आवाज लड़के की थी।

स्पष्ट है कि परिवेश की लक्ष्यात्मक गतियों को पकड़ने के लिए कहानी उत्सुक है। 'अभिमन्यु की आत्महत्या' में आरम्भ द्वारा लेखक ने कथानक के सम्पूर्ण जीवन को उसके अन्तरंग संघर्ष को आरंभ में ही साकार कर दिया है कि वर्तमान जीवन में घबराकर वह आत्महत्या करने गया था। विवशता ने उसे लौटा दिया। इस प्रकार की केन्द्रीय घटना को ध्यान में रखने के बाद ही शुरू की गई कहानियों में चुस्तता है तथा प्रभावशाली बनी हैं।

कुछ कहानियों का आरम्भ वर्तमान में होकर फ्लेश बेक पद्धति के रूप में अतीत में चलती है। 'टूटना के', 'प्रतीक्षा', 'अपने यार' जैसी कई कहानियां इसका उदाहरण है। अगर इनकी कहानियों में यथार्थ परिवेश के सफल मनोविश्लेषण के रूप का अभाव रहता है तो संभवतः आज व्यस्त पाठक इन्हें यो सिर आंखों पर न बिठाता। कहानियों में मनोरंजन के साथ साथ भावानुभूतियों का जो साथ मिलता है, उसमें पाठक जीवन के गहरे अतल को छूने में सफल हुआ है। जीवन के यथार्थ परिवेश से निकली इनकी कहानियों में वे सभी सहज गुण हैं, जो पाठकों को विचार करने के लिए विवश करते हैं। कहानियां व्यक्तिगत होते हुए भी सहज व निरपेक्ष दृष्टि से आमंत्रित करती हैं कि पाठक उनमें आकर एकाकार हो जायें। इस पृष्ठभूमि पर लेख के विचार सार्थक है– 'भारत की अपनी और नये आदमी की कहानी की एक रूपरेखा भर देने की कोशिश मेरी इस सारी यात्रा का ध्येय रहा है, और संबल रही हैं आज के जीवन को जीने और समझने की दृष्टि और प्रक्रिया।'

स्पष्ट है कि कहानियों के चरमबिंदु की ओर इनका गहरा ध्यान है। इससे यह स्पष्ट है कि उन्होंने जो कुछ देने का प्रयास किया है, वह चाहे दोषपूर्ण हो पर नितान्तमौलिक और अनुभूत है। आज की कहानी को जिस पेचीदगी, पच्चीकारी, प्रतीकात्मकता, व्यक्तिपरकता, सूक्ष्मता, और सांकेतिकता जैसी विशेषताओं से युक्त मानी जाती है, कहना है, कहना न होगा कि लेखक की कहानियों में भी इन्हें पूर्णतः सुरक्षा मिली है। रचना प्रक्रिया की सूक्ष्मता को लक्षित करें तो स्पष्ट होता है कि इनकी कहानियों में वह सब कुछ है जो आज के परिवेश में हम सब भोग रहे हैं। संघर्षरत कलाकार के अनुभवों व मिलते जुलते स्तर से विषय चुनें हैं, जिसके परिणामस्वरूप पाठक कहानी को अपने जीवन का पृष्ठ मान उसमें खो सा जाता है।

उद्देश्यपूर्ण कहानियों में यथार्थ दृष्ठिकोण से परिपूर्ण इनकी कहानियाँ गंभीर धाराओं का परिचय देती हैं। इन्हीं कहानियों की विकासशील गति में और अधिक तीव्रता लाने के लिए इनकी कहानियों में भाषा व कला की दृष्टि से कहानी का शिल्पगत श्रृंगार कर जीवन के अनजान सौंदर्यशाली रूप से आकर्षित बनाया है। इसलिए इनके पूर्णतः प्रभावित जो श्री लाल बहादुर सिंह कहते है – इस पीढी के कहानी लेखकों में राजेन्द्र यादव अत्यंत लोकप्रिय एवं मंजे हुए हैं। इनकी कहानियों का संग्रह 'जहां लक्ष्मी कैद है' 'छोटे छोटे ताजमहल' और अन्य कहानियां प्रकशित है। विविध परिवेश, व्यक्ति एवं घटनाओं के आधार पर लिखी गई ये कहानियां आधुनिक कहानी परम्परा को एक नया अर्थ औरएक नया मोड़ देने मे पूर्ण समर्थ है।'

कहानी को सीधे जिन्दगी के परिप्रेक्ष्य में रखने का सफल प्रयास किया गया है। कहानी इनके लिए निरतंर गतिशील रखने वाली प्रक्रिया है। इसलिए इन्होंने मूलगत संक्रमण को जांचने की मांग की है। वे स्पष्ट कहते है कि 'यथार्थ के प्रति यह दृष्टि नये कलाकार के पास इलहम की तरह नहीं उतरी। उसको इसके लिए बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ी है। निहायत ही उबड़–खाबड़ धरती से गुजरना पड़ा ह। और न जाने कितने बाहरी–भीतरी अभावों, रूढ़ियों परम्पराओं के संस्कारों से जूझना पड़ता है।'

बाह्य विचारों के विवेचन के लिए भी इन कहानियों में कही स्थान दिखाई नहीं देता है। किसी प्रभाव के या आदर्शो के प्रचार की भावना से रक्षित इनकी कहानियां तटस्थ कलाकार की स्वतन्त्र देन है। श्री यादवजी ने कहां है – 'जीवन के यथार्थ को भरपूर जीने, यानी बाहरी वास्तविका को अपने भीतर से गुजरते हुए बदलते और बिखरते, बनते रूप लेते हुए देख सकने की तटस्थता कला की पहली और मौलिक शर्त है।'

जीवन के व्यक्ति संदर्भो से यह स्पष्ट है कि इनकी कहानियों में उपदेश नहीं है। विविध अर्थो में सामाजिक व व्यक्तिगत संदर्भो को स्पष्ट अभिव्यक्ति देने में ये कहानियां किसी भी प्रकार के श्रेष्ठ मूल्यों की प्रतिष्ठा नहीं करती। व्यक्ति की विवशता को व्यक्त करने वाली ये कहानियां केवल पाठकों में आक्रोश पैदा कर सकती है। सहानुभूति नहीं व्यक्तित्व की पृष्ठभूमि पर पनपने वाली ये कहानियां कहानी के तत्वों के विद्रोह में स्वतन्त्र रूप लेकर प्रस्तुत हुई हैं। जीवन से जुडी हुई कहानियां जीवन के ही पन्ने उलटने को विवश है न कि परम्परा से जुड़े रहने को तैयार है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

हिन्दी उपन्यास दलोदानिश में नारी जीवन का यथार्थ बोध

डॉ. अमित शुक्ल *

शोध सारांश – समकालीन हिन्दी उपन्यासकारों में कृष्णा सोबती अत्यंत लोकप्रिय उपन्यासकार हैं। कृष्णा सोबती ने अपने साहित्य में कालजयी नारी पात्र दिये हैं। उन्हीं उपन्यासों में से एक उपन्यास दलोदानिश भारतीय भाषा परिषद से पुरस्कार प्राप्त उपन्यास है, दलोदानिश उपन्यास में स्त्री मन का अत्यंत सजीव, सुंदर और यथार्थपरक चित्रण किया है। वे उपन्यास के सभी पात्रों के मन का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करने में अत्यंत सफल रही हैं, साथ ही मध्यमवर्गीय नारी में चेतना जागृत कर तथा उन्हें अपनी शक्ति स्वयं पहचानने की और अपनी समस्याओं को स्वयं ही सुलझाने का समाज में एक संदेश दिया है।

शब्द कुंजी– दलोदानिश,नारी संघर्ष, चेतना, दिल्ली शहर, सामाजिक जीवन

प्रस्तावना – डॉ नामवर सिंह ने कहा था कि कृष्णा सोबती की तलवार उनकी कलम है। वास्तव में उनके कलम की ये धार उनके हरेक उपन्यासों में दिखाई देती है। उन्हीं उपन्यासों में से एक उपन्यास दलोदानिश भारतीय भाषा परिषद से पुरस्कार प्राप्त उपन्यास है, जो सन् 1993 में राजकमल नई दिल्ली से प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास में कृष्णा सोबती ने संयुक्त परिवार की प्रथा ढो रहे परिवारजनों के अंतरंग जीवन को अभिव्यक्त किया है। इसमें प्रमुख नारी पात्र कुटुम्ब प्यारी, महकबानो और छुन्ना हैं। कुटुम्बप्यारी वह वकील कृपा नारायण की पत्नी है। वह परिवार की अनेक जिम्मेदारियों को संभालती है। उसके पति कृपानारायण के महकबानो से प्रेम संबंध है। इस कारण वह मानसिक रूप से परेशान रहती है। महकबानो विवाहित कृपा नारायण की प्रेमिका है। वह कृपा नारायण के प्रति समर्पण भाव रखती है। सहनशील होने के कारण वह किसी बात की शिकायत नहीं करती। उसके इसी स्वभाव के कारण कृपा नारायण उससे आकृषित हैं। महकबानो के मन में कोई उलाहना भाव नहीं है। वह आर्थिक स्वतंत्रता को महत्वपूर्ण मानकर आत्मनिर्भर बनती है। छुन्ना कृपा नारायण की विधवा बहन है। वह विद्रोही स्वभाव की स्त्री है। सामाजिक रूढ़ी परम्परा को जानते हुये भी वह विधवा के रूप में मरना नहीं चाहती। वह अपने लिए सुनहरे सपने देखती है। उन सपनों को पूरा करते हुये आर्थिक रूप से सक्षम बनती है। कृष्णा सोबती ने दलोदानिश उपन्यास में जहां पात्रों का सजीव चित्रण किया, वहीं वे दिल्ली शहर का भी अत्यंत सजीव वर्णन करने के कारण उपन्यास अत्यंत आकर्षक हो गया है। उन्होंने लिखा है–

दिल्ली के चार ठाठ
शातिरबाजी, शिरकतबाजी
शोषतबाजी, शीशाबाज

देखा जाए तो दलोदानिश की शुरूआती दो तीन पंक्तियों में ही पूरा माहौल मय मौसम और रंगों अब के पुरानी दिल्ली की पूर्ण फितरत के साथ एक ही स्ट्रोक में उभर आता है। दलोदानिश वकील कृपानारायण के दिल अर्थात भावना और दानिश अर्थात बुद्धि की कहानी है। दलोदानिश उपन्यास में महकबानो अपनी पूरी जिंदगी में अस्तित्व और अस्मिता को बचाये रखने के लिये लड़ाई लड़ती रहती है। उसे अपने अस्तित्व और अस्मिता का बोध होता है। उसके द्वारा कही गयी ये बातें कि आज से पहले हम ओढ़नी थे, अंगिया थे, सलवार थे पर औरत ही नहीं थे। महक बानो और कृष्णा सोबती का मूल प्रश्न जो उन्हें मथता है वह यह कि अस्मिता को धूमिल करने वाला आखिर क्या है, स्त्री के आर्थिक अधिकारों के हनन का क्रमिक इतिहास ही तो बच्चे भी आर्थिक दृष्टि से कमजोर मां को छोड़ पिता के भरे पूरे संसार की ओर रूख कर लेते हैं। महक को अपने बच्चे का भी सहारा नहीं मिल पाता। कृष्णा सोबती के द्वारा उठाया गया महक की मुक्ति का सवाल पूरी दुनिया के मुक्ति का सवाल है। देखा जाए तो दलोदानिश उपन्यास में पितृसत्तामक समाज की सामंती रवायतों में स्त्री की सामाजिक हैसियत का खुलासा है। दलोदानिश में रखैल के सामाजिक जीवन को स्पष्ट किया है। समाज की व्यवस्था के कारण या जाति विरादरी के कारण दो बच्चों की मां होते हुए भी रखैल को निम्न दर्जा दिया गया है। समाज उसके मन को समझता नहीं। स्वयं मां होते हुए भी रखैल महक बानो को शादी में आने की इजाजत नही दी जाती। वह कहती है – बेटा हमेशा से ही आपका है अब बेटी को भी गोद लिया जा रहा है। इस प्रकार रखैल का सामाजिक जीवन केवल भोग्या के रूप में जाना गया है। सामाजिक बंधनो के कारण उसका जीवन घुटन भरा हो गया। दलोदानिश में महक का चरित्र अत्यंत सशक्त रूप से उभरा है।,महक को यह अहसास है कि वह वकील कृपानारायण की रखैल है,ब्याहता पत्नी नही अर्थात दोनो के बीच एक नाम विहीन अधिकार विहीन संबध है। महक को पूर्णता और परितृप्ति दी है मातृत्व ने। उसके व्यक्तित्व को नई दिशा दी है मातृत्व ने वह वकील साहब की कृतज्ञ भी है जिन्होंने मासूमा और बदरू का पितृत्व स्वीकार कर उसके स्त्रीत्व को सम्मिलित किया है। एक प्रसंग उपन्यास में आता है जहां पर महकबानो अपनी पुत्री के लिए अपना इतिहास नहीं दोहराना चाहती कृपा नारायण का अपनी अवैध पुत्री के लिए संगीत, नृत्य में पट होकर मां के घराने को जीवित रखने का सुझाव जानम अपनी तालीम को न बिसराइए। आपका घराना तो तानपुरा निकालिए मासूमा को भी जोड़ी सिखाईए। महक सन्न रह जाती है, वह पहली बार प्रतिवाद करते हुए कृपानारायण के समक्ष मुंह खोलती है नहीं हम अपने बच्चों की खातिर हरगिज – हरगिज ऐसा नहीं करेगे। किशोरावस्था से पदार्पण करते हुय मासूमा और विशेष रूप से बदरू जिस प्रकार उत्तरोतर अपने अब्बू कृपानारायण एवं हवेली से जुड़ते चलते हैं जो कभी बचपन में अपने अब्बू से चवन्नी मांगते थे एक चवन्नी जयराम जी की एक चवन्नी आदाप अर्ज की।[1]

दलोदानिश उपन्यास में अन्य चरित्रों के अतिरिक्त छुन्ना बीबी का चरित्र एक यादगार चरित्र के रूप में सामने आता है। दलोदानिश एक ऐसा उपन्यास जिसमें ना साम्प्रदायिक उन्माद था, ना पारिवारिक विघटन न नैतिकता के भौंडे उपदेश और न बेबसी और बेईमान जिसकी गिरफ्त में आज हम छटपटा

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

रहे हैं अपने दिल से दूर एक ऐसे बिया बडन में जहां दानिश या दानिश मंदी एक मृग तृष्णा भर है कि वह हर बार एक भाषिक मिजाज लेकर आती है।[2]

दलोदानिश उपन्यास के नारी पात्र प्रमुखता के आधार पर इस प्रकार हैं। –

महकबानो– राख में दबी चिंगारी,
कुटुम्ब प्यारी– एक दिशाहीन प्रतिशोध
छुन्ना – अपने पथ की खोज
नसीमबानों – महक बानो की मां और भविष्य
बुआजी – कृपानाराण की मां
मासूमा –अवैध पुत्री

दलोदानिश उपन्यास में लेखिका कृष्णा सोबती परम्परानुमोदित दृष्टि से नारी को देखने का आग्रह नहीं करती। उसे जायजाद रूप में मिले संस्कारों और वर्जनाओं से मुक्त मानवीय संदर्भों में देखने का प्रयास करती है। दूसरे दृष्टि से जवाब– तलब करती है कि अपनी शारीरिक सबलता, आर्थिक आत्मनिर्भरता एवं बौद्धिक प्रखरता के कारण उसने संरक्षक एवम स्वामी पद पाया है तो क्या पदासीन हो उसने अपने दायित्वों का सम्यक निर्वाहण किया है। क्या अपने अधिकारों का दुरूपयोग करके उसने दूसरों के निजत्व को तो नहीं रौंदा है। कृपा नारायण परम्परागत पुरूष को उसके सामंतवाद को केन्द्र में रखकर उन्होंने तीन की व्यथा एवं विद्रोह के तीन स्तरों को छूने का प्रयास किया है। बने बनाए मानदंडो के आधार पर नारी को मूल्यांकित किया जा सकता सकता है।[3]

दलोदानिश उपन्यास में कुटुम्बप्यारी वकील कृपानारायण की पत्नी है, उनके तीन बेटे प्रेम नारायण, दयानारायण, और राजनारायण की मां है। महक और छुन्ना के विपरीत कुटुम्ब के पैरों तले सम्बन्धों एवं सामाजिक प्रतिष्ठा की पुख्ता जमीन है। कुलीन परिवार की कुलवधु संयुक्त परिवार के कर्ता धर्ता की अर्धांगिनी ,तीन–तीन पुत्रों की सौभाग्यशाली जननी भंडारगृह और भरीपूरी गृहस्थी की स्वामिनी कुटुम्बप्यारी परम्परागत नारी नहीं है पर वह आधुनिक दृष्टि से सम्पन्न एक जागरूक महिला भी नहीं है। अन्याय का प्रतिकार करना चाहती है लेकिन अन्यायी को पहचानने का सामर्थ्य उसमें नहीं है। पति को छीन ले जाने वाली महक के प्रति द्वेष युक्त होना और सामने खड़े अपराधी कृपानारायण को नजर अंदाज कर महक को ही असली अभियुक्त मानना उसकी दृष्टिगत संकीर्णता का परिचायक ही हैं। डॉ निर्मला जैन ने लिखा है कि बगावत दलोदानिश के सभी पात्रों ने की है। तरीके सबके अलग–अलग रहे हैं। खानदानी समझी जाने वाली कुटुम्बप्यारी अपनी जवान, बेमौके उपस्थिति, किसी जेवर के लिए जिद और फिर असहयोग से या फिर अधिक से अधिक चोरी छिपे भैरों बाबा की हम बिस्तर होकर प्रतिशोध ले लेती है। उसके कुछ तौर तरीकों के मुकाबले महकबनो का चरित्र कई अधिकाशयिस्ता और सालिकामंद है।

दलोदानिश उपन्यास में छुन्ना वकील कृपानारायण की बहन है। वह विधवा है, पति की मृत्यु के पश्चात अपने भाई वकील कृपानारायण के घर अपनी मां बुआजी के साथ रहती है । ऐंटेस पास छुन्ना विधवा की मौत नही मरना चाहती । इसलिए दूसरा विकल्प उसे स्वीकार है। हवेली और परम्परा की वर्जनाओं से उसे मुक्त होना होगा। एक सुनहरा सुखद भविष्य जीना होगा स्वयं अपने पैरों पर खड़े होकर। इस दृढ़ संकल्प और लग्न के कारण उसे प्राप्त होते हैं, उच्च शिक्षा, स्कूल में अध्यापन कार्य के लिए परिणाम स्वरूप अर्जित आर्थिक आत्म निर्भरता और भुवन से पुनर्विवाह का साहस।[4]

दलोदानिश उपन्यास में नसीमबानो दिल्ली शहर की मशहूर कातिल डेरेदार नचनिया है, वह मुख्य पात्र महकबानो की मां है। नसीमबानो मित्रों मित्रों मरजानी की सुमित्रावंती की मां बालों का विस्तार लगती हैं। बिलकुल बालों की तरह नसीमबानो में चपलता, अल्हड़ता और मासूमियत इस सीमा तक है कि वह जिंदगी के हर रंग को हर मिजाज का हर स्वाद को भरपूर जी लेना चाहती है। इसी उपन्यास की एक और नारी पात्र बहुआजी एक वृद्ध एवं रूढ़ि परम्परावादी महिला के रूप में चित्रित है। बहुआजी एक ऐसी भारतीय नारी है जो इस बात में विश्वास रखती है कि मर्द आखिर मर्द होते हैं, वह नियति नहीं बदलते चाहे उसके घरवालों को कितना दुख पंहुचे, मर्द अपनी आदत से बाज नहीं आते इसलिए औरत को चाहिए चुपचाप उसके द्वारा दी गयी तमाम तकलीफों को सहना, चुपचाप रहना और विश्वास रखना एक दिन उसका मर्द उसके पास ही आने वाला है। दलोदानिश के पात्रों में एक और पात्र मासूमा महकबानो और कृपानारायण की नाजायज बेटी है। महकबानो ने उसे और बदरू को बचपन से कलेजे से लगाकर पाला पोसा बड़ा किया। शायद यही दिन देखने के लिए की एक दिन बदरू और मासूमा उसका सहारा बनेंगे वृद्धावस्था में उसकी सेवा करेंगे। पर इसका विपरीत हुआ बदरू और मासूमा बड़े होने पर अपनी मां को छोड़कर अपने पिता कृपानारायण के पास रहने चले जाते हैं।[5]

निष्कर्ष यह है कि कृष्णा सोबती एक अत्यंत प्रभावशाली व्यक्तित्व की प्रमुख महिला उपन्यासकार हैं। उनके उपन्यासों मे नारी जीवन का यथार्थ बोध है। उन्होने दलोदानिश उपन्यास में स्त्री मन का अत्यंत सजीव, सुंदर और यथार्थपरक चित्रण किया है। वे उपन्यास के सभी पात्रों के मन का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करने में अत्यंत सफल रही हैं, साथ ही मध्यमवर्गीय नारी में चेतना जागृत कर तथा उन्हें अपनी शक्ति स्वयं पहचानने की और अपनी समस्याओं को स्वयं ही सुलझाने का समाज में एक संदेश दिया है। इस उपन्यास से एक बात यह भी स्पष्ट होती है कि परंपरा की लीक पर चलने के कारण रखैल को हवेली में या जाति बिरादरी में आने के लिए मना किया जाता है। उसके बेटों को समाज अपनाता है, परन्तु उसको नहीं अपनाता। यहां तक की महकबानो, रखैल अपनी बेटी की शादी में भी आने को मना किया जाता है। इन सब बातों का महकबानो विरोध करती है, पर इससे समाज में कोई फर्क नहीं पड़ता, सामाजिक बंधनो के कारण उसका जीवन घुटनभरा हो जाता है। कृष्णा सोबती के उपन्यास दलोदानिश से ये बात स्पष्ट हो जाती है कि नारी का सामाजिक जीवन डांवाडोल हो गया है। परंतु ऐसी परिस्थिति का सामना करने वाली भी अनेक महिलाएं समाज में हैं। उसमें महरूख भी एक है जो सामाजिक संकटों का सामना करके अपनी जिंदगी गुजारती हैं। परंतु कुछ नारियां ऐसी भी हैं, कि सामाजिक भय के कारण पति से बिछुड़ना नही चाहती। वे पति द्वारा अन्याय– अत्याचारों को सहती है और घुटनभरी जिंदगी जीती है। नारी के लिए सामाजिक व्यवस्था अब भी अनुकूल नही है।[6]

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आठवें तथा नवें दशक के हिन्दी उपन्यासों में नारी– वंदना सोपानराव मोहिते, अन्नपूर्णा प्रकाशन साकेत नगर कानपुर। सन् 2007 पृष्ठ, 28,
2. कृष्णा सोबती के कथा साहित्य में नारी का स्वरूप, डॉ अनीता, पृष्ठ, 47,
3. दलोदानिश– कृष्णा सोबती, पृष्ठ– 04,10,60,75
4. हिन्दी साहित्य नव विमर्श– जसवंत सिंह पंडया्, पृष्ठ,88,90
5. कृष्णा सोबती के कथा साहित्य में नारी समस्याएं–डॉ शहेनाज जाफर बासमेह, पृष्ठ,201,243
6. स्वयं का सर्वेक्षण व निष्कर्ष ।

****

सम्पादक एवं पत्र लेखक: पं0 बनारसीदास चतुर्वेदी

डॉ. अर्चना देवी अहलावत *

प्रस्तावना - 24 दिसम्बर 1982 को फिरोजाबाद, उत्तर प्रदेश में जन्मे यशस्वी सम्पादक, पत्रकार, साहित्यकार पं0 बनारसीदास चतुर्वेदी का व्यक्तित्व किसी परिचय का मोहताज नहीं है। मैं अपने इस लेख के माध्यम से उस महान सम्पादक, पत्रकार को पुन: जीवित करना चाहती हूँ जो 3 मई 1985 को तिरानवें वर्ष की अवस्था में महाकाल में लीन हो गया, लेकिन हिन्दी प्रेमियों के लिए अपने लिखित दस्तावेज के रूप में ऐसा अमूल्य इतिहास छोड़कर गया जो आज भी प्रेरणास्रोत का कार्य कर रहा है।

पं0 बनारसीदास चतुर्वेदी के पिता पं0 गणेशी लाल चौबे, आगरा के प्राइमरी स्कूल में अध्यापक थे। अत: चतुर्वेदी जी ने भी सन् 1914 में इण्टरमीडिएट की परीक्षा पास कर फर्रूखाबाद के एक हाईस्कूल में अध्यापन कार्य शुरू कर दिया और थोड़े ही समय बाद डॉ0 सम्पूर्णानन्द के साथ राजकुमार कालेज, इन्दौर में प्राध्यापक हो गये। गॉधी जी के कहने पर अन्य लोगों के साथ इन्होंने भी नौकरी छोड़ दी। दो वर्ष शान्ति निकेतन में दीनबन्धु एन्ड्रयूज के साथ रहने के उपरान्त चतुर्वेदी जी गॉधी जी के पास साबरमती आश्रम में रहने लगे।

पं0 बनारसी दास चतुर्वेदी के अन्दर एक और व्यक्तित्व भी छिपा था, इन्हीं छिपे संस्कारों ने जोर पकड़ा और सन् 1928 में कलकत्ते से प्रकाशित हिन्दी मासिक 'विशाल भारत' के सम्पादक बन गये। अपने सम्पादकीय व्यक्तित्व को एक साक्षात्कार में व्यक्त करते हैं 'विशाल भारत में तो मैं दस वर्ष रहा था और 'मधुकर' का कार्य मैंने पॉच-छह वर्ष तक किया था, लेकिन 'अभ्युदय' में तो केवल इक्कीस दिन ही काम कर सका। हॉ 'विन्ध्यवाणी' में साल-दो साल जरूर बीते थे, इतने वर्षो के अनुभव को संक्षेप में कहना बहुत कठिन है। 'विशाल भारत' का जन्म जनवरी 1928 में हुआ था। रामानन्द बाबू केवल भारत के ही नहीं बल्कि संसार के प्रसिद्ध पत्रकारों में से थे और उनकी यह इच्छा हुई की हिन्दी के द्वारा सद् उद्देश्यों का प्रचार किया जाये। किसी स्वार्थ के लिए उन्होंने वह पत्र नही निकाला था, बल्कि उन्होने और उनके कुटुम्ब ने उसमें एक लाख रूपये का घाटा सहा था। 'विशाल भारत' के दस वर्षों में थोड़ी बहुत हिन्दी की सेवा बन पड़ी थी। मूर्धन्य पत्रकार द्विवेदी जी का कार्य सबसे महत्वपूर्ण था और उनके शिष्य गणेश शंकर जी तो शायद उनके भी आगे बढ़ गये थे। 'विशाल भारत' ने जो सेवा की, वह कई क्षेत्रों में भी जैसे-रेखाचित्र हैं, संस्मरण हैं, प्रवासी भारतीयों के सेवाकार्य हैं और भी कार्य हैं जिनमें 'विशाल भारत' ने अग्रता की कई विशेषांक भी उसके अच्छे निकले थे। मेरे जीवन में जो कार्य हुए, उनमें 'विशाल भारत' की सेवा एक मुख्य भाग रखती है। उसके द्वारा मैने बहुत से कार्य किये।

'मधुकर' एक जनपदीय पत्र था। बुन्देलखण्ड के लिए खासतौर से उसका प्रत्येक अंक समर्पित था। उसके भी कई विशेषांक निकले थे। एक 'पत्रकार अंक' भी था और प्रांत-निर्माण-अंक भी। उसका सारा श्रेय हमारे शिष्य महाराज वीर सिंह जूदेव को देना चाहिए, क्योंकि उन्होंने उसका सारा घाटा सहा था। 'मधुकर' में जो कुछ कार्य हुआ, उसमें यशपाल जैन और जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी का बड़ा हाथ रहा। मैं वन के निकट रहता था और चाहे जब घूमने निकल जाया करता था। सारा काम यशपाल जैन और जगदीश चतुर्वेदी को करना पड़ता था। 'मधुकर' पत्र की पुरानी फाइलें अब दुष्प्राप्य हो गयी हैं, लेकिन उसने अपने समय में जो कार्य किया, वह स्मरणीय है।

'विन्ध्यवाणी' वहॉ के स्थानीय कार्यकर्त्ताओं की पत्रिका थी और उसने भी थोड़ी बहुत सेवा अवश्य ही की थी। 'अभ्युदय' में मैं जैसा आपसे अभी कहा, इक्कीस रोज रहा था। महामना मालवीय जी का तार पहुँचा था-तुरन्त चले आओ' मैं इलाहाबाद गया तो मालूम हुआ कि भाई कृष्णकांत जी मालवीय बीमार हैं और 'अभ्युदय' का संपादन करना है, लेकिन दैनिक पत्र निकालना मेरे बूते का काम नहीं था और मैं केवल इक्कीस दिन रहकर वहॉ से चला आया। [1]

बहुमुखी प्रतिभा के धनी पं0 बनारसी दास चतुर्वेदी का व्यक्तित्व उनके पत्र लेखन के बिना अधूरा-सा लगता है। पं0 बनारसी दास चतुर्वेदी ने अपने एक लेख मेरे अन्तिम पछतावेय में लिखते हैं-'पत्र व्यवहार द्वारा नवीन मित्र-संग्रह करने का मेरा व्यसन पचास-पचपन वर्ष पुराना है और मेरे समय का एक अच्छा भाग चिट्ठियों के लिखने में बीतता रहा है। मुझसे मेरे कई आदमियों ने बार-बार कहा है कि चिट्ठियॉ अपना जबाव खुद ही दे देती हैं। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त बहुत छोटे-छोटे पत्र लिखते थे और उन्होंने मुझे कई बार लम्बे खत लिखने से मना किया था। बन्धुवर दिनकर जी ने भी एक लेख में यही शिकायत की थी कि मैं साहित्य-सृष्टि को छोड़कर सारा वक्त पत्र व्यवहार में लगाता रहता हूँ। पर दुस्साध्य रोग आसानी से दूर नहीं होते'। [2]

पं0 बनारसी दास चतुर्वेदी ने अब तक लक्षाधिक पत्र तो लिखे ही होंगे। इनमें शहीदों के श्राद्ध, दिवंगत साहित्यकारों की स्मृति-रक्षा, उपेक्षित कलाकारों के संस्मरण जनपदीय कार्यकर्ताओं को मार्गदर्शन नये लेखकों को प्रोत्साहन से लेकर साधारण से साधारण विषयों तक की चर्चा है। विगत दस वर्ष के पत्र व्यवहार में उन्होंने मुझे लगभग 200 पत्र लिखे हैं, जिनमें लगभग 100 पत्रों में पं0 पदम सिंह शर्मा, सम्पादकाचार्य पं0 रूद्रदत्त शर्मा, श्री तारादत्त गैरोला, पं0 सत्यनारायण कविरत्न आदि की स्मृति-रक्षा का आग्रह है। इनमें कुद पत्र तो तीन-चार फुलस्केप पृष्ठ तक के हैं। पत्र व्यवहार के इस व्यसन के कारण उन्होंने अपनी मानस संतान (लिटरेरी क्रियेशन) की भी उपेक्षा की है। [3] अपने 31.01.1977 के पत्र में उन्होंने लिखा था, 'पत्र व्यवहार रूपी व्यसन ने मेरा जितना वक्त बर्बाद किया है उतना किसी भी दुर्गुण ने नहीं। मैं बार-बार प्रतिज्ञा करता हूँ कि अब इस व्यसन को तिलांजलि दे दूँगा, पर दे नहीं पाता। तौबा करते-करते भी गुनाह कर बैठता हूँ।'[4]

उनका यह व्यसन भी बुरा नहीं था, क्योंकि विनिमय में देश-विदेश के अनेक महापुरूषों, राजनेताओं, साहित्यकों, विचारकों एवं कार्यकर्ताओं के

* प्रवक्ता (हिन्दी) (स्ववित्तपोषित योजना में नियुक्त) दयानंद आर्य कन्या पी0 जी0 कॉलेज, मुरादाबाद (उ. प्र.) भारत

पत्र उन्हें प्राप्त हुए। इन पत्रों को उन्होंने अपने संग्रह में सहेज कर रखा है। कुछ महत्वपूर्ण पत्र उन्होंने राष्ट्रीय संग्रहालय नई दिल्ली में सुरक्षित करा दिये हैं। इनमें विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं–महात्मा गॉधी के 100 से अधिक पत्र, रोम्यॉ रोलॉ के 4 पत्र, श्रीनिवास शास्त्री के 40 पत्र, आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के 70–75 पत्र, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के 150 पत्र, प्रेमचन्द जी के 20–25 पत्र, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' के 70–75 पत्र श्री गणेशशंकर विद्यार्थी के 9 पत्र तथा पं0 पदम सिंह शर्मा के शताधिक पत्र। दीनबंधु एन्ड्रयू तथा महात्मा मुंशीराम(स्वामी श्रद्धानन्द) के बीच जो विस्तृत पत्र–व्यवहार हुआ था उसके 186 पत्र भी चतुर्वेदी जी ने यहीं सुरक्षित करा दिए हैं।[5] अनेक साहित्यकारों, राजनेताओं आदि के सहस्रों पत्र चतुर्वेदी जी के निजी संग्रह में सुरक्षित थे। यह पत्र आज हिन्दी इतिहास की अमूल्य निधि बन चुके हैं।

पं0 बनारसी दास चतुर्वेदी ने किशोरावस्था में ही लिखना शुरू कर दिया था और अपनी तिरानवें वर्ष की अवस्था तक अविराम लिखते रहे। उनका पहला लेख 1912 ई0 में 'नवजीवन' के मार्च–जून अंक में छपा था। सम्पादन, पत्रकारिता, पत्रलेखन के साथ कुछ और महत्वपूर्ण कार्य पं0 बनारसीदास चतुर्वेदी के व्यक्तित्व की पहचान हैं–22 वर्ष के लगभग निरन्तर प्रवासी भारतीयों की सेवा की, 40 वर्ष तक लगातार शहीदों के लिए काम करते रहे और 20–22 पुस्तकें भी शहीदों के बारे में लिखीं। पं0 बनारसी दास चतुर्वेदी के महान व्यक्तित्व को आज हिन्दी प्रेमी, पत्रकारिता और सम्पादन से जुड़े लोग प्रेरणा रूप में ग्रहण कर सकते हैं, तथा हिन्दी की दशा को सुधारकर नई दिशा दी जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उत्तर प्रदेश (मासिक पत्रिका) अंक दिसम्बर 1985–सं0 डॉ0 कौशल कुमार राय–लेख गौरी शंकर गुप्त, एक अंतरंग भेंटवार्ता: पं0 बनारसीदास चतुर्वेदी, पृष्ठ 30
2. उत्तर प्रदेश, अंक दिसम्बर 1980–सं0 डा0 कौशल कुमार राय–लेख डॉ0 रामस्वरूप आर्य, पृष्ठ 42
3. उत्तर प्रदेश, अंक दिसम्बर 1980–सं0 डा0 कौशल कुमार राय–लेख डॉ0 रामस्वरूप आर्य, पृष्ठ 42
4. उत्तर प्रदेश, अंक दिसम्बर 1980–सं0 डा0 कौशल कुमार राय–लेख डॉ0 रामस्वरूप आर्य, पृष्ठ 42
5. उत्तर प्रदेश, अंक दिसम्बर 1980–सं0 डा0 कौशल कुमार राय–लेख डॉ0 रामस्वरूप आर्य, पृष्ठ 42 और पृष्ठ 45

****

ग्राम्य जीवन के समर्थ रचनाकार मुंशीप्रेमचंद

डॉ. सरोज जैन *

प्रस्तावना –डॉ. नामवर सिंह के अनुसार 'बीसवीं सदी के विश्व साहित्य पर विचार करते हुए तीन लेखकों के नाम एक साथ लिए जाएँगें रूस के मैक्सिम गोर्की, चीन के लुशुन और भारत के प्रेमचंद। संयोग से इन तीनों लेखको का निधन 1936 में हुआ। तीनों मुख्यत: कथाकार थे और तीनों में यह समानता है कि उन्होंने अपने देश की जनता की मुक्ति के लिए अपनी साहित्यिक प्रतिभा का प्रयोग किया।'[1]

मुंशी प्रेमचंद का जन्म 31 जुलाई 1880 को बनारस से चार किलो मीटर दूर लमही नामक गांव में हुआ था। पिता अजायवराय डाकखाने में 20 रूपया मासिक वेतन पाने वाले मुंशी थे। प्रेमचंद का परिवार सिर्फ गांव से जुड़ा ग्रामीण परिवार ही नहीं था वह एक तरह से किसान परिवार भी था। शताब्दियों से गरीबी की छाया में पलने वाले देहाती बच्चों की तरह प्रेमचंद ने भी अपने बचपन को नीरस नहीं होने दिया। बचपन बीत जाने पर भी प्रेमचंद का लमही से गहरा रिश्ता कायम रहा। लमही से गहरा रिश्ता कायम रहा। लमही उनके लिए लघु ग्रामीण भारत था। डॉ. शिवदान सिंह चौहान के अनुसार – प्रेमचंद ने प्राचीन काव्यशास्त्र की सीमाओं का अधिक्रमण करके कथा साहित्य में यथार्थवादी परंपरा का सूत्रपात किया। उन्होने विशेषकर भारतीय समाज के उन दलित, शोषित वर्ग के किसान मजदूर और अछूत लोगों के दु:ख दर्द को साहित्य में वाणी दी, जिन्हें परंपरा के अनुसार साहित्य में उपेक्षित किया जाता था।[2]

प्रेमचंद बीसवीं सदी के लेखक थे और बीसवीं शताब्दी के जिसने दशकों में उन्होंने लेखन कार्य किया उन दशको का प्रतिबिम्ब उनकी रचनाओं में मौजूद है। 1905 में बंग भंग और स्वदेशी रचनाकारों से लेकर 1915 में होमरूल लीग की स्थापना, 1917 में चंपारन में गोरो के खिलाफ गांधीजी के सत्याग्रह आंदोलन, 1920–21 के सविनय अवज्ञा आंदोलन 1930 का नमक सत्याग्रह और 1932 का असहयोग आंदोलन– इन सबकी तस्वीरें उनके उपन्यासों और कहानियों में मिलती हैं।

राष्ट्रीय आंदोलन की मुख्यधारा से अपने साहित्य को जोडने के साथ ही साथ प्रेमचंद ने सामाजिक समस्याओं से जूझने में भी कोई संकोच नहीं किया। विधवा विवाह, बेमेल विवाह, दहेज, जातिवाद, ऊँच–नीच आदि सामाजिक समस्याओं का बडा सजीव चित्रण प्रेमचंद ने अपने रचनाओं में किया। जमींदारी प्रथा और उसमें पैदा होने वाली विषमताओं और अमानवीय अत्याचारों की प्रेमचंद ने सजीव तस्वीरें खीचीं हैं। उनकी रचनाओं में धनी पात्र भी है तो मध्यवर्ग के पात्र भी और सबसे कमजोर वर्ग के दीन–हीन पात्र भी। लेकिन शहरी पात्रों की तुलना में उनके ग्रामीण पात्र अधिक शक्तिशाली ढंग से चित्रित हुए हैं। किसान तो उनकी रचनाओं के केन्द्र बिन्दु है। भारत की आजादी का यह 70–80 प्रतिशत भाग प्रेमचंद के साहित्य में सबसे प्रमुख है। किसान की बेबसी, शोषण और उस पर होने वाले अत्याचारों के झकझोरने वाले चित्रण प्रेमचंद ने किए हैं। 'गोदान' उपन्यास का प्रधान नायक होरी हो या पूस की रात कहानी का प्रमुख पात्र हल्कू ने उसे जमींदारो के अत्याचारों को सहना ही होगा। होरी के चित्रण में जहाँ प्रेमचंद ने धार्मिक अंधविश्वास को उजागर किया है वही दूसरी और गोबर और मुन्नी जैसे पात्रो के माध्यम से कृषक वर्ग पर होने वाले अत्याचारों के विरूद्ध विद्रोह की आवाज उठायी है। डॉ. देवव्रत के अनुसार – भारत जैसे कृषि प्रधान देश में वह किसान जो एक साथ वेदों का उदगाता तथा कृषि जैसे काम को रूपायित करना रहा। पराधीनता और सामंती नागपाश में जकडा छटपटा रहा था प्रेमचंद युग में होरी और धनिया की दु:खांत जीवन गाथा सिर्फ उपन्यास नहीं वरन् एक सजग करूणा संपन्न लेखक की कलम से नि:सृत समकालीन भारतीय रचनाकर्म का प्रामाणिक दस्तावेज है।[3]

प्रेमचंद अपने पात्रों का चित्रण उनके परिवेष के अनुसार ही करते है। होरी, गोबर, झुनिया, सिलिया और मातादीन जैसे ग्राम्य पात्रों को उपन्यासकार ने विषम परिस्थितियों के मध्य तीव्रता के साथ उभारा है। होरी गोदान उपन्यास का नायक है जो कृषक वर्ग के परम्परागत रूप को लिए है। धनिया ग्राम्य जीवन की नायिका है। वह एक परम्परागत कृषक नारी के समस्त गुण दोषो से समन्वित है। उसकी विवषता भारतीय नारी के रूप में ही है। उसे भोगती हुए हुई वह अंत में होरी की मृत्यु के अवसर पर उसकी आत्मा की शांति के लिए बीस आने का गोदान करवाकर स्वयं ही मूर्छित होकर गिर जाती है। उसका पतन उसकी वेसुधि कृषक नारी की विवषता का ही प्रतीक है जो व्यवस्था की ही देन है। बालकवि बैरागी के अनुसार –'कृषक सभ्यता – संस्कृति और कृषको की समस्याओं पर उन्होने धारदार कलम चलायी। उन्होने अपने पात्रो के नाम ठेठ देहात से लिए। गोबर, धनिया, गंगू, जामिद, भुनगी, होरी आदि अनेक ऐसे नाम है जो आज भी तब के देहात को सकार करने मे पूरे सक्षम है।'[4]

ब्रिटिश कालीन भारत के आर्थिक और राजनीतिक पक्षों के साथ ही प्रेमचंद ने उस समय तक उभरी सामाजिक प्रवृत्तियों को भी अत्यंत सुन्दर ढंग से व्यक्त किया है। गांवो में शिक्षा, अंध विश्वास और अंध परम्पराएँ तो थीं साथ ही जातिवाद का उस समय कितना कठोर बंधन था यह भी गोदान से विदित होता है 'प्रेमचंद ने 1910 ई. में इंटर की परीक्षा में सफलता प्राप्त की। इसी समय उन्होंने महाजनो के कटु व्यवहार का भी अनुभव किया। निर्धनता के कारण उन्हें महाजनो से उधार लेना पडता था। उस समय गांव–गांव में महाजनो की तूती बोलती थी। इसी रूपये के बल पर बे गरीबों का खून चूसते और अत्याचार करते थे। प्रेमचंद ने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर ही महाजनों का चित्रण अपने साहित्य में किया।'[5]

प्रेमचंद की सारी जिन्दगी एक तलाश थी। उनका साम्यवाद एक आदर्शोन्मुखी साम्यवाद था। उनका कम्यूनिज्म समाज की वह व्यवस्था था

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

जहाँ एक व्यक्ति दूसरे का षोषण नहीं करेगा। गरीबी नहीं होगी और सबको सामाजिक व आर्थिक न्याय मिलेगा। इसी अनंत तलाश के दौरान उन्होंने उपन्यास लिखे, कहानियाँ लिखी। माधुरी, हंस और जागरण जैसी पत्रिकाओं का सम्पादन किया। इसी तलाश के रास्ते में बाधा वाले प्रलोभनो को उन्होंने ठुकराया। कामधेनु लगने वाली फिल्मी दुनिया को नमस्कार किया। संयुक्त प्रांत के तत्कालीन गवर्नर हेली द्वारा दिए जाने वाले रायसाहबी खिताब को नामंजूर कर किया। गरीबी ओढी, बीमारी झेली पर कभी अपने सिद्धांतों से समझौता नहीं किया। इस आडम्बर विहीन, शर्मीले और डरपोक से लगने वाले इंसान के अंदर कहीं इस्पात भी था।

प्रेमचंद के उपन्यास साहित्य की समग्र महत्ता इसी बात में है कि उन्होंने अपने पात्रों के माध्यम से मानव स्वभाव के विविध क्षितिजों का महज उद्घाटन किया है। धर्म, राजनीति, समाज, परिवार, आर्थिक परिवेश एवं उसकी विषमताएँ कोई भी उनकी लेखनी से नहीं बच सका। आधुनिक युग में कफन, ईदगाह, पंच परमेश्वर, बडे घ़र की बेटी, नशा, आत्माराम नमक का दरोगा, बूढी काकी, पूस की रात, मंत्र, शतरंज के खिलाड़ी जैसी 300 कहानियाँ व गोदान, कर्मभूमि, सेवा सदन आदि 14 उपन्यासों के लेखक प्रेमचंद ने भारतीय साहित्य को जितना प्रभावित किया उतना अन्य किसी ने नहीं । उनका जीवन तो उस देहाती किसान का था जो अपना हल कंधे पर रखकर बैल हांकता हुआ, गांव की पगडंडियों से खेत की तरफ आता है। और जमीन जोतता तथा निदाई, गुडाई करता है। उसकी धनिया मक्के की रोटी और गुड़ लेकर आएगी होरी नामका किसान इसे खाएगा।

प्रेमचंद ने अपनी महानता प्रेस, अकादमी और संस्थानों से अर्जित नहीं की। उन्होंने अपनी महानता इस देश की मिट्टी और वहाँ संघर्ष से जुटे लोगों को देख समझकर अर्जित की है । वही धरती वे ही लोग और उत्पीडन, शोषण, अन्याय की अनगिनत घटनाएँ हमारी आँखो के सामने है। उसे हम खुद देख सकते हैं और इन्हें देखकर अपने लिए प्रेमचंद के जीवन और लेखन के अर्थ को जान सकते हैं। इसलिए प्रेमचंद आज प्रासंसिक हुए ही नहीं है बल्कि पहले से अधिक प्रासंसिक हो गए हैं। प्रेमचंद, कबीर, निराला और मुक्तिबोध की उसपरम्परा के महान लेखक हैं जिनका बार-बार मूल्यांकन किया जाएगा। वे जायसी, प्रसाद, महादेवी या अज्ञेय की तरह अटल पद पर अविचलित नहीं रखे जाएंगे। हर पीढ़ी उन्ही रचनाकारों को विचारणीय मुद्दा बनाती है जिन्होंने अपने परिवेश और समय की चुनौतियाँ का सामना किया हो।

वास्तव में प्रेमचंद ने हिन्दी कथा साहित्य को तिलस्मी दुनिया से बाहर निकालकर सामाजिक रंगमंच पर ला खड़ा किया । जो काम तोलास्तोय ने रूसी साहित्य में किया था वह प्रेमचंद ने उर्दू हिन्दी में कर दिया। किसान को जैसी वाणी प्रेमचंद ने दी है वैसी किसी ने नहीं दी।

डॉ. शिवप्रसाद के अनुसार – 'प्रेमचंद कृषक मजदूर वर्ग की आर्थिक मुक्ति को प्रधानता देते है। लेकिन वे नागरिक एवं राजनीतिक स्वतंत्रता के लक्ष्य को नहीं खोना चाहते। प्रेमचंद ने लिखा भारत के उद्धार का कोई उपाय है तो वह स्वराज्य है। प्रेमचंद के स्वराज्य का अर्थ था किसान मजदूर जनता का राज।'[6] प्रेमचंद सशक्त यथार्थवादी और आदर्शोन्मुखी हैं। उनका विशाल साहित्य उसमें आज भी वही ताजगी लगती है जो आज से 70-80 साल पहले लगती थी। उनके ग्रामीण पात्र आज भी सजीव लगते हैं। क्योंकि मूलत: आज भी गाँवों की बहुसंख्यक आबादी की समस्याएँ और हालात् वैसे ही हैं जो आज से 70-80 साल पहले थे इसीलिए प्रेमचंद आज भी प्रासंगिक हैं। आचार्यनंददुलारे वाजपेयी के शब्दों में – वास्तविकता बात यह है कि समय ने प्रेमचंद जी का साथ उतना नहीं दिया जितना प्रेमचंद ने समय का साथ दिया है।[7]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. नामवर सिंह, साप्ताहिक हिन्दुस्तान 27.07.80 पृ. 20
2. शिवदान सिंह चौहान, वही. पृ 21
3. डॉ. देवव्रत जोशी पत्रिका दैनिक समाचार पत्र 31.7.9 पृ. 10
4. बालकबि बैरागी, पत्रिका दैनिक समाचार पत्र 31.7.9 पृ. 10
5. लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय, हिंदी साहित्य कोष भाग-2 पृ. 334
6. डॉ. शिवप्रसाद सिंह धर्मयुग, सप्ताहिक पत्रिका 3.8.80 पृ. 11
7. आचार्य नंददुलारे वाजपेयी, हिन्दी साहित्य बीसवी-शताब्दी पृ. 85

****

हिन्दी भाषा का उद्‌भव और विकास

डॉ. सविता वर्मा *

प्रस्तावना – किसी भी भाषा का उद्‌भव-विकास यूंही यकायक नहीं हो जाता बल्कि उसके पीछे एक लम्बा इतिहास रहता है। हिन्दी भाषा का उद्‌भव-विकास भी इससे अछूता नहीं रहा है। यद्यपि आज हिन्दी राष्ट्र भाषा के पद पर आसीन हो गई है और समस्त देश में उसके प्रचार एवं प्रसार का प्रयत्न हो रहा है तथापि उसे वह सम्मान नहीं मिल पाया है जो उसे मिलना चाहिऍं।

भाषा हमारे भावों की अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम है। भाषा का सामाजिक दायित्व भी है और इसी से प्रेरित होकर साहित्य की सृष्टि होती है। हिन्दी भाषा विश्व भाषा परिवार के भारोपीय परिवार की है। इस परिवार के एक ओर मुख्यत: 'भारत' और दूसरी ओर 'यूरोप' है । इसी आधार पर इसे संक्षेप में 'भारोपीय' कहा जाता है। विश्व की तीन हजार भाषाओं के तेरह परिवारों में से सबसे बड़े परिवार 'भारोपीय परिवार' के सतम् वर्ग को भारतीय आर्य भाषाओं में आधुनिक कालीन एक महत्वपूर्ण भाषा 'हिन्दी' है।

भारतीय आर्यभाषा – ऐतिहासिक विकासक्रम के आधार पर भारतीय आर्यभाषा को तीन कालखण्डों में विभक्त किया जाता है-

1. प्राचीन भारतीय आर्यभाषा (वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत):5000ई.पूर्व से 2000 ई.पूर्व तक।
2. मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा(अशोक के अभिलेखों की भाषा-पालि,प्राकृत एवं अपभ्रंश): 500ई.पूर्व से 1000ई. तक।
   पलि- (500 ई.पूर्व से एक ई.तक)
   प्राकृत-(एक ई.से 500 ई तक)
   अपभ्रंश तथा अवहट्ट-(500 ई.से 1000 ई. तक)
3. आधनिक भारतीय आर्यभाषा(हिन्दी और हिन्दी से इतरभाषाऍं-बंगला,गुजराती,मराठी,पंजाबी,सिंधी,असमी आदि):

प्राचीन भारतीय आर्य भाषा-भारत के उत्तर पश्चिमी सीमांत प्रदेश से आर्यो के दल आने लगे थे। यहां पहले से बसी हुई अनार्य जातियोंको परास्त कर आर्यो ने सप्त सिंधु(आधुनिक पंजाब)देश में अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया। यहाँ से वे धीरे-धीरे पूर्व की ओर बढ़ते गये और स्थानीय अनार्य जातियों को अभिभूत कर उन्होंने अपना राज्य स्थापित कर लियें इस प्रकार समस्त उत्तरापथ में आर्यो का आधिपत्य स्थापित हो गया अब आर्य संस्कृति ने दक्षिणापथ में प्रवेश किया और जब युनानी राजदूत मैगस्थनीज भारत आया तब तक आर्य संस्कृति सुदूर दक्षिण में फैल चुकी थी।आर्यो की विजय राजनीतिक विजय मात्र न थी। वह अपने साथ सुविकसित भाषा एवं यज्ञ परायण संस्कृति भी लाये थे।राजनीतिक विजय के साथ-साथ उनकी भाषा एवं संस्कृति भी भारत में प्रसार पाने लगी। परन्तु स्थानीय अनार्य जातियों के प्रभाव से वह सर्वथा मुक्त न रह सकी।

वैदिक संस्कृत-(1500 ई.पू.से 800 ई.पू. तक)-संस्कृत का यह रूप वैदिक संहिताओं, ब्राह्मणों,आरण्यों तथा प्राचीन उपनिषदों आदि में मिलता है।

लौकिक संस्कृत-लौकिक संस्कृत का मूल आधार उत्तरी बोली थी। लौकिक संस्कृत साहित्यिक भाषा है।

वैदिक संस्कृत तथा लौकिक संस्कृत की कुछ महत्वपूर्ण भिन्नताऍं यह है कि वैदिक संस्कृत में स्वराघात का बहुत महत्वपूर्ण स्थान था। इसके परिवर्तन के कारण शब्द रूपों में परिवर्तन हुआ और शब्दों के अर्थ में भी भेद हो गया परन्तु लौकिक संस्कृत में स्वराघात सर्वथा लुप्त हो गया।वैदिक भाषा में जहाँ शब्दों के एकाधिक रूप मिलते हैं वहाँ लौकिक संस्कृत में प्राय: एक ही रूप लिया गया है । वैदिक तथा लौकिक संस्कृत में सबसे अधिक भिन्नता धातु रूपों में दिखाई देती है।

मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा-तथागत भगवान बुद्ध के जन्म तक भारतीय आर्य भाषा विकास के मध्यकाल में प्रवेश कर चुकी थी।

पालि -वास्तव में 'पालि' शब्द किसी भाषा को द्यातित नहीं करता इसका अर्थ होता है मूल पाल अथवा बुद्ध वचन और अट्ठकथा से मूलपाठ की भिन्नता प्रकट करने के लिए इस शब्द का व्यवहार होता है। पं.विधुशेखर भट्टाचार्य ने पालि शब्द का निर्वचन 'पंक्ति' शब्द से किया है । मैक्स वालेसर महाशय ने पालि शब्द की व्युत्पत्ति 'पाटलिपुत्र' से मानी है । उनका कहना है कि ग्रीक में पाटलिपुत्र को पालिबोथ्र लिखा गया है। भिक्षु जगदीश काश्यप ने 'पालि महाव्याकरण' में 'पालि' शब्द की व्युत्पत्ति 'परियाय' (पर्याय) शब्द से की है ।

प्राकृत-जिस प्रकार प्राचीन भारतीय आर्य भाषा को साधारणतया संस्कृत कह दिया जाता है उसी प्रकार मध्यभारतीय आर्य भाषा के लिए प्राकृत शब्द का व्यवहार किया जाता है । प्राकृत शब्द की व्युत्पत्ति 'प्रकृति' (जनसाधारण) से है। अत: प्राकृत का अर्थ हुआ जनसाधारण की भाषा,शिष्ट समाज की भाषा-संस्कृत से भेद प्रकट करने के लिए जनसामान्य की भाषा को 'प्राकृत' संज्ञा दी गई है ।

प्राकृत वैयाकरणों में सबसे पहला नाम वररूचि का आता है । वररूचि ने प्राकृत के चार भेद किये -

1. महाराष्ट्री 2. पैशाची 3. मागधी 4. शौरसेनी

प्राकृत वैयाकरणों द्वारा दी गई साहित्यिक प्राकृतों का प्रमुख परिचय-

शौरसेनी- शौरसेनी-प्राकृत मूलत: शूरसेन प्रदेश(मथुरा) की भाषा थी। संस्कृत नाटकों में स्त्री पात्र और विदूषक इसका प्रयोग करते थे। मध्यप्रदेश की भाषा होने के कारण यह संस्कृत के बहुत समीप रही और इस पर इसका निरंतर प्रभाव पड़ता रहा।

मागधी- मागधी मूलत: मगध की भाषा है। संस्कृत नाटकों में निम्न श्रेणी के पात्र मागधी प्राकृत बोलते हैं। प्राच्य देश की लोकभाषा होने के कारण यह वर्ण विकार आदि में अन्य लोक भाषाओं से बहुत आगे रही है ।

अर्धमागधी-यह काशी-कोशल प्रदेश की भाषा थी। जैन आचार्यों ने इस भाषा में शास्त्रों की रचना की । वह इसको आर्षी कहते थे और आदि भाषा मानते थे संस्कृत नाटकों में भी अर्धमागधी का प्रयोग होता था।

* सहायक प्राध्यापक, एम.ए.टी.एस. विश्वविद्यालय, पंढेरी , रायपुर (छ.ग.) भारत

मध्य एशिया से प्राप्त अश्वघोष के संस्कृत नाटक मे अर्धमागधी का व्यवहार हुआ है। अर्धमागधी में शौरसेनी एवं मागधी दोंनों के लक्षण मिलते है। इसमें 'र' और 'ल' दोनों ही ध्वनियाँ विद्यमान है।

महाराष्ट्री – साहित्यिक प्राकृतों में महाराष्ट्रीय प्राकृत सर्वाधिक विकसित है । प्राकृत वैयाकरणों ने इसको आदर्श प्राकृत माना है और सबसे पहले उन्होंने इसी का विवेचन किया और तब अन्य प्राकृतों की विशेषताएँ बताई है। संस्कृत नाटकों में प्राकृत पद्य रचना प्राय: महाराष्ट्री में ही हुई है। महाराष्ट्री प्राकृत में महाकाव्य एवं खण्डकाव्य की रचनाएँ उपलब्ध होती है । 'सेतुबंध तथा काव्य महाराष्ट्री में है तथा हाल की 'गाथा सत्तसइ' की भाषा भी महाराष्ट्री प्राकृत है । महाराष्ट्री प्राकृत की सर्वप्रमुख विशेषता यह है कि इसमें स्वरमध्यग,स्पर्श व्यंजनों का लोप ओ गया है। यह मध्य भारतीय आर्य भाषा के द्वितीय पर्व के विकास की चरमावस्था है।

अपभ्रंश – मध्यभारतीय आर्य भाषा के विकास के अंतिम सोपान को अपभ्रंश नाम से अभिहित किया जाता है । 'अपभ्रंश' म.भा.आर्यभाषा और आधुनिक भारतीय आर्य भाषा के बीच की कड़ी है। प्रत्येक आधुनिक भारतीय आर्यभाषाको अपभ्रंश की स्थिति पार करनी पड़ी है। अपभ्रंश शब्द विभिन्न अर्थो में महाभाष्यकार पतंजलि (ईसा पूर्व दूसरी शती)के समय से प्रयुक्त मिलता है । आचार्य पतंजलि ने अपभ्रंश का प्रयोग 'अपशब्द' के समानार्थक के रूप में किया है। चण्ड ने अपने ग्रंथ प्राकृत लक्षणम् में अपभ्रंश शब्द का प्रयोग भाषा के अर्थ में किया है ।आचार्य दण्डी ने काव्यादर्श में अपभ्रंश कों आभीर आदि की भाषा कहा है। विभिन्न आचार्यो ने अपभ्रंश शब्द का प्रयोग भिन्न–भिन्न कालों में अपशब्द,विभाषा, लोकभाषा शिष्ट एवं साहित्यिक भाषा के अर्थो में किया है।

आधुनिक भारतीय आर्य भाषा–आधुनिक भारतीय आर्य भाषा का उद्भव विभिन्न क्षेत्रीय अपभ्रंशों से हुआ जिसे इस प्रकार दिखाया जा सकता है –

अपभ्रंश	–	आधुनिक भाषाएँ तथा उवभाषाएँ
शौरसेनी	–	पश्चिमी हिन्दी,राजस्थानी,गुजराती
खस	–	पहाड़ी
महाराष्ट्री	–	मराठी
मागधी	–	बिहारी,बंगाली,उड़िया,असमिया
अर्धमागधी	–	पूर्वी हिन्दी

इस प्रकार हिन्दी भाषा का उद्भव अपभ्रंश के शौरसेनी मागधी तथा अर्धमागधी रूपों से हुआ हैं।

आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ लगभग 1000 ई.के आसपास अपभ्रंश के विभिन्न रूपों से उपर्यूक्त आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का विकास हुआ।

वस्तुत: कोई भी भाषा जन्म लेते ही साहित्य की भाषा नहीं बनती । पैदा होने के सौ डेढ़ सौ वर्ष बाद स्वीकृति मिलने तथा उसका स्वरूप कुछ निश्चित होने पर ही लोग उसे साहित्य रचना के लिए अपनाते हैं । हिन्दी को भी अपना स्थान बनाने में काफी समय लगा ।

हिन्दी का मूल अर्थ 'हिन्द'(सं.सिन्धु, फा.हिन्दु,हिन्द)का' है। इसीलिए हिन्द की केन्द्रीय भाषा के लिए इस नाम का प्रयोग हो रहा है ।

हिन्दी के अन्तर्गत पाँच उपभाषाएँ या बोली वर्ग है–

1. पश्चिमी हिन्दी– खड़ी बोली, ब्रज, हरियाणवी, बुंदेली, कन्नौजी का समूह
2. पूर्वी हिन्दी –अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी का समूह।
3. राजस्थानी – उत्तरी, दक्षिणी, पूर्वी, पश्चिमी राजस्थानी का समूह।
4. पहाड़ी – पश्चिमी तथा मघ्यवर्तीय पहाड़ी का समूह।
5. बिहारी – भोजपूरी, मगही, मैथिली का समूह।

वस्तुत: अपने–अपने काल की राष्ट्भाषा परिनिष्ठित संस्कृत, परिनिष्ठित पालि, परिनिष्ठित अपभ्रंश इसी क्षेत्र की भाषाएँ थी उसी परंपरा में आज इस क्षेत्र की हिन्दी राष्ट्र भाषा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हिन्दी भाषा का उद्भव और विकास (उदयनारायण तिवारी) ।
2. हिन्दी भाषा का इतिहास(डॉ भोलानाथ तिवारी) ।
3. हिन्दी साहित्य का उद्भव विकास(हजारी प्रसाद द्विवेदी) ।

****

कामायनी में सौन्दर्य बोध

डॉ. गायत्री वाजपेयी *

मनुष्य सौन्दर्य प्रिय प्राणी है। सौन्दर्य के प्रति आकर्षण उसकी सहज एवं आदि मनोवृति है। संसार की समस्त वस्तुओं में वह सौन्दर्य के दर्शन करता है। कवि अति संवेदनशील प्राणी है वह भी सौन्दर्याभिभूत हो आनन्द के सागर में डूबता है। उसकी दृष्टि में तो इतनी सौम्यता, उदारता एवं व्यापकता होती है कि वह प्रकृति के समस्त जड़ चेतन पदार्थो तथा स्थूल जगत के अंग-अंग में असीम सौन्दर्य का साक्षात्कार करता है। वास्तव में यह सौन्दर्य है क्या ? और कहाँ होता है ? इन प्रश्नों के उत्तर में कहा जा सकता है कि प्रकृति, मानव जीवन तथा ललित कलाओं के आनन्द प्रदायक गुण का नाम ही सौन्दर्य है और इस सौन्दर्य का स्रोत मानव मन ही है। अत: सौन्दर्य कोई बाह्यवस्तु नहीं अपितु आभ्यांतर है। वस्तुत: सौन्दर्य संबंधी अवधारणा अपने आप में वैविध्य समेटे हुए है प्रत्येक का सौन्दर्यादर्श भिन्न-भिन्न होता है। समय के साथ-साथ बढ़ती अनुभूति तथा परिमार्जनीय रूचि के अनुसार सौन्दर्यादर्श भी परिवर्तित होता है। आज सौन्दर्य का जो आदर्श है वह कल नहीं था और भविष्य में भी वह ऐसा ही रहेगा यह कहना कठिन है इसका कारण भी यह है कि सौन्दर्य का न तो कोई मानदण्ड है और न ही रूचैक्य ही है। सभी में रूचि भेद के कारण सौन्दर्य संबंधी विचारधाराओं में वैभिन्न है। कोई सौन्दर्य को ऐन्द्रिक प्रसन्नता का साधन मानता है तो कोई उसे आत्मिक प्रसन्नता का साधन भी मानता है। इस संबंध में विश्व कवि रविन्द्र नाथ टैगोर का यह कथन उल्लेखनीय है - 'कवि जब सत्य की उपलब्धि कर लेता है तभी उसे समझ पड़ता है कि सत्य का प्रकाश सहज सुन्दर है।'[1] काव्यकार और काव्यशास्त्रियों में सौन्दर्य की उपासना अपने चरम रूप में होती है। कवि ब्रह्मा की तीन विभूतियों सत्यम्, शिवम् और सुन्दरम् की साधना में निरत रहता है। सत्य ही सुन्दर है, सुन्दर ही सत्य है की धारणा में उसकी आस्था होती है। अपनी इसी आस्था के सहारे वह ब्रह्मा के आनन्दमय स्वरूप का साक्षात्कार करता है क्योंकि सौन्दर्य की आकांक्षा से ही आनंद का जन्म होता है तथा सौन्दर्य की अनुभूति ही सृष्टि के विविध दु:खों से मनुष्य को मुक्त कराती है। कवि प्रसाद ने इसी सर्व दु:ख हर्ता, सर्व व्यापी सौन्दर्य की महिमा का बखान करते हुये उसे चेतना का उज्जवल वरदान कहा है-

उज्जवल वरदान चेतना का, सौन्दर्य जिसे सब कहते हैं,
जिसमें अनन्त अभिलाषा के, सपने सब जगते रहते हैं।[2]

प्रसाद जी ज्ञान एवं सौन्दर्यबोध को विश्वव्यापी वस्तु मानते हुये यह स्वीकार करते हैं कि उसके केन्द्र देशकाल और परिस्थितियों से तथा प्रधानता संस्कृति के कारण भिन्न-भिन्न अस्तित्व रखते हैं। वे कहते हैं कि 'भौगोलिक परिस्थितियाँ और काल की दीर्घता तथा उसके द्धारा होने वाले सौन्दर्य संबंधी विकारों का सतत् अभ्यास एक विशेष रंग की रूचि उत्पन्न करता है और वही रूचि सौन्दर्य अनुभूति की तुला बन जाती है इसी से ये हमारे सजातीय विचार बनते हैं उन्हें स्निग्धता मिलती है। इसी के द्धारा हम अपने रहन-सहन अपनी अभिव्यक्ति का सामूहिक रूप से संस्कृत रूप में प्रदर्शन कर सकते हैं। यह संस्कृति विश्ववाद की विरोधिनी नहीं क्योंकि इसका उपयोग तो मानव समाज में आरम्भिक प्राणित्व धर्म में सीमित मनोभावों को सदा प्रशस्त और विकासोन्मुख बनाने के लिए होता है। संस्कृति, मंदिर, गिरिजा और मसजिद विहीन प्रान्तों में अंत: प्रतिष्ठित होकर सौन्दर्यबोध की बाह्य वस्तुओं का सृजन करती है।'[3]

प्रसाद जी की सौन्दर्य विषयक अवधारणा सर्वथा मौलिक एवं स्वतन्त्र है। उनकी सौन्दर्यानुभूति विशुद्ध भारतीय है। 'कामायनी' में उन्होंने जिस मानवीय और प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन किया है उसमें भारतीय संस्कृति की स्पष्ट छाप अंकित है। उन्हें जीवन और जगत की प्रत्येक वस्तु में सौन्दर्य के दर्शन होते हैं। वे प्रकृति, नर-नारी, शिशु, पशु पक्षी, कुंज-कुटीर, नदी, वन, उपवन, ग्राम, नगर आदि सभी में अद्भुत सौन्दर्य को निहारते हैं। प्रसाद का प्रकृति के प्रति विशेष आकर्षण रहा है। उन्होंने अपने काव्य में लताच्छादित पर्वत श्रेणियों, नक्षत्रमण्डित गगन उन्मादकारिणी, रात्रि, अंधकार को विदीर्ण कर ज्योति सदृश उदित होती ऊषा एवं अनन्त सौन्दर्य बिखेरती संध्या सुन्दरी आदि के माध्यम से प्रकृति के अनुपम चित्र उकेरे हैं। उषाकालीन वातावरण की मादकता का मनोरम चित्रण उनकी इन पंक्तियों में दृष्टव्य है-

उषा सुनहरे तीर बरसती जयलक्ष्मी-सी उदित हुई,
उधर पराजित कालरात्रि भी जल में अंतर्निहित हुई।[4]

इसी प्रकार रात्रि का चित्रण करते हुये प्रसाद जी उस पर मानवीय भावों का आरोपण कर उसे नायिका के सदृश प्रस्तुत करते हुये कहते हैं -

घूँघट उठा देख मुसक्याती किसे ठिठकती-सी आती,
विजन गगन में किसी भूल-सी किसको स्मृति पथ में लाती।[5]

प्रकृति के ही समान नारी भी ईश्वर की अनुपमेय रचना सृष्टि है अत: कवि जनों का ध्यान सदैव नारी सौन्दर्य की ओर आकृष्ट होता रहा है। प्रसाद जी ने भी नारी के अनुपम सौन्दर्य के चित्रण में रूचि दिखलाई है। कामायनी में श्रद्धा और इड़ा का रूप सौन्दर्य उनके अन्त:करण को तरंगायित कर देता है। यौवन छवि से दीप्त रूप राशि कवि की आँखों के समक्ष इन्द्रजाल सा उपस्थित कर देती है। कुसुम वैभव में लता समान चन्द्रिका से लिपटे घनश्याम की तरह तथा मेधवन बीच खिले गुलाबी रंग के बिजली के फूल सदृश नील परिधान आवृत श्रद्धा का मृदुल अधखिला अंग अंश अवलम्बित मुख के पास घिरे उसके घुंघराले बाल तथा रक्त किसलय से उसके अधरों पर खेलती मुस्कान की रेखा उसमें नवीन स्फूर्ति का संचार कर देती है। यथा -

नील परिधान बीच सुकुमार खुल रहा मृदुल अधखुला अंग,
खिला हो ज्यों बिजली का फूल मेघवन बीच गुलाबी रंग।
घिर रहे थे घुंघराले बाल हंस अवलंबित मुख के पास,
नील घन शावक से सुकुमार सुधा भरने को विधु के पास।[6]

इसी प्रकार इड़ा के मुखमण्डल पर बिखरी अलकें, शशि खण्ड सदृश उसका भाल, पद्मपलाश चशक-सी उसकी दो आँखें तथा मधुप मुखरित मुकुल सदृश उसका मुख देख कवि का मन विस्मय विमुग्ध हो कह उठता है -

बिखरी अलकें ज्यों तर्कजाल वह विश्व मुकुट-सा उज्जवलतम शशिखंड सदृश
था स्पष्ट भाल। दो पद्म पलाश चशक से दृग देते अनुराग विराग ढ़ाल।
गुंजरित मधुप से मुकुल सदृश वह आनन जिसमें भरा गान त्रिवली थी

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाराजा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

त्रिगुण तरंगीमयी आलोक वसन लिपटा अराल चरणों में थी गति भरी ताल।[7]

कवि की धारणा है कि जो सुन्दर है वह अलंकरण के बिना भी सुन्दर है उसे श्रद्धा एवं इड़ा का अलंकार रहित सौन्दर्य देवबालाओं के कृत्रिम सौन्दर्य से भी अधिक मोहक व सौन्दर्यशाली प्रतीत होता है। नारी ही क्यों कामायनीकार को तो मानव मात्र में अपूर्व सौन्दर्य दिखलाई पड़ता है। श्रद्धा और इड़ा की भाँति वे मनु के यौवनोद्दीप्त सौन्दर्य तथा मानव के चंचल शिशु के सुकुमार भोले सौन्दर्य से भी अभिभूत हुये बिना नहीं रह सके हैं। यदि नारी की कमनीयता और रमणीयता में वे सौन्दर्य का साक्षात्कार करते हैं तो पुरूषों के पौरूष और शिशु की चपलता व भोलापन में भी उन्हें सौन्दर्य के दर्शन होते हैं। उनकी दृष्टि में पुरुष का सौन्दर्य उसका पौरुष है। उसके अवयवों की सुदृढ़ मांस पेशियों में अपरिमित वीर्य ऊर्जस्वित है एवं शरीर की उभरी हुई शिराओं में शुद्ध रक्त संचरित होता है। मनु की ऐसी ही देह सृष्टि की ओर संकेत करते हुये वे कहते हैं –

अवयव की दृढ़ मांस पेशियाँ, ऊर्जस्वित था वीर्य अपार,
स्फीत शिरायें स्वस्थ रक्त का होता था जिनमें संचार।
चिन्ता कातर वदन हो रहा पौरूष जिसमें ओतप्रोत,
उधर उपेक्षामय यौवन का बहता भीतर मधुमय स्रोता।[8]

नन्हें शिशु की खुली घुंघराली अलकें धूल धूसरित बाहें, मुख पर अपरिमित तेज एवं अभिनव अंगों का केहरि किशोर की भाँति प्रस्फुटन, गम्भीर यौवन जो नूतन भावों से भरा हुआ है में कवि की सौन्दर्यानुभूति दृष्टव्य है –

लुटरी खुली अलक, रज धूसर बाहें आकर लिपट गई,
निशा तापसी सी जलने को धधक उठी बुझती धूनी,
मानव था साथ उसी के मुख पर था तेज अपरिमित।
केहरि किशोर से अभिनव अवयव प्रस्फुटित हुए थे,
यौवन गम्भीर हुआ था जिसमें कुछ भाव नये थे।[9]

कामायनीकार प्रसाद जी की सौन्दर्य पिपासा इतनी तीव्र है कि वह प्रकृति, मानव एवं जगत के कण–कण में व्याप्त सौन्दर्य की खोज करते हुए दिखलाई पड़ते हैं। उनका सौन्दर्य बोध जगत के अणु–परमाणु में भी सौन्दर्य की तलाश करता नजर आता है। उन्हें कलरव करते पक्षी, किल्लोल करते पशु, श्रद्धा की बनाई कुटिया एवं मनु निर्मित ग्राम एवं नगर आदि भी सौन्दर्य से आपूरित दिखलाई पड़ते हैं। उनकी दृष्टि में प्रत्येक वस्तु सौन्दर्य समन्वित है। उन्हें तो शुक्र और शनि भी सुन्दर प्रतीत होते हैं। मनु द्वारा बसाये गये नगर के सौन्दर्य को विस्मय भरी दृष्टि से निहारते प्रसाद जी कहते हैं–

मनु का नगर बसा है सुन्दर सहयोगी हैं सभी बने,
दृढ़ प्राचीरों में मन्दिर के द्वार दिखाई पडे घने,
वर्षा धूप शिशिर में छाया के साधन सम्पन्न हुये,
खेतों में हैं कृषक चलाते हल प्रमुदित श्रम स्वेद सने।[10]

ईश्वर की अनुपम कृति मनुष्य के हृदय में भावों का विशाल सागर हिलोरें लेता रहता है कभी वह चिन्ताग्रस्त होता है तो कभी उसके मन में वासना, लज्जा आदि भाव उदित अस्त होते रहते हैं कवि प्रसाद जी सर्वाधिक सजीव एवं आकर्षण मनोभाव लज्जा का मूर्तीकरण करते हुये उसके मनमोहक स्वरूप का चित्रण करते हुए कहते हैं कि लज्जा के उदित होते ही नारी के मन में प्रियतम के स्पर्श में हिचक पैदा होने लगती है, उसकी पलकें झुक जाती हैं वाणी अधरों में ही सिमट कर रह जाती है। रोम–रोम में पुलक पैदा हो उठती है वह मुख से कुछ नहीं कह पाती लेकिन उसकी भौहों की काली–काली रेखाएँ उसके हृदयगत भावों को प्रकट कर देती हैं। यथा –

छूने में हिचक, देखने में पलकें आँखों पर झुकती है,
कलरव परिहास भरी गूँजें अधरों तक सहसा रूकती हैं।
संकेत कर रही रोमाली चुपचाप बरजती खड़ी रही,
भाषा बन भौहों की काली रेखा–सी भ्रम में पड़ी रही।[11]

लज्जा का स्वरूप इतना मनोरम है कि वह रति की प्रतिकृति सी प्रतीत होती है। कवि ने उसे शालीनता की शिक्षा देने वाली, मतवाले सौन्दर्य के पैरों में नूपुर के सामन लिपटने वाली तथा चंचल किशोर सौन्दर्य की रक्षा करने वाली निरूपित किया है। कवि को वह कपोलों की लालिमा, आंखों का अंजन, कुंचित केशों का घुँघरालापन, मन की मरोर तथा एक ऐसी मसलन–सी लगती है जो कानों की लाली बन जाती है। यथा –

मैं रति की प्रतिकृति लज्जा हूँ मैं शालीनता सिखाती हूँ,
मतवाली सुंदरता पग में नूपुर सी लिपट मनाती हूँ।
लाली बन सरल कपोलों में आँखों में अंजन सी लगती,
कुचित अलकों–सी घुंघराली मन की मरोर बनकर जगती।[12]

प्रसाद जी की सौन्दर्य दृष्टि अनोखी है कामायनी में उन्होंने अमूर्त भावों के भावगत सौन्दर्य को मूर्त रूप देने का जो अद्भुत कार्य किया है वह उनकी गहन अनुभूति क्षमता का ज्वलंत प्रमाण है।

संसार के समस्त प्राणियों में मनुष्य सर्वश्रेष्ठ है इसका कारण उसका कर्मशील होना है। कर्म के स्वरूप का कामायनीकार प्रसाद जी ने जो चित्रण किया है वह अपने आप में अप्रतिम है। कर्म सौन्दर्य का एक अद्भुत चित्र मनु व उनकी प्रेरणापुंज श्रद्धा विषयक प्रस्तुत है जिसमें नारी (श्रद्धा) अपने अथक परिश्रम द्वारा जगत की ज्वाला से संतप्त दिग्भ्रमित पुरूष को सन्मार्ग पर लाती है तथा उसके नीरस जीवन में सरसता का संचार करती हुयी उसे महानता के शिखर पर ले जाती है। जहाँ नर–नारी अर्थात श्रद्धा और मनु दोनों मिलकर संसार की सेवा में निरत हो सुख और सन्तोष का प्रसार करते हुये जगती के दु:ख का परिहार करते हैं तथा जगत का कल्याण करते हुये अखण्ड आनंद का अनुभव करते हैं। यथा–

वे युगल वहीं अब बैठे संसृति की सेवा करते,
संतोष और सुख देकर सबकी दु:ख ज्वाला हरते,
है वहाँ महाहृद निर्मल, जो मन की प्यास बुझाता,
मानस उसको कहते हैं सुख पाता जो है जाता।[13]

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि प्रसाद जी का सौन्दर्यबोध सूक्ष्म तिसूक्ष्म और सर्वव्यापी है। कामायनी में सौन्दर्य विधान का जो वस्तुगत और भावगत स्वरूप मुखरित हुआ है वह न केवल विस्मय विमुग्ध करने वाला है वरन् हिन्दी काव्य साहित्य में अनूठा है। उन्होंने कामायनी में सौन्दर्य के अन्तर्बाह्य सभी उपकरणों का प्रयोग करते हुये सौन्दर्य चित्रण की एक ऐसी नूतन पद्धति विकसित की है जो छायावादी युग की एक विशिष्ट प्रणाली के रूप में प्रतिष्ठित हुई।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हिन्दी के मर्मी कवि: शीर्षक निबन्ध
2. जयशंकर प्रसाद : कामायनी–लज्जा सर्ग पृ. 44
3. जयशंकर प्रसाद : काव्य कला और अन्य निबन्ध पृ. 28, 29
4. जयशंकर प्रसाद : कामायनी–आशा सर्ग पृ. 14
5. जयशंकर प्रसाद : कामायनी–आशा सर्ग पृ. 20
6. जयशंकर प्रसाद : कामायनी–श्रद्धा सर्ग पृ. 21, 22
7. जयशकर प्रसाद : कामानयनी–इड़ा सर्ग पृ. 72
8. जयशंकर प्रसाद : कामायनी–चिन्ता सर्ग पृ. 04
9. जयशंकर प्रसाद : कामायनी–स्वप्न सर्ग पृ. 79, आनन्द सर्ग पृ. 129
10. जयशंकर प्रसाद : कामायनी–स्वप्न सर्ग पृ. 80
11. जयशंकर प्रसाद : कामानयनी–लज्जा सर्ग पृ. 43
12. जयशंकर प्रसाद : कामायनी–लज्जा सर्ग पृ. 44
13. जयशंकर प्रसाद : कामायनी–आनंद सर्ग पृ. 130, 131

रंग बदलते रिश्ते -त्रिपदी-आशापूर्णा देवी

डॉ. संध्या खरे *

शोध सारांश – आशापूर्णा देवी बंगला साहित्य जगत की जानी-मानी रचनाकार हैं। उनके उपन्यासों में नारी जीवन और समाज की विभिन्न स्थितियों का चित्रण किया गया है। उनके उपन्यासों के पात्र हर वर्ग से संबंधित हैं। कई बार एक ही उपन्यास में विभिन्न वर्गों के पात्रों का चित्रण मिलता है।

त्रिपदी उपन्यास में आशापूर्णा देवी ने निम्न मध्यमवर्गीय जीवन की आर्थिक विवषताओं का चित्रण किया है। सुरभि के माता-पिता आर्थिक दृष्टि से सुरभि पर आश्रित हैं। किन्तु अद्‌भुत एवं सम्पन्न जीवन जीने के लिए सुरभि घर छोड़कर चली जाती है। सुरभि के जाने के पश्चात् सुरभि और उसके माता-पिता दोनों को एक-दूसरे की कीमत पता लगती है।

इस गाथा के माध्यम से आशापूर्णा देवी ने आधुनिक जीवन में आर्थिक पथ की प्रधानता और उसी अर्थ के कारण रंग बदलते पारिवारिक रिश्तों को रेखांकित करने में सफलता प्राप्त की है।

प्रस्तावना – त्रिपदी उपन्यास में आशापूर्णा देवी ने निम्न मध्यमवर्गीय जीवन की आर्थिक विवषताओं का चित्रण किया है। चार बेटियों के माता-पिता अपनी तीन पुत्रियों के विवाह होने के उपरांत आर्थिक दृष्टि से अपनी छोटी पुत्री सुरभि पर आश्रित हैं। घर की दशा दिनों-दिन गिरती जा रही है। ग्वाला, धोबी, महरी क्रमश: घर से विदा हो चुके हैं। मकान का किराया कई महीनों से दिया नहीं गया है।

माता-पिता की निराश्रित दशा के कारण सुरभि की घृष्टता, स्वार्थी प्रवृत्ति बढती चली जाती है। जिसके कारण ' माँ-बाप ने सोचा था कि उससे भविष्य में वे एक पैसा भी नहीं लेंगे, मगर अभाववाली गृहस्थी में ऐसी प्रतिज्ञा करने का कोई मतलब नहीं होता, लज्जा से सिर नीचा करके भी लेना पड़ता है। इसीलिये माँ को दूसरे ही महीने उसके सामने हाथ फैलाना पड़ा था। [1/16]

सुरभि की घृष्टता दिनों-दिन बढने लगी। असाधारण स्वछंद जीवन पाने की इच्छा से वह रात के एक-एक बजे तक अपने दो पुरूष मित्रों के साथ घूमने लगी। स्वाभाविक था माता-पिता को दिन-रात पड़ोसियों के ताने सुनने पड़ते थे। इसलिये माँ-बाप के लिये वह करैत सांप हो रही थी।[2]

इस लड़की के कारण उन्हें जहर खाकर सोना पडेगा यही प्रतीत होने लगा। परंतु जहर खाने की उन्हें जरूरत नहीं पड़ती। अपने निम्न मध्यमवर्गीय जीवन, गरीबी, गली के जीवन के, जीवन से छुटकारा पाकर सुरभि दो पुरूष मित्रों के साथ गृहस्थी बसाने चली जाती है। जाते वक्त उसने दोनों बूढ़ा-बूढ़ी क्या खायेंगे यह नहीं सोचा। क्योंकि उसकी बड़ी दीदी, मंझली दीदी या छोटी दीदी भी माँ-बाप के बारे में नहीं सोचती है। [3]

सुरभि के बहुत अपमान करके रूपया देने पर भी करूण चेहरा बनाकर माँ को रूपया लेना पड़ता था। सुरभि स्वयं कभी अपने को मां जैसी दयनीय दशा में देखना नहीं चाहती है। माँ के साथ रहते समय माँ की दो-एक फरमाइशों को खरीदते समय सुरभि का कलेजा फट जाता था। लगता था एक-एक दस का रूपये नोट जैसे पसली की एक-एक हडडी है। [4]

इसीलिये सम्पन्न जीवन, अद्‌भुत जीवन जीने के लिये सुरभि संस्कारविहीन, असामाजिक, अस्वाभाविक जीवन जीना स्वीकार करती हैं। अपनी नयी गृहस्थी से महीने-डेढ महीने बाद घर जाने पर सुरभि ने देखा माँ आधी रह गयी है। पिता का बिस्तर तार-तार हो गया है। [5]

पहली बार सुरभि ने अपने स्वार्थ का दुष्परिणाम देखा। गंदी गली के घर से दूर जाकर अब उसे घर की कमी ज्ञात हुयी। सुरभि आज तक माँ-बाप को जली-कटी सुनाती आयी है। दो पुरूष मित्रों की कमाई खर्च के लिये पाकर उसने पहली बार अपने अलावा दूसरों के लिए, परिवार के लिए खर्च करना सीखा। उसने घर जाते वक्त 'माँ के लिये चुनकर दो-दो चौड़े पाड़ की साड़ी खरीदी और एक पैकिट सिंदूर ।......पिता के लिये एक पैकिट बिस्कुट और थोड़ी-सी खजूर खरीदी। जगमोहन को खजूर बहुत अच्छी लगती है। [6]

एक बार उपहारों का क्रम आरम्भ होते ही सुरभि के प्रति सबका दृष्टिकोण बदलने लगता है। सुरभि अपनी दीदी लोगों के घर भी चाकलेट-बिस्कुट और अन्य छोटे-छोटे उपहार लेकर जाने लगी है। इसीलिये दीदी लोग भी अब सुरभि को पहले से कहीं अधिक मानने लगी है।[7]

सुरभि के उपहारों के कारण परिस्थितियां तेजी से बदलने लगती हैं। ' अब कोई सुरभि को धिक्कारता नहीं। कोई उसे देखकर मुंह नहीं बिचकाता। शायद यही दुनिया का नियम है।[8] अपने-अपने स्वार्थो की पूर्ति होने पर सबका दृष्टिकोण बदल जाता है। अब सुरभि उनके लिये करैत सांप नहीं है। अब अतिथि के समान आदर होता है सुरभि का ।[9]

सुरभि के पिता जगमोहन अब भूल गये है कि कभी उन्होंने उसे यह कहकर लांक्षित किया था कि वह उनके मुंह में कालिख लगा रही है।[10] माँ-बाप भूल गये कि यह रूपया सुरभि जिस गृहस्थी से ला रही है वह सामाजिक नियमों, मर्यादा का उल्लंघन कर बनायी गयी गृहस्थी है। समय-समय पर उम्मीद से ज्यादा पैसा और उपहार पहुंचाते रहने के कारण अब अपर्णा और जगमोहन का स्वर बदल चुका है।

अब सुरभि अकलमंद और तीनों बड़ी बेटियां मूर्ख हैं क्योंकि उनसे माता-पिता की स्वार्थ पूर्ति नहीं होती हैं। माँ सुरभि से उनकी निंदा करती हुयी जब-तब कहती है कि 'तुम आ जाती हो तो संतान का मुंह देखने को मिल जाता है। हम बूढ़ा-बूढ़ी अगर किसी दिन मर जाये तो शायद उनको तो खबर भी नहीं होगी। तुम आओगी तो तुम्हें ही हमारी सड़ी-गली लाश उठानी पडेग़ी।..... 'अरे! नाम मत लो उन सबका। जगमोहन चिल्ला पड़ते हैं। [11]

बंगला कहावत है कि अभाव से स्वभाव नष्ट होता है। संभवत: इसी सत्य का चित्रण आशापूर्णा देवी के उपन्यासों में बार-बार दिखायी पड़ता है।

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

स्वार्थवश माँ-बाप, भाई-बहिन, पति-पत्नी के रिश्ते बदल जाते हैं। इसी उपन्यास से स्पष्ट है कि चक्षुलज्जा, लोकनिंदा की चिंता लिये बगैर जगमोहन और अपर्णा अपनी बेटी सुरभि के लाये पैसों के कारण यह भी भूल जाते हैं कि उसकी गृहस्थी समाज की दृष्टि में हाट से ज्यादा कुछ नहीं है।

यद्यपि उपन्यास के अंत में सुरभि की हाट जैसी गृहस्थी भी अंततः एक सामान्य गृहस्थी में बदल जाती है और एक बार फिर चिरंतन संस्कारों की विजय होती है। किन्तु इस विजय गाथा के माध्यम से आशापूर्णा देवी ने आधुनिक जीवन में आर्थिक पथ की प्रधानता और उसी अर्थ के कारण रंग बदलते पारिवारिक रिश्तों को रेखांकित करने में सफलता पाई है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आशापूर्णा देवी : त्रिपदी, प्रकाशक - सन्मार्ग प्रकाशन, 16-यू, बी बैंग्लो रोड, दिल्ली- 110007, संस्करण- 1997, मूल्य- 60 रुपये, पृष्ठ क्रमांक - 16
2. आशापूर्णा देवी : त्रिपदी, प्रकाशक - सन्मार्ग प्रकाशन, 16-यू, बी बैंग्लो रोड, दिल्ली- 110007, संस्करण- 1997, मूल्य- 60 रुपये, पृष्ठ क्रमांक - 22
3. आशापूर्णा देवी : त्रिपदी, प्रकाशक - सन्मार्ग प्रकाशन, 16-यू, बी बैंग्लो रोड, दिल्ली- 110007, संस्करण- 1997, मूल्य- 60 रुपये, पृष्ठ क्रमांक - 31
4. आशापूर्णा देवी : त्रिपदी, प्रकाशक - सन्मार्ग प्रकाशन, 16-यू, बी बैंग्लो रोड, दिल्ली- 110007, संस्करण- 1997, मूल्य- 60 रुपये, पृष्ठ क्रमांक - 49
5. आशापूर्णा देवी : त्रिपदी, प्रकाशक - सन्मार्ग प्रकाशन, 16-यू, बी बैंग्लो रोड, दिल्ली- 110007, संस्करण- 1997, मूल्य- 60 रुपये, पृष्ठ क्रमांक - 66
6. आशाापूर्णा देवी : त्रिपदी, प्रकाशक - सन्मार्ग प्रकाशन, 16-यू, बी बैंग्लो रोड, दिल्ली- 110007, संस्करण- 1997, मूल्य- 60 रुपये, पृष्ठ क्रमांक-67

7.,8.आशाापूर्णा देवी : त्रिपदी, प्रकाशक - सन्मार्ग प्रकाशन, 16-यू, बी बैंग्लो रोड, दिल्ली- 110007, संस्करण- 1997, मूल्य- 60 रुपये, पृष्ठ क्रमांक-68

9,10,11 आशापूर्णा देवी : त्रिपदी, प्रकाशक - सन्मार्ग प्रकाशन, 16-यू, बी बैंग्लो रोड, दिल्ली- 110007, संस्करण- 1997, मूल्य- 60 रुपये, पृष्ठ क्रमांक - 6

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) Oct. to December 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

Domestic Violence-Causes And Remedial Measures

Dr. Smita Jain *

Introduction - Family violence or Domestic violence is a form of antisocial behavior and occurs when a family member, partner or ex-partner attempts to physically or psychologically dominate or harm the other. The term "intimate partner violence" (IPV) is often used synonymously, other terms have included "wife beating", "wife battering", "husband battering", "relationship violence", "domestic abuse", and [spousal abuse] with some legal jurisdictions having specific definitions.

Recent attention to domestic violence began in the women's movement as concern about wives being beaten by their husbands, and has remained a major focus of modern feminism, particularly in terms of "violence against women". Popular emphasis has tended to be on women as the victims of domestic violence although with the rise of the men's movement, and particularly men's rights, there is now some advocacy for men as victims, although the statistics concerning the number of male victims given by them are strongly contested by many groups active in research on or working in the field of domestic violence and "violence against men". Thus the use of gender-specfic titles like the ones listed above and have come under increasing critcism as implying that domestic violence is always male-on-female and is seen as sexist.

Estimates are that only about a third of cases of domestic violence are actually reported in the US and UK. In other places where there has been less attention and less support, reported cases would be still lower.

Domestic violence occurs in all cultures, people of all races, ethnicities, and religions can be perpetrators of domestic violence. Domestic violence is perpetrated by, and on, both men and women, and occurs in same-sex and opposite-sex relationships.

Awareness and documentation of domestic violence differs from country to country. According to the Centers for Disease Control domestic violence is a serious, preventable public health problem affecting more than 32 million Americans, that is more than 10% of the U.S. population.

Domestic violence has many forms, including physical violence, sexual abuse, emotional abuse, intimidation, economic deprivation or threats of violence. There are a number of dimensions:

- mode - physical, psychological, sexual and/or social
- frequency - one off, occasional, chronic
- severity – in terms of both psychological or physical harm and the need for treatment – transitory or permanent injury – mild, moderate, severe up to homicide

The means used to measure domestic violence strongly influence the results found, for example, studies of reported domestic violence and extrapolations of those studies show women preponderantly as victims and men to be more violent, whereas the survey based Conflict Tactics Scale, tends to show men and women equally violent.

The majority of studies investigated male on female domestic violence, thus information on female-on-male (or same-sex) violence tends to be less available.

Domestic violence is physical, sexual, economic, or psychological abuse directed towards one's spouse, partner, or other family member within the household.

Patterns of behaviour characterized by the misuse of power and control by one person over another who are or have been in an intimate relationship. It can occur in mixed gender relationships and same gender relationships and has profound consequences for the lives of children, individuals, families and communities. It may be physical, sexual, emotional and/or psychological. The latter may include intimidation, harassment, damage to property, threats and financial abuse.

The New York State Coalition defines domestic violence as "abusive behavior - emotional, psychological, physical, or sexual - that one person in an intimate relationship uses in order to control the other. It takes many different forms and includes behaviors such as threats, name-calling, preventing contact with family or friends, withholding money, actual or threatened physical harm and sexual assault. Stalking can also be a form of domestic violence."

Domestic violence can be -

- Physical violence
  Direct physical violence, ranging from unwanted physical contact to rape and murder.
  Indirect physical violence, including destruction of objects, striking or throwing objects near the victim, harm to animals
- Mental/emotional violence
  Verbal threats of physical violence to the victim, the self, or others including children, ranging from explicit, detailed and impending to implicit and vague as to both

* Deptt. of Psychology, Govt. Post Graduate College, Narsinghpur (M.P.) INDIA

content and time frame. Verbal violence, including threats, insults, put-downs, attacks. Nonverbal threats, including gestures, facial expressions, body postures

- Economic/social abuse

Controlling victim's money and other economic resources, preventing victim from seeing friends and relatives, actively sabotaging victim's social relationships and isolating victim from social contacts.

Psychological violence - Threats of physical, psychological or sexual, or social violence that use words, gestures, or weapons to communicate the intent to cause death, disability, injury, physical, or psychological harm.

Psychological/emotional violence involves violence to the victim caused by acts, threats of acts, or coercive tactics. Psychological/emotional abuse can include, but is not limited to, humiliating the victim, controlling what the victim can and cannot do, withholding information from the victim, deliberately doing something to make the victim feel diminished or embarrassed, isolating the victim from friends and family, and denying the victim access to money or other basic resources. It is considered psychological/emotional violence when there has been prior physical or sexual violence or prior threat of physical or sexual violence. Perpetrators of this form of domestic aggression can be both users and abusers... both female and male. "The abuser recruits friends, colleagues, mates, family members, the authorities, institutions, neighbours, the media, teachers in short, third parties to do his bidding. He uses them to cajole, coerce, threaten, stalk, offer, retreat, tempt, convince, harass, communicate and otherwise manipulate his target."

Relational aggression is a form of psychological/social aggression that uses various forms of falsehood, secrecy and gossip to commit covert violence. It is often a spectacularly successful tactic because so few people know how to detect it. It is often used because it is covert, leaves no visible scars and can be done with a smile. It destroys or damages the target's reputation and ruins the target's relationships. "It is the outcome of fear. Fear of violence, fear of the unknown, fear of the unpredictable, the capricious, and the arbitrary. It is perpetrated by dropping subtle hints, by disorienting, by constant and unnecessary lying, by persistent doubting and demeaning, and by inspiring an air of unmitigated gloom and doom."

Parental alienation is another form of covert violence where children are used as a weapon of war by one parent to alienate the other parent. This covert form of domestic violence is used in high-conflict marriages. It is often devastating to the alienated spouse/parent and to the alienating/alienated children caught in the middle. Misdiagnoses of Parental Alienation can also be devastating — this time to the parent accurately describing abuse and to the child that is placed with the abusive parent. In effect, it uses innocent, unwitting children to commit relational aggression by one parent against the other. "The abuser often recruits his children to do his bidding. He uses them to tempt, convince, communicate, threaten, and otherwise manipulate his target, the children's other parent or a devoted relative (e.g., grandparents). He controls his - often gullible and unsuspecting - offspring exactly as he plans to control his ultimate prey. He employs the same mechanisms and devices. And he dumps his props unceremoniously when the job is done - which causes tremendous (and, typically, irreversible) emotional hurt."

Causes - There are many different theories as to the causes of domestic violence. As with many phenomena regarding human experience, no one approach appears to cover all cases.

Identified and proposed causes include a need for power and control, a form of bullying and social learning of abuse. Abusers' efforts to dominate their partners have been attributed to low self-esteem or feelings of inadequacy, unresolved childhood conflicts, the stress of poverty, hostility and resentment toward women (misogyny), hostility and resentment toward men (misandry), personality disorders, genetic tendencies and sociocultural influences, among other possible causative factors. Most authorities seem to agree that abusive personalities result from a combination of several factors, to varying degrees.

Factors associated with domestic violence also include substance abuse, mental illness, poverty and various political and legal characteristics, such as authoritarianism.

Power and control - *... power in a relationship is often a matter of perception. A person may perceive themselves to be put-upon when a less involved observer would disagree.* A causalist view of domestic violence is that it is a strategy to gain or maintain power and control over the victim. This view is in alignment with Bancroft's "cost-benefit" theory that abuse rewards the perpetrator in ways other than, or in addition to, simply exercising power over his or her target(s). He cites evidence in support of his argument that, in most cases, abusers are quite capable of exercising control over themselves, but choose not to do so for various reasons. An alternative view is that abuse arises from powerlessness and externalizing/projecting this and attempting to exercise control of the victim. It is an attempt to 'gain or maintain power and control over the victim' but even in achieving this it cannot resolve the powerlessness driving it. Such behaviours have addictive aspects leading to a cycle of abuse or violence. Mutual cycles develop when each party attempts to resolve their own powerlessness in attempting to assert control.

Questions of power and control are integral to the widely accepted Duluth Domestic Abuse Intervention Project. They developed "Power and Control Wheel" to illustrate this: it has power and control at the center, surrounded by spokes (techniques used), the titles of which include:

- Coercion and threats
- Intimidation
- Emotional abuse
- Isolation
- Minimizing, denying and blaming
- Using children

- Economic abuse
- Male privilege

The model attempts to address abuse by one-sidedly challenging the misuse of power by the 'perpetrator'.

Critics of this model suggest that the one-sided focus is problematic as resolution can only be achieved when all participants acknowledge their responsibilities, and identify and respect mutual purpose.

The power wheel model is not intended to assign personal responsibility, enhance respect for mutual purpose or assist victims and perpetrators in resolving their differences. It is an informational tool designed to help individuals understand the dynamics of power operating in abusive situations and identify various methods of abuse.

Bullying - Domestic violence comes as a form of bullying, as a means to an end that is easier than other means. The heading on the UK National Website for Bullying in the Family states that 'Those Who Can, Do. Those Who Can't Bully.' It seems reasonable to add that those who *won't* prefer violence, too.

Treatment and support - Publicly available resources for dealing with domestic violence have tended to be almost exclusively geared towards supporting women and children who are in relationships with or who are leaving violent men, rather than for survivors of domestic violence *per se*. This has been due to the purported numeric preponderance of female victims and the perception that domestic violence only affected women. Resources to help men who have been using violence take responsibility for and stop their use of violence, such as Men's Behaviour Change Programs or anger management training, are available, though attendees are ordered to pay for their own course in order that they should remain accountable for their actions.

Men's organisations, such as ManKind in the UK, often see this approach as one-sided; as Report 191 by the British Home Office shows that men and women are equally culpable, they believe that there should be anger management courses for women also. They accuse organisations such as Women's Aid of bias in this respect saying that they spend millions of pounds on helping female victims of domestic violence and yet nothing on female perpetrators. These same men's organisations claim that before such help is given to female perpetrators, Women's Aid would have to admit that women are violent in the home. This they seem reluctant to do.

One of the challenges for lay observers, victims, perpetrators and treatment providers is demonstrated by the tendency to describe perpetrator treatment as men's "anger management" groups.

Comprehensive and accountable behaviour change programs are seen as far more appropriate and effective interventions in male violence in the home than anger management groups.

Inherent in anger management only approaches is the assumption that the violence is a result of a loss of control over one's anger. While there is little doubt that some domestic violence *is* about the loss of control, the choice of the target of that violence may be of greater significance. Anger management might be appropriate for the individual who lashes out indiscriminately when angry towards co-workers, supervisors or family. In most cases, however, the domestic violence perpetrator lashes out *only* at their intimate partner or relatively defenseless child, which suggests an element of choice or selection that, in turn, suggests a different or additional motivation beyond simple anger. Most experienced treatment providers have probably observed that for various reasons, many of which may be cultural, the perpetrator has a sense of entitlement, sometimes conscious, sometimes not, that leads directly to their choice of target.

Men's behaviour change programs, although differing throughout the world, tend to focus on the prevention of further violence within the family and the safety of women and children. Often they abide by various standards of practise that includes 'partner contact' where the participants female partner is contacted by the program and informed about the course, checked about her level of safety and support and offered support services for herself if she requires them. Many of these programs have both a male and female facilitator and follow a program designed to highlight the impact of his behaviour, examine the attitudes, values and behaviours that lead to his choice to use violence and aim to support and challenge the man to take responsibility for his use of violence.

Recommendations -

- Responses to domestic violence need to address the issue of acceptability of violence as a feature of gender relations in the marital home. Unless the norms of acceptability of violence are broken, women will continue to experience physical and psychological violence.
- Greater access to economic resources and education are important preconditions for women to have greater options in negotiating conflict within the marriage.
- The site of first response to violence – which includes members of the natal family, the marital family, neighbors, co-workers, and social and community groups-must be strengthened. These are the community members who can make a difference by not condoning violence with their silence and by responding positively to a woman's effort to seek help.
- Lastly, it is critical that community responses are grounded in a human rights framework to ensure every woman's freedom from violence.

References :-

1. Domestic Violence in India: A Summary Report of a Multi-Site Household Survey (2000). International Center for Research on Women, Washington, DC.
2. http://psychology.wikia.com/wiki/Family_violence
3. http://psychology.wikia.com/wiki/Violence.

****

किशोर अपराध - कारण और निवारण

ज्योत्सना झारिया *

प्रस्तावना – किशोरों द्वारा किये जाने वाले अपराधी व्यवहार को किशोर अपराध कहा जाता है। सामान्यत: अपराधी व्यवहार ऐसे व्यवहार को कहा जाता है जिससे अपराधी कानून का उल्लंघन होता है तथा जिसके कारण व्यक्ति को किसी मान्यता प्राप्त दण्डाधिकारी द्वारा दण्ड दिया जा सकता है। अपराधी व्यवहार के स्वरूप का निर्धारण देश के अपराधी कानूनों द्वारा निर्धारित होता है।

प्रत्येक समाज एवं देश के अपने नियम कानून रीति रिवाज एवं परंपराऐं होती है और इनका पालन करना प्रत्येक समाज एवं देश के नागरिकों का दायित्व होता है फिर चाहे वह प्रौढ़ हो या किशोर। जब ऐसे समाज विरोधी कार्य बालकों या किशोरों द्वारा किये जाते है तब उसे बाल अपराध या किशोर अपराध की संज्ञा दी जाती है। किशोर अपराध की उच्चतम एवं निम्न आयु के लिए विभिन्न देश एक मत नहीं है। भारत वर्ष में किशोर अपराध की आयु सीमा 7 वर्ष से 16 वर्ष तक ही है। भारत में इस आयु के बालक बालिकाओं द्वारा किया गया समाज विरोधी व्यवहार किशोर अपराध है। किशोर न्याय अधिनियम की धारा 2(ज) के अनुसार– किशोर से अभिप्राय है ऐसा बालक जिसने 16 वर्ष की आयु प्राप्त नहीं की है या ऐसी लड़की जिसने 18 वर्ष की आयु प्राप्त नहीं की है।

सैलिम एवं बुलफेंग के अनुसार– 'किशोर अपराध एक निश्चित आयु सीमा के बालक का गैर कानूनी आचरण है। वह आचरण जो अपने गंभीरतम परिणामस्वरूप उस बालक को एक संस्था में तब तक रहने का कारण बन सकता है जब तक कि वह बालक वयस्क नहीं हो जाता है।'

किशोर अपराध के कारण– एस.एल.प्रेसी एवं आर.जी.कुहलेन (1957) के अनुसार किशोरावस्था में अपराध का मूल कारण अधिकतर वह रोष होता है जो लगातार कई वर्षो तक किशोर के मन में इकट्ठा होता रहता है और उन दण्डों के प्रति होता है जिन्हें किशोर अनुचित समझता है तथा दूसरों के इस बर्ताव के प्रति होता है जिसके कारण किशोर अपने आपको हीन और अनुपयुक्त समझता आया है।

वर्तमान में किशोर अपराध एक विश्वव्यापी समस्या बन चुका है किशोर अपराध के निवारण एवं उपचारात्मक प्रयासों के बावजूद किशोरों में आपराधिक प्रवृत्ति दिनोंदिन बलवती होती जा रही है उनमें हिंसा, उद्दण्डता तथा कानून का उल्लंघन करने की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। किशोर अपराध के कारण व्यक्तिगत भिन्नता के आधार पर भिन्न-भिन्न होते है। किशोर अपराध के कतिपय महत्वपूर्ण कारण निम्नांकित है –

1. आनुवांशिक कारण– किशोर अपराध के प्रमुख कारणों में आनुवांशिकता एक महत्वपूर्ण कारण है। अनेक मनोवैज्ञानिक अध्ययनो से यह स्पष्ट हुआ है कि व्यक्तियों में आपराधिक प्रवृत्ति का एक कारण आनुवांशिकता है।

2. शारीरिक कारण– 'स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क का वास होता है।' शरीर अथवा मस्तिष्क दोनों में से किसी एक के स्वस्थ्य न होने पर व्यक्ति का शारीरिक और मानसिक संतुलन बिगड़ जाता है जिससे उसका व्यवहार प्रभावित होता है शारीरिक अपंगता अथवा विकृति या मानसिक कमजोरी से किशोरों में हीन भावना उत्पन्न होती है और इस हीन भावना से निजात पाने के लिए वे आपराधिक प्रवृत्ति की ओर अग्रसर होते है। इसके अलावा समय से पूर्व शारीरिक परिपक्वता प्राप्त करने वाले किशोर कामुकता वश यौन अपराधों के शिकार हो जाते है। सिरिल बर्ट ने अपने अध्ययनों के आधार पर पाया कि 70 प्रतिशत किशोर अपराधी शारीरिक अयोग्यता अथवा अभावों से ग्रस्त रहने वाले होते है।

3. मनोवैज्ञानिक कारण– मनोवैज्ञानिक शोधों से स्पष्ट हुआ है कि ऐसे कई मनोवैज्ञानिक कारण है जो किशोर अपराध के लिए उत्तरदायी होते है। सिरिल बर्ट, हीली, गोडार्ड आदि मनोवैज्ञानिकों के अनुसार निम्न मानसिक योग्यता किशोर अपराध का एक कारण है। सिरिल बर्ट ने अपने अध्ययनों के आधार पर पाया कि 100 से कम बुद्धिलब्धि वाले किशोरों में आपराधिक प्रवृत्ति पायी जाती है। उन्होंने अपने अध्ययनों में 75 प्रतिशत किशोर अपराधियों को मानसिक संघर्षो तथा भावना ग्रंथियों से ग्रसित पाया। उन्होंने अपराधी कालकों में सांवेगिकता की मात्रा सर्वाधिक पायी। मैक्डूगल एवं हर्लाक ने अवरूद्ध इच्छा व निराशा को किशोर अपराध का कारण माना है। स्टेनली हल ने भावना ग्रंथियों, समायोजन दोष, दुर्बल अहं मनोस्नायु विकृति एवं स्वभावगत अस्थिरता को किशोर अपराध का कारण माना है।

4. पारिवारिक कारण – ग्लूएक्स ने अपने अध्ययन में पाया कि बालक के भावी जीवन में आपराधिकता निश्चित करने में परिवार का सर्वोच्च स्थान है। पारिवार बालकों की प्रथम पाठशाला होती है यहीं उनमें नैतिक मूल्यों का विकास होता है। परिवार उनके सर्वांगीण विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यदि परिवार की भूमिका उसके सर्वांगीण विकास में बाधक होती है तब किशोर में आपराधिक प्रवृत्ति का विकास होता है। परिवार का प्रकार बालक के आचरण और व्यवहार को प्रभावित करता है। भग्न एवं अर्द्धभग्न परिवार की सामाजिक आर्थिक, स्थिति, अनैतिक, अथवा मिश्रित संस्कृति वाला परिवार किशोंरो में आपराधिक प्रवृत्ति के विकास में सहायक होता है। हीले एवं ब्रोनर ने अपने अध्ययन के आधार पर बताया कि 4000 किशोर अपराधियों में से 50 प्रतिशत किशोर विघटित परिवारों के थे। इलियट ने अपने अध्ययन में पाया कि 67 प्रतिशत अपराधी बालिकाऐं अनैतिक परिवारी की थी। इसके अलावा परिवार में बालक की स्थिति यथा उपेक्षित अथवा अवांछित संतान के आपराधिक होने की संभावना अधिक होती है।

5. सामाजिक सांस्कृतिक कारण– किशोर अपराध के कारणों में सामाजिक सांस्कृतिक कारणों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। शॉ एवं मेक्की ने 25 नगरों के बाल अपराधियों का अध्ययन किया एवं पाया की गंदी बस्तियों में किशोर अपराधियों की दर सबसे अधिक होती है क्लब होटलों आदि में

* सहायक प्राध्यापक (मनोविज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

मालिक किशोरों से अवैधानिक कार्य कराते है जो आगे चलकर उनमें आपराधिक प्रवृत्ति को विकसित करते है। इसके अलावा पाश्चात्य् संस्कृति के प्रति किशोरों का बढ़ता आकर्षण भारतीय संस्कृति की मान्यताओं, परम्पराओं रीति-रिवाज एवं विश्वासों पर आघात करती है किशोरों के मन में भारतीय परम्पराओं के प्रति घृणा पैदा हो जाती है फलत: वे विद्रोह एवं अपराध प्रारंभ कर देते है।

6. शैक्षिक कारण- परिवार एवं समाज की भांति कई ऐसे शैक्षिक कारण है जो किशोर अपराध के प्रति बालक की उन्मुखता को महत्वपूर्ण ढंग से प्रभावित करते है। विद्यालय का वातावरण, शिक्षक एवं शिक्षालय प्रमुख का आचार, व्यवहार एवं चरित्र, उसकी प्रशासनिक भूमिका, खेल मनोरंजन, शैक्षिक एवं शैक्षणेत्तर गतिविधियाँ बालकों के सर्वांगीण विकास में सहायक होती है किन्हीं भी परिस्थिति में शैक्षिक कारणों से यदि बालक के सर्वांगीण विकास में बाधा आती है तो उसमें आपराधिक प्रवृत्ति विकसित हो जाती है।

7. आर्थिक कारण- बी.एन.सिंह (1990) ने अपने शोधों के आधार पर निष्कर्ष निकाला कि 75 प्रतिशत से 95 प्रतिशत तक किशोर अपराधी निर्धन परिवारों के थे। इसी तरह क्राइम इन इंडिया (1991) के अनुसार इस वर्ष में पकड़े गये कुल किशोर अपराधियों में 60.4 प्रतिशत निर्धन परिवार के थे। बहुत अधिक निर्धनता एवं संपन्नता दोनों में ही आपराधिकता अधिक पायी जाती है।

'बुमुक्षितं किन करोति पापम्' अर्थात भूखा व्यक्ति कौन सा पाप नहीं करता ? आर्थिक अभाव किशोरों को अवश्य खटकता है यथा अच्छा भोजन, अच्छे कपड़े, अच्छा मनारंजन, अच्छी शिक्षा एवं पर्याप्त जेब खर्च की प्रत्येक बालक में प्रबल इच्छा होती है इन आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु वे आपराधिक कार्यो में लिप्त हो जाते है। इसी तरह संपन्न परिवारों के किशोरों में शानो शौकत दिखावा एवं फिजूल खर्ची हेतु आसानी से धन उपलब्ध हो जाता है जिससे वे अय्याशी, नाचघर क्लब, बार, व्यभिचार एवं मद्यव्यसनता के आदि हो जाते है जो आगे चलकर उन्हें आपराधिक प्रवृत्ति वाला बना देते है।

8. संचार माध्यम - संचार माध्यम यथा टेलीविजन, समाचार पत्र, पत्रिकाऐं, चलचित्र, इंटरनेट आदि बहुत हद तक किशोरों में आपराधिक प्रवृत्ति विकसित करने का एक कारण है। वर्तमान में चलचित्रों एवं धारावाहिकों में किशोरों को मारपीट, चोरी-डकैती, जासूसी, अश्लीलता से परिपूर्ण दृश्य अधिक देखने को मिलते है। नायक के अंदाज में किशोर बालक-बालिकाऐं भी उनका अनुकरण करते है। इंटरनेट पर सभी तरह की सामग्री उपलब्ध रहती है किशोरों का जिज्ञासु और कोमल मन सब जानकारी हासिल करने को उत्सुक रहता है जो उसे इंटरनेट से सहज उपलब्ध हो जाती है इसके माध्यम से वे आपराधिक संगठनों के जालसाजी का शिकार भी हो जाते है। अश्लील साहित्य एवं फिल्में बालकों को आसानी से उपलब्ध हो जाती है जिन्हें पढ़कर एवं देखकर उनके सुकुमार मन पर उसका दूषित प्रभाव पड़ता है और वे आपराधिक गतिविधियों में संलग्न हो जाते है।

किशोर अपराध का निवारण- जहां समस्याऐं होती है वहां समाधान भी होता है। किशोर अपराध एक विश्वव्यापी समस्या है इसके निवारण एवं उपचार हेतु राष्ट्र एवं विश्व स्तर पर अनेक उपाय एवं समाधान खोजे गये है।

ग्रेब्रिल मिस्ट्राल (नोबेल पुरस्कार विजेता) ने कहा कि- 'हम अनेक भूलों और गलतियों के दोषी है, लेकिन हमारा सबसे गंभीर अपराध बच्चों को उपेक्षित छोड़ देना है, जो कि जीवन का आधार होते है। अनेक ऐसी बातें है जिनके लिए हम रूक सकते है लेकिन बच्चों की देखरेख के लिए नहीं, क्योंकि वे हमारे कल के भविष्य है और उन्हें सद्गुणी तैयार करना हमारा कर्तव्य है।'

किशोर अपराध के निवारण एवं उपचार हेतु निम्नांकित विधियों का प्रयोग किया जा सकता है।

1. बाल संप्रेषण एवं सुधार गृह - रिफॉर्मेटरी स्कूल एक्ट 1897 के तहत् राज्य सरकारों को सुधार विद्यालय चलाने का अधिकार दिया गया है इसी तरह बाल संप्रेषण गृह में किशोरों का पर्याप्त संरक्षण एवं शिक्षण प्रशिक्षण की व्यवस्था होती है यहां उन्हें ज्यादा समय तक नहीं रखा जाता साधारण अपराध होने पर पर्याप्त निर्देशन, परामर्श एवं सुझाव देकर उन्हें उसे 6 माह के अंदर उनके परिवार को सौंप दिया जाता है अपराध संगीन होने पर बोर्स्टल संस्था में स्थानांतरित कर दिया जाता है।

2. बोर्स्टल संस्थाऐं - किशोर अपराधियों के उपचार हेतु बोर्स्टल एक सुधार गृह की तरह कार्य करता है। बोर्स्टल शब्द की उत्पत्ति इग्लैंड के बोर्स्टल नाम गांव में हुई जहां 1902 में सर्वप्रथम रोचेस्टर, कारागार के बालकों के सुधार गृह में परिवर्तित किया गया था। इग्लैण्ड के अपराध निवारण अधिनियम 1908 में यह व्यवस्था थी कि 16 से 21 वर्ष की आयु के किशोरों को सामान्य कारागार में रखना निषिद्ध है एवं उन्हें सुधार हेतु बोर्स्टल संस्थाओं में रखा जाये। ये संस्थाऐं किशोरों को उचित औद्योगिक प्रशिक्षण देकर तथा अनुशासित रखकर भावी सामान्य जीवन के लिए तैयार करती है। भारत में बोर्स्टलों की स्थापना बोर्स्टल स्कूल एण्ड रिफार्मेटरी स्कूल्स एक्ट 1897 के अंतर्गत की गई है। वर्तमान में देश में अनेक ऐसी संस्थाऐं कार्यरत है।

3. परीवीक्षण गृह एवं किशोर गृह - विचाराधीन किशोर अपराधियों को कुछ समय के लिए अभिरक्षा में रखे जाने हेतु परीवीक्षण गृह में भेज दिया जाता है इनकी स्थापना धारा-11 किशोर न्याय अधिनियम 1986 के तहत् हुई उन्हे आवास भोजन चिकित्स तथा उपयोगी आजीविका की सुविधाऐं भी उपलब्ध करायी जाती है। इसी तरह किशोर गृह में उपेक्षित और अभिव्यक्त किशोरों की नियमित सुरक्षात्मक देखरेख के लिए गृह स्थापित किये गये है जहां लंबी अवधि तक अपराधी किशोरों को कठोर अनुशासन में रखा जाता है ताकि उनका भविष्य उज्जवल हो सके।

4. प्रमाणित विद्यालय एवं विशेष गृह - 19 वीं शताब्दी में जो सुधार गृह स्थापित किये गये उन्हीं का रूपांतरित स्वरूप प्रमाणित विद्यालय है। इसमें विभिन्न आयु, लिंग और धर्म के किशोर अपराधियों को रखा जाता है ये खुले विद्यालय है जिनमें किशोर अपराधियों को शिक्षा दी जाती है तथा सामान्य नागरिक जीवन जीने के लिए तैयार किया जाता है एवं रूचि व आवश्यकतानुसार व्यवसायिक प्रशिक्षण भी दिया जाता है। किशोर न्याय अधिनियम 1986 की धारा 10 में किशोर अपराधियों के लिए राज्य द्वारा विशेष गृह स्थापित किये जाने का प्रावधान है इसमें उनके लिए आवास भरण-पोषण, शिक्षा व्यवसायिक प्रशिक्षण एवं पुनर्वास की व्यवस्था की जाती है।

5. अखिल भारतीय अपराध निवारण समिति - अखिल भारतीय अपराध निवारण समिति की स्थापना सन् 1950 में हुई जो किशोर अपराध के निवारण की दिशा में निरंतर प्रयासरत् है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने इसे अंतर्राष्ट्रीय मान्यता प्रदान की है। यह समिति आधुनिक उपचारात्मक दण्ड व्यवस्था को लागू करने हेतु प्रयासरत् है। इस समिति ने किशोर अपराध को नियंत्रित करने हेतु पुलिस और जनता के बीच जन सहयोग बढ़ाने का संदेश दिया है।

6. विभिन्न अधिनियम - भारतीय विधान में किशोर अपराध के निवारण एवं उपचार हेतु विभिन्न अधिनियमों की व्यवस्था की है। जैसे- दि चाइल्ड मैरिज रेस्ट्रेण्ड एक्ट 1929, दि यंग परसन्स एक्ट 1956 दि माइन्स एक्ट 1952 इस प्रकार अनेक केन्द्रीय अधिनियमों के अतिरिक्त विभिन्न प्रांतों में

भी किशोरों के उचित विकास एवं उपचार को ध्यान में रखकर अधिनियम बनाए गये है।

- प्रीवेन्शन ऑफ बेगिंग एण्ड बैगरेन्सी एक्टस
- प्रीवेन्शन ऑफ जुबैनाइल स्मोकिंग एक्टस
- प्रीवेन्शन ऑफ जुवैनाइल टेकिंग इन्टॉक्सीकेण्टस एक्टस उपरोक्त वर्णित अधिनियमों के अतिरिक्त और भी कई अधिनियम है जो किशोर अपराध की रोकथाम में सहायक है।

7. मनोवैज्ञानिक विधियां– मनोवैज्ञानिक विधियों के अंर्तगत मनोवैज्ञानिक तरीकों से किशोर अपराध के कारणों का पता लगाकर मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों को आधार मानकर आपराधिक प्रवृत्ति में सुधार एवं रोकथाम के उपाय किये जाते है मनोवैज्ञानिक पद्धतियों के अंतर्गत किशोर अपराधी की केस हिस्ट्री तैयार कर उपचार किया जाता है। संगीन अपराध की स्थिति में मनोविश्लेषात्मक पद्धतियों का प्रयोग कर उपचार किया जाता है। मनोवैज्ञानिक विधियों में परिवार एवं विद्यालय की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। परिवार में अभिभावकों द्वारा किशोर अपराधी बालकों के साथ प्रेम, सहयोग, सहानुभूति एवं आत्मीयता की भावना के साथ व्यवहार करना चाहिए ताकि वे अपने आप को उपेक्षित महसूस न करें। किशोर अपराध पर नियंत्रण करने में परिवार के अलावा विद्यालय की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इस तरह के बालकों के लिए विद्यालय द्वारा उचित शिक्षण, प्रशिक्षण एवं परामर्शन की व्यवस्था होनी चाहिए। प्रतिमाह विद्यालय द्वारा शिक्षक–अभिभावक की बैठक आयोजित होना चाहिए ताकि अभिभावकों को अपने बच्चों की प्रगति व कमियों की जानकारी मिल सके एवं वे अपने दायित्वों का सही निर्वाहन कर सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आलम काजी गौस एवं रामजी श्रीवास्तव (2002), आधुनिक विकासात्मक मनोविज्ञान मोतीलाल बनारसी दास दिल्ली, तृतीय संस्करण पृ.क्र. 510–516
2. हर्लोक एलिजाबेध बी, विकास मनोविज्ञान भाग–1, पृ.क्र. 413
3. मित्तल संतोष एवं दीपशिक्षा मित्तल (2005), बाल मनोविज्ञान यूनिवर्सल बुक हाउस (प्रा.) लिमिटेड जयपुर प्रथम संस्करण पृ.क्र. 200–210
4. सुलैमान मोहम्मद (2002), उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान प्रकाशक मोतीलाल बनारसी दास दिल्ली, पुनर्मुद्रण 2012, पृ.क्र. 441–452
5. व्यक्तिगत सर्वे एवं शोध।

****

Compositon Of Arbitral Tribunal

Poorva Jadhav *

Introduction - The Black's Law dictionary, defines arbitration[1] as a method of dispute resolution involving one or more neutral third parties, who are agreed to by the disputing parties and whose decision is binding. In order to realize the mentioned components of the definition it is essential and necessary for a legislation that supplements a legal binding, to the process and award of arbitration. In terms of Section 2 sub-section (l)(a) of the Act3 "arbitration means any arbitration whether or not administered by permanent arbitral institution". Arbitration is a form of Alternate Dispute Resolution. Law encourages parties, as far as possible, to settle their differences privately either by mutual concessions or by the mediation of a third person. Litigation is an evil, albeit necessary, and, being also very expensive, law wishes it to be kept to the minimum. When the parties agree to have their disputes decided with the mediation of a third person, but with all the formality of a judicial adjudication, that may be, speaking broadly, called an arbitration. Arbitration, therefore, means the submission by two or more parties of their dispute to the judgment of a third person, called the "arbitrator", and who is to decide the controversy in a judicial manner.

Appointment of Arbitrators - Part I of the Arbitration and Conciliation Act, 1996 contains provisions on arbitration under agreement. The new Act has ruled out the categories of arbitration in suits and arbitration with the intervention of the court. It reduces the process of arbitration only to one type, namely, arbitration under agreement. Statutory arbitration has also been brought under the same category because an Act providing for the machinery of arbitration comes into play only under an agreement.[2]

Now, the Arbitral Tribunal is the creature of an agreement. It is open to the parties to confer upon it such powers and prescribe such procedure for it to follow, as they think fit, so long as they are not opposed to law. The agreement must be in conformity with the law. The Arbitral Tribunal must also act and make its award in accordance with the general law of the land and the agreement.[3]

Now under the Act priority has been given to the procedure framed by the parties for appointing the arbitrators. Section 11 in detail provides with the qualification and the procedure to appoint the arbitrators. The provisions are as under -

Section 11(2) of the act says that the parties are free to agree on a procedure for appointing the arbitrator(s). Where the procedure for appointment has been agreed upon between the parties, the court's function is only to implement the agreed procedure.[4] The court cannot appoint an independent arbitrator at the first instance.[5] Where a party fails to act as required under that procedure, appointment of arbitrator(s) can be secured by taking recourse to "other means" if arbitration agreement/clause provides such "other means" for securing the appointment of arbitrator(s) Section 11(6)(a)10. The term "other means" has not been defined anywhere in the act. In case arbitration agreement does not provide such "other means" for securing the appointment, aggrieved party may request the Chief Justice or any person or institution designated by him to take the necessary measure for securing the appointment.

As per the provisions mentioned in the section the Chief Justice gets the power to appoint an arbitrator in three cases. They are -

1. where the parties fail to appoint or concur in the appointment of an arbitrator or arbitrators;
2. where the two appointed arbitrators fail to appoint or concur in the appointment of the presiding arbitrator;12 unless the agreement on the appointment procedure provides other means for securing the appointment Section 11(6)(b) & (c).
3. where the person or institution designated by the parties for appointment fails to act.

Section 11(5) provides both the procedure and limitation period if the parties have not agreed on a procedure for appointing the arbitrator(s) in arbitration with a sole arbitrator. It says that if the parties fail to agree on the arbitrator within thirty days from receipt of a request by one party from the other party to so agree the appointment shall be made, upon request of a party, by the Chief Justice of any person or institution designated by him.[6]

Section 11(3) provides only procedure with three arbitrators if the parties have not agreed on a procedure for appointing the arbitrator(s). It says that each party shall appoint one arbitrator, and the two appointed arbitrators, shall appoint the third arbitrator who shall act as the presiding arbitrator. Further Section 11(4) provides a limitation period for such appointment. It says that where the two appointed arbitrators fail to agree on the third arbitrator within 30 days from the date of their appointment, a party may make a request to the Chief Justice. The appointment will then be made by the Chief Justice or his nominee.

Challenge to the appointment of Arbitrators - If a party

*Student, Batch 11, Hidayatullah National Law University, Raipur (C.G.) INDIA

becomes aware about circumstances that give rise to justifiable doubts as to arbitrator's independence or impartiality, or missing of the qualifications agreed to by the parties as mentioned in section 12(3), the party has only recourse to it is, to challenge the appointment of arbitrator(s) before arbitrator itself.

Not only on the courts of erroneous appointment or pre-emption of default, but also on apparent default an arbitrator can be challenged. The procedure has been provided under Section 13 of the Arbitration and Conciliation Act of 1996.

Independence of Arbitral Tribunal - Independence and impartiality forms an integral part of any adjudicatory system, including ICA, as it affects the perception of administration of justice and administration of justice itself. While independence is generally understood to mean that the arbitrator has no stake or apparent conflict with the parties or the sum involved in the proceedings, impartiality means that the arbitrator allows equal opportunity to both the parties to present their case. Impartiality should be ascertained upon satisfaction of the tests laid down for 'bias', which again, can be divided under two categories, actual bias and apparent bias. As held in Locabail (UK Limited) v. Bayfield Properties Limited ("Locabail"), instances of actual bias happen when the judge is shown to have an interest in the outcome of the case which he is to decide or has decided, however, on the other hand, apparent bias, as explained in R v. Gough,means whether there is a real danger of bias.

The Supreme Court correctly held that it was important to ensure that no doubts were cast on the neutrality, impartially and independence of the arbitral tribunal. Before arriving at the reasoned conclusion, the Supreme Court referred to notable commentators and applied their view that qualification, experience and integrity should be the criteria for appointment of an arbitrator. Therefore, in the Indian scenario the CJI has been vested with a wide discretion to appoint an arbitrator in an ICA, taking into consideration all necessary factors which would preserve the integrity of the arbitration, and in essence, would not lead to any possibility of bias at a later date.

The other aspect which requires some consideration is that, although two different arbitration petitions were filed at the relevant time for seeking appointment of second as well as the presiding arbitrator, however, it took more than two years to complete the appointment process. The essence of arbitration lies in speedy resolution of a dispute, and if an arbitrator cannot be appointed at the earliest possible opportunity, the purpose would seem to be defeated.

Conclusion - Thus to conclude, India has put in place a progressive piece of legislation which is essentially based on the Model Law and the UNCITRAL Arbitration Rules. Any departure therefrom is essentially aimed at keeping court intervention at bay. India has in place a modern, an efficient Arbitration Act. There have been some decisions which are not in tune with the letter or spirit of the Act. Hopefully, these would be addressed by the judiciary in the near future and continuing popularity of arbitrations would be served by a truly efficient ADR mechanism.

References :-

1. Avtar Singh (2007). Law of Arbitration and Conciliation, Lucknow: Eastern Book Company.
2. (2010). The Arbitration and Conciliation Act, 1996, Mumbai: Current Publications.
3. Garner, B. (2004). Black's Law Dictionary, London: Thomson West.

Governments, legislations -

1. The Arbitration and Conciliation Act, 1996.
2. English Arbitration Act, 1934
3. Arbitration Act, 1940
4. UNICTRAL Model

Web Sites -

1. Available on http://www.google.com
2. Available on http://www.legalservicesindia.com
3. Available on http://www.britannica.com

Footnotes -

1. Garner, B., Black's Law Dictionary, Thomson West, London, 2004, 8th ed., 113.
2. Section 2(4) says that an arbitration under any enactment will have the effect as if it were pursuant to an arbitration agreement.
3. An observation in Irrigation Deptt, Govt of Orissa v G.C. Roy, (1992) I SCC 508: AIR 1992 SC 732: AIR 1992 SCW 389 affirming the decision in Secy, Govt of Orissa, Irrigation Deptt v Raghunath Mohapatra, AIR 1985 Ori 182.
4. BSNL v Subash Chandra Kanchan, (2006) 8 SCC 279: AIR 2006 SC 3335, letter appointing an arbitrator has to be communicated to the party concerned. No such communication was sent within time. The party having the right to appoint lost it. The other party obtained the right to such appointment through Chief Justice.
5. Bell Houses Assn (P) Ltd v GM, Southern Rly, Madras, AIR 2001 Ker 163.
6. G. Premier Trading (P) Ltd v Ashoka Alloys Ltd, AIR 1999 Del 83.

****

Higher Education In India And Its Challenges

Neeti Trivedi *

Abstract - The Indian higher education system has witnessed significant expansion in recent years, both in terms of the number of institutions as well as the student enrollment. The education system of India is one of the major contributors to the economic rise of India. Higher education is not just an extension of school education. It is an important and major activity in the life span of an individual that will help to mould the destiny of a nation. Recent studies revealed the overall state of Indian higher education is dismal and therefore poses a severe constraint on the supply of qualified manpower. Despite remarkable progress in reforms in economic sector, there are little reforms in higher education. The Indian higher education system is presently facing several challenges. The present paper will try to throw light on various challenges facing Higher education in India.

Introduction - India's education system has expanded exponentially over the past five decades and there has been a considerable increase in the spread of educational institutions along with enrolment at every stage. However, the issues and problems of access, equity, quality, relevance and inclusiveness in education, especially higher and professional educations are still at large.

Higher Education is extremely important for a country as it is where the professionals, scientist, lawyers, thinkers, economists, future teachers, medical professionals, researchers, entrepreneurs, industry, professionals and knowledge professionals are created, who will be both inhabiting and building a knowledge society.

The current scene of Higher Education System - The Indian higher education system has witnessed significant expansion in recent years, both in terms of the number of institutions as well as the student enrollment. The higher education sector has expanded rapidly in the country.

India is today one of the fastest developing countries of the world with the annual growth rate going above 9%. In order to sustain that rate of growth, there is need to increase the number. According to 2010 data, India's Gross Enrolment Ratio (GER) was a meager 13.8 percent, compared with the global average of around 26 percent. Australia, Russia and the U.S, to name a few examples, have GERs upwards of 75 percent. Although the Ministry of Human Resources & Development had set a target of a 30 percent GER for India by 2020, that target is unlikely to meet. At the current rate of GER growth, India is looking at a GER growth, India is looking at a GER of around 19 percent.

Indian higher education has grown by 20% in one year and added more than 5000 colleges to the system. Likewise, gross enrollment ratio grew from 12.5% in 2007-08 to 17.3% in 2009-10. India's target of doubling the gross enrolment ratio (GER) in higher education by 2020 will come at a price of Rs9.5 lakh crore and require an additional 10,510 technical institutions, 15,530 colleges and 521 universities. GER is the number of actual students as a share of all potential students. The human resource development (HRD) ministry has set a goal of doubling GER to 30% by 2020 from the current 15%. The ratio was approximately 12% in 2008-09- only a fourth of the average GER in developed countries (54.6%), even worse than developing countries in transition, which have 36.5%.

The education system of India is one of the major contributors to the economic rise of India. There is no doubt that higher education has made a significant contribution to economic development, social progress and political democracy in independent India.

Challenges - One of the major challenges is to enhance the access to higher education. The state has a major role to play in this regard. Besides increasing investment and opening new colleges and universities, it has to create a proper regulatory environment where good quality private service providers are attracted. There are many basic problems facing higher education in India which include inadequate infrastructure and facilities, large vacancies in faculty positions and poor faculty thereof, low student enrolment rate, outmoded teaching methods, declining research standards, overcrowded classrooms and widespread geographic, income, gender, and ethnic imbalances.

Following are identified as specific challenges/problems of higher education in India that need to be addressed.

A. Issue of Access and Equity - Access to higher education has remained poor despite the massive expansion of the sector in the country. GER has risen to around 12% in recent times but the goal is to increase it to 15% by the end of 11^{th} five year plan (2007-12) and then to 20% by the year 2015 to achieve critical mass. Expansion of higher

* Research Scholar (Education) Banasthali Vidhyapeeth University (Raj.) INDIA

education is particularly rapid in the last two decades. The primary responsibility of increasing the access lies with the Government.

Students from rural schools are often in a position of disadvantage when it comes to seeking admission in good urban colleges. There are so many people in various parts of country which are still out of reach. The children of rural people remain at disadvantage, as they are obliged to study in schools and colleges having poor facilities. Therefore, they are unable to compete with their urban counterparts.

B. Privatization and Cost Recovery - Education has become an attractive area of commerce for doing lucrative business. Most of the private colleges have inadequate infrastructure, insufficient and unqualified or under qualified staff. Teachers are not paid what they are entitled to. Most of the teachers have no competence in ICTs, nor do they have any motivation for getting the necessary skills. In private institutes teachers have no security of job and they are "hired and fired" on the whims of the college owner.

C. Students Fees and Cost Recovery - Traditionally, tuition was almost free; subsequently it was the major component in total fees. Now, it is one of the charges in a plethora of fees levied by institutions. High fees in both 'aided' and 'unaided' courses affects equity, the poorer sections simply cannot afford high fees. In India and several other developing nations, Universities and colleges have started generating high percentage of revenues from various student fees. In case, self-financed courses, fees cover 100% of the cost and sometimes even more. Even in public funded Universities and colleges in India, fees have been hiked. In professional education, the fee may be even higher because these courses lead to higher personal economic returns. But, how to accommodate those who cannot pay is a million dollar question. This is an important issue requiring an intensive national debate till a workable solution is found.

D. Regulatory Aspects of Higher Education - Regulation of higher education system has been a cause of concern for a long time. India inherited a British legacy of affiliating type of colleges. Over a period, fewer new Universities have come up, however, number of colleges have increased manifolds. The huge quantitative expansion has taken place at the cost of quality. As a result, some of the older universities such as Pune, Mumbai, and Delhi have more than 500 affiliated colleges. Education is on the concurrent list and hence it also becomes a state subject. Realizing this opportunity, some states allowed setting up of large numbers of private universities without proper infrastructure and/or manpower.

E. Internationalization of Higher Education - One can ascribe various reasons why students chose to abroad for higher studies. A certain specialized course may not be available within the country and hence some students may seek out a foreign land where this is offered a 'push' factor. Some of the best known universities and institutes attract learners from far and wide. Many IIT graduates, well trained in technology, have chosen not to contribute their skills to the burgeoning technology sector in India, perhaps half leave the country immediately upon graduation to pursue advanced studies abroad, and most do not return.

F. ICT in Higher education - The effective integration of ICTs into the educational system is a complex, multifaceted process that involves not just technology-indeed given enough initial capital, getting the technology is the easiest part- but also curriculum and pedagogy, institutional readiness, teacher competencies, and long-term financing, among others.

G. Other - There are major challenges of the Indian higher education are five areas critical to making the Indian Higher Education system that financial innovation, innovation use of information and communication technology(ICT), reinvigorating research, thrust on vocational education and training (VET), and regulatory reforms are potential game changer. Very low per capital spends on higher education India. Education is become a seller's market and everybody wants to get more profit rather than the quality education.

Research in higher education institutions is at its lowest ebb. There is an inadequate and diminishing financial support for higher education from the government and from society. Many colleges established in rural areas are non-viable, are under-enrolled and have extremely poor infrastructure and facilities with just a few teachers. Also one more factor that causes challenges is the plagiarism in research work. The quality of research paper is judged by the rating of the journal wherein it is published. Publications impact is measured through citation per paper. In this context India ranks 21st in the terms of research papers in science, but 119th in terms of research papers of any worthwhile contribution.

According to a study only 25% of engineering graduates are directly employable (Infosys, and IT giant, last year sorted through 1.3 million applicants only to find that around two percent were qualified for jobs). Quality of education delivered in most institutions is very poor. While India has some institutions of global repute delivering quality education, such as IIMs and IITs, we do not have enough of them. It has very narrow range of course options that are offered and education is a seller's market, where is no scope of incentive to provide quality education. There is clearly a lack of educated educators and teaching is not an attractive profession. It's a last choice in terms of career. Number of PhDs produced each year is very low.

There are many basic problems facing higher education in India today. These include inadequate infrastructure and facilities, large vacancies in faculty positions and poor faculty thereof, low student enrolment rate, outmoded teaching methods, declining research standards, overcrowded classrooms and widespread geographic, income, gender and ethnic imbalance.

Central government prepares policies and plan while responsibility of state government is run those policies on ground. There is always increase in the fund for the education system but never implemented in that area. Government tries to make different policies which are implemented but quality

never checked. Majority of fund goes in the pockets of officials working for this. There is vast need to improve the quality and standards.

Conclusion - It is also important that the way attempts have been made to reform secondary level education in schools, higher education needs to be reformed too. It is high time that universities cater to the growing demand of students or else this human resource boon will soon prove to be population bane for the economy. The time now is to modernize our education system so that our country can get much more technically graduated people which can help our country to developed state. Today's youth always try to go foreign for his higher education. We have to stop this brain drain so as avoid students to run away from country. Government came and goes but system remains intact. Students' fees have to be kept low so that equity and access are not hit.

References :-

1. Chauhan, C.P.S.(). Modern Indian Education: Policies, Progress and Problems. New Delhi: Kanishka Publishers and Distributors.
2. Dhir, R.N. (2006). Higher Education. Chandigarh: Abhishek Publications.
3. Mehta, R. (2004). Crisis in Higher Education: Role Analysis of Teachers in a University System. Delhi: Kalpaz Publications.
4. Nangi, S.B.(2009). Higher Education. New Delhi: APH Publishing Corporation.
5. Singh, U.K & Sudarshan, K.N. (2006). Higher Education. New Delhi: Discovery Publishing House.
6. Vellymalay, S. (2010). Parental Involvement in Children's Education: Does parents' Education Level Really Matters?. European Journal of Social Sciences. Vol16(3).Victoria.UK. Retrieved 30th May 2013 http://www.europeanjournalofsocialsciences.com/

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) Oct. to December 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

मन्दसौर जिले के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के 10+2 स्तर के बालक-बालिका के अर्थशास्त्र विषय में उपलब्धि स्तर का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. निशा महाराणा * संजय डागर **

शोध सारांश - प्रस्तुत शोध में मंदसौर जिले के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के 10+2 में अध्ययनरत बालक-बालिका में अर्थशास्त्र विषय के अन्तर्गत उपलब्धि स्तर का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। शोध के लिये मंदसौर जिले के ग्रामीण विद्यालय एवं शहरी विद्यालय के कुल 50 विद्यार्थियों को न्यादर्श के रूप में चयनित किया गया हैं। प्रदत्तों के संकलन के लिये शोधकर्ता द्वारा अर्थशास्त्र विषय से संबंधित मानदण्ड परीक्षण का उपयोग किया गया। इस मानदण्ड परीक्षण में 50 बहुविकल्पीय प्रश्नों को शामिल किया गया। शोध परिणामों से प्राप्त हुआ की मंदसौर जिले के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों में अर्थशास्त्र विषय संबंधी उपलब्धि स्तर में सार्थक अंतर है। ग्रामीण विद्यार्थियों के अर्थशास्त्र विषय में उपलब्धि स्तर शहरी विद्यार्थियों की अर्थशास्त्र विषय में उपलब्धि स्तर की तुलना में ज्यादा पाया गया।

प्रस्तावना - अर्थशास्त्र- साधारण जीवन व्यवसाय में मनुष्य की क्रियाओं का अध्ययन है, यह इस बात का पता लगाता है कि मनुष्य किस प्रकार अपनी आय प्राप्त करता है, और किस प्रकार व्यय करता है, यह मनुष्य की क्रियाओं के अध्ययन का एक भाग है। सामाजिक दृष्टि से प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे से सम्बधित है क्योंकि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, अर्थशास्त्र इन्हीं सामाजिक रूप से सम्बधित मनुष्य की आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन करता है। प्रत्येक प्राणी की कुछ न कुछ आवश्यकता होती है, चाहे वे मनुष्य हो या पशु-पक्षी सभी अपनी भूख को शांत करने के लिये प्रयास करते हैं, सभी को आहार की आवश्यकता होती है। परन्तु इन सब में मनुष्य ने अधिक मानसिक प्रगति की है। मनुष्य अपनी भौतिक, शारीरिक ,मानसिक, नैतिक और आध्यात्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति विचार और चिन्तन द्वारा करता है। साधनों के सीमित होने के कारण मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये भिन्न-भिन्न कार्य करता है। इन विभिन्न कार्यो के सम्बन्ध में जो विभिन्न प्रकार की समस्याऍ उत्पन्न होती है, उन्हें आर्थिक समस्याऍ कहते हैं। ब्रिटिश अर्थशास्त्री अलफ्रेड मार्शल ने इस विषय को परिभाषित करते हुए इसे मनुष्य जाति के रोजमर्रा के जीवन का अध्ययन बताया है। मार्शल ने पाया था कि समाज में जो कुछ भी घट रहा है, उसके पीछे आर्थिक शक्तियाँ हुआ करती हैं, मार्शल के अनुसार अर्थशास्त्र के अध्ययन का ध्येय प्रथमत: ज्ञान के लिये ज्ञान प्राप्त करना है और दूसरे व्यवहारिक जीवन विशेषत: मानसिक जीवन में मनुष्य के पथ को प्रशस्त करना है। इसीलिए समाज को समझने और इसे बेहतर बनाने के लिए आर्थिक आधार को समझने की आवश्यकता है। यद्यपि हमारे देश के विद्यालयों में अर्थशास्त्र का अध्ययन कराया जाता है, परन्तु विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों को जो आर्थिक नियम एवं सिद्धान्तों के बारे में बताया जाता है, वे परिस्थितियों के अनुकूल नहीं होते हैं। प्राचीन काल में भारत चाहे कितना भी सम्पन्न एवं समुन्नत रहा हो, परन्तु मध्यकाल से इसकी प्रगति अवरूद्ध ही नहीं वरन् यह बहुत पिछड़ गया किन्तु अब पुन: भारत आर्थिक विकास की ओर अग्रसर हो रहा है, इस समय उसके सामने दरिद्रता, शोषण, उद्योग-धंधों की हीन दशा, जनाधिक्य, राष्ट्रीय चरित्र का अभाव आदि जटिल समस्याऍ है। भारत की अधिकांश जनता कठिन परिश्रम करने के उपरान्त भी मनोवांचित ढ़ग से भरपेट भोजन प्राप्त नही कर पाते है। देश में कभी अनावृष्टि, कभी अतिवृष्टि, कभी अल्पवृष्टि के कारण सिंचाई के अपर्याप्त साधनों के कारण पर्याप्त उत्पादन नहीं हो पाता है। औद्योगिक दृष्टि से भी भारत का स्थान बहुत उच्च नहीं है, अत: देश की इन जटिल समस्याओं के सुलझाने, राष्ट्र की निर्धनता के निवारण तथा देश के आर्थिक विकास के लिये अर्थशास्त्र के विषय का ज्ञान दैनिक जीवन में परमआवश्यक है।

यदि शिक्षा के उपर्युक्त लक्ष्यों को ध्यानपूर्वक देखा जाये तो प्रतीत होगा कि ये लक्ष्य किसी एक विशिष्ट विषय के अध्ययन से प्राप्त नही किये जा सकते हैं फिर भी इनकी प्राप्ति में अर्थशास्त्र बहुत ही सहायक है। मनुष्य को अपनी जीविका चलाने योग्य बनाने में अर्थशास्त्र की महत्वपूर्ण भूमिका होती है, क्योंकि इस शास्त्र का सम्बंध वस्तुओं और अवसर के चयन से है। व्यक्ति अपने धर्म को सफलता पूर्वक तभी निभा सकता है, जब उसकी मौलिक आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो जायेगी और इन मौलिक एवं आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति में अर्थशास्त्र का ज्ञान बड़ा लाभप्रद है। यहॉ तक की विद्यार्थियों की अन्तर्निहित शक्तियों के विकास में भी इसका महत्वपूर्ण स्थान है। बालक के व्यक्तित्व का तब तक सम्पूर्ण विकास नहीं हो सकेगा जब तक कि उसका आर्थिक विकास ठीक प्रकार से विकसित नहीं हो जाता है।

उपलब्धि-एक निश्चित पाठ्यक्रम के शिक्षण के पश्चात इसमें विद्यार्थी के अर्जित ज्ञान की प्राप्ति को उपलब्धि कहा जाता है। विभिन्न कक्षाओं के लिये पाठ्यक्रम में निर्धारित विषय-वस्तु का अध्ययन वाले अध्यापक के लिये यह आवश्यक हो जाता है कि यह जानने का प्रयास करे कि उनके विद्यार्थियों की क्या उपलब्धि हुई है अर्थात विषय संबंधी ज्ञान किस मात्रा में प्राप्त कर लिया है। उपलब्धि परीक्षण वह अभिकल्प है, जो विद्यार्थी द्वारा ग्रहण किये गये ज्ञान एवं कुशलता का मापन करता है। इस परीक्षण द्वारा विद्यार्थियों के ज्ञान या कौशल के किसी विशेष क्षेत्र में अर्जित निपुणता के वर्तमान स्थिति के बारे में पता लगाया जाता है।

बालक की प्रगति की जॉच का आरम्भ तो शैशवकाल से ही हो जाता है। वह समय-समय पर अपनी समस्याओं को हल करता है। कठिन परिस्थितियों का सामना करता है, सच तो यह है कि प्रत्येक बालक को जीवनभर न जाने कितनी परीक्षाओं से गुजरना पडता है, कही सफलता प्राप्त होती है तो कहीं

* प्राचार्य, सरस्वती शिक्षा महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, सरस्वती शिक्षा महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत

असफलता। विद्यालय की विभिन्न कक्षाओं में अनेक प्रकार के विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करने के लिये आते हैं, वे सभी समान मानसिक योग्यताओं से सम्पन्न न होने के कारण समय की एक अवधि में विभिन्नता और कुशलताओं में अलग-अलग प्रगति करते हैं। उनकी इसी प्रगति या उपलब्धि का मापन करने के लिये शोधकर्ता के द्वारा प्रस्तुत शोध चयन किया गया।

समस्या कथन – 'मन्दसौर जिले के ग्रामीण एव शहरी क्षेत्र के 10+2 में अध्ययनरत बालक-बालिका के अर्थशास्त्र विषय में उपलब्धि स्तर का तुलनात्मक अध्ययन '

उद्देश्य –

1. ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों का अर्थशास्त्र विषय में उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के बालकों का अर्थशास्त्र विषय संबंधी उपलब्धि स्तर का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के बालिकाओं का अर्थशास्त्र विषय संबंधी उपलब्धि स्तर का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पना –

1. ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों का अर्थशास्त्र विषय संबंधी उपलब्धि स्तर में कोई सार्थक अन्तर नहीं होगा।
2. ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के बालकों का अर्थशास्त्र विषय संबंधी उपलब्धि स्तर में कोई सार्थक अन्तर नहीं होगा।
3. ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के बालिकाओं का अर्थशास्त्र विषय संबंधी उपलब्धि स्तर में कोई सार्थक अन्तर नहीं होगा।

प्रविधि –

1. न्यादर्श – प्रस्तुत शोध कार्य में जनसंख्या के रूप में मंदसौर जिले के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के 10+2 में अध्ययनरत विद्यार्थियों को शामिल किया गया था। शोध हेतु न्यादर्श के लिये यादृच्छिक न्यादर्श चयनित तकनीक अपनायी गई। शोध में अर्थशास्त्र विषय संबंधी उपलब्धि स्तर के तुलनात्मक अध्ययन के लिये ग्रामीण क्षेत्र के 10+2 में अध्ययनरत 15 बालक तथा 10 बालिका एवं शहरी क्षेत्र के 10+2 में अध्ययनरत 12 बालक तथा 13 बालिका का न्यादर्श के रूप में (कुल 50) का चयन किया गया। उपरोक्त सभी न्यादर्श माध्यमिक शिक्षा मंडल भोपाल से संबद्धता प्राप्त उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के सत्र 2013-14 के नियमित विद्यार्थी थे।

2. उपकरण – ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों का अर्थशास्त्र विषय संबंधी उपलब्धि स्तर के परीक्षण के लिये शोधकर्ता द्वारा निर्मित अर्थशास्त्र विषय से संबंधित मानदण्ड परीक्षण का उपयोग किया गया। इस मानदण्ड परीक्षण में 50 बहुविकल्पीय प्रश्नों को शामिल किया गया। जिसके कुल प्राप्तांक 50 थे। यह मानदण्ड परीक्षण अर्थशास्त्र के नियमों, सिद्धान्तों, विभागों एवं क्षेत्रों से संबंधित व्यवहारिक ज्ञान पर आधारित था।

प्रदत्त संकलन की विधि – प्रस्तुत शोध के अध्ययन हेतु प्रदत्तों का संकलन यादृच्छिक न्यादर्श चयनित तकनीक द्वारा चयनित न्यादर्श से किया गया। चयनित उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के प्राचार्य से शोध कार्य हेतु अनुमति ली गई। तत्पश्चात शोधकर्ता द्वारा विद्यार्थियों को शोध के उद्देश्य बताया गया तथा उन्हें अर्थशास्त्र विषय से संबंधित मानदण्ड परीक्षण हल करने हेतु दिया गया। अन्त में सभी विद्यार्थियों से मानदण्ड परीक्षण प्राप्त कर उत्तर तालिका से मिलान कर अंक प्रदान किए गए। दोनों समूहों के माध्यों की तुलना करने के लिये स्वतंत्र टी. टेस्ट का उपयोग किया गया।

परिणाम एवं विवेचना – ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों का अर्थशास्त्र विषय संबंधी उपलब्धि स्तर का सारांश – प्रस्तुत शोध का प्रथम उद्देश्य था 'ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के विद्यालयों मे अध्ययनरत विद्यार्थियों का अर्थशास्त्र विषय में उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना' इससे संबंधित प्रदत्तों का विश्लेषण स्वतंत्र टी. परीक्षण की सहायता से किया गया। इसके परिणाम तालिका 1 में प्रस्तुत किये गये हैं-

तालिका 1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर) – तालिका 1 से विदित है कि अर्थशास्त्र में उपलब्धि का t मान 7.78 है जो df =48 के लिये 0.01 सार्थकता स्तर पर सार्थक है। अत: शून्य परिकल्पना 'ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों का अर्थशास्त्र विषय संबंधी उपलब्धि स्तर में कोई सार्थक अन्तर नही होगा' निरस्त की जाती है। अत: कहा जा सकता है, कि ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों का अर्थशास्त्र विषय संबंधी उपलब्धि स्तर शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों से भिन्न हैं।

आगे ग्रामीण विद्यार्थियों के अर्थशास्त्र में उपलब्धि के माध्य फलांक का मान 43.88 है जो शहरी विद्यार्थियों के अर्थशास्त्र में उपलब्धि के माध्य फलांक 32.64 से सार्थक रूप से ज्यादा है, अर्थात ग्रामीण विद्यार्थियों का अर्थशास्त्र में उपलब्धि फलांक शहरी विद्यार्थियों की तुलना में अधिक है, निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि ग्रामीण विद्यार्थियों की अर्थशास्त्र में उपलब्धि फलांक शहरी विद्यार्थियों की अर्थशास्त्र में उपलब्धि फलांक से सार्थक रूप से ज्यादा है।

ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों का अर्थशास्त्र विषय में प्राप्तांकों का ग्राफ **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

ग्रामीण व शहरी स्तर के बालकों का अर्थशास्त्र विषय संबंधी उपलब्धि स्तर का सारांश – प्रस्तुत शोध का द्वितीय उद्देश्य था 'ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के विद्यालयों मे अध्ययनरत बालकों का अर्थशास्त्र विषय संबंधी उपलब्धि स्तर का तुलनात्मक अध्ययनकरना' इससे संबंधित प्रदत्तों का विश्लेषण स्वतंत्र टी. परीक्षण की सहायता से किया गया। इसके परिणाम तालिका 2 में प्रस्तुत किये गये हैं-

तालिका 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर) – तालिका 2 से विदित है कि अर्थशास्त्र में उपलब्धि का t मान 6.74 है जो df=25 के लिये 0.01 सार्थकता स्तर पर सार्थक है। अत: शून्य परिकल्पना ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के बालको का अर्थशास्त्र विषय संबंधी उपलब्धि स्तर में कोई सार्थक अन्तर नहीं होगा निरस्त की जाती है, अत: कहा जा सकता है कि ग्रामीण क्षेत्र के बालकों का अर्थशास्त्र विषय संबंधी उपलब्धि स्तर शहरी क्षेत्र के बालकों से भिन्न है।

आगे ग्रामीण बालकों के अर्थशास्त्र में उपलब्धि के माध्य फलांक का मान 43.60 है जो शहरी बालकों के अर्थशास्त्र में उपलब्धि के माध्य फलांक 30.08 से सार्थक रूप से ज्यादा है अर्थात ग्रामीण बालको का अर्थशास्त्र में उपलब्धि फलांक शहरी बालकों की तुलना में अधिक है, निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि ग्रामीण बालकों की अर्थशास्त्र में उपलब्धि फलांक शहरी बालकों की अर्थशास्त्र में उपलब्धि फलांक में सार्थक रूप से ज्यादा है।

ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के बालक का अर्थशास्त्र विषय में प्राप्तांकों का ग्राफ **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

ग्रामीण व शहरी स्तर के बालिकाओं का अर्थशास्त्र विषय संबंधी उपलब्धि स्तर का सारांश – प्रस्तुत शोध का तृतीय उद्देश्य था 'ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के विद्यालयों मे अध्ययनरत बालिकाओं का अर्थशास्त्र विषय संबंधि उपलब्धि स्तर का तुलनात्मक अध्ययनकरना' इससे संबंधित प्रदत्तों का विश्लेषण स्वतंत्र टी. परीक्षण की सहायता से किया गया। इसके परिणाम

तालिका 3 में प्रस्तुत किये गये हैं –

तालिका 3 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर) – तालिका 3 से विदित है कि अर्थशास्त्र में उपलब्धि का t मान 4.64 है जो df = 21 के लिये 0.01 सार्थकता स्तर पर सार्थक है, अत: शून्य परिकल्पना 'ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के बालिकाओं का अर्थशास्त्र विषय संबंधी उपलब्धि स्तर में कोई सार्थक अन्तर नही होगा' निरस्त की जाती है, अत: कहा जा सकता है कि ग्रामीण क्षेत्र के बालिकाओं का अर्थशास्त्र विषय संबंधी उपलब्धि स्तर शहरी क्षेत्र के बालिकाओं से भिन्न है।

आगे ग्रामीण बालिकाओं के अर्थशास्त्र में उपलब्धि के माध्य फलांक का मान 44.00 है जो शहरी बालिकाओं के अर्थशास्त्र में उपलब्धि के माध्य फलांक 35.00 से सार्थक रूप से ज्यादा है, अर्थात ग्रामीण बालिकाओं का अर्थशास्त्र में उपलब्धि फलांक शहरी बालिकाओं की तुलना में अधिक है। निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि ग्रामीण बालिकाओं की अर्थशास्त्र में उपलब्धि फलांक शहरी बालिकाओं की अर्थशास्त्र में उपलब्धि फलांक से सार्थक रूप से ज्यादा है।

ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के बालिकाओं का अर्थशास्त्र विषय में प्राप्तांकों का ग्राफ **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

प्रस्तुत शोध के निष्कर्ष थे –

1. मन्दसौर जिले के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों के अर्थशास्त्र विषय में उपलब्धि स्तर में सार्थक अंतर पाया गया। ग्रामीण विद्यार्थियों का उपलब्धि स्तर शहरी विद्यार्थियों की अपेक्षा ज्यादा था।
2. मन्दसौर जिले के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के बालको के अर्थशास्त्र विषय में उपलब्धि स्तर में सार्थक अंतर पाया गया। ग्रामीण बालकों का उपलब्धि स्तर शहरी बालकों की अपेक्षा ज्यादा था।
3. मन्दसौर जिले के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के बालिकाओ के अर्थशास्त्र विषय में उपलब्धि स्तर में सार्थक अंतर पाया गया। ग्रामीण बालिकाओं का उपलब्धि स्तर शहरी बालिकाओं की अपेक्षा ज्यादा था।

शैक्षिक निहितार्थ –

1. शहरी विद्यार्थी–प्रस्तुत शोध के प्राप्त परिणामो के अध्ययनसे शहरी विद्यार्थियों को आत्मावलोकन का मौका मिल सकेगा। वे ग्रामीण विद्यार्थियों के अध्ययन के तरीके को अपना कर अर्थशास्त्र विषय में उपलब्धि स्तर को बढ़ा पाने में सफल हो सकेंगे।
2. शहरी शिक्षक–प्रस्तुत शोध के प्राप्त परिणामों के अध्ययनसे शहरी शिक्षक ग्रामीण शिक्षक के द्वारा अपनायी गई शिक्षण पद्धतियों को अपनाकर, शहरी क्षेत्रों के विद्यार्थियों का अर्थशास्त्र में उपलब्धि को बढ़ानें का प्रयास करेंगे।
3. माता–पिता– प्रस्तुत शोध के प्राप्त परिणामों के अध्ययनसे शहरी माता–पिता भी जागरूक होकर अपने बच्चों को अध्ययन के लिये प्रोत्साहित करेंगे ताकि उनकी उपलब्धि अर्थशास्त्र में उच्च हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. त्यागी गुरसरनदास, 2009, अर्थशास्त्र शिक्षण, आगरा: श्री विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।
2. अग्रवान,शान्ता, 2007, शिक्षा मनोविज्ञान ,मेरठ: आर.लाल बुक डिपों मेरठ।
3. पाठक,पी.डी,2012, शिक्षा मनोविज्ञान, आगरा: अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा।
4. भटनागर,सुरेश 2007 शिक्षा मनोविज्ञान, मेरठ: आर.लाल बुक डिपों मेरठ।
5. डागर संजय वर्ष, 2011–2012, 'शहरी एवं ग्रामीण स्तर के 10+2 स्तर के कला सकांय में अर्थशास्त्र विषय के अन्तर्गत विद्यार्थियों की उपलब्धि स्तर का तुलनात्मक अध्ययन'महाराजा शिक्षा महाविद्यालय विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन म.प्र.।
6. जोशी जयश्री वर्ष, 2010–2011, 'उच्चतर माध्यमिक स्तर पर अर्थशास्त्र विषय के पाठ्यक्रम का विश्लेषणात्मक अध्ययन' शासकीय शिक्षा महाविद्यालय,विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन म.प्र.।
7. देवले, संदीप सत्र, 1995–1996, शासकीय तथा अशासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में कक्षा 11वी विज्ञान समूह में अध्ययनरत छात्रों की सामान्य मानसिक योग्यता तथा विद्यालयीन उपलब्धियों का तुलनात्मक अध्ययन'शासकीय शिक्षा महाविद्यालय,विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन म.प्र.।
8. बडेरा ममता सत्र्,1999, 'शासकीय एवं अशासकीय विद्यालय में कक्षा 11वी में अध्ययनरत छात्र–छात्राओं के गणित विषय के स्तर का तुलनात्मक अध्ययन' शासकीय शिक्षा महाविद्यालय,विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन म.प्र.।
9. गडलिंग, मंजु, 2004, बी.एड.के पुरुष और महिला प्रशिक्षणार्थियों का संवेगात्मक बुद्धि और आकांक्षा स्तर पर तुलनात्मक अध्ययन, अप्रकाशित एम.एड. लघु शोध प्रबंध,शिक्षा अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर।
10. जोशी, शोभा, 1970, केन्द्रीय विद्यालय संगठन की शिक्षा प्रणाली का परम्परागत विद्यालयों की शिक्षा प्रणाली से तुलनात्मक अध्ययन, अप्रकाशित एम.एड.लघु शोध प्रबंध, शिक्षा अध्ययनशाला, इन्दौर विश्वविद्यालय, इन्दौर।

तालिका 1

आवासीय पृष्ठभूमि	N	M	S.D.	t-Value	df	Inference
ग्रामीण विद्यार्थियों के प्राप्तांक	25	43.88	2.90	7.78*	48	Significant
शहरी विद्यार्थियों के प्राप्तांक	25	32.64	6.61			

* 0.01 सार्थकता स्तर पर सार्थक

ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों का अर्थशास्त्र विषय में प्राप्तांकों का ग्राफ

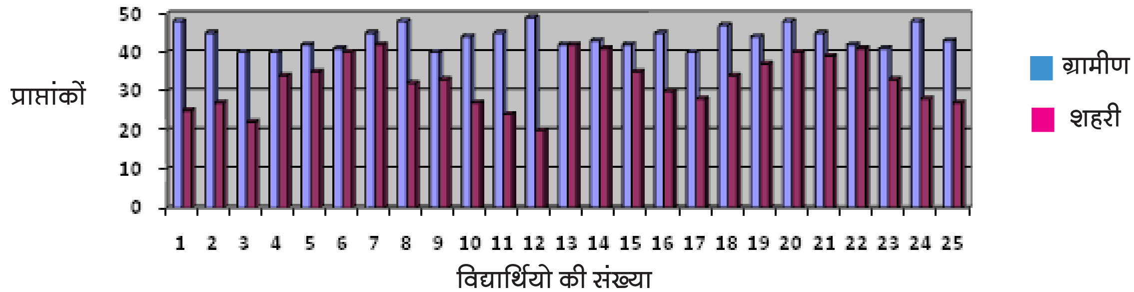

तालिका 2

आवासीय पृष्ठभूमि	N	M	S.D.	t-Value	df	Inference
ग्रामीण विद्यार्थियों के प्राप्तांक	15	43.60	3.01	6.74*	25	Significant
शहरी विद्यार्थियों के प्राप्तांक	12	30.08	7.01			

*0.01सार्थकता स्तर पर सार्थक

ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के बालक का अर्थशास्त्र विषय में प्राप्तांकों का ग्राफ

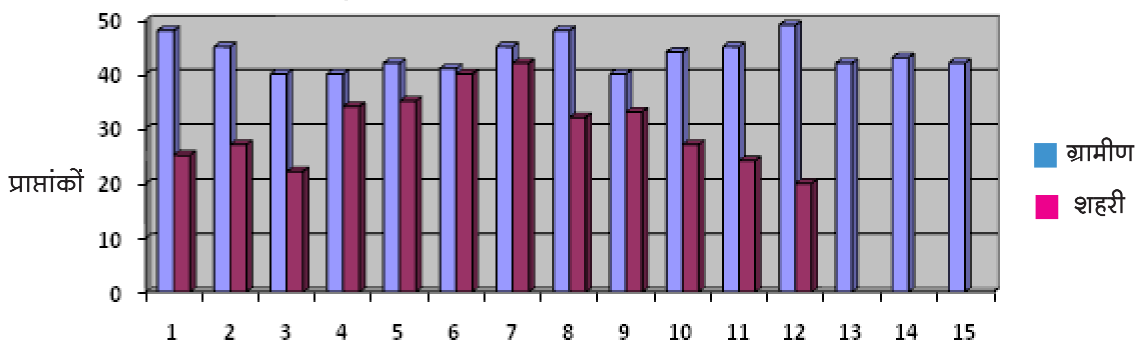

तालिका 3

आवासीय पृष्ठभूमि	N	M	S.D.	t-Value	df	Inference
ग्रामीण विद्यार्थियों के प्राप्तांक	10	44.00	3.12	4.64*	21	Significant
शहरी विद्यार्थियों के प्राप्तांक	13	35.00	5.46			

*0.01सार्थकता स्तर पर सार्थक

ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के बालिकाओं का अर्थशास्त्र विषय में प्राप्तांकों का ग्राफ

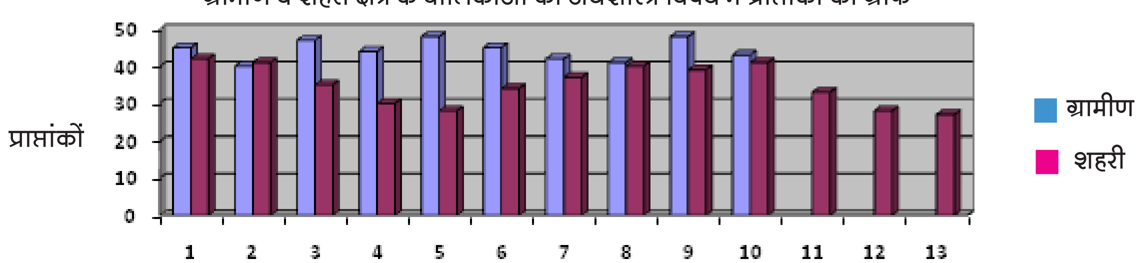

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) Oct. to December 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

गतिविधि आधारित शिक्षण से बच्चों में गणित की मूलभूत दक्षताऐं विकसित करना

प्रमोद कुमार सेठिया * डॉ. महेश कुमार तिवारी **

शोध सारांश – अधिकांश शालाओं में अनुवीक्षण के दौरान अनुभव में आया कि छात्रों में गणित के प्रति आत्मविश्वास की कमी दिखाई पड़ती है। वे गणित शिक्षण को नीरस, बोझिल एवं कठिन विषय मानते हैं। स्वयं को पूरी तरह दक्ष नहीं मानते हैं। इसका कारण अवधारणाओं को समझने पर जोर कम व रटने पर जोर ज्यादा है। बच्चों को 'समझ का स्वाद' देने के प्रयास अत्यल्प हैं। मूलभूत अवधारणाओं की समझ का अभाव बच्चों में पाया गया।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (NCERT) ने अपने दस्तावेज राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा- 2005 में गणित शिक्षण की प्रचलित प्रणालियों पर काफी चिंता व्यक्त की है।

दस्तावेज में प्राथमिक स्तर की गणित में लाभप्रद क्षमताओं के विकास, अंकज्ञान, संख्या से जुड़ी क्षमताएँ, संक्रियाएँ, माप, दशमलव, प्रतिशत की अवधारणा के साथ गणितीय सोच विकसित करने, मान्यताओं के तार्किक परिणाम निकालने एवं अमूर्त को समझने पर जोर दिया गया है।

राष्ट्रीय दस्तावेज के उद्देश्यों को पूर्ण करने के लिए शोध अध्ययन किया गया है। कक्षा 5 के चयनित न्यादर्श बच्चों में गणितीय अवधारणाओं की समझ विकसित करने के लिए डी.एड. छात्राध्यापकों की गतिविधियों में मदद ली गई। गणितीय रोचक गतिविधियों एवं सहायक शिक्षण सामग्री के माध्यम से न्यादर्श बच्चों में गणित की मूलभूत दक्षताओं का विकास हुआ एवं गणित के शिक्षण अधिगम के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने का प्रयास किया गया।

प्रस्तावना – एक शिक्षक के रूप में हमारा दायित्व है कि हम जाने कि बच्चा गणित शब्द से नफरत क्यों करता हैं ? वह गणित की कक्षा में अपने आप को खुश क्यों महसूस नहीं करता ? वह गणित की कक्षा में डरा-डरा सा क्यों रहता है ? वह अपनी गलती शिक्षक से क्यों छिपाता हैं ? प्रश्न का हल आने के बाद भी शिक्षक को क्यों नहीं दिखाता ? शिक्षक द्वारा गणित में दिये गये अभ्यास को क्यों नहीं करता ? परीक्षा शब्द से क्यों डरता हैं ? एक शिक्षक के रूप में हमारा दायित्व है कि हम उपयुक्त प्रश्नों के उत्तर खोजें तथा उनके कारणों का समाधान करें।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् ने राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 में गणित शिक्षण की प्रचलित प्रणालियों पर चिंता व्यक्त करते हुए कहा कि गणित शिक्षण का स्वरूप ऐसा बनाया जाय, जिससे बच्चे गणित से भयभीत होने के बजाय उसका आनंद उठाएँ। बच्चे महत्वपूर्ण गणित सीखें। गणित में सूत्रों व यांत्रिक प्रक्रियाओं से आगे निकलकर गणित सीखें। बच्चे गणित को ऐसा विषय माने जिस पर वे बात कर सकते हैं, सम्प्रेषण कर सकते हैं, आपस में चर्चा कर सकते हैं और वे उस पर साथ-साथ काम कर सकते हैं। बच्चे सार्थक समस्याएँ उठाएँ और उनके हल निकालें। बच्चे गणित (अंकगणित, बीजगणित, रेखागणित, त्रिकोणमिति आदि) की मूल संरचना को समझे तथा शिक्षक प्रत्येक बच्चे के साथ इस विश्वास के आधार पर काम करें कि प्रत्येक बच्चा गणित सीख सकता है।

1.1 शोध अध्ययन के उद्देश्य – प्रस्तुत शोध अध्ययन का उद्देश्य चयनित शालाओं के कक्षा 5 के बच्चों में डी.एड. छात्राध्यापकों के माध्यम से गणित की मूलभूत दक्षतायें विकसित करना है। खेल विधि, गतिविधि आधारित शिक्षण के माध्यम से गणितीकरण की अवधारणा विकसित करना है। गणित के शिक्षण अधिगम को रूचिपूर्ण, प्रभावी बनाने के लिये न्यादर्श छात्राध्यापकों में शिक्षण कौशल विकसित करना है।

1.2 समस्या कथन – डी.एड. के छात्राध्यापकों के माध्यम से चयनित शालाओं के कक्षा 5 के बच्चों में गणित विषय की मूलभूत अवधारणाएँ, संख्या की समझ एवं संक्रिया स्पष्ट करना।

1.3 शोध अध्ययन की परिकल्पना – 'गतिविधि आधारित शिक्षण से बच्चों में गणित की मूलभूत दक्षतायें (Basic Skills) विकसित हो सकेगी।'

1.4 सीमांकन – प्रस्तुत शोध अध्ययन मन्दसौर विकासखण्ड के 5 चयनित विद्यालयों के न्यादर्श 50 छात्रों तक सीमित है।

1.5 न्यादर्श – प्रस्तुत शोध अध्ययन के लिए डाइट मन्दसौर के डी.एड. प्रथम वर्ष (नियमित) के छात्राध्यापकों को एवं इन्टर्नशिप के दौरान ली जाने वाली 5 चयनित प्राथमिक शालाओं में अध्ययनरत कक्षा 5 के चयनित 50 बच्चों को न्यादर्श के रूप में लिया गया।

1.6 उपकरण – शोध समस्या के अध्ययन के लिये एक अवधारणा आधारित प्रश्नावली उपकरण के रूप में प्रयोजन में लाई गई। प्रश्नावली में 15 अवधारणाओं पर अधारित प्रश्न इस प्रकार लिये गये -

- संख्याओं की समझ पर आधारित - 10 प्रश्न
- संख्याओं की संक्रिया पर आधारित - 05 प्रश्न

1.7 कार्यप्रणाली (प्रक्रिया) –

(i) न्यादर्श के छात्रों का अवधारणा आधारित पूर्व परीक्षण लिया गया। पूर्व परीक्षण से न्यादर्श की कमजोरियों/कठिन बिन्दुओं (Hard spot) को जाना गया।

(ii) न्यादर्श के छात्रों के साथ शोधकर्ता एवं डाइट के सहयोगी छात्राध्यापकों द्वारा लगभग एक माह तक सहायक शिक्षण सामग्री के माध्यम से रोचक गतिविधि आधारित गतिविधियाँ कराई गई। गणित शिक्षण को भयमुक्त, रुचिपूर्ण बनाने का प्रयास किया गया। पूर्व परीक्षण में प्राप्त कठिन बिन्दुओं को हल करने का प्रयास किया गया। न्यादर्श में गणित शिक्षण के प्रति

* वरिष्ठ व्याख्याता, डाइट, मन्दसौर (म.प्र.) भारत
** प्राचार्य, मेवाड़ गर्ल्स कॉलेज ऑफ टीचर्स ट्रेनिंग, चित्तौड़गढ़ (राज.) भारत

सकारात्मक रूझान विकसित करने एवं दैनिक जीवन से जोड़ने हेतु निम्नांकित गतिविधियाँ की गई -

- सर्वप्रथम डी.एड. प्रथम वर्ष छात्राध्यापकों की इन्टर्नशिप हेतु आवंटित विद्यालयों का भ्रमण कर अध्ययनरत बच्चों की स्थिति ज्ञात की गई।
- छात्राध्यापकों के साथ कार्यशाला कर गणित की मूलभूत अवधारणायें विकसित करने हेतु प्रारंभिक गतिविधियाँ एवं टी.एल.एम. आधारित गतिविधियों का प्रदर्शन कर उनकी समझ स्पष्ट गई।
- छात्राध्यापकों ने चयनित शालाओं में संख्या की समझ व संक्रिया स्पष्ट करने के लिए शालाओं में उपलब्ध निम्नांकित टी.एल.एम. का उपयोग किया-

(i) परिवेशीय वस्तुएँ
(ii) कंचे, मोतीतार, मोती की माला, तिलियों के बण्डल,
(iii) अंक कार्ड, बिंदी कार्ड, अंक पाँसे, साँप सीढ़ी
(iv) एबाकस, लूप एबाकस
(v) स्थानीय मान के कार्ड, नकली नोट
(vi) पहाड़े व गिनती के चार्ट

(iii) लगभग एक माह पश्चात् न्यादर्श के छात्रों का अवधारणा आधारित पश्च परीक्षण लिया गया। पश्च परीक्षण की जाँच उपरान्त प्रदत्तों का संकलन एवं विश्लेषण कर निष्कर्ष निकाले गये।

1.8 प्रदत्तों का प्रकार एवं संकलन विश्लेषण - न्यादर्श के कक्षा 5 के छात्रों में प्राथमिक स्तर पर गणित विषय की मूलभूत अवधारणाएँ संख्या की समझ एवं संक्रिया स्पष्ट कर अधिगम उपलब्धि में सुधार हेतु क्रियात्मक अध्ययन किया गया। पूर्व एवं पश्च परीक्षण लेकर न्यादर्श के छात्रों की दक्षता प्राप्ति का प्रश्नवार विश्लेषण किया गया।

संख्या की समझ एवं उन पर संक्रिया से सम्बन्धित निम्न मूलभूत दक्षता क्षेत्र क्रियात्मक अध्ययन हेतु लिये गये -

A-1 संख्या शब्दो में लिखना
A-2 संख्या अंकों में लिखना
A-3 संख्याओं में छोटी-बड़ी की पहचान
A-6 संख्याओं को क्रम में लिखना (बढ़ते-घटते क्रम में)
A-5 सम-विषम संख्याओं की पहचान
A-4 बीच की छुटी हुई संख्यायें लिखना
A-7 इकाई, दहाई, सैकड़ा की समझ
A-8 संख्याओं के विस्तारित रूप की समझ
A-9 संख्याओं के स्थानीय मान की समझ
A-10 अंकों के स्थानीय मान व उसमें अन्तर
B-1 दो या अधिक अंकों के संख्याओं की जोड़ व इबारती सवाल की समझ
B-2 दो या अधिक अंकों के संख्याओं के घटाव व इबारती सवाल की समझ
B-3 दो संख्याओं का गुणा एवं पहाड़े की समझ
B-4 किसी संख्या में दो अंकों की संख्या का भाग व इबारती सवाल की समझ
B-5 इबारती सवाल के माध्यम से जोड़, घटाव, गुणा की समझ।

पूर्व परीक्षण व पश्च परीक्षण में दक्षता क्षेत्रवार प्राप्त उपलब्धि एवं तुलनात्मक वृद्धि को सारणी क्रमांक 1 में प्रदर्शित किया गया है।

सारणी क्रमांक 1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

दक्षता क्षेत्रवार उपलब्धि

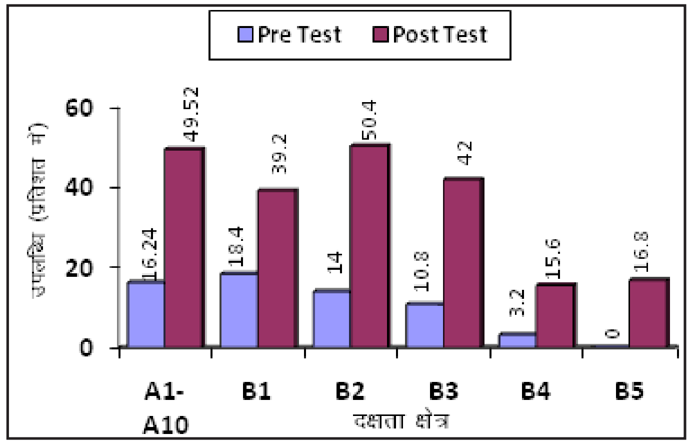

उपरोक्त ग्राफ में दक्षता क्षेत्रवार पूर्व एवं पश्च परीक्षण में प्राप्त उपलब्धि को दर्शाया गया है।

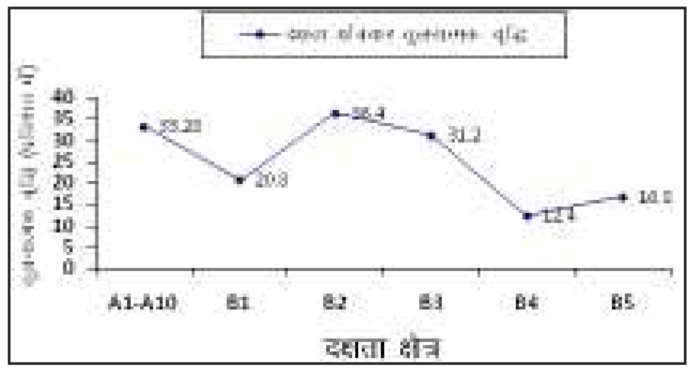

उपरोक्त ग्राफ में दक्षता क्षेत्रवार पूर्व एवं पश्च परीक्षण की तुलनात्मक वृद्धि को दर्शाया गया है।

उपर्युक्त सारणी एवं ग्राफ से स्पष्ट है कि -

(A) संख्याओं की समझ दक्षता में पूर्व परीक्षण में न्यादर्श छात्रों की उपलब्धि 16.24 प्रतिशत थी जो पश्च परीक्षण में 49.52 प्रतिशत हो गई। इस प्रकार क्रियात्मक अनुसंधान अन्तर्गत गतिविधियों के फलस्वरूप न्यादर्श के छात्रों की संख्याओं की समझ दक्षता में 33.28 प्रतिशत की वृद्धि परिलक्षित हुई।

(B) संख्याओं की जोड़ दक्षता में पूर्व परीक्षण में न्यादर्श के छात्रों की उपलब्धि 18.40 प्रतिशत थी जो पश्च परीक्षण में 39.20 प्रतिशत हो गई। तुलनात्मक रूप से 20.80 प्रतिशत की वृद्धि परिलक्षित हुई।

(C) संख्याओं की घटाव की समझ दक्षता क्षेत्र में पूर्व परीक्षण में न्यादर्श के छात्रों की उपलब्धि 14.00 प्रतिशत थी जो पश्च परीक्षण में 50.40 प्रतिशत हो गई। घटाव की समझ दक्षता में तुलनात्मक रूप से 36.40 प्रतिशत की वृद्धि परिलक्षित हुई।

(D) संख्याओं का गुणा की समझ दक्षता क्षेत्र में पूर्व परीक्षण में न्यादर्श के छात्रों की उपलब्धि 10.8 प्रतिशत थी जो पश्च परीक्षण में 42.00 प्रतिशत हो गई। संख्याओं के गुणा की समझ दक्षता क्षेत्र में तुलनात्मक रूप से 31.20 प्रतिशत की वृद्धि परिलक्षित हुई।

(E) संख्याओं के भाग की समझ दक्षता क्षेत्र में पूर्व परीक्षण में न्यादर्श के छात्रों की उपलब्धि 3.20 प्रतिशत थी जो पश्च परीक्षण में 15.60

प्रतिशत हो गई। भाग की समझ दक्षता क्षेत्र में तुलनात्मक रूप से 12.40 प्रतिशत की वृद्धि परिलक्षित हुई।

(F) इबारती सवाल की समझ दक्षता क्षेत्र में पूर्व परीक्षण में न्यादर्श के छात्रों की उपलब्धि 0.0 प्रतिशत थी जो पश्च परीक्षण में 16.8 प्रतिशत हो गई। इबारती सवाल की समझ दक्षता क्षेत्र में तुलनात्मक रूप से 16.80 प्रतिशत की वृद्धि परिलक्षित हुई।

सारणी क्रमांक 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

नोट : A ग्रेड- 60% से अधिक, B ग्रेड- 45-59 %, C ग्रेड- 33-44%, D ग्रेड- 0-32%

पश्च परीक्षण के आंकड़ों से स्पष्ट है कि 26 प्रतिशत न्यादर्श ए ग्रेड में, 20 प्रतिशत छात्र बी ग्रेड में एवं 30 प्रतिशत छात्र सी ग्रेड में आये। डी ग्रेड के न्यादर्श छात्रों की संख्या में 66 प्रतिशत की कमी हुई। स्पष्टत: ए, बी व सी ग्रेड में न्यादर्श छात्रों की संख्या में वृद्धि होना एवं डी ग्रेड के न्यादर्श छात्रों की संख्या में कमी होना क्रियात्मक शोध की उपलब्धि प्रदर्शित करता है।

न्यादर्श के छात्रों की दक्षता प्राप्ति की स्थिति से स्पष्ट है कि ग्रेड सुधार वाले छात्रों की संख्या में 66 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

1.09 परिकल्पनाओं का सत्यापन - उपर्युक्त प्रदत्तों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि पश्च परीक्षण में संख्या की समझ व संक्रिया दक्षता क्षेत्रों में तुलनात्मक रूप से न्यादर्श के छात्रों की उपलब्धि में वृद्धि परिलक्षित हुई है। गणितीय गतिविधियों, सहायक शिक्षण सामग्री की उपयोगिता, अभ्यास की बारम्बारता के उपरान्त न्यादर्श के छात्रों की उपलब्धि में वृद्धि होना शोध अध्ययन के उद्देश्यों की प्राप्ति को दर्शाता है।

अतएव विश्लेषण से प्राप्त प्रदत्ता परिकल्पनाओं का सत्यापन करते हैं।

1.10 निष्कर्ष - प्रस्तुत क्रियात्मक अध्ययन में न्यादर्श के कक्षा 5 के छात्रों का संख्या की समझ व संक्रिया दक्षता क्षेत्रों में पूर्व परीक्षण लिया गया। पूर्व परीक्षण में प्राप्त कमियों का शोधकर्ता एवं सहयोगी छात्राध्यापकों द्वारा एक माह तक गतिविधियाँ करने, गणितीय प्रक्रिया का अभ्यास कराने, कठिन अवधारणाओं को सरल, सहज रूप में स्पष्ट करने के पश्चात् पुन: अवधारणा आधारित पश्च परीक्षण लिया गया। पूर्व परीक्षण व पश्च परीक्षण के प्रदत्तों का विश्लेषण करने पर निम्नांकित निष्कर्ष प्राप्त हुए :

(i) क्रियात्मक अनुसंधान अन्तर्गत गतिविधियों के फलस्वरूप न्यादर्श के छात्रों की संख्याओं की समझ दक्षता में 33.28 प्रतिशत की वृद्धि परिलक्षित हुई।

(ii) संख्याओं की जोड़ दक्षता में तुलनात्मक रूप से 20.80 प्रतिशत की वृद्धि परिलक्षित हुई।

(iii) संख्याओं का घटाव की समझ दक्षता क्षेत्र में तुलनात्मक रूप से 36.40 प्रतिशत की वृद्धि परिलक्षित हुई।

(iv) संख्याओं का गुणा की समझ दक्षता क्षेत्र में तुलनात्मक रूप से 31.20 प्रतिशत की वृद्धि परिलक्षित हुई।

(v) संख्याओं का भाग की समझ दक्षता क्षेत्र में तुलनात्मक रूप से 12.40 प्रतिशत की वृद्धि परिलक्षित हुई।

(vi) इबारती सवाल की समझ दक्षता क्षेत्र में तुलनात्मक रूप से 16.80 प्रतिशत की वृद्धि परिलक्षित हुई।

(viii) न्यादर्श के छात्रों में ग्रेडवार उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन करने पर ए ग्रेड प्राप्त करने वाले न्यादर्श के छात्रों की संख्या में 20.00 प्रतिशत, बी ग्रेड प्राप्त करने वाले छात्रों की संख्या में 18 प्रतिशत एवं सी ग्रेड प्राप्त करने वाले छात्रों की संख्या में 30 प्रतिशत की वृद्धि परिलक्षित हुई वहीं डी ग्रेड प्राप्त करने वाले छात्रों की संख्या में 66 प्रतिशत की कमी हुई।

उपर्युक्त निष्कर्षों से स्पष्ट है कि न्यादर्श के छात्रों में गणितीय रोचक गतिविधियों, सहायक सामग्री के उपयोग के माध्यम से मूलभूत अवधारणाओं का विकास हुआ है। छात्रों की कठिनाई के बिन्दुओं को निदान कर गणित शिक्षण के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने का प्रयास किया गया है।

1.11 सुझाव -

1. गणित शिक्षण को भयमुक्त, रुचिपूर्ण एवं प्रभावी बनाने के लिये आवश्यक है कि शिक्षक गणित के प्रति व्याप्त भय को दूर करने के लिये विषयवस्तु की प्रकृति, बच्चों के स्तर को ध्यान में रखकर शिक्षण अधिगम प्रक्रिया का प्रबंधन स्थानीय आवश्यकतानुसार करें।
2. शिक्षक आवश्यकतानुसार शिक्षण पद्धति में बदलाव कर बच्चों में गणितीकरण की अवधारणा विकसित करें।
3. मूल्यांकन प्रक्रिया को भयमुक्त बनाते हुए शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के अंग के रूप में अपनाये। सतत मूल्यांकन को बढ़ावा दें।
4. गणित को यांत्रिक बनाने के बजाय ऐसी अवधारणा को विकसित करें जिससे बच्चे स्वयं व समूह में छोटे-छोटे प्रश्नों का निर्माण कर सकें, किसी समस्या के प्रति सोचने, तर्क करने एवं तर्क के आधार पर उत्तार खोजने का प्रयास कर सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'पलाश' पत्रिका अंक फरवरी-मार्च, 2002
2. 'भारतीय आधुनिक शिक्षा' अंक जनवरी, 2009
3. 'भारतीय आधुनिक शिक्षा' अंक जुलाई, 2009
4. 'गणित शिक्षण' जयेन्द्र शेखर गुप्ता, अपोलो प्रकाशन, जयपुर
5. कक्षा 1 से 5 तक तक की गणित विषय की पाठ्यपुस्तक
6. टी.एल.एम. पोथी विषय 'गणित' प्राथमिक स्तर, राज्य शिक्षा केन्द्र, भोपाल
7. राज्य शिक्षा केन्द्र द्वारा प्रकाशित विभिन्न शिक्षक प्रशिक्षण मॉड्यूल

सारणी क्रमांक 1 पूर्व व पश्च परीक्षण में दक्षता क्षेत्र संख्या की समझ एवं संख्या पर संक्रिया में तुलनात्मक वृद्धि

		दक्षता क्षेत्र					
		संख्याओं की समझ	जोड़ की समझ	घटाव की समझ	गुणा की समझ	भाग की समझ	इबारती सवाल
		A1-A10	B1	B2	B3	B4	B5
पूर्व परीक्षण	उपलब्धि (पूर्णांक 5 में से)	0.81	0.92	0.70	0.54	0.16	0.00
	%	16.24	18.40	14.00	10.80	3.20	0.00
पश्च परीक्षण	उपलब्धि (पूर्णांक 5 में से)	2.76	1.96	2.52	2.10	0.78	0.84
	%	49.52	39.20	50.40	42.00	15.60	16.80
तुलनात्मक वृद्धि (प्रतिशत में)		33.28	20.80	36.40	31.20	12.40	16.80

सारणी क्रमांक 2 न्यादर्श छात्रों की उपलब्धि का ग्रेडवार विवरण

ग्रेड	पूर्व परीक्षण में छात्रों की संख्या		पश्च परीक्षण में छात्रों की संख्या		अन्तर (प्रतिशत में)
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	
A	3	6.00	13	26.00	20.00
B	1	2.00	10	20.00	18.00
C	0	0.00	15	30.00	30.00
D	46	92.00	13	26.00	-66.00

****

NSS Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) Oct. to December 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

प्राथमिक शाला के विद्यार्थियों में अपव्यय एंव अवरोधन के कारणों का अध्ययन

नवनीत सिंह * इम्तियाज मंसूरी **

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध के अंतर्गत प्राथमिक शाला के विद्यार्थियों में अपव्यय एंव अवरोधन के कारणों का अध्ययन किया गया। शोध के लिए प्राथमिक शाला के पाँचवीं के विद्यार्थी और उनके अभिभावक थे। इनमें से शासकीय प्राथमिक शाला के 5वीं के 25-25 विद्यार्थी और उनके अभिभावकों को न्यादर्श के रूप में लिया गया था। प्रस्तुत शोध कार्य सर्वेक्षण प्रकार का था। प्रस्तुत शोध कार्य में अपव्यय और अवरोधन के कारणों को एकत्रित किया गया था। इन प्रदत्तों को एकत्रित करने के लिए बंद प्रश्नावली का प्रयोग किया गया था। विद्यार्थी व अभिभावकों से प्राप्त प्रदत्तों के विश्लेषण के लिए प्रतिशत का उपयोग किया गया। परिणामों से प्रदर्शित हुआ कि अपव्यय और अवरोधन के लिए अभिभावकों का बच्चों की शिक्षा के प्रति उदासीनता, शिक्षकों से संपर्क का अभाव, बच्चों की नियमित शाला नहीं भेजना, शिक्षा के विकास हेतु चलाई जा रही योजनाओं की जानकारी पालकों को नहीं होना। पालकों की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं होना, छोटे भाई / बहनों की देखभाल करना आदि कारणों का पता चला।

प्रस्तावना – शिक्षा मानव विकास की आधार शिला है। शिक्षा से मनुष्य की जन्मजात प्रवृत्तियों का न केवल विकास होता है अपितु उनको व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन परिलक्षित होने लगता है। शिक्षा ही वह माध्यम है। जिसके आधार पर किसी राष्ट्र की पहचान बनती है। शिक्षा का प्रथम स्तर प्राथमिक शिक्षा है जो 6 से 14 वर्ष की आयु की बालक-बालिकाओं को प्रदान की जाती है। इसमें 5वीं तक की कक्षाओं को सम्मिलित किया जाता है। प्राथमिक शिक्षा एक ऐसा बीज है। जिसमें पौधा पनपता है। प्राथामिक शिक्षा, शिक्षा रूपी भवन की नींव है। जिस पर शिक्षा भवन-चिरकाल तक सुद्रढ़ रह सकता है। प्राथमिक शिक्षा संपूर्ण शिक्षा की आधार शिला है। आज यह स्वीकार किया जा रहा है कि प्राथमिक शिक्षा का लोकव्यापीकरण न कर पाना स्वतंत्र भारत की सबसे गंभीर भूल है। यदि हमें देश के आर्थिक व सांस्कृतिक स्तर को ऊँचा उठाना है तो निश्चित ही हमें प्राथमिक शिक्षा का विस्तार कर गुणात्मक उन्नति प्राप्त करनी होगी और प्राथमिक शिक्षा में गुणात्मक उन्नति तब तक संभव नहीं जब तक उसके मार्ग में आने वाली बाधाओं कठिनायों और समस्याओं का हल न ढूँढ लिया जावें। अत: प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में कौन-सी समस्याएँ है ? इन समस्याओं का आकार क्या है ? इन समस्याओं का आंकलन करना शोध की आवश्यकता को दर्शाता है।

प्राथमिक शालाओं में दर्ज विद्यार्थी प्राथमिक स्तर की शिक्षा पूर्ण किये बिना ही बीच में पढ़ाई छोड़ देते है या अनुत्तीर्ण होने पर एक से अधिक वर्ष तक एक ही कक्षा में पढ़ते है। इस शोध में ऐसे ही शालात्यागी और शाला अवरोधनी विद्यार्थियों की स्थिति ज्ञात प्राथमिक स्तर पर अपव्यय व अवरोधन को जानने का प्रयास किया गया है।

औचित्य – शिक्षा एक ऐसा तत्व है, जो मानव का सर्वांगीण विकास करती है यह नैतिक चरित्र का भी निर्माण करती है। सर्वोच्च शिखर वह है, जो हमें केवल सूचनार्थ नहीं देती वरण् हमारे जीवन और सम्पूर्ण सृष्टि में तादात्म्य स्थापित करती है। हमारे भारतीय समाज में शिक्षा को सदैव ही महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है! राष्ट्र के सभी लोगों को बिना किसी भेदभाव के समान गुणवत्ता वाली शिक्षा प्राप्त करने के समान अवसर प्राप्त हो सकें इसलिए राष्ट्र कृतसंकल्प है। कर्तव्यनिष्ठ और अधिकार सचेत नागरिक ही भारत को प्रगति के पथ पर आगे ले जा सकते है। मनुष्य का जीवन बिना शिक्षा के नीरस है उसके हर काम पर इसकी आवश्यकता पडती है। मनुष्य के जीवन में वांछनीय परिवर्तन लाना ही शिक्षा का उद्देश्य है। आज का युग आधुनिक है। इस से ताल से ताल मिला ने के लिए मनुष्य को शिक्षित होना आवश्यक है। बिना शिक्षा के न तो वह खुद आगे बढ़ सकता है और इसी कारण उस देश की प्रगति में भी बाधक बन जाता है।

आज हम वर्तमान में देखे तो सरकार विभिन्न प्रकार की योजना की दिशा में सर्वशिक्षा अभियान तथा मध्यान्ह भोजन और बालक और बालिकाओं दोनों का साईकल भी मुफ्त दी जा रही है। यूनिफार्म भी दी जा रही है, जिससे बालक-बालिकाएं स्कूल की और अग्रसर है और उनके अंदर स्कूल को त्याग ने की बजाय स्कूल की तरफ उनका ज्यादा ध्यान हो बच्चों को स्कूल में मुफ्त पुस्तके भी जाती है और छात्रवृत्ति भी दी जाती है। सरकार के द्वारा गांव में सभी बच्चों को छात्रवृत्ति का लाभ दे रहे हैं। जिससे सारे बच्चे स्कूल आयें सरकार द्वारा विभिन्न प्रकार की योजना का निर्माण किया जा रहा है। जिससे सारे लोग शिक्षित हो सके। अशिक्षित होने से विभिन्न प्रकार की समस्या उठाना पड़ता है। इस कारण विद्यार्थियों में अपव्यय व अवरोधन की समस्या खड़ी होती है।

संबंधित साहित्य के अध्ययन से यह निहित होता है कि ठाकुर टी.शर्मा (1998) ने शालात्याग एवं अवरोधन की विभिन्नता कां अध्ययन, गुप्ता और श्रीवास्तव (1989) में प्राथमिक शिक्षा में अवरोधन और शालात्याग पर प्रादर्श अध्ययन, बुच, एम.बी. तथा सुदामे जी.आर. (1990) ने गुजरात राज्य की प्राथमिक शाला का गहराई से अपव्यय और अवरोधन के कारण अध्ययन, चौरे डी.एस. (1991) ने पुणे बीगर में प्राथमिक शाला में अपव्यय की समस्याओं पर अध्ययन, व्यास जैसी (1992) ने राजस्थान राज्य में प्राथमिक स्तर पर शाला त्याग की स्थिति के कारणों का अध्ययन, शर्मा एन. (1992) ने बागान श्रमिकी के बच्चों का अध्ययन, श्रीवास्तव सपना (1998) ने टीकमगढ़ जिलों की प्राथमिक शाला पर अपव्यय और अवरोधन

* व्याख्याता, देवी रूक्मणी शिक्षा प्रशिक्षण संस्थान, खरगोन (म.प्र.) भारत
** प्राचार्य, देवी रूक्मणी शिक्षा प्रशिक्षण संस्थान, खरगोन (म.प्र.) भारत

का अध्ययन, आहेरी पंकज (2002) ने हरियाणा की प्राथमिक शाला में डी.पी.ई.पी. कार्यक्रम का अध्ययन, तिवारी सरिता (2004) ने नि:शुल्क पाठ्य पुस्तक कार्यक्रम योजना में बालकों के अपव्यय और अवरोधन पर अध्ययन, अग्निभोज वंदना (2006) का शालात्यागी बच्चों पर अध्ययन किया।

उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है कि, प्राथमिक शाला के विद्यार्थियों में अपव्यय एवं अवरोधन के कारणों का अध्ययन शीर्षक से संबंधित सारे शोध कार्य संपन्न हुए हैं किन्तु आज भी इस समस्या का निराकरण नहीं हो पाया है। प्राथमिक शाला के बच्चों में अभी भी अपव्यय और अवरोधन की समस्या दिखाई देती है। अत: प्रस्तुत शीर्षक पर शोध कार्य की आवश्यकता प्रतिपादित होती है।

समस्या कथन – प्रस्तुत शोध अध्ययन की समस्या थी–

प्राथमिक शाला के विद्यार्थियों में अपव्यय एंव अवरोधन के कारणों का अध्ययन करना।

उद्देश्य – प्रस्तुत शोध अध्ययन के उद्देश्य निम्न थे–

प्राथमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के अपव्यय और अवरोधन के कारणों का अध्ययन करना।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु न्यादर्श के रूप प्राथमिक शाला के 5वीं के विद्यार्थी और उनके अभिभावक थे। इस जनसंख्या में से शासकीय प्राथमिक शाला के 5वीं के 25-25 विद्यार्थी और उनके अभिभावकों को लिया गया है। विद्यार्थी सभी 7 और 8 वर्ष के आस-पास के थे। उसमें 28 लड़के और 22 लड़कियाँ थीं। यह सभी इन्दौर शहर के रहवासी थे।

शोध का प्रकार – प्रस्तुत शोध अध्ययन में कार्य सर्वेक्षण प्रकार का था।

उपकरण – प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु अपव्यय और अवरोधन के कारणों को एकत्रित किया गया। इन प्रदत्तों को एकत्रित करने के लिए बंद प्रश्नावली का उपयोग किया गया।

प्रदत्त संकलन की प्रक्रिया – प्रदत्त संकलन हेतु सर्वप्रथम शाला में जाकर प्राध्यापक और प्राध्यापिका से इस विषय में विस्तार से बात की। परियोजना के कारणों संबंधित चर्चा की और वहीं के 5वीं कक्षा के विद्यार्थियों और उनके अभिभावकों से परियोजना और शोध कार्य से संबंधित 25-25 बंद प्रश्नावली दी गयी। जिनका उत्तर उन्हें 'हाँ' और 'ना' में देना था। जिससे उन्हें प्रश्नों के उत्तर देने में सहायता मिली। विद्यार्थी और अभिभावकों के माध्यम से उद्देश्य की प्राप्ति की गयी है।

प्रदत्त विश्लेषण – प्रस्तुत शोध अध्ययन में उद्देश्य के अनुसार प्रदत्त विश्लेषण निम्न प्रकार से किया गया–

प्रस्तुत शोध कार्य में विद्यार्थी व अभिभावकों से प्राप्त प्रदत्तों का विश्लेषण प्रतिशत द्वारा किया गया।

परिणाम एवं विवेचना – प्रस्तुत शोध अध्ययन की परिणाम एवं विवेचना निम्न प्रकार से है –

अभिभावकों की समस्याओं का अध्ययन – मुसाखेड़ी की दो शासकीय प्राथमिक शालाओं में अध्ययनरत बच्चों के कुल 50 अभिभावकों को बंद प्रश्नावलियाँ प्रशासित की गई। इन प्रश्नावलियों से प्राथमिक शालाओं का वातावरण संसाधनों की उपलब्धता, शाला संचालन, पालक-शिक्षक संपर्क, छात्र शिक्षक संबंध, मध्यान्ह भोजन की स्थिति, पालकों की आर्थिक स्थिति, बालिका शिक्षा जैसे कई विषयों पर अभिभावकों के अभिमत को प्राप्त कर प्राथमिक शिक्षा की समस्याओं व उपलब्धता संसाधनों की उपयोगिता को तथा पालकों की समस्याओं को समझने का प्रयास किया गया है। पालकों को दी गई बंद प्रश्नावली के उत्तर हाँ / नहीं के रूप में प्राप्त किये गये। पालकों से प्राप्त अभिमतों का विश्लेषण प्रतिशत के रूप में प्रस्तुत है –

क्र.	प्रश्न	हाँ	नहीं
1.	क्या आप अपने बच्चे को प्रतिदिन शाला भेजते हैं?	58%	42%
2.	क्या आपका बच्चा समय पर शाला जाता है ?	60%	40%
3.	क्या आपका बच्चा शाला जाने से डरता है ?	46%	54%
4.	क्या आपके विचार से शाला का समय ठीक है?	94%	6%
5.	क्या शिक्षकों का व्यवहार बच्चे के प्रति अच्छा है ?	88%	12%
6.	क्या शाला में शिक्षक समय से आते है ?	96%	4%
7.	क्या आपका बच्चा घर पर आकर पढ़ाई करता है?	28%	42%
8.	क्या बच्चा घर के काम में हाथ बटाता है ?	58%	42%
9.	क्या बच्चा किसी और जगह भी काम करता है?	36%	64%
10.	क्या बच्चा घर पर अपने छोटे भाई-बहनों का ध्यान रखता है?	82%	18%
11.	क्या आपको शाला की शुल्क अधिक लगता है?	4%	96%
12.	क्या आपके बच्चों को शाला में भरपेट भोजन मिलता है?	90%	10%
13.	क्या आपके बच्चे की शाला में शौचालय की सुविधा है?	74%	26%
14.	क्या शाला में स्वच्छ पेयजल की सुविधा है ?	86%	14%
15.	क्या शाला में बच्चों की सुरक्षा की व्यवस्था है ?	58%	42%
16.	क्या बच्चें को शाला में आने-जाने में समस्या आती है ?	68%	32%
17.	क्या शाला के आसपास असामाजिक तत्वों का अस्तित्व है?	62%	38%
18.	क्या सरकार से मिलने वाली सुविधाओं की आपको जानकारी है?	48%	58%
19.	क्या आप अपनी लड़कियों को भी पढ़ने हेतु शाला भेजते हैं?	86%	14%
20.	क्या बच्चों की शाला में पिटाई लगाई जाती है ?	28%	72%
21.	क्या बच्चें के लगातार अनुपस्थित रहने पर शिक्षक आपको उसकी अनुपस्थिति की जानकारी देते हैं?	88%	12%
22.	क्या शाला के आसपास का वातावरण शांतिपूर्ण है?	80%	20%
23.	क्या शाला में जाकर आपका बच्चा प्रसन्न रहता है?	64%	36%
24.	क्या आप अपने बच्चे की पढ़ाई के लिए सभी सुविधाएँ जुटाते हैं?	56%	44%
25.	क्या आप शिक्षक से अपने बच्चे के शैक्षणिक कार्य के संबंध में जानकारी लेते है?	12%	88%

- तालिका से स्पष्ट है कि प्रश्न क्र. 1 'क्या आप अपने बच्चे को रोजाना शाला भेजते हैं'? पर 58% हाँ और 42% नहीं उत्तर दिया है। ये यह दर्शाता है कि औसत से अधिक अभिभावक अपने बच्चे को प्रतिदिन शाला भेजते हैं।
- 'क्या आपका बच्चा समय पर शाला जाता है'? 60% अभिभावकों के अनुसार उनका बच्चा समय पर स्कूल जाता है और 40% के अनुसार वह समय से बच्चों को शाला नहीं भेजते।
- 46% अभिभावकों के अनुसार उनका बच्चा शाला जाने से डरता है और

54% के अनुसार बच्चे शाला जाने से नहीं डरते हैं।

- 94% अभिभावकों के अनुसार शाला का समय ठीक है और 6% के अनुसार शाला का समय उचित नहीं था।
- अधिकांश अभिभावकों में 88% का मत था कि शिक्षकों का बालकों के प्रति व्यवहार अच्छा है और 12% के अनुसार शिक्षकों का व्यवहार अच्छा नहीं हैं।
- 4% अभिभावकों के अनुसार शिक्षक शाला में समय से नहीं आते। और 96% के अनुसार वह समय से शाला में आते हैं।
- 58% बच्चे घर के काम में मदद करते हैं और 42% बच्चे घर के काम में मदद नहीं करते हैं।
- 64% अभिभावकों के अनुसार उनका बच्चा किसी और जगह काम पर नहीं जाता है। 36% बच्चें काम पर जाते हैं।
- 82% के अनुसार उनके बच्चें घर पर अपने छोटे भाई-बहनों का ध्यान रखते है और 18% बच्चें नहीं रखते हैं।
- 96% अभिभावकों को शाला का शुल्क अधिक नहीं लगता है। किन्तु 4% अभिभावकों को यह शुल्क अधिक लगता हैं।
- 90% बच्चों को शाला में भरपेट भोजन मिलता है और 10% अभिभावकों के अनुसार बच्चों को भरपेट भोजन उपलब्ध नहीं होता हैं।
- 26% अभिभावकों के अनुसार शाला में शौचालय की सुविधा नहीं है और 74% अभिभावकों के अनुसार शाला में शौचालय की सुविधा उपलब्ध हैं।
- 86% पालकों के अनुसार शाला में स्वच्छ पेयजल की सुविधा है और 14% पालकों के अनुसार शाला में यह सुविधा उपलब्ध नहीं हैं।
- 58% अभिभावकों के अनुसार शाला में बच्चों की सुरक्षा की व्यवस्था है और 42% के अनुसार सुरक्षा व्यवस्था ठीक नहीं हैं।
- 68% अभिभावकों के अनुसार बच्चों की शाला में आने-जाने में कोई समस्या नहीं आती है और 32% के अनुसार समस्या आती हैं।
- 62% के अभिभावकों के अनुसार शाला के आसपास असामाजिक तत्वों का अस्तित्व है और 38% के अनुसार नहीं हैं।
- 58% अभिभावकों के अनुसार सरकार से मिलने वाली सुविधाओं की जानकारी नहीं थी और 42% अभिभावकों को सरकार से मिलने वाली सुविधा की जानकारी थी।
- 86% अभिभावक लड़कियों को पढ़ने हेतु शाला भेजते हैं और 14% अभिभावकों नहीं भेजते हैं।
- दण्ड देना अमनोवैज्ञानिक है। शिक्षकों द्वारा छात्रों को दण्ड देने की प्रवृत्ति में कमी आई है। परन्तु 28% अभिभावकों के अनुसार शाला में पिटाई लगाई जाती है और 72% के अनुसार नहीं लगाई जाती हैं।
- 88% के अनुसार बच्चे के लगातार अनुपस्थित रहने पर शिक्षक उनको जानकारी देते हैं और 12% के अनुसार नहीं देते हैं।
- 80% अभिभावकों के अनुसार शाला के आसपास का वातावरण शांतिपूर्ण है तथा 20% के अनुसार शाला के आस-पास का वातावरण शांतिपूर्ण नहीं हैं।
- 36% अभिभावकों के अनुसार उनका बच्चा शाला में जाकर प्रसन्न नहीं रहता है और 64% अभिभावकों के अनुसार बालक प्रसन्न रहता हैं।
- 56% अभिभावकों के अनुसार वह अपने बच्चों की पढ़ाई के लिए सुविधा नहीं जुटाते है और 44% के अनुसार वह सुविधा जुटाते हैं।
- 88% अभिभावक शिक्षक से अपने बच्चें के शैक्षणिक कार्य के विषय में जानकारी नहीं लेते है। जबकि केवल 12% अभिभावक ही जानकारी लेते हैं।

निष्कर्ष – शोध अध्ययन के परिणामों के आधार पर उद्देश्यानुसार निम्न निष्कर्ष प्राप्त हुए-

प्रस्तुत परियोजना में अपव्यय और अवरोधन के लिए अभिभावकों का बच्चों की शिक्षा के प्रति उदासीनता, शिक्षकों से संपर्क का अभाव, बच्चों को नियमित शाला नहीं भेजना, शिक्षा के विकास हेतु चलाई जा रही योजनाओं की जानकारी पालकों को नहीं होना। पालकों की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं होना, छोटे भाई / बहनों की देखभाल करना आदि कारणों का पता चला है।

बच्चों के शैक्षिक स्तर के उन्नयन हेतु पालकों का शिक्षकों के संपर्क में रहना आवश्यक है ताकि वे अपने बच्चों की शैक्षिक प्रगति की जानकारी रख सके। शासकीय शालाओं में अभिभावक अपने बच्चों की पढ़ाई से संबंधित जानकारी नहीं रखते हैं और वह बच्चों की शिक्षा के प्रति उदासीन थे। वे कभी शिक्षकों से संपर्क नहीं करते है। शासकीय प्राथमिक शालाओं में पालक - शिक्षक संपर्क की स्थिति अच्छी नहीं थी। अभिभावकों को शासन द्वारा बच्चों को दी जा रही सुविधाओं की जानकारी नहीं थी। शिक्षा के विकास हेतु चलाई जा रही योजनाओं की जानकारी पालकों को दी जा रही सुविधाओं की जानकारी नहीं थी। शिक्षा के विकास हेतु चलाई जा रही योजनाओं की जानकारी पालकों को न होना भी अपव्यय और अवरोधन की स्थिति को दर्शाती है। शाला के शिक्षकों के अनुसार अभिभावकों का काम हेतु शहर छोड़कर जाना। पालकों की कमजोर आर्थिक स्थिति। घर के कामकाज, पालकों का शिक्षा के प्रति जागरूक न होना, शिक्षक के अनुसार छोटे भाई / बहनों की देखभाल करना और शिक्षक का गैर शैक्षणिक कार्यों में लगे रहने जैसे कई कारणों से छात्र-छात्राएँ शाला में अनुपस्थित रहते है।

शैक्षिक निहितार्थ – प्रस्तुत शोध शिक्षा के क्षेत्र से जुड़े उन सभी के लिए दिशा निर्दिष्ट करेगा जो राष्ट्रीय प्रगति में प्राथमिक शिक्षा के योगदान को सर्वोच्च महत्व देते है।

इस परियोजना के संबंध में भविष्य में और भी कार्य किए जा सकते हैं जैसे शिक्षक से संबंधित समस्याएँ और शाला में भौतिक सुख-सुविधाओं संबंधी कार्य किए जा सकते हैं। जिससे प्राथमिक शिक्षा की स्थिति को और अधिक अच्छा बनाया जा सके। जो बालकों को अति लाभदायक हो सकती है। ग्रामीण और शहरी प्राथमिक शालाओं की समस्या का तुलनात्मक अध्ययन करना चाहिए जिससे दोनों की स्थितियों का ठीक अनुमान लगाया जा सके और जिससे समस्या के कारणों का पता लगाने में आगे आसानी रहेगी। जिसका संपूर्ण लाभ बालकों, अभिभावकों और शिक्षकों को मिल पाएगा। जिससे शाला के स्तर में सुधार होगा और सरकार के द्वारा खर्च किए जाने वाली धनराशि का अपव्यय नहीं होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आधुनिक भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ - सुरेश भटनागर, लायल बुक डिपो. मेरठ (1980)।
2. भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ - पाठक पी.डी., विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा (1995)।
3. शिक्षा का इतिहास एंव समस्याएँ - पाठक एंव त्यागी, लाल बुक डिपो- मेरठ (1995)।
4. भारतीय शिक्षा की सामाजिक समस्याएँ - चौधरी और उपाध्याय, विनाद पुस्तक मंदिर, आगरा (1969)।
5. भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ - चौधरी बी.पी. और पाठक

पी.डी., विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा (1961)।

6. अग्निभोज वंदना – प्राथमिक शिक्षा के लोक व्यापीकरण में पालक–शिक्षक संध के क्रियान्वयन में आने वाली बाधाओं का अध्ययन–एम.एड– लघु शोध प्रबंध, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (2006)।
7. अरझरे, साधना – प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में अशासकीय विद्यालयों में नामांकन पर पड़ने वाले प्रभावों का सर्वेक्षणात्मक अध्ययन एम.एड. लघु शोध प्रबंध देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (2004)।
8. कुलश्रेष्ठ – एस.पी. शिक्षा मनोविज्ञान, आर. लाल बुक डिपों, मेरठ (2005)।
9. गोरानी, आभा – शिक्षा के लोकव्यापीकरण के लिए शाला त्याग रोकने और अध्ययन अध्यापन को रूचिकरए बाल केन्द्रित तथा गतिविधि केन्द्रित बनाने की दृष्टि से प्राथमिक शालाओं की कार्य व्यवस्था का अध्ययन एम.एड. लघुशोध प्रबंध, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (1998)।
10. जोशी अल्पना – प्रारंभिक शिक्षा के लोकव्यापीकरण में 'पालक शिक्षक संघ' की भूमिका का अध्ययन करना एम.एडत्र लघु शोध प्रबंध, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (2004)।
11. नेगी अशोक कुमार – प्राथमिक विद्यालयों में मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम की पारिवारिक व्यवस्था के तहत विभिन्न विभाग की समन्वयात्मक कार्यवाही एवं कठिनाई का अध्ययन एम.एड. लघु शोध प्रबंध देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर।
12. मलानी, कु. भारती – प्राथमिक शालाओं में निःशुल्क पाठ्यपुस्तक वितरण तथा मध्यान्ह भोजन वितरण योजना का विद्यार्थियों के नामांकन एवं शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन एम.एड. उपाधि हेतु लघु शोध प्रबंध देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (2005)।
13. मिश्रा, लक्ष्मी : मध्यप्रदेश में शिक्षक शिक्षा – मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
14. शर्मा, आर.ए. – शोध प्रबंध लेखन, रॉयल बुक डिपो, मेरठ।

****

जॉन डीवी के शैक्षिक विचारों का अध्ययन

डॉ. शुभ्रा श्रीवास्तव *

शोध सारांश – सम्पूर्ण शिक्षा-जगत को अपने बहु-आयामी व्यक्तित्व से प्रभावित करने वाले युग पुरूषार्थ जॉन डीवी की गणना उन महान विभूतियों में की जाती है, जिनके द्वारा प्रतिपादित दार्शनिक एवं शैक्षिक उद्‌बोधन भारतीय तथा विश्व जनमानस को सदैव आलौकित करते रहेगें। उनका प्रभाव आधुनिक शिक्षा पर स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। इन शैक्षिक विचारों को नीतिबद्ध रूप से तथा सुनियोजित ढंग से शैक्षिक कार्यक्रमों के साथ समन्वित व संगठित करके तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति एवं भावी समस्याओं का निराकरण कर शैक्षिक प्रणाली को और प्रभावी बनाया जा सकता है तथा युवा शक्ति को सही दिशा देकर नवजीवन का संचरण किया जा सकता है।

प्रस्तावना – बीसवीं शताब्दी के वैज्ञानिक युग की मुख्य शैक्षिक धाराओं में प्रयोजनवाद सबसे महत्वपूर्ण विचारधारा हैं जिसने शिक्षा के प्रत्येक अंग में क्रान्तिकारी परिवर्तन किया हैं। सार्वभौमिक एवं सर्वकालीन महापुरूषों की संख्या बहुत थोड़ी होती है इसी कड़ी में विश्व के महान शिक्षाशास्त्री जॉन डीवी ने ऐसे विचारों, सिद्धान्तों एवं मतों को प्रस्तुत किया है जिन पर आधुनिक शिक्षा की संरचना टिकी हुई है जिन्होंने प्रोग्रेसिव स्कूल की स्थापना कर शिक्षा जगत को लाभकारी दर्शन दिया। उनका योगदान केवल पाश्चात्य देशों में ही नहीं बल्कि भारतीय एवं एशियाई संस्कृति में भी लोकप्रिय है।

जॉन डीवी का शिक्षा-दर्शन मुख्यत: प्रयोजनवादी विचारधारा पर आधारित है जिसे उपयोगितावाद, व्यावहारवाद भी कहा गया है, साथ ही उसमें आदर्शवाद व प्रकृतिवाद का समन्वय भी दर्शित है। उनका प्रयोजनवादी दर्शन आधुनिक युग की प्रभावशाली विचारधारा ही नहीं अपितु व्यावहारिक आवश्यकता बन गयी है। आज विश्व के सभी राष्ट्र अपनी शिक्षा व्यवस्था को उपयुक्त बनाना चाहते हैं क्योंकि 'शैक्षिक प्रक्रिया उन सम्पूर्ण नैतिक क्रियाओं में से एक है जिसमें निकृष्टता से श्रेष्ठता का अनुभव प्राप्त करने की सतत प्रक्रिया चलती रहती है।'

शिक्षा का अर्थ –डीवी शिक्षा के द्वारा प्रजातांत्रिक समाज का विकास एवं एक गतिशील अनुकूलित मन मस्तिष्क को निर्मित करना चाहते थे जो बदली हुई परिस्थितियों में व्यक्ति को वह क्षमता, योग्यता और कुशलता प्रदान कर सकें,जिससे आवश्यकतानुसार व्यक्ति स्वयं को समाज में समायोजित संतुलित करके अपनी मूलभूत आवश्यकताओं को स्वयं पूर्ण कर सके। डीवी के विचारानुसार शिक्षा ही विकास है, शिक्षा ही मार्गदर्शन है एवं शिक्षा ही जीवन है। मानव को जीवित रहने के लिये जिस प्रकार भोजन की आवश्यकता होती है ठीक उसी प्रकार समाज को जीवित एवं अस्तित्व में रहने के लिये शिक्षा की आवश्यकता होती है। प्रेम, सहानुभूति, सहयोग, समायोजन एवं सामुदायिक जीवन जैसी भावनाओं के विकास को डीवी शिक्षा का कार्य मानते थे ।डीवी ने शिक्षा के द्वारा व्यक्तिगत 'स्व' तथा सामाजिक 'स्व' में सामंजस्य स्थापित पर करने पर जोर दिया ।

शिक्षा का उद्देश्य –डीवी का मानना है उद्देश्य ऐसा हो जो क्रिया की ओर उन्मुख हो, जिसमें सिद्धान्त के साथ-साथ व्यवहार का सामंजस्य होना चाहिये जो नवीन मूल्यों को निर्मित करे, व्यक्ति में नागरिकता के गुणों का समावेश करे, जिससे बालक समाज एवं पर्यावरण के साथ समायोजन स्थापित करने के साथ ही अपना स्थान निर्धारित करने में सफल हो सके। समाज की बदली परिस्थिति में उद्देश्य का स्वरूप भी बदल जाना चाहिये। डीवी बालक की रूचि, योग्यता एवं गति के अनुसार शिक्षा द्वारा बालक का सम्यक, सर्वांगीण विकास करना चाहते हैं, जिससे उसका भावी जीवन सुखमय हो और एक समृद्ध एवं शक्तिशाली राष्ट्र निर्माण में वह सहयोग कर सके।

इस प्रकार डीवी के शिक्षा का उद्देश्य ऐसे व्यक्ति का निर्माण करना है जिसमें आठ गुण आवश्यक रूप से विकसित किये जा सकें-

1. उत्तम स्वास्थ्य एवं पर्यावरण सामंजस्य
2. क्रिया की क्षमता
3. योग्य गृहस्थ.
4. व्यवसाय कुशलता
5. नागरिकता
6. अवकाश का समुचित सदुपयोग
7. नैतिकता एवं उत्तम चरित्र
8. 4H के अनुसार हृदय, मस्तिष्क, हाथ एवं स्वास्थ्य (Heart, Head, Hand and Health)का विकास।

शिक्षा को व्यवसाय से जोड़ना, कार्य से जोड़ना तथा जीवन से जोड़ना छात्र को स्वावलम्बी, कर्तव्यनिष्ठ, उत्तरदायी नागरिक बनाना और व्यक्तित्व सम्पन्न करना, जिससे वे वर्तमान प्रतियोगात्मक परिवेश में अपनी आवश्यकताओं को पूर्ण करते हुए समाज के लिये अधिक उपयोगी हो सकें डीवी की प्रगतिशील शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य है।

पाठ्यक्रम– प्रगतिशील विचारधारा में विश्वास रखने वाले जॉन डीवी ने प्राचीन परम्परागत पाठ्यक्रम का कड़ा विरोध करते हुए वास्तविक जीवन पर आधारित पाठ्यक्रम को अपनाने और पाठ्यक्रम निर्माण के लिये उपयुक्त सूत्र रूचि, नम्यता वं विभिन्नता, शैक्षिक अनुभव एवं सामाजिक सभ्यता, व्यावहारिक, उपयोगिता, सहसम्बन्ध, बालकेन्द्रित, लचीलेपन क्रियाशीलता, व्यापकता एवं भावीजीवन से सम्बद्धता का सिद्धान्त प्रस्तुत किया।

बालक में चार प्रकार की अभिरूचियों विचारों के आदान-प्रदान, खोज निर्माण, सृजन निर्माण, अथवा कलात्मक अभिव्यक्ति की रूचि को ध्यान में रखकर ही पाठ्यक्रम को निर्मित करने की आवश्यकता पर बल दिया जिससे आज समूचा शिक्षा जगत सहमत है।

शिक्षण विधि – शिक्षण विधियों के सम्बन्ध में जॉन डीवी के विचार पूर्ण रूपेण प्रयोगवादी हैं। जिसके कारण उन्होंने अपनी शिक्षा व्यवस्था में अनुभव,

* वरिष्ठ प्रवक्ता (बी.एड.) दिग्विजयनाथ पी. जी. कॉलेज, गोरखपुर (उ.प्र.) भारत

प्रयोग एवं निरीक्षण को स्वाभाविक रूप में स्थान दिया है। शिक्षण की परम्परागत विधियों का विरोध कर बालकों को रटा-रटा कर पुस्तकों पर आधारित शिक्षा प्रदान करना, पूर्णतया अव्यवहारिक एवं अमनोवैज्ञानिक है। बालकों के लिए ऐसी शिक्षण विधियों को डीवी ने अपनाने की बात की है जिसमें बालक निष्क्रिय न रहकर स्वानुभव क्रिया द्वारा स्वयं सीखे ,प्रयोग करें, सक्रिय एवं जिज्ञासु बना रहे उनमें सहयोग, आत्मविश्वास, आत्मनिर्भरता, मौलिकता, सृजनशीलता, निरीक्षण कल्पनाशक्ति वास्तविकता के आधार पर यथार्थ ज्ञान शारीरिक शक्ति सामाजिक कुशलता जैसे गुणों का उतरोत्तर विकास हो, भौतिक एवं सामाजिक वातावरण की अनेकों समस्याओं को वह सुलझा सके। उन्होंने करके सीखने, स्वानुभव द्वारा, प्रोजेक्ट विधि द्वारा, प्रयोगात्मक विधियों द्वारा रूचि जागृत करके सिखाने पर जोर दिया ।

विद्यालय -डीवी के विचार से विद्यालय वह स्थान है जहां बालक को स्वतंत्र रूप से अनुभव एवं प्रयोग करने जीवन की आवश्यकताओं को जानने, समझने पूरा करने, निष्कर्षो की स्वतंत्र अभिव्यक्ति का अवसर दिये जाने चाहिये । विद्यालय में सहयोग, समायोजन, सामुदायिक जीवन तथा लोकतांत्रिक भावनाओं का विकास होता, है उनकी मूल प्रवृत्तियों को उचित दिशा मिलती है। डीवी ने ऐसा आदर्श प्रतिपादित करने के लिये ही शिकागो विश्वविद्यालय में लेबोरेटरी स्कूल भी स्थापित किया जहां जीवन से सम्बन्धित व्यवसायों का प्रशिक्षण दिया जाता था। इस प्रकार डीवी ने विद्यालय को विशिष्ट वातावरण, समाज के लघु संस्था, गृह एवं समाज की संयोजक कड़ी, प्रयोगात्मक स्थल, प्रजातांत्रिक परिवेश, प्रगतिशील एवं परिवर्तन स्वरूप में, नागरिक की तैयारी का स्थल, सामाजिक उद्देश्य के पूर्ति सहयोग, सहकारिता, सद्भाव, सामाजिक चेतना जैसी भावना के उद्‌बोधन स्थल के रूप में माना है।

शिक्षक - शिक्षक, शिक्षण-प्रक्रिया का सच्चा सूत्राधार बालक के भविष्य का निर्माता मार्गदर्शक, निर्देशक, समाज का प्रतिनिधि होता है। शिक्षक को बालकों का निरीक्षण करने, सहयोग देने, जिज्ञासा उत्पन्न करने का ,सक्रिय वातावरण उत्पन्न कर उसे उत्साहित करने का अधिकार है ना कि अपने विचार बालकों पर लादने का।

शिक्षक के आदर्श एवं व्यक्तित्व की अमिट छाप छात्रों पर पड़ती है।डीवी ने लिखा है, 'शिक्षक वह माध्यम है, जिसके द्वारा बच्चे का वर्तमान ज्ञान, अनुभव का एक अंग बनता है। उसके अनुभव के तत्व किस प्रकार प्रयोग किये जायेंगे और किस प्रकार उसका ज्ञान उसकी आवश्यकताओं और क्रियाओं के अनुरूप विश्लेषित किये जायेगें, शिक्षक ही वह माध्यम प्रस्तुत करता है। जिससे बालक अपने उचित विकास का निर्देश प्राप्त करके प्रसन्न होता है।'

डीवी के अनुसार शिक्षक को निम्न दो बातों का संज्ञान अवश्य होना चाहिये-

1. बालकों के साथ व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करके उसकी रूचियों का ज्ञान।
2. परिवर्तनशील समाज की बदलती हुई परिस्थितियों का बोध।

डीवी स्पष्ट रूप से स्वीकार करते हैं कि, 'बच्चे को नेतृत्व के साथ-साथ आज्ञाकारिता के लिये भी शिक्षित करना चाहिये, उसके अन्दर स्वत: प्रेरित तथा दूसरों को प्रेरित करने की भी क्षमता होनी चाहिये। बच्चों में प्रशासनिक और विभिन्न उत्तरदायित्वों को निभाने की क्षमता भी होनी चाहिये।'

शिक्षार्थी-अपनी शिक्षा व्यवस्था में डीवी ने बालक को केन्द्रीय स्थान दिया है। शिक्षा के सभी पहलुओं जैसे पाठ्यक्रम विद्यालय, शिक्षण, विधि, शिक्षा के उद्देश्य आदि का निर्धारण शिक्षार्थी की रूचि, व्यक्तिगत भिन्नता, क्षमता एवं योग्यता सामर्थ्य एवं गति के अनुसार करके शिक्षण प्रदान कर बालक को सीखने का अवसर दिया जाये तो वह एक कुशल वैज्ञानिक, सामाजिक कार्यकर्त्ता, कुशल तकनीशियन एवम कुशल शिक्षक के रूप में उभरेगा। वह अपनी समस्याओं का समाधान करने के साथ, दूसरे लोगों को सहयोग करते हुए , अपने लिये एक अच्छे जीवन मार्ग को सृजित कर सकेगा। अत: डीवी ने बालक को अपना कार्य चुनने, उसको पूर्ण करने, अपने आदर्शों एवं मूल्यों के निर्माण हेतु उसे स्वतंत्रता प्रदान करने पर जोर दिया हैं।

अनुशासन- डीवी के अनुसार अनुशासन एक प्रकार का आंतरिक विकास है बालक की शिक्षा को रूचिकर क्रियाशील बनाये रखते हुए ऐसा सामाजिक परिवेश प्रस्तुत कर विद्यालयी कार्यक्रमों को क्रियान्वित करके उसके समक्ष ऐसे उदाहरण दिये जाने चाहिये कि उनमें आत्मानुशासन उत्पन्न हो। दण्ड व्यवस्था पर आधारित अनुशासन का डीवी ने विरोध किया। आत्म-अनुशासन से ही बालकों में विभिन्न गुणों जैसे संयम, सहयोग, सहनशील, आत्मीयता आदर, सम्मान, बंधुत्व, प्रेम आदि भावों को विकसित करके आधुनिक समाज की स्थापना की जा सकती है।

स्त्री एवं पुरूष दोनों को समाज का अंग मानते हुए डीवी ने समान शिक्षा देने पर जोर दिया। उन्होंने समाज के दोनों अंग को शिक्षित कर समाज एवं राष्ट्र पर कल्याण किया। डीवी की विचारधारा वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक, तकनीकी, विशिष्टीकरण एवं कौशलयुक्त के स्वरूप को स्वीकार कर शिक्षा के विभिन्न आयामों के निर्धारण में क्रिया एवं अनुभव केन्द्रित स्वरूप पर बल देती है ।डीवी बालकों में मौलिकता, आत्मविश्वास, आत्मनिर्भरता, कल्पना, निरीक्षण, चिन्तनएकाग्रता वैज्ञानिक दृष्टिकोण आत्म-अनुशासन सामाजिक कुशलता दक्षता प्रजातांत्रिक मूल्यों, श्रम के प्रति निष्ठा, सामुदायिकता तथा सृजनात्मक शक्तियों, स्वाध्याय आदि मूल्यों को प्रतिष्ठित करना चाहते हैं।

निष्कर्ष- इस प्रकार जॉन डीवी नवीन शिक्षा पद्धति के प्रणेता थे । अपने अमूल्य विचारों को संसार के सम्मुख रखा, युवा पीढ़ी को कार्य की दुनिया एवं कार्य की संस्कृति से परिचित कराया है। आज पाश्चात्यीकरण, आधुनिकीकरण, वैश्वीकरण, हिंसात्मक प्रवृत्ति में वृद्धि, भोगवादी प्रवृत्ति, राजनीतिक आकांक्षा तुष्टीकरण आदि कारणों से जहां सांस्कृतिक परिवेश को खतरा उत्पन्न हो रहा है ,वहीं समाज में व्याप्त नैतिक, आध्यात्मिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों में गिरावट का सीधा प्रभाव शिक्षा के प्रत्येक पक्ष तथा स्तरों पर पड़ रहा है जिससे उसकी गुणवत्ता प्रभावित हो रही है। अत: शिक्षा को सही अर्थो में प्रभावी उद्देश्यपूर्ण और महत्वपूर्ण बनाने के लिये संरचनात्मक एवं नीतिगत परिवर्तन की आवश्यकता है। आज शिक्षा के द्वारा पवित्र व्यावसायिक दृष्टिकोण उत्पन्न करना होगा। जॉन डीवी के विचार आज भी उतने ही सामयिक हैं जितने कि पहले। प्रगतिशील शिक्षा, नवीन शिक्षा, क्रिया प्रधान पाठ्यक्रम डीवी के विचारों का ही परिणाम है। इन आदर्श, मूल्यों और विचारों को शिक्षा प्रणाली में व्यापक ढंग से पुनर्संगठित,पुनर्नियोजित कर तथा युवा पीढ़ी के व्यवहार और आचरण में निहित करके शिक्षा को प्रभावी बनाया जा सकता है, जिससे राष्ट्र को उन्नति के पथ पर अग्रसर करने में युवा पीढ़ी अपनी उत्कृष्टता व सार्थकता को सिद्ध कर अपना योगदान देने में सक्षम हो सकती है।

नैथेन्सन के शब्दों में, 'डीवी के शिक्षा सम्बन्धी विचारों ने हमारे मार्ग को

प्रशस्त किया।' डीवी के यह विचार आज भी प्रेरणा स्त्रोत स्वरूप हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. ग्रोवर, डॉ0 इन्द्रा संसार के महान शिक्षाशास्त्री, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, 1977
2. चौबे, डॉ0 एस0पी0 भारत तथा पश्चिम के श्रेष्ठ शिक्षा शास्त्री, भवदीय प्रकाशन, फैजाबाद 2002
3. डीवी जॉन–शिक्षा और लोकतन्त्र ग्रन्थ (इण्डिया) प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली 2004
4. डीवी जॉन स्कूल एण्ड सोसाइटी, दि मैकमिलन कम्पनी 1953
5. डीवी जॉन एजूकेशन ऑफ टूडे, दि मैकमिलन कम्पनी 1953
6. तरूण हरिवंश विश्व के महान शिक्षाशास्त्री, प्रकाश संस्थान नई दिल्ली, 2005
7. दूबे डॉ0 रमाकान्त, भारतीय शिक्षाशास्त्री, मनोहर पब्लिकेशन, गोरखपुर 1984
8. पार्ले, डॉ0 एस0के0 महान पाश्चात्य शिक्षाशास्त्री, गर्ग ब्रदर्स, प्रयाग।
9. पाल, डॉ0 एस0के0 गुप्त, डॉ0 एल0एन0 शिक्षा–दर्शन, कैलाश प्रकाशन, इलाहाबाद 2004 ।
10. पाण्डेय डॉ0 राम शकल, विश्व के श्रेष्ठ शिक्षाशास्त्री, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा 2005।
11. राजपूत, जगमोहन सिंह –क्यों तनावग्रस्त हैं शिक्षा व्यवस्था, किताब घर प्रकाशन, नई, दिल्ली, 2008
12. वर्मा, वी0एन0 प्रसाद, विश्व के महान के शिक्षा शास्त्री, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना।
13. सिंह डाॅ0 ओ0पी0 शिक्षा दर्शन एवं शिक्षा शास्त्री, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद 2004।

****

शासकीय एवं अशासकीय स्कूलों में कार्यरत अध्यापको की कार्य सन्तुष्टि का तुलनात्मक अध्ययन

मृदुला दुबे * डॉ. सुधा रिछारिया **

प्रस्तावना – प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में कार्य का महत्वपूर्ण स्थान होता है। प्रत्येक कार्य व्यक्ति की शारीरिक व बौद्धिक क्षमता पर निर्भर करता है। कार्य के क्षेत्र में शिक्षा व बुद्धि का महत्वपूर्ण स्थान है। संसार में दो व्यक्ति शारीरिक रूप से समान हो सकते है। किन्तु मनोवैज्ञानिक गुणों व क्षमताओं की दृष्टि से उनमें अन्तर देखे जा सकते है शिक्षा प्रदान करने की औपचारिक संस्था विद्यालय है जो अविकसित क्षमता वाले व्यक्ति को क्षमताओं को विकसित करता है। व्यक्ति भी शारीरिक व मानसिक सन्तुष्टि के साथ–साथ कार्य को सन्तुष्टि चाहता है। जो कार्य एवं क्षेत्र व स्थान पर एक समान कार्य करने पर अलग–अलग हो सकती है। यहां शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों की कार्य सन्तुष्टि का तुलनात्मक अध्ययन किया जा रहा है।

शोध के उद्देश्य –

(i) शासकीय विद्यालयों में कार्यरत अध्यापको की कार्य सन्तुष्टि का अध्ययन करना।

(ii) अशासकीय विद्यालयों में कार्यरत अध्यापको को कार्य सन्तुष्टि का अध्ययन करना।

(iii) शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में कार्यरत अध्यापको की कार्य सन्तुष्टि का अध्ययन करना।

शोध अध्ययन–शोध अध्ययन के दौरान विभिन्न शिक्षा विदों के द्वारा **लिखित साहित्य का अध्ययन किया –**

1. जगदीश और श्रीवास्तव ए.के. ने वर्ष 1983 में 'पटोरीब्ड राल स्ट्रेस एण्ड जॉब सेटिसफेक्शन' शीर्षक में अध्ययन किया तथा अध्ययन के परिणाम स्वरूप कर्मचारियों की कार्य सन्तुष्टि कार्य करते हुये प्राप्त हुई व कार्य के पश्चात् उनके द्वारा अनुभव किये गये तनाव से सार्थक रूप से प्रभावित पाये गये।

रोहल रितु 2005 ने शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों में कार्यरत शिक्षिकों में कार्य सन्तुष्टि का अध्ययन किया और निष्कर्ष रूप से पाया कि अशासकीय विद्यालयों के शिक्षकों की तुलना में शासकीय विद्यालयों के शिक्षक परोभति, पहिचान, स्वतंत्रता, वेतन, सुरक्षित नौकरी आदि कारको से अधिक सन्तुष्ट है। अशासकीय विद्यालयों के शिक्षक उत्तरदायित्वों उपलब्धि, कार्य परिस्थितियों और व्यक्तिगत जीवन में असन्तुष्ट पाये गये।

अध्ययन विधि –प्रस्तुत अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

न्यायदर्श चयन – प्रस्तुत अध्ययन हेतु दतिया जिले के शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के अध्यापको को लॉटरी विधि के द्वारा न्यायदर्श के रूप में चयनित किया गया है।

अध्ययन में प्रयुक्त उपकरण – प्रस्तुत अध्ययन के उद्देश्य की पूर्ति हेतु प्रदत्त संकलन के लिये निम्न उपकरण का प्रयोग किया गया है।

अध्यापक कार्य सन्तुष्टि स्केल–कुमार एवं मुट्ठा।

प्रदत्तो का प्रस्तुतिकरण एवं विश्लेषण – किसी भी समस्या का वैज्ञानिक विधि से अध्ययन करने का तात्पर्य संकलित समेंको को क्रमबद्ध अवलोकन वर्गीकरण कलांकन द्वारा प्रदत्तो का प्रस्तुतीकरण, विश्लेषण एवं विवेचना करना है। प्रस्तुत अध्ययन में प्रदत्तो को निम्न सांख्यिकी गणनाओं में व्यक्त किया गया है – **सारणी 1 (निचे देखे)**

तालिका से स्पष्ट होता है कि अशासकीय एवं शासकीय विद्यालयों में कार्यरत अध्यापको का कार्य सन्तुष्टि के संदर्भ में अन्तर है। उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर शून्य परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है। इससे स्पष्ट होता है कि शासकीय विद्यालयों में कार्यरत अध्यापको में कार्य सन्तुष्टि अशासकीय विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों की तुलना में अधिक होती है।

निष्कर्ष – शासकीय विद्यालयों के अध्यापक, अशासकीय विद्यालयो के अध्यापको की तुलना में अधिक सन्तुष्ट, सुरक्षित एवं भविष्य के प्रति निश्चित पाये गये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कुमार पी.और मुटठा डी.एन अध्यापको के लिये कार्य सन्तुष्टि मानकीकृत प्रश्नावली।
2. रोहल रितु ए स्टडी ऑफ जॉव सेटिशफेशन।
3. वतवेरिया रिशी राज– ए स्टडी ऑफ जॉव सेटिशफेशन बिथ प्रोफेशनल वेरिऐबिल।

सारणी 1

क्रमांक	अध्यापक	कुल	मध्यमान	मानक विचालन	परीक्षा	सार्थकता स्तर
1	अशासकीय अध्यापक	35	28.74	2.782	8.594	0.01
2	शासकीय अध्यापक	30	35.53	3.812	8.594	0.01

****

*शोधार्थी, जे.जे.टी. यूनिवर्सिर्टी, झुनझूनू (राज.) भारत
** प्राचार्या, श्रीमती विद्यावती कॉलेज ऑफ ऐजूकेशन, झांसी (उ.प्र.) भारत

Effect Of Air Pollution On Selected Physical Fitness Variables Of School Children

Ravi Bhadoria *

Abstract - The purpose of the study was to assess the effect of air pollution on selected physical fitness variables of school children belonging to more polluted and relatively less polluted zone. The subjects from more polluted zone were the students of various schools of Bharuch(guj.)where fertilizer plant is situated was selected while students of schools of Bhopal (m.p.)where there is no industrial plant was selected as the less polluted zone the students were 400 male students from each zone studying in classes IX to XII i.e. 14 to 18 yearsof age. Selected physical fitness variables were shoulder strength, abdominal strength,endurance,agility,power,speed and cardio-respiratory endurance. These variables of each subject were obtained by administering AAHPER youth fitness test the data were collected from both zones and in order to find out the difference between more polluted and less polluted zone.means of each of the groups were tested for significance by using the "t"test. The level of significance was 0.05.the study concluded that the selected variables of the subjects of class IX to XII belonging to more polluted and less polluted zones differ from each other significantly in most of the variables.

Introduction -In the present world people are suffering with various types of physical and mental disorders due to advancement of science and technology we have become a mechanical mobile society,relying on machines rather than muscles to get around as a result obesity and overweight, the problems that come with high bloodpressure, diabetes, cardiac arrest etc. Are on the rise scientific evidence tells us that one of the keys to preventing these problems is physical fitness and exercise.

Physical fitness refers to the organic capacity of the individual to perform the normal task of daily living without undue tiredness or fatigue having reserves of strength and energy available to meet satisfactory emergency demands suddenly placed upon him it involve the performance of the heart and lungs and the muscles of the body strength, power, speed, agility, strength, endurance, cardiorespiratorye-ndurance etc. Are the components of physical fitness.

Physical fitness by and large gets influenced by many factors such as age,sex,heredity and environment etc.out of the above mentioned factors environment is the neglected factor though it affect the life of an individual directly.

Environment means whatever surrounds the individual in other words what ever surrounds the individual constitute his environment it is also known as external environment .It is also known as external environment which includes the air,water,soil,noise,sun radiations etc.On the other hand, everyone has internal environment which consists of his body, his internal systems and their functions. The state of balance is disturbed due to the environment pollution and diseases are caused.

Out of various types of pollution (air, water, noise, etc.) air pollution is continuously increasing rapidly and has become a matter of concern because the immediate environment of man comprises of air on which depends all forms of life. According to the Indian Standards Institution "air pollution is present in ambient atmosphere of substances, generally resulting from the activity if men , in sufficient concentration , present for a sufficient time and under circumstances which interfere significantly with the comfort health or welfare of person or with the full use or enjoyment of property. In short, air pollution is defined as presence of any foreign materials in atmosphere either in the form of particular matter or gas in sufficient quantity and duration which are detrimental to mankind, vegetation and material. The release of air pollutant in atmosphere directly affects the health and physical fitness of human being. The purpose of the study was to assess the effect of air pollution on selected physical fitness variables of school children of 14-18 years of age belongs to more polluted and relatively less polluted area.

Methodology - Study was conducted in two zones i.e. more polluted zone for which various schools of Bharuch (Guj.) where fertilizer plant is situated which produces copper metal as main produce along with sulphuric acid and single super phosphate fertiliser, was selected while the less polluted zone of rural area for which various schools of Bhopal (m.p.) which is purely a urban belt , with less air pollution and no industrial plant , was selected Subject were 400 male students from each zone studying in classes ix to xii belonging to mostly from middle class families. Thus there was homogeneity among the subjects as they were of same group representing a class of same standard in lifestyle, food habits, daily routine etc. The main difference was in their zonal distribution of residence.

Selected physical fitness variables were arm and shoulder strength, abdominal strength and endurance, agility, power, speed and cardio respiratory endurance. These variables of each subject was obtained by administering AAHPER youth fitness test which included the following iteams.

*PGT (Physical Education) The Aditya Birla Public School, Kharach Bharuch (Gujarat) INDIA

1. Arm and shoulder strength was assessed by the number of completed pull ups.
2. For abdominal strength and endurance numbers of completed bent knee sit ups in one minute were performed.
3. Agility was measured by the shuttle run test and the performance was recorded nearest 1/10 of a second.
4. For testing the power, standing broad jump test was used and the performance was measured to the nearest inch.
5. Speed was assessed by using 50 yards dash run . The performance was recorded to the 1/10 of a second.
6. In order to assess the cardio- respiratory endurance 600 yard run/walk was used and the performance was recorded to the nearest 1/10 of a second.

The subject were divided in to four groups according to the class of students i.e.IX,X,XI andXII as A,C,E and G of more polluted zone and B,D,F and H from less polluted zone respectively in order to find out the difference between the means of selected physical fitness variables of more polluted and less polluted groups. the data were subjected to the "t" test the level of significance was kept at 0.05

Analysis Of Data - The comparison of means of selected physical fitness variables of subjects of class IX-XII from more polluted and less polluted groups are presented in table 1 **(See in the last page)**

Result Of The Study - Within the limitations of the study the following are the results-

1. The performance of subjects in pull ups showed that the subjects of all the classes belonging to less polluted zone had better shoulder strength than the subjects belonging to more polluted zone.
2. In case of situps the performance revealed that the subjects of all the classes belonging to less polluted zone had better abdominal strength than the subjects belonging to more polluted zone.
3. The performance of shuttle run also revealed that the subjects of all the classes belonging to less polluted zone had better agility compare to the subjects belonging to more polluted zone.
4. The subject of classes IX,X and XI belonging to less polluted zone had performed better in standing broad jump which states that they have better explosive strength than to the subjects belonging to more polluted zone. But there was no significant difference found between the subjects of class XII belonging to both the zones.
5. The performance of 50 yard dash made it clear that the subjects of class IX and X belonging to less polluted zone had better speed than the subject of more polluted zone whereas there was no significant differences found between the subjects of class XI and XII belonging to both zone.
6. In case of 600 yard run/walk the performance revealed that the subjects of only classX belonging to less polluted zone had shown better cardio respiratory endurance than the subject of more polluted zone whereas there was no significant differences found between the subjects of class IX,XI and XII belonging to both zone.

References:-

1. Bosco james B. and Gustafon William F(1983) measurement and evaluation in physical edu.,fitness and sports Eaglrwood cliffs newjersey, Prentice hall inc.
2. Mathew Donald K. And Fox Edward L. (1976) The physiological basis of physical education and athletics Philadelphia W.B. Saunders co.
3. Hardayal Singh (1991) science of sports training New Delhi D.V.S. publication.
4. Sahu,D.K.Srinivas (1999) study of air quality of industrial area surrounded by coal mines.

Class		Arm &Shoulder strength (numbers)	Abdominal strength & endurance (numbers)	Agility (sec .)	Power (feet)	Speed (sec.)	Cardio Respiratory Endurance (sec.)
IX	Mean(A)	3.37	21.79	11.27	6.89	7.64	147.93
	Mean (B)	6.56	25.10	10.93	7.44	7.43	143.98
	DM	3.19	3.31	0.33	0.54	0.21	2.94
	"t" ratio	8.67*	5.60*	4.42*	6.63*	3.87*	1.23
X	Mean(C)	4.50	23.28	10.76	7.56	7.45	139.70
	Mean (D)	7.51	26.55	10.30	7.66	7.44	134.41
	DM	3.03	3.22	0.56	0.21	0.33	5.30
	"t" ratio	7.45*	6.10*	8.11*	2.95*	5.70*	2.16*
XI	Mean(E)	5.56	25.47	10.56	7.28	7.34	139.43
	Mean (F)	7.43	26.88	10.43	7.71	7.33	140.10
	DM	1.86	1.45	0.31	0.43	0.08	0.26
	"t" ratio	4.45*	2.40*	4.24*	4.87*	1.16*	0.12*
XII	Mean(G)	5.54	23.44	10.95	7.55	7.43	140.65
	Mean (H)	8.56	25.67	10.45	7.87	7.31	139.44
	DM	3.03	2.55	0.50	0.09	0.10	2.10
	"t" ratio	7.65*	3.97	6.70*	1.42	1.90	0.87

*Significant at 0.05 level(198) =1.97 more polluted A,C ,E and G less polluted B,D,F and H

उच्च शिक्षा - दशा एवं दिशा

प्रो. विजया वधवा *

प्रस्तावना – सीखना एवं सिखाना इसमें दो पक्ष हैं (1) सीखना- जिसका संबंध शिक्षार्थी से हैं और (2) सिखाना – जिसका संबंध शिक्षक से हैं। अत: स्पष्ट है कि शिक्षा प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण पक्ष शिक्षक हैं, जो इस प्रक्रिया को न केवल गति देता हैं बल्कि विद्यार्थियों में योग्यताओं के विकास व चरित्र निर्माण और अध्ययन हेतु प्रोत्साहित करता है। अत: शिक्षक को ज्ञानवान, नैतिक गुणो से परिपूर्ण तथा विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करने की क्षमता वाला होना चाहियें क्योंकि शिक्षक के व्यक्तित्व का प्रभाव विद्यार्थियों पर अमिट पड़ता है।

हमारा देश एक ऐसा देश है जिसमें युवाओं की संख्या लगभग एक चौथाई होने से सर्वाधिक है। भारत जैसे परम्परा से आधुनिकता की ओर तेजी से अग्रसर होने वाले समाज में युवा लक्ष्यहीन सा हो गया हैं। हमारी उच्च शिक्षा नैतिक मूल्यों व रोजगार प्रदान करने में असहाय सी साबित हुई है। इसका पूरा श्रेय कहीं ना कहीं हमारी वर्तमान व्यवस्था व उच्च शिक्षा को जाता हैं। आज युवाओं में नैतिकता का पतन, सांस्कृतिक मूल्यों का अभाव, उद्दण्डता, नकारात्मक सोच पनपी है। घर-महाविद्यालय या समाज कहीं भी युवाओं में यह कमियाँ देखने को मिल जायेंगी। आज का युवा (उच्च शिक्षित) है, वह गुरू, माता-पिता, भाई-बहिन का सम्मान करने में झिझकनें लगा हैं। हेलो-हाय संस्कृति में आज युवा मोबाईल, टी.वी., इन्टरनेट में सिमट कर रह गया है। युवाओं की यह नकारात्मक सोच (परिवर्तन) उच्च शिक्षा पर प्रश्न चिन्ह लगाती है। इन कमियों को अब समाज वैज्ञानिकों, शिक्षाविदों एवं नीति निर्धारकों द्वारा महसूस किया जाने लगा है।

एक समय था जब भारत को जगत गुरू की उपाधि प्राप्त थी और विदेशों से भी बडे-बड़े विद्वान शिक्षा ग्रहण करने हमारे विश्वविद्यालयों में तक्षशिला, नालन्दा, विक्रम शिला में आते थे। हमारी स्थिति में परिवर्तन हुआ और हमारी शिक्षा का विकास क्रम अवरूद्ध सा हो गया। सन् 1857 में अंग्रेजों ने लन्दन विश्वविद्यालय के अनुकरण पर कलकत्ता विश्वविद्यालय, मद्रास विश्वविद्यालय और बम्बई विश्वविद्यालय की स्थापना की। उनकी इस स्थापना के पीछे एक कूट योजना भी थी। 'मैकाले' ने जो टिप्पणी लिखी थी उसमें उन्होनें बताया था कि अगर हम अंग्रेजी के माध्यम से भारत के विद्वानों को प्रशिक्षित करने का प्रयास करें तो एक दिन ऐसा आएगा कि वे केवल रंग के भारतीय रह जायेंगे। भारत में वर्तमान उच्च शिक्षा का आरम्भ अंग्रेजी शासनकाल में हुआ था। अंग्रेजों ने भारत को जो शिक्षा पद्धति प्रदान की है वो मैकाले शिक्षा पद्धति है जिसका उद्देश्य पुस्तकीय ज्ञान प्रदान करना है। अंग्रेजों के लिये शिक्षण संस्थाएँ गुलाम पैदा करने के कारखानें हैं, जहां केवल बाबू पैदा होते हैं, इससे अधिक कुछ नहीं।

सरकार द्वारा उच्च शिक्षा पर अधिक ध्यान दिया जा रहा हैं, उच्च शिक्षा में अनेक नवाचार एवं गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करते हुए नवीन आयाम स्थापित किये जा रहे है। अब उच्च शिक्षा का उद्देश्य केवल शिक्षित होना नहीं है। उच्च शिक्षा का दायरा परम्परागत शिक्षा के साथ रोजगारोन्मुखी होता जा रहा है। फिर भी जो परिणाम आने चाहिए थे वे नहीं आ रहें हैं, क्योंकि आज युवा को जो शिक्षा दी जा रही हैं वह लक्ष्यहीन है उसे नहीं पता कि जो शिक्षा वह प्राप्त कर रहा है वह उसे रोजगार देगी या नहीं, ऐसी अनिश्चितता के कारण युवा में बहुत जल्दी भटकाव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

यद्यपि स्वतंत्रता उपरान्त भारत में उच्च शिक्षा में सुधार हेतु बनाये गये अनेक कमीशन डॉ0 राधाकृष्णनम् की अध्यक्षता में द युनीवर्सिटी एजुकेशन कमीशन – 1948-49 डॉ0 डी. एस. कोठारी की अध्यक्षता में कोठारी कमीशन 1964-66 तथा नेशनल कॉलेज कमीशन 2006-09 उच्च शिक्षा में परिवर्तन हेतु दिशा-निर्देश देते रहे हैं।

अंग्रेजी शासनकाल में शिक्षा को नौकरी से जोड़ शिक्षितो के मन में शारीरिक श्रम के प्रति हीनता की भावना पैदा कर दी, जिसका भयंकर दुष्परिणाम हुआ, शिक्षा का उत्पादकता से दूर हो जाना। भारतीय समाज आज पाश्चात्य संस्कृति के पद चिन्हों पर हैं। ऐसी स्थिति में युवाओं के सामने अनेक समस्याएँ है, विशेषकर बदलते सामाजिक मूल्यों के साथ अपने आप को बदलने की। किसी भी देश में युवाओं को समाज के उद्देश्यों और आवश्यकताओं के अनुरूप ढालना होगा। आज हमारे युवा वर्ग को व्यावहारिक तथा तकनीकी शिक्षा की आवश्यकता है, न कि किताबी शिक्षा की। स्वामी विवेकानन्द ने लिखा है कि –**'केवल पुस्तकीय ज्ञान से काम नहीं चलेगा। हमें उस शिक्षा की आवश्यकता हैं, जिससे की व्यक्ति स्वयं अपने पैरों पर खड़ा हो सकता हैं।'**– मैं विवेकानन्द बोल रहा हूँ।

सुझाव –

1. वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में आमूल परिवर्तन की आवश्यकता हैं एक ऐसी शिक्षा व्यवस्था को विकसित करना होगा जो कि युवा वर्ग को व्यावहारिक तथा तकनीकी शिक्षा दें। इस सम्बन्ध में एक व्यावहारिक सुझाव यह है कि भारत कृषि प्रधान देश है जहाँ की 70 प्रतिशत जनता कृषि एवं कृषि से सम्बन्धित उद्योगो से अपना जीवन निर्वाह करती है। अत: अधिकाधिक युवा वर्ग को कृषि की शिक्षा एवं तत्सम्बन्धित अनुसंधान पर सर्वाधिक बल दिया जाना चाहिए। सामान्य शिक्षा के बाद 2-3 वर्ष की व्यवसाय की शिक्षा दी जानी चाहिए। युवा वर्ग को यह विश्वास होना चाहिए कि डिग्रियां लेने के बाद रोजगार पाने के लिए उन्हें दर-दर की ठोकरे नहीं खानी होगी।
2. शिक्षण संस्थाओं की प्रबन्ध समितियों में युवा वर्ग की भागीदारी आवश्यक है।
3. युवा वर्ग में सच्चे व ईमानदार नेतृत्व का विकास करना चाहिए।
4. शिक्षण संस्थाओं को सभी राजनीतिक दलों तथा नेताओं के दाँव-पेंच से पूर्णतया दूर रखा जाए।
5. असमानताओं व अन्यायो को खत्म करने के संबध में सरकार की नीति

* सहायक प्राध्यापक, शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

साफ होनी चाहिए।

6. देश में आर्थिक असमानताओं व अन्यायों को खत्म करने के लिए सरकार को तेजी से कदम उठाना चाहिए। आर्थिक कठिनाईयाँ व्यक्ति के नैतिक बल को कम कर देती है।

भारतीय समाज के वर्तमान स्वरूप में क्रांतिकारी परिवर्तन हो रहे हैं फिर भी यह सत्य है कि युवाओं को सही एवं रचनात्मक दिशा देकर एक ऐसे नवभारत का निर्माण करना होगा जिसे देख कर सारा विश्व चकित रह जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय समाज एवं शिक्षा – लक्षता गुप्ता।
2. मैं विवेकानन्द बोल रहा हूँ – गिरिराज शरण।
3. समाज कल्याण – फरवरी।
4. समाजशास्त्र – डॉ0 ए.पी.श्रीवास्तव।
5. रचना – अक्टुबर – नवम्बर 2013

****

आधुनिक शिक्षा पर वैदिक शिक्षा का प्रभाव

डॉ. अंतिम बाला जैन *

प्रस्तावना – विद्या का बोध हमें ज्ञान की उस विधा के द्वारा होता है जिसमें व्यक्ति के वैयक्तिक (व्यक्तिगत) गुणों की अभिवृद्धि के साथ-साथ उसके सामाजिक, सांस्कृतिक और राष्ट्रीय कर्तव्यों को निश्चित करना होता है। निश्चय ही यह व्यवस्था जो हमें वर्तमान के रूप में प्राप्त हुई है यह अचानक नहीं है बल्कि उसका एक निश्चित क्रम और विस्तृत इतिहास रहा है, जिसे जानने, संरक्षित करने और विकल्प को प्राप्त कराने के लिए अनुभव से उत्पन्न हुआ है। ज्ञान को लिपि (भाषा) के रूप में संचित करने की आवश्यकता है, जो केवल शिक्षा द्वारा ही संभव हो सकता है, इस हेतु स्वाध्याय, प्रवचन एवं चिंतन की प्रक्रिया का महत्व है।

आधुनिक शिक्षा शास्त्र वैदिक शिक्षा की परंपरा से प्रेरित (प्रभावित) है ? इसके उत्तर में अनेकों उदाहरणों के अवलोकन से हम इस निष्कर्ष पर पहुंच सकते है कि आधुनिक शिक्षा शास्त्र वैदिक शिक्षण परम्परा से अनुप्राणित है। महिर्षि सायणाचार्य ने वेद शब्द प्रकृति की विद धातु को चार अर्थों – यथा – विद्ज्ञाने, विदसत्रायम, विदललाभे और विद्क्यािरणे द्वारा स्पष्ट किया है (ज्ञान प्राप्ति, समझने उससे लाभ और विचार अर्थात चिंतन करना)। इससे स्पष्ट होता है कि ज्ञान कोई बाह्य वास्तु नहीं, जिसे शिक्षा के द्वारा विद्यार्थी पर लादा जा सकता है बल्कि यह तो प्रत्येक व्यक्ति (जीव) के अंतर में स्थित वह आत्म – ज्योति है जिसे ज्ञानेन्द्रियों द्वारा बाहरी जगत की अनुभूतियों के आधार पर शिक्षा रूपी उपक्रम के द्वारा प्रकट किया जाता है।

महर्षि द्वारा प्रतिपादित इस तथ्य की झलक अंग्रेजी भाषा म्कनबंजपवद शब्द से भी मिलती है, जिसमें Education मिश्रित शब्द का अभिप्राय अंतर निहित शक्ति को बाहर की ओर प्रकट करना है, जिसे दर्शनशास्त्र में ज्ञान मनुजस्य तृतीय नेत्रम अथवा ज्ञान ब्रम्ह प्रज्ञान ब्रम्ह। सत्यं ज्ञानमनन्त बम्ह के द्वारा भी वर्णित किया गया है।

इससे यह प्रतीत होता है कि अनेकों विषयों का अध्ययन करना, उनके अर्थ-ज्ञान के अभाव में कण्ठस्थ करना ही शिक्षार्थी का ध्येय नहीं है अपितु उससे प्राप्त ज्ञान का व्यावहारिक पक्ष को जानना भी अनिवार्य है। आधुनिक शिक्षाविदों ने ज्ञान की विधा के रूप में शिक्षा शब्द के संकुचित एवं व्यापक अर्थ में व्याख्या करते हुए शिक्षण को औपचारिक व्यवहारिक साधनों को समान रूप से समाहित कर शिक्षक और विद्यार्थी की प्रमुख भूमिका को दर्शाया है। गुरू ही एक ऐसा प्रमाणिक व्यक्तित्व है, जो शिक्षा रूपी संसाधनों के द्वारा समीप आये विद्यार्थी की जिज्ञासा को समाधान कर इसे इस योग्य बनाता है। वह अज्ञानान्धकार से निकलकर ज्ञानालोक से आच्छादित हो जाता है।

आजकल की शिक्षा पद्धति के अनुसार विद्यार्थी का या बालक का समुचित विकास हो सके इसके लिए उस पर परिस्थिति का प्रभाव बहुत अधिक पड़ता है। घर में माता पिता बालक की शिक्षा पर उचित ध्यान नहीं दे सकते और यदि वे- दे भी सकें, तो समूह में बालक उचित प्रतिद्वन्द्विता में पड़कर जितनी व्यावहारिक शिक्षा प्राप्त कर सकता है, उतनी घर पर नहीं और घर के बाहर जाकर यदि उस बालक को घर जैसा वातावरण न मिला, तो भी उसका पूर्ण विकास नहीं हो सकता। इस समस्या का हल करने के लिए वैदिक काल में गुरूकुल पद्धति का निर्माण किया गया था। गुरूकुल का अर्थ है गुरू का कुल। ऋषियों का विचार था कि घर में शिक्षा समुचित रूपेण संभव नहीं। अत: बालक को शिक्षा प्राप्ति के लिए बाहर भेजा जाए। परन्तु बाहर भेजकर भी उसे एक घर से दूसरे घर में ही भेजा जाए। एक कुल से दूसरे कुल में भेजा जाये एक परिवार से दूसरे परिवार में भेजा जाये। यही गुरूकुल शिक्षा प्रणाली का आधारभूत तत्व था।

ये गुरूकुल उपहवरे गिरीणां संगमे च नदीनां धियो विप्रो अजायत के अनुसार पर्वतों की उपत्यकाओं और नदियों के किनारे ऋषियों के आश्रमों में होते थे। वहॉ बालक पुस्तकों के अतिरिक्त प्राकृतिक परिस्थितियों से भी घिरा रहता था। यहीं आजकल की शिक्षा में हयूरिस्टिक मैथड कहा जाता है। बालक वहॉ स्वयं सीखता है, परीक्षण करता जाता है और सीखता जाता है। वैदिक ऋषियों ने विद्यार्थी को शिक्षा का केन्द्र माना है। अत: इसे गुरूकुलों में शिक्षा प्राप्त करने की योजना बताई है। परन्तु यह गुरूकुल आजकल के होस्टलों के समान न थे। अत: इन अबोध बालकों की रक्षा के लिए, विकास के लिये वहॉ पर गुरूओं की व्यवस्था की गई थी। गुरू के पास विद्यार्थी उपनयन संस्कार द्वारा पहुँचता था। उपनयन संस्कार का यह तात्पर्य था कि आचार्य उपनयमानो ब्रहमचारिणं कृणुते गर्भमन्त: रात्रिस्तिस्र: उदरे विभर्ति अर्थात आचार्य माता की तरह ब्रम्हचारी को तीन रात तक अपने अन्तेवास में पूरी देखरेख के साथ रखता है। यह है गुरू शिष्य का सम्बन्ध। यह विद्यार्थी ब्रम्हचारी होता था। ब्रम्हा का अर्थ है 'महान'। जीवन में निरन्तर विकास करते जाना, आगे ही आगे बढ़ते जाना ब्रम्हचर्य है। ब्रम्हचर्य का अर्थ 'वीर्यरक्षा' भी है। विद्यार्थी के मानसिक आध्यात्मिक और शारीरिक विकास के लिए ब्रम्हचर्य आवश्यक है। 24 वर्ष तक ब्रम्हचर्य का पालन करने वाला वसु, 36 वर्ष तक पालन करने वाला रूद्र तथा 48 वर्ष तक ब्रम्हचर्य का पालन करने वाला आदित्य बम्हचारी कहता था।

गुरू का महत्व शिक्षा के क्षेत्र में वैदिक ऋषियों ने अत्याधिक माना है। **'आचारं ग्राहयति इति आचार्य'** जो अच्छे आचार-विचार ग्रहण कराये, वह आचार्य है। छात्र शब्द भी इसी भावना का द्योतक है। छात्र का अर्थ है, जिसे छाया जाये, विध्न बाधाओं से बचाया जाए, वह छात्र है। छात्र को अन्तेवासी अर्थात गुरू के अन्दर बसने वाला भी कहते हैं। उपनयन संस्कार का भी यही भाव है। अत: वैदिक ऋषियों ने गुरूओं एवं आचार्यो के प्रति अपनी सद्भावना प्रकट की है।

पाश्चात शिक्षाविद एम्स ने शिक्षणाभ्यास की प्रक्रिया में शिक्षक और शिक्षार्थी के महत्व को प्रतिपादित करते हुए उनके उभय पक्ष की सक्रियता

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

को बल दिया है। इन्हीं विचारों से एक कदम आगते बढ़ते हुए प्रसिद्ध अमरीकी शिक्षा दार्शनिक जॉन डीवी ने इस प्रक्रिया को त्रि–मुखी बताते हुए शिक्षण प्रक्रिया को मनोवैज्ञानिक और सामाजिक पक्ष में विभाजित करते हुए शिक्षक शिक्षार्थी के साथ सामाजिक पक्ष को भी सम्मिलित किया है। उनके अनुसार बालक को शिक्षित करने लिए उसकी मूल प्रकृतियों का ज्ञान होना आवश्यक है, जो एक मनोवैज्ञानिक पक्ष है और यह कि समाज के सहयोग के बालकों के मनोभावों का उचित दिशा में विकास नहीं हो सकते, इससे यह कि निष्कर्ष निकाला गया है कि बालक के वैयक्तिक विकास में वातावरण सहायक सिद्ध होता है। इस संबंध में वातावरण की प्रधानता द्धारा बालक की मूल प्रवृत्तियों को नष्ट और विकसित होते हुए दर्शाया गया है। इस संबंध में जंगल में छूटे हुए गड़रिये के बच्चों मोगली का उदाहरण मानस पटल पर उभरता है, जिसमें जानवरों की संगति में रहने का कारण उसके आचार विचार एवं व्यवहार और खानपान संबंधित भावों की अभिव्यिक्ति पूर्णत: पशुवत हो गई थी। जंगल में छूटे उस बालक को जंगली हिंसक पशुओं द्धारा पालित किए जाने से उसमें मानवोचित व्यवहार का अभाव होकर पाशविक प्रकृतियां ही अधिक झलकती थी, चलने खाने का ढंग पशुवत था। संयोगवश जंगल में पनपे इस मानव शिशु को जब सामान्य वातावरण आर्थात मानवों का साथ मिला जो उसमें धींरे धींरे मानवोचित प्रवत्तियों का विकास होने लगा, इस आधार पर स्पष्ट होता है कि नैसर्गिकता से अधिक वातावरण प्रभावित करता है।

इसी आधार पर प्रसिद्ध दार्शनिक जान डीवी ने सामाजिक पृष्ठभूमि ही विद्यार्थी के व्यक्त्त्वि के विकास के लिए उचित मार्ग प्रशस्त कर सकती है। प्रतिकूल परिस्थितियों से बचाने हेतु समाज को यह निश्चित करना होगा कि बालको को आत्मनिर्भर और सामाजिक व्यवहार के प्रशिक्षण के लिए कौन कौन से विषय और किस शिक्षण पद्धति से बढ़ाया जाय, जिससे उसमें कार्य कुशलता और समाज स्वीकृत आचरण के अनुरूप क्षमता को विकास हो सके जब सामाजिक आवश्यकता पर आधारित पाठ्यक्रम को अधिगम की प्रक्रिया के अंतर्गत सम्मिलित किया जाय।

शिक्षणाभ्यास की प्रक्रिया पर यदि सूक्ष्म दृष्टि डाली जाये तो वैदिक कालीन शिक्षा पद्धति जैसे वर्तमान प्रक्रिया भी बालक के वैयक्तिव उत्थान के साथ साथ सामाजिक उत्थान को विशेष महत्व प्रदान करती है। वर्तमान में शिक्षणाभ्यास की प्रक्रिया में बालक नैसर्गिकता की ओर विशेष महत्व दिया जाता है, जबकि वैदिक कालीन शिक्षणविद्या में गुरू को विशेष महत्व प्रदान किया गया था, साथ ही तत्कालीन शिक्षा व्यवस्था में आध्यात्मिक चिन्तनप्रधान ज्ञानात्मक उद्देश्य की ओर विशेष ध्यान दिया जाता था, जबकि वर्तमान पाठ्यक्रम में कौशल (Skill) विशेष की ओर ध्यान देते हुए आत्मनिर्भरता के उद्देश्य से मानव को पूर्ण मानवत्व प्रदान करने का प्रयत्न किया जा रहा है।

शिक्षण अभ्यास की प्रक्रिया में प्रयुक्त पाठ योजना के सोपानों के महत्व को क्रियात्मक पक्ष के रूप में जाना जावे जो उसमें प्रयुक्त प्रस्तावना का विद्यार्थी के पारिवारिक और सामाजिक वातावरण की पृष्ठभूमि का परिचय देता हुआ उसके बौद्धिक स्तर का मूल्यांकन करने में सहायक होता है, इसके पूर्व माता द्धारा आचरण का प्रशिक्षण और पिता द्धारा उसके सामाजिकीकरण के साथ शैक्षणिक वातावरण के साथ छात्र द्धारा प्राप्त ज्ञान की गम्भीरता का बोध भी हो जता है।

पाठ योजना में प्रयुक्त आदर्श वाचन अनुकरण वाचन और अशुद्धि संशोधन वेदांश के रूप में शिक्षा शास्त्र का विलय है, जिसका उद्देश्य स्वर वर्णादि का ठीक–ठीक ज्ञान कराना है। भाषा शिक्षण में शब्दों की पहचान स्वर का बोध और उच्चारण कौशल का विशेष महत्व है। वर्तमान शिक्षण विधि को अशुद्धि संशोधन के सोपान द्धारा अभ्यास करने का प्रयत्न किया गया है। जहॉ इस अभ्यास की और ध्यान नहीं दिया जाता वहां शब्दों के उच्चारण में अनेकों दोष झलकने लगते है, जैसे काव्य को कव्ब , आचार्य को आचार्ज, भाषा को भाखा सा प्रतीत होने लगता है। इस दोष के निवारण के लिए शिक्षाविदों ने अशुद्धि संशोधन और कातिन्य – निवारण, विस्तृत व्याख्या का विधान किया गया है।

पाठ ने विश्लेषणात्मक बोधात्मक और पुनरावृत्यात्मक प्रश्नों का सहारा आधुनिक शिक्षण में लिया जाता है। जिसकी छाया हम वैदिककालीन शिक्षण परंपरा में प्रश्न बोधात्मक उत्तर, अनुपूरक प्रश्न का सामाधान, विषय विस्तृत जानकारी के लिए प्रतिप्रश्न और उस पर व्याख्या के रूप में देखने को मिलती है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि आधुनिक परम्परा में भी आश्रमकालीन शिक्षण व्यवस्था की झलक देखने को मिलती हैजिसे पूर्व की विषय वस्तु में निर्दिष्ट किया जा चुका है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. वैदिक शिक्षा पद्धति – डॉ. भास्कर मिश्रा।
2. भारतीय शिक्षा पद्धति – श्री लज्जाराम तोमर।
3. हमारी शिक्षा – स्वामी निर्वेदानंद।
4. भारतीय शिक्षा का इतिहास – डॉ. शंकर विजयवर्गीय।
5. भारतीय शिक्षा प्रणाली का विकास –डॉ. आर.के. शर्मा।
6. प्रचीन भारतीय शिक्षा पद्धति– डॉ. बच्चा भारती।

****

गांधीजी का आध्यात्मिक दर्शन व मार्क्सवाद

डॉ. अंजू श्रीवास्तव*

प्रस्तावना – महात्मा गाँधी आधुनिक भारत के उन महान विचारकों में सबसे प्रमुख थे जिन्होंने भारत की बौद्धिक और सांस्कृतिक परम्पराओं से प्रेरणा ग्रहण की और अपने विचारों को तत्कालीन सामाजिक और राजनीतिक स्थिति के अनुरूप ढाला। गाँधी अपने युग के महान नेता थे। उन्होंने सत्य और अहिंसा के सनातन सिद्धांतों का व्यवहारिक जीवन में प्रयोग कर मानवता का मार्गदर्शन किया। उन्होंने समस्त भारत में राष्ट्रीय चेतना जाग्रत की। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को उन्होंने प्रभावशाली जनआंदोलन के रूप में संगठित किया। संसार के सबसे अधिक शक्तिशाली ब्रिटिश साम्राज्य को भारत से उखाड़ फेंकने के लिए उन्होंने अहिंसा एवं सत्याग्रह को अस्त्र के रूप में प्रयोग किया भारत के स्वधीनता संघर्ष का उन्होंने लम्बे समय तक नेतृत्व किया और अंत में देश को स्वतंत्रता दिलायी इसीलिए उन्हें भारत का राष्ट्रपिता कहा जाता है। 1920 से 1947 तक गाँधी जी ने भारत का एक छत्र नेतृत्व किया। इस काल में भारतीय जीवन के सभी पक्षों राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक व धार्मिक पहलुओं पर उनके महान् व्यक्तित्व की छाप पड़ी। इस काल को गाँधी युग कहा जाता है। गाँधी जी एक राजनीतिज्ञ ही नहीं वरन् एक समाज सुधारक, दार्शनिक, शिक्षाविद्, आध्यात्मिक पुरुष एवं महान विचारक भी थे। मूलरूप में महात्मा गाँधी एक आध्यात्मिक और धार्मिक संत थे। उनकी धर्म सम्बन्धी धारणा पारलौकिक नहीं वरन् लौकिक थी और वे मानवता की सेवा को ही वास्तविक धर्म मानते थे किन्तु उस समय की प्रस्थितियों के कारण उन्हें राजनीति में सक्रिय रूप से भाग लेना पड़ा। स्वयं गाँधी जी ने एक बार पोलक से कहा था 'मैंने राजनीति का चोला पहन रखा है; किन्तु हृदय से एक धार्मिक पुरुष हूँ।' 1929 में अरुण्डेल को लिखा था मेरा झुकाव राजनीति की ओर नहीं धर्म की ओर है।

गाँधीजी का सम्पूर्ण जीवन आध्यात्मवाद से ओत प्रोत था। गाँधी का धर्म मानवतावादी है। जिसका परम् लक्ष्य सेवा है। गाँधी जी के धर्म के प्रमुख तत्व है–सत्य, प्रेम और अहिंसा। गाँधी जी के धर्म में ऊँच नीच जाति भेद का कोई स्थान नहीं है। गाँधी का धर्म सर्वोदय का धर्म है। दरिद्र नारायण की सेवा का धर्म है। गाँधी के लिए धर्म और नैतिकता पर्यायवाची शब्द थे। गाँधी जी सभी धर्मों में विश्वास करते थे। दुनिया के सभी धर्मों की आधारभूत शिक्षाओं में उनका विश्वास था। उनके आश्रम में हिन्दू मुसलमान और ईसाई सभी थे। वे धर्म परिवर्तन में विश्वास नहीं करते थे। गाँधी जी का कहना था कि धर्म की आराधाना के लिए हमें किसी गुफा में अथवा पर्वत–शिखर पर जाने की आवश्यकता नहीं है। धर्म की अभिव्यक्ति तो समाज में हमारे कार्यो में होनी चाहिए। गाँधी जी ने धर्म का मानवीकरण एवं समाजीकरण किया। पीड़ितों असहायों और अभावग्रस्त लोगों की सेवा को उन्होंने सबसे बड़ा धर्म बताया। गाँधी जी ने आत्मा की अमरता के सिद्धांत को स्वीकार किया और मृत्यु के भय को दूर करने का प्रयत्न किया गाँधी ने गीता के निष्काम कर्म का उपदेश दिया। गाँधी का धर्म सह–अस्तित्व का धर्म है, सहिष्णुता का धर्म है। वे सभी धर्मो की समानता में विश्वास करते थे। एक ही लक्ष्य पर पहुँचने के ये विभिन्न मार्ग हैं। गाँधी जी एक आध्यात्मिक व धार्मिक संत थे।

जब उन्होंने देखा कि राजनीति धर्मविहीन होती जा रही है तो उन्होंने राजनीति में प्रवेश किया। इस प्रकार से गाँधीजी ने राजनीति के क्षेत्र में जो भी कार्य किये वे धार्मिक कार्य ही थे। गाँधीजी के अनुसार राजनीति देश–धर्म है, है उससे अलग होकर व्यक्ति आत्मघात करता है। गाँधीजी का धर्म रूढ़िवादी, आडम्बरयुक्त धर्म नहीं है। यह मूर्ति–पूजा भी नहीं है। वे राजनीति को धर्म और नैतिकता का अंग माते थे। राजनीति शक्ति और सम्पत्तिा प्राप्त करने के लिए संघर्ष नहीं है, वरन् वह लाखों पद–दलितों को सुन्दर जीवन व्यतीत करने योग्य बनाने, मानव के गुणों का विकास करने, उन्हें स्वतन्त्रता एवं बन्धुत्व तथा आध्यात्मिक गहराइयों एवं सामाजिक समानता के बारे में प्रशिक्षित करने का निरन्तर प्रयास है। एक राजनीतिज्ञ जो इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए काम करता है, धार्मिक हुए बिना नहीं रह सकता।

गाँधीजी यह मानते थे कि हमारे साध्य ही नहीं वरन् साधन भी उच्च होने चाहिए क्योंकि जैसे साधन होंगे वैसा ही साध्य की प्राप्ति होगी। गाँधीजी ने साध्य को जितना महत्त्व दिया है उतना ही साधन को भी। गाँधी दर्शन में इन दोनों को अलग नहीं किया गया हैं साध्य का ऊँचा होना ही पर्याप्त नहीं है। साधन की उच्चता और नैतिकता भी आवश्यक है और यदि सच पूछा जाय तो साधन अधिक महत्त्वपूर्ण है क्योंकि मनुष्य जो कर्म करता है उसका फल उसके हाथ में नहीं होता है, किन्तु कर्म अवश्य हाथ में होता है, इसलिये जो हाथ में है वह ज्यादा महत्त्वपूर्ण है। वे कहते हैं, 'मेरे जीवन में साध्य और साधन सम्परिवर्तनीय शब्द हैं।' न केवल साध्य ही नैतिक, पवित्र, शुद्ध और उच्च होने चाहिए वरन् साधन भी उसी मात्रा में नैतिक, पवित्र, शुद्ध और उच्च होने चाहिए। गाँधीजी कहते हैं, 'यदि पवित्र साध्य के लिए पवित्र साधन उपलब्धा नहीं हैं तो उस साध्य को त्याग देना चाहिए।' अपवित्र साधनों से उच्च साध्य की प्राप्ति नहीं हो सकती। जो हम बोयंगे वैसा ही हम काटेंगे। 'उद्देश्य (साध्य) की ओर हमारी प्रगति साधनों की पवित्रता के अनुपात में होगा।' 'जैसा साधन वैसे साध्य; साधन और साध्य को पृथक् करने वाली कोई दीवर नहीं।' साध्य और साधन की अपृथक्ता तथा पवित्रता पर जोर देते हुए उन्होंने 'हिन्द स्वराज' में लिखा था–'साधन एक बीज के समान तथा साध्य एक वृक्ष के समान है और साध्य तथा साधन में उसी प्रकार का अमिट सम्बन्ध है जिस प्रकार का एक बीज तथा वृक्ष में होता है।' जिस प्रकार से अच्छी फसल के लिए अच्छे बीजों की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार से अच्छे साधनों के बिना उत्तम ध्येय तक भी नहीं पहुँचा जा सकता। उन्होंने सदैव साधनों की पवित्रता

* ऐसोसिएट प्रोफेसर (समाजशास्त्र) आर्य कन्या डिग्री कॉलेज, प्रयागराज (उ.प्र.) भारत

पर जोर दिया। उन्होंने स्वराज की प्राप्ति के लिए हिंसात्मक उपायों का विरोधा किया और उनके स्थान पर सत्याग्रह रूपी अस्त्र का प्रयोग किया। समाज की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक सभी प्रकार की उन्नति के लिए अहिंसात्मक साधनों का ही उपयोग किया जाना चाहिए। युद्ध, संघर्ष, हिंसा, घृणा एवं प्रतिकार के द्वारा समाज में शान्ति स्थापित नहीं की जा सकती। जीवन का सर्वोच्च आदर्श सत्य (ईश्वर) की प्राप्ति भी अहिंसा और सत्याग्रह रूपी पवित्र साधनों से ही की जा सकती है। गाँधीजी के लिए साधन ही सब कुछ है। वे कहा करते थे, 'अहिंसा की स्थापना हिंसा से नहीं हो सकती; जहाँ प्रेम की जगह विकर्षण की प्रक्रिया चल रही हो वहाँ प्रेम कैसे स्थापित होगा? जहाँ स्वयं विषमता की वृत्ति है वहाँ विषमता कैसे दूर होगी। असत् की स्थिति से सत् की, विद्वेष से प्रेम की, शरीर बल से आत्मैक्य की स्थिति की स्थापना कभी सम्भव नहीं। कटु बीज में मीठे फल की प्राप्ति कभी नहीं हुई है। विषमताएँ, अन्याय तथा उत्पीड़न तभी दूर हो सकते हैं जब हमारे साधन भी निर्दोष एवं प्रेमपूर्ण हों। वैज्ञानिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि से साध्य साधन से भिन्न नहीं, उसी का घनीभूत है। साधन ही साध्य में रूपान्तरित होता है।' गाँधीजी छल-कपट, हत्या और पशुबल के द्वारा स्वराज प्राप्त करने के इच्छुक नहीं थे। उन्हीं के शब्दों में, 'मैं अहिंसा और सत्य हेतु देश को होमने के लिए तैयार हूँ, देश के लिए अहिंसा और सत्य को नहीं' इस प्रकार गाँधीजी ने साध्य और साधनों की पवित्रता पर बल देकर एक क्रान्तिकारी विचार का सूत्रपात किया। यही विचार उन्हें मार्क्स से भिन्न करता है। मार्क्स वर्ग-विहीन समाज के आदर्श की प्राप्ति के लिए हिंसा और क्रान्ति का उपदेश देता है।

औद्योगिक क्रांति के पश्चात् विश्व में दो वर्गों का प्रादुर्भाव हुआ-(2) पूँजीवाद या पूँजीपति वर्ग (2) श्रमिक वर्ग। पूँजीपति वर्ग ने श्रमिक वर्ग का शोषण करना आरम्भ कर दिया। पूँजीपति को शोषक वर्ग तथा श्रमिकों को शोषित वर्ग कहा जाता है। कार्ल मार्क्स को शोषित वर्ग से सहानुभूति थी। अत: दोनों के बीच उत्पन्न हुयी समस्याओं का अंत करने के लिए कार्ल मार्क्स ने नवीन विचारधारा को जन्म दिया जो समाजवाद के नाम से जानी गयी। उसके विचार केवल आदर्शवादी ही नहीं थे बल्कि वह एक व्यवहारिक राजनीतिक चिंतक था। साम्यवाद का संस्थापक और व्याख्याकार कार्ल मार्क्स को इसलिए आज महत्त्व दिया जा रहा है। मार्क्स ने जो विचार प्रतिपादित किया वे सामाजिक तथा आर्थिक जीवन को नवीन तथा ठोस आधार प्रदान करने में सफल हुए। आज जिस वैज्ञानिक समाजवाद की चर्चा होती है कार्ल मार्क्स उस विचारधारा के प्रतिपादक थे। यही कारण है कि कार्ल मार्क्स को वैज्ञानिक समाजवाद का पिता कहा जाता है। आज विश्व में कार्ल मार्क्स के विचारों का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। आज के समस्त क्रांतिकारी आंदोलनों को मार्क्स के विचारों से ही प्रेरणा प्राप्त होती है। यही कारण है कि मार्क्स को अन्तराष्ट्रीय सर्वहारा वर्ग का महान शिक्षक और नेता कहा जाता है।

मार्क्स के विचारों पर जिन प्रेरिस्थितियों घटनाओं तथा व्यक्तियों का प्रभाव पड़ा उसमें मुख्य है फ्रांस की राज्य क्रांति व हीगलवाद वास्तव में द्वन्दात्मक विकास की कल्पना हीगल के दर्शन पर आधारित थी। हीगल ने विकास तथा प्रगति को स्पष्ट करते हुए दो चीजों को मुख्य बताया (1) द्वन्द व विचार उनके अनुसार समाज का विकास विकासवाद प्रति वाद, संवाद द्वारा होता है इस विकास का वह द्वन्द द्वन्दात्मक आध्यात्मवाद से संबोधित करता है। हीगल के आदर्शवाद के स्थान पर मार्क्स ने द्वन्दवाद को भौतिकता पर आधारित किया है और मार्क्स ने स्वयं लिखा है कि 'मैने हीगल के दर्शन को सिर के बल पाया, मैंने उसे पैरों के बल पर खड़ा कर दिया।' अत: मार्क्स संसार के महानतम् विचारकों में से हैं। ऐसे बहुत कम विचारक है जिन्होंने विश्व के अधिकांश भाग को अपनी लेखनी और विचार शक्ति के द्वारा प्रभावित किया हो। प्रतिस्थितियों के गुजरने के साथ ही मार्क्स की विचारधारा निरंतर नवीनता को प्राप्त कर रही है। जब हम मार्क्स के विचारों का अध्ययन तो वे संसार के महानतम् विचारकों में से हैं।

ऐसे बहुत कम विचारक हैं जिन्होंने विश्व के अधिकांश भाग को अपनी लेखनी और विचार-शकित द्वारा प्रभावित किया हो। परिस्थितियों के गुजरने के साथ ही मार्क्स की विचारधारा निरन्तर नवीनता को प्राप्त कर रही है। जब हम मार्क्स के विचारों का अध्ययन करते हैं तो हमें ऐसा नहीं लगता है कि मार्क्स ने इन विचारों का प्रतिपादन 18वीं शताब्दी में किया था। ये विचार 20वीं शताब्दी और आगे आने वाले समय से अधिक मेल खाते हैं। मार्क्स ने मनुष्य के मन को पूरी तरह से प्रभावित किया है। उसने रूढ़िवादी और सड़े हुए समाज की धाज्जियाँ उड़ा दी है और हजारों वर्षो से शोषित पवित्र मानवता का मार्गदर्शन किया है। समानता तथा न्याय याचनाओं द्वारा नहीं प्राप्त किये जा सकते। मार्क्स कहता है कि इसके लिए शक्ति और सामर्थ्य की आवश्यकता है, जो कुछ तुम्हें चाहिए वह संघर्ष करने पर ही मिलेगा। मार्क्स ने अपने सिद्धान्तों को वैज्ञानिक स्तर पर लाने का प्रयत्न किया था। इसलिए उसने भौतिकवाद को अत्यधिक महत्त्व प्रदान किया है। यद्यपि उसने आर्थिक कारकों का बढ़ा-चढ़ाकर लिखा है और फिर भी यह सही है कि अर्थव्यवस्था आवश्यकता और उत्पादन आर्थिक जीवन के महत्त्वपूर्ण अंग हैं।

मार्क्स कर्मवाद को अत्यधिाक महत्त्व देता था। वह भाग्यवाद को उपेक्षा की दृष्टि से देखता था। उसके अनुसार भाग्यवाद आलसियों का अलंकरण है। इसीलिए उसने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि शोषित वर्ग अपने भाग्य को ईश्वर पर न छोड़कर अपने द्वारा निर्मित करते हैं।

मार्क्स ने सदियों शोषित-प्रताड़ित जनता में आशा तथा विश्वास का संचार किया था। उसने श्रमिक वर्ग को ऐसे शस्त्र प्रदान किये थे जो आज भी अनेक देशों के इतिहास को मोड़ने में सक्षम हैं।

मार्क्स साम्यवाद का महान संस्थापक है। उसका कहना है कि लक्ष्य द्वारा ही उचित साधनों की प्राप्ति होती है। अपने उद्देश्यों की प्राप्ति में वह कुछ भी नैतिक-अनैतिक नहीं मानता।

मार्क्स ने समाजवाद को वैज्ञानिक दिशा प्रदान की है। मार्क्स की विचारधारा सिर्फ यह नहीं बताती कि कैसा समाज स्थापित होना चाहिए बल्कि वह यह भी बताती है कि ऐसे समाज की स्थापना किस प्रकार की जा सकती हैं उसने अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के मार्ग में पड़ने वाली बाधाओं की भी विवेचना की है।

मार्क्स के विचारों का अध्ययन करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि वह केवल सिद्धान्तवादी विचारक ही नहीं था अपितु उसने अपना सारा जीवन संघर्ष को समर्पित कर दिया था। उसने आदर्श कल्पनाएँ नहीं की है। अपितु दरिद्रता और शोषण के शिकार असंख्य लोगों को यथार्थ रूप में चित्रित किया है। उसने लोगों को ऐसा साहस दिया है जिससे वे अपनी दासता की जंजीरें तोड़ने में सक्षम रहें।

सच पूछा जाय तो गांधी जी का विचारदर्शन केवल राजनैतिक, आर्थिक या सामाजिक समस्याओं के सामाजिक समाधान तक ही सीमित नहीं रहा है। उन्होंने तो मानव जीवन को सुखी तथा शांतिमय बनाने के लिए कुल आदर्शों की स्थापना की है। ये आदर्श व्यक्तिगत जीवन और सामूहिक जीवन में गतिरोध समाप्त करके व्यक्ति और समाज को व्यवस्थित रूप से संयुक्त करने

का मार्ग प्रशास्त करते है। गांधी की मान्यता ये थी कि मनुष्यों के व्यवहार में यद्यपि अनेकों स्वार्थजन्य बुराइयाँ देखेने को मिलती है, परन्तु मौलिक रूप में मनुष्य श्रेष्ठ प्राणी है। उनके साथ ही उनका कहना था कि प्रारम्भ में हम सब पशु थे और धीरे-धीरे विकास की प्रक्रिया से हम लोग पशु से मनुष्य बने है। गाँधी जी का विचार है कि मनुष्य जीवन का अंतिम लक्ष्य ईश्वर प्राप्ति है। अत: युद्ध और संघर्ष के प्रति आर्कषण होते हुए भी मनुष्य स्वभाव से अंहिसक है। मनुष्य जाति अभी तक जीवित है। यह तथ्य इस बात का प्रमाण है कि मनुष्य जीवन शास्त्रों की शक्ति पर नहीं बल्कि प्रेम, सत्य और अंहिसा पर टिका हुआ है। वास्तव में प्रेम, सत्य, अंहिसा का प्रभाव स्थायी होता है।

गांधी जी अनेक तथा कथित समाजवादियों से कहीं-अधिक सच्चे समाजवादी है। क्योंकि उनका आचरण भी उनके द्धारा प्रतिपादित सिद्धांतों के अनुरूप ही है। लेकिन ये भी सच है कि गांधीवादी समाजवादी पश्चिम में विकसित हुए समाजवाद से बिल्कुल भिन्न है। उनकी प्रेरणा का श्रोत कार्लमार्क्स या पश्चिम का कोई अन्य विचारक नहीं है। समाजवाद तो गांधी जी के स्वभाव का एक अंग है, और उनका विचार है कि केवल अंहिसावादी और शुद्ध ह्रदय वाले व्यक्ति ही सच्चे समाजवादी समाज की स्थापना कर सकते है। इस प्रकार गांधीवाद या अंहिसक समाजवाद समानता और सामाजिक न्याय की प्राप्ति के लिए केवल सत्य और अंहिसा पूर्ण साधनों को ही अपनाता है। इसके विपरीति मार्क्सवाद समानता और सामाजिक न्याय की प्राप्ति के लिए केवल सत्य और अंहिसापूर्ण साधनो को ही अपनाता है। इसके विपरीति मार्क्सवाद समानता और सामाजिक न्याय की प्राप्ति के लिए हिंसा और वर्ग संघर्ष में विश्वास रखता है। इस प्रकार गांधीवाद और मार्क्सवाद का लक्ष्य एक ही है पर साधन अलग-अलग है। इसीलिए कतिपय विचारकों का मानना है कि कुछ भिन्नताओं को छोड़कर गांधीवाद और साम्यवाद एक ही जैसी विचारधारायें है। इतना ही नहीं इसी आधार पर कुछ लोग इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि गाँधीवाद हिंसा रहित साम्यवाद है। लेकिन इस प्रकार के निष्कर्ष को मान लेना गांधीवाद के मूल विचारों को समझनें से इंकार करना होगा। वस्तुत: गांधीवाद और मार्क्सवाद में भेद केवल साधनों का ही नहीं है बल्कि साध्यों का भी है।

अत: गांधीवाद व मार्क्सवाद में यदि ध्यान से देखा जाय तो समानताओं की तुलना में असमानतायें अधिक महत्वपूर्ण है। गांधीवादी चिंतन के प्रसिद्ध विचारक किशोरी लाल मशरूवाला ने अपनी पुस्तक गांधी और मार्क्स में इन दोनों विचार धाराओं का तुलनात्मक विश्लेषण करते हुए लिखा है गांधीवाद और मार्क्सवाद एक दूसरे इतने भिन्न हैं जैसे लाल और हरा रंग भिन्न होता है। यद्यपि हम जानते हैं कि आँख के उस रोगी को जिसे रंगभेद की पहचान नहीं होती। दोनों ही समान प्रतीक हो सकते हैं। दोनों की विचारधारायें बेमेल हैं, उनका अन्तर मूलभूत है और दोनों ही एक-दूसरे के विरोधी हैं।

गांधी और मार्क्स दोनों ही युग पुरुष कहे जाते है। ये दोनो अपने समय के संत है इसे विनम्रता से स्वीकार कर लेना चाहिए। युग-द्दष्टा ही संत व ऋषि कहा जाता है। दोनो ने दर्शन की दरिद्रता को पहचाना और दरिद्रता के दर्शन को अंगीकार किया। उनके विचार में दर्शन की हवाई उड़ान से समाज का कल्याण होने वाला नहीं है। जब तक दर्शन जमीन से नहीं जुड़ता तब तक समाज का कल्याण नहीं हो सकता। इस बुद्धि-विलास से काम चलने वाला नहीं है कि 'मदात्मा सर्व भूतात्मा'। उपनिषद के इस मंत्र के व्यवहार भूमि पर उतारना होगा और दलितों के दर्द को अपना दर्द समझना होगा। जब एक ही आत्मा अंदर-बाहर सर्वत्र विद्यमान है तो समाज में ऊँच-नीच का भेद क्यों देखा जाता है। जब हम सब एक ही परमात्मा की संतान है तो नफरत द्धन्द्ध कलह का क्या अर्थ है। ये सब ऐसे जीवन्त प्रश्न है, जिनका सकारात्मक उत्तार खोजना ही होगा।

मार्क्सवाद व गांधीवाद दोनो ही ऐसे युगीन मत है विचार है जिनका प्रतिनिधित्व क्रमश: मार्क्स व गांधी स्वयं करते है। दोनो मत दलितों की आह से निकला हुआ समसामायिक दर्शन बन गया है जिनके केन्द्र में मानवता स्पष्ट दीदार होता है। मानव के कल्याण के लिए इन दोनो युग पुरुषों ने केवल 'मतवाद' नहीं गढ़ा, अपितु अपने-अपने मत स्वयं जीवन में आचरित करते हुए समाज में व्याप्त गैर इंसानी विषमता को दूर करने का पूरा प्रयास भी किया। साथ ही जन-जन में समता जगाने में आशातीत सफलता भी हासिल की। दोनों ने भीतर से अनुभव किया कि कोरा आदर्शवाद केवल छलावा है। आदर्श को व्यवहार में लाकर ही लोक का कल्याण किया जा सकता है। भूखे को अध्यात्म की छुट्टी दिलाने से कोई लाभ नहीं है। भूखे को पहले रोटी चाहिए और उसके बाद कुछ और। दोनों का विचार इस दिशा में एक समान है कि समृद्ध सभ्यता में संस्कृति का विकास हो सकता है। जिसे पेट भरने की चिन्ता है वह क्या चिंतन करेगा। जो अर्थिक समस्याओं से जूझ रहा है और पग-पग पर अपमान झेल रहा है, वह धर्म, दर्शन, कला, शास्त्र आदि की महिमा कैसे समझ सकता है। दोनों ही चिंतको ने इस सत्य को गहरायी से अनुभव किया कि नीति व अध्यात्म केवल विवाद का विषय नहीं है। इसका उपयोग सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक जीवन में भी होना चाहिए। मार्क्स ने स्वयं गरीबी का दर्द सहते हुए गरीबों के उद्धार के लिए साम्यवाद का डंका बजाया, मजदूरों को लामबंद किया और सांमतो के खिलाफलड़ाई लड़ने की प्रेरणा दी। यह भी सच है कि खूनी क्रांति हुयी और मजदूरों का संगठन रंग लाया। पूँजी पतियों को झुकना पड़ा और धीरे-धीरे मजदूरों की जिंदगी में बेहतरी दिखायी देने लगी। मार्क्स के विषय में स्वयं गांधी जी ने कहा है- आर्थिक बुराइयों को घटाने में मार्क्सवाद एक निदान हो सकता है। ठीक हो या नहीं, परन्तु इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता कि मार्क्स ने शोषितों और गरीबों के लिए कुछ कर गुजरने का प्रयास तो किया ही गांधी का तो सारा जीवन दलितो, अछूतों, भूखों, नंगों के उद्धार में ही निकाल गया। दोनो ने दबे कुचले लोगो की तड़फको अपने भीतर महसूस किया और उनकी दर्द भरी-कराह से स्वयं इतना चीखे कि गरीबों के भीतर की प्रतिरोधी क्षमता जाग उठी। इस प्रकार दलितों की प्रसुप्त अपूर्व ताकत को जगाने का श्रेय गांधी व मार्क्स दोनों को ही मिला है। यहाँ विवाद की तनिक सम्भावना नहीं है फिर भी दोनों के विचारों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाय तो दोनों के सिद्धांतों की प्रयोग विधिा में पर्याप्त समानता व असमानता दोनो ही स्पष्ट रूप से दिखायी देता है।

जैसे मार्क्स केवल सर्वहारा वर्ग का उत्थान चाहते है। अगर गाँधी समाज के सभी लोगों का सब प्रकार से उत्थान चाहते है। उनका सर्वोदय विश्व प्रेम की भावना पर आधारित है। सर्वोदय में कोई वर्ग अछूता नहीं। वह चाहें पूँजीपति वर्ग हो या मजदूर वर्ग/गांधी सर्वोदयी नीति 'सर्वे भवन्तु सुखिन' पर आधारित है। मार्क्स भी साम्यवादी नीति अधिकतम लोगो के अधिकतम सुख पर निर्भर है। यहाँ कुछ लोगो का हित छूट जाता है। अत: मार्क्सवादी विचारधारा एक खंडित आदर्श हो।

गांधी मनुष्य को स्वभावत: शुभ मानते है और मार्क्स मनुष्य को प्रकृतित: अशुभ कहते है। गांधी का मानना है कि यदि मनुष्य स्वभाव से बुरा होता है समाज में प्रेम, सेवा और बलिदान को उच्च आदर्श का दर्ज न मिल पाता।

मार्क्स का मनुष्य आर्थिक मनुष्य है। अर्थ ही मनुष्य की श्रेष्ठता का प्रतिमान है। गांधी जी विचारधारा में मनुष्य साध्य है और 'अर्थ साधन' यदि अर्थ साध्य होता तो सम्पन्न मनुष्य बेचैन न रहता शांति व सुख के लिए मानवीय सम्मान चाहिए, नाकि धान। मनुष्य के बल धन के लिए ही कर्म नहीं करता। वह तमाम ऐसे कर्मों को किया करता है, जो आर्थिक दृष्टी से अनुपयोगी होते हुए भी मानवीय दृष्टि से सर्वथा उच्च है।

पर गांधी तथा मार्क्स दोनों ही समाज में समता और समानता के हिमायती है। अंतर केवल इतना है कि गांधी प्रेम और अंहिसा के सहारे समाज में समानता की बात करते और मार्क्स मानव समाज की समता के लिए वर्ग संघर्ष को ही उपयोगी व विश्वसनीय मानते है। गांधी सेवा, त्याग से हृदय परिवर्तन और सत्याग्रह को सर्वोदयी समाज का आधार बनाना चाहते हैं और मार्क्स सर्वहारा वर्ग की तानाशाही से साम्यवादी समाज की स्थापना करना चाहते हैं। मार्क्स की विचारधारा का नारा है 'लुटेरो को लूटो' गांधी इसे अस्वीकार कर देते हैं। और हृदय परिवर्तन को अर्थिक समता लाने का साधन बनाते है। पूँजीपति पूँजी के पैरोकर है। पूँजी, समाज की रीढ़ है। यदि पूँजीपतियों की हिंसा कर दी जायेगी तो धीरे-धीरे समाज विपन्न हो जायेगा। लुटेरे लूट सकते है और दुर्व्यसन में धान का अपव्ययय कर सकते है। पूँजी में वृद्धि वही कर सकता है, जो धन कमाने का हुनर रखता है गाँधी ने पूंजीपतियों की अतिरिक्त पूँजी को सुरक्षित रखने के लिए ट्रस्टीशिप का आदर्श दिया। उन्होंने राय दी की ट्रस्ट में धान जमा होगा। जिसके संरक्षक पूँजीपति होगे। इस धान का उपयोग आपदा के समय राष्ट्रहित में होगा।

गाँधी इन्सानी समस्याओं का निराकरण अंहिसात्मक तरीके से करते है। परन्तु मार्क्स इसके लिए खूनी क्रांति की बात करते है। मार्क्स हृदय परिवर्तन में तनिक भी विश्वास नहीं करते इनका स्पष्ट मानना है कि धनी व्यक्तियों के पास हृदय ही नहीं होता, अत: उनके हृदय परिवर्तन भी बात महज गल्प है। जब तक मजदूर लामबन्द होकर इन पर हिंसात्मक आक्रमण नहीं करते तब तक अर्थ-शोषण तथा श्रम-शोषण का अंत नहीं हो सकता। गांधीवाद ने मार्क्स के इस मत को खारिज कर दिया और ये तर्क दिया कि खूनी क्रांति एक क्रांति है। यह एक अन्तहीन प्रक्रिया है। ऐसी क्रांति से अन्त:हीन प्रतिक्रांतियों का जन्म होता है। जिनकी प्रचण्ड ज्वाला में अन्तत: सारा समाज ही भस्मसात् हो जाता है। मनुष्य स्वभाव से नैतिक है और अहिंसक भी। कोई नहीं चाहता की उसके साथ बुरा बर्ताव हो। सभी दूसरो से सम्मान की अपेक्षा करते है। गांधी का नैतिक चिंतन अध्यात्म भावप्रद है। उनको विचारधारा ईश्वरोक्त है। इस दृष्टि से गांधी ईश्वरवादी, अन्त: प्रज्ञावादी और निरपेक्ष नैतिक नियमों में आस्थावादी है। उनका विश्वास है कि अन्तरात्मा की आवाज ईश्वर की आवाज है। नैतिक नियम ईश्वर का आदेश है और उनका पालन करना मानव का धर्म है। इसके विपरीति मार्क्सवादी विचारधारा जिसका नैतिक विचार भौतिक भावापन्न है इनकी विचारधारा अनीश्वरवादी है। ईश्वरोक्त नीतिशास्त्र शोषकों का नीति शास्त्र है और अधाम सभ्यता की नींव पर खड़ा है। मार्क्सवादी दृष्टि में पदार्थ की ही मौलिक सत्ता है। जड़-पदार्थ में ही चेतना का विकास होता है। और आगे चलकर यही नैतिक चेतना के रूप में विकसित हो जाता है। न तो कोई दैवी सत्ताा है और नाहि अन्तरात्मा, सारे नियम मानव कृत है और प्रकृति की कोख से जन्में है। कोई नियम न तो निरपेक्ष है और नाहि दैवीय विधान है। अवश्यकता ही अविष्कार भी जननी है। अत: सारे नियम परिस्थिति सापेक्ष है। धर्म अफीम है और नैतिक विधान कल्पना। मनुष्य ही मनुष्य का देवता है। काल्पनिक स्वर्ग का चक्कर लगाने से अच्छा है कि मनुष्य स्वंय अपना चक्कर लगायें और संघर्ष करके विकास का मार्ग प्रशस्त करे। जो पीड़ा व संघर्ष से घबराता है वह प्रगति के पथ पर आगे नहीं बढ़ सकता ईश्वरावस्था दुरावस्था है और इंसान को पतन की ओर ले जाती है। ईसाइयों के नैतिक नियम कुत्तों के नियम है। जो इंसान को दब्बू व कमजोर बना देता है। बिना संघर्ष मनुष्य को अपना मौलिक अधिकार नहीं मिल सकता। अत: साम्यवाद लाने के लिए खूनी क्रांति करनी ही होगी।

चिंतन के आधार पर दोनों की विचारधारायें एक दूसरे से बिल्कुल भिन्न है। गांधीवाद आध्यात्मवादी और मार्क्सवाद भौतिक वादी। सच तो ये है कि गांधी वाद एक नैतिक सिद्धांत होने के कारण संयम वादी है जबकि मार्क्सवादी प्रवत्ति भोगवादी है या भोगवाद की ओर है। मार्क्सवाद भोग और प्रचुरता की विचारधारा है परन्तु गांधी वाद संयम और अपरिग्रह की विचारधारा है। मानवीय इच्छाओं को नियंत्रित व सीमित करने का निर्देश देते हुए गांधी जी ने लिखा है 'मन एक आत्मारहित चिड़िया है, जितना अधिक इसे मिलता है, उतना ही यह और चाहती है तथा असंन्तुष्ट रहती है'

साधनों की दृष्टि से इन दोनों ही विचारधाराओं में अंतर और अधिक महत्वपूर्ण है। गांधीवाद साध्य और साधन की अनुकूलता में विश्वास रखता है और गांधी जी का मानना है कि साध्य और साधन एक ही सिक्के के दो पहलू हैं और उनमें बीच बीज व वृक्ष जैसा सम्बंध है। गांधी जी श्रेष्ठ साध्य के साथ-साथ साधनों की पवित्रता को भी आवश्यक मानतेहैं। इसके विपरीति साम्यवाद श्रेष्ठ साध्य, उद्देश्यों या लक्ष्य में तो विश्वास रखता है लेकिन इस बात को आवश्यक नहीं मानता की साध्य की प्राप्ति के लिए साधन भी उतने ही पवित्र व श्रेष्ठ हों। मार्क्सवाद के अनुसार तो श्रेष्ठ लक्ष्य की प्राप्ति के लिए किसी भी प्रकार के साधन अपनायें जा सकते हैं। और इस सम्बन्ध में नैतिक मापदंड के आधार पर विचार करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

ईश्वर और धर्म के सम्बंध में भी दोनों विचारधारा भिन्न हैं। मार्क्सवादी विचारधारा ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास नहीं करती और धर्म को ढोंग या अफीम के नशे के अतिरिक्त और कुछ नहीं समझता। वास्तव में मार्क्सवादी व्यवस्था के अंतर्गत धार्मिक समुदायों के क्षेत्र को अत्यधिक सीमित करके और नवयुवकों से धर्म के प्रति अनास्था उत्पन्न करके धर्म के उन्मूलन का प्रयास किया जाता है। इसके ठीक विपरीति गांधीवादी विचारधारा मूलत: धर्म पर आधारित विचारधारा है। श्री रोमारोला ने गांधी जी के गहन धार्मिक विश्वास के बारे में ठीक ही लिखा है 'गांधी जी के कार्यो को समझने के लिए यह ध्यान में रखना चाहिए कि उनकी विचारधारा एक दो मंजिले भवन की तरह है। नीचे धर्म का ठोस आधार है और मजबूत एवं कभी न हिलने वाले इस आधार पर ही राजनीतिक एवं सामाजिक विचार धारा का प्रतिपादन किया गया है।'

गांधी वाद की कार्य-प्रणाली अहिंसात्मक और मार्क्सवाद की कार्य प्रणाली हिंसात्मक है गांधीवाद का न केवल प्रथम बल्कि अंतिम आधार अहिंसा भी है। गांधी जी हिंसा के इतने अधिक विरोधी हैं उन्होंने स्वयं लिखा है 'यदि भारत हिंसा को अपना लेता है तो मैं भारत में रहने की इच्छा नहीं करूँगा' इसके विपरीति मार्क्सवाद वांछित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए हिंसा के प्रयोग को नितान्त आवश्यक मानता है और हिंसा को नवीन सामाजिक व्यवस्था की जन्मदात्री के रूप में देखता है।

गांधीवाद हृदय परिवर्तन के द्वारा सामाजिक व्यवस्था का पुनर्गठन करने पर बल देता है। जबकि मार्क्सवाद हिंसक क्रांति के द्वारा सामाजिक व्यवस्था के पुनर्गठन पर बल देता है।

मार्क्सवादी चिंतन तत्कालीन परिणामों में विश्वास करता है परन्तु गांधीवाद विकास की प्रक्रिया के आधार पर धीरे-धीरे समुचित परिवर्तन लाने में विश्वास करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. युग पुरुष गाँधी, प. कमला पति त्रिपाठी
2. गाँधीवाद की रूपरेखा, रामनाथ सुमन
3. गाँधी बनाम साम्यवाद, सदानंद भारतीय
4. सामाजिक विचारों का इतिहास,डॉ. हरी ओम त्रिपाठी
5. सामाजिक विचारों का इतिहास, शर्मा एवं गुप्ता
6. सामाजिक विचारधारा, रवीन्द्रनाथ मुखर्जी
7. उच्चतर समाजशास्त्री सिद्धान्त, रवीन्द्रनाथ मुखर्जी
8. भारतीय सामाजिक चिंतन, मुखर्जी व अग्रवाल
9. भारतीय सामाजिक चिंतन, बी.एन. सिंह
10. समाजशास्त्र, प्रो. एम.एल. गुप्ता एवं डी.डी. शर्मा

****

Regional Agriculture Development & Disparities in Punjab (A Geographical Analysis)

Dr. B.L Jat* Dr. Jagseer Singh**

Abstract - The agricultural infrastructural index, constructed using principal component Analysis, reveals the prevalence of a wide inter district variation in agricultural infrastructure in Punjab.

The results of conditional convergence establish the argument that variations in the provision of agricultural infrastructure and natural factor line rainfall play the divergent role in accuring benefits from agriculture in Punjab. The skewed distribution of public and private investment in favour of agriculturally developed districts has been found to be responsible for enhancing the disparity in agriculture infrastructure.This study makes an attempt to analyze the special pattern of regional disparities variations in the levels of agriculture development and casual relationship between agriculture development and selected variables of regional disparities among the districts of the state of Punjab.
Keywords - Regional disparities, Infrastructure, Independent variable, livelihood.

Introduction - The attainment of self-Sufficiency in food grain was one of the most important objectives last five decade in the history of Punjab. Agriculture economic development of a region depends on a number of the factors like geographical, naturals resources, political and social parameters.

There could be number of factors or reasons for regional or district inequality in the development like physical and natural barriers, economic barriers, social barriers, administrative barriers etc. In order to attempt to minimize and bridge the gap between developed and under-developed areas in the state. Since last six to seven decades planned developed process has been in place through five year plans. As per ceveus 2011, 63 Percent of Punjab's population lived in rural area. Cultivators and agricultural workers accounted for above 75 Percent of total population of Punjab. While such a large proportion of the population was dependent on agriculture, agriculture and allied activates contributed about 65 percent of gross state domestic production of Punjab in 2011. Animal resources contributed about 28.7 Percent of the gross state domestic production of Punjab. As per the land use statistics for 2011, above 70 percent of the reported area of the Punjab was actually cultivated. Different types of follows, cultivable waste land, permanent pastures under forestry 2.5 Percent of the land of Punjab about .5 Percent land is put to non-agriculturaluses. The state covers on area of 50,362 Square kilometers, 1.53 Percent of the India's total geographical area. There is a plethora of literature about the growth, instability, cropping pattern and interdistricts different in agriculture in Punjab. Several study such as RAO (1975), Mehra (1981), Desai and Hazell, 1982 etc have pointed out that the new strategy of agricultural production based on high yielding varieties seed fertilizer technology has contributed to the growth in production and productivity in Punjab.

However these studies also observed marked deceleration in the level and trend growth rate of output.About convergence/divergence of agricultural growth across all districts of Punjab.The study by Kalirajan et at. (1998) found the long term divergence and cyclical pattern in agricultural growth, Gosh (2006) also found absolute divergence and conditional convergence is agricultural growth in Punjab. Under this backdrop this study analyses the trend and disparity in the rate of growth of value of output and yield in agriculture in Punjab Since1960s with explicit focuses on the phases of the green revolution and new economic reform. The study also focuses on the nature of convergence/ divergence in the growth rate of the per capita value of agricultural output of all districts of Punjab for identifying the factors that are responsible behind the disparity in agricultural performance in Punjab state.

Study area - Punjab with varied agro-climatic condition shows inter-district agriculture disparities. The districts of the state are covered under humid, pre-humid, semi-arid situation depending on us seasonal rainfall and moisture index. They have different potential for development in different sectors of economy. Punjabin the 20th largest state of India's with a geographical area,Its 1.53% of India's total geographical area. The economy of Punjab is the 14th largest state economy in India with 5.18 Lakh crore in gross domestic product and a per capita GOP of 153,000. Punjab is primarily agriculture based due to the presence of abundant water sources and most of the Punjab lies in fertile

*Lecturer, P.G Deptt. of Geography, SPNKS Govt. College, Dausa (Raj.) INDIA
** Lecturer (Geography) GSSS Mana Singh Wala, Ferozepur (Punjab) INDIA

soils, alluvial plain with many rivers and an extensive irrigation canal system Punjab in divided into three distinct regions on the basis of soil types: South-western, Central and eastern. Punjab falls under seismic zones II, III and IV zone II is considered a low-damage risk zone, zone III is considered a moderate damage risk zone and zone IV considered a high damage risk zone. The state has been awarded the national productivity award for agriculture extension service of ten year from 1991-92 to 1998-99 and from 2001 to 2003-04.

This study on Regional-Agriculture disparities in Punjab was undertake with the main objective to measure inter district disparities prevalent in various indicates of the economy and livelihood to take necessary measures to reduce into-regional disparities. Where this study covers last four decades of economic development of the Punjab state. The study covered all of 22 districts of the state

Objectives of the study :

1. To examine the level of development in agriculture across all the districts of Punjab.
2. To measuring inter district inequalities with respect to agriculture indicators of development.
3. To analyzing the respective role of physical and natural factors vis-à-vis man made factors in causing inter-regional inequalities.

Hypothesis :

1. The regional imbalance are the outcome of both natural and man-made factor.
2. By increasing plan-outlay in backward area in the state regional equalities could be reduced.

Methodology - The researcher admitted that identification of appropriate indicators was difficult task. Further, it also agreed that aggregation of a variety of indicators into a single measure generally posed many difficulties.

Source of data – The directorate of economic and statistics, Govt of Punjab regularly publishes district outlines of all the 22 districts. This was a major source of information for the present study. Besides these, there are publications of different departments of the state Govt in which data are made available for different districts periodically.

Result and discussion-

Growth performance of Punjab in agriculture - The growth performance of the Punjab has been analyzed considering three distinct phases of agricultural development in Punjab viz the first phase of green revolution 1970-71 to 1979-80, second phase of green revolution 1980-80 to 1990-91 and the period after economic reform 1991-92 to 2007-08.

The exponential growth rates of value of output and productivity for the Punjab during the whole period (1970-71 to 2010-11) revealed that all the Punjab agricultural output and yield grew at the rate of Punjab is 2.12% registered higher growth on productivity during the entire period. The performance of the state of Punjab remained not poor in both respects during the whole period.The study revealed that the performance of the Punjab agriculture during the first phase of green revolution (1970-71 to 1979-80) was not extraordinary. All Punjab growth for the agricultural output and yield during this period was recorded 5.43% per annum respectively, whereas in case of yield the state Punjab achieved significant growth.

The effect of green revolution was visible from the second phase of green revolution from the period 1980-81 to 1990-91. It has been observed from the kinked exponential growth rate (Table-1, Table-2)that all Punjab agricultural performance registered an un recedented improvement in both output and yield growth during the second phase of green revolution. Punjab state achieved outstanding growth in agricultural output 6.38 percent. It's achieved the remarkable growth rate in all over the India.

Table-1 & **2 (see in last page)**

Since food grain comprises nearly 80% of the total crop output in Punjab and majority of district of state are dependent on production of food grain, the deceleration in food grain production is reflected in the result of growth of value of crop output. Thus the result establish that there was a significant acceleration in growth rate in the value of output and yield during the 2nd phase of green revolution but the post liberalization period has marked a sign of depression both in agricultural output and its yield rate in Punjab. Our findings conform to the previous empirical studies by Bhalla and Singh and others. In a comprehensive study about the growth and regional disparities, Bhalla and Singh (2009) argued that increase in regional disparities during the first phase of green revolution (1971-81) was followed by decline in the same during the second phase of green revolution due to the spread effect of HYN technology.

However, the post liberalization period (1991) witnessed the continuous decline in growth rates in Punjab as well as in Indian agriculture. This result was supported by the author live Mathur et al, 2006, Maherdradev (1987), Janaiah et al. (2005) and Chand et. al (2001). According to these authors the factors like the slowdown in growth of fertilizer use, declining irrigation, intensity, reduction of energy use and lack in the adoption of modern techniques were considered to be attributable to the deceleration in the trends of agricultural growth in Punjab during 1990-91's Mathur et al, 2006, Maherdradev (1987), Janaiah et al. (2005).

Agricultural disparities in Punjab - Punjab is characterized by wide regional variation in agro-climatic condition. Agricultural output in different region is varied due to varied agro-climatic factors, physical resource endowment and also varying level of investment in rural infrastructure and technological innovation. The regional variation in agricultural infrastructure and the use of agricultural inputs in Punjab is quite high.

The result of the index and the subsequent rank of the Punjab state according to the index are presented in the table. From the table it's clear that there exists a widespread disparity among districts of Punjab state in respect of the distribution of agricultural inputs in Punjab.Thus from the result of index it can be said that wide disparity had remained

in the distribution of agricultural infrastructure across of Punjab during the study period.

Table-3 (see in last page)

Causes of regional agricultural disparities

1. Geographical factors
2. Inadequacy of Economic overhead
3. Failure of planning Mechanism
4. Lack of motivation on the part of backward Districts.
5. Marginalization of the impact of Green revolution of certain regions.

Agriculture dimensions - Agriculture is a gamble on monsoon, late arrival of monsoon, lack of monsoon and disorder in sequences of monsoon very often adversely affect our agricultural products. The annual average rainfall in Punjab is 499.9 mm(49.99cm)in last 5 years in Punjab. But recorded average rainfall in year 2014 to 2018 is 832 mm in Punjab. Mohali district has been termed as the second wettest district in Punjab over period of last decade.

The districts along the Shivalik hills, Gurdaspur, Pathankot, Hoshiarpur and Ropar receive maximum rainfall, where the average yearly rainfall was 1185.22 mm.

Agricultural production in Punjab - The principal crops of Punjab are barley, wheat, rice, maize and sugarcane. The main sources of irrigation are canals and tube wells. The economy of the state primarily depends upon agriculture sector. Punjab is agrarian state in productivity of agriculture. Data on production of various crops were collected in respect of almost all the important food-crops as well as non-food crops.

The purpose of putting ranks for districts on the basis of production of these crops was to ascertain whether some districts show more advancement over others in agricultural production. It may also be argued that districts having high production of some food and non- food crops have a distinct comparative advantage in producing such crops.

Land area under Irrigation –The percentage of cultivated land area that is covered by the irrigation in different areas of Punjab is about 97.03% according to the ministry of agriculture& cooperation, Govt of India.

Table – 4 : Detail of district wise net-irrigated area, cultivated area, cultivated area and % of irrigation area of (NIA) to cultivated area in Punjab

Sr	District name	Net irrigated areas	Cultivated land	Percentage of net irrigated area to cultivated land
		2010-11	2010-11	2010-11
1	Amritsar	217053	221215	98.12
2	Barnala	124346	124346	100.00
3	Bathinda	295170	296483	99.56
4	Faridkot	125800	127499	98.67
5	Fatehgarh	101904	101904	100.00
6	Ferozepur	470288	473496	99.32
7	Gurdaspur	248049	287004	86.43
8	Hoshiarpur	185404	287004	92.64
9	Jalandhar	236421	236421	100.00
10	Kapurthala	133641	133651	99.99
11	Ludhiana	300665	300665	100.00
12	Mansa	187563	196484	95.46
13	Moga	197511	197511	100.00
14	Mohali	69006	81516	84.65
15	Mukatsar	224899	239803	93.78
16	Nawansahar	88400	98281	89.95
17	Patiala	262901	266932	98.49
18	Rupnagar (Ropar)	70358	80443	87.46
19	Sangrur	312628	312628	100.00
20	Tarantarn	218013	218013	100.00
	Total	4070018	4194434	97.03

Source- Ministry of Agriculture & Cooperation, Govt of India.

Agriculture and livestock - Punjab was the front runner of agriculture performance and livestock during the glorious days of Green revolution. As indicated earliest, production of crops was assumed to have a direct and positive relationship with development. The level of output of different crops in agriculture/ livestock (density/km^2) veterinaryservice, milk production, proportion of area under non-food crops etc achieved during 2015-16.

Livestock is the second largest sector in terms of gross value of output and this sector can play a very NABARD approved a project under RIDF to construct a tehsil level, 28 block level and 110 veterinary hospital in the state.

Conclusion – The relationship between levels of agricultural development and levels of regional disparities are marked by substantial increase from East to Central and Western region. Punjab state is a where there is a tremendous scope for development in the agricultural sector. large scale of land brought under the cultivation and by increasing irrigation facilities, gross crop area can be increased considerably.

The districts having low levels of regional development should be given top priority so that they may come up at par with development area, and the concept of planning with social justice may be fulfilled. The general picture which emerges from the spatial distribution of agricultural development show that over whelming majority of the Northern and Northern-Western districts is shown back ward in the light of selected variables.

The above analysis of level of regional disparities clearly indicates that the border districts shows backwardness in the lights of all variables. The western, central and Southern districts give an impression of being in a more favorable position.Thus, this study makes an attempt to examine the performance of major districts of Punjab in the level of agricultural development and also disparity prevailing across districts in terms of agricultural performance.

References:-

1. Barro, R.J and X, sala-I- Martin (1995) economic growth, Mc Graw-Hill: New York
2. Bhalla, G.S and G.Singh (2009), Economic liberalization and Indian agriculture: A State wise analysis, Econ, Political Weekly, 46:34-44
3. Gosh M. (2006), Regional convergence in Indian

agriculture: Indian J. agri. Eco, 61:610-629
4. Govt of India (2011) " Faster, sustainable and more inclusive growth, An approach to the 12th five year pan (Draft)." Planning commission, Govt of India, New Delhi.
5. Govt of Punjab, Statistical Abstract, various issues, economics advisor to Govt. Punjab, Chandigarh.
6. Grover D.K and Kumar S (2011) State of Punjab Agriculture, Agro economic research centre, PAU Ludhiana
7. Kumar, P. (1998) " Food demand and supply projections for India., Agricultural economic policy series 98-01, Indian Agricultural research institute, New Delhi."
8. Mathur, A.S, S.Das and S. Sircar (2006), Status of agriculture in India: Trends and prospects: Econ, political weekly, 41 : 5327-5336.
9. Prospects" W.P No. 2011-07-02, Indian institute of management, Ahmedabad, July 2011
10. Sidhu HS (2002) crises in agrarian economy in Punjab-some urgent step, economy and political weekly 37 (30): 3132-38.
11. Smith, DM (1979), " The geography of social well-being in united states, amol Heinemann, New York.

Table-1 : Trend growth rate of value of output of agriculture during 1970-71 to 2010-11 in Punjab. Exponential growth rate Kinked exponential growth rate

Growth rate	Whole period (1970-71 to 2010-11)	1st sub-period (1970-71 to 1990-91)	2nd sub-period (1980-81 to 1990-91)	3rd sub-period (1980-81 to 1990-91)
Punjab	2.88	5.43	4.9	1.47

Table -2 : Trend growth rate of yield from agriculture during 1970-71 to 2010-11 in Punjab.

Growth rate	Whole period (1970-71 to 2010-11)	1st sub-period (1970-71 to 1990-91)	2nd sub-period (1980-81 to 1990-91)	3rd sub-period (1980-81 to 1990-91)
Punjab	2.12	3.9	6.38	-1.07

Table-3 : Composite index of agriculture infra-structure of Punjab during (1980-81 to 2010-11)

	Index				Rank			
	1980-81	1990-91	2000-01	2010-11	1980-81	1990-91	2000-01	2010-11
Punjab	.90	.94	0.85	0.85	1	1	1	1

****

नागरिक अधिकार पत्र : प्रशासनिक पारदर्शिता की ओर बढ़ते कदम

डॉ. गोपाल सिंह*

प्रस्तावना – नागरिक अधिकारपत्र सूचना के अधिकार की ओर एक प्रयास है। जो पारदर्शिता की ओर ही एक कदम है। आम नागरिकों को पारदर्शी एवं संवेदनशील व उत्तरदायी प्रशासनिक व्यवस्था के लिए 1996 में सचिव व 1997 में मुख्यमंत्रियों की बैठको में नागरिक अधिकार पत्र जारी करने का प्रस्ताव हुआ और 2000 में यह नागरिक पत्र लागू हुआ। इस प्रक्रिया से नागरिक अधिकार पत्रों से समुचित जवाबदेही, व्यवस्था, पारदर्शिता व इससे खुलापन आयेगा।

वर्तमान मं औधोगिकीकरण की तीव्रगति के साथ-साथ हो रही चुनौतियों के निवारण हेतु नागरिको को राजकीय विभागो के दायित्व व अपने अधिकारों की समुचित जानकारी आवश्यक है, जानकारी के अभाव में आमनागरिक समुचित विभागीय सत्ता पर कार्यवाही नही कर पाने के कारण अपने अधिकारो से वंचित रह जाते है।

नागरिक अधिकार पत्रों में प्रमुख बिन्दु निम्नलिखित है:-

1. इसके माध्यम से सरकार के विभागो की जानकारी मिलती है। कि सरकार आम नागरिक के लिए क्या क्या करती है यह सभी जानकारी हमें इस नागरिक अधिकार पत्र से मिलती है।

2. **जनता को जागरूक करना –** सरकार द्धारा जारी किये गये इन सभी नागरिक अधिकार पत्रों के माध्यम से हर नागरिक को सरकार की नीतियां पता चलती है और इसकी जानकारी लेने से जनता सरकार के प्रति जागरूर होती है, सरकार कितना सहयोग आम नागरिक से करती है और आम नागरिक कितना सहयोग सरकार से करता है इन पत्रों के माध्यम से जनता में जागरूकता आती है।

3 **उद्देश्य –** सरकार के सभी शासन सचिवों ने अपने-अपने विभागो के कुछ नागरिक शासन को उत्तरदायी व जबावदेही व पारदर्शी बनाना चाहते है। इनका उद्देश्य हर नागरिक का समुचित विकास करना है। उनके उद्देश्य भी सभी के समान है, ओर उनके नियम कानून भी लिखे हुये है और उनके द्धारा हर नागरिक को जानकारी मिलती है।

4. इससे आम जनता को जानकारी मिलती है। सरकारी विभागों मे जानकारी प्राप्त करना हर नागरिकता का अधिकार है। जिस प्रकार हर विभाग के पत्र में लिखा गया है कि वह इसके द्धारा आम जनता के हित के लिए जानकारी देते है, लेकिन इसमें कितनी वास्तविकता है इसके बरतने से ही पता चलेगा। शासन के विभिन्न विभागों के पत्रों ने अपनी-अपनी जानकारी दी है व लाभ भी दिये है जिसके द्धारा आम नागरिक को सुविधा हो सके। इस जानकारी से सरकार एक जागरूकता लाना चाहती है।

प्रक्रिया में खुलापन – नागरिक अधिकार पत्रों के माध्यम से (या इस प्रक्रिया से) जनता में खुलापन आयेगा। सरकार के प्रति जनता जागरूक होगी।जब सरकार अपने विभागों के बारे में बतायेगा तो जनता को उसके बारे में जानकारी मिलेगी। ओर इस प्रक्रिया से सरकार ने अपने विभागो के पत्र निकाल कर जनता के सामने अपने आप को रखा है। इस खुलेपन से जनता सरकार से लाभ प्राप्त कर सकती है।

संवेदनशीलता – इन अधिकार पत्रों को जारी करने से जनता सरकार के प्रति संवदेनशील रहेगी। जो सरकार की आज स्थिति है। हर नागरिक सरकार के आरोप लगाता जाता है। लेकिन इन अधिकार पत्रों के माध्यम से जनता सरकार के प्रति संवेदनशील रहेगी और सरकार भी संवेदनशील रहेगी।

उत्तारदायी/जबावदेही प्रशासन – नागरिक अधिकार पत्रों के माध्यम से सरकार नागरिको के प्रति जबावदेही व उत्तरदायी होगी। अधिकार पत्रों के जानने के बाद जनता उसके बारे में सरकार से पूछ सकती है। इस प्रक्रिया से सरकार को जनता से प्रति जबावदेह बनाना पडेगा और उत्तारदायी प्रशासन का विकास होगा और राज्य कर्मचारी जनता के प्रति जबावदेह हो सकेगा।

स्वच्छ व पारदर्शी प्रशासन देने की इच्छा शक्ति – इन नागरिक अधिकार पत्रों के माध्यम से एक स्वच्छ व पारदर्शी का निर्माण होगा। जब सब खुलापन होगा तो पारदर्शिता आयेगी और भ्रष्टाचार व रिश्वतखोरी समाप्त होगी और प्रशासन स्वच्छ होगा जिसके फलस्वरूप सरकार एक स्वच्छ व पारदर्शी प्रशासन जनता के सामने होगा। इकके द्धारा विभाग की कार्यप्रणाली मे सरलता व नियमों में स्पष्टता, प्रक्रिया में खुलापन व वांछित जानकारी सहज रूप से मिल सकेगी। इस इच्छाशक्ति के फलस्वरूप ही यह कार्य होगा।

नागरिको को विभिन्न लाभ व सुविधायें प्राप्त होना – इन नागरिक अधिकार पत्रों के माध्यम से जब जनता को सरकार की नीतियों के बारे में जानकारी मिलेगी तो जनता जागरूक होगी। और सरकार ने हर विभाग के अधिकार पत्रों मे जनता के लाभ को हित में रखकर अधिकार पत्र का निर्माण किया है।

सरकार हर नागरिक को यह लाभ व सुविधायें देना चाहती है और यह इसी अधिकार पत्र के माध्यम से संभव होगा।

और जब इसके माध्यम से हर नागरिक को सुविधायें व लाभ मिलेंगे तो जनता सरकार के प्रति विश्वास करेगी और इस विश्वास के आधार पर सरकार जनता के हितों की रक्षा करेगी।

* व्याख्याता (राजनीति विज्ञान) राज. महाविधालय, शिवगंज, सिरोही (राज.) भारत

नागरिक अधिकार पत्रों का प्रभाव – नागरिक अधिकार पत्रों के मूल्यांकन से यह पता चलता है कि इन पत्रों का प्रशासन व जनता दोनो पर प्रभाव है। जनता व प्रशासन दोनो ही इन नागरिक अधिकार पत्रों से जुडे हुए है।

इन पत्रों के प्रभाव को निम्न बिन्दुओं से व्यक्त किया जा सकता है जो निम्नलिखित है:–

- **प्रशासन पर अंकुश लगना संभव –** इन नागरिक अधिकार पत्रों के माध्यम से प्रशासन पर अंकुश लगाया जा सकता है। प्रशासन के प्रतिनिधियों को इन पत्रो के नियमों के आधार पर कार्य करना होता है। अगर नही करते है तो जनता उन पर अंकुश लगा सकती है।
- **जनता के प्रति जबावदेयता बढाने में सक्षम –** इन अधिकार पत्रों के माध्यम से प्रशासन को जनता के प्रति जबावदेह बनना पडता है। अगर प्रशासन अधिकार पत्रों के नियमों के विरूद्ध कार्य करता है तो जनता प्रशासन के विरूद्ध विद्रोह कर सकती है। वह प्रशासन से सवाल पूछ सकती है। मतदाता को यह अधिकार होता है कि वह प्रशासन से किसी भी विषय पर जवाब मांग सकता है। इसलिए प्रशासन को मतदाता के प्रति जवाबदेह बनाना पडता है।
- **भ्रष्टाचार पर अंकुश लगना संभव –** इन अधिकार पत्रों के माध्यम से जनता व प्रशासन दोनो पर अंकुश है। इन अधिकार पत्रों के नियमो के विरूद्ध जाने से जनता प्रशासन पर अंकुश लगा सकती है और प्रशासन भी जनता पर अंकुश लगा सकता है। इसे एक दूसरे के अंकुश के भय के कारण प्रशासन व जनता दोनो की गलत कार्य नही कर पाते और भ्रष्टाचार की संभावना कम होती है। क्योंकि इस प्रक्रिया में खुलापन होता है।
- नीति निर्धारण और क्रियान्वयन में आम जन की भागीदारी के लिये भी नागरिक अधिकार पत्रों का प्रभाव पडता है। क्योकि नागरिक अधिकार पत्र जनता के लिये होते है और उसमें जनता के हित का लाभ होता है। ओर यह अधिकार पत्र नीति निर्धारण व क्रियान्वित इस तरह से कार्य किये जाते है। जिससे आम जनता को पूर्ण लाभ मिल सके तथा जनता की उसमें पूर्ण भागीदारी हो। यह अधिकार पत्र जनता के हित के लिये होते है। इसकी नीतियां जनता के लाभ पर आधरित होती है। और उद्देश्य भी जनता को अधिक से अधिक लाभ देना है।
- **प्रशासनिक कार्यकुशलता बढाने में मददगार –** प्रशासन के सम्मुख स्पष्ट नीतियां, उद्देश्य, ध्येय और जनता के प्रति उनके कर्तव्यों का स्पष्ट उल्लेख होने के कारण प्रशासन में कार्यकुशलता की वृद्धि होती है। क्योंकि प्रशासन ने इन अधिकार पत्रों में स्पष्ट नीतियां, उद्देश्य रखा है, जो केवल जनता के हित पर आधारित है।

इन अधिकार पत्रों के माध्यम से हर प्रशासन मे खुलापन व प्रक्रिया में खुलापन जबावदेही, प्रशासन व लाभ व जानकारी हर नागरिक को मिल सकेगी। जिससे जनता व सरकार में मतभेद कम होगा और एक स्वच्छ व पारदर्शी प्रशासन का उदय होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. राजस्थान सूचना का अधिकार अधिनियम, 2000
2. पाण्डेय, अरूण 'हमारा लोकतंत्र ओर जानने का अधिकार', अरूण पाण्डेय, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2000
3. राजस्थान पत्रिका, 26 जनवरी 2001
4. आर,जेन, 'सूचना का अधिकार : अपेक्षाएॅं और चुनौतियॉ (2 वॉल्युम)'
5. डॉ. आर. के. चौबे. सूचना का अधिकार विधि, इलाहाबाद लॉ एजेन्सी पब्लिकेशन्स, 2008
6. www.righttoinformation.info
7. www.rti.gov.in
8. rti-india.pbwiki.com

****

संगीत में रसात्मकता

डॉ. इच्छा नायर *

प्रस्तावना – 'रस' अपने आप में इतना व्यापक है कि इसकी व्याख्या एक या दो तरह से नहीं की जा सकती और ना ही तोड़े से शब्दों के साथ इसे व्याख्यायित किया जा सकता है। उपनिषद् में ब्रह्म को ही 'रस रूप' कहा गया है – 'रसो वै स:'। काव्य में आनंदानुभूति को रस कहा गया है। रस एक विशिष्ट आत्म तृप्ति है। जिसके प्रभाव से क्रोध, तनाव, शोक, मोह जैसे विकार नष्ट हो जाते हैं और सत्यम, शिवम, सुंदरम की त्रिवेणी प्रवाहित होती है। भारतीय दर्शन का सार यही है कि जीवन का लक्ष्य केवल भौतिक सुख भोग न होकर मोक्ष प्राप्ति होना चाहिए जिसका सीधा संबंध आत्मा से है। यही कारण है कि भारतीय कलाओं को देवी–देवता से जोड़कर उनके आध्यात्मिक तत्व को उजागर किया गया है। ''आनंद की उपलब्धि मानव–जीवन का लक्ष्य है। सौन्दर्य की साधना से आनंद की सिद्धि होती है और कला सौन्दर्य की साधना ही तो है। सौन्दर्य जब सिद्ध होता है, परिपक्व होता है, तब रस बन जाता है। अत: स्पष्ट है कि रस आनंद का पर्यायवाची है और इसीलिए कला का प्राण है।''

रस शब्द का भारतीय साहित्य एवं संस्कृति में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। यह प्रत्येक क्षेत्र में चरम विकास का द्योतक है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में 'रस' शब्द का प्रयोग सर्वोत्कृष्ट तत्व को प्रतिपादित करता है। संगीत के क्षेत्र में कर्णेंद्रिय द्वारा प्राप्त 'आनंद' का नाम रस है। आध्यात्म के क्षेत्र में स्वयं परमेश्वर को ही रस माना गया है। इसी प्रकार साहित्य के क्षेत्र में भी काव्य का लक्ष्य पाठक को आनंद की अनुभूति प्रदान करना स्वीकार किया गया है – इसी आनंद का दूसरा नाम 'रस' है।[1]

कविता, कहानी, उपन्यास आदि को पढ़ने या सुनने से एवं नाटक को देखने से जिस आनंद की अनुभूति होती है उसे 'रस' कहते हैं। रस काव्य की आत्मा है। आचार्य विश्वनाथ ने साहित्य दर्पण में काव्य की परिभाषा देते हुए लिखा है। ''वाक्यं रसात्मकं काव्यं'' अर्थात् रसात्मक वाक्य ही काव्य है। रस निष्पत्ति के संबंध में आचार्य भरत मुनि ने नाट्यशास्त्र में व्याख्या की है। 'विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगात्रसनिष्पत्ति:'अर्थात् विभाव, अनुभाव और व्यभिचारी भावों के संयोग से रस निष्पत्ति होती है। रसों के आधार भाव हैं। भाव मन के विकारों को कहते हैं।

रस के संबंध में सर्व प्रथम भरत ने लौकिक रूप से व्याख्या की है – जीवन के हर क्षेत्र में रस की व्यापकता है। बोलने, चलने, उठने, बैठने सभी में एक प्रकार का सलीका या सुघड़पन एक 'रस ही तो है'। इसी प्रकार खाद्य पदार्थों में भी विभिन्न प्रकार के रस तथा स्वाद हैं। चिकित्सा के क्षेत्र में प्राण–रक्षण औषधि ही रोगी के लिए रस है। काव्य, संगीत तथा अन्य ललित कलाओं की तो सबसे बड़ी विशेषता ही रस है। रस के बिना ना तो काव्य जीवंत होगा और ना ही संगीत में रस के बिना भाव विव्हलता की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। रस का अर्थ आनंद है और वह आनंद विषयगत ना होकर आत्मगत होता है।

'रस' का अर्थ है आनंद की अनुभूति द्य इस दृष्टि से संसार में जो कुछ भी है वह केवल 'रस' है द्य प्रत्येक व्यक्ति अपनी मनोवृत्ति के अनुसार इस 'रस' का आस्वादन करता है। भारतीय संस्कृति में रस को परमात्मा से इसलिए जोड़ा गया है क्योंकि यह ''स्वांत: सुखाय'' , मनोरंजनाय और चित्तवृत्ति निरोधाय भी है। इसीलिए भारतीय संस्कृति में रस परमतत्व है। रस केवल अनुभूति है जिसकी व्याख्या करना कठिन है।[2]

संगीत और रस – कोई भी काव्य या कला पहले मनोरंजन के लिए होती है फिर उससे आनंद की सृष्टि होती है। जब सम्पूर्ण आनंद प्राप्त होने लगता तब चित्त की वृत्तियों का निरोध स्वत: हो जाता है। भारतीय संस्कृति में रस परमतत्व है, जहाँ लौकिक से पारलौकिक के दर्शन होते हैं। रस वह अनुभूति है जिसकी व्याख्या करना दुष्कर है। संगीत जैसी अमूर्त कला को रसोत्पत्ति, रसास्वादन का सशक्त माध्यम मन गया है। तल्लीनता कि दृष्टि से संगीत जैसा प्रभावशाली कोई अन्य मार्ग नहीं है इसीलिए मीरा, सूर, तुलसी आदि सभी भक्त कवियों ने यहाँ तक की सूफी संतों ने भी भक्ति के लिए संगीत को ही माध्यम बनाया।

संगीतोपयोगी ध्वनि को नाद कहते हैं। यह समस्त जगत नाद का ही परिणाम है। यह बात विज्ञान द्वारा भी प्रमाणित है। इसीलिए विद्वानों ने नाद को ब्रह्म स्वरूप मना है। वैदिक युग से ही नाद–ब्रह्म की श्रेष्ठता को स्वीकारा गया है, जिसका प्राचीनतम आधार 'सामवेद' है। यद्यपि संगीत साधना कठोर तपस्या है परंतु फिर भी वह अलौकिक आनंद प्रदान करती है। संगीत साधक उस मधुर रस में खो सा जाता है। प्राचीनकाल से ही संगीत का स्वरूप स्वर–ताल–पदात्मक मना गया है। संगीत में स्वर, लय, ताल के अतिरिक्त पद का भी बहुत महत्व है। पद का भाव रसानुभूति को और अधिक स्पष्ट कर देता है जैसा की स्व.पी.आर.भट्टाचार्य जी ने लिखा है। 'स्थाई भाव ही रसानुभूति का आधार है, शेष भाव संचारी या व्यभिचारी क्षणिक आनंद दे सकते हैं। रस की उस दशा को नहीं पहुँचा सकते जहाँ सारे तमोगुण और रजोगुण दब कर केवल सात्विक गुण रह जाता है जिसका आनंद ब्रह्मानन्द के समान है। पद को भावानुकूल स्वरों का तानाबाना पहनाकर गायक की स्वयं आत्मा का विस्फुरण रस–परिपाक के लिए आवश्यक है। इसीलिए संगीत की रसात्मक अभिव्यक्ति पद में है'।[2]

* एसोसिएट प्रोफ़ेसर, संगीत-तबला, महिला सेवा सदन डिग्री कॉलेज, प्रयागराज (उ.प्र.) भारत

सामान्यतया रसोत्पत्ति में भाव, विभाव, अनुभाव, आलंबन, उद्दीपन आदि का विधान है किन्तु भारतीय राग संगीत में रसानुभूति के अंतर्गत आलंबन, उद्दीपन आदि स्वत: उत्पन्न होने लगते हैं। राग संगीत के स्वर हृदय को एक जगह केन्द्रीयभूत कर देते हैं। हमारे ऋषि-मुनियों ने कठोर साधना और अनुभवों के आधार पर विवेचित किया है कि किस स्वर द्वारा किस रस की निष्पत्ति की जा सकती है यथा।

भारतीय संगीत में रस ही नहीं परम रस विद्यमान है। प्राचीन जितने भी काव्य, महाकाव्य हैं वो चाहे संस्कृत के हों अथवा हिन्दी के सभी गेय हैं और सदियों से परंपरा से चले या रहे हैं यदि इनमें संगीत का पुट न होता तो शायद ये काल के गर्त में समा चुके होते।

रस सृष्टि - आलाप व तान - हमारा शास्त्रीय संगीत जो की राग प्रधान है इसमें भवपक्ष तथा कला पक्ष दोनों का ही महत्व है। भाव प्रदर्शन में गायक, वादक अपनी कल्पना के आधार पर हृदयगत भावों को प्रकट करके रससृष्टि करते हैं जबकि कला प्रदर्शन में गायक-वादक बुद्धि चातुर्य तथा कलात्मक सौन्दर्य के प्रदर्शन द्वारा रससृष्टि करते हैं। भवपक्ष संगीत का आंतरिक पक्ष है तो कलापक्ष वाह्य। आलाप को हम कलाकार की भावुकता का प्रेषक कह सकते हैं। वर्तमान समय में बोलालाप का प्रचार-प्रसार अधिक है।आचार्य बृहस्पति के अनुसार '' भवबोधन में भाषा का संयोग राग की सीमित शक्ति को अपना अंग बनाकर अपने बल में वृद्धि करता है और रस परिपाक में एक सुन्दर उपकरण बन जाता है।''

''कला प्रदर्शन में तानों का प्रयोग उचित मात्रा में होना चाहिए ताकि वह राग के सौन्दर्य को बढ़ा सके। कंठ में मधुरता हो और सरल तानों को अत्यंत सरलता के साथ सुर में गाया जाए तो सचमुच आनंद आता है। पंडित जगदीश नारायण पाठक के शब्दों में, ''यदि सरल तानों द्वारा कंठ में सरलता और मधुरता ने स्थान बना लिया तो गमक की तान हृदय में इस प्रकार चलती है जैसे जल में मस्त होकर मगर तैरता है।''[4]

विद्धानों का मत है की शंकरा, मालश्री, विभास, हिंडोल, केदार आदि रागों का प्रयोग वीर अथवा रौद्र रस की अभिव्यक्ति के लिए किया जा सकता है और पीलू, भैरवी, खमाज, काफी जैसी रागें श्रृंगार तथा उससे संबंधित रसों की अभिव्यंजना के लिए प्रयुक्त हो सकते हैं।

कथक नृत्य में रस - नृत्य में रस का महत्वपूर्ण स्थान है। रस उत्पत्ति के सभी साधन नृत्य में पाए जाते हैं। किसी भाव का इस पूर्णता से प्रदर्शन हो कि वह रसत्व को प्राप्त हो जाए और दर्शकों को परम आनंद की अनुभूति हो, यही कलाकार का मुख्य धयेय है। नृत्य में विचारों और भावों को प्रत्यक्ष में भाव और अंग संचालन के द्वारा प्रकट किया जाता है।

कथक नृत्य तथा अन्य शास्त्रीय नृत्यों को दो भागों में विभाजित किया गया है लास्य अंग तथा तांडव अंग। इन्हीं दोनों अंगों में अलग-अलग रसों का प्रयोग किया जाता है। लास्य अंग के अंतर्गत श्रृंगार ,करूण , हास्य, शांत रसों का प्रयोग किया जाता है तथा तांडव अंग के अंतर्गत रौद्र, भयानक, वीर तथा अद्‌भुत रसों का प्रयोग किया जाता है। श्रृंगार तथा करूण रसों का प्रयोग नृत्य में प्रमुख रूप से किया जाता है। ''करूण रस भी नृत्य का प्रधान रस है। करूण रस का प्रयोग एक प्रकार से नर्तक और अभिनेता की परीक्षा है। श्रेष्ठ कलाकार करूण रस के प्रसंग में दर्शकों को रुलाने में सक्षम होता है।'[5]

नृत्य का को संगीत के अतिरिक्त अन्य कलाओं का भी ज्ञान होता है। वह अपने हाव भाव के द्वारा बिल्कुल सच्चा स्वरूप दर्शकों के सामने रखता है तभी रस उत्पन्न होता है। नृत्य में आवश्यकता अनुसार सभी रसों का प्रदर्शन करना पड़ता है। श्रृंगार रस जीवन है , तो हास्य रस आनंद है, वीर भाव जीवन को जागृत और रौद्र भाव उसको सतर्क रखता है। संसार का कार्य क्षेत्र उत्साह से हरा भरा और क्रोध से सुरक्षित है, दूसरों के कष्टों के प्रति संवेदनशीलता ही करूण रस है इस प्रकार एक नृत्यकार को सभी रसों का ज्ञान होना अति आवश्यक है। तभी वह अभिनय द्वारा किसी भी रस का दर्शकों के हृदय में संचार करने में सफल हो सकता है। इसीलिए कहा गया है कि 'रस' नृत्य की आत्मा है।

ताल और लय द्वारा रस निष्पत्ति

''नाट्यशास्त्र में रसों की दृष्टि से लय का बटवारा इस प्रकार है -

श्रृंगारहास्ययोर्मध्यलय:।
करुणे विलंबित:
वीर रौद्र: अद्‌भुतवीभत्सभयानकेषु द्रुत:।।

अर्थात् श्रृंगार और हास्य में मध्यलय उपयुक्त है, करूण रस में विलंबित लय, वीर, रौद्र, अद्‌भुत , वीभत्स , भयानक रसों में द्रुत लय उपयुक्त है'[3]।

गायन में अपने भावों को अभिव्यक्त करने का साधन सहज सुलभ है किन्तु यदि हमारे पास केवल लय है तो साधन अत्यंत संकुचित हो जाता है।गंभीरता और सरलता जैसे विलंबित ठेकों में तथा चंचलता द्रुत लय में रहती है। कोई गीत जिसमें करूण भाव है तो उसमें मध्य विलंबित लय होगी जहाँ मधुर प्रसंग है वहाँ मध्य लय होगी, करूण प्रसंग में विलंबित लय तथा हर्षोल्लास में द्रुत लय होगी। ''जहाँ तक बोलों के संबंध में भाव की अभिव्यक्ति का सवाल है तो हम देखते हैं कि तबले या मृदंग में बाएँ का काम अधिक सहायक सिद्ध होता है। जिन बोलों में डग्गे की प्रधानता, गूंज का काम अधिक होता है वे बोल अधिक मुलायम या मीठे लगते हैं।''[3]

हमारे प्राचीन ग्रंथों में लय का विस्तार पूर्वक वर्णन है। इन्हीं ग्रंथों के अनुसार विलंबित लय में शांत - धैर्य , आदि भाव तथा द्रुत लय में उत्तेजना, क्रोध, वीर, उत्साह आदि भावों की, मध्य लय में श्रृंगारादि भावों की अभिव्यक्ति होती है। संगीत में लय, बंदिश की प्रकृति, राग के स्वभाव , आदि के परस्पर तालमेल से रस की उत्पत्ति होती है। लय मनुष्य के अंतर्मन में स्थित स्थाई भावों को आंदोलित करके रसोव्यप्ति का कारण बनती है। जैसे ठुमरी में रसानुभूति चरम सीमा पर तब पहुँचती है जब उसमें लय बढ़ाकर लग्गी का प्रयोग होता है।

संगीत में कई तालों द्वारा गंभीरता तथा चंचलता के आधार पर रस निष्पत्ति हो सकती है। विद्धानों का मत है जैसे - दादरा ताल द्वारा वात्सल्य रस , कहरवा द्वारा श्रृंगार रस , एकताल द्वारा श्रृंगार रस, चारताल, सूलताल द्वारा वीर रस, ब्रह्म, गणेश, रुद्र ताल द्वारा वीर, अद्‌भुत, रौद्र रस की निष्पत्ति हो सकती है।

आज इलेक्ट्रॉनिक और कंप्युटर की दुनियाँ में विज्ञान ने चाहे जितनी तरक्की कर ली हो, परंतु आज भी सहृदयता, करुणा, सदयता और परस्पर सहयोग साहचर्य के लिए संगीत के सुरों की नित्तान्त आवश्यकता है। स्वर्गीय आचार्य बृहस्पति जी ने लिखा है - ''भाषा भले ही कभी कभी मनोभावों की अभिव्यक्ति में असमर्थ हो जाए, परंतु नाद कभी भी असफल नहीं होता।'' आज 'नाद' रसानुभूति में असफल प्रतीत होता है क्योंकि कलाकार स्वर और लय के माध्यम से श्रोताओं की बुद्धि को तो चमत्कृत कर रहे हैं लेकिन अपनी कला से उनकी आत्मा को छूने का प्रयास नहीं कर पाते। लेकिन जिन कलाकारों ने अपनी कला से लोगों को अभिभूत किया है, वे आज भी सफल हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी भक्ति काव्य एवं गायन संगीत – डॉ. इभा सिरोठिया प्रथम संस्करण – 2015 पृ. सं . 83
2. संगीत मणि – डॉ. महारानी शर्मा – संस्करण: 2008 पृ. स. 146
3. भारतीय संगीत का इतिहास – डॉ. ठाकुर जयदेव सिंह – पृ. 223 संस्करण – प्रथम संस्करण 1994
4. निबंध संगीत – संपादक – लक्ष्मीनारायण गर्ग – पृ. सं. 276 प्रथम संस्करण मई, 1978
5. कथक नृत्य – कुहु मालवीय तालमणि – संकरण प्रथम , 2014 – पृ. सं. 23

****

सामाजिक संस्थाओं का समाज में बदलता स्वरूप

डॉ. हरिचरण मीना *

शोध सारांश – सामाजिक संस्थाए समाज का आधार स्तम्भ है। सामाजिक संस्थाओं में समय के साथ साथ परिवर्तन होता रहता है। सामाजिक संस्थाओं के अन्तर्गत मुख्य रूप से परिवार, विवाह, नातेदारी इत्यादि को अध्ययन के रूप में देखा जाता है। ये संस्थाए विश्व के सभी समाजो में होती है लेकिन प्रत्येक देश एवं देश के विभिन्न भागों में इसके अनेक स्वरूप दिखाई देते है। परिवार का स्वरूप दक्षिण भारत और उत्तर भारत में भी भिन्न भिन्न दिखाई देता है। जहाँ एक और पितृसत्तात्मक, पितृ वंशीय परिवार दिखाई देते है तो दूसरी ओर मातृ सत्तात्मक, मातृ वंशीय परिवार दिखाई देते है। इसी प्रकार देश के विभिन्न भागों में विवाह के भी भिन्न भिन्न स्वरूप दिखाई देते है उसी प्रकार से नातेदारी के भी विभिन्न स्वरूप दिखाई देते है। इन सभी में पिछले कुछ वर्षो से तेजी से परिवर्तन भी हुए है। समाजशास्त्रीय दृष्टि से इनके बदलते स्वरूप का अध्ययन अत्यधिक उपयोगी साबित होगा।
शब्द कुंजी – सामाजिक संस्थाएं, संयुक्त परिवार, एकांकी परिवार, पितृसत्तात्मक, मातृसत्तात्मक, पितृवंशीय, मातृवंशीय, नवस्थानीय, गृहस्थ, विवाह, अन्तर्जातीय विवाह, गान्धर्व विवाह, बहुविवाह, एक विवाह, वैधता, बहुपति प्रथा, बहुपत्नी प्रथा, देवर विवाह, प्राथमिक, सम्बन्धी, द्वितीयक सम्बन्धी, तृतीयक सम्बन्धी, रक्त सम्बन्धी, विवाह सम्बन्धी।

प्रस्तावना – सामाजिक संस्थाए समाज का आधारस्तम्भ होती है। जिन पर समाज की आधारशिला टिकी हुई होती है। जिन समाजों में सामाजिक संस्थाए कमजोर होती है वहाँ का समाज भी कमजोर होता है एवं जिन समाजों में सामाजिक संस्थाए मजबूत होती है वहाँ का समाज भी मजबूत होता है। सामाजिक संस्थाओं में परिवर्तन होने पर समाज में भी परिवर्तन होना स्वाभाविक है। सामाजिक संस्थाओं के अन्तर्गत परिवार, विवाह एवं नातेदारी महत्वपूर्ण संस्थाओं के अन्तर्गत आती है।

परिवार एक सर्वव्यापी सामाजिक संस्था है। शायद परिवार जितनी 'नैसर्गिक' कोई अन्य सामाजिक संस्था नही दिखाई देती है। प्राय: हम यह मानने को तैयार रहते है कि सभी परिवार वैसे ही होते है जैसे परिवारों में हम रहते है कोई और सामाजिक संस्था इतनी व्यापक और अपरिवर्तनीय नही दिखती है।

समाजशास्त्र और समाज विज्ञानों ने कई दशकों तक विभिन्न संस्कृतियों मे यह दर्शाने के लिए क्षेत्रीय अनुसन्धान किए है कि कैसे विभिन्न समाजों मे भिन्न भिन्न स्वरूप होते हुए भी परिवार, विवाह और नातेदारी संस्थाए सभी समाजों में महत्वपूर्ण है। उन्होंने यह भी दर्शाया कि किस प्रकार परिवार (निजी क्षेत्र) आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक (सार्वजनिक क्षेत्र) से संबंधित है।

प्रकार्यवादियों के अनुसार परिवार अनेक महत्वपूर्ण कार्य करता है जो समाज की बुनियादी आवश्यकताएं पूरी करते है और सामाजिक व्यवस्था को स्थायी बनाने में सहायता करते है। प्रकार्यवादी दृष्टिकोण का तर्क है कि यदि महिलाएँ परिवार की देखभाल करें और पुरूष परिवार की जीविका चलाएँ तो आधुनिक औद्योगिक समाज क्षेष्ठ कार्य निष्पादन करते है। तथापि भारत मे किए गए अध्ययन यह सुझाव देते है कि अर्थव्यवस्था के औद्योगिक प्रतिमानों में परिवारों को मूल होने की आवश्यकता नही है। फिर भी यह एक उदाहरण है जिससे पता चलता है कि एक समाज के अनुभवों पर आधारित प्रवृत्ति का सामानीकरण नही किया जा सकता है।

प्रकार्यवादियों के अनुसार मूल परिवार को औद्योगिक समाज की आवश्यताएं पूरी करने वाली एक सर्वोत्तम साधन सम्पन्न इकाई के रूप में देखा जाता है। ऐसे परिवार में घर का एक सदस्य घर से बाहर कार्य करता है और दूसरा सदस्य घर और बच्चों की देखभाल करता है। व्यावहारिक रूप में मूल परिवार में भूमिकाओं के इस विशिष्टीकरण में पति की जीविका चलाने वाले सहायक की तथा पत्नी की घरेलू संरचना में प्रभावशाली भावनात्मक भूमिका शामिल रहती है। इस दृष्टि पर न केवल अनुचित लिंगभेद के कारण प्रश्न किया जा सकता है। अपितु इतिहास और अनेक संस्कृतियों के आनुभविक अध्ययन दर्शाते है कि यह सत्य नहीं है। वास्तव मे आप कार्य और अर्थव्यवस्था की चर्चा मे देखेंगे कि वस्त्र निर्यात जैसे समकालीन उद्योग में महिलाएं श्रमिक बल का बहुत बड़ा हिस्सा है। इस तरह का विभाजन यह भी सुझाता है कि पुरूष ही आवश्यक रूप से परिवार के मुखिया है।

जब पुरूष नगरीय क्षेत्रों में चले जाते है तो महिलाओं को हल चलाना पड़ता है और खेतों के कार्यो का प्रबन्ध करना पड़ता है। कई बार वे अपने परिवार की एकमात्र भरण पोषण करने वाली बन जाती है। ऐसे परिवारों को महिला प्रधान घर कहा जाता है। विधवापन भी ऐसी पारिवारिक व्यवस्था बना सकता है। यह स्थिति पुरूषों द्वारा दूसरा विवाह करने तथा अपनी पत्नियों, बच्चों और अन्य आश्रितों को धन न भेजने के कारण भी बन सकती है। ऐसी स्थिति में महिला को अपने परिवार की देखभाल सुनिश्चित करनी पड़ती है। दक्षिण पूर्व महाराष्ट्र और उत्तरी आंधप्रदेश में कोलम जनजाति समुदाय में महिला प्रधान घर एक स्वीकृत मानक है। उत्तर भारत में अधिकांश परिवार पुरूष प्रधान होने के कारण पितृ सत्तात्मक, पितृ वंशीय होते है जबकि दक्षिण भारत में गारो, खासी, नायर इत्यादि जनजातियों में महिला

* समाजशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सवाई माधोपुर (राज.) भारत

प्रधान होने के कारण मातृ सत्तात्मक, मातृ वंशीय होते है। इस प्रकार भारत के विभिन्न हिस्सों में विभिन्न प्रकार के परिवार देखने को मिलते है।

भारत मे अधिकांश परिवार मूल रूप से संयुक्त परिवार के रूप मे मिलते थे अब धीरे धीरे संयुक्त परिवार एकांकी परिवार की परिवर्तित हो रहे है। समाजशास्त्री ए.एम. शाह का कथन है कि स्वतंत्रता के बाद भारत में संयुक्त परिवार में निरन्तर वृद्धि हुई है। उनके अनुसार इसका मुख्य कारण था भारत में औसत आयु में वृद्धि होना। शाह लिखते है कि 'हमे यह पूछना हो कि वृद्ध किस तरह के घरों में रहते है ? मै यह मानता हूँ कि उनमें से अधिकतर संयुक्त घरों में रहते है।'

यह पुन: एक व्यापक सामान्यीकरण है। लेकिन समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण हमे इस सामान्य बौद्धिक प्रभाव पर आँख बन्द करके विश्वास करने के विरूद्ध सावधान करता है कि संयुक्त परिवार तेजी से कम हो रहे है। यह हमे सावधानीपूर्वक तुलनात्मक और आधुनिक अध्ययनों की आवश्यता के प्रति भी सतर्क करता है। विभिन्न अध्ययनों से पता चलता है कि किस प्रकार परिवार के विभिन्न स्वरूपों में परिवर्तन हो रहे है।

हमारे दैनिक जीवन में प्राय: हम परिवार को अन्य क्षेत्रों जैसे आर्थिक या राजनीतिक से भिन्न और अलग देखते है। फिर भी परिवार गृह उसकी संरचना और मानक बाकी समाज से गहरे जुड़े हुए है। एक रोचक उदाहरण जर्मन एकीकरण के अज्ञात परिणामों का है। 1990 दशक में एकीकरण के बाद जर्मनी में विवाह प्रणाली मे तेजी से गिरावट आई।क्योंकि नए जर्मन राज्य ने एकीकरण से पूर्व परिवारों को प्राप्त संरक्षण और कल्याण की सभी योजनाए रद्द कर दी थी। आर्थिक असुरक्षा की बढ़ती भावना के कारण लोग विवाह से इंकार करने लगे। इसे अनजाने परिणाम के रूप में भी जाना जा सकता है। इस प्रकार बड़ी आर्थिक प्रक्रियाओं के कारण परिवार और नातेदारी परिवर्तित और रूपान्तरित होते रहते है।

ऐतिहासिक रूप से विभिन्न समाजो में विवाह के व्यापक विभिन्न रूप पाये जाते है। वैसे तो विवाह ही परिवार का आधार है। विवाह के माध्यम से उत्पन्न सन्तान को ही वैध सन्तान माना जाता है। इस प्रकार विवाह से पति-पत्नि एवं उसकी सन्तान मिलकर ही परिवार नामक इकाई का निर्माण करते है। विवाह को विभिन्न कार्य निष्पादन के लिए भी जाना जाता है। वास्तव में विवाह साथी की खोज का तरीका अनेक विस्मयकारी साधनों और प्रथाओं को उजागर करता है। विभिन्न समाजों में विवाह के लिए जीवन साथी चयन के भिन्न भिन्न तरीके है।

विवाह के अनेक रूप है। इन रूपो को विवाह करने वाले साथियों की संख्या और कौन किससे विवाह कर सकता है, को निमर्त्रित किए जाने वाले नियमों के आधार पर पहचाना जा सकता है। वैद्यानिक रूप से विवाह करने वाले साथियों की संख्या के सन्दर्भ में विवाह के रूप पाए जाते है। (1) एक विवाह (2) बहुविवाह। एक विवाह प्रथा एक व्यक्ति को एक समय में एक ही जीवन साथी तक सीमित रखती है। इस व्यवस्था में किसी भी समय में पुरूष केवल एक पत्नी और स्त्री केवल एक पति रख सकती है। यहाँ तक कि बहुविवाह की अनुमति है वहाँ भी एक विवाह ही ज्यादा प्रचलित है।

प्राय: कई समाजों में व्यक्यिों को पुन: विवाह की अनुमति पहले साथी की मृत्यु या तलाक के बाद दी जाती है। लेकिन वे एक समय में एक से अधिक साथी नही रख सकते। ऐसे विवाह को क्रमिक एकविवाह कहा जाता है। अधिकांश भागों में पत्नी की मृत्यु के बाद पुरूषो द्वारा पुनर्विवाह करने का नियम है लेकिन सभी जानते है कि उच्च जाति की हिन्दू महिलाओं के लिए पुनर्विवाह की स्वीकृति नही थी और 19वी. शताब्दी के सुधार आन्दोलनो में विधवा पुनर्विवाह एक मुख्य विषय था।

बहुविवाह प्रथा एक समय में एक से अधिक साथी होने का द्योतक है और इसमे या तो बहुपत्नी प्रथा जिसमें एक पति और दो या अधिक पत्नियाँ अथवा बहुपति प्रथा जिसमें एक पत्नि और दो या अधिक पति के रूप होता है। प्राय: जहाँ आर्थिक स्थितियाँ कठोर होती है। वहाँ बहुपति प्रथा समाज और बच्चों का पर्याप्त भरण पोषण कर सकता है। अत्यधिक निर्धनता की अवस्थाएँ भी एक समूह पर अपनी आबादी सीमित रखने के लिए दबाव डालती है। दूसरी ओर जहाँ आर्थिक स्थिति मजबूत होती है वहाँ बहुपत्नी प्रथा प्रचलन में रही है इसके अलावा विधवा महिला का पति की मृत्यु के पश्चात देवर से विवाह करने के परिणामस्वरूप भी बहुपत्नी विवाह प्रचलन में रहे है।

विभिन्न समाजों में विवाह के जीवन साथी चयन करने के भिन्न भिन्न नियम है। कुछ समाजों में विवाह साथी के चयन का निर्णय अभिभावको/सम्बन्धियों द्वारा किया जाता है और कुछ अन्य समाजो में साथी का चयन करने में व्यक्तियों को अपेक्षाकृत कुछ स्वतंत्रता होती है। समाजों में विवाह से सम्बन्धित अन्तर्विवाह और बहिर्विवाह के प्रतिबन्ध अति सुक्ष्म होते है। जबकि कुछ अन्य समाजों में किस व्यक्ति से विवाह किया जा सकता है और किससे नहीं, के नियम अधिक स्पष्ट और विशेष रूप से परिभाषित होते है। विवाह साथी योग्यता/ अयोग्यता नियत्रित करने वाले नियमों के आधार पर विवाह के रूपो को अन्तर्विवाह और बहिर्विवाह के रूप में वर्गीकृत किया गया है।

अन्तर्विवाह में व्यक्ति उसी सांस्कृतिक समूह में विवाह करता है जिसका वह पहले से ही सदस्य है, उदाहरण के लिए जाति। इसके विपरीत बहिर्विवाह में व्यक्ति अपने समूह से बाहर विवाह करता है उदाहरण के लिए अपने गोत्र से बाहर विवाह। अन्तर्विवाह और बहिर्विवाह कुछ नातेदारी इकाईयों के सन्दर्भ में लिया जाता है जैसे गोत्र, जाति और नस्ल प्रजातीय या धर्मिक समूह। भारत में विशेषतया उत्तरी भारत में गाँव बहिर्विवाह, गोत्र बहिर्विवाह इत्यादि प्रचलित है। अर्थात अपने गाँव या गोत्र से बाहर विवाह करना। यह व्यवस्था लड़के लड़की के नातेदारो के हस्तक्षेप के बगैर उसके ससुराल में सुचारू परिवर्तन और समायोजन को सुनिश्चित करती है। भौगोलिक दूरी और पितृवंशीय व्यवस्था के असमान संबंध यह सुनिश्चित करते है कि विवाहित लड़किया अपने अभिभावकों के पास बार बार न जाए। इस प्रकार जन्म स्थान से अलग होना एक दुखदायी अवसर है और यह लोक गीतों की विषय वस्तु भी रही है जो विदाई के दुख को चित्रित करते है। जबकि नगरों में बहिर्विवाह का नियम नही होने के कारण नगर के नगर में ही विवाह हो जाते है। इस प्रकार विवाह में अन्तर्विवाह और बर्हिविवाह के नियम पाये जाते है। कुछ समाजों में स्वयं के गोत्र, माँ के गोत्र, दादी के गोत्र और नानी के गोत्र के इत्यादि से बाहर विवाह करने के नियम भी है। जबकि कुछ समाजों में केवल स्वयं के और माँ के गोत्र से बाहर विवाह करने के ही नियम होते है। इन नियमों में समय के साथ-साथ थोड़ा बहुत परिवर्तन भी देखा जा सकता है। वर्तमान में अन्तरजातीय विवाह भी होने लगे।

हिन्दु विवाह में आठ प्रकार के विवाह के उल्लेख मिलते है। इसी प्रकार जनजातीय समाजों में भी विवाह के अनेक प्रकार देखे जा सकते है। जहाँ हिन्दूओं में विवाह को अटुट सामाजिक बन्धन माना जाता है। वही मुस्लिम समाज में विवाह को सामाजिक समझौता माना जाता है। जहाँ हिन्दू समाजो

में विवाह विच्छेद की कल्पना भी नही की जा सकती थी लेकिन वर्तमान में विवाह सम्बन्धी कानुनो के अन्तर्गत विवाह विच्छेद का भी प्रावधान होने कारण समाज में विवाह विच्छेद के उदाहरण भी देखने को मिलते है। मुस्लिम विवाह को निकाह कहा जाता है इसके अन्तर्गत कुछ मामलों में तलाक का भी प्रावधान होने के कारण विवाह विच्छेद के उदाहरण देखे जा सकते है। विवाह मे दहेज के बढ़ते प्रकोप को भी देखा जा सकता है। मुस्लिम समाजो में मेहर की बढोतरी हो रही है वही हिन्दू समाज में दहेज बढ रहा हैं। इसके साथ साथ विवाह विच्छेद के मामले भी बढ़ रहे है। समाजों में बाल विवाह की संख्या कम हो रही है। दूसरी ओर देरी से विवाह करने के मामले भी दिखाई दे रहे है। इस प्रकार विवाह नामक सामाजिक संस्था में बदलाव देखे जा सकते है।

समाज में नातेदारी नामक सामाजिक संस्था भी महत्वपूर्ण संस्था है। नातेदारी भी विवाह एवं परिवार नामक संस्था से जुडी हुई है। नातेदारी मे दो प्रकार के नातेदार होते है। एक रक्त सम्बन्धी नातेदार जिसमें पिता–पुत्री, माता–पुत्र, माता–पुत्री, भाई–भाई, भाई–बहिन, बहिन–बहिन, चाचा, ताऊ, दादा इत्यादि दूसरा विवाह सम्बन्धी नातेदार है जिसके अन्तर्गत पति–पत्नि और विवाह के फलस्वरूप बनने वाले रिश्तेदार इसके अन्तर्गत आते है। नातेदारो को प्राथमिक, द्वितीयक, तृतीयक इत्यादि श्रेणिया में बाँटकर देखा जा सकता है। एक तरफ परिवार जन होते है तो दूसरी ओर रिश्तेदार हो सकते है। इन नातेदारी सम्बन्धो से भी भिन्न भिन्न प्रकार की भूमिकाओं की अपेक्षा की जाती है। विभिन्न अध्ययनों से ज्ञात होता है कि वर्तमान समय में विवाह के आधार पर जुड़ने वाले रिश्तेदारो मे घनिष्ठता और आत्मियता की कमी हो रही है। जब रिश्तेदारी केवल पति पत्नि तक ही सीमित होती जा रही है। जहाँ अन्तर्जातीय विवाह या प्रेम विवाह होते है वहाँ विवाह के आधार पर केवल पति–पत्नि तक ही नातेदारी सीमित होती है।

परिवार प्रत्यक्ष नातेदारी संबंधों से जुड़े व्यक्तियों का एक समूह है जिसके बड़े सदस्य बच्चों के पालन पोषण करते है। नातेदारी बन्धन व्यक्तियों के बीच के वे सूत्र होते है जो या तो विवाह के माध्यम से या वंश परम्परा के माध्यम से रक्त सम्बधियो को जोड़ते है। विवाह को दो वयस्क (पुरूष और स्त्री) व्यक्तियों के बीच लैंगिक सम्बन्धों की सामाजिक स्वीकृति और अनुमोदन के रूप मे भी परिभाषित किया जा सकता है।

जब दो व्यक्तियों का विवाह हो जाता है तो वे परस्पर नातेदार बन जाते है। इस प्रकार वैवाहिक बंधन भी व्यापक क्षेत्र में लोगों को जोड़ते है। विवाह के माध्यम से अभिभावक, भाई बहन तथा अन्य रक्त संबंधी जीवन साथी के रिश्तेदार बन जाते है। जन्म के परिवार को जन्म का परिवार (फ्रेमिली ऑफ ओरियेंटेशन) कहा जाता है और जिस परिवार में व्यक्ति का विवाह होता है उसे प्रजनन का परिवार (फेमिली ऑफ प्रोक्रिएशन) कहा जाता है।

निष्कर्ष– उपर्युक्त शोध के आधार पर कहा जा सकता है कि प्रत्येक समाज में परिवार, विवाह और नातेदारी नामक सामाजिक संस्थाए महत्वपूर्ण आधारस्तम्भ है। इन संस्थाओं के प्रत्येक समाज में भिन्न भिन्न नियम एवं स्परूप देखे जा सकते हैं। समय के साथ साथ इन संस्थाओं में भी परिवर्तन होता है। परिवार का स्परूप संयुक्त से एकांकी की ओर अग्रसर हो रहा है। शिक्षा के प्रसार के साथ साथ महिलाओं की भी परिवार की सत्ता मे भागीदारी बढ़ी है। प्रत्येक समाज में विवाह से सम्बन्धित अपने अपने नियम एवं परम्परा होती है। प्रत्येक समाज में जीवन साथी चयन का तरीका एवं दायरा भिन्न भिन्न होता है विवाह के स्वरूपों में भी भिन्नता देखने को मिलती है। समाज में एक विवाही स्वरूप ही नातेदारी नामक सामाजिक संस्था भी जुड़ी हुई है। जिसे इनमे पृथक नही किया जा सकता। नातेदारी में मुख्य रूप से रक्त संबंधी एवं विवाह संबंधी नातेदार होते है। अन्तर्जातीय एवं प्रेम विवाह से नातेदारी का दायरा भी सीमित हो रहा है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि सभी समाजों में परिवार, विवाह एवं नातेदारी नामक सामाजिक संस्थाए समाज का आधार स्तम्भ होते है। इनके परिवर्तन से सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था भी परिवर्तित होती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:–

1. राव, एम.एस. 'एन अर्बन सोशियोलॉजी इन इंडिया' रीडर एण्ड सोर्स बुक ओरिएंट लोगमैन, नई दिल्ली 1974 पृ.सं. 391–403
2. चुगताई, इस्मत 'टिनीज ग्रेनी इन कंटेम्प्रेरी इंडियन शार्ट स्टोरीज', सीरिज साहित्य अकादमी नई दिल्ली 2004 पृ.सं. 92–96
3. शाह, ए.एम. 'फैमिली इन इंडिया' क्रिटिकल एसेज, ओरिएंट लोगमैन हैदराबाद 1998
4. सिंह, योगेन्द्र 'सोशल चेंज इन इंडिया' क्राइसेज एंड रेजिलिएम हर आनंद पब्लिकेशन नई दिल्ली 1993
5. ओबराम, पेट्रिशिया 'फैमिली, किनशिप एण्ड मैरिज इन इंडिया' स्टूडेटस ब्रिटानिका इंडिया वोल्यूम–6 एंसाइक्लोवीडिया ब्रिटानिका प्राइवेट लिमिटेड नई दिल्ली 2002, पृ.सं. 145–155

****

From Fragmentation to Consolidation: The History of Bank Mergers in India

Sapna Kasliwal*

Introduction - India's banking industry has changed significantly since the nation's independence in 1947. Among these developments, the industry's consolidation and strengthening have been largely attributed to mergers and acquisitions. Bank mergers are intricate procedures that are impacted by a number of variables, such as shifting regulations, technology breakthroughs, and economic pressures. Their objectives are to guarantee the banks' financial soundness, increase market penetration, and optimize operational efficiency. This article examines India's history of bank mergers. It looks at the reasons behind these mergers, how they affect the banking sector, and how they affect the Indian economy as a whole.

Historical Background

Early Banking in India (Pre-Independence Era): In India, the history of modern banking begins with the colonial era. The primary goal of the early financial institutions was to further the interests of the British Empire. One of the first initiatives to bring modern banking to the nation was the General Bank of India, which opened its doors in 1786. The Bank of Hindustan followed suit in 1770. These banks did not, however, last for very long. The Presidency Banks' founding created the actual groundwork for Indian banking.

1. **Bank of Bengal (1806)**
2. **Bank of Bombay (1840)**
3. **Bank of Madras (1843)**

After gaining independence, these banks merged to establish the Imperial Bank of India in 1921, which subsequently changed its name to the State Bank of India (SBI). The banking industry prior to independence had a dispersed structure with numerous small, privately held banks, the majority of which lacked substantial capital and were unstable.

Post-Independence Era and Nationalization of Banks: In the Post – Independence era, the Indian government took numerous steps to control and regulate the banking sector. The banking structure was feeble, and there was a need for stability and expansion to serve the broader population. The most significant move was the nationalization of major commercial banks in two phases:

- **First Phase (1969):** 14 large commercial banks were nationalized.
- **Second Phase (1980):** Another 6 banks were nationalized.

This move brought about 91% of the banking business under government control. The goal of nationalization was to guarantee that banking services were provided to semi-urban and rural areas, enabling priority businesses like exports, small-scale manufacturing, and agriculture to access financing.

Due to their ability to mobilize savings and extend credit to a wide range of industries, the nationalized banks were essential in the development of the Indian economy. However, these banks were confronted with issues like as inefficiencies, non-performing assets (NPAs), and overstaffing by the late 1980s, which prompted a renewed focus on mergers and consolidations.

The Evolution of Bank Mergers in India

The First Wave of Mergers (1960s–1980s): The necessity to shield the banking sector from the crisis was the primary motive behind the first wave of bank mergers in India. The banking sector was dispersed, and a number of small, financially unstable risky banks were unable to weather economic downturns. In order to safeguard the interests of depositors and ensure financial stability, the government was given the authority to combine weaker banks with stronger ones under the Banking Companies (Acquisition and Transfer of Undertakings) Act of 1970.

Many small banks combined with bigger public sector banks during this time. Among the notable mergers were:

- **Union Bank of India and Belgaum Bank Ltd. (1964)**
- **State Bank of India and Bank of Cochin (1985)**

These mergers were often initiated by the Reserve Bank of India (RBI) to prevent the collapse of smaller banks and to ensure the stability of the financial system.

The Impact of Liberalization (1990s): With the advent of liberalization, privatization, and globalization (LPG) reforms in the 1990s, the Indian economy saw a sea change. The banking industry experienced notable transformations as well, as the government put several policies into place to

*Research Scholar (Commerce) Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore (M.P.) INDIA

boost productivity and competitiveness. The recommendations of the Narasimham Committee (1991 and 1998) were crucial in influencing the restructuring and consolidation of the banking industry.

The 1991 Narasimham Committee Report suggested bank consolidation in order to establish a small number of powerful banks with worldwide competitiveness. The committee emphasized the necessity of a banking system with three tiers:

1. **Three or four large banks** with an international presence.
2. **Eight to ten mid-sized banks** with a national presence.
3. **A large number of regional and local banks** to cater to rural areas.

This led to the second wave of mergers, where several banks were merged to strengthen their balance sheets and expand their market reach. The key mergers during this period include:

- **Punjab National Bank and New Bank of India (1993):** This merger was among the first significant mergers in the public sector, aimed at creating a stronger bank with a wider network.
- **State Bank of India and State Bank of Saurashtra (2008):** This merger was part of SBI's strategy to consolidate its associate banks under a single brand.

Key Bank Mergers (2000–2015)

The Role of Regulatory Bodies: During this time, regulatory agencies including the Ministry of Finance and the Reserve Bank of India (RBI) were crucial in monitoring and enabling bank mergers. The instructions issued by the RBI regarding mergers and acquisitions underscored the importance of market forces superseding legislative obligations in these procedures. To make sure that these procedures resulted in the development of stronger, more resilient banks that could weather economic shocks, the RBI, however, kept a careful eye on them.

Global developments have had an impact on the regulatory structure. For example, the Basel standards on capital adequacy encouraged Indian banks to consolidate in order to increase their capital base.

Major Mergers and Acquisitions: Several significant mergers took place between 2000 and 2015, each driven by specific strategic, financial, or operational objectives:

1. **Punjab National Bank and Nedungadi Bank (2003):**The 2003 merger of Punjab National Bank and Nedungadi Bank was a pivotal moment in PNB's expansion strategy, especially with regard to South India. PNB provided a lifeline to Nedungadi Bank, which was experiencing financial difficulty. Through the merger, PNB was able to save a failing bank and expand its presence in the South.
2. **State Bank of India and State Bank of Indore (2010):**• State Bank of India and State Bank of Indore (2010): In order to establish a more streamlined and effective banking organization, SBI, the biggest public sector bank in India, consolidated its subsidiary banks. This plan included merging with State Bank of Indore in order to streamline operations and increase productivity.
3. **ICICI Bank and Bank of Rajasthan (2010):**In the private sector, the merger of ICICI Bank and Bank of Rajasthan was historic. One of the top private sector banks in India, ICICI Bank, acquired Bank of Rajasthan in order to grow its branch network, especially in Rajasthan. ICICI Bank was also able to increase its retail banking footprint in northern India as a result of this merger.
4. **Oriental Bank of Commerce and Global Trust Bank (2004):**In order to safeguard depositors and avert a banking disaster the government directed OBC to combine with the failing Global Trust Bank. OBC was able to grow through the merger, but it also had to deal with the substantial amount of non-performing assets (NPAs) that it had taken over from Global Trust Bank. .

These mergers were not just about expanding the branch network or customer base; they were strategic moves aimed at enhancing technological capabilities, improving operational efficiency, and increasing profitability.

Factors Driving Bank Mergers in India

Economic Considerations: In India, bank mergers have traditionally been primarily driven by economic considerations. Economies of scale, increased profitability, and improved capital adequacy ratios were all considered benefits of mergers. For example, with the implementation of the Basel regulations, Indian banks were required to reinforce their capital structure, and mergers offered a workable way to achieve this. The following was the economic justification for mergers:

Cost Efficiency: By getting rid of redundant branches, making the most of the personnel, and simplifying operations, mergers helped banks cut expenses.

Capital Adequacy: Merger-generated larger banks had higher capital adequacy ratios, which made them more resilient to shocks to the economy.

Market Expansion: Banks were able to increase their client base and market share through mergers by broadening their market reach, especially in underserved areas.

Regulatory Reforms: In India, mergers have impacted the regulatory landscape in a major way. The government's emphasis on developing globally competitive banks, the RBI's guidelines on mergers and acquisitions, and the Narasimham Committee's proposals for consolidation all had a significant role in promoting mergers. The goal of the regulatory framework was to develop a strong banking industry that could aid in India's economic expansion.

Additionally, the RBI implemented a number of initiatives to promote more seamless mergers, such as:

Streamlined Approval Procedures: The RBI made it simpler for banks to combine by streamlining the merger approval procedure.

Merger Incentives: In order to promote consolidation, banks that merged were frequently given incentives, such as loosened capital adequacy standards.

Technological Advancements: In India, bank mergers have been significantly influenced by technological improvements. Large-scale investments were necessary for the implementation of core banking solutions (CBS), online banking, and mobile banking platforms, which were frequently difficult for smaller banks to make. Banks were able to combine resources and invest in new technology through mergers, which helped them stay competitive in a market that was changing quickly.

For instance, the combination of ICICI Bank with Bank of Rajasthan enabled ICICI to offer Bank of Rajasthan clients access to contemporary banking services by extending its technical capabilities to them.

Impact of Bank Mergers on the Indian Economy

Efficiency and Profitability: One of the primary benefits of bank mergers has been the improvement in efficiency and profitability. Mergers have allowed banks to:

1. **Consolidate Operations:** By merging with other banks, institutions could eliminate redundant branches, streamline their workforce, and optimize their operations.
2. **Leverage Economies of Scale:** Larger banks could leverage their size to negotiate better deals with suppliers, reduce costs, and improve profitability.
3. **Enhance Risk Management:** Mergers provided banks with a larger capital base, enabling them to better manage risks and absorb financial shocks.

Data from various mergers indicate that banks that underwent mergers generally saw an improvement in their financial performance, with higher profitability ratios, better capital adequacy, and lower cost-to-income ratios.

Customer Service and Financial Inclusion: Financial inclusion and customer service have also been significantly impacted by mergers. The accessibility and convenience of banking services were enhanced via branch consolidation and the implementation of new technology, especially in rural and semi-urban areas. This was a double-edged sword, though, since some mergers resulted in the closing of branches in rural, unprofitable areas, which would have limited some populations' access to banking services.

On the positive side:

1. **Improved Service Delivery:**Banks were able to incorporate new technology and enhance service delivery through mergers, which resulted in quicker and more effective financial services.
2. **Expanded Product Offerings:** Larger banks resulting from mergers provide a greater array of goods and services to a larger clientele.

However, there were also concerns about the loss of personalized service as banks grew larger and more impersonal. The focus on profitability sometimes led to the neglect of social banking responsibilities, particularly in rural areas.

Challenges and Criticisms

Social and Economic Impact: While mergers brought several benefits, they also posed significant challenges. The consolidation of banks often led to:

1. **Job Losses:** Mergers often resulted in the closure of redundant branches and the rationalization of the workforce, leading to job losses, particularly in rural and semi-urban areas.
2. **Market Concentration:** There were concerns about the concentration of market power in a few large banks, which could reduce competition and harm consumers. Larger banks might focus on profitable urban areas, neglecting rural regions.

The social impact of mergers was particularly pronounced in rural areas, where the closure of branches could lead to reduced access to banking services, affecting financial inclusion efforts.

The Challenge of Integration: Another major problem in bank mergers was integrating diverse company cultures, technologies, and business processes. Banks with diverse corporate cultures frequently had trouble coordinating their activities, which resulted in inefficiencies and disruptions. Another difficulty was integrating technology, especially when the merged banks used separate core banking platforms.

For example:

1. **ICICI Bank and Bank of Rajasthan:** The merger required the integration of Bank of Rajasthan's legacy systems with ICICI Bank's modern technology platform, leading to operational challenges in the short term.
2. **State Bank of India and Its Associates:** The consolidation of SBI's associate banks required significant efforts to standardize processes, align corporate cultures, and integrate technologies.

These challenges often led to temporary disruptions in service, customer dissatisfaction, and even financial losses.

Conclusion: For regulators, financial institutions, and policymakers alike, the history of bank mergers in India offers important insights. Among these some are:

- **Strategic Planning:** Well-thought-out and strategically motivated mergers were the ones that succeeded. Clear goals, such increasing market penetration, strengthening technology prowess, or raising capital sufficiency, increased the likelihood of merger success.
- **Regulatory Support:** It is impossible to overestimate the significance that regulators play in assisting mergers. A favorable legal environment and incentives for consolidation were key factors in the success of numerous mergers.
- **Integration:** The post-merger integration phase necessitates meticulous planning and execution due to the obstacles of combining disparate company cultures, technologies, and business processes.

Future Prospects: In the future, bank mergers are expected to be popular as Indian banks look to improve their standing in a highly competitive international market. It will be crucial to strike a balance between the need to preserve competition, safeguard consumer interests, and guarantee financial stability, and the desire for consolidation. Future attempts to consolidate the Indian banking industry would be heavily influenced by the lessons that have been learned from previous mergers.

Mergers will continue to be a crucial tactic for banks trying to increase their market share, boost profitability, and sharpen their competitive edge as the banking sector develops. However, the capacity of banks to handle integration issues, harmonize corporate cultures, and take use of technology improvements to provide better services will determine whether or not these mergers are successful.

References:-

1. “Banking Law and Practice in India” by M.L. Tannan.
2. Narasimham Committee Reports (1991, 1998).
3. Reserve Bank of India Annual Reports.
4. RBI notifications and circulars.

****

Judicial Activism in India

D.C. Chauhan*

Abstract : Judicial activism is an aspect of the dynamics of a constitutional democracy in a multi-cultural society. It protects the Constitution, rule of law, rights and liberty of the people and it check the irresponsible behaviour of Parliament and the arbitrary functions of executive. However, over activism of judiciary disturbed the balance of power and it created tussle between three organs of government. Hence, the Parliament, the executive and the judiciary should act within the specific sphere determined by the Constitution. The judiciary should play active role on reasonable grounds in limited area in the public interest.

Keywords: Judicial over rich, Parliamentary sovereignty, Separation of powers, Check and balance system, Constitutional democracy, Reasonable grounds.

Introduction - India has a democratic political system. Three organs of government-legislature, executive and judiciary-derives their powers enshrined in the Constitution and they have performed their specific functions. But, the arbitrary functions of executive and irresponsiveness of legislatureled the judicial activism in the country. It created the tussle between three organs of government. This scenario provides the relevance of this research paper. This paper analyses the reasons behind judicial activism, active role of judiciary and consequences of judicial activism. Also, it suggests remedial measures.

Judicial activism means active functioning of judiciary. Where judiciary made functions of legislature and executive, which is out of his jurisdiction, it called judicial activism. The arbitrary functions of executive, decrees of moral values in public life, lust for power and money, maladministration and irresponsible behaviour of legislature led the judicial activism in the country.

Role of Judiciary: In the Golaknath case (1967)[1], the Supreme Court gave a landmark judgment on Parliament's power to amend the Constitution and fundamental rights. The Supreme Court by majority of 6:5 held that a constitutional amendment under Article 368 of the Constitution was an ordinary 'law' within the meaning of Article 13(3) of the Constitution. The Court ruled that the text of Article 368 only explained the procedure to amend the Constitution, the power being derived from entry 97 of the List I of the VII Schedule to the Constitution. Since according to Article 13(2), the Parliament could not make any law that abridges the Fundamental Rights contained in Part III of the Constitution, a constitutional amendment, also being an ordinary law within the meaning of Article13, could not be in violation of the fundamental rights chapter contained in the Constitution of India. The judgment created tussle between parliament and judiciary. In Kesavananda Bharati case (1973)[2], the Supreme Court gave a landmark judgment regarding parliament's power to amend the Constitution and judicial power. A 13-Judge Constitution bench of the Supreme Court by 7:6 majority ruled that any provision of the Constitution including, fundamental rights can be amended by the Parliament under Article 368 (1) of the Constitution, but such amendment did not change or destroy the basic structure of the Constitution. Obviously, the Court laid down the doctrine of basic structure of the Constitution. In Hussainara Khatoon case (1979)[3],a division bench of Justice P. N .Bhagwati and Justice D.A. Desai of the Supreme Court gave a landmark judgment on speedy trail of prisoners on a public interest litigation (PIL).The Supreme Court held that Right to speedy trail is covered under Article 21 of the Constitution of India and there should be no discrimination in exercising of the right under Constitution of India. The Court ordered free legal aid to under-trail prisoners charged with bailable offence. In S.P. Gupta case (1981)[4], the Supreme Court held by majority that the power of executive to appoint judges of Supreme Court and High Courts required a meaningful process of consultation with the Chief Justice and other Judges. In M.C. Mehta case (1987)[5], the Supreme Court gave a landmark judgment on PIL that established the principle of absolute liability for hazardous industries to ensure community safety. The Court ordered industries to use safer fuels and relocate to less Populated areas. The Court recognised the fundamental rights of workers in hazardous industries. In Mandal /Indra Sawhney case (1992)[6], the Supreme Court had validated the decision of National Front Government headed by V.P. Singh to provide 27% reservation to the Other Backward

*Associate Professor (PoliticalScience) Govt. College, Bawal, Rewari (Haryana) INDIA

Classes (OBCs) in government jobs and educational institutions. In Advocates - On-Record Association case (1993)[7], the Supreme Court introduced the Collegium system in the appointment of judges to the Supreme Court and High Courts itself, otherwise no such provision in the Constitution provide this power to the Supreme Court. A bench of nine-judge held that a collegiate opinion of collective judges is binding on the executive in the appointment of Supreme Court and High Court judges. In S.R.Bommai case (1994)[8], the Supreme Court gave a landmark Judgment regarding the proclamation of President's Rule under Article 356 of the Constitution. A nine-judge Constitution bench of the Supreme Court ruled that the Presidential Proclamation under Article 356 of the Constitution should be used only in extraordinary circumstances as a last resort. The Proclamation issued by the President under Article 356 of the Constitution must be analysed by the both Houses of Parliament. The Court ruled that the Proclamation under Article 356 can be subjected to judicial review. The Court ruled that the State Legislative Assembly should be dissolved after approval of the Proclamation of the President, but the Parliament. The Court ruled that the majority of the council of ministers should be tested on the floor of the State Legislative Assembly, not in Raj Bhavan or anywhere else. Thus, the Hon'ble Supreme Court laid down the doctrine of floor test. In Government Quarters Allotment case (1994)[9], the Supreme Court ordered the CBI to probe into allotments of government quarters between 1988 -1994. In Fodder Scam case (1996)[10], the Supreme Court gave a green signal for a CBI probe into Animal Husbandry fodder Scam in Bihar. In JMM case (1996)[11], the Delhi High Court appointed a fresh CBI team to investigate the Jharkhand Mukti Morcha case.

In Vineet Narain case (1997)[12], the Supreme Court gave a landmark judgment on the independence and accountability of investigation agencies. The Hon'ble Supreme Court directed the establishment of the Central Vigilance Commission as a statutory body to oversee the functioning of the Central Bureau of Investigation and other agencies, ensuring they operate without political interfere. The Court mandated that the CBI Director should have a fixed tenure and should not be removed arbitrarily, ensuring stability and independence .The Court also issued guidelines for the transparent, functioning of the CBI and the Enforcement Directorate (ED) enhancing their effectiveness in tackling corruption. The judgment strengthened the autonomy and accountability of CVC, CBI and ED. In M.C. Mehta case (2001)[13], the Hon'ble Supreme Court ruled that all City buses in Delhi should be CNG run by March 31, 2001. In I.R. Coelho case (2007)[14], the Supreme Court gave a land mark judgment on Ninth Schedule of the Constitution. The Court stated that no law that violates the basic structure of the Constitution of India can be shielded by any amendment including those placed in the Ninth Schedule. The Court held that any law or amendment inconsistent with Part III of the Constitution of India, even if placed in the Ninth Schedule, would be struck down through the process of judicial review. The Court made it clear that judicial review is a basic feature of the Constitution of India and it cannot be taken away by the Ninth Schedule. The judgment established the judicial supremacy on parliamentary sovereignty.

In 2G Spectrum case (2010)[15], the Supreme Court gave ordered to the CBI and Enforcement Directorate(E.D) to investigate in 2G Spectrum allocation from 2001 to 2008. In Bachpan Bachao Andolan case (2011)[16], the Supreme Court ordered that the Central Government must issue suitable notifications prohibiting the employment of children in circuses within two months to the order. The Supreme Court directed the Central Government to conduct simultaneous raids in all the circuses to

Liberate the children and check the fundamental rights of the children. The Court stated that the rescued children be kept in the Care and Protective Homes till they attain the age of 18 years. The Central Government was directed to frame proper scheme of rehabilitation of rescued children from circuses. In Black Money Case (2011)[17], the Supreme Court gave order to the Union government to constitute a Special Investigation Team (SIT) to take steps to bring back unaccounted monies. On the other hand, the Union Government filed the review petition in the Supreme Court and argued that the order, which directed the SIT be headed by a retired Supreme Court judge amounted to judicial overreach into executive domain and it was against the principles of separation of powers.[18]

In Society for Unaided Private Schools of Rajasthan case (2012)[19], the Supreme Court upheld the constitutionality of the Right to Education Act, 2009, section 12, which requires schools to accept 25% children from disadvantage groups. However, the Court also ruled that private and minority schools do not have to meet this quota. In Manohar Lal Sharma case (2014)[20], the Supreme Court ruled out that allocation of Coal Blocks between 1993 to 2011 (except those made through competitive bidding) invalid. It led to the cancellation of 204 Coal blocks, which were allocated to various government and private companies under the Coal Mines (Nationalisation) Act, 1973.

In the Public Interest litigations (PILs), the Supreme Court freely set-aside the rules of conduct for government which are akin to legislation. As Justice P.N. Bhagwati and Justice to V.R. Krishna Iyer was the pioneer of PIL in the country. As justice V.R .KrishnaIyer opined that the PIL and Judicial activism is a people-oriented dimension to protect fundamental rights and necessary to keep the democratic process on track. He opined, "Judicial activism is the oxygen of the rule of law and the rule of life...to Jettison judicial activism is to commit seppuku.[21] The Supreme Court issued directives to the Presiding Officers' of the Parliament in 2005 on being approached by some expelled members after the sting operation by a T.V. Channel (Tehlaka Dot Com) which caught some of them accepting

bribe for raising questions in the Parliament. Consequently, the Lok Sabha Speaker, Somnath Chatterjee, convened a Conference of the speakers of the state assemblies to debate on the encroachment of legislature's powers by Courts. The Conference decided that the Supreme Court's summons would not be accepted. Thus, the legislatures are seeking to reclaim the lost ground from the court at least in the matter of legislative proceedings which, under the Constitution, are beyond judicial intervention. Similarly, in DM, Aravali Golf Club case (2008)[22], a two-judge bench of Justices A-K. Mathur and Markendey Katju of the Supreme Court ruled that the Court should not embarrass the administrative authorities and should realise that the Court does not have expertise in the field of administration, unlike the administrative authorities. The Court noted that in the name of Judicial activism, judges cannot cross their limits and try to take over functions which belong to another organ of the State. The Court held that Judges must exercise judicial restraint and must noten croach into the executive or legislative domain. The Supreme Court disapproved its intervention in the U.P. (1998) and Jharkhand (2005) case concerning floor tests. In fact, the judiciary cannot ensure Constitutionalism alone without a balance Constitutional Government in which each organ performs its functions and duties within the framework of the Constitution. As Kuldeep Fadia observed judicialactivism isa Counter-majoritarian check on democracy. It must also function with in the limits of the judicial process. It performs the function of legitimizing or stigmatizing the action of other organs of government.[23]

Consequences of Judicial Activism: The judicial activism led to several positive consequences on the constitutional democracy in the country. Firstly, the Supreme Court actively interpret the constitutional provisions and it protect the people from arbitrary legislation and executive functions. Secondly, It made the Supreme Court as a guardian of the Constitution. Thirdly, It protected and saved the rights and liberty of the people of India. Fourthly, it maintained the rule of law in the country. Fifthly, It exposed the corruption cases and it initiated the legal action against politicians and bureaucrats. Sixthly, It made the Parliament more active and vigilant to perform his functions and duties. Seventhly, it has protected the environment, prisoners, poors, womens and childrens etc. Eighthly, it increases the faith of the people of India in judiciary. Ninthly, when legislature and executive fails to perform their functions and duties then the judiciary can direct them to fulfill their duties.

Thus, the judicial activism made the Judiciary an instrument of social revolution and it plays a vital role in socio-economic progress and Constitutional democracy in the country. As Upendra Baxi opined, if the executive or legislature defaults on its legal and constitutional obligations, Courts cannot for long take a view that violations of rights involved in such defaults are of no concerns to them. What, therefore, emerges is that province of judicial function can be construed only in the context of the work being done by the other branches of the Constitution.[24]

On the other hand, the judicial activism led to some negative consequences on the political and constitutional system in the country. Firstly, the judiciary encroaches the jurisdiction of the executive, the legislature and other autonomous institutions in its active role. Secondly, the judiciary intervene into the executive and legislative domain. It disturbs the constitutional division of powers between legislature, executive and judiciary. Thirdly, It is in consistent with and a negation of the principle of separation of powers between three organs of the government and it upset the systems of checks and balances. Thirdly, the judiciary enters such an area where it has no expertise, experience and Competency to tackle the problems. Fourthly, it made the judiciary as policy making body, but judiciary is an unelected and non-representative body that is not accountable to the people of India. It undermines the parliamentary sovereignty .Fifthly, the judiciary intervenes into executive functions through its active role. It led negative consequence on the day -to -day administrative functions and administrative efficiency. Eighthly, It has negative consequences on the smooth working of the democratic governance in the country. Ninthly, it paves the way for the judicial authoritism in the country.

In fact, the Supreme Court can never be a super-legislature or a super-executive. As Chief Justice of the Supreme Court, S.K. Kapadia, observed," the function of the Courts is to review the acts of the legislature and not to substitute its own policies or values on the society or the legislature. We do not have the competency to make policy choices and run the administration. Judicial activism which is not grounded on textual commitment to the Constitution or the statue, unlike activism in cases... raises questions of accountability of a judiciary whose members are not chosen by any democratic process and whose members are not. Answerable to the electorate or to the legislature.[25]

Remedial Measures: Some remedial measure may be suggested for the proper functioning of three organs of the democratic government. Firstly, the parliament, the executive and the judiciary should act within the specific sphere determined by the Constitution and they should not interfere with each other's

Jurisdiction for maintaining the balance between the three organs of the democratic government. Secondly, the delicate balance between three pillars of democracy should be maintained for the proper functioning of democracy in the country. Thirdly, the Judiciary do not intervene into the day-to-day functions of legislature and executive .Fourthly, the judiciary should play active role in extraordinary and exceptional situations. Fifthly, the Judiciary should not intervene in the policy making subjects of legislature .Sixthly, the Judiciary should play active role on reasonable grounds in the public interest. Seventhly, the judiciary should play active role in his limited sphere. Eighthly, the judge should not cherish the power and they did not act arbitrarily.

Conclusion: It may be concluded that an independent

Judiciary is one of the most essential institutions of democratic political system like India. A reasonable balance between the three organs of government-legislature, executive and Judiciary- is essential for smooth working of Constitutional democracy in the country. Judicial activism is an aspect of the dynamics of a constitutional democracy in a multicultural society. It protects the constitution, rule of law, rights and liberty of the people and it checks the irresponsible behaviour of parliament and the arbitrary functions of executive. Hence, the judiciary should not act arbitrarily, but the judiciary should play active role on reasonable grounds in limited area in the public interest for smooth working of vibrant democracy in the country.

References:-

1. *Golaknathand Ors .vs. State of Punjab and Anrs*., 1967 AIR 1643.
2. *Kesavananda Bharati S .and Ors. vs. State of Kerala and Anrs.*, AIR 1973 SC 1461.
3. *Hussainara Khatoon and Ors. vs. Home Secretary*, State of Bihar, Patna, 1979 AIR 1369.
4. *S.P. Gupta vs .Union of India & Anr*. AIR 1982 SC149.
5. *M.C. Mehta & Anr. Vs .Union of India & Ors*. ,1987 AIR 1086.
6. *Indra Sawhney and Ors. vs. Union of India*, AIR 1993 SC 477.
7. *Supreme Court Advocates –on –Record Association & Anr. Vs. Union of India*, AIR 1994 SC 268.
8. *S.R. Bommai vs. Union of India*, AIR 1994 SC 1918.
9. *Times of India*, New Delhi, March 21, 1996.
10. *India Today*, New Delhi, October 31, 1996.
11. *Indian Express*, New Delhi, October 31, 1996.
12. *Vineet Narain and Ors. vs. Union of India and Anr.*, AIR 1998 SC 889.
13. *M.C. Mehta vs. Union of India And Ors.,* AIR 2001 SC 1948.
14. *I.R. Coelho vs. State of Tamil Nadu & Ors*. (2007) 2 SCC 1.
15. *Hindu*, New Delhi, December 17, 2010.
16. *Bachpan Bachao Andolan vs.Union of India & Ors*., AIR 2011 SC 3361.
17. *Indian Express* ,New Delhi, April 20, 2011.
18. *Hindu*, New Delhi, July 5, 2011.
19. *Society for Unaided Private School of Rajasthan vs.Union of India & Anr*., 2012 6 SCC.
20. *Manohar Lal Sharma vs. Principal Secretary & Ors*.(2014) 9 SCC 516.
21. *EconomicTimes*, New Delhi, December 18, 2007.
22. *Divisional Manager, Aravali Golf Club & Ors. vs. Chander Hass & Anr*.,2008 AIR SCW 406.
23. *Fadia, Kuldeep, Journal of Constitutional and Parliamentary Studies*, New Delhi, Vol.48, No.1-2, January-June, 2014, p.114.
24. Baxi,Upendra, *The Indian Supreme Court and Politics*, Eastern Book Company, New Delhi, 1980, pp. 10-21.
25. *Indian Express*, New Delhi, April 16, 2011.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) Oct. to December 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

Decreased Particle Flux In A 2011 Celestial Event

Dr. Nira Talesra*

Introduction - Cosmic rays are high-energy charged particles including electrons, positrons and other subatomic particles which originate in sources throughout the Milky Way galaxy. Nevertheless there are important differences in their elemental and isotopic composition that provide information about the origin and history of galactic cosmic rays (GCR). Energetic particles that are associated with events on the sun are known as solar energetic particles (SEP). Experimental studies of GCR and SEP have been made for celestial eventslike eclipses to probe high energy astronomy.

The characteristics of GCR and SEP are manifested in the ground based spectrum observed for the terrestrial secondary cosmic gamma rays (SCGR) flux, which carry the signatures of modulated GCR and SEP. The comparative changes in the observed spectra of SCGR can be attributed to the characteristic variations in the modulated GCR and SEP by celestial events.

Date And Time Of The Eclipse, Location Of The Study: On 4th January 2011, a partial solar eclipse was witnessed in thenorthern and western parts of India. The first contact P1 began at 11:40:11.3 IST, the fourth contact P4 ended at 16:00:53 IST and the maximum partial eclipse occurred at 14:20:00 IST. The present study investigated the changes in SCGR spectrum during the partial solar eclipse at Udaipur, Rajasthan using scintillation detector. During this event, there was a partial shadow due to dark disk of the moon of about 10% over the bright sun, which caused about 15% drop in SCGR flux.

Impact Of The Eclipse On Cosmic Rays: The bending of cosmic rays becomes important when the moon is in the line joining the centers of the sun and the earth during the solar eclipse. The exposures of the bent GCR and SEP on the white upper half moon produce X-rays. It suggested that the moon reflected other radiations from the sun just as it did for visiblelight, that high energy cosmic rays continuously collided with the lunar surface that excited the particles on the moon surface and as a result generated gamma rays.

The strong impact of SEP and bent GCR flux on half moon exposed to the sun and the moon limbs may emit high energy gamma rays in the range of several hundred keV to MeV. They accompanied by SEP and bent GCR, enter the earth atmosphere and generate their signatures in the spectrum of the SCGRs flux which can be detected using appropriate detector on ground. During the progress of the solar eclipse, to investigate the role of the moon in producing variation in energy and flux of gamma rays, we conducted the present study, and observed energy variation using a scintillation detector.

Experimental Set-Up And Observations: Scintillation detector Model 802 (make: Canberra Genie 2000) was employed to detect SCGR during partial solar eclipse in the energy range of 2 keV to 2048 keV. A NaI (Tl) crystal, 50 mm thick and 44.5 mm in diameter, optically coupled with photo multiplier tube (PMT) Model 2007P connected to a voltage supply of 1100 Volts DC. generated a negative signal of 0.5 Volts. This was amplified, fed to a multi channel analyzer for acquisition and analysis.Due precautions were taken to allow the pointed secondary gamma rays along the line of sight of the partial solar eclipse but disallow the earth radioactivity background. The scintillation detector was kept on the terrace of computer centre of Mohan Lal Sukhadia University, Udaipur (India). Data files were stored every half an hour from 13.00 IST to 16.00 IST on pre and post eclipse days, besides the partial eclipse day.

Results: During the 4th January eclipse day, the observedintegrated counts were between 61000-62000 but at the time of maximum eclipse there wasa drop of integrated counts to 52524 i.e. about 15 % decrease in the counts of SCGR flux.

The result clearly shows the shadowing effect of the moon during maximum time of eclipse.

The energy spectrum ofSCGR flux on pre eclipse day (2nd January), partial eclipse day (4th January) and posteclipse day (6th January 2011) in the energy range between 200 – 1600 keV were taken from1-4 p.m. of half an hour duration. On partial eclipse day, there is a clear

*Department of Physics, Government College, Nathdwara (Raj.) INDIA

additional specificpeak in the energy range of 600 -700 keV.

The energy of the observed peak varies consistently from 650.73 keV to 666.51 keV. Thevariation in peak energy is about 2.5%.

The above results confirm that bending of cosmic flux becomes significant when the moon is in the line joining thecenters of the sun and the earth at time of the Total Solar Eclipse (TSE). During the progressof the solar eclipse, the intrusion of the moon is likely to produce variation in energy ofcosmic ray flux [Morris, 1984; Thompson et al., 1997]. It may be attributed to strongimpact of primary SEP and bent GCR flux on the moon limbs which produce high energygamma rays in the range of several hundred keV to MeV i.e. between the observed valuesof 650.73 keV and 666.51 keV. At the time of maximum partial eclipse, amplitude ofpeak decreased to 21% -30% which is significant and supports shadowing effect. Beforeand after the maximum eclipse time, peak amplitude varied between 1.4 and 1.6; at thetime of maximum eclipse, it decreased up to 1.1 to 1.2, proving blocking of flux andmoon's shadow effect.

Conclusions: The observed results of the present study for the variation in SCGR flux, as well as the energy and appearance of an additional peak can be understood by the following arguments:

1. The moon appears to act like a big celestial umbrella to stop incident cosmic flux along the path of maximum of solar eclipse. As the eclipse progresses the shadow effect of the moon becomes significant at the time of maximum of eclipse. It cuts radiation flux causing drop in the counts of SCGR flux.
2. The appearance of an additional peak in SCGR spectrum during the solar eclipsemay be attributed to emission of gamma rays from the moon's limbs after hard hitting of SEP and bent GCR. The energy variation of this peak is small (about 2.5%) but its amplitude variation is significant (about 21-30%).

References:-

1. Morris, D.J., 1984 Geophysics Res., 89, 10, 685.
2. Thompson, D.J.; Bertsch, D.L.; Morris, D.J.; Mukherjee, R.; 1997, Journal of geophysical research, Vol. 102, No. A7, Pages 14,735-14,740.

****

Analytical Study of Select Mineral Deposits of Southern Rajasthan

Dr. Nira Talesra*

Introduction - A mineral is defined as a structurally homogeneous solid of definite chemical composition, formed by the inorganic processes of nature. The term 'definite chemical composition' is not synonymous with 'fixed or constant composition', since many minerals have compositions, which are variable between certain limits. The general rule is that minor variations of composition that do not markedly alter fundamental properties are discounted. 'Structurally homogeneous' implies that the fundamental atomic structure is continuous and constant through the mineral unit. For example, in silicate minerals, the silicon-oxygen lattice is constant in character, although the interstitial cations may vary in different parts of the lattice [Korbel,2001].

Importance: Chemical analysis can provide information about the constituents of the mineral assemblage in the sample. The ferrous-ferric ratio in minerals is important in the study of geological behaviour. This ratio varies for different samples of the same mineral with place. Study of the aforesaid variation in reference to the surface of the earth is indicative of the geological processes of mineral formation [Ferrow, 1994]. It can also lead to a better understanding of the oxidation process in minerals.

Anthophyllite and Actinolite from Aravalli: The Aravalli region in the state of Rajasthan in India is a rich source of various minerals. Anthophyllite and actinolite asbestos are two such naturally occurring minerals mined in this region.Although anthophyllites in general have poor tensile strengths as compared to chrysotile asbestos [Potts,1987], the anthophyllites from this region have been seen to possess nearly ten times greater tensile strength than their average value and about half of the average value of chrysotile. The cement absorption capacity of anthophyllite fibre from this area is also very good [Shekhawat, 1987].

The properties of two varieties of asbestos, the structurally almost similar minerals, anthophyllite and actinolite, are being studied to explore their potential in various industries, like the cement and marble industries, where amphibole asbestos is found to be useful.

Chemical structure studies: The mineral studied in this work are silicates having the amphibole double chain structure. The chemical constitution of such minerals is known to contain various cations in coordination with the silicate anion. Chemical analysis is performed to determine the quantity of the various cations in terms of their oxides. Analyses which are made by means of the determination of the amount of a reagent solution required for reaction with a sample are known as *volumetric analyses*.It was conducted for all samples; wherever feasible, gravimetric analyses was also carried out for the samples.

Location courtesy: Asbestos mineral samples were collected from open pit sites of the mineral-rich Deogarh, Kuathal and Mandal regions of southern Rajasthan. Chemical analysis studies were performed on the representative samples selected for study.The wet and the ignition analysis methods described in previous chapter were used for evaluation of weight percent of oxides up to 0.01 percent. 20gm of mineral powder was used for preparation of solution and 10gm for fusion study.

Results: Two samples from Deogarh region were chemically analysed thoroughly. The silica component was found to be 50.7 and 49.5 while the MgO varied from 32.4 to 25.7. The ferrous component was 9.09 and 9.37 percentage by weight while the ferric was 2.86 and 6.58 respectively. All the other metallic oxides, such as the Calcium, Aluminium, Titanium, Sodium, Potassium, Manganese, Chromium, Nickel oxides constituted less than 2% of the sample in the former and less than 3% in the latter.In contrast, the Mandal sample had a base bed of 49.0% silca and 32.1 % MgO, 6.60% ferrous and 1.71% ferric components, with a similar low profile presence of the other cations.

*Department of Physics, Government College, Nathdwara (Raj.) INDIA

Conclusion: The Deogarh-Kuathal belt was found rich in anthophyllitic asbestos. The samples from this region were studied by chemical analysis. They were found to be iron-rich minerals. The Maandal sample were less relatively iron-rich.

References:-

1. Korbel, P., and Novak N., 2001. The Complete Encyclopaedia of Minerals, Grange Books, UK.
2. Ferrow, E.A., 1994. HyperfineInteractions: 90,121.
3. Potts, P.J., 1987. A Handbook of Silicate Rock Analysis. Blackie.
4. Shekhawat, M.S., Ph.D. thesis 1987, University of Rajasthan, Jaipur, India.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) Oct. to December 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

An Ethnographic Comparative Study Of Herbalist And Non-Herbalist Healers

Dr. Chakrapani Upadhyay*

Introduction - Ethnographic research was conducted within tribal communities in southern Rajasthan from 2003 through 2006, to compare the knowledge system, faith and belief, life style and work principles of herbalist healers with the non-herbalist ones. They were carefully chosen as matched pairs, with each pair having nearly identical demographic details.

Data Collection: Interviews were usually conducted in Mewari, a Rajasthani dialect and lingua franca in the area, in the particular Bhili or other tribal dialects spoken in the sanctuary. Interviewers were trained not to deviate from the written survey protocol, although some variation was inevitable given field conditions.

This provided insight necessary to develop and meaningfully interpret a 190-item survey used to assess our informants' relationships to nature. Besides basic demographic information such as age, gender, education, tribal affiliation, and land ownership, we used this survey to collect data related to our respondents' economic dependence on the jungle, relationship to wild plants, animals, and nature spirits, and environmental values and concern.

Matched Pairs: In this article, we focus on the responses of a sub-sample of our original survey, those of herbalists (referred to as *gunis* or *gunijans*). Herbalists were defined as those individuals claiming to possess knowledge of at least 4 of the 12 specific herbal remedies listed on our survey, which ranged from treatments for upset stomachs and diarrhea to cures for scorpion stings and rabies. In this article, we compared 71 herbalists against 71 non-herbalists, matched on age, gender, tribe, education, village of residence, and economic status. This yielded a sample size of 71 matched pairs or 142 total individuals.

The statistical analyses compared the responses of tribal herbalists to non-herbalists using matched pairs as the unit of analysis. The goal was to examine the impact of herbalist status, while controlling for various demographic characteristics on which herbalist healers differ from non-herbalists.

Results: The most striking difference between herbalists and their matched pairs is their relationship to wild plants. Herbalists, by definition, understand the healing power of plants. Herbalists were more likely to report a general knowledge of healing herbs, as well as particular knowledge on questions related to specific herbal remedies.

Herbalists were more likely than their non-herbalist matches to think that the moun- tain thinks, has opinions like humans, and is smarter than human beings. They also were more likely to believe that mining causes the mountain to feel pain, that throwing garbage and waste in the rivers causes them distress, and that the forested mountain is more like a parent than property.

Herbalists outscored their non-herbalist pairs in reporting the spotting of *all* animals, including hyena, bear, porcupine, and antelope. They were also more likely to report seeing or hearing the signs of these wild animals—their tracks, paw prints, claw scratches on trees (leopards), their calls and hollers, their scat, and their dropped spines (porcupines).

Herbalists were more knowledgeable about the needs and habits of wildlife. They were more likely to worship wild animals and receive communications from them. *Guni* herbalists expressed comfort and ease in the forest and were less likely than non-herbalists to fear the forest. Herbalists expressed more commitment to protecting predatory wildlife.

Herbalists gave more pro-environment responses than matched pair members on c*onservation* practices like planting trees, saving water, reporting a forest crime to the RFD. Their actions signaled alignment with the state's conservation agenda like cooperating with RFD employees, helping conduct wildlife census and taking part in forest-related training.

Herbalists were generally poorer than non-herbalists. They had humbler houses, lesser farmland, fewer heads of cattle or hens, and mostly had a BPL card.

Conclusions: The herbalists of Phulwari defend a nature that is both the foundation of, and completely intermingled with, their own existence and well-being. Or, as one older tribal woman straightforwardly put it, "When the jungle dries

***Lecturer (Sociology) Government College, Pratapgarh (Raj.) INDIA**

up, our own bodies dry up too." Over time, herbalists' close relationship to the mountain—hours upon hours of trekking, carefully gathering healing herbs and other forest produce, and encountering all sorts of wildlife and natural wonders in the process—has created a bond to the natural world of particular depth and scope. Herbalists' economic dependence on forest resources, animistic worldview, deep understanding of plants and forest ecology, professional mandate and thus identity to heal others with wild roots and herbs, and deep and abiding feeling of kinship with wildlife and woods make it difficult for them, on many levels, to separate selves from forests. As such, it does not make sense to think of herbalists' environmental thought and behavior as being *either* egocentric *or* altruistic: such a construction only has meaning when the object of one's behavior is conceptualized as largely separate and distinct from the self, which is not the case in this Rajasthani context. Indeed, it would not push the point far to suggest that herbalists do not so much behave in certain ways *toward* wildlife, as inhabit and share a common world and being with them.

Acknowledgement: The author acknowledges the help of the extensive research team, led by Snodgrass, who conducted interviews and observations over 4 years with matched pairs. Working with this team was a fun-filled research experience.

Reference:-

1. Snodgrass, J.G., Sharma, S.K., Jhala, Y.S., Lacy, M.G., Advani, M., Bhargava, N. K., Upadhyay, C. (2007). Beyond Self-Interest and Altruism: Herbalist and Leopard Brothers in an Indian Wildlife Sanctuary, Human Dimensions of Wildlife, 12:5, 375 – 387.

****

राजनैतिक दल, घोषणा-पत्र और मतदाता

डॉ. अभिमन्यु सिंह चौहान*

प्रस्तावना – आम निर्वाचन के समय प्राय: प्रत्येक राजनैतिक दल राष्ट्र की सुरक्षा, समृद्धि एवं विकास की दृष्टि से अपने को अन्य राजनीतिक दलों की अपेक्षा अधिक उपयुक्त, सक्षम एवं योग्य सिद्ध करने के लिये जो वैचारिक योजना आम जनता के समक्ष प्रस्तुत करते हैं, उसे ही, दलीय घोषणा पत्र कहा जाता है। दलीय घोषणा पत्र राजनीतिक दलों की भूतकालीन उपलब्धियों, भावी योजनाओं एवं विकास कार्यक्रम का लेखा-जोखा होता है। चुनाव घोषणा पत्र कमोबेश दलों के कल्पित आत्मकथा होते हैं और बहुविध अलंकरण के अनुष्ठान होते हैं। वे राजनीतिक दलों के सिद्धान्तों को प्रतिपादित करते हैं और मतदाताओं को अपने आदर्शमय वादों से बाँधते हैं। वे मुद्दों को प्रस्तुत करते हैं, देश की समस्याओं से आम जनता को अवगत कराते हुये दल की योजना व नीति तथा मूल्य परक उद्देश्यों को निर्धारित करते हैं। ये घोषणा पत्र देश की क्षेत्रीय, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं के सम्बन्ध में पार्टी द्वारा अपनायी जाने वाली नीतियों के सूत्रबद्ध वाक्य एवं भावी राष्ट्रीय परिवेश की प्रतिछाया प्रस्तुत करते है तो दूसरी ओर, राष्ट्रीय समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करते हैं। ये घोषणा पत्र चुनाव की अवधि में दलों द्वारा जनता को दिये गये आश्वासन होते हैं। इन घोषणा पत्रों के अध्ययन से जनता को यह स्पष्ट होने लगता है कि विजयी होने के बाद कौन दल राष्ट्र समस्याओं के समाधान की दिशा में कौन-सा कदम उठायेगा। मतदाता इन घोषणा-पत्रों के माध्यम से यह समझने का प्रयास करने लगता है कि किस दल के विजयी होने पर इसका हित सर्वाधिक सुरक्षित रहेगा। इन्हीं घोषणा-पत्रों के माध्यम से मतदाता दलों की उपलब्धियों एवं भावी योजनाओं का आकलन अपने हितों के सन्दर्भ में करने लगता है।

दलीय घोषणा-पत्र की प्रभावशीलता, उसके प्रस्तुतीकरण की शैली, उनके राष्ट्रहित एवं लोकतन्त्र विन्यासित स्वरूप, आम जनता की समस्याओं एवं सवालों को अपने में केन्द्रित करने की उनकी क्षमता तथा मतदाताओं की भावनाओं को झकझोरने की क्षमता पर निर्भर करती है। इसीलिए इन्हें तैयार करते समय दल के नीति-निर्देशकों को ऐसे कुशल लोगों का सहयोग लेना पड़ता है, जो दल की उपलब्धियों एवं भावी योजनाओं को कम से कम शब्दों में लोक लुभावन ढंग से प्रस्तुत कर सकें, जो इस विधा से सम्पन्न हों कि किन शब्दों एवं वाक्यों से मतदाता के अन्तरतम को छूने वाला घोषणा पत्र बनाया जा सकता है। किस प्रकार शब्दों एवं वाक्यों को व्यवस्थित किया जाय कि मतदाता यह महसूस करने लगे कि ये सभी माँगें उनकी अपनी समस्याएँ है। 1959 में ब्रिटेन में मैकलायड ने पार्टी घोषणा-पत्र के निर्माण के सन्दर्भ में कहा था कि घोषणा-पत्र आम मतदाताओं को शिक्षित करने एवं निवेदित करने की प्रक्रिया है। इसके द्वारा पार्टी के विश्वासों, महत्वाकांक्षाओं एवं अभिलाषाओं की अभिव्यक्ति होती है। इसके निर्माण के लिये ऐसी विधा अपेक्षित होती है जो पुराने शब्दों एवं मुहावरों को नवीन सन्दर्भ प्रदान कर सके, तार्किक योजना बना सके, मूल्यों को आकर्षक ढंग से व्यवस्थित कर सके। यह राजनीतिक विश्वास का ऐसा टेस्टामेन्ट है जो कभी कल्पनावादी, कभी आदर्शवादी, कभी सार्वदेशिक और कभी क्षेत्रीय हो जाया करता है। भारत के आम निर्वाचनों में प्रारम्भ से लेकर अब तक दलीय घोषणा-पत्रों की भूमिका एक सी नहीं रहा है।

प्रारम्भ के प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय आम-निर्वाचनों में राजनीतिक दलों ने अपने-अपने दलीय घोषणा-पत्रों में अपने द्वारा परिकल्पित राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था को स्थापित करने का वादा किया। काँग्रेस ने प्रजातांत्रिक समाजवाद, साम्यवादियों ने मार्क्सवादी चिन्तन पर आधारित समाजवाद तथा जनसंघ ने भारतीय मूल्यों पर आधारित राजनीतिक व्यवस्था सम्बन्धी विभिन्न तरह के विकल्प आम जनता के समक्ष प्रस्तुत किए। उनके घोषणा पत्रों में व्यवस्था परिवर्तन को महत्व दिया गया, सत्ता परिवर्तन को नहीं। उस समय सभी पार्टियों के अपने-अपने सपने थे, अपनी-अपनी जीवन दृष्टि थी।

किन्तु बुद्धिजीवियों को छोड़कर न तो कोई उनके घोषणा-पत्रों को पढ़ सका न समझ सका। जीवन-दर्शन पर आधारित राजनीतिक दलों की वैचारिक योजनाएँ जनभावनाओं को अपने अनुकूल बनाने की दृष्टि से उपयोगी सिद्ध नहीं हुई और गाँधी, नेहरू तथा कांग्रेस की स्वतन्त्रता प्रदायी छवि कांग्रेस पार्टी की विजय को सुनिश्चित करती रही। दलीय छवि एवं वैचाारिक योजनाओं का आम जनता की समझ से परे होने के कारण विपक्षी नेता हमेशा हारते रहे। इन दलों में जिन नेताओं की कोई अपनी छवि रही वही लोकसभा में पार्टी की उपस्थिति का एहसास कराते रहे। ऐसी ही स्थिति में व्यवस्था परिवर्तन विन्यासित वैचारिक योजना के प्रति प्रारम्भिक वर्षो में राजनीतिक दलों में जो रूझान विकसित हो रहा था, आगे चलकर उससे उसका मोह भंग होने लगा और वे विजय दिलाऊ मुद्दे की तलाश करने लगे।

चौथे आम निर्वाचन में डॉ, राम मनोहर लोहिया द्वारा प्रायोजित गैर कांग्रेसवाद का अभियान विपक्षियों की इसी मानसिकता का परिणाम रहा। 1967 में पहली बार विपक्ष ऐसे मुद्दे पर केन्द्रित रहा जिसका समबन्ध सत्ता परिवर्तन से रहा, किन्तु वैकल्पिक व्यवस्था से नहीं रहा। इस निर्वाचन में गौ-रक्षा जैसे मुद्दे को उठाकर जनसंघ ने दिल्ली की 7 सीटों में 6 सीट, उ.प्र. में 12 सीट, राजस्थान में 3 सीट, मध्यप्रदेश में 10 सीट, हरियाणा, पंजाब, चण्डीगढ़ और बिहार में एक-एक सीट प्राप्त कर स्वतन्त्र भारत के

* लेक्चरर (राजनीति विज्ञान) एस.एम.बी. राजकीय महाविद्यालय, नाथद्वारा (राज.) भारत

इतिहास में पहली बार सिद्ध कर दिया कि साम्प्रदायिक, भावनात्मक मुद्दों के आधार पर भी जन समर्थन प्राप्त किया जा सकता है। 1967 से 71 तक राजनीतिक दलों के भीतर इस प्रश्न पर गम्भीरतापूर्वक विचार होता रहा कि आम जनता का समर्थन प्राप्त करने हेतु कौन सी रणनीति अपनायी जाए। व्यवस्था परिवर्तन विन्यासित मुद्दों को ज्यादा महत्व दिया जाय या समस्या विन्यासित मुद्दों को।

इसी वैचारिक मन्थन एवं नीति निर्धारित करने के सन्दर्भ में कांग्रेस का विभाजन अनुशासन बनाम अन्त:करण, संगठन बनाम सत्ता, दक्षिण पंथ बनाम वाम पंथ के आधार पर हो गया। कांग्रेस का एक धड़ा जो इन्दिरा जी के नेतृत्व में कांग्रेस से अलग हुआ था। 1967 से ही विकास के लाभों से वंचित बहुसंख्यक मतदाताओं को अपनी तरफ आकर्षित करने तथा उनके बीच अपनी विश्वसनीयता स्थापित करने हेतु समयबद्ध आर्थिक, राजनीतिक एवं सामाजिक कार्यक्रमों द्वारा प्रजातन्त्र, धर्मनिरपेक्षता एवं सामाजिक न्याय के मूल्यों को व्यवहारिक रूप देने के लिये छटपटा रहा था।

1971 के निर्वाचन से दलीय घोषणा-पत्र का मुख्य बिन्दु वैकल्पिक व्यवस्था विन्यासित योजना न होकर समस्या विन्यासित वैचारिक योजना हो गयी। किन्तु, जहाँ इन्दिरा कांग्रेस ने गरीबी हटाओ का नारा देकर समस्याओं के समाधान की ओर मतदाताओं का ध्यान आकर्षित करने की पहल की, वहीं विपक्षियों ने 'इन्दिरा हटाओ देश बचाओ' का नारा देकर तथा इन्दिरा जी को प्रजातान्त्रिक एवं संवैधानिक मूल्यों का विरोधी बताकर मतदाताओं को अपनी तरफ आकर्षित करने का असफल प्रयास किया।

यदि 1971 एवं 77 में दलीय घोषणा-पत्रों में समस्या विन्यासित मुद्दों को पक्ष और विपक्ष दोनों ओर से उठाया गया, तो 1980 के घोषणा-पत्र में व्यक्ति विन्यासित मुद्दे प्रभावी हो गये। इन्दिरा-कांग्रेस के घोषणा-पत्र में स्पष्ट रूप से कहा गया कि कांग्रेस 'इ' ही केवल एक राजनीतिक दल है और श्रीमती इन्दिरा गाँधी ही ऐसी नेता हैं, जो देश का सफल नेतृत्व कर सकती हैं, स्थिर सरकार दे सकती हैं। जनता पार्टी ने अपने दलीय घोषणा-पत्र में यह नारा दिया कि 'सदियों का कलंक मिटाना है, बाबू जगजीवन राम को प्रधानमंत्री बनाना है।' लोकदल ने अपने घोषणा-पत्र में किसानों एवं मजदूरों की आर्थिक स्थिति सुधारने का आश्वासन देते हुये आम जनता से चौधरी चरण सिंह को जिताने की अपील की।

1991 में दलीय घोषणा पत्रों में मुख्य रूप से मण्डल के माध्यम से श्री वी.पी. सिंह का जाति युद्ध, बाबरी मस्जिद के माध्यम से श्री आडवाणी का धार्मिक उन्माद तथा श्री चन्द्रशेखर की सरकार बनाने एवं गिराने के माध्यम से श्री राजीव गाँधी की नीति मुद्दे के रूप में छाया रहा।

1996 का चुनाव आते-आते मुद्दों की अहमियत दलीय घोषणा-पत्रों से समाप्त होने लगी। 1971 के चुनाव में गरीबी हटाओं, 1977 में लोकतन्त्र बनाम तानाशाही, 1989 में भ्रष्टाचार जैसे मुद्दों की जगह दलीय घोषणा-पत्र में गरीब बच्चों को विद्यालयों में दोपहर के भोजन ने ले लिया। इस निर्वाचन में वोट चाहने वालों का यह विश्वास भी जाता रहा कि उन्हें किसी सिद्धान्त, नीति एवं मुद्दों के नाम पर वोट मिलेगा।

भारतीय राजनीति में चुनावी मुद्दों एवं दलीय घोषणा पत्रों के स्वरूप में क्रमश: जो परिवर्तन आता गया, उससे हमारे लोकतन्त्र की प्रतिबद्धता समाप्त हुई। राजनीतिक दलों की विश्वसनीयता एवं मतदाताओं की राष्ट्रीय मुद्दों के प्रति आस्था समाप्त होने लगी। राष्ट्रीय मुद्दों के अभाव में यह बात स्पष्ट होने लगी कि आज सभी राजनीतिक दलों के पास जनता के बुनियादी सवालों का जबाव नहीं है, वैकल्पिक योजनाएँ नहीं है। दलों के अन्दर अन्दरूनी लोकतन्त्र नहीं है, जिससे वैकल्पिक व्यवस्था पर बहस हो सके।

ऐसी स्थिति में यह प्रश्न विचारणीय हो जाता है कि बहुसंख्यक जनता के जो सवाल है, जो मुद्दे हैं, वे राजनीतिक दलों के केन्द्रीय सवाल या मुद्दे क्यों नहीं बन पाते? जनता के सवाल चुनाव में हाशिये पर क्यों छूट जाया करते हैं। मतदाता और उसके बेहतर जीवन से सम्बन्धित मुद्दे हर चुनाव के दायरे से बाहर क्यों रह जाते है? राजनीतिक दलों के नेता मतदाताओं की भावनाओं (जाति और सम्प्रदाय सम्बन्धी) को सीढ़ी बनाकर सत्ता के गलियारे में क्यों पहुंच जाते हैं? इन प्रश्नों पर यदि गम्भीरतापूर्वक विचार किया जाये तो यह तथ्य स्पष्ट होता है कि प्रारम्भिक चुनावों के दलीय घोषणा-पत्रों में और आज के दलीय घोषणा-पत्रों के स्वरूप में परिवर्तन आने के कारण ऐसा हो रहा है।

आरम्भ के चुनावों में दलीय घोषणा-पत्र का आधार वैकल्पिक जीवन-दर्शन एवं जीवन-दृष्टि हुआ करता था। उन चुनावों के साथ मतदाताओं के सपने जुड़े रहते थे। वे सपने बदलाव के थे, नये समाज और सरकार के थे, नई संस्कृति के थे। उन सपनों को रूप देने की ललक एवं उत्साह राजनेताओं में हुआ करती थी। इसी कारण अपनी हार सुनिश्चित जानकर भी नेतागण लोक जागरण के लिये चुनावों का इस्तेमाल करते थे, किन्तु अब दलीय घोषणा-पत्र वैकल्पिक जीवन-दर्शन पर आधारित नहीं होते। उनका उद्देश्य लोकहित एवं लोक जागरण नहीं होता। अब उनका उद्देश्य किसी भी तरह चुनाव जीतना होता है। अब नेतागण चुनावों में सम्मिलित होते हैं चुनाव जीतने के लिए, सत्ता के गलियारे में पहुँचने के लिए, न कि राष्ट्रीय एवं प्रजातान्त्रिक मूल्यों की रक्षा के लिए।

पहले घोषणा पत्र व्यापक चिन्तन और व्यापक दृष्टिकोण पर आधारित होते थे। उनका सम्बन्ध राष्ट्र की समृद्धि, जनता के बेहतर जीवन एवं प्रजातान्त्रिक मूल्यों से होता था। उनके स्वरूप एवं उपयोगिता पर, जीवन मूल्यों के आधार पर विचार किया जाता था किन्तु अबके घोषणा-पत्र संकीर्ण चिन्तन और संकीर्ण दृष्टिकोण पर आधारित होने के कारण सतही होते है, मतदाताओं की भावनाओं को उभारने वाले होते है। उनका सम्बन्ध सम्पूर्ण राष्ट्र से नहीं, राष्ट्र के वर्ग-विशेष एवं जाति-विशेष के सतही स्वार्थ से होता है। उनमें राष्ट्रीय समृद्धि, प्रजातान्त्रिक मूल्यों एवं आम नागरिकों के बेहतर जीवन के प्रति प्रतिबद्धता नहीं होती।

पहले राजनीतिक दलों के घोषणा-पत्रों में एक बुनियादी अन्तर होता था, जो विकल्प को प्रोत्साहित करता था। किन्तु आज राजनीतिक दलों द्वारा जो घोषणा-पत्र तैयार किये जाते हैं, उनमें शब्दों के अंतर तो होता है, किन्तु उनमें सन्निहित तथ्यों के बीच कोई ऐसा बुनियादी अन्तर नहीं होता जो गुणात्मक एवं सृजनात्मक विकल्प को स्पष्ट कर सके। 1991 में कांग्रेस द्वारा प्रस्तुत 'राम-रहीम, रोजी-रोटी', भाजपा द्वारा प्रस्तुत 'राम, रोटी इन्साफ' और राष्ट्रीय मोर्चे द्वारा प्रस्तुत सामाजिक न्याय जैसे मुद्दों एवं नारों में कोई बुनियादी अन्तर नहीं रहा है। भाजपा का स्वराज से सुराज की ओर, कांग्रेस का स्वराज के साथ सुराज में कोई बुनियादी अन्तर नहीं है।

पहले के घोषणा-पत्रों में जो वादे किये जाते थे, जो मुद्दे उठाये जाते थे, उनमें दोहरापन नहीं होता था। अब तो वादे किये जाते हैं, मुद्दे उठाये जाते हैं, उनके दो रूप होते है-एक आदर्श निष्ठ और दूसरा स्वार्थ निष्ठ। मंच से पूरे समाज के लिये आदर्श निष्ठवाद किये जाते हैं, किन्तु पर्दे के पीछे वर्ग-विशेष के लिये एवं जाति-विशेष के लिये तथा वोट के ठेकेदारों के लिये

स्वार्थनिष्ठ वादे किये जाते हैं। आदर्श निष्ठ वादों को पूरा करने से उनका व्यक्तिगत स्वार्थ पूरा नहीं होता। उनके जीवन में भौतिक सुख-समृद्धि की सम्भावना नहीं बढ़ती, उनका वोट बैंक सुरक्षित नहीं रह पाता। अत: वे स्वार्थनिष्ठ वादों को ही पूरा करने में अपनी रूचि प्रदर्शित करते हैं। नेता और जनता द्वारा इन्हीं स्वार्थनिष्ठ वादों को अपने जीवन में महत्व देने का परिणाम है-घोटालों की अनवरत श्रृंखला।

पहले के निर्वाचनों में राजनीतिक दल जो वादे करते थे, उन पर जनता विश्वास करती थी। किन्तु अब नेता जो वादे करते है, उन पर जनता विश्वास नहीं करती। आज यदि थोड़े से बौद्धिक वर्ग को छोड़ दिया जाये, तो आम जनता का चुनाव घोषणा-पत्रों से कोई लेना देना नहीं है। सारे दिन दाल-रोटी के जुगाड़ में लगे रहने वालों के पास न तो इन उबाऊ कागजी पुलिंदों को पढ़ने में कोई रूचि है और न ही कोई इच्छा। नेताओं की वादा खिलाफियों के कारण इनमें 'कोई नृप होय, हमें का हानि' की धारणा बलवती होती जा रही है। क्योंकि 1971 में इन्दिरा जी ने गरीबी हटाने का वादा किया, किन्तु पूरा नहीं कर सकीं। 1979 में जनता पार्टी ने जो वादा किया उसे पूरा नहीं कर सकी। 1989 में राष्ट्रीय मोर्चे ने सामाजिक न्याय दिलाने का वादा किया, किन्तु जातीय राजनीति के अभ्युदय ने सामाजिक न्याय की उपेक्षा कर दी।

डॉ. प्रभा भार्गव का मानना है कि घोषणा-पत्र अपने को राष्ट्रीय प्रश्नों तथा सामाजिक मुद्दों से अछूते रखते हुये शुद्ध रूप में वर्तमान जीवी बनते जा रहे हैं। भारतीय मतदाता अपने चुनावी अनुभवों के आधार पर उन घोषणा-पत्रों की निरर्थकता के प्रति ही अधिक आश्वस्त रहता है। वह इन्हें एक चुनावी औपचारिकता मानता है। आम मतदाता की यह धारणा है कि राजनीतिक दल घोषणा-पत्र पर अमल करने को न तो जरूरी मानते हैं, और न करने की स्थिति में हैं और न किसी नैतिक शर्मिन्दगी से गुजरते हैं। राजनीतिक दलों तथा मतदाताओं के लिये कागज के ये पुलिन्दे अब एक थकाऊ और उबाऊ रस्म-अदायगी रह गये हैं।

आज भारत की निर्वाचन राजनीति की सबसे महत्वपूर्ण समस्या है-जनता के वास्तविक सवालों को दलीय घोषणा-पत्रों एवं चुनावी मुद्दों का विषय बनाना। गरीबी, बेरोजगारी, महँगाई, अशिक्षा, भ्रष्टाचार एवं साम्प्रदायिकता जैसे सवालों को दलीय घोषणा-पत्रों में सम्मिलित किया जाना। यह तभी सम्भव है जब राजनीतिक दलों के पास विकास की अवधारणा और उसमें व्यक्ति का स्थान तथा उसकी भूमिका के सम्बन्ध में कोई वैकल्पिक चिन्तन हो। इस वैकल्पिक चिन्तन की पृष्ठभूमि तभी निर्मित हो सकती है, जब लोकतान्त्रिक प्रक्रिया के आधार पर दलों का संगठन हो और उस संगठन से शीर्ष नेतृत्व शक्ति प्राप्त करें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. सच्चिदानन्द मिश्र, 'भारतीय निर्वाचन संस्कृति - दशा एवं दिशा', वसुन्धरा प्रकाशन गोरखपुर, 1996, पृ. 46
2. एन.एस.मल्होत्रा, 'इलेक्शन पालिटिक्स इन इण्डिया', पृ. 56
3. पालिटिक्स क्वार्टरली, अप्रैल-जून 1965
4. डॉ.प्रभा भार्गव, 'चुनाव घोषणा पत्र - सिद्धांत एंव स्थिति' राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2006 पृ.-261

****

Impact of Social Media Influencers on Brand Perception

Dr. O.P Roonwal*

Abstract: The emergence of social media platforms during the 2010s has transformed the way consumers perceive and interact with brands. A growing body of research highlights the influence of online personalities—social media influencers—on shaping brand perceptions through authenticity and personal engagement. This paper examines the extent to which influencers affect consumer attitudes, focusing on perceived trust, brand credibility, and emotional attachment. Using secondary literature and primary survey data collected from 250 social media users across urban India in 2015, this research reveals that influencer endorsements positively affect brand perception more than traditional celebrity advertising. The study concludes with managerial implications for integrating influencer strategies into long-term brand communication plans.
Keywords: Social Media Influencers, Brand Perception, Authenticity, Consumer Trust, Word of Mouth, Digital Marketing, eWOM, Brand Credibility.

1. Introduction: The early 2010s marked a structural shift in global marketing communication. With social media emerging as a dominant medium, consumers began engaging with brands not merely as end recipients but as active participants in meaning creation. Platforms like Instagram (2010), YouTube (2005), and Twitter (2006) empowered individuals to become self-made content curators, establishing influence through relatability and consistency (Freberg et al. 2011).

These **social media influencers (SMIs)** blurred the line between peer communication and brand endorsement. Unlike celebrities, who represent aspirational ideals, influencers connect through authenticity and accessibility. Consequently, their recommendations appear genuine, enhancing consumer trust (Uzunoðlu and Kip 2014).

This study aims to explore how social media influencers impact **brand perception**—defined as consumers' emotional and cognitive associations with a brand (Keller 1993)—and to validate the relationship between influencer credibility and consumer trust using primary 2015-era data.

2. Literature Review

2.1 Rise of Influencer Culture: The shift from traditional advertising to peer-driven digital communication reflects broader changes in media consumption. Platforms such as YouTube (2005), Instagram (2010), and Twitter (2006) democratized content creation. Individuals without formal celebrity status began influencing purchase decisions through consistent, authentic engagement (Uzunoðlu and Kip 2014).

Freberg et al. (2011) define a social media influencer as "a new type of independent third-party endorser who shapes audience attitudes through blogs, tweets, and other online communications." This conceptualization emphasizes independence and perceived authenticity as key sources of influence.

The foundations of influencer marketing lie in the **Two-Step Flow of Communication** model (Katz and Lazarsfeld 1955), which argues that information flows from media to opinion leaders, and from them to the wider public. Influencers function as these opinion leaders in the digital era, bridging the gap between corporate communication and social dialogue.

2.2 Brand Perception and Consumer Psychology: Brand perception is the composite of consumers' emotional, cognitive, and behavioral responses to a brand (Keller 1993). It evolves through accumulated interactions and associations. When influencers discuss or use products, their credibility transfers to the brand—enhancing perceived quality and trust.

According to **Source Credibility Theory**, message effectiveness depends on three factors: expertise, trustworthiness, and attractiveness (Hovland and Weiss 1951). Influencers score highly on trustworthiness and relatability due to the perceived absence of commercial motives. This differentiates them from traditional endorsers, whose partnerships are often explicitly transactional.

2.3 Authenticity and Narrative Communication: Authenticity has emerged as a defining attribute of influencer marketing. Audiences are drawn to influencers who share personal experiences rather than scripted advertisements. Marwick (2013) emphasizes that perceived authenticity stems from self-disclosure, consistency, and emotional openness.

Escalas (2004) found that **narrative processing**—when consumers interpret brand messages through stories—creates stronger emotional connections.

***Lecturer, Dept. of BADM, Govt College, Kherwara (Raj.) INDIA**

Influencers' content often revolves around everyday storytelling, which integrates brands naturally into lifestyle narratives, enhancing brand warmth and humanization.

2.4 eWOM and Digital Trust Formation: The rise of **electronic word of mouth (eWOM)** has revolutionized consumer decision-making. Cheung and Thadani (2012) showed that peer recommendations online significantly influence purchasing behavior. In 2014, a global Nielsen study reported that 92% of consumers trust recommendations from individuals—even those they do not personally know—over brand advertising.

Influencers amplify eWOM through structured communities of followers who regard them as credible peers. This interpersonal trust mechanism directly enhances brand perception and purchase intent.

2.5 Celebrities versus Influencers: Traditional celebrity endorsements were long associated with brand image transfer (Erdogan 1999). However, as consumers became increasingly skeptical of overtly paid promotions, influencer marketing gained traction as a more organic form of communication. Influencers' relatability creates a sense of co-ownership over brand meaning (Abidin 2014).

De Veirman, Cauberghe, and Hudders (2015) found that influencers with moderate followings often yield higher engagement than macro-celebrities, as their perceived authenticity outweighs popularity.

3. Research Methodology

3.1 Research Design: A **mixed-method approach** was adopted:

- **Qualitative analysis** of published research (2009–2015) for theoretical grounding.
- **Quantitative survey** of 250 respondents to measure consumer perceptions of influencer marketing in India.

3.2 Sample Characteristics: The sample comprised a balanced distribution of respondents across various demographic categories. In terms of **gender**, **52%** of the participants were **male** and **48%** were **female**, indicating an almost equal representation. Regarding **age groups**, the majority of respondents fell within the **25–34 years** range (**45%**), followed by those aged **18–24 years** (**40%**), and a smaller proportion aged **35–45 years** (**15%**). With respect to **occupation**, **working professionals** formed the largest group at **50%**, while **students** accounted for **35%**, and **others** made up **15%** of the total sample. In terms of **social media usage**, an equal proportion of respondents (**45%**) reported spending either **1–3 hours** or **more than 3 hours** per day on social media, while **10%** used it for **less than 1 hour** daily. Overall, the majority of participants belonged to the **millennial demographic**, representing the most socially active digital segment in 2015.

3.3 Tools for Data Collection: Structured questionnaire with five-point Likert scale (1 = Strongly Disagree to 5 = Strongly Agree) assessing:

- **Perceived Credibility of Influencer**
- **Authenticity of Endorsements**
- **Trust in Influencer-Recommendations**
- **Impact on Brand Perception**

4. Data Analysis and Results

4.1 Descriptive Statistics: The descriptive statistics reveal generally positive perceptions across all measured variables. Influencer credibility recorded a mean score of 4.2 out of 5, indicating a high level of perceived credibility among respondents. Similarly, the authenticity of content received a mean score of 4.1, also reflecting a high perception of authenticity in influencer posts. Trust in recommendations achieved the highest mean score of 4.3, which can be interpreted as very high, suggesting that audiences place considerable trust in influencers' endorsements. The impact on brand perception obtained a mean score of 4.0, showing a strong positive influence of influencer marketing on how consumers perceive brands. Lastly, purchase intention post exposure recorded a mean score of 3.9, indicating a moderate to high likelihood of consumers intending to purchase after exposure to influencer content. Overall, the results suggest that influencer credibility and trust play significant roles in shaping brand perception and purchase behavior.

Interpretation: Respondents rated influencer credibility and authenticity as highly influential factors shaping brand perception. The relatively high mean scores suggest strong positive attitudes toward influencer-endorsed brands.

4.2 Correlation Analysis: The correlation analysis revealed strong and statistically significant relationships among the key study variables. A **high positive correlation** was found between **influencer credibility and brand perception** ($r = \mathbf{0.78}$, $p < 0.05$), indicating that greater perceived credibility of influencers is strongly associated with improved brand perception among consumers. Similarly, **authenticity and consumer trust** showed an even stronger positive relationship ($r = \mathbf{0.81}$, $p < 0.05$), suggesting that authentic influencer content significantly enhances consumer trust. Furthermore, a **strong positive correlation** was observed between **consumer trust and purchase intention** ($r = \mathbf{0.74}$, $p < 0.05$), implying that higher trust in influencers' recommendations leads to greater intention to purchase the promoted products. Overall, the results confirm that credibility, authenticity, and trust are closely interconnected factors driving positive consumer responses in influencer marketing.

Findings: There exists a **strong positive correlation** between influencer credibility and favorable brand perception ($r = 0.78$). Authentic content significantly increases consumer trust, which in turn predicts purchase intentions.

4.3 Key Observations

- **Influencer authenticity** was rated more impactful than follower count. Respondents valued honesty and personal experience over reach.
- **YouTube and Instagram** were cited as the most trusted platforms for product endorsements (72% combined preference).
- **Micro-influencers** (followers <100K) were perceived

as more relatable and credible compared to macro-influencers.

- **Peer-like tone and transparency** increased recall and emotional resonance with brands.

5. Discussion: The findings reinforce the premise that **social media influencers function as modern opinion leaders** whose credibility directly enhances brand perception. The **Two-Step Flow Theory** remains valid in digital contexts, though mediated through user-generated content.

High correlation between **authenticity and trust** (r = 0.81) supports **Marwick's (2013)** assertion that digital audiences reward transparency. Emotional storytelling, rather than overt promotion, is central to effective influencer communication (Escalas 2004).

Interestingly, while traditional advertising faced audience skepticism, influencer content benefited from perceived peer relatability. This supports **Nielsen's (2014)** report that 92% of consumers trust peer recommendations.

However, **ethical concerns** arise from undisclosed paid partnerships (Campbell and Grimm 2006). To sustain long-term impact, influencers must disclose collaborations clearly, maintaining alignment between personal integrity and brand messaging.

6. Managerial Implications

- **Strategic Alignment:** Brands must select influencers whose values and tone align with brand identity to maintain message authenticity.
- **Transparency and Ethics:** Mandatory disclosure of sponsored content can safeguard consumer trust while ensuring compliance with emerging digital advertising guidelines.
- **Micro-Influencer Utilization:** Engaging smaller but more authentic creators may yield better engagement and long-term loyalty than celebrity tie-ins.
- **Cross-Platform Consistency:** Integrated campaigns across Instagram, YouTube, and blogs enhance brand storytelling and recall.
- **Long-Term Partnerships:** Sustainable influencer relationships, rather than one-time endorsements, strengthen consumer-brand emotional bonds.

7. Conclusion: The 2015 study confirms that **social media influencers substantially impact brand perception** by merging authenticity with emotional storytelling. Their perceived credibility, relatability, and expertise generate consumer trust, which translates into positive brand associations and purchase intentions.

Influencers humanize brands in ways traditional advertising cannot, creating a participatory form of communication based on dialogue rather than dissemination. Yet, maintaining transparency remains critical for ethical marketing practice.

For marketers in 2015 and beyond, influencer marketing represents not merely a promotional tool but a fundamental shift in consumer-brand dynamics—where authenticity, narrative, and emotional resonance define success.

References :-

1. Abidin, Crystal. *Communicative Intimacies: Influencers and Perceived Interconnectedness.* University of Western Australia, 2014.
2. Campbell, Colin, and Pamela Grimm. "The Challenges of Marketing Ethics in Digital Environments." *Journal of Business Ethics*, vol. 65, no. 2, 2006, pp. 201–212.
3. Cheung, Christy, and Dimple Thadani. "The Impact of Electronic Word-of-Mouth Communication: A Literature Analysis and Integrative Model." *Decision Support Systems*, vol. 54, no. 1, 2012, pp. 461–470.
4. Chu, Shu-Chuan, and Shintaro Kamal. "The Role of Social Media in Brand Communication." *Journal of Interactive Advertising*, vol. 8, no. 2, 2008, pp. 1–10.
5. De Veirman, Marijke, Liselot Cauberghe, and VerolineHudders. "Marketing through Instagram Influencers: Impact of Number of Followers and Product Divergence on Brand Attitude." *International Journal of Advertising*, vol. 34, no. 5, 2015, pp. 798–813.
6. Erdogan, B. Zafer. "Celebrity Endorsement: A Literature Review." *Journal of Marketing Management*, vol. 15, no. 4, 1999, pp. 291–314.
7. Escalas, Jennifer Edson. "Narrative Processing: Building Consumer Connections to Brands." *Journal of Consumer Psychology*, vol. 14, no. 1–2, 2004, pp. 168–180.
8. Freberg, Karen, Kristin Graham, Karen McGaughey, and Laura Freberg. "Who Are the Social Media Influencers? A Study of Public Perceptions of Personality." *Public Relations Review*, vol. 37, no. 1, 2011, pp. 90–92.
9. Horton, Donald, and Richard Wohl. "Mass Communication and Para-Social Interaction." *Psychiatry*, vol. 19, no. 3, 1956, pp. 215–229.
10. Hovland, Carl I., and Walter Weiss. "The Influence of Source Credibility on Communication Effectiveness." *Public Opinion Quarterly*, vol. 15, no. 4, 1951, pp. 635–650.
11. Katz, Elihu, and Paul Lazarsfeld. *Personal Influence: The Part Played by People in the Flow of Mass Communications.* Free Press, 1955.
12. Keller, Kevin Lane. "Conceptualizing, Measuring, and Managing Customer-Based Brand Equity." *Journal of Marketing*, vol. 57, no. 1, 1993, pp. 1–22.
13. Mangold, W. Glynn, and David J. Faulds. "Social Media: The New Hybrid Element of the Promotion Mix." *Business Horizons*, vol. 52, no. 4, 2009, pp. 357–365.
14. Marwick, Alice E. *Status Update: Celebrity, Publicity, and Branding in the Social Media Age.* Yale University Press, 2013.
15. Nielsen. *Global Trust in Advertising Report.* The Nielsen Company, 2014.
16. Uzunoðlu, Ebru, and Selda Kip. "Brand Communication through Digital Influencers: A Study of Blogger Brand Alliances." *Journal of Marketing Communications*, vol. 20, no. 2, 2014, pp. 1–17.

An Analysis Of The Success Of Magadhan Imperialism (Upto The Reign Of Ashoka)

Dr. Firoz Mohammed Sheikh*

Abstract - Magadha can be identified with the modern districts of Patna, Gaya, Nalanda and parts of Shahabad in the present day state of Bihar. It was the first to make a successful bid for supremacy and establish its suzerainty. The Magadhan kingdom began to grow during the sixth century B.C. itself. This process accelerated considerably under the Nandas and the Mauryas. Geographically, Magadha's location is such that it has in its vicinity large tracts of alluvial soil. Recent researches have suggested that accessibility to the iron mining areas in particular enabled Magadha to not only produce good weapons of warfare but also in other ways. It facilitated expansion of agrarian economy and thereby, the generation of substantial surplus, extracted by state in the form of taxes. This in turn enabled Magadha to expand and develop its territorial base. In this research paper an attempt has been made to analyse the causes responsible for the rise of Magadha from among the sixteen mahajanapadas and ten republican states of sixth century B.C.
Keywords - Sixteen Mahajanapadas, Bureaucracy, Military organization, Unorthodox, Brahmanical.

Introduction - The age of the Buddha (6th century B.C) is noted for the formation of a large number of terrestrial states mostly located in northern India. Anguttara Nikaya informs about sixteen Mahajanapadas. The existence of so many states in the middle Gangetic zone and its periphery is supported by the finds of Northern Black Polished Ware, punch mark coins and craft activities. The great Magadha empire which the Nanda's had built survived them. The rise of Magadha to the zenith of political greatness may be attributed to many factors. Three important elements are mentioned as forming state—a taxation system, a professional army and a cadre of officials. Some scholars add judicial organ to the list. The ancient thinkers regarded the territory and fortified capital as important elements. Territory assumed great importance when people discovered its potentialities for regular food production and used it for permanent habitation.

The geographical position was indeed an important factor which contributed to its rise. Magadha lay at the centre of middle Gangetic plain. The alluvium, once cleared of the jungles, turned out to be very fertile. The heavy rainfall made the area productive even without irrigation. This naturally enabled the peasants to produce enormous surplus which could be mopped up by the rulers in the form of taxes. The kings of Magadha also benefited from the rise of towns and the use of coins. On account of trade and commerce in the north east India, the rulers could levy tolls on use of commodities and accumulate wealth. The enormous wealth enabled the rulers to maintain a vast army. The mighty Ganges with its feeders, the Son, the Gandak and the Gogra served as an admirable means of defence and communication both with the upper India and the sea. Rajagriha, the old capital surrounded by a group of five hills and Pataliputra at the junction of Ganges and the Son, were well protected by nature. The richest iron deposits were situated not far away from Rajagriha. The ready availability of the rich iron ores in the neighbourhood enabled the Magadhan kings to equip themselves with effective weapons which were not easily available to their rivals. The geographical situation of Magadha enabled it to effectively command the Uttarapatha which lay on the north of river Ganges, along the foot hills of the Himalayas. The river also came to be used as one of the main arteries connecting Magadha with different regions and making heavy transport along river possible.

Another important factor was the financial stability enjoyed by Magadha. The success of any state depends on its financial strength. Of these the revenue system is the most critical. Without a regular supply of resources in cash or kind it is not possible to maintain a central establishment comprising the King, or the ruling aristocracy, a professional army, the executive officers, the judicial officers. Hence it is said that the origin and growth of the system of taxation determined the rise and development of the state. The Nandas augmented the state's finances by introducing methodical collection of taxes by regularly appointed

*Lecturer (History) Hadarani Govt. College, Salumber, Dist. Udaipur (Raj.) INDIA

officials. The wealth of the Nandas became proverbial. The Greek writers and Mamulanar, the Tamil Sangam poet, allude to it. The Nandas built canals and carried out irrigation projects to augment their land revenue. It was under them that the possibility of an imperial structure based on an essentially agrarian economy began to germinate in Indian mind. The Mauryas took every conceivable measure to augment land revenues. New settlements were found to rehabilitate the decaying ones by drafting surplus population from over populated regions. The Sudras were for the first time helped by the state to settle down as farmers in these settlements. Over 150,000 thousand people from Kalinga were forced to settle in the new settlement. Often the cultivators were forced to raise two crops. Every possible measure was taken to prevent any possible decrease in the supply of labour. The Mauryas fostered trade by developing the means of communication and by making travel comfortable. The state exercised rigid control over trade and industry, which yielded huge profit, through a number of superintendents.

The success of Magadha was also due to its vast bureaucracy. The Mauryas had a large body of superintendents to attend the details of administration. The administrative system was backed by an elaborate system of espionage. There was a department of information and criminal intelligence manned by secret agents called the Gudha-purushas organized into special service under its own minister. The service was organized into two branches called the Samastha (stationery) and Sanchara (touring).

Magadha enjoyed a special advantage in military organization. The Mauryas in India maintained an army bigger than any other contemporary dynasty. According to Plutarch and Justin, Chandragupta Maurya overran the whole of India with 600,000 men, which is thrice the number of the infantry of the Nandas. Megasthenes puts the total number of the Mauryan army at 400,000. He also furnishes valuable information regarding the administration of the army. He says that the administration of the army was in the hands of a body consisting of thirty members who were divided in six boards of five members each. Each committee was in charge of one of the following departments—navy, transport and commissariat, infantry, cavalry, chariots and elephant corps. The tremendous increase not only in numbers but also efficiency together with coercive power of the State seems to have enhanced the prestige and glamour of the Mauryan kings. Kautilya maintained that the army existed because of the treasure, and that the territory of the state was won by the treasury and the army. It was Magadha which first used elephants on large scale in its war against its neighbors. Eastern part of the country supplied Elephants to the Magadhan rulers. The elephants were useful in storming fortresses and in marching over marshy and other areas which lacked roads and other means of communication.

The widespread use of Iron created conditions for the formation of large territorial states. Agriculture based on the use of iron ploughshare enabled the people to set up their farms and households and tied them down firmly to the soil. The extra product obtained as a result of using superior iron ploughshare was collected by rulers to meet their military and administrative requirements. The surplus could also be made available to the towns. The use of iron weapons helped the rulers to expand at the cost of neighbours. In the middle Gangetic plain iron was available in large quantities. The smiths were capable of putting more carbon in them and thus making tools lasting and more serviceable. The people developed the art of transplanting paddy. As a result of improved Iron tools and new methods of cultivation, production may have doubled. The farmers were, therefore, in a position to support their households and able to pay taxes.

Another factor responsible for the success of Magadhan imperialism was the unorthodox character of Magadha society. Magadha was inhabited by the Kiratas and Magadha who were held in low esteem by the orthodox Brahmins. But it underwent a happy radical admixture on account of the advent of the Vedic people. As it was recently Aryanised, it showed more enthusiasm than the kingdoms which had been brought under the Vedic influence earlier. It is quite possible that the Vedic polity by now had spent its force and it was now the turn of the sturdy people of the east, who were not much affected by the Aryan invasion, to play their part. It is rightly said that, 'the laxity of social restrictions imposed by the orthodox Brahmanical culture and the universal aspect of Buddhism and Jainism which found a congenial home in Magadha, must have considerably widened the political outlook of the region and contributed to make it the nucleus of a mighty empire'.

As a family, the Mauryas tended to favour the heterodox sects, although they never attacked Brahmanism. The impact of these sects and dissidents created conflicts in the social fabric and thereby tended to weaken the political dominance of Magadha. Asoka's Dharma was meant to ease social tensions and to bring all people together and give them a feeling of unity. Asoka's twelfth Rock Edict is a passionate appeal not only for toleration of all religious sects but also for developing a spirit of reverence for them. He himself set an example by honouring all sects and making gifts for them. He dedicated the Barabar Hill caves to the Ajivikas.

Conclusion - Thus, of all the states that flourished in the sixth century B.C. the kingdom of Magadha was the first to rise to the position of an imperial power. Magadha had certain natural advantages over the contemporaneous kingdoms. The situation of Asokan inscriptions prove that a major part of the Indian sub continent had come under the Magadhan suzerainty. The early Saisunaga kings Bimbisara, Ajatsatru and Nandas realized the potential of Magadha and established a strong Magadhan state which was turned

into a mighty empire by the efforts of Mauryan kings Chandragupta Maurya and Asoka.

References :-

1. Altekar, A.S., State and Government in Ancient India, New Delhi.
2. Basham, A.L., A Cultural History of India, New Delhi.
3. Dikshitar,V.R.R, The Mauryan Polity, New Delhi.
4. Jha, D.N, Ancient India, New Delhi.
5. Mookerji, R.K, Local Government in Ancient India, Oxford, 1919.
6. Panikhar, K.M, Origin and Evolution of Kingship in India, Baroda, 1938.
7. Sharnma, R.S, Perspectives in Social and Economic History of Early India, New Delhi.
8. Tripathi, R.S, History Of Ancient India, New Delhi.

****

नि: संतानता एवं सामाजिक व्यवहार

डॉ. विनीता लवानिया*

प्रस्तावना – विवाह संस्था का सामाजिक संरचना में एक विशिष्ट स्थान है। हिंदुओं में इसे धार्मिक संस्कारों के रूप में स्वीकार किया गया है। इसके प्रमुख उद्देश्यों में से एक प्रजा प्राप्ति या पुत्र प्राप्ति माना गया है ।पुत्र जन्म परिवार की मुख्य इच्छाओं में से है जिसकी पुष्टि मोक्ष प्राप्ति के साधन के रूप में की जाती है। निरंजना (2000) के अनुसार पुत्र ही अपने पिता को ऋणों मुक्त करता है साथ ही उनके अंतिम संस्कार और मृत्यु के बाद की क्रिया संपन्न कर उन्हें मुक्ति प्राप्त करने में सहायता करता है। अन्य धर्मों में भी संतान उत्पत्ति अनेक पारिवारिक एवं धार्मिक कारणों से इच्छित है। यह समाज में ऐसी स्थिति प्रदान करती है जो व्यक्ति तथा परिवार की वंश श्रृंखला की निरंतरता को सुनिश्चित करती है। प्राय: विवाह के कुछ समय बाद ही संतान उत्पत्ति ना होने पर दंपति चिंतित होने लगते हैं ।शर्मा (1990) के अनुसार गर्भ निरोधक साधनों का प्रयोग न करने पर 40% स्त्रियां 6 माह के अंदर तथा 80% स्त्रियां 1 वर्ष के अंदर गर्भधारण कर लेती हैं जो प्राकृतिक रूप से गर्भधारण नहीं करती वे संभवतया बंध्यता या अनुवरकता के कारण अक्षम रहती होंगी।

अर्थ एवं विश्लेषण नि:संतानता को परिभाषित करते हुए अनेक शब्दों का प्रयोग किया जाता रहा है, बंध्यता ,अनुर्वरकता या संतान हीनता । यह सभी स्थितियां किसी दंपति की संतान उत्पन्न करने की अक्षमता को इंगित करती हैं। चर्चिल मेडिकल डिक्शनरी 1981 के अनुसार वंध्यता संतान उत्पन्न करने की ऐसी अक्षमता है जिसका सुधार या उपचार नहीं किया जा सकता है। जीजीभोय(1998)ने बंध्यता को परिभाषित करते हुए कहा है कि दंपति द्वारा संतान की इच्छा रखने पर संतान उत्पन्न कर पाने की अक्षमता बंध्यताहै।

अनुर्वरकता को यापि सामान्य अर्थों में बंध्यता का पर्यायवाची माना जाता है लेकिन वैज्ञानिक दृष्टि से अनुर्वरकता सजीव संतान उत्पत्ति की असफलता है। बंध्यता एक स्त्री द्वारा गर्भधारण करने में अक्षमता की स्थिति है।विश्व स्वास्थ्य संगठन ने किसी भी गर्भनिरोधक साधन के अभाव में विवाह के दो वर्ष बाद भी गर्भधारण करने में असफलता को भी अनुर्वरकता माना है।

बंध्यता गर्भधारण करने तथा संतान उत्पत्ति की ऐसी अक्षमता है जिसमें सभी आवश्यक चिकित्सा या जांच यह प्रमाणित कर दें कि गर्भधारण संभव ही नहीं है। नि:संतानता बंध्यता तथा अनुवरकता का ही परिणाम है।

भारतीय समाज के संदर्भ में यह शब्द और भी भिन्न परिभाषाएं तथा परिणाम देता है अनुर्वरकता वह स्थिति है जब एक स्त्री कम से कम गर्भधारण कर सकती है वह बांझ,सूखी कोख,जली कोख नहीं कहलाती । उसकी स्थिति और प्रस्थिति परिवार, नातेदारी ,समाज की दृष्टि से हीन नहीं होती किंतु वंध्याता बांझपन है, एक अभिशाप है नारी जीवन पर । उस नारी के लिए ,जो अपने परिवार और वंश को निरंतरता नहीं दे सकती वह न केवल पति की नजरों में बल्कि परिवार और समाज में एक अवांछनीय सदस्य बन जातीहै।

निरूसंतानता के लिए बहुत सी परिस्थितियों उत्तरदायी होती हैं जो पारंपरिक विश्वासों के विपरीत हैं कि नि: संतानता मात्र स्त्री की अक्षमता है। वैज्ञानिक आधारों पर यह सिद्ध हुआ है कि पुरुषों में भी बंध्यता पाई जाती है। संतानहीनता का कारण न केवल शारीरिक बल्कि मनोवैज्ञानिक, मानसिक और यौन संबंधी भी पाया गया है। जब बिना किसी शारीरिक दोष के संतान उत्पत्ति में कठिनाई पाई गयी तब परिस्थिति जन्य कारकों की ओर भी ध्यान आकर्षित हुआ इनमें एकांत का अभाव, मनोवैज्ञानिक मतभेद अनुपयुक्त समय पर अनुपयुक्त तरीके से स्थापित संबंध आदि प्रमुख कारण पाए गए।

सामाजिक एवं व्यवसायिक कारक– गत वर्षों में चिकित्सा की उपयोगिता के लिए बंध्यता और अनुवरकता के जैविकीय तथा मनोवैज्ञानिक पक्षों पर काफी काम हुआ किंतु सामाजिक और सांस्कृतिक पक्ष पर प्रभाव जानने का प्रयास कम किया गया। प्रस्तुत शोध पत्र में संतानहीन दंपतियों का अध्ययन कर बंध्यता तथा अनुर्वरकता के सामाजिक परिणाम के विभिन्न आयामों को स्पष्ट किया गया है। संतानहीनता न केवल दंपति अपितु उसके परिवार, आसपास के वातावरण पर भी व्यापक प्रभाव छोड़ती है। यह अध्ययन और भी महत्वपूर्ण हो जाता है जब आधुनिकता और चिकित्सा सुविधाओं का व्यापक प्रसार होने के बाद भी, संतानहीनता आज भी दंपति की सामाजिक स्थिति को प्रभावित करती है। प्रस्तुत शोध पत्र में 40 संतानहीन दंपतियों का निदर्शन लेकर गुणात्मक तथा मात्रात्मक तथ्य एकत्रित किए गए हैं। बंध्यता तथा अनुर्वरकता वाले संतानहीन दंपतियों के भिन्न भिन्न सामाजिक परिणामों का अध्ययन करने हेतु दो बराबर भागों में बांटा गया ।इसके अतिरिक्त कोटा तथा क्लस्टर निदर्शन पद्धति का प्रयोग करते हुए अनुसूचित जाति, जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग तथा सामान्य वर्ग में से बराबर के अनुपात में दंपतियों का चयन किया गया।

वैवाहिक जीवन एवं पारिवारिक परिस्थितियों – हैरिसन (1964)के अनुसार नव विवाहित दंपति विवाह के बाद कुछ समय तक संतान उत्पत्ति रोकने के लिए गर्भनिरोधक साधनों का प्रयोग करते हैं। समय आने पर

* व्याख्याता (समाजशास्त्र) राजकीय कन्या महाविद्यालय, नाथद्वारा (राज.) भारत

गर्भधारण करने में होने वाली समस्याओं का ज्ञान होते ही मनोवैज्ञानिक दबाव बढ़ने लगता है।

अध्ययन से ज्ञात हुआ कि निवास स्थान तथा मकान की प्रकृति का दंपति के जीवन पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। संतानहीनता की स्थिति में ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले दंपत्ति अपने परिवार में चर्चा करने से भी सकुचाते हैं। विशेष रूप से पत्नी अपने परिवार में इस विषय पर बात नहीं करती। लगभग आधे दंपत्ति अपने अभिन्न मित्रों और रिश्तेदारों के साथ चिंता को बताते हैं। परिवार के मुख्य सदस्यों से छुपाते हैं।

दंपति के व्यावसायिक स्तर को अध्ययन का आधार बनाने पर ज्ञात हुआ कि कृषक दंपतियों में जल्दी संतान उत्पन्न करने की इच्छा होती है। वह प्राय: गर्भ निरोधक साधन नहीं अपनाते किंतु जहां पति और पत्नी दोनों नौकरी करते हैं वह अपना परिवार नियोजित करने की दिशा में गर्भ निरोधक साधनों का प्रयोग करते हैं। विवाह की अवधि और विवाह की प्रकृति का भी पारिवारिक जीवन पर प्रभाव देखा गया।

सामाजिक अंत: क्रिया एवं व्यवहार – भारतीय समाज के संदर्भ में मास्टर्स एवं जॉनसन (1970)ने कहा है कि संतानहीन दंपति की सामाजिक और सांस्कृतिक दशा में भिन्नता पाई जाती है। हर समाज दंपति से कुछ अपेक्षाएं करता है जिसे पूरा न कर पाने की स्थिति में वह दंपति मानसिक रूप से असंतुलित हो जाता है और अपनी पूर्ण क्षमता से कार्य नहीं कर पाता। अर्थ संस्था (2001)की रिपोर्ट के अनुसार दंपत्ति के संतानहीन होने के लिए कई कारण जिम्मेदार हैं। गर्भधारण करने में असफलता अथवा गर्भपात तथा जन्म से तुरंत पूर्व मृत्यु इसके प्रमुख कारण है ऐसे दंपतियों की पत्नी विशेषत: विविध उपचारों की और आकर्षित होती हैं।

परम्पगत रूप से परिवारों में संतानहीनता की स्थिति आते ही पत्नी को पहले चिकित्सा की सलाह दी जाती है यहां तक कि बिना पति की प्रारंभिक जांच किये पत्नी की गहन चिकित्सा आरंभ कर दी जाती है। उनके निवास स्थान, जाति, चिकित्सकीय एवं उपचारों पर अधिक मात्रा में प्रभाव डालती है। चिकित्सा के साथ खान-पान-संबंधी आदतों में बदलाव, वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियों का संबंध जाति तथा निवास स्थान से अत्यधिक मात्रा में पाया गया।झाडफूंक, जादू टोना अनुसूचित जाति तथा अन्य पिछड़ा वर्ग में सर्वाधिक प्रचलित पाए गए। परिवार की प्रकृति तथा विवाह की प्रकृति का भी प्रभाव देखा गया। कुछ सामान्य वर्ग के दंपति आधुनिक उपचार तकनीक अपनाने के लिए तैयार पाए गए जैसे टेस्ट ट्यूब बेबी ,आईवीएफ आदि।

तनाव प्रबंधन प्रक्रियाएं देवरा (1991)के द्वारा किए गए अध्ययनों के अनुसार संतानहीन दंपत्ति अपनी समस्या से उत्पन्न तनावों के प्रबंधन हेतु अनेक उपाय करते हैं जो उनके निराशा तथा उनके आक्रामक व्यवहार को कम कर सकते हैं। ऐसे दंपति उन लोगों से दूरी बनाकर रखते हैं जो निरंतर उनकी कमी की तरफ ध्यान दिलाने का प्रयास करते हैं। पति और पत्नी अपनी भावनाओं तथा पीड़ा को आपस में कहकर अभिव्यक्त करना अधिक उचित मानते हैं। देवदार (1995)के अनुसार अधिकांश स्त्रियां अपनी पसंद के कार्य नौकरी तथा अन्य घरेलू कार्यो में स्वयं को व्यस्त कर लेती हैं। संतान गोद लेने की अपेक्षा लंबे समय तक इलाज करने को प्राथमिकता दी जाती है। संतानहीनता से उत्पन्न तनाव से मुक्ति पाने के लिए अधिकांश स्त्रियां घरेलू कार्यों तथा कुछ समाज सेवा में स्वयं को व्यस्त रखना चाहती हैं।19-24 वर्ष आयु समूह वाली स्त्रियां शिक्षा के लिए भी समय बिता रही हैं।विवाह की अवधि तथा दंपति के शैक्षिक और व्यावसायिक स्तर का भी तनाव प्रबंधन की प्रक्रियाओं पर प्रभाव पड़ता है।कुछ दंपति धर्म के कार्यों में सहभागिता बढ़ाकर, अनाथालय या बाल आश्रम में जाकर समय व्यतीत करने पर या नौकरी तथा किसी अन्य व्यवसाय में संलग्न हो जाने पर बल दे रहे हैं। संतान गोद लेने की दृष्टि से एकाकी परिवार का प्रभाव उनके तनाव प्रबंधन पर देखा गया किंतु संयुक्त परिवार की तुलना में एकाकी परिवार में गोद लेने संबंधी विचार अधिक देखे गए।

निष्कर्ष संतानहीनता से संबंधित विभिन्न उत्तरदाताओं द्वारा जिन भावनात्मक संवेगों अथवा अनुभूतियों का उल्लेख किया गया उनमें चिड़चिड़ापन ईर्ष्या क्रोध निराशा और उत्तोजना प्रमुख है। विवाह के बाद कुछ समय तक कई स्त्रियों ने अपने पति को सहयोग करने वाला प्रेम पूर्वक एवं समझदारी से व्यवहार करने वाला पाया किंतु जैसे ही बंध्यता या अनुर्वरकता सिद्ध हुई उनके वैवाहिक संबंधों में तेजी से परिवर्तन आया।सामान्य प्रश्नों से लेकर कटु व्यंग्यबाणों तक का सामना करना पड़ा। न केवल परिवार अपितु पड़ोसी भी पेनी नजर रखने लगे। संतान उत्पत्ति अपने पुरुषत्व एवं स्त्रीत्व को सुनिश्चित करने का प्रभावी तरीका माना जाता है इसलिए अधिकांश दंपति इस सत्य को कठिनाई से स्वीकार कर पाए। लिंग भेद अपने वास्तविक रूप में पाया गया है, जब परिवार के सदस्यों के द्वारा संतानहीनता के लिए प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से स्त्री को दोषी मान लिया गया। बहुत सी निसंतान स्त्रियां डॉक्टरी जांच के बाद उनकी संतानहीनता की स्थिति सुनिश्चित हो जाने के बारे में अपने पति तथा ससुराल वालों से बात करने में कठिनाई अनुभव करती हैं क्योंकि वे इसके गंभीर परिणामों से डरती हैं।

पुरुष भी प्राय पत्नी की बंध्यता या अनुर्वरकता के बारे में जानकर निराशा और क्रोधित होते हैं जबकि पुरुष स्वयं के बंध्यता के बारे में जानकर निराशा और मानसिक संतुलन के शिकार हो जाते हैं।

बहुत से दंपति यह मानते हैं कि चिकित्सा तभी सफल होगी जब किसी के भाग्य में संतान का सुख होगा, ईश्वर ने संतान देना चाहेगा। इसीलिए चिकित्सा के साथ-साथ वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियों का प्रयोग ,जादू टोना, गंडा ताबीज आदि पर भी विश्वास किया जाता है।

संतान प्राप्ति की तीव्र अभिलाषा की पूर्ति हेतु निश्चित समय के लिए अक्षम साथी का प्रतिस्थापन किसी अन्य स्त्री या पुरुष से करने की बात पर लगभग सभी दंपतियों ने इसे पश्चिमी देशों में अपनाने वाली सभ्यता का अंग बताया। इसे भारतीय समाज में पाप तुल्य कहा किंतु अध्ययन के दौरान यह ज्ञात हुआ कि जो दंपति संतान की अत्यधिक तीव्र इच्छा रखते हैं वह उनकी व्यक्तिगत इच्छा या पारिवारिक दबाव के कारण नैतिक अनैतिक सीमाओं से परे कुछ भी करने के लिए तैयार हो सकते हैं जबकि कुछ दंपति निश्चित समय अवधि में संतान उत्पत्ति नहीं कर पाने से जीवन में रुचि समाप्त पा रहे हैं। वेदम्पत्ति जो जीवन के व्यापक अर्थ को उनके सत्य को पहचान कर स्थिति के अनुसार समायोजित हो जाते हैं वह स्वयं को अन्य गतिविधियों में संलग्न कर लेते हैं।

इस प्रकार अनेक सामाजिक संस्थात्मक एवं व्यवहारात्मक कारकों का प्रभाव संतानहीन दंपति के जीवन के विविध पक्षों पर पड़ता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अर्थ (2001) सोशल इन्फ्लुएन्सज एंड हेल्थ सीकिंग बिहेविअर रिप्रोडक्टिव हेल्थ ऑन द ग्राउंड , प्रोजेक्ट रिपोर्ट।
2. चर्चिल (1981) मेडिकलडिक्शनरी न्यूयॉर्क : चर्चिल लिविंग स्टोन।

3. देबरा (1991) कोपिंग स्ट्रेटटीज ऑफ इन्फरटील वोमेन : जर्नल ऑफ गाईनॉकोलोजी एंड निओनेतलनर्सिग।
4. देओदार (1995) इन्फर्तिलिती एंड एडॉप्शन आप्शन , प्रोजेक्ट रिपोर्ट (टी आईएसएस)बॉम्बे।
5. जीजिभोय (1998) इन्फर्तिलिती इन इंडिया –लेवेल्स पैटर्न्स एंड कोंसीकुएन्केस : द जर्नल ऑफ फॅमिली वेलफेयर।
6. हरीसन(1964) अ कपल्स गाइड टू काजेज एंड ट्रीटमेंट ,बोस्टन , रिपोर्ट निफ्लिन कंपनी।
7. निरंजना(2000) स्टेटस ऑफ वीमेन एंड फेमिलीवेलफेयर कनिष्क पब्लिशर्स,नयी दिल्ली।
8. शर्मा , एस.पी. (1990) चाइल्डलेस्सनेस 'बेन और बून' विमेंस एरा, जुलाई।

****

भारतीय कला और संस्कृति के जीवंत ताने-बाने की खोज

डॉ. चेतना टिक्कीवाल*

शोध सारांश – भारत एक ऐसा देश है जिसकी सांस्कृतिक धरोहर विश्व में अद्वितीय है। यहाँ की कला और संस्कृति न केवल इसकी प्राचीन सभ्यता की साक्षी है, बल्कि यह विविधता में एकता का प्रतीक भी है। भारतीय कला का इतिहास वैदिक युग से लेकर आधुनिक काल तक निरंतर विकासशील रहा है, जिसमें मूर्तिकला, चित्रकला, स्थापत्य कला, संगीत, नृत्य, नाटक, लोककला, हस्तशिल्प, वस्त्रकला और साहित्य जैसी अनेक विधाएँ सम्मिलित हैं। इन कलाओं में न केवल सौंदर्य और सृजनात्मकता का प्रदर्शन होता है, बल्कि इनमें समाज, धर्म, दर्शन और मानव मूल्यों की गहन अभिव्यक्ति भी निहित रहती है। कला और संस्कृति भारतीय जीवन का अभिन्न अंग हैं। मंदिरों की स्थापत्य कला, अजंता-एलोरा की गुफाएँ, खजुराहो की मूर्तियाँ, बनारस और मदुरै के मंदिर, ताजमहल जैसे स्थापत्य चमत्कार भारतीय कला की उत्कृष्टता के उदाहरण हैं। वहीं भरतनाट्यम, कथक, ओडिसी, कथकली, मणिपुरी जैसे नृत्य रूप तथा हिंदुस्तानी और कर्नाटक संगीत की परंपराएँ भारतीय संस्कृति की गहराई और विविधता को दर्शाती हैं। लोककला और लोकसंगीत भी ग्रामीण जीवन की सादगी और लोकविश्वासों को उजागर करते हैं। भारतीय कला और संस्कृति का प्रभाव केवल धार्मिक या आध्यात्मिक क्षेत्रों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक जीवन में भी परिलक्षित होता है। स्वतंत्रता आंदोलन में भी भारतीय सांस्कृतिक चेतना ने एकजुटता और आत्मगौरव की भावना को प्रोत्साहित किया। आज के वैश्वीकरण के युग में, जब विश्व संस्कृति एकरूपता की ओर बढ़ रही है, तब भारतीय कला और संस्कृति अपनी मौलिकता, विविधता और आध्यात्मिकता के कारण विश्वभर में विशिष्ट स्थान रखती है।

शब्द कुंजी – भारतीय कला, भारतीय संस्कृति, स्थापत्य कला, मूर्तिकला, चित्रकला, नृत्य, संगीत, लोककला, परंपरा, विविधता, एकता, आध्यात्मिकता, साहित्य, भक्ति आंदोलन, लोकसंगीत, हस्तशिल्प, सहअस्तित्व, सांस्कृतिक विरासत, भारतीयता, सृजनशीलता।

प्रस्तावना – भारत विश्व की सबसे प्राचीन और समृद्ध सभ्यताओं में से एक है। यहाँ की कला और संस्कृति हजारों वर्षों से विकसित होती आई है और आज भी अपनी जीवंतता और प्रासंगिकता के साथ विश्व को प्रभावित कर रही है। भारतीय कला और संस्कृति का स्वरूप केवल मनोरंजन या सौंदर्य के लिए नहीं, बल्कि जीवन के दर्शन, मानवीय मूल्यों, आस्था और सामूहिकता का प्रतीक है। यह भारत की आत्मा है, जो हर काल में नई ऊर्जा के साथ स्वयं को पुनर्परिभाषित करती रही है।

भारतीय कला और संस्कृति का ऐतिहासिक विकास – भारतीय कला का आरंभ सिंधु घाटी सभ्यता से माना जा सकता है, जहाँ की मूर्तियाँ, मुहरें और स्थापत्य कला मानव सृजनशीलता के अद्‌भुत उदाहरण हैं। वैदिक युग में संगीत, नृत्य और साहित्य ने आध्यात्मिक साधना का रूप लिया। मौर्य, गुप्त, चोल, पल्लव और मुगल काल में कला और संस्कृति का स्वर्ण युग देखने को मिला। इस काल में मंदिरों, स्तूपों, चित्रकला, नृत्य, संगीत, वास्तुकला और साहित्य ने अभूतपूर्व ऊँचाइयाँ प्राप्त कीं।

मौर्य काल में अशोक द्वारा निर्मित स्तंभ और शिलालेख भारतीय शिल्पकला के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। गुप्त काल को 'भारतीय कला का स्वर्ण युग' कहा जाता है, क्योंकि इस युग में चित्रकला, मूर्तिकला और साहित्य का अद्‌भुत समन्वय हुआ। अजंता और एलोरा की गुफाएँ, नालंदा और तक्षशिला के विश्वविद्यालय, और खजुराहो के मंदिर इस सांस्कृतिक उत्कर्ष के प्रतीक हैं।

भारतीय स्थापत्य कला – भारतीय स्थापत्य कला केवल पत्थर और ईंटों का संयोजन नहीं है, बल्कि यह धर्म, दर्शन और जीवनशैली की अभिव्यक्ति है। हिंदू मंदिरों की शिखर शैली, बौद्ध स्तूपों की गोलाकार रचना, जैन मंदिरों की नक्काशीदार सुंदरता, तथा इस्लामी स्थापत्य में मेहराबों और गुम्बदों का प्रयोग भारत की सांस्कृतिक एकता को दर्शाता है। ताजमहल, कुतुब मीनार, अजंता-एलोरा की गुफाएँ, कोणार्क का सूर्य मंदिर, और मीनाक्षी मंदिर जैसे स्मारक भारतीय स्थापत्य कला की विविधता और परिष्कार के प्रतीक हैं।

चित्रकला और मूर्तिकला – भारतीय चित्रकला प्राचीन काल से ही धार्मिक और सामाजिक जीवन का प्रतिबिंब रही है। अजंता की भित्तिचित्रों में बौद्ध जीवन दर्शन झलकता है, जबकि मुगल चित्रकला में दरबारी जीवन और प्रकृति का सौंदर्य दिखता है। राजस्थानी, पहाड़ी और मधुबनी चित्रकला लोकजीवन, लोककथाओं और धार्मिक आस्थाओं को प्रकट करती है। मूर्तिकला में भी भारत ने अद्‌भुत ऊँचाइयाँ प्राप्त की हैं। खजुराहो, एलोरा, ममल्लपुरम और कोणार्क की मूर्तियाँ केवल पत्थर नहीं हैं, बल्कि वे जीवन की भावनाओं, नृत्य की गतियों और अध्यात्म की अनुभूतियों को मूर्त रूप देती हैं।

भारतीय संगीत और नृत्य– भारतीय संगीत दो प्रमुख धाराओं में विभाजित है- हिंदुस्तानी और कर्नाटक संगीत। दोनों ही परंपराएँ राग, ताल और भाव पर आधारित हैं, जिनमें आत्मा की अभिव्यक्ति होती है। सितार, तबला,

*व्याख्याता (चित्रकला) सेठ मथुरा दास बिनानी राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नाथद्वारा (राज.) भारत

सरोद, वीणा और मृदंगम जैसे वाद्य यंत्र संगीत की विविधता को दर्शाते हैं। भारतीय शास्त्रीय नृत्य जैसे भरतनाट्यम, कथक, ओडिसी, मणिपुरी, कथकली और कुचिपुड़ी न केवल शरीर की लयात्मक गति हैं, बल्कि वे भक्ति, भावना और कथा के माध्यम से ईश्वर से संवाद का माध्यम बनते हैं। लोकनृत्य जैसे गरबा, भांगड़ा, घूमर, कालबेलिया आदि भारत की विविधता और जनजीवन की झलक प्रस्तुत करते हैं।

लोककला और हस्तशिल्प – भारत की लोककला और हस्तशिल्प ग्रामीण जीवन का सजीव चित्रण करते हैं। ये न केवल आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं, बल्कि भारतीय संस्कृति की जड़ों को भी पोषित करते हैं। मधुबनी, वारली, फड़, पटचित्र, गोंड जैसी लोकचित्रकलाएँ तथा बनारसी साड़ी, कांचीपुरम सिल्क, चिकनकारी, पिथौरा, और मिट्टी के बर्तन भारतीय सृजनशीलता के अद्भुत उदाहरण हैं। इन कलाओं में स्थानीय परंपराओं, लोकविश्वासों और धार्मिक उत्सवों का गहरा प्रभाव दिखाई देता है, जो भारत की सांस्कृतिक विविधता को और भी समृद्ध बनाता है।

साहित्य और भाषा की भूमिका – भारतीय संस्कृति में साहित्य का विशेष स्थान है। वेद, उपनिषद, रामायण, महाभारत और पुराण भारतीय जीवन के नैतिक और आध्यात्मिक आदर्शों को प्रस्तुत करते हैं। संस्कृत, पाली, प्राकृत से लेकर हिंदी, तमिल, बंगाली, मराठी, उर्दू जैसी भाषाओं में रचा गया साहित्य भारत की भाषाई समृद्धि को दर्शाता है। भक्ति आंदोलन के कवियों जैसे तुलसीदास, कबीर, मीराबाई, गुरु नानक, सूरदास आदि ने जनभाषा में आध्यात्मिक और सामाजिक संदेश देकर भारतीय संस्कृति में समरसता और एकता की भावना जगाई।

भारतीय संस्कृति की विशिष्टता – भारतीय संस्कृति की सबसे बड़ी विशेषता इसकी सहिष्णुता और समन्वय की क्षमता है। यहाँ हर धर्म, हर भाषा, हर कला रूप को स्वीकार किया गया और उसे सम्मान मिला। यह संस्कृति 'वसुधैव कुटुंबकम्' यानी 'संपूर्ण विश्व एक परिवार है' की भावना पर आधारित है। भारत की विविधता में एकता ही इसकी सबसे बड़ी शक्ति है। उत्तार से दक्षिण, पूर्व से पश्चिम तक भले ही भौगोलिक और भाषाई भिन्नताएँ हों, लेकिन भावनात्मक और सांस्कृतिक रूप से पूरा देश एक सूत्र में बंधा हुआ है।

आधुनिक युग में भारतीय कला और संस्कृति – वैश्वीकरण और आधुनिकता के इस युग में भारतीय कला और संस्कृति ने नए रूपों में स्वयं को ढाल लिया है। सिनेमा, डिजाइन, फैशन, डिजिटल आर्ट और आधुनिक वास्तुकला में भारतीय तत्वों का समावेश देखा जा सकता है। भारतीय संगीत और नृत्य अब विश्व मंचों पर प्रस्तुत किए जा रहे हैं, और योग, आयुर्वेद, ध्यान जैसी परंपराएँ वैश्विक जीवनशैली का हिस्सा बन चुकी हैं। फिर भी, परंपरागत कला रूपों की रक्षा और संवर्धन आज की आवश्यकता है। नई पीढ़ी को अपनी जड़ों से जोड़ने के लिए शिक्षा और सांस्कृतिक जागरूकता अत्यंत आवश्यक है।

भारतीय संस्कृति का वैश्विक प्रभाव – भारतीय संस्कृति ने सदैव विश्व को शांति, सहअस्तित्व और आध्यात्मिकता का संदेश दिया है। बौद्ध धर्म, योग, ध्यान और भारतीय दर्शन ने पश्चिमी सभ्यता को भी प्रभावित किया है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारतीय संगीत, नृत्य, वस्त्रकला और भोजन संस्कृति की लोकप्रियता भारतीय सॉफ्ट पावर का प्रतीक है। भारतीय कला और संस्कृति का जीवंत ताना-बाना न केवल अतीत की गौरवगाथा है, बल्कि वर्तमान और भविष्य के लिए भी मार्गदर्शक है। इसमें सृजनशीलता, विविधता, सहिष्णुता और आध्यात्मिकता का अद्भुत संगम है। यह हमें यह सिखाती है कि मनुष्य तभी पूर्ण होता है जब वह अपनी संस्कृति से जुड़ा रहे। आज आवश्यकता है कि हम अपनी परंपराओं को आधुनिक संदर्भों में पुनर्परिभाषित करें और उन्हें नई पीढ़ियों तक पहुँचाएँ, ताकि भारतीय कला और संस्कृति की यह अनमोल धरोहर सदैव जीवंत बनी रहे।

निष्कर्ष – भारतीय कला और संस्कृति का ताना-बाना अत्यंत समृद्ध, विस्तृत और बहुआयामी है, जो हजारों वर्षों की सभ्यता, परंपरा और आध्यात्मिक अनुभवों का जीवंत दस्तावेज है। यह केवल अतीत की धरोहर नहीं है, बल्कि यह वर्तमान जीवन की आत्मा और भविष्य की दिशा भी निर्धारित करती है। भारतीय संस्कृति में जो विविधता, गहराई और समरसता है, वह इसे विश्व की अन्य सभ्यताओं से विशिष्ट बनाती है। यहाँ की कला और संस्कृति न केवल सौंदर्यबोध का प्रतीक है, बल्कि यह जीवन के दर्शन, नैतिक मूल्यों, सामाजिक एकता और मानवीय संवेदनाओं की भी अभिव्यक्ति है। भारतीय कला की सबसे बड़ी विशेषता इसकी निरंतरता और अनुकूलनशीलता है। समय के साथ यह बदलती रही है, परंतु इसके मूल मूल्य सत्य, सौंदर्य और सद्भाव अपरिवर्तित रहे हैं। चाहे वह सिंधु घाटी की मूर्तियाँ हों, अजंता की भित्तिचित्र हों, खजुराहो की मूर्तिकला हो या आधुनिक चित्रकला हर युग में भारतीय कलाकारों ने जीवन के प्रति गहन दृष्टि और आध्यात्मिक संवेदना का परिचय दिया है। भारतीय संगीत, नृत्य और नाटक की परंपराएँ भी केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि साधना और आत्मानुभूति के साधन हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शर्मा, रामआसरे. भारतीय संस्कृति का इतिहास. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन,2012
2. पांडेय, रमेशचंद्र. भारतीय कला और स्थापत्य परंपरा. वाराणसी: ज्ञानमंडल लिमिटेड,2010
3. अग्रवाल, वासुदेवशरण. भारतीय कला के रूप. दिल्ली: राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, 2008
4. ठाकुर, ओमप्रकाश. भारतीय संस्कृति का विकास. जयपुर: राजस्थान हिंदी ग्रंथअकादमी, 2015
5. सिंह, सुभाष. भारतीय नृत्य और संगीत परंपरा. प्रयागराज: हिंदी साहित्य परिषद,2013

****

आधुनिक सन्दर्भ में चाणक्य नीति की प्रासंगिकता

डॉ. विद्या आचार्य *

प्रस्तावना – चाणक्य नीति वर्तमान काल में भी उपयोगी है। सम्प्रति विश्व के सभी राष्ट्रों में प्रतिस्पर्धा हो रही है कि विकास की दौड़ में कौन सबसे आगे निकले। प्रतिस्पर्धा होना बुरी बात नहीं है किन्तु जब यह मात्सर्य में परिणत हो जाती है तब विकट स्थिति होती है। आज एक देश की सीमा से लगे पड़ोसी देश उसके प्रबल शत्रु बन रहे हैं। ऐसे समय में चाणक्य नीति के आधार पर पर्याप्त विचार–विमर्श करके मनुष्य को व्यवहार करना चाहिए। आचार्य चाणक्य ने व्यक्तियों के दैनिक व्यवहार, परिवार, धन, मित्र, स्त्री, शासक के कर्तव्य, प्रशासन–व्यवस्था इत्यादि से सम्बन्धित अनेक नीतियों का प्रतिपादन किया है। इनका उल्लेख हम विशेषताओं के अन्तर्गत कर चुके हैं। ये नीतियां वर्तमान समय में कितनी प्रासंगिक हैं इसका विवेचन इस अध्याय में किया जा रहा है।

आचार्य चाणक्य ने धन को जीवन में पर्याप्त महत्व दिया है। चाणक्य सूत्र में उल्लिखित है 'धर्मस्य मूल अर्थः' अर्थात् धर्म का मूल 'अर्थ' है। चाणक्य नीति में कहा है– 'वित्तेन रक्ष्यते धर्मः' — वित्त से धर्म की सुरक्षा होती है। इन दोनों वाक्यों का अभिप्राय यह माना जा सकता है कि अर्थ धर्म की रक्षा करता है। मनुष्यों को तथा राष्ट्र को धर्मच्युत होने से बचाता है। धनवान मनुष्य को निर्धनता से उत्पन्न होने वाली विकट परिस्थितियों में आपद धर्म का आश्रय–ग्रहण करने की आवश्यकता नहीं होती है। किसी भी राष्ट्र की सुदृढ़ अर्थव्यवस्था तथा समृद्धि उसे धर्म परायण बनाती है। इस प्रकार एक ओर जहाँ धन धर्म का रक्षक है वही दूसरी ओर वह धर्म की जड़ों को खोखली भी कर सकता है। वर्तमान समय में धन अपनी दोहरी सामर्थ्य का प्रयोग कर रहा है। कहीं इसके भण्डार भरे हैं तो कहीं इसका अभाव है। एक ओर धनलिप्सा और धन लोलुपता बढ़ रही है दूसरी ओर जीवन निर्वाह के साधन प्राप्त करने में भारी कठिनाई हो रही है। असत्य, बेईमानी, मुनाफखोरी, मिलावट आदि धन लिप्सा के परिणाम हैं। निर्धनता के कारण चोरी, डकैती, लूटमार आदि अपराध बढ़ रहे हैं। अर्थात अधर्म की जड़े प्रसारित हो रही हैं। ऐसी स्थिति में आचार्य चाणक्य का यह सूत्र पूर्णतया अपनी सार्थकता को व्यक्त करता है कि वित्त से धर्म की रक्षा होती है। अतः इसके लिए धन को धर्म की रक्षा करने में ही व्यय करना चाहिए। इसके विपरीत अधर्म के प्रसार में इसके उपयोग को रोकना ही उचित है।

आचार्य चाणक्य का विचार है कि 'आपत्तिकाल' के लिए धन की सुरक्षा करनी चाहिए, धन से स्त्री की सुरक्षा करनी चाहिए तथा जहां व्यक्तिगत सुरक्षा पर आपत्ति आ जाये वहां धन व स्त्री दोनों का मोह त्याग कर स्वयं की रक्षा करनी चाहिए। इसका यह आशय कदापि नहीं है कि आचार्य चाणक्य वैयक्तिक सुरक्षा को ही सर्वोपरि समझकर भारतीय संस्कृति के मूलमंत्र 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना की उपेक्षा करते हैं। वे जहां व्यक्तिगत सुरक्षा की बात करते हैं वहां उनका अभिप्राय विशिष्ट विपत्ति से आत्मरक्षा करना होता है जैसे यदि हम दस दुष्टों के मध्य फंस गये हों तो वहां उनको समझाने की अपेक्षा स्वयं की रक्षा के लिए वहां से प्रस्थान कर जाना ही उनकी दृष्टि में उचित है। एक स्थान पर उनका विचार है कि संकट जब तक न आये उससे बचने का प्रयत्न करना चाहिए किन्तु यदि विपत्ति सिर पर आ ही जाये तो उसका दृढता से सामना करना चाहिए। आचार्य के इन विचारों की......उपयोगिता तो सदैव विद्यमान रहेगी।

समस्त धर्म शास्त्रों तथा नीतिशास्त्रों का संदेश है कि मनुष्य को धन का उतना ही संचय करना चाहिए जितने की उसे स्वयं एवं अपने आश्रितों के भरण पोषण के लिए आवश्यकता हो। धन का उपयोग उसके दान अथवा भोग करने में ही है। इसका यह आशय नहीं है कि मनुष्य के द्वारा उसकी सम्पूर्ण आमदनी को ही व्यय कर दिया जाये। कुछ धन बचाकर रखना चाहिए जिससे कि आपत्ति के समय काम आये।

वर्तमान समय में लोगों में धन संचय की जो प्रवृत्ति बढ़ रही है उसका आपत्तियों से कोई सम्बन्ध नहीं है। यह तो धन का एक मद है। आज कोई करोड़पति तो कोई अरबपति बनना चाहता है। यह क्रम इसी प्रकार आगे बढ़ता रहता है। इसके परिणाम स्वरूप विपुल धनराशि कालेधन के रूप में संचित हो जाती है। इसका कोई सदुपयोग नहीं होता है। यह धन शान–शौकत और वैभव प्रदर्शन में खर्च होता है, जिससे देश की अर्थव्यवस्था डावाडोल हो जाती है। अतः विपत्तियों के लिए आवश्यकता से अधिक धन संचय करना सामाजिक अपराध है। आवश्यकता से अधिक धन संचय करने वाले मनुष्यों के लिए उन्होंने सार्वभौमिक सत्य को प्रकाशित किया है। उनका विचार है कि लक्ष्मी चंचल है वह अधिक समय तक एक जगह पर नहीं ठहरती है।

वर्तमान युग को यदि पूर्णरूपेण अर्थप्रधान कहें तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। आज धन हीन व्यक्ति अपनी व परिवार की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकता है। धर्म कर्म की बाते सोचने का तो उसे समय ही नहीं है। उसे अहोरात्र जीविका की चिंता पीड़ित करती रहती है। यही बात उसे चोरी डकैती लूट......मार आदि के लिए विवश कर देती है क्योंकि कहा भी गया है:– बुभुक्षित किं न करोति पापम् क्षीणाः नरारू निष्करुणा भवन्ति। निर्धन मनुष्य का समाज में भी आदर नहीं होता है।

अर्थात् वे ही अविकल इन्द्रियां हैं, वही नाम है, वही कुठित बुद्धि है, वही वाणी है, फिर भी कितनी विचित्र बात है कि धन की गर्मी के बिना

*सह–आचार्य (संस्कृत) सेठ मथुरादास बिनानी राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नाथद्वारा (राजसमंद) (राज.) भारत

मनुष्य क्षणभर में कुछ का कुछ हो जाता है।

अत: धर्म काम व मोक्ष इन तीनों का मूल अर्थ होता है कि आचार्य चाणक्य की इस विचारधारा में मार्क्स के अर्थवाद (इकनोमिक्स डॉक्ट्रिन) का पूर्वाभास दृष्टिगोचर होता है। मार्क्स के अर्थवाद के अनुसार अर्थव्यवस्था ही मनुष्यों की परिस्थितियों तथा इतिहास का निर्माण करती है। आचार्य चाणक्य का भी मत है कि मनुष्य की धार्मिक तथा भौतिक आकांक्षाओं की पूर्ति धन से ही हो सकती है एवं समस्त कार्य धन से ही सम्पन्न होते हैं, जैसे कि निर्धन राष्ट्र विकास की दौड़ में शिथिल हो जाते हैं क्योंकि उनकी अर्थव्यवस्था सुदृढ़ नहीं होती है।

आचार्य चाणक्य का विचार है कि अन्याय से उपार्जित धन वास्तविक सुख प्रदान नहीं कर सकता है। वह इस लोक तथा परलोक दोनों को बिगाड़ता है । वर्तमान समय में इस नीति पर विचार कर उसे व्यवहार में ढालने की अतिआवश्यकता है। आज अधिकांश व्यक्तियों को केवल धनोपार्जन से ही प्रयोजन है। उसकी विधि चाहे उत्कृष्ट हो अथवा निकृष्ट परलोक की चिंता लेशमात्र भी उनको विचलित नहीं करती है। अन्याय से धनोपार्जन करने वाला भले ही बाह्य रूप से सुखी दिखाई देता है किंतु उसको मानसिक शान्ति प्राप्त नहीं होती है।

आचार्य चाणक्य कहते हैं कि जिसके पास धन होता है वह किसी भी विपत्ति का सामना धन से कर सकता है। यह तथ्य वर्तमान समय में भी अक्षरश: सत्य है। आज हम देखते व सुनते हैं कि मन्त्री अथवा दिग्गज व्यापारी धन के बल पर बड़े-बड़े अपराधों के दण्ड से भी मुक्त हो जाते हैं। धन की महिमा के कारण उनको सुविधापूर्ण कारागार में रखा जाता है। निर्धन व्यक्ति तो आज दो जून का भोजन भी नहीं जुटा पाता है। जीवन की अन्य सुविधाएं तो उसके लिए स्वप्नवत् होती हैं। इस प्रकार धनहीन की दुर्दशा का वर्णन किया गया है, किन्तु वर्तमान युग में तो निर्धन भी दो प्रकार के हैं - प्रथम वो जो मूलभूत आवश्यकताओं को भी पूर्ण नहीं कर सकते हैं। द्वितीय वो जो अनिवार्यताओं को तो किसी प्रकार पूरा कर लेते हैं किन्तु आधुनिक सुख सुविधाएं प्राप्त नहीं कर सकते हैं। तुलनात्मक रूप से प्रत्येक व्यक्ति अपने से अच्छी स्थिति वालों को धनवान् तथा निम्न स्थिति वालों को निर्धन समझता है।

माता-पिता के द्वारा बालकों के साथ किस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए, इस सम्बन्ध में आचार्य चाणक्य के विचार की प्रासंगिकता वर्तमान समय में भी विद्यमान है। आज भी अधिकांश ऐसे व्यक्ति हैं जो यह नहीं जानते हैं कि बच्चों से किस प्रकार व्यवहार करना चाहिए। यही कारण है कि आज प्राय: यह सुनने को मिल जाता है कि बालक घर छोड़कर चला गया अथवा पिता की ताड़ना के भय से उसने आत्महत्या कर ली। इसमें यह वैज्ञानिक तथ्य भी है कि दश से बारह तथा पन्द्रह से बीस वर्ष की आयु तक बालक का भौतिक एवं मानसिक विकास तीव्र गति से होता है। संरक्षक समझते हैं कि अभी तो यह छोटा है। इसलिए उसे ताड़ना अथवा झिड़की दे देते हैं, किन्तु इस......प्रकार के व्यवहार से वह स्वयं का अपमान अनुभव करता है। परिणामस्वरूप अनुचित कदम उठाता है अत: आज चाणक्य की यह नीति माता पिता लिए के अति उपयोगी है।

वर्तमान समय में इस भावना को बल देने की अति आवश्यकता है। आज प्रत्येक राज्य अथवा देश अपने ही लाभ की सोचता है। उसे समस्त राष्ट्र के संदर्भ में रखकर नहीं सोचता है। जब से भाषायी आधार पर प्रदेशों का विभाजन हुआ है तब से अलगाव की यह भावना बहुत प्रबल हो रही है। इसी भावना के कारण प्रदेशों के मध्य सीमाओं, नदियों के जल वितरण (जैसे नर्मदा जल विवाद), प्राकृतिक साधनों के उपयोग इत्यादि के बारे में सदैव तनाव बना रहता है। प्रदेश अपने-अपने दावे व उद्देश्यों की पूर्ति चाहते हैं, भले ही दूसरे प्रदेशों पर उसका विपरीत प्रभाव पड़े। अत: देश के हित में प्रदेश को अपने हित का परित्याग कर देना चाहिए।

इसी प्रकार ग्राम या नगर के हित में कुटुम्ब के हित को छोड़ देना चाहिए जैसे परिवार की कोई भूमि है, सार्वजनिक उपयोग के लिए उसकी आवश्यकता है और उसका दान करने पर उस परिवार को कोई विशेष हानि भी नहीं है, तो वह भूमि ग्राम अथवा नगर को अर्पण कर देनी चाहिए।

मनुष्य को कार्यारम्भ करने से पूर्व समय कैसा है, मित्र कौन कौन हैं, स्थान कैसा है, और क्या आय है। मैं कौन हूँ और मेरी शक्ति क्या है। इन बातों पर बार बार विचार करना चाहिए। यह नीति मानवजीवन तथा राजव्यवस्था दोनों में अपनी प्रासंगिकता रखती है। इसी संदर्भ में अंग्रेजी की यह कहावत उल्लेखनीय है :-

"Well begun is half done"

अर्थात् जो कार्य ठीक प्रकार से आरम्भ किया जाता है वह आधा तो उसी समय सम्पन्न हो जाता है। अत: कौन सा कार्य किस स्थान पर करना है, उसके लिए उपयुक्त समय कौन सा है। इन बातों पर विचार करके ही मनुष्य को कार्य प्रारंभ करना चाहिए। जब केवल राजनैतिक कारणों से स्थान का चयन और समय निर्धारित किया जाता है, तो वह कार्य या तो पूर्ण नहीं हो पाता है अथवा वांछित फल प्रदान नहीं करता।

आज हमारे देश में ऐसा ही हो रहा है। चुनावों के समय सत्तारूढ़ दल क्षेत्र के लोगों को प्रसन्न करके उनके वोट प्राप्त करने के लिए विकास के कार्य आरम्भ कर देता है। वृहद् योजनाओं को राजनीतिक आधार पर प्राथमिकता दी जाती है। जिस मुख्यमंत्री का प्रभाव अधिक होता है वह चुनावों में बाजी मार लेता है। यही कारण है कि विकास के क्षेत्र में देश के विभिन्न प्रदेशों में संतुलन नहीं हो पाया है।

इस प्रकार आचार्य चाणक्य कृत नीतियां आज भी प्रासंगिक एवं उपयोगी हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. चाणक्य सूत्र प्रदीप, चन्द्रगुप्त वार्ष्णेय, 1996 सूत्र स. 2
2. चाणक्य नीति, 5/9: वित्तेन रक्ष्यते धर्मो विद्या योगेन रक्ष्यते।
   मृदुना रक्ष्यते भूप: सत्स्त्रिया रक्ष्यते गृहम्।।
3. भर्तृहरि ने भी यही भाव व्यक्त किये हैं।
   तानेन्द्रियाण्य विकलानि तदेव नाम सा बुद्धिप्रतिहता वचन तदेव
   अर्थोष्मणा विरहित: पुरुष: स एव त्वन्य: क्षणेम भवतीति विचित्रमेतत्
4. अर्थात वे ही अविकल इन्द्रियां है, वही नाम है, वही अकुठित बुद्धि है, वही वाणी है, फिर भी कितनी विचित्र बात है कि धन की गर्मी के बिना मनुष्य क्षण भर में कुछ का कुछ हो जाता है।अर्थ 0 प्र0 73
5. चा0 नी0 15/9 अन्यायोपार्जितं सद्रव्यं दश वर्षाणि तिष्ठति।
   प्राप्ते चौकादशे वर्षे समूलं तद् विनश्यति।। 15/9 चा नी
6. 'श्रीमतां कुत आपद:'।। 1/7 चा0 नी 0
7. इसी सम्बन्ध में कहा गया है कि -
   अधोध: पश्चत: कस्य महिमा नोपजायते।
   उपर्युपरि पश्यन्त: सर्वे एव पेरिद्रति।।
8. लालयेत् पंच वर्षाणि दश वर्षाणि ताडयेत्
   प्राप्ते तु षोडशे वर्षे पुत्रं मित्रवदाचरेत्।। चा0 नी0
9. इसी प्रकार इस क्रम में विद्या के महत्तव का वर्णन आचार्य भर्तृहरि ने इस

प्रकार किया है –
विद्यानाम नरस्य:पमधिकं प्रच्छन्नगुप्तं धनं
विद्या भोगकरी यशसुखकारी विद्या गुरूणां गुरुः ।
विद्या बन्धुजनो विदेशगमने विद्या परा देवता
विद्या राजसु पूज्यते न तु धनं विद्या विहिनः पशु ।।

10. त्यजदेकं कुलस्यार्थे ग्रामस्यार्थे कुलं त्यजेत्।
ग्रामं जनपदस्यार्थे आत्माअर्थे पृथिवीं त्यजेत् ।। 1. चा. नी. 3/10
11. चा0नी0 स 4/18: कः कालः कानि मित्राणि को देशः कौ व्ययाअगमौ।
कश्चाअहं का च मे शक्तिरिति चिन्त्यं मुहुर्मुहुः ।।
12. चा0 सू0 प्र0 पी0 40

****

राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना का क्रियान्वयन एवं चुनौतियॉ

डॉ. लाड सिंह कॉवर*

शोध सारांश – वृद्धावस्था एक ऐसी अवस्था होती है जब व्यक्ति अपने आपको अकेला महसुस करने लगता है। इस अवस्था में व्यक्ति को सहारा की आवश्यकता होती हैं। तथा उसे विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करना होता हैं। अस्पताल के खर्चे के लिए रूपये, गरम कपड़े, इत्यादि आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए धन की आवश्यकता होती है। इंदिरा गॉधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना बुजुर्गो को धन की आपूर्ति करती है। भारत के बड़े वर्ग को इस योजना से लाभ प्राप्त हो रहा है एवं उनके जीवन को आसान बना रही है। उनको आत्मनिर्भर बना रही है। इस योजना से बुजुर्गों की आर्थिक,समाजिक एवं व्यक्तिगत स्थिति में सुधार करने में सहायता कर रही हैं।

शब्द कुंजी –वृद्धावस्था, गरीबी रेखा, पेंशन।

प्रस्तावना – भारतीय संस्कृति में बुजुर्गो को सम्मानित माना जाता है। परिवार में बुजुर्गो को बड़े आदर से सम्बोधित किया जाता है, उन्हे परिवार का स्तम्भ माना जाता है। बुजुर्ग अपने साथ जीवन के अनुभव लेकर चलता है जिससे समाज को उनके अनुभव से फायदा मिलता है पश्चिमी संस्कृति के प्रभाव ने आज हमारे समाज को प्रभावित किया है तथा इस से हमारे बुजुर्ग भी प्रभावित हुए है उनके मान-सम्मान में उनकी देखभाल में परिवर्तन दिखाई देने लगा है। कई ऐसे बुजुर्ग हमें दिखाई देते है जिनकी देखभाल करने वाले कोई नहीं है। इस कारण उनको कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

भारत में लोकतांत्रिक शासन प्रणाली कार्यरत है जिसमें राज्य का दायित्व अपने नागरिको की सुरक्षा के साथ-साथ उनकी सुख सुविधाओं का ख्याल रखना शामिल है। इन्ही दायित्वो के निर्वहन हेतु हमारी सरकार कई कल्याणकारी योजनाओं का संचालन कर रही है। बुजुर्गो के लिए भारत सरकार इंदिरा गॉधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना चला रही है। इस योजना के अंतर्गत गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले वरिष्ठ नागरिको को मासिक पेंशन प्रदान करती है। जिसके तहत 600 रूपये की राशि प्रदान की जाती है। इस योजना के तहत केन्द 200 रूपये एंव राज्य सरकार 400 रूपये की राशि प्रदान करती हैं।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. बुजुर्गो की स्थिति का अवलोकन करना।
2. इस योजना से बुजुर्गो के जीवन में आये बदलावों का अध्ययन करना।
3. वृद्धावस्था पेंशन योजना के क्रियान्वयन का विश्लेषण करना।

साहित्य समीक्षा :

1. विमला लाल ने अपनी पुस्तक वृद्धावस्था का सच में वृद्धावस्था में व्यक्ति को विभिन्न समस्याओं से जुझता हैं। उसे परिवार में उपेक्षित किया जाता हैं। वह अपने आप को अकेला महसूस करता हैं। आश्रम तक उसे समस्याओं का सामना करना पडता हैं।
2. एम.जी. हुसैन ने चेन्जिग इण्डियन सोसायटी एण्ड स्टेट्स ऑफ ऐज्ड नामक अपनी पुस्तक में वृद्धावस्था का अर्थ तथा वृद्धावस्था में होने वाले परिवर्तनों पर चर्चा की है। तथा इस अवस्था में लोगों को किन-किन समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इसका वर्णन किया गया हैं।
3. सुघा एस सिलावट ने वृद्धावस्था की समस्याएं सामाजिक सहयोग त्रैमासिक शोध पत्रिका वृद्धावस्था को उसकी उम्र, शरीर की स्थिति एंव मानसिक अवस्था निंधारित करती हैं।, उम्र के साथ-साथ उसका शरीर कमजोर होता जाता हैं। एंव उसके सोचने समझने की क्षमता कम हो जाती हैं।

अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व – वृद्धावस्था में व्यक्ति को सामान्य आवश्यकताएँ होती है व्यक्ति की इन आवश्यकताओं की पुर्ति कैसे होती हैं। यदि उसके पास वित्त की व्यवस्था न हो। ऐसी स्थिति में उसे कई समस्याओं से जुझना पडता है। कोई भी बुजुर्ग इन समस्याओं से ना जुझे। इसके लिए सरकार इंदिरा गॉधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना लेकर आई। इसके अंतर्गत 60 वर्ष से अधिक आयु वर्ग के बुजुर्गो को एक निश्चित राशि शासन के द्वारा प्रदान की जाती है।

इस योजना के अध्ययन की आवश्यकता है कि इस योजना के आने के पश्चात् बुजुर्गो की परिस्थितियों में क्या बदलाव आया।

वर्तमान समय में इस योजना में कौन-कौन से सुधार की आवश्यकता है ज्ञात करना आवश्यक है। इस अध्ययन से हम इस योजना की प्रासंगिकता ज्ञात करने का प्रयास करेगे। तथा बुजुर्गो कि समस्याओं की जानकारी प्राप्त करेगे।

इंदिरा गॉधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना का क्रियान्वयन :

1. आयु 60 वर्ष से अधिक एवं गरीबी रेखा के नीचे अर्थात बी.पी.एल. कार्ड धारी तथा आपका कोई नियमित साधन नहीं होना चाहिए।
2. इस योजना की शुरूआत 15 अगस्त 1995 को हुई थी एवं यह योजना राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम के एक भाग के रूप में संचालित किया जा रहा है।
3. इस योजना के तहत एक निश्चित राशि हितग्राही के बैंक खाते में

* संविदा शाला शिक्षक श्रेणी -1, शासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, लोटिया, जिला छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

सीधे प्रदान की जाती है।

चुनौतियॉं :

1. संभावित लाभार्थियों को इस प्रकार की योजनाओं की जानकारी का अभाव रहता है बुजुर्ग होने के कारण वे शासकीय कार्यालयों तक पहुच पाने में असमर्थ होते है।
2. शिक्षा एक बड़ी चुनौती है ग्रामीण क्षेत्रों में बुजुर्गो की एक बड़ी आबादी निरक्षर है। इस कारण उन्हें इस योजना की जानकारी नहीं हो पाती।
3. नौकरशाही एवं लालफिताशाही इस योजना के समक्ष बड़ी चुनौती है। जिससे पार पाना अत्यधिक कठिन है।
4. पात्रता की जानकारी, आवेदन की कठिन प्रक्रिया इस योजना के समक्ष चुनौती हैं।

सुझाव :

1. इस योजना का प्रचार-प्रसार किया जाना चाहिए। जिससे इस योजना से संबंधित जानकारी लोगों को मिल सके।
2. शासन स्तर पर बुजुर्गो हेतु सुविधा केन्द्र स्थापित किया जाना चाहिए। जहॉ से वे इस योजना से संबंधित जानकारी प्राप्त कर सकें एवं योजना का लाभ लेने में सुविधा केन्द्र उन्हें सहायता पहुचाने में सहायक हो।

निष्कर्ष -इंदिरा गॉधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना एक ऐसी योजना है जिसने बुजुर्गो के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। वृद्धावस्था मे यह योजना उनके लिए सहारा बनी है। जिनका कोई नही है अथवा जिनकी आय का साधन नही हैं। उनके लिए यह योजना एक वरदान साबित हुई है। वृद्धावस्था में कई वस्तुओं की आवश्यकता होती है जैसे दवाई, फल, कपड़े, घर इत्यादि। इस योजना के द्वारा निश्चित रूप से वृद्धावस्था में व्यक्ति को इन आवश्यकताओं की पूर्ति करने में आसानी हुई हैं। एंव उनका जीवन आसान हुआ हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सिलावट, सुधा एस (1955) वृद्धावस्था की समस्याएं, सामाजिक सहयोग त्रैमासिक शोध पत्रिका, श्री कृष्ण शोध संस्थान, उज्जैन।
2. Chowdhary, D.P (1992): Aged in India, Inter India Publictions, New Dehli.
3. Hussain M.G. (Ed). (1997): Changing Indian Society at status of agreed, Manak Publications Pvt. Ltd. New Dehli.
4. भट्टाचार्य सुनीलकांत (2008) भारत की सामाजिक समस्याएॅं,मुद्दे और परिप्रेक्ष्य,नई दिल्ली,राधा पब्लिकेशन।
5. लाल विमला (2010) वृद्धावस्था का सच प्रकाशक कल्याणी शिक्षा परिषद, नई दिल्ली।

****

Ethno-pharmacological validation of *Terminalia belerica* Roxb. for Hepatoprotection against acetaminophen and carbon tetrachloride mediated hepatic damage

Dr. Anjana Jadon*

Abstract: The ethanolic extract of *Terminalia belerica* fruits (100, 200, 400 and 800 mg/kg, *p.o.*) was tested for hepatoprotective activity against acetaminophen (2.0 g/kg, *p.o.*) and carbon tetrachloride (1.5 ml/kg, *i.p.*) induced hepatotoxicity in rats. Both toxicants caused damage in the parenchymal cells, thus elevating in the activities of serum transaminases, alkaline phosphatase and lactate dehydrogenase significantly ($P \leq 0.01$). Activities of hepatic microsomal drug metabolizing enzymes i.e. aniline hydroxylase and amidopyrine-N-demethylase were decreased significantly after APAP and CCl_4 intoxication. Hepatic lipid peroxidation showed significant elevation on the contrary reduced glutathione was depleted significantly after toxicants administration ($P \leq 0.01$). *Terminalia belerica* exhibited significant hepatoprotective activity by reducing acetaminophen and carbon tetrachloride induced alterations in the liver function tests, drug metabolizing enzymes and markers of oxidative stress. Maximum recoupment was observed at higher doses of 400 and 800 mg/kg. It was observed that both toxicants caused histopathologically prominent damage (inflammation, necrosis and vacuolation) in liver. These changes were recouped with *Terminalia belerica* extract (400 mg/kg). Thus concluding hepatoprotection by *Terminalia belerica* against acetaminophen and carbon tetrachloride induced liver injury in rats.
Keywords: Acetaminophen, carbon tetrachloride, *Terminalia belerica* Roxb., hepatoprotection, liver function tests, drug metabolizing enzymes, markers of oxidative stress.

Introduction - The WHO estimates that four billion people 80% of the world's population presently use herbal medicine for some aspect of primary health care. Sales data show that Americans are spending about $6 to $8 billion on herbal medicines. Efficacy, safety and quality aspects of herbal products, especially with respect to the presence of liver damage are the subject of on-going debates (1). In the Indian system of medicine (Ayurveda), many herbal medicines have been recommended for the treatment of liver and some of them have been experimentally evaluated (2). *Terminalia belerica* Roxb. (Combretaceae) is such an indigenous herb, commonly known as Bahera in Hindi (3). It is one of the ingredients of Ayurvedic purgative medicament of triphala (4). Fruits of this plant are bitter, astringent, laxative and have antipyretic effect (5). Various constituents identified in the fruit include lipids, ß-sitoserol, saponins, gallic acid, ellagic acid, glycosides and various carbohydrates (6). This plant has been mentioned for the treatment of liver disorders in Ayurveda but it has not been subjected to systemic investigation. To the best of our knowledge no scientific data has been published against acetaminophen poisoning. Carbon tetrachloride and acetaminophen are well known hepatotoxins that are used widely to study the induction of liver injury in a range of laboratory animals. Thus the present investigation aptly demonstrates the efficacy of *Terminalia belerica* against acute acetaminophen and carbon tetrachloride induced hepatotoxicity.

Materials and Methods

Maintenance of animals - Female albino rats of *Sprague Dawley* strain (8-10 weeks old having 130±10 g body wt) were used in the study. They were housed under standard husbandry conditions (25±2°C temp, 60-70% relative humidity and 12 h photoperiod) and had access to standard rat feed (Pranav Agro Industries, New Delhi, India having metal contents in ppm dry weight Cu 10; Mn 33; Zn 45; Co 5) and water *ad libitum.* Experiments were conducted in accordance with the guidelines set by Committee for the Purpose of Control and Supervision of Experiments on Animals (CPCSEA) Chennai- India and experimental protocols were approved by Institutional Ethical Committee (CPCSEA/501/01/A) of Jiwaji University, Gwalior- India.

Plant material - The fruits of *Terminalia belerica* used in this study were collected from Authenticated Ayurvedic dealer and were identified by the taxonomist of Botany Department of Jiwaji University, Gwalior. A voucher specimen (No. 336) has been preserved for future identification in herbarium (Acronym JUG). Fruits were dried

*Assistant Professor (Zoology) Govt. Girls PG College, Banda (U.P.) INDIA

in the shade, chopped and extracted with ethanol. The solvent was removed under reduced pressure to obtain the dried extract (17.6% yield w/w).

Chemicals - Carbon tetrachloride (CCl_4) was procured from E. Merck (India), while acetaminophen was a product of U.P. Drug and Pharmaceuticals Ltd. (India). All other chemicals and reagents used were of highest purity grade (Sigma-Aldrich and E-Merk).

Preparation of solutions / suspensions of hepatotoxins / test compounds - Carbon tetrachloride diluted with liquid paraffin (1:1) was administered at a dose of 1.5 ml/kg, *i.p.* (7). Equal amount of liquid paraffin was administered as vehicle. Acetaminophen powder (2.0 g) was suspended in 10 ml of normal saline and was administered orally (2.0 g/ kg) for acute toxicity (8). An aqueous suspension of fruit extract was prepared in 2% gum acacia and graded dose ranging (100, 200, 400 and 800 mg/kg, *p.o.*) were administered to the animals (9).

Administration of test substances and induction of hepatic damage - Two separate experiments were performed to evaluate the hepatoprotective effect of the test compound against acetaminophen and carbon tetrachloride induced hepatotoxicity in female albino rats. Each experiment involved fourty two rats, which were further divided into seven groups consisting of six rats each. Animals of group 1 received normal saline whereas animals of groups 2-7 were administered toxicant (APAP / CCl_4) and group 2 was treated as experimental control. Groups 3-6 were administered ethanolic extract of *Terminalia belerica* (100, 200, 400 and 800 mg/kg, *p.o.*) after 24 hr of toxicant administration. Group 7 was administered silymarin (50 mg/ kg, *p.o.*) a known hepatoprotective drug and served as positive control.

Collection of serum and tissue samples - Blood of each animal (after 24 h starvation) was collected from the retino-orbital plexus and autopsy was performed under light anesthesia (10). Liver was quickly excised and kept on ice till processed for macromolecular content and enzyme assays. Serum was separated after keeping the blood for two hours at room temperature by centrifugation at 3000 rpm for 15 min. The serum samples were collected and left standing at -20^{o}C until analyzed. Liver homogenate (10% w/v) (in 0.15 M KCl) was prepared for lipid peroxidation whereas liver homogenate (5% w/v) were prepared in 1% sucrose solution for the estimation of reduced glutathione.

Assessment of liver function tests- The activities of aspartate aminotransferase (AST) and alanine aminotransferase (ALT) were estimated (11). Standard techniques were employed to determine the activity of serum alkaline phosphatase (SALP) (12) and lactate dehydrogenase (LDH) (13).

Study of oxidative stress- Reduced glutathione level was estimated in the liver homogenate using dithionitrobenzoic acid (14). The quantitative measurement of lipid peroxidation was done by measuring the concentration of thiobarbituric acid reactive substances (TBARS) in liver (15).

Preparation of liver microsomes - Microsomes were prepared by differential centrifugation (16). The liver, which had been exhaustively perfused with ice-cold 0.9% NaCl, was homogenized with 10mM Tris HCl buffer (pH 7.4) under cold conditions. 10 ml homogenate was centrifuged at 10,000 rpm for 20 min. Top floating fat layer was aspirated off and supernatant was diluted with Tris HCl buffer, $CaCl_2$ (40 mM) was added and allowed to stand in cold for 30 min and centrifuged at 10,000 rpm for 20 min at 4ºC to obtain the upper fraction. The pellet was suspended in 10 ml of 150 mM KCl, centrifuged again as above and the supernatant was discarded. The pellet contained the microsomes. Prepared microsomes were stored at -80ºC.

Microsomal drug metabolizing enzymes - The amidopyrine-N-demethylase (AMND) activity of liver microsomes was measured spectrophotometrically (17). The aniline hydroxylase (ANH) activity was assayed by determining the p-aminophenol formation from aniline (18).

Statistical analysis - All the grouped data were statistically expressed as mean $\pm$ S.E. Difference between, treated and control groups were calculated by Student's't' test (19). Significance of mean values between the treatments groups were analyzed using one way analysis of variance (ANOVA). All the biostatistical analysis of this experiment was calculated by using a statistical programme (Graph Pad Software).

Light microscopical study - After necropsy liver tissues of rats were collected from the large lobe and middle portion, respectively and were fixed in Bouin's solution for 24 h. Tissues were dehydrated and embedded in paraffin. The tissue blocks were prepared and cut into 5 mm thick sections and cross sections were stained using haematoxylin and eosin dyes (H&E) (E-Merck) and mounted with dibutyl polystyrine xylene (DPX) for photomicroscopic observations.

Electron microscopical study - Liver tissues (1 mm^3) were fixed in 3.2% glutaraldehyde. Post fixation of the tissue was done with 1% osmium tetraoxide solution. Then tissues were dehydrated with acetone series and subsequently embedded in epon resin and were polymerised for 20 h at 70°C. Ultrathin sections were cut on a Reichert jung Ultracut-E Microtome. The sections were placed on uncoated grids and stained with uranyl acetate and lead citrate (20). They were examined in a JEOL JEM 1200 EX transmission electron microscope at 80 KV.

Results - In this study, both toxicants (APAP and CCl_4) caused extensive damage to the liver as reflected by the elevation of serum transaminases, serum alkaline phosphatase, lactate dehydrogenase and lipid peroxidation followed by a concomitant decline in reduced glutathione and impairment of the activities of hepatic drug metabolising enzymes, *viz*. aniline hydroxylase and aminopyrine-N-demethylase.

Effect of Terminalia belerica fruit extract against APAP induced hepatotoxicity- APAP caused hepatocellular damage as evident by increase in the activity of marker

enzymes. Table I showed that the enzymes viz. AST (3.1 folds), ALT (7.4 folds), ALP (2.5 folds) and LDH (3.53 folds) were increased as compared with normal saline treated control group. Treatment of rats with ethanolic extract (100 and 200 mg/kg) partially inhibited the increase levels of all the above parameters whereas 400 and 800 mg/kg dose of test compound provided significant ($P \leq 0.01$, $P \leq 0.05$) protection. Table II showed that lipid peroxidation elevated by 59.72% whereas reduced glutathione declined by 37.50% after toxicant administration. The decrease in the level of aniline hydroxylase and aminopyrine-*N*-demethylase was found to be 56.21% and 44.60% respectively. Results showed that extract (400 mg/kg) recouped the elevation in drug metabolizing enzymes, reduced glutathione ($P \leq 0.05$) and LPO ($P \leq 0.01$) protected. Thus the percent alterations in the above parameters were significantly protected in the presence of the test compound in dose dependent manner. In normal rats, the test compound had no effect *per se* on liver.

Effect of Terminalia belerica fruit extract against CCl_4 induced hepatotoxicity - It is evident from table III that CCl_4 caused significant ($P \leq 0.01$) elevation in the serum AST (3.48 folds), ALT (9.19 folds), ALP (5.31 folds) and LDH (2.47 folds) activities. The test compound caused significant ($P \leq 0.01$) protection 37.07%, 48.63%, 68.51% and 67.74% respectively with 400 mg/kg dose as well as 43.21%, 52.70%, 72.93% and 70.96% respectively with 800 mg/kg dose of extract where as other two doses were not significantly effective. Activities of aniline hydroxylase and amidopyrine-N-demethylase in hepatocytes were significantly decreased after CCl_4 administration. TB extract showed significant ($P \leq 0.01$) recoupment at 400 and 800 mg/kg doses and found to be effective in restoring hepatic enzymatic activities, thus depicting marked hepatoprotective efficacy. CCl_4 administration caused significant increase ($P \leq 0.01$) in hepatic lipid peroxidation whereas significant decline were observed in reduced glutathione. The 400 and 800 mg/kg doses of test compound caused a significant ($P \leq 0.01$) reversal of the hepatic lipid peroxidation and reduced glutathione level (Table IV).

Discussion - Acetaminophen and carbon tetrachloride have been extensively used in experimental studies to assess prospective hepatoprotective substances. It is postulated that both toxicants can cause cell lysis, resulting in the release of cytoplasmic enzymes of the liver into the blood circulation. This property is often implicated to assess the extent of APAP (21) and CCl_4 (22) induced hepatocellular necrosis in rats. The increased levels of these enzymes could also be due to malignant infiltration and cirrhosis of liver. Treatment with extract showed a significant reduction in the activity of these enzymes which might be due to the regeneration of hepatic cells. The observations of the present study are in accordance with these reports (23–24). Liver microsomal enzymes such as amidopyrine N-demethylase and aniline hydroxylase are responsible for the metabolism of drugs. The damage conferred by APAP and CCl_4 on hepatocytes as well as hepatic microsomal drug metabolising enzymes (MDME) causes a loss of drug metabolizing capacity of the liver. Treatment of animals with the *Terminalia belerica* extract prevented damage to hepatocyte may be due to the presence of phenolic activity. Therefore the suppression of cytochrome P450 could result in decreased formation of the reactive metabolites and thus decreased tissue injury. Our results support this hypothesis in that there is a good correlation between the decrease in total cytochrome P450 enzyme activities and the protection against APAP and CCl_4 induced hepatotoxicity.

Results indicated that toxicants accentuated the amount of malonyldialdehyde formed confirming their toxic effects. Treatment with different doses of extract reversed lipid peroxidation in a dose dependent manner. Extract may have antioxidant properties due to phenolic nature thus preventing LPO process. APAP induced depletion of hepatic glutathione has been constructed as evidence supporting the hypothesis that reactive metabolites generated by toxicant, lead to glutathione oxidation. Treatment with extract was significantly effective to restore reduced glutathione level. Both toxicants have different mechanisms of action. CCl_4 is metabolized by cytochrome P450 system and produces free radicals. This involves phase I reaction i.e. oxidation whereas APAP, which contains hydroxyl group, involves phase II conjugation reactions i.e. glucuronidation and sulfation. The mechanism by which these two hepatotoxicants produce liver injury involves their biotransformation by liver microsomal cytochrome P450 to more toxic chemicals. APAP is converted to N-acetyl-p-benzoquinoeimine by P450, which is a reactive electrophile (25). Similarly, CCl_4 administration is biotransformed by cytochrome P450 to the trichloromethyl free radical, which elicits membrane lipid peroxidation and then disturbs Ca^{2+} homeostasis to produce hepatocellular injury (26). With respect to APAP dependent hepatotoxicity, it is accepted that the main cause for potentially fulminant hepatic necrosis upon intake of a lethal dose of APAP (27). APAP hepatotoxicity is the resulted of a cascade of interrelated biochemical events (28).

Thus in the case of beneficial effect of the therapeutic agent three types of possible interventions are expected. (I) The chemical ingredients in the extracts have something in common that interferes with the generation of reactive metabolites consequent to the inhibition of specific CYP involved in APAP and $CCl\text{-}_4$ bioactivation. (II) That some components of the extract have membrane stabilizing effects. (III) It may directly combine with free radicals and form free radical adduct. These possibilities appear highly convincing because the interference with the early sequences of generation of reactive metabolites may stop the subsequent steps, leading to cell necrosis. Thus findings of this study suggest that extract of *Terminalia belerica* offers significant protection against two model hepatotoxicants. This supports the traditional usage of the plant by Ayurvedic physicians for the control of digestion disorders. Though the exact mechanism of hepatoprotective

action of this compound is not known at the moment, its phenolic nature and membrane stabilizing effect may be responsible for it.

Acknowledgements - Authors are thankful to Indian Council of Medical Research, New Delhi, India (Project no. 45/8/2004/BMS/TRM) for financial assistance. Jiwaji University Gwalior is also acknowledged for providing laboratory facilities.

References:-

1. S. Saggu, V. Gupta, R. C. Sawhney, P. K. Rai and R. Kumar, Analysis of heavy metals in herbal extracts of high altitude growing plants *Hippophae rhamnoides* and *Rhodiola imbricate*, *Toxicol. Inter.* 13(2) (2006) 111-117.
2. H. Azaizeh, B. Saad, K. Khaleel and O. Said, The state of the art of traditional Arab herbal medicine in the Eastern Region of the Mediterranean: A review, *Evid Based Complement. Alter. Med.* 3 (2006) 229-235.
3. K. R. Kirtikar and B. D. Basu, *Terminalia Linn.,* in *Indian Medicinal Plants*, 2nd ed., Lalit Mohan Basu, Allahabad, India 2 1933, pp.1014-1033.
4. V. V. Sivarajan, *Ayurvedic drugs and their plant sources*, New Hampshire, International Science Publisher, Lebanon 1994.
5. R. N. Chopra, S. L. Nayar and I. C. Chopra, *Glossary of India Medicinal Plants,* CSIR Publication, New Delhi 1996, pp. 241.
6. Wealth of Asia, CD-ROM (D-2.3), New Delhi, NISCOM, 1996.
7. K. H. Janbaz and A. H. Gilani, Evaluation of protective potential of *Artemisia maritima* extract on acetaminophen and CCl_4 induced liver damage, *J. Ethnopharmacol.* 47 (1995) 43-47.
8. R. R. Chattopadhyay, S. K. Sarkar, S. Ganguly, C. Madda and T. K. Baru, Hepatoprotective activity of *Ocimum sanctum* leaf extract against paracetamol induced hepatic damage in rats, *Indian J. Pharmacol.* 24 (1992) 163-165.
9. A. Jadon, M. Bhadauria and S. Shukla, Protective effect of *Terminalia belerica* Roxb. and gallic acid against carbon tetrachloride induced damage in albino rats, *J. Ethnopharmacol.* 109 (2007) 214-218.
10. V. Riley, Adaptation of orbital bleeding technique to rapid serial blood studies, *Pro. Soc. Exp. Biol. Med.* 104 (1960) 751.
11. S. Reitman and S. Frankel, A colorimetric method for the determination of serum glutamic oxaloacetic and glutamic pyruvic transaminases, *Amer. J. Clin. Pathol.* 28 (1957) 56-63.
12. C. H. Fiske and Y. Subbarow, The colorimetric determination of phosphates, *J. Biol. Chem.* 66 (1925) 375-400.
13. Wroblewski and L. Due, *Colorimetric method for LDH,* in *Micro-analysis in Medical Biochemistry* (Ed. I. D. P. Wootton), 4th ed., J & A. Churchill Ltd., 104 Gloucester Place 1955, pp. 115-118.
14. J. E. Brehe and H. B. Burch, Enzymatic assay for glutathione, *Anal. Biochem.* 74 (1976) 189.
15. S. K. Sharma and C. R. Krishnamurthy, Production of lipid peroxides of brain, *J. Neurochem.* 15 (1968) 147-149.
16. J. B. Schenkman and D. L. Cinti, *Preparation of microsomes with calcium,* in *Methods in Enzymology,* (Ed. S. Fleischer and L. Packer), Academic Press, New York, San Francisco and London 52 1978 pp. 83-89.
17. J. Chochin and J. Axelord, Biochemical and pharmacological changes in the rat following chronic administration of morphine and non-morphine, *J. Pharmacol. Exp. Ther.* 125 (1959) 105-110.
18. R. Kato and J. R. Gillette, Effect of starvation on NADPH dependent enzymes in liver microsomes of male and female rats, *J. Pharmacol. Exp. Ther.* 150 (1965) 279-284.
19. G. W. Snedecor and W. G. Cochran, *Statistical Method,* 8th ed., Iowa State University Press, Ames, Iowa 1994, pp. 217-236.
20. A. Hayat and M. Arif, *Biological Applications,* in *Principle and Techniques of Electron Microscopy,* Van Nostrard Reinhold Company, New York 1970.
21. B. A. Iwalokun, B. U. Efedede, J. A. Alabi-Sofunde, T. Oduala, O. A. Magbagbeola and A. I. Akinwande, Hepatoprotective and antioxidant activities of *Vernonia amygdalina* on acetaminophen induced hepatic damage in mice, *J. Med. Food* 9(4) (2006) 524-530.
22. Y. Wu, L. Li, T. Wen and Y. O. Li, Protective effects of echinacoside on carbon tetrachloride-induced hepatotoxicity in rats, *Toxicol.* (2006) (Epub ahead of print).
23. C. T. Liu, P. T. Chuang, C. Y. Wu, Y. M. Weng, W. Chen and C. Y. Tseng, Antioxidative and *in vitro* hepatoprotective activity of *Bupleurum kaoi* leaf infusion, *Phytother. Res.* 20(11) (2006) 1003-1008.
24. O. K. Yemitan and M. C. Izegbu, Protective effects of *Zingiber officinale* (Zingiberaceae) against carbon tetrachloride and acetaminophen induced hepatotoxicity in rats, *Phyto. Res.* 20(11) (2006) 997-1002.
25. S. D. Nelson, Molecular mechanism of hepatotoxicity caused by acetaminophen, *Seminars on Liver Dis.* 10 (1990) 267-278.
26. R. O. Recknagel, Jr. E. A. Glende, J. A. Dolak and R. L. Waller, Mechanisms of carbon tetrachloride toxicity, *Pharmacol. Ther.* 43 (1989) 139-154.
27. W. M. Lee, Acetaminophen and the U.S. Acute Liver Failure Study Group: lowering the risks of hepatic failure, *Hepatology* 40 (2004) 6-9.
28. L. P. James, P. R. Mayeux and J. A. Hinson, Acetaminophen induced hepatotoxicity, *Drug Metab. Dispos.* 31 (2003) 1499-1506.

ABBREVIATIONS
APAP = Acetaminophen
ANH = Aniline hydroxylase
AMND = Amidopyrine-N-demethylase
ALT = Alanine aminotrasferase
AST = Aspartate aminotrasferase
CCl_4 = Carbon tetrachloride
GSH = Reduced glutathione
LPO = Lipid peroxidation
SALP = Serum alkaline phosphatase
Sily = Silymarin
TB = *Terminalia belerica*,
MDA = Malondialdehyde

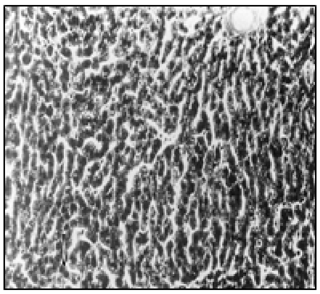
[Fig. 1]

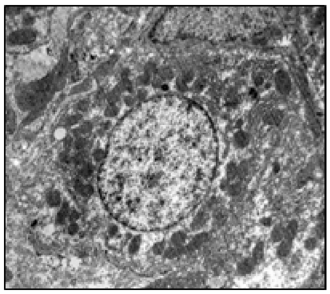
[Fig. 4]

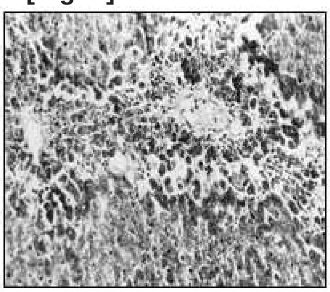
[Fig. 2]

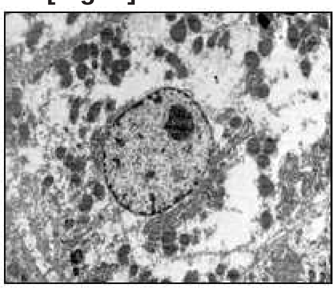
[Fig. 5]

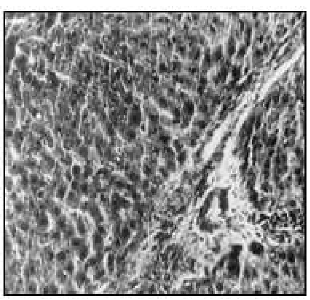
[Fig. 3]

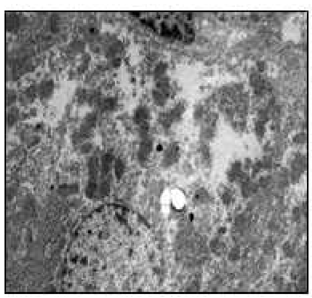
[Fig. 6]

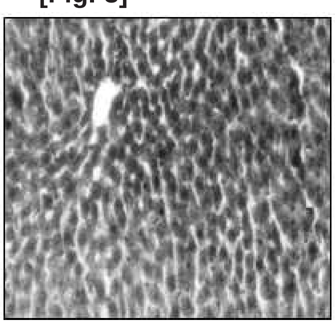
[Fig.7]

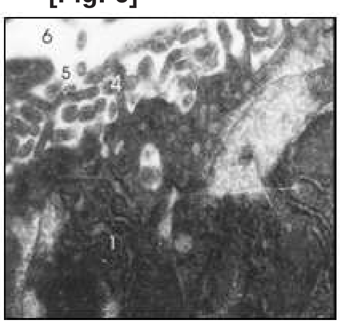

[Fig. 10]

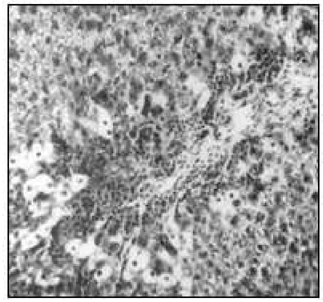
[Fig. 8]

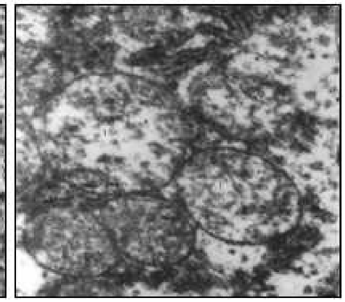
[Fig. 11]

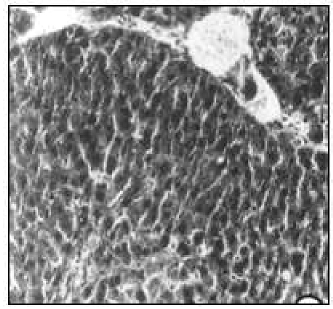
[Fig. 9]

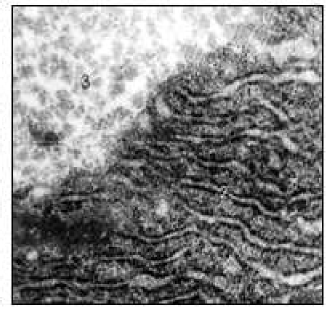

[Fig. 12]

Legends of Figures

Fig. 1 Section of normal control rat liver showing normal appearance (H & E, 140 X).

Fig. 2 Administration of acetaminophen. Noted patchy areas of fatty degeneration (H & E, 140 X).

Fig. 3 Massive hepatic necrosis induced by acetaminophen in the rat was recovered with the treatment of *Terminalia belerica* extract (400 mg/kg, *p.o.*) (H & E, 140 X).

Fig. 4 Electron micrograph of normal control rat liver showing well formed nucleus, mitochondria, endoplasmic reticulum and glycogen particles (880 X).

Fig. 5 Administration of APAP. Note severe vacuolation and loss of cytoplasmic matrix (880 X).

Fig. 6 Treatment with *Terminalia belerica* extract showing well formed mitochondria along with endoplasmic reticulum and glycogen particles (880 X).

Fig. 7 Photomicrograph of control rat liver showing normal features (H & E, 140 X).

Fig. 8 Administration of carbon tetrachloride. Noted areas of focal necrosis with leucocytic infiltration and ballooning of hepatocytes (H & E, 140 X).

Fig. 9 Treatment of *Terminalia belerica* extract (400 mg/kg, *p.o.*) after CCl_4 administration exhibiting reduction in centrilobular necrosis (H & E, 140 X).

Fig. 10 Electron micrograph of normal control rat liver. Note well formed mitochondria (1), clearly visible microvilli (4), along with perisinusoidal spaces of Disse (5) and lumen of sinusoid (6) (880 X).

Fig. 11 Administration of CCl_4. Note disorganization of matrix with no conspicuous crests in mitochondria (1) (880 X).

Fig. 12 Treatment with *Terminalia belerica* extract. Note rough and smooth endoplasmic reticulum (2) and glycogen particles (3) (880 X).

Table I. Hepatoprotective effect of Terminalia belerica Roxb. against acetaminophen induced hepatotoxicity.

Treatments	AST (IU/L)	ALT (IU/L)	SALP (mg Pi/100 ml/h)	LDH (µ mole/min/L)
Normal control (vehicle)	65.4 ± 3.42	43.0 ± 2.46	199.0 ± 10.4	43.0 ± 2.46
APAP (2.0 g/kg)	203.0 ± 13.0#	319.0 ± 18.3#	498.0 ± 25.9#	152.1 ± 7.69#
APAP + TB (100 mg/kg)	191.0 ± 17.2	293.0 ± 22.9	484.0 ± 25.7	146.2 ± 10.2
% Protection	*8.72%*	*9.42%*	*4.68%*	*5.40%*
APAP + TB (200 mg/kg)	183.0 ± 10.7	259.0 ± 22.5	454.0 ± 25.7	139.8 ± 10.1
% Protection	*14.53%*	*21.73%*	*14.71%*	*11.27%*
APAP + TB (400 mg/kg)	135.0 ± 9.71**	195.0 ± 15.5**	410.0 ± 22.0*	126.5 ± 6.65*
% Protection	*49.41%*	*44.92%*	*29.43%*	*23.46%*
APAP + TB (800 mg/kg)	130.8 ± 8.06**	178.0 ± 9.23**	392.0 ± 20.4**	121.2 ± 6.41*
% Protection	*52.44%*	*51.08%*	*35.45%*	*28.30%*
APAP + Sily (50 mg/kg)	99.2 ± 6.08**	89.6 ± 6.10**	276.4 ± 19.3**	50.8 ± 2.84**
% Protection	*75.43%*	*83.11%*	*74.11%*	*92.82%*
One-way ANOVA F values	27.66†	51.07†	30.74†	47.16†

Values are mean ± S.E. (n = 6), ANOVA 'F' values, † = Significant at 1% level.
P $\le$ 0.01 compared to normal control group, * P $\le$ 0.05 compared to toxicant administered group, ** P $\le$ 0.01 compared to toxicant administered group.

Table II. Hepatoprotective effect of Terminalia belerica Roxb. against acetaminophen induced hepatotoxicity.

Treatments	ANH (n mole p-amino phenol formed / mg protein)	AMND (n mole of formaldehyde formed / mg protein / min)	LPO (n mole MDA/mg protein)	GSH (µ mole/g)
Normal control (vehicle)	33.8 ± 2.45	6.50 ± 0.50	0.29 ± 0.014	6.48 ± 0.368
APAP (2.0 g/kg)	14.8 ± 0.78#	3.60 ± 0.18#	0.72 ± 0.050#	4.05 ± 0.249#
APAP + TB (100 mg/kg)	15.2 ± 0.90	3.68 ± 0.25	0.62 ± 0.038	4.23 ± 0.286
% Protection	*2.54%*	*2.87%*	*23.25%*	*7.54%*
APAP + TB (200 mg/kg)	16.3 ± 1.00	3.75 ± 0.27	0.58 ± 0.041	4.64 ± 0.269
% Protection	*7.89%*	*5.17%*	*32.55%*	*24.27%*
APAP + TB (400 mg/kg)	17.7 ± 0.85*	4.25 ± 0.22*	0.52 ± 0.026**	4.86 ± 0.266*
% Protection	*15.26%*	*22.41%*	*46.51%*	*33.60%*
APAP + TB (800 mg/kg)	18.7 ± 0.94**	4.34 ± 0.26*	0.49 ± 0.032**	4.91 ± 0.267*
% Protection	*20.52%*	*25.51%*	*53.10%*	*35.66%*
APAP + Sily (50 mg/kg)	27.6 ± 2.40**	6.08 ± 0.32**	0.34 ± 0.020**	5.90 ± 0.299**
% Protection	*67.54%*	*85.51%*	*88.37%*	*76.13%*
One-way ANOVA F values	27.83†	18.25†	23.76†	11.12†

Values are mean ± S.E., (n = 6), ANOVA 'F' values, † = Significant at 1% level.
P$\le$ 0.01 compared to normal control group, * P $\le$ 0.05 compared to toxicant administered group, ** P $\le$ 0.01 compared to toxicant administered group.

Table III. Hepatoprotective effect of Terminalia belerica Roxb. against carbon tetrachloride induced hepatotoxicity.

Treatments	AST (IU/L)	ALT (IU/L)	SALP (mg Pi/100 ml/h)	LDH (µ mole/min/L)
Normal control (vehicle)	65.5 $\pm$ 3.40	47.4 $\pm$ 2.44	204.0 $\pm$ 11.5	42.0 $\pm$ 3.11
CCl_4 (1.5 ml/kg)	228.4 $\pm$ 16.6#	436.0 $\pm$ 22.2#	1085.0 $\pm$ 74.9#	104.0 $\pm$ 6.26#
CCl_4 + TB (100 mg/kg)	219.0 $\pm$ 19.3	398.0 $\pm$ 36.8	924.3 $\pm$ 69.6	96.5 $\pm$ 6.36
% Protection	*5.74%*	*9.77%*	*18.23%*	*12.09%*
CCl_4 + TB (200 mg/kg)	205.2 $\pm$ 14.2	344.0 $\pm$ 30.4	846.0 $\pm$ 45.2	87.5 $\pm$ 4.84
% Protection	*14.24%*	*23.67%*	*27.12%*	*26.61%*
CCl_4 + TB (400 mg/kg)	168.0 $\pm$ 8.66**	247.0 $\pm$ 15.5**	481.4 $\pm$ 24.7**	62.0 $\pm$ 3.75**
% Protection	*37.07%*	*48.63%*	*68.51%*	*67.74%*
CCl_4 + TB (800 mg/kg)	158.0 $\pm$ 12.2**	231.2 $\pm$ 12.9**	442.4 $\pm$ 35.0**	60.0 $\pm$ 3.87**
% Protection	*43.21%*	*52.70%*	*72.93%*	*70.96%*
CCl_4 + Sily (50 mg/kg)	79.8 $\pm$ 5.63**	117.0 $\pm$ 9.44**	334.8 $\pm$ 17.9**	51.0 $\pm$ 2.62**
% Protection	*91.22%*	*82.08%*	*85.14%*	*85.48%*
One-way ANOVA F values	31.98†	52.78†	62.85†	32.42†

Values are mean $\pm$ S.E., (n = 6), ANOVA 'F' values, † = Significant at 1% level.
$P \leq 0.01$ compared to normal control group, * $P \leq 0.05$ compared to toxicant administered group, ** $P \leq 0.01$ compared to toxicant administered group.

Table IV. Hepatoprotective effect of Terminalia belerica Roxb. against carbon tetrachloride induced hepatotoxicity.

Treatments (n mole p-aminophenol	ANH (n mole of formal dehyde formed / mg protein)	AMND (n mole MDA/mg protein) formed / mg protein / min)	LPO	GSH (µ mole/g)
Normal control (vehicle)	34.30 $\pm$ 2.42	6.75 $\pm$0.39	0.27 $\pm$ 0.02	8.63 $\pm$ 0.56
CCl_4 (1.5 ml/kg)	8.70 $\pm$ 0.48#	3.34 $\pm$ 0.22#	1.60 $\pm$ 0.12#	3.70 $\pm$ 0.35#
CCl_4 + TB (100 mg/kg)	9.33 $\pm$ 0.78	3.39 $\pm$ 0.23	1.51 $\pm$ 0.11	3.75 $\pm$ 0.31
% Protection	*2.47%*	*1.46%*	*6.76%*	*1.01%*
CCl_4 + TB (200 mg/kg)	11.08 $\pm$ 0.60	3.54 $\pm$ 0.19	1.46 $\pm$ 0.08	3.90 $\pm$ 0.26
% Protection	*9.30%*	*5.86%*	*10.52%*	*4.05%*
CCl_4 + TB (400 mg/kg)	15.76 $\pm$ 0.81**	4.21 $\pm$ 0.21**	1.03 $\pm$ 0.06**	5.20 $\pm$ 0.27**
% Protection	*27.57%*	*25.70%*	*42.85%*	*30.42%*
CCl_4 + TB (800 mg/kg)	17.24 $\pm$ 0.92**	4.25 $\pm$ 0.22**	0.81 $\pm$ 0.05**	5.50 $\pm$ 0.40**
% Protection	*33.35%*	*26.68%*	*59.39%*	*36.51%*
CCl_4 + Sily (50 mg/kg)	28.10 $\pm$ 1.61**	5.91 $\pm$ 0.32**	0.35 $\pm$ 0.02**	7.00 $\pm$ 0.49**
% Protection	*75.78%*	*5.56%*	*93.98%*	*66.93%*
One-way ANOVA F values	72.55†	25.19†	57.51†	26.57†

Values are mean $\pm$ S.E., (n = 6), ANOVA 'F' values, † = Significant at 1% level.
$P \leq 0.01$ compared to normal control group, * $P \leq 0.05$ compared to toxicant administered group, ** $P \leq 0.01$ compared to toxicant administered group.